KADMBINI JULY-DEC 1974 G.K.U.

मासिक प्रकाशन
कादम्बिनी
भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका
१.७५
रुपया

"मेरे माता-पिता खो गए हैं" बड़े इतमीनान से उसने कहा.

३ घंटों के बाद तथा जे एफ़ के हवाईअड्डे के कई चक्कर लगाने पर हमने पाया कि सचमुच वह ठीक थी.

छोटी के उम्र की बच्ची कभी ग़लत नहीं हो सकती. हां, उसके माता-पिता हो सकते हैं.

जे एफ़ के हवाईअड्डा : न्यू यॉर्क सिटी. हवाईअड्डे पर की हमारी एक स्वागतकर्त्री की साड़ी का आंचल एक छोटी सी बच्ची खींच रही थी.

"आपने हमारे माता-पिता को देखा है ?"

"तुम खो गई हो क्या बेबी ?" बच्ची से ज़्यादा परेशान हमारी स्वागतकर्त्री नज़र आ रही थी.

"मैं नहीं. मेरे माता-पिता खो गए हैं". उसने बड़े इतमीनान से कहा. फिर तो खोज शुरू हुई और उसके माता-पिता मिल गए.

इस तरह खोये हुए लोगों को उनके परिवार से मिला कर कितनी खुशी होती है ! वैसे माता-पिता इस तरह रोज़ नहीं खो जाते. फिर भी ऐसे मौके रोज़-रोज़ आते हैं जब आपकी मदद करके हमें सचमुच बहुत खुशी होती है : जैसे कि आगे की यात्रा के लिए समुचित प्रबन्ध, कॉन्फ़्रेन्स की व्यवस्था, होटल रिज़र्वेशन, टूर बुकिंग, यहां तक कि ख़रीद-फ़रोख्त संबन्धी परामर्श, इसके अलावा अगर आपकी ज़रूरत किसी ख़ास तरह की हो तो उसे पूरा करने के लिए हम भी ख़ास प्रयत्न करेंगे.

तो जब आप एयर-इंडिया का टिकट कटाते हैं तो सिर्फ़ एक टिकट ही नहीं लेते बल्कि सुखद प्रवास का आश्वासन भी प्राप्त करते हैं ; ऐसे लोगों के साथ जो आपको बख़ूबी समझते हैं.

AI-6129

शब्द सामर्थ्य बढ़ाइए

• विशालाक्ष

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिन्ह लगाइये और पृष्ठ ६ पर दिये उत्तरों से मिलाइये !

१. **गरिष्ठ**—क. घमंडी, ख. कठिन, ग. दुष्पचनीय, घ. गरिमामय।

२. **ललक**—क. लालसा, ख. चमक, ग. ललकार, घ. ध्यान।

३. **दुरंत** — क. अत्याचारी, ख. दुष्परिणामी, ग. दुरात्मा, घ. मोक्ष।

४. **आरूढ़**— क. आसीन, ख. जमा हुआ, ग. डटा हुआ, घ. चढ़ा हुआ।

५. **बिसूरना**— क. सोच-सोचकर रोना, ख. दुःख करना, ग. कराहना, घ. तड़पना।

६. **गरिमा**—क. प्रबलता, ख. महत्ता, ग. गुरुत्व, घ. सुंदरता।

७. **ललित**—क. आनंददायक, ख. सुंदर-सुकुमार, ग. विलासी, घ. प्रेमार्द्र।

८. **लहलहाना**— क. खिलना, ख. लहरें मारना, ग. फलना-फूलना, घ. हरा-भरा होना।

९. **गदगद**—क. अत्यधिक भावावेग से पूर्ण, ख. अधपका, ग. नरम, घ. हर्षित।

१०. **गद्य**—क. खड़ी बोली, ख. बोलने की भाषा, ग. कविता, घ. स्पष्ट भाषा।

११. **कर्ता-धर्ता**—क. मालिक, ख. पालक, ग. सब-कुछ करने का अधिकारी, घ. सर्वाधिकारी।

१२. **इंद्रजाल**—क. बाजीगरी, ख. मंत्रविद्या, ग. दंदफंद, घ. चतुराई।

१३. **उलझना** — क. लड़ना, ख. अरझना, ग. चकराना, घ. परेशान होना।

१४. **कमाल**—क. उन्नति, ख. आश्चर्य, ग. अद्भुत निपुणता, घ. कारीगरी

१५. **कुशाग्र**—क. असाधारण, ख. नुकीला, ग. कंटीला, घ. पैना।

१६. **क्षिप्र**—क. फेंका हुआ, ख. शीघ्र, ग. दौड़ते हुए, घ. अनमना।

१७. **तूती**—क. एक मंद-मधुर बोलने वाली छोटी चिड़िया, ख. तुरही, ग. पिपिहरी, घ. आन।

१८. **तपोधन**—क. तपरूपी धन, ख. दुर्योधन, ग. तप ही जिसका धन है, घ. बैरागी।

१९. **सुहृत्**—क. सरोवर, ख. प्रिय मित्र, ग. सहृदय, घ. प्रेमी।

२०. **पाश**— क. बंधन, ख. जाल, ग. रस्सी, घ. फंदा।

२१. **अवसान**—क. अंत, ख. सायंकाल, ग. थकान, घ. डूबना।

२२. **अविकल**—क. शांत, ख. चैन से, ग. सुंदर, घ. बिना काट-छांट का।

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. ग. दुष्पचनीय। रोगी को **गरिष्ठ** भोजन मत दो। तत्., वि., पुं.। **गुरु, भारी।**

२. क. लालसा, गहरी चाह। पद की **ललक** बनी ही है। तत्., संस्कृत-ललन, सं., स्त्री.। **तलब, आकांक्षा, कामना।**

३. ख. दुष्परिणामी, जिसका अंत खराब हो। **दुरंत** कार्य, मनोरथ। तत्., वि., उ. लि.।

४. घ. चढ़ा हुआ पद-**आरूढ़**। तत्., वि., उ. लि.। **सवार, कृतारोहण।**

५. क. सोच-सोचकर रोना। विधवा का **बिसूरना** देखा नहीं जाता था। तद्, संस्कृत— विसूरण, क्रि. अ.। **बिलपना, सिसकना।**

६. ग. गुरुत्व। कार्य व्यक्ति की **गरिमा** है तत्., सं., स्त्री.। **महत्ता, महिमा।**

७. ख. सुंदर-सुकुमार। **ललित** कला, रूप, वाक्य। तत्., वि., पुं.। **चारु, कांत।**

८. घ. हराभरा होना। खेत **लहलहा** रहा है। लो.भा., क्रि. अ.। **प्रफुल्लित होना।**

९. क. अत्यधिक भावावेग से पूर्ण। **गद्गद्** हृदय, कंठ, वाणी। तत्., वि., उ. लि.। **भाव-विभोर।**

१०. ख. बोलने की भाषा, सीधी भाषा। यह **गद्य** है, पद्य नहीं। तत्., सं., पुं., **वातिक, वचनिका।**

११. ग. सब-कुछ करने का अधिकारी। परिवार, संस्था, समारोह का **कर्ता-धर्ता।** तद्., संस्कृत—कर्ता, धर्ता, सं. पुं.।

१२. क. बाजीगरी। लड़के का गला काटा, फिर जोड़ दिया, यह **इंद्रजाल** था। तत्०, सं., पुं.। **नटविद्या, मायाजाल, जादू, नजरबंदी।**

१३. ख. अरझना। धागा **उलझ** गया, साड़ी कांटों में **उलझ** गयी, वह तत्व-ज्ञान में **उलझ** गया। तद्., संस्कृत—अवरुंधन, क्रि. अ.। **गुंथना, फंसना।**

१४. ग. अद्भुत निपुणता। उसे तो **कमाल** हासिल है। अरबी, सं., पु.। **गजब।**

१५. घ. पैना, कुश की नोक जैसा। **कुशाग्र** बुद्धि। तत्.,वि.,उ.लि.। **तीव्र,प्रखर।**

१६ ख. शीघ्र। **क्षिप्र** कोपी, **क्षिप्र** परिवर्तनशील। तत्., क्रि. वि.। **तत्क्षण, तुरंत।**

१७. क. एक मंद-मधुर बोलनेवाली छोटी चिड़िया। नक्कारखाने में **तूती** की आवाज कौन सुनता है? फारसी, सं., पुं., लोकभाषा में स्त्री.।

१८. ग. तप ही जिसका धन है। **तपोधन** गांधीजी। तत्., सं., वि., पुं.। **महान तपस्वी।**

१९. ख. प्रिय मित्र, अच्छे हृदयवाला। ठाकुर साहब मेरे **सुहृत्, सुहृद्, सुहृद** थे। तत्, सं., पुं.। **सखा।**

२० घ. फंदा। नाग**पाश** कुटुंब**पाश**। तत्, सं., पुं.। **फांस।**

२१. क. अंत। दिवस का **अवसान** देह **अवसान** सीमा **अवसान**। तत्., सं., पुं.।

२२. घ. बिना काट-छांट का। **अविकल** उद्धरण, अनुवाद, प्रतिलिपि। तत्., वि., उ. लि.। **ज्यों का त्यों, पूरा।**

जून अंक बहुत सुंदर लगा। 'समय के हस्ताक्षर' के अंतर्गत 'अल्पसंख्यक प्रजातंत्र' शीर्षक टिप्पणी लिखकर आपने द्रमुक सरकार की धर्म-द्वेषी, संस्कृत-संस्कृति घातक नीति पर करारी चोट की है। धर्म में ऐसा अनावश्यक हस्तक्षेप सर्वथा निंद्य है। साज-सज्जा भी उच्चकोटि की थी।

——चन्द्रकांता दीक्षित, नागपुर

'शिक्षा : नयी दिशा की ओर' एवं 'आयुर्वेद और कसर का इलाज' लेख सूचनापरक तथा रोचक रहे।

——विनोद राजपूत, वाराणसी

रामकुमार श्रीवास्तव, ३२० गोसपुरा कालोनी नं. २, ग्वालियर-३ लिखते हैं कि साहित्य की आड़ में किस तरह धन कमाया जा रहा है, इस आरोप की पुष्टि में अपने नाम प्रेषित एक साप्ताहिक पत्र के संपादक की चिट्ठी 'कादम्बिनी' में प्रकाशनार्थ प्रस्तुत कर रहा हूं——

स्नेही श्रीवास्तवजी।

पत्र के लिए धन्यवाद। कागज की कमी के कारण इस बार तरुणदूत देर से प्रकाशित हो रहा है। शीघ्र भेज देंगे। पिछले अंक की तीन-चार प्रतियां भेज रहे हैं। आपने जो सहयोग देने की इच्छा प्रकट की है उसके लिए हार्दिक धन्यवाद। आप-जैसे नौजवान ही 'नौजवान-पत्र' तरुणदूत का ध्यान रख सकते हैं। हमें भारत भर में प्रतिनिधियों की आवश्यकता है। २०० से ३०० तक मासिक पारिश्रमिक देते हैं। लेकिन इस नियुक्ति से पहले दो पासपोर्ट साईज की फोटो और तरुणदूत का वार्षिक चंदा १५) रु. भेजकर तरुणदूत-विकास-योजना का सदस्य बनना जरूरी है।

इसके बाद आपको ४ और नये सदस्य बनाने होंगे। हरेक से १५) रु. ले लेने पर आपके पास ६०) रु. हो जाएंगे। इनमें से १५) रु. अपने काटकर शेष ४५) रु. एडीटर, तरुणदूत को मनीआर्डर से भेज दें। इसके बाद हम आपके चारों सदस्यों को एक-एक फार्म भेज देंगे जिनमें आपका पहला नंबर होगा और आपके चारों सदस्य आपको ५–५ रु. मनीआर्डर से भेजते रहेंगे। यही क्रम चलता रहा तो आपको १६,३८४ रु. मिल जाएंगे और यदि आप

एक मास में इस प्रकार के ३० फार्म पूरे करने की गारंटी दें तो हम आपको ३०० रु. तक मासिक वेतन और आफिस-खर्च आदि भी दे सकते हैं। आशा है, हिंदी के प्रचार में आपका सहयोग मिलेगा। पत्र व्यवहार २५ जून ७४ तक इस पते पर करें— भवदीय

संपादक तरुणदूत **च. शर्मा**

५९९/१ कैथमाजरी अंबाला शहर

युवा रचनाकारों को दिग्भ्रमित करके, ख्याति पाने के कोरे आश्वासन देकर लूटने-खसोटने की प्रवृत्ति इधर तेजी से उभरी है। मात्र दस रुपये में मुझे होम्योपैथिक-डाक्टर की उपाधि घर बैठे मिलने का आफर आया था।

कुछ ऐसे महानुभाव होते हैं जो विभिन्न लेख या वाद-प्रतियोगिताएं आयोजित कर उस पर प्रवेश शुल्क लगाकर खाने-कमाने का व्यापार चलाते हैं। एक संगठन ने अपने पत्र में लिखा कि 'आपकी कविता पर निर्णायक समिति ने प्रथम पुरस्कार प्रदान करने का निर्णय किया है। लेकिन आपका शुल्क ३ रु. अभी तक न प्राप्त होने पर निर्णय रोक दिया गया है।' लगभग दो माह बाद उसी संगठन की ओर से एक तृतीय पुरस्कार पाने की सूचना तथा कोरा प्रमाणपत्र पाकर मैंने अपना माथा ठोक लिया। एक अन्य स्थान से सूचना मिली कि 'पुरस्कार स्वरूप १० रु. मूल्य की पत्रिकाएं भेजी जा चुकी हैं' जबकि ऐसा कुछ हुआ नहीं था।

कुछ ऐसे प्रशिक्षण-संस्थान भी हैं जहां लेखक तैयार किये जा रहे हैं, मानों वे माल हों और धड़ाधड़ फैक्टरी से निकाले जा रहे हैं।

—प्रफुल्लकुमार त्रिपाठी, गोरखपुर

आयुर्वेदाचार्य पंडित खुशीलाल शर्मा का लेख 'आयुर्वेद और कैंसर का इलाज' विशेष पसंद आया।

—रामबालक अवस्थी, उन्नाव

क्यों और क्यों नहीं?

तेइसवें लेखक

इस लेखमाला के अंतर्गत अमृतलाल नागर, सुमित्रानंदन पंत, अज्ञेय, डॉ. बच्चन, यशपाल, डॉ. भारती, जैनेंद्र कुमार, दिनकर, रेणु, महादेवी वर्मा, भगवतीचरण बर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ अश्क, इलाचन्द्र जोशी, राजेन्द्र यादव, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी, कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा, भवानीप्रसाद मिश्र तथा शिवप्रसाद सिंह के संबंध में पाठकों के प्रश्न अब तक आमंत्रित किये जा चुके हैं। अब तेइसवीं लेखिका हैं : मन्नू भंडारी

इस लेखमाला का उद्देश्य, लेखक तथा पाठक को आमने-सामने लाने का प्रयास है।

एक प्रश्नकर्ता दो से अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक कोने पर यह अवश्य लिखिए—'क्यों और क्यों नहीं?' स्तंभ के लिए। संपादक के पास प्रश्न पहुंचने की अंतिम तिथि है : २० जुलाई, १९७४।

प्रमुख कृतियां : कहानी संग्रह : मैं हार गयी, तीन निगाहों की एक तसवीर, यही सच है, एक प्लेट सैलाब। उपन्यास : एक इंच मुसकान (सम्मिलित), आपका बंटी। नाटक : बिना दीवारों के घर।

वर्ष १४ : अंक ९
जुलाई, १९७४

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

सार-संक्षेप

कविताएं

स्थायी स्तम्भ

संपादकीय विभाग के सहयोगी

सह-संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक । चित्रकार : सुकुमार चटर्जी ।

काल-चिंतन

— लक्ष्यवेध के पूर्व अर्जुन की चेतना डगमगा उठी थी।
— उसने ठहरकर पहले अपनी शक्ति देखी, फिर अपने को अतीत से काटकर लक्ष्यवेध पूरा किया।
— अर्जुन के इस कार्य से दो स्थितियां स्पष्ट हुईं : एक--कुछ भी करने के पहले अपनी शक्ति और सामर्थ्य को पहचानो, और दूसरी--सत्य वही पहचान सकते हैं जो अतीत से मुक्त हैं।
— अतीत का बोझ भारी होता है।
— शक्तिहीन का बल-प्रदर्शन हवा में चंद सतरें लिखने-जैसा है !
— आज हम चंद सतरें ही तो लिख रहे हैं, एक भारी बोझ के भागीदार बनकर

अपने पूर्वजों का भार ढो रहे हैं।
— इनसे मुक्ति ?

●●

— पाब्लो नेरूदा की एक कविता है : भय महागामी अंतरिक्ष में है, भय कहीं जल के नीचे है, अभय का वरदान धरती है, अपने पैर वहीं मजबूत खड़े रखो !
— विमान में बैठकर यात्रा करते समय गति का आभास खत्म हो जाता है; लगता है, सब कुछ ठहर गया है।
— अपार जलराशि के मध्य भटकते जहाज की गति केवल लहरें गिनकर ही पहचानी जा सकती है।
— विमान और जहाज दोनों धरती के पास आते ही गतिवान हो उठते हैं।
— इसलिए पृथ्वी को समग्र चेतनामय एक विराट शक्ति माना गया है।
— धुरी में घूमती हुई वह गतिवान है। यही गति उसकी शक्ति है। उसी के बल पर वह आदमी के पैरों को मजबूती से पकड़ रखती है।
— धरती से ही हमारे पैर उखड़ जाएं तो ?

— सोल्जेनित्सिन का एक उद्धरण है : 'धरती से भागकर हम जीवित नहीं रह सकते, इसलिए मैं प्राणों से अधिक अपनी मातृभूमि को चाहता हूं। लेकिन पूर्वजों का बोझ ढो सकने की क्षमता मुझमें नहीं है, मैं निर्वासित हूं।'

— परंपरा को तोड़कर आगे बढ़ना आसान नहीं है।

— जब कांच टूटता है तो वह टुकड़ों में बंट जाता है। हाथ में लगा, तो खून !

— परंपराएं कांच की तरह टूटती नहीं, उन्हें लोहे की तरह गलाना होता है।

— इस तरह गलाने में आदमी के भीतर का भी बहुत कुछ बदल जाता है।

— वही बदला हुआ आदमी निर्भय और क्षमतामय होता है, क्योंकि वह एक बड़ी प्रक्रिया से गुजर चुका है!

— एक प्रक्रिया से गुजरना समय को काटना है और निरंतर काटते हुए गतिवान बने रहना विकास का क्रम है।

— विकसित देश, विकासमान देशों की गति को रोकने के लिए कटिबद्ध हैं !

— सभ्यता की दौड़ में भागता आदमी और दौड़ में पिछड़ा आदमी कभी एक रेखा पर खड़े नहीं हो सकते !

●●

— पहाड़ के नीचे कितनी भी गति से दौड़िए, समय उससे भी तेज भागता है।

— आज की दुनिया की होड़ इसलिए समय के साथ है।

— हम जब-जब इसमें शामिल होते हैं, अधिक बलशाली शक्तियां हम पर आघात करती हैं।

— एक गरीब और पर-आश्रय देश इस होड़ में शामिल क्यों हो गया ?

— यह प्रश्न नहीं, एक दर्द है। दर्द से भरी एक चुनौती है !

— इसका उत्तर केवल हमारी सामर्थ्यवान उद्घोषणा है, महाबली अर्जुन ने महाभारत का युद्ध इसी तरह जीता था !

— हम संस्कृतियों के युद्ध से जूझ रहे हैं, जो अधिक कठोर है। शायद हमारी परीक्षा का यही समय है !

● सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

'बुद्धिजीवी' शब्द पश्चिम के प्रभाव से बना है। भारतीय परंपरा में 'इंटलैक्चुअल' या 'इंतेलिगेंत्सिया' के लिए कोई अलग नाम देना आवश्यक नहीं समझा गया था। शब्दार्थ तक ही सीमित रहें तो 'बुद्धिजीवी' कोई बहुत अच्छा नाम भी नहीं है। साधारणतया सभी पढ़े-लिखों को बुद्धिजीवी मान लिया जाता है, जिससे और भ्रांति फैलती है। मेरी समझ में 'इंटलैक्चुअल' उसी को कहना चाहिए जो प्रतिष्ठानों से स्वतंत्र रहते हुए सार्वजनिक प्रश्नों पर ऐसा मंतव्य प्रकट करता हो या पथ-निर्देश देता हो, जो शुद्ध मानवीय विवेक पर आश्रित हो।

अगर बुद्धिजीवी की यह परिभाषा ठीक है तो इसमें यह भी निहित है कि विवेक से जो प्रमाण प्राप्त होता है उसमें अगर स्वयं बुद्धिजीवी को नुकसान भी हो या उसे कुछ बलिदान भी देना पड़े तो उसके लिए वह तैयार होगा। विवेक जिस रास्ते को सही बताता है, उस पर चलने का जोखिम उठाने को जो व्यक्ति तैयार नहीं है उसे मैं इंटलैक्चुअल नहीं मानता।

यदि स्वराज्य-प्राप्ति में बुद्धिजीवियों ने सक्रिय भूमिका निभायी थी, तो उसका कारण यही था कि वे अपने विचारों के लिए जोखिम उठाने के लिए तैयार थे।

समय के हस्ताक्षर
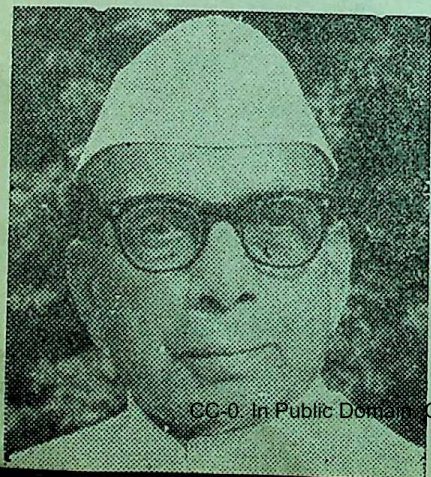
'देश की एकता के लिए एक भाषा का होना बहुत जरूरी है और हिंदी में ही वह क्षमता है कि वह समूचे राष्ट्र को बांधकर रख सकती है'—ये उद्गार हैं संसद-सदस्य श्री गोविंददासजी के। १७ जून को अचानक उनका निधन हो गया। उनकी आयु ७८ वर्ष की थी।

गोविंददासजी ने हिंदी भाषा और साहित्य की जो सेवा की है, वह अविस्मरणीय रहेगी। उन्होंने एक मिशन की तरह

अगर 'स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद यह भूमिका उत्तरोत्तर नगण्य होती गयी है' तो उसका कारण यही है कि बुद्धिजीवी कहलानेवालों का ध्यान उन लाभों और सुविधाओं पर केंद्रित है जो शिक्षा-दीक्षा से मिल सकती हैं। शिक्षा से जाग्रत विवेक से जो जिम्मेदारी भी उस पर आती है, उसके प्रति वह उदासीन रहा है या हो गया है।

मैं उत्तरदायित्व की बात कहता हूं वह किसी भी तंत्र में बना रहता है।

'लोकतंत्र' के कई अर्थ हैं, जिनमें से एक है 'बहुमत का शासन'। लेकिन इस परिभाषा से समस्या हल नहीं हो जाती, क्योंकि 'बहुमत' स्वयं परिभाषा चाहता है। जहां बहुत से दल हों, वहां किसी दल को दूसरे की अपेक्षा अधिक मत मिल जाएं तो क्या उसका बहुमत का दावा सही हो जाता है, अगर मत देनेवाली कुल संख्या की अपेक्षा उसका अल्पमत हो? या कि कुल संभाव्य मतदाताओं के अनुपात में उसे मिलनेवाले मतों की संख्या और भी कम हो? चुनावों में इसके उदाहरण मिल जाएंगे।

बहुमत बनाया जाता है। बनाने के साधन अगर सत्ताप्राप्त दल के अथवा एक वर्ग के अधीन हैं, तो ऐसा भी हो सकता है कि लोकहित और तथाकथित बहुमत में विरोध हो। ये परिस्थितियां भी कल्पित नहीं हैं, सभी लोकतंत्रों में इन्हें प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। ऐसी परिस्थितियों में निःसंदेह 'प्रबुद्ध व्यक्तियों की एक प्रभावक शक्ति' हो सकती है और उस पर इसकी जिम्मेदारी भी है। लेकिन जो व्यक्ति अपनी सच्ची राय के लिए जोखिम उठाने को तैयार नहीं है, वह 'प्रभावक शक्ति' नहीं हो सकता, क्योंकि उसके विचारों की सच्चाई की और कोई समकालीन कसौटी भी नहीं हो सकती।

तटस्थ और 'कमिटेड'

'तटस्थ' और 'कमिटेड' दोनों ही ऐसे

हिंदी का काम अपने हाथ में लिया था। यहां तक कि संसद में 'व्हिप' की परवाह किये बिना, उन्होंने अपने ही दल का हिंदी के प्रश्न पर विरोध किया और विरोध में ही मत दिया। निरंतर ५० वर्षों तक संसदीय जीवन में रहने वाले कदाचित वे अकेले राजनेता थे।

उन्होंने १०९ नाटक, 'इन्दुमति' नाम का एक उपन्यास, कुछ यात्रा-संस्मरण और तीन खंडों में अपनी आत्मकथा लिखी है। इतना अधिक लेखन शायद ही कोई कर सका हो। राजनीति में रहते हुए साहित्य के प्रति गहन आस्था और निष्ठा बनाये रखनेवाले वे अकेले व्यक्ति थे।

गोविंददासजी के निधन से संसद से हिंदी का एक प्रबल समर्थक उठ गया। जब-जब भाषा को लेकर संकट की स्थितियां उपस्थित होंगी गोविंददासजी को स्मरण किया जाएगा। 'कादम्बिनी-परिवार' की ओर से उन्हें विनम्र श्रद्धांजलियां।
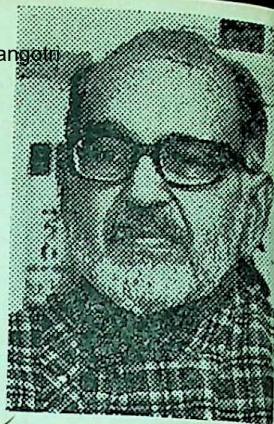
विशेषण हैं कि तरह-तरह का काम दे सकते हैं—और दे रहे हैं। तटस्थ होना अगर इसलिए है कि वह पूरे परिदृश्य को देखकर सच्चाई को पहचानने में सहायता दे तो वह साहित्य के प्रति 'कमिटेड' होना है और सही है। दूसरी ओर अगर 'कमिटेड' होना दल की सफलता के साथ इस तरह बंध जाना है कि जो सच्चाई दल के हित में नहीं जाती उसे अनदेखा कर दिया जाए तो वह सत्य के प्रति तटस्थ होना है जो कि गलत है। 'मानसिक साहसिकता' अनिवार्यतया कर्म की साहसिकता को प्रेरित करती है; वैसा उसे करना चाहिए। जो लोग सिर्फ गरमागरम बातों की भभक को मानसिक साहसिकता का प्रमाण मानकर साहसिक कर्म से उदासीन होते हैं, वे और जो कुछ हों, बौद्धिक नहीं हैं।

विदेशी शक्तियां परोपकारी नहीं

क्रांति को मैं न असंभव मानता हूं न अनुपयोगी। लेकिन अल्पविकसित देश में बड़ी विदेशी शक्तियों के हस्तक्षेप से अगर कोई क्रांति होगी तो वह उस अल्पविकसित जनता के देश के हित में नहीं होगी। सरकारें बनती या बनायी जाती हैं तो राष्ट्र की सेवा के लिए, स्वराष्ट्र की हित-साधना के लिए, न कि विदेशों की सेवाओं के लिए। यह तो हो सकता है कि किसी दूसरे देश का भला कर देने में अपनी भलाई होती है। ऐसी स्थिति में दूसरे देशों की भलाई परमार्थ के लिए नहीं होती। 'सभी यही कर रहे हैं तो हम ही क्यों वंचित रह जाएं', यह मनोवृत्ति निःसंदेह एक बड़ा संकट पैदा कर रही है। कहा जा सकता है कि

लेखक

यह एक संक्रांति-कालीन मनोवृत्ति है। पर अगर लेखक भी इसी तरह आक्रांत है तो वह बौद्धिक नहीं है, चोरों के समूह में एक और चोर है। जो संस्कृति नैतिक मूल्यों पर आधारित नहीं होती, वह संस्कृति भी नहीं रहती।

स्थिति यह है कि भौतिक समृद्धि को ही 'आधुनिकता' और 'प्रगति' का आधार मान लिया गया है और उस भौतिक समृद्धि के लिए भी मानदंड पश्चिम की वर्तमान समृद्ध अवस्था है। यही आधार रहा तो हम और पीछे जाएंगे। स्वतंत्रता की एक पीढ़ी का सबक पूरा पढ़ा नहीं गया।

अनुकरण की ऐसी दौड़ चली है कि दूसरों के विदेशी भाषाओं में चिंतन का अंगरेजी में अनुचिंतन और फिर घटिया अंगरेजी में अनुलेखन और फिर उस अनुलेखन का अनुवाद करते रहने से मौलिक चिंतन की संभावना कम से कमतर होती जा रही है।

—ए ३/५ वसंत विहार, नयी दिल्ली-५७

'बीमार देश' का परमाणु विस्फोट

● शीला झुनझुनवाला

सवेरे ८ बजे का समय! घड़ी की टिक-टिक के सिवा चारों ओर सन्नाटा। एक रहस्यमयी आतुरता, एक आशापूर्ण इंतजार। विदेशमंत्री स्वर्णसिंह की आंखें रह-रहकर घड़ी की ओर उठी जा रही थीं। ८ बज गये—क्या हुआ? फोन की आवाज क्यों नहीं आ रही है? क्या कहीं कोई बाधा उठ खड़ी हुई है? या फिर चुप्पी का कारण कहीं कोई असफलता तो नहीं है!

पूरा देश दिन-ब-दिन की जिंदगी से गुजर रहा था। किसी को भनक तक नहीं थी कि 'गरीब और कमजोर' देश के रूप में परिचित भारत पलक झपकते संसार के पांच समृद्धशाली राष्ट्रों की कतार में जा बैठनेवाला है।

अचानक फोन की घंटी बज उठी। स्वर्णसिंह के मस्तक पर पड़ी व्यग्रता और आतुरता की रेखाएं मिट गयीं। चेहरे पर एक हलकी-सी मुसकान कौंध गयी, कानों में स्वर गूंज उठे, "बुद्ध मुसकरा रहे हैं।" ये थे कोडशब्द, जो परमाणु-विस्फोट की सफलता का राज खोल रहे थे। कितना निश्चित वाक्य और सत्य के कितना करीब। बुद्ध सचमुच ही मुसकराये क्योंकि भारत ने बार-बार अपनी परमाणु संबंधी नीति को स्पष्ट करते हुए कहा है कि उसका कोई इरादा नागासाकी और हिरोशिमा को दोहराने का नहीं है। वह परमाणु शक्ति का प्रयोग केवल शांतिपूर्ण कार्यों के लिए करेगा।

एक प्रश्न उठता है कि विश्व की पांच प्रमुख आणविक शक्तियों को उनके प्लेटफार्म पर जाकर मिलने के लिए भारत को आखिर किस बात ने प्रेरित किया—और साधु-संन्यासी तथा अध्यात्म-चिंतन के लिए प्रसिद्ध भारत आखिर अणु की दौड़ में क्यों हिस्सा लेने लगा? शायद इस प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए हमें बहुत दूर नहीं जाना पड़ेगा। यह सही है कि पंडित जवाहरलाल नेहरू के सामने ही यह प्रश्न उठा था कि भारत अणु-गुट में सम्मिलित हो या नहीं। उन्होंने बार-बार अणु गुट में शामिल होने का विरोध किया। शायद उनकी बेटी इंदिरा भी यही करतीं, परंतु उनके सामने थी १९७१ मार्च की वह खुशनुमा सुबह जब पाकिस्तान ने बंगला देश पर आक्रमण किया था—सैकड़ों

हजारों निरीह लोगों पर बर्बरतापूर्ण हमला, जो उन्हें अपना भाग्य अपने हाथों स्वयं बनाने की आजादी नहीं देना चाहता था। अपने पड़ोसी देश को एक भयावह संकट से बचाने के लिए प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी ने बार-बार अमरीका से सहायता की प्रार्थना की पर अमरीका ने तो इस ओर से कान ही मूंद लिये, और कोई भी प्रयत्न रक्तपात को रोकने के लिए नहीं किया। विवश होकर चीन के साथ पाकिस्तान की गुटबंदी और अमरीका के निराशापूर्ण व्यवहार से उत्पन्न असंतुलन को सही ढंग से व्यवस्थित करने के लिए इंदिरा गांधी को रूस के साथ मैत्री की शर्तों पर हस्ताक्षर करने पड़े। शायद यही वह समय था, जब श्रीमती गांधी ने तय कर लिया था कि आज की शस्त्रों की दौड़ और स्वार्थपूर्ण संबंधों के युग में जब न कहीं कोई नैतिकता है और न कोई स्थायित्व किसी बात का— सब स्वार्थमूलक है तब अपने ऊपर, अपनी शक्ति के ऊपर भरोसा करना ही श्रेयस्कर है'। तभी भारत ऐसी स्थिति में अपने को रख सकेगा कि वह किसी बड़े गुट की कृपा के बिना भी जीवित रह सके और तभी प्रधान मंत्री ने 'सब ठीक है— आगे बढ़ते जाओ' का दिशा निर्देश अपने वैज्ञानिक साथियों को दे दिया।

गोपनीयता का रहस्य

योजना को प्रारंभ से ही कई बाधाओं का सामना करना पड़ा। श्री होमी भाभा-जैसे वैज्ञानिक को योजना के जन्मकाल में ही खो देना एक बहुत ही बड़ी कमी थी

अणु की उछाल, पहाड़ी के रूप में
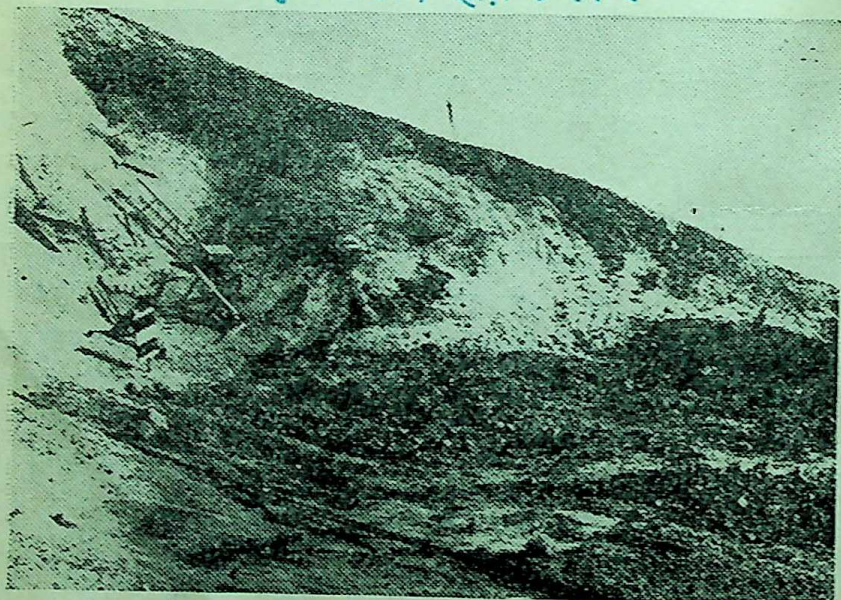
किंतु डॉ. एच. एन. सेठना ने बड़ ही उत्तरदायित्व पूर्ण ढंग से अपने कंधे पर रखे हुए बोझ का वहन किया। सबसे बड़ी खूबी या विशेषता थी—आणविक विस्फोट योजना को बिलकुल गुप्त रखने की। यहां तक कि योजना से घनिष्ठ रूप से संबंधित वैज्ञानिकों को भी अंतिम समय तक पता नहीं चला कि वे आणविक विस्फोट पर काम कर रहे हैं। जैसा कि श्री सेठना ने बाद में बताया, "प्रत्येक व्यक्ति केवल उसको सौंपे गये काम के प्रति जिम्मेदार था और कहां क्या हो रहा है इसकी कोई जानकारी उसे नहीं थी—योजना टुकड़ों-टुकड़ों में विभाजित थी और केवल बाद में उसे एक सूत्र में पिरोया गया।"

१९७३ के प्रारंभ में जाकर कहीं योजना के रहस्य में अन्य पांच साथियों को सम्मिलित किया गया।

इस पूरे दौरान 'ट्रामबे' क्षेत्र, जहां इतना बड़ा प्रयोग हो रहा था—बड़े शांतिपूर्ण ढंग से चलता रहा। कहीं कोई अतिरिक्त गतिविधि नहीं थी—कहीं कोई अतिरिक्त तनाव या आनेवाली उपलब्धि की आतुरता से प्रतीक्षा न थी, न ही अतिरिक्त वैज्ञानिकों को इस काम के लिए बुलाया गया—सब बड़े शांतिपूर्ण ढंग से चल रहा था और तब अचानक भारतीय परमाणु विस्फोट ने नियत तिथि पर विश्व के राजनीतिक क्षेत्रों में एक कंपन, एक सिहराव, एक आश्चर्य पैदा कर दिया।

परमाणु विस्फोट की सबसे बड़ी विशेषता थी—उसका भूगर्भीय होना।

विस्फोट से बने गढ़ का केंद्र-दृश्य
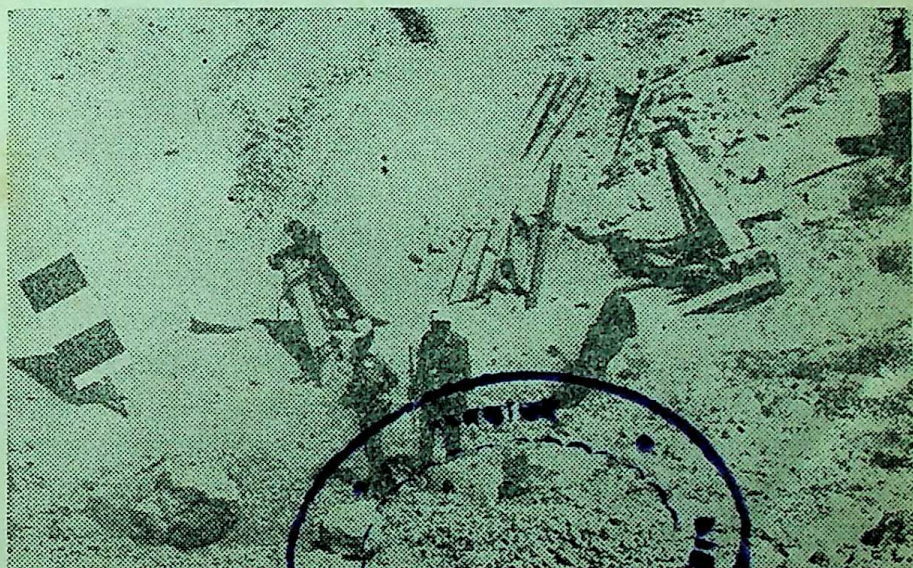
प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी के स्पष्ट आदेश थे कि 'विस्फोट से रेडियोधर्मिता वातावरण में जहां तक संभव हो न आये' और यह बात भी पूर्ण रूप से संभव हो सकी। रेगिस्तान के एक दूर-दराज कोने में पहली बार में इतने शांतिपूर्ण ढंग से और १० किलोमीटर भूगर्भीय प्रयोग अन्य किसी देश में अभी तक नहीं हुआ है। विस्फोट के दस मिनट के बाद एक हेलीकॉप्टर पृथ्वी से १०० फुट की ऊंचाई पर उड़ा और कोई रेडियोधर्मिता उसे नहीं मिली। यह एक बड़ी उपलब्धि थी और यही कारण था कि विश्व के प्रायः सभी देश भारत के परमाणु-विस्फोट से बौखला गये। 'दीन, दरिद्र और सामान्य देश' भारत जो अपनी गांधियन फिलासफी और अहिंसा की नीति के कारण बंधा हुआ है, पांच बड़े राष्ट्रों—अमरीका, चीन, सोवियत संघ, फ्रांस और ब्रिटेन की 'बपौती' एक क्षण में खतम कर देगा किसी को विश्वास ही नहीं था और इसीलिए एक पश्चिमी प्रवक्ता ने जलभुनकर कहा, "भारत पहले से ही तीसरी दुनिया में शस्त्र उत्पादन में अग्रणी है फिर परमाणु विस्फोट एक शांतिपूर्ण कदम है और रहेगा—कैसे कहा जा सकता है?"

भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियाएं

फ्रांस के परमाणु शक्ति आयोग ने भारतीय परमाणु विस्फोट का स्वागत किया किंतु फ्रांस सरकार ने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। अमरीकी प्रशासन ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने में बहुत सावधानी बरती है। डा. किसिंगर के अनुसार भारतीय परमाणु-विस्फोट से कोई शक्ति-संतुलन नहीं बिगड़ा है। ब्रिटेन की चुप्पी का रहस्य भारत को नाराज न करने की नीति हो सकती है। वैसे ब्रिटेन और दूसरे देशों को कोई अधिकार भी नहीं है कि वे भारत की आलोचना करें। १९६० में ब्रिटेन से एक प्रस्ताव द्वारा मांग की गयी थी कि वह एक ऐसे गैर-आणविक क्लब की स्थापना करे जो परमाणु अस्त्रों के उत्पादन पर, आणविक शक्तियों की निरंकुशता पर रोक लगाये-परंतु यह प्रस्ताव जन्मते ही दफना दिया गया था।

कहते हैं कि परमाणु विस्फोट के नियत समय से दो घंटे बाद विदेशी राजदूतों को विदेश मंत्रालय में बुलाकर विस्फोट की सूचना दी गयी। शायद, सबसे अधिक आश्चर्य सोवियत रूस के विक्टर माल्तसेव को हुआ होगा। भारत ने इतना बड़ा कदम बिना रूस से सलाह लिये उठाया और उसे कानों-कान खबर भी न हुई, इससे रूस को बहुत अधिक प्रसन्नता नहीं हुई होगी। फिर भी 'तास' की एक रिपोर्ट से पता चलता है कि रूस की प्रतिक्रिया मित्रतापूर्ण ही है। शायद रूस यह सोच रहा होगा कि एशिया में चीन की स्थिति को संतुलित रखने में परमाणु शक्ति संपन्न भारत की मित्रता 'सोने में सुहागा' सिद्ध हो सकती है। कुछ भी हो बड़े नाटकीय ढंग से भारत ने रूस को बता दिया है कि हमारी स्वतंत्र

सत्ता है और हम भी अब बराबरी से बात कर सकते हैं।

चीन की चुप्पी

जहां तक चीन का प्रश्न है वह भी कल तक परमाणु एकाधिकार के विरोध में बातें कहता रहा है। इसलिए जब वह एकाधिकार क्षीण होने लगा है तब चीन उसकी आलोचना कैसे कर सकता है?

सर्वेक्षण यदि करें तो पता लगेगा कि सबसे अधिक मुखरित हुआ कनाडा। 'भारतीय परमाणु विकास के कार्यक्रम में ओटावा ने प्रारंभ से ही पूरा योगदान दिया था और इसलिए जो गोपनीयता हमने बरती उससे कनाडा को धक्का लगना स्वाभाविक ही था, लेकिन भारत ने कनाडा या किसी और देश को किसी भ्रम में प्रारंभ से ही नहीं रखा है। जैसा कि यूनाइटेड नेशंस फोरम में भारत के प्रतिनिधि श्री एन. पी. जैन. ने कहा, "१९६६ से ही भारत ने घोषणा कर दी थी कि वह शांतिपूर्ण कार्यों के लिए अणु शक्ति का विकास करेगा और १८ मई का परमाणु विस्फोट उसी परंपरा की एक कड़ी है।"

केवल ६० मील पर इतनी बड़ी घटना हो जाए और पता भी न चले—शायद इसी तथ्य ने पड़ोसी देश पाकिस्तान को झकझोर दिया। श्री भुट्टो ने आज से कुछ वर्षों पहले साफ-साफ कहा था, "यदि भारत बम बनाता है तो चाहे घास खाकर जिंदा रहना पड़े हम बम प्राप्त करेंगे या अपने लिए एक खरीदेंगे" और कि "भारत परमाणु बम फोड़ने की योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए कटिबद्ध है।" (द मिथ ऑव इंडिपेंडेंस) इसी क्रम में उन्होंने सोच डाला कि शायद भारत अब पाकिस्तान को 'ब्लैकमेल' करेगा। और तो और उन्होंने मांग की है कि पांच 'सुपर पावर' उन्हें आणविक छतरी प्रदान करें। भारत ने कभी पाकिस्तान से लड़ने में पहल नहीं की है।
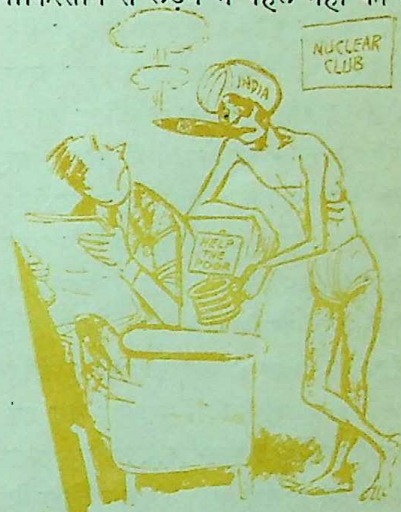
भारतीय विस्फोट पर विदेशी बौखलाहट
('न्यूजवीक' से साभार)

युद्ध होने पर सैन्य बल की कमी भी हमारे पास नहीं रही है। वैसे १९५५ से पाकिस्तान परमाणु शक्ति दोहन का कार्य निरंतर कर रहा है और यह समझ में नहीं आता कि यदि वह दूसरे देशों से सहयोग ले सकता है तो भारत से ही सहयोग लेने में उसे क्या बाधा है। हठवादिता के सिवा इसे और क्या कहा जा सकता है।

अणुराष्ट्रों का असली भय

असल में बात यह है कि आणविक शक्तियों का निहित स्वार्थ इस बात से डरा हुआ है कि अब उनका एकाधिकार खत्म हो रहा है। ये शक्तियां आणविक अस्त्रों के उत्पादन-प्रसार में संसार के लिए खतरा तो देखती हैं परंतु स्वयं अपने अणु शस्त्र - संग्रह को न तो नष्ट करना चाहती हैं और न ही सीमित रखना चाहती हैं। जहां तक पश्चिमी शक्तियों की इस आशंका का सवाल है कि आणविक शक्ति विकास से उप - महाद्वीप में शक्ति संतुलन गड़बड़ा जाएगा और पड़ोसी देश पाकिस्तान को खतरा पैदा हो जाएगा, वह पूरी तरह निर्मूल है। 'गार्जियन' ने अपने एक लेख में कहा, 'पाकिस्तान और चीन के दो अंतर्राष्ट्रीय झगड़े अभी सुलटे नहीं हैं और यह ऐसे झगड़े हैं जिनमें परमाणु बम का प्रयोग किया जा सकता है... यदि भारत और पाकिस्तान में फिर से युद्ध होता है तो एक पक्ष परमाणु बम प्रयोग कर सकता है और दूसरा नहीं... दोनों ओर से बड़ी शक्तियां भी शामिल होंगी। भारतीय सिपाहियों का जीवन भी खतरे में होंगे और तब उस दशा में भारत के पास वही कारण कराची पर परमाणु बम छोड़ने के होंगे जो ट्रूमैन के पास हिरोशिमा पर बम छोड़ने के थे।' लेकिन जैसा इकॉनामिस्ट' ने कहा, "भारत सैन्य शक्ति में पाकिस्तान से बढ़ा हुआ है। यह १९७१ के युद्ध से ही स्पष्ट हो गया था—इसलिए परमाणु विस्फोट से शक्ति संतुलन में कोई अंतर नहीं पड़ेगा।" वैसे आज जब हमने परमाणु विस्फोट किया तो संसार को हमारी नीति पर शंका हो रही है लेकिन जब चीन ने परमाणु विस्फोट किया था, उस समय किसी शक्ति ने उस विस्फोट को इतना तूल नहीं दिया था।

'न्यूयार्क टाइम्स' और 'लंदन टाइम्स'—जैसे पत्रों का कहना है कि भारत ने परमाणु विस्फोट केवल अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए किया है जबकि उसके पास पैसा नहीं है—गलत है। यह सही है कि इस समय भारत की आर्थिक राजनीतिक स्थिति निम्नतर उतार की ओर है और देश में चारों ओर विषम वातावरण है, फिर भी परमाणु विस्फोट ने देश की प्रतिष्ठा को ऊपर उठाया है। 'न्यू स्टेटसमैन'—जैसे पत्र चाहे जितने कार्टून छापें कि 'भारतीय परमाणु बम इतने बड़े गढ़े खोदने के लिए चाहिए, जिनमें वह अपने करोड़ों भूखे-नंगों को दफना सकें'—स्थिति यह है कि परमाणु परीक्षण ने सिद्ध कर दिया है कि भारत के पास योग्यता और बुद्धि दोनों का ऐसा सम्मिश्रण है कि यदि ठीक-ठीक उद्देश्य सामने हो तो कार्य सिद्धि में उसे कोई पीछे नहीं हटा सकता। जैसा कि एक विदेशी प्रवक्ता ने कहा है, "परमाणु विस्फोट ने संसार को दिखा दिया है कि भारत एक कमजोर और बीमार देश नहीं है।"

—८५ रवीन्द्र नगर, नयी दिल्ली-३

रेल हड़ताल के बाद

• अखिलेश दत्त त्रिपाठी

इस बार पूरे देश के स्तर पर रेल हड़ताल ने जनता, सरकार और कर्मचारियों को झकझोर कर रख दिया। हड़ताल तो समाप्त हुई, लेकिन अपने पीछे दुष्परिणामों की एक लंबी शृंखला छोड़ गयी है। कारण, कार्य और स्थितियों का विश्लेषण करने से स्पष्ट हो जाता है कि पूरे मामले में न तो सरकार और न कर्मचारी, कोई भी पक्ष दोषमुक्त नहीं हो सकता।

दुनिया के आर्थिक संकट से प्रभावित और अपनी महंगाई से पीड़ित देश की दशा को ध्यान में न रखते हुए कर्मचारी नेताओं ने हड़ताल का जो निर्णय लिया, उसे उचित नहीं ठहराया जा सकता। कर्मचारियों के कंधे पर बंदूक रखकर विरोधी दलों ने सरकार को निशाना बनाने की कोशिश की, यह भी सही अवसर नहीं था।

विरोधी दल ऐसी स्थितियों को अपनी सफलता का सुयोग मानते हैं जब जनता परेशान हो और उसके सामने सरकार को कमजोर और निकम्मा साबित करने की सुविधा हो। इस बार कुछ उलटा ही हुआ है। जनता इस बात को अच्छी तरह समझ गयी है कि हड़ताल से उसकी समस्याओं का हल नहीं निकलनेवाला है, इसलिए रेल हड़ताल के सिलसिले में जनता का रुख आक्रोश पूर्ण रहा।

यदि विरोधी नेता वर्ग-विशेष की समस्याओं को नहीं, वरन् जन-सामान्य की समस्याओं को लेकर हड़ताल का आवाहन करते और अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर सक्रिय होते तो उन्हें सफलता अवश्य मिलती। दैनिक उपयोग में आनेवाली वस्तुओं का घोर अभाव और निरंतर बढ़ती हुई महंगाई, यह इतनी बड़ी समस्या है जिसे आधार बनाकर प्रभावी जन-आंदोलन संगठित किया जा सकता था। ऐसा न करके जन-विरोधी हड़ताल को ही जन्म दिया गया।

वैसे सरकार हड़ताल को कुचल देने में सफल रही है, लेकिन हड़ताल को असफल बनाने के उसके तरीके रहे हैं, साथ ही हड़ताल को सफल बनाने के लिए कर्मचारियों ने जो तरीके अपनाये हैं, इन सबसे प्रशासन और कर्मचारियों के बीच लंबे समय तक न भरी जा सकनेवाली दरार बन गयी है। जाहिर है, इससे रेल विभाग की कार्य-क्षमता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा और अंततः यात्रियों की असुविधाएं बढ़ेंगी।

सरकार बच गयी लेकिन...

सरकार का सीधा आरोप है कि यह हड़ताल गैर-कानूनी, राष्ट्र-द्रोही थी और

सरकार को गिराने के लिए विरोधी दलों द्वारा रचा गया षड्यंत्र थी। इस मामले में जिस तीव्रता और तत्परता के साथ विरोधी पक्ष के नेता सक्रिय रहे, उसे देखते हुए सरकारी पक्ष का अनुमान तथ्य बनकर सामने आता है।

यह तो संयोग है कि अपनी सख्ती और दृढ़ता के कारण सरकार बच गयी, लेकिन अगर हड़ताल सफल हो जाती और जन-असंतोष अपने पूरे उभार पर आ जाता तो सरकार के गिरने में कोई संदेह नहीं था। ऐसी स्थिति में वर्तमान सत्ता को न केवल अपनी रक्षा, वरन देश को विपत्तियों से बचाये रखने के लिए पूर्वाग्रह से मुक्त होकर जनता की समस्याओं पर गंभीरता से विचार करना है।

जनता के मन में कर्मचारियों के प्रति भी कोई अच्छी भावना नहीं है क्योंकि इनकी हड़तालों से उसे परेशान होना पड़ता है। आंदोलनों और हड़तालों की लगातार बाढ़ से उत्पादन लगभग ठप हो गया है और राष्ट्र-विकास में गत्यावरोध उत्पन्न हो गया है। बाहरी आक्रमण की अपेक्षा यह भीतरी संकट अधिक घातक है।

राजनीतिक प्रहार:

सत्तारूढ़ और विपक्षी दलों के बीच उभरी हुई राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता और एक-दूसरे के विरुद्ध बेमौके किये गये प्रहारों से अंततः जनता को हानि होती है। हड़तालों के कारण शासन और कर्मचारियों के आपसी संघर्ष के बीच उपभोक्ता को पिसना पड़ता है। इन हालात में आम

८ मई की सुबह रेलवे स्टेशन का एक दृश्य: हड़ताल के दौरान सरकार की ओर से पूरा प्रबंध था
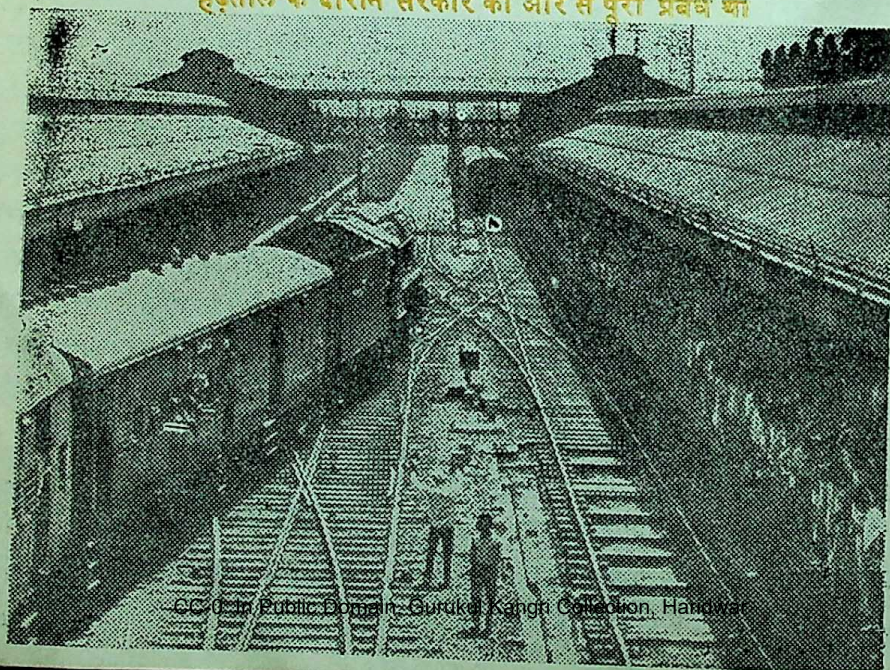
जनता के मन में राजनीति के प्रति घृणा उत्पन्न हो रही है और जनतंत्र से उसका विश्वास हटता जा रहा है। अगर जन-तांत्रिक ढंग से देश का समुचित विकास जारी रखना है तो सभी पक्षों को समस्या पर पुनर्विचार करना होगा।

रेलवे हड़ताल के दौरान सरकार की काफी कुछ आलोचना होती रही है, किंतु सरकार ने हड़ताल के विरुद्ध जिस प्रकार कड़ा रुख अपनाया, वह सर्वथा उचित और आवश्यक था। यदि हड़ताल जारी रहती तो देश की अर्थ-व्यवस्था को भारी धक्का लगता। यह धारणा भी निर्मूल हो गयी है कि सरकार नारे-बाजी और धमकियों से ही राजी होती है। भविष्य में हड़ताल करनेवालों को हड़ताल करने से पहले काफी कुछ सोचना

रेलमंत्री ललितनारायण मिश्र

पड़ेगा। रेलमंत्री श्री ललितनारायण मिश्र ने हड़ताल के समक्ष न झुकने का जो दृढ़-संकल्प लिया, उस पर वह अंत तक डटे रहे। उनके इस दृढ़-संकल्प को स्वयं प्रधानमंत्री का समर्थन प्राप्त था।

रेल-हड़ताल के दौरान भी कुछ गाड़ियां बराबर चलती रहीं। पंजाबमेल नयी दिल्ली स्टेशन छोड़ते हुए
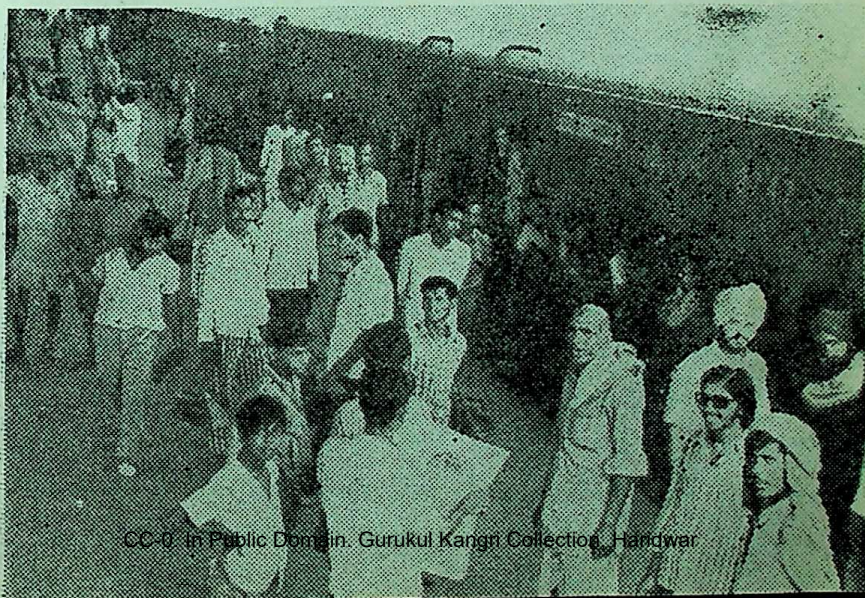
वेतन-वृद्धि समाधान नहीं

हड़ताली रेल-कर्मचारियों और उनके नेताओं ने सरकार के सम्मुख ऐसी मांगें रखीं, जिन्हें स्वीकार करना देश की वर्तमान आर्थिक स्थिति में संभव नहीं था। वेतन आयोग और मियांभाई ट्रिब्यूनल की सिफारिशों के फलस्वरूप सरकार रेल-कर्मचारियों को १९० करोड़ रुपये देना स्वीकार कर चुकी थी। उसके बाद बोनस और वेतन में ७५ प्रतिशत वृद्धि की मांगें स्वीकार करने का अर्थ था, प्रति वर्ष ४०० करोड़ से भी अधिक व्यय। अतः सरकार ने स्पष्टतः इन दोनों मांगों को ठुकरा दिया। अतिरिक्त खर्च का यह भार घूम-फिरकर जन-साधारण पर ही पड़ता––उस जन-साधारण पर जिनमें से ४० प्रतिशत लोगों को दोनों वक्त कठिनता से भोजन मिल पाता है।

समस्या का समाधान वेतन-वृद्धि नहीं है। इसीलिए प्रधानमंत्री ने कर्मचारियों को चेतावनी दी, "कर्मचारियों के लिए अपने वेतन-बिलों को बढ़ाते जाना ही अभीष्ट नहीं होना चाहिए; क्योंकि वेतन वृद्धि के साथ-साथ महंगाई भी बढ़ती है।"

रोज-रोज की हड़तालों से जनता तंग आ गयी है। जन-जीवन को अस्त-व्यस्त करने वाली इन हड़तालों के प्रति उसके मन में गहरा आक्रोश है। फिर, यह हड़ताल रेल कर्मचारियों की थी, जिनसे जन-साधारण का रोज ही संपर्क रहता है। स्टेशन के टिकट-घर से लेकर माल और पार्सल-घरों तक, प्लेटफार्म पर पहुंचने से लेकर प्लेटफार्म से बाहर निकलने तक, और सवारी गाड़ियों से लेकर प्रतीक्षालयों तक, जनता को इन रेल-कर्मचारियों से जैसा व्यवहार मिलता है, उसे देखते हुए हड़ताल में कर्मचारियों को जनता का समर्थन कैसे मिल सकता था?

कर्मचारियों और मजदूरों के हितों की रक्षा के लिए 'श्रम-संगठनों' अथवा 'मजदूर यूनियनों' की स्थापना की जाती है। ये यूनियनें कुछ निर्दिष्ट राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय नियमों के अधीन काम करती हैं। भारतीय रेलवे की गणना देश के सबसे बड़े उद्योग के रूप में की जाती है। अतः अन्य उद्योगों की तरह रेलवे में भी कर्मचारियों की यूनियनें बनीं। ऐसी यूनियनें अपने स्थानीय प्रभाव का उपयोग करके छोटी-मोटी हड़तालें कराती रहीं। रेलवे में पिछले एक वर्ष में जो ७५ बार हड़तालें हुई, वह इन्हीं के कारण।

हड़ताल कराने में तेज यूनियन के रूप में 'आल इंडिया रेलवेमेंस फेडरेशन' उभरकर आयी। प्रारंभ से लेकर अब तक फेडरेशन ने १९५१, १९६० और अब १९७४ में जोरदार हड़ताल के तीन बार आयोजन किये, किंतु तीनों बार हड़ताल बुरी तरह विफल हुई।

यह निर्विवाद है कि संगठित मजदूरों और कर्मचारियों को हड़ताल करने का पूरा-पूरा हक है, किंतु उस हक के साथ कर्तव्य भी जुड़ा है। मनमाने ढंग से जब

तंबाकू
कितनी दोस्त, कितनी दुश्मन

• डॉ. सुधीर क्षीरज

तंबाकू मानव-सभ्यता का एक अभिन्न अंग बन चुकी है। जौक साहब ने अंगूरी शराब के विषय में जो पंक्तियां कही थीं वे तंबाकू की पत्ती के लिए भी उतनी ही सटीक बैठती हैं—

'छुटती नहीं यह काफिर मुंह की लगी हुई।'

तंबाकू मानव की कितनी दोस्त है कितनी दुश्मन, अब इसका विश्लेषण विज्ञान ने कर दिया है। जरमन में तंबाकू को 'जेन्यूसगिफ्ट' कहते हैं, जिसका अर्थ है 'सुख का जहर'।
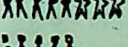
तंबाकू का प्रचलन चार सौ वर्षों से ज्यादा पुराना नहीं है। आरंभ में तंबाकू को औषध के रूप में मान्यता देकर उसका प्रचलन बढ़ाने का प्रयास किया गया। आज भी आयुर्वेद एवं प्राचीन औषध-विज्ञान में तंबाकू का विशिष्ट स्थान है। कतिपय चर्मरोगों में अब भी तंबाकू का औषध के रूप में प्रयोग होता है। १८८० तक तंबाकू अमरीकी शासकीय फार्माकोपिया में थी किंतु उसके उपरांत उसे औषधों की वैज्ञानिक नामावलि से निकाल दिया गया।

तंबाकू का पहला पौधा

पूर्वी देशों से, पाश्चात्य देशों में तंबाकू का आगमन सोलहवीं सदी में हुआ और उसी समय से उसकी ख्याति और व्यापारिक महत्त्व बढ़ने लगा। उसका नामकरण जीन निकोट के नाम पर निकोटियाना पड़ा। जीन निकोट पुर्तगाल में फ्रांसीसी राजदूत थे, और उन्होंने १५६० में अपने लेखों द्वारा तंबाकू के कुछ जीवनोपयोगी और उत्तम गुणों का भ्रामक

अनेक रोगों में मृत्युदर : तंबाकू सेवन से संबंध

	तंबाकू का प्रयोग नहीं	तंबाकू सेवन	मृत्यु अनुपात
फेफड़ों, श्वसनी का कैंसर			११:१
श्वसनी एवं फेफड़े के अन्य रोग			६:१
कंठ का कैंसर			[illegible]:१
मुख कैंसर			७:१
अन्न-नलिका का कैंसर			४.२:१
[illegible]			३:१
रक्तादि संचरण रोग			२.३:१
हृद् रोग			१.७२

प्रचार किया था। उन्होंने ही फ्लोरिडा से लाकर पुर्तगाल में तंबाकू का पहला पौधा लगाया।

सर्वप्रथम निकोटियाना रस्टिका नामक तंबाकू को पाइप में डालकर पिया गया किंतु उसकी तीव्रता के कारण उसे छोड़ फ्रांसीसी डॉ. वॉयसन ने पहली वैज्ञानिक शोध की जिसके अनुसार, ४५ ओष्ट-कैंसर, ११ मुख-कैंसर, ७ जिह्वा एवं ५ टांसिल-कैंसर के मरीजों में ६६ व्यक्ति धूम्रपान करते थे, एक तंबाकू खाता था और एक किसी अन्य रूप में तंबाकू का सेवन करता
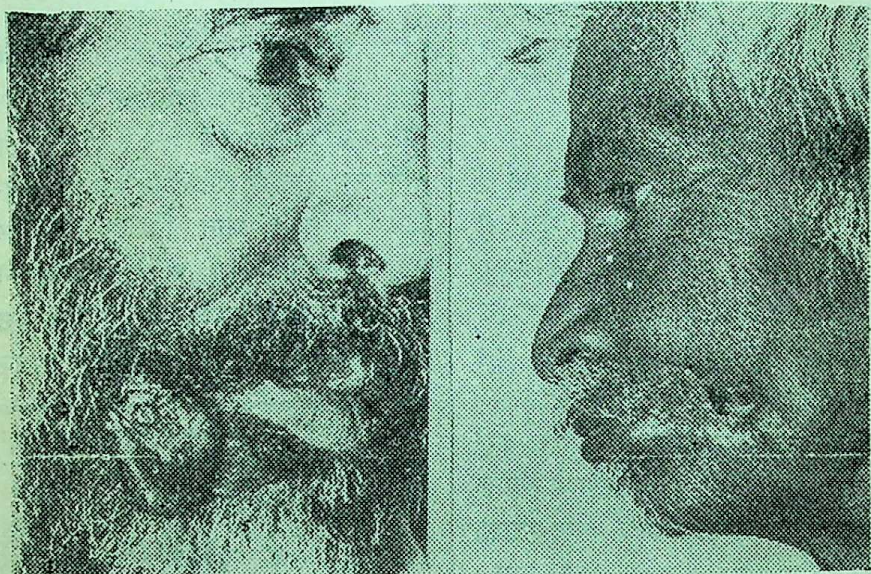
मुंह में गाल के नीचे चूना-मिश्रित तंबाकू को देर तक रखकर चूसने का परिणाम: पहले अंदर एक अर्बुद उत्पन्न होता है, बाद में यही रिसता हुआ नासूर बन जाता है

निकोटियाना टाबाकम की ओर धूम्रपान के शौकीनों का ध्यान आकर्षित हुआ। आज विश्व के प्रायः १०० देशों में इस तंबाकू की खेती होती है।

तंबाकू और कैंसर

सर्वप्रथम सन १७९५ में सोमरिंग ने पाइप पीनेवालों में ओष्ठ-कैंसर की अधिकता प्रमाणित की। तदुपरांत १८५९ में

था। निचले ओष्ठ का कैंसर वहीं होता है जहां पाइप या सिगार दबाया जाता है। छोटे पाइप या सिगार पीनेवालों से कहीं कम लंबे पाइप पीनेवालों को कैंसर होता है। इस सबसे प्रथम बार यह प्रमाणित किया गया कि ऊष्मा और तंबाकू का धूम्र कैंसर के लिए उत्तरदायी हैं।

बीसवीं सदी के प्रारंभ में आंकड़ों

के विश्लेषण से यह सिद्ध हो गया कि फेफड़ों के कैंसर से मृत्युदर में कल्पनातीत वृद्धि हुई है और इसका कारण १९३८ में आंशनर एवं डिबोके नामक अमरीकी शल्य-विशेषज्ञों ने धूम्रपान की बढ़ती हुई लोकप्रियता को बताया। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद सिगार की लोकप्रियता कम हो गयी और उसका स्थान सिगरेट ने ले लिया। कैंसर से धूम्रपान के संबंधित होने के प्रमाण भी अब उपलब्ध हैं, जैसे जलती हुई सिगरेट के मुंह पर ९० डिग्री सेंटीग्रेड का तापमान होता है जो खौलते हुए पानी से नौ गुना अधिक है और श्वास में खींचे गये धूम्र में तापमान ३० डिग्री सेंटीग्रेड होता है जो एक इंच सिगरेट रह जाने पर ५० डिग्री सेंटीग्रेड हो जाता है। यह ताप श्वसनी की कोशिकाओं को बहुत हानि पहुंचाता है। इस गरम धूम्र में एक मिलीमीटर सिगरेट में पांच करोड़ सूक्ष्म-कण होते हैं और ये ०.१५ से १.० माइक्रोन तक होते हैं। एक सिगरेट से प्रायः ५०० मिलीग्राम (आधा ग्राम) धुआं प्राप्त होता है। इसमें अत्यधिक हानिकारक रसायन एसिटल डीहाइड, एसिटोन, हाइड्रोजन सायनाइड आदि विषैले तत्त्व होते हैं।

यह धुआं सीधे जाकर फेफड़ों की प्रमुख नलिकाओं की सतहों पर जम जाता है। इस जमे हुए धुएं को धूम्रधूलि या टार के नाम से जाना जाता है। इस धूम्रधूलि से कैंसर उत्पन्न करनेवाले अवयव अलग प्राप्त किये जा चुके हैं, जिनका प्रयोग
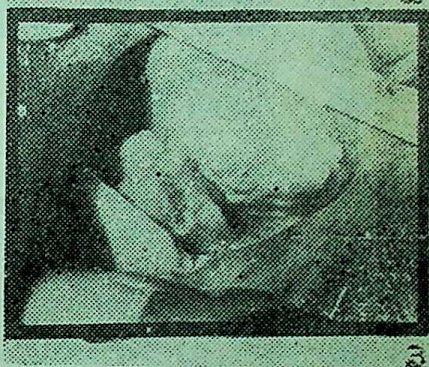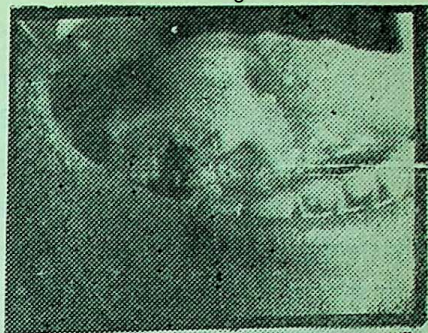
ऊपर : शल्य द्वारा निकाला गया जबड़ा
बीच में : तंबाकू-जन्य जिह्वा का कैंसर
नीचे : जिह्वा के नीचे निरंतर बारह वर्षों तक तंबाकू रखकर चूसने का परिणाम

करने से सिद्ध हुआ है कि वे जानवरों (चूहे एवं खरगोश) में कैंसर-ग्रंथियां (अर्बुद) उत्पन्न करते हैं। टेस्ट ट्यूब में उगाये गये मानव-भ्रूण में भी इस धूम्रधूलि के प्रभाव से फेफड़ों में कैंसर के परिवर्तन परिलक्षित हुए हैं। यह भी सिद्ध हो चुका है कि यह धूम्रधूलि कितनी ही देर से कैंसर की उत्पत्ति करे, किंतु एक बार कैंसर ग्रंथि (अर्बुद) का जन्म होते ही धूम्र-धूलि उसकी भीषण बढ़ोत्तरी में अत्यधिक सहायक है। सिगरेट के धूम्र का फेफड़ों और श्वसनी के सूक्ष्मग्राही रोमकों पर बहुत भयंकर दुष्प्रभाव पड़ता है।

उन्नतिशील देशों ने आधुनिकतम ढंग से इस धूम्रपान को कम हानिकारक बनाने के लिए प्रयास किये हैं—बेंजो-पायरीन आदि हाइड्रोकार्बन धुएं से अलग कर दिये जाने पर उसकी कैंसर-उत्पादक क्षमता मात्र २५ प्रतिशत रह जाती है। इसके लिए तंबाकू में नाइट्रेट फास्फेट आदि के मिश्रण, विशेष प्रकार का कागज आदि प्रयोग किया जाने लगा है। इसी प्रकार कमजोर तंबाकू के उत्पादन और प्रयोग को भी बढ़ावा दिया जा रहा है। फिल्टरों के प्रयोग से भी आंशिक सफलता मिली है।

निम्नलिखित उपाय करने पर धूम्रपान कम हानिकारक हो सकता है—

सदैव फिल्टरवाली सिगरेट का प्रयोग

करें।

धुएं को मुंह से नीचे न जाने दें या कम-से-कम मात्रा में श्वास में जाने दें।

सिगरेट होल्डरों का प्रयोग करें।

सिगरेट से कम-से-कम कश लें और आधी दूरी तक जली सिगरेट पीकर फेंक दें।

कम-से-कम सिगरेट पियें और वह भी ऐसी जिसकी तंबाकू काफी हलकी हो।

भारत में तंबाकू

भारत में हुक्के का स्थान अब सिगरेट ने ले लिया है, किंतु अब भी ग्रामीण और निर्धन जनता बीड़ी का प्रयोग करती है। सबसे अधिक खतरनाक सत्य यह है कि बीड़ी में प्रयुक्त तंबाकू की रासायनिक शुद्धि नहीं की जाती, इस प्रकार वह अत्यधिक हानिकारक हो जाती है और न केवल कैंसर अपितु अनेक जटिल रोगों का कारण बनती है।

इसी प्रकार पान ... क्रम ... सेवन, गाल बुद्ध - महावीर, तुलसी - कबीर ...ना है। वर्ण-दलित में सांस्कृतिक संक्रमण विद्यमान पु...हा है। यह संक्रमण जितना उभर सके, ग...विस्फोटक स्थिति को प्राप्त हो सके, ...उतना अच्छा है। साहित्यकार को इसे सदा उभारने में योगदान करना चाहिए। मूल्यों का संघर्ष तो पग-पग पर बना रहता है। इससे घबराना नहीं चाहिए। यदि परंपरागत मूल्य टूटते हैं तो उनकी जगह नये मूल्य बनते हैं। मानव ऐसा प्राणी है जो अपने लिए मूल्यों की सृष्टि करता है और उन्हें अपने जीवन से भी अधिक महत्त्व
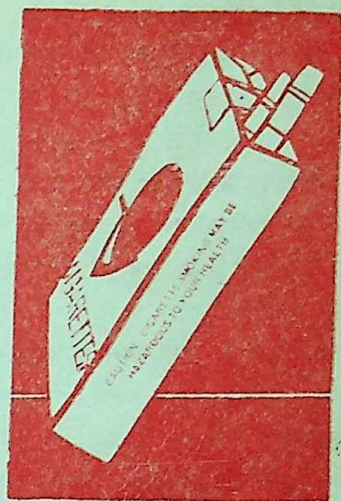
अमरीकी सरकार द्वारा सिगरेट के विज्ञापन प्रतिबंधित हैं। प्रत्येक पैकेट पर उपर्युक्त चेतावनी प्रकाशित करना अनिवार्य है

उलटा मुंह में रखती हैं। तंबाकू के इन सभी प्रकार के सेवनों का ही परिणाम है कि अपने देश में ७० प्रतिशत कैंसर मुंह एवं कंठ में होता है।

बहुत से व्यक्ति अपने दुर्व्यसन के पक्ष में यह तर्क देते हैं कि तंबाकू मानसिक एकाग्रता देती है तथा स्फूर्तिदायक होती ... पर अब तक के आयुर्विज्ञान प्रयोग ...हीं सिद्ध किया है कि तंबाकू खाने से ...रों में सूक्ष्म कंपन हो जाता है तथा दिल्ली ...नसिक एकाग्रता और ध्यानाव- साहित्...ने में मस्तिष्क के आड़े आ जाती तथाकथित ...धीरता आदि तंबाकू का मरते हैं। इन दिनों के स्थायी लक्षण हो सरकार द्वारा साहित्य...

तंबाकू : रोग ही रोग

अनेक प्रमाणों और आंकड़ों के आधार पर कहा जा सकता है कि तंबाकू के सेवन से बहुत-सी बीमारियां होती हैं। आज प्रायः सभी प्रशिक्षित डॉक्टर जानते हैं कि प्रति सिगरेट धूम्रपान से दस से पचीस मिलीमीटर तक रक्तचाप में और पांच से बीस तक हृदय-गति में वृद्धि होती है, त्वचा का ताप पांच से सात सेंटीग्रेड तक गिर जाता है।

लगातार खांसी, द्रवाधिक्य, वात-स्फीति (एम्फाइसीसा) आदि के कारण फेफड़े-जन्य हृदय-रोग का जन्म होता है। इन रोगों से पीड़ित प्रत्येक सात में से छह व्यक्ति तंबाकू का सेवन करनेवाले होते हैं।

आमाशय एवं ग्रहणी में व्रण (स्टमक और ड्यूडनल अलसर) भी तंबाकू से ही संबंधित हैं। जठर अत्यम्लता या हाइपरएसिडिटी का सीधा संबंध तंबाकू एवं चाय के सेवन से है।

रक्त-परिसंचरण एवं परिहृद् हृदय-रोग (कॉरोनरी हार्ट डिसीज) भी तंबाकू का सेवन करनेवालों में अधिक ही होता है। इसी प्रकार सभी प्रकार के औषध विज्ञानों ने समान रूप से रक्तचाप में तंबाकू का निषेध स्वीकार किया है

बरजर रोग रक्त-परिसंचरण एक विशेष रोग है जो भारत में बीड़ी पीनेवालों को ही हो वाहिनियां बीड़ी के धूम्र संकुचित हो जाती हैं

कभी हाथों में कोथ (गैंगरीन) हो जाता है और इसका अंत सदैव घुटने के ऊपर से एक या दोनों पैर काटकर ही होता है। इस बीमारी से तंबाकू और बीड़ी का संबंध सिद्ध हो चुका है। इसी तरह का रोग 'रेनोस डिसीज' दोनों हाथों में होता है जिसका संबंध धूम्रपान से अवश्य है।

तंबाकू ने न केवल जन-धन की हानि की है, वरन मानव की कार्यक्षमता पर भी कुठाराघात किया है। इसके विरुद्ध सामाजिक जागरण की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। अमरीकी कैंसर-सोसायटी के अध्यक्ष प्रख्यात सिने-कलाकार टोनी-कर्टिस के अभियान आई. क्यू. (आई-क्विट) 'मैं छोड़ता हूं' के प्रभाव से लाखों अमरीकियों ने धूम्रपान को तिलांजलि दे दी है। इसी प्रकार भारतीय कैंसर-सोसायटी के अध्यक्ष, भारत के वित्तमंत्री श्री वाई. बी. ... टाटा इंडस्ट्रीज के डा...

राजधानी में आयेदिन साहित्यिक गोष्ठियां होती रहती हैं। पिछले महीने 'भारतीय साहित्य परिषद' ने सांस्कृतिक संक्रमण के प्रश्न को लेकर एक चर्चा-गोष्ठी की थी। इस गोष्ठी में अनेक सम-सामयिक प्रश्न उभरकर आये। जहां अधिकांश वक्ता मूल विषय से भटक गये वहां सर्वश्री राजेन्द्र अवस्थी, डॉ. महीपसिंह तथा अज्ञेय श्रोताओं को सर्वाधिक प्रभावित कर सके। इस बात पर बल दिया गया कि आज राजनीति ने सब को आक्रांत कर रखा है। सारे प्रश्न व्यक्ति-स्वातंत्र्य को लेकर उत्पन्न हुए हैं। व्यक्ति की सत्ता सर्वप्रमुख है। उसकी सत्ता किसी भी वैज्ञानिक, तकनीकी प्रभाव से दब नहीं सकी, न दबेगी।
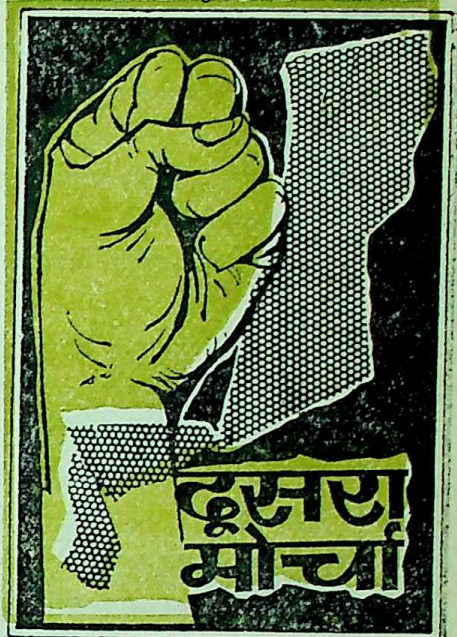
सांस्कृतिक संक्रमण का प्रश्न

संक्रमण को ऐतिहासिक क्रम में देखा जाए तो बुद्ध-महावीर, तुलसी-कबीर और सवर्ण-दलित में सांस्कृतिक संक्रमण विद्यमान रहा है। यह संक्रमण जितना उभर सके, विस्फोटक स्थिति को प्राप्त हो सके, उतना अच्छा है। साहित्यकार को इसे सदा उभारने में योगदान करना चाहिए। मूल्यों का संघर्ष तो पग-पग पर बना रहता है। इससे घबराना नहीं चाहिए। यदि परंपरागत मूल्य टूटते हैं तो उनकी जगह नये मूल्य बनते हैं। मानव ऐसा प्राणी है जो अपने लिए मूल्यों की सृष्टि करता है और उन्हें अपने जीवन से भी अधिक महत्त्व देता है। मूल्यहीनता की दुहाई देने की अपेक्षा उपयोगी और अनुपयोगी की जांच जरूरी है ताकि जीवन और कर्म में व्याप्त विसंगतियों को दूर किया जा सके।

सुविधाभोगी साहित्यकार

जहां अन्य नगरों में साहित्यिक चर्चाओं के केंद्र प्रायः कॉफी हाउस हैं, वहां दिल्ली में 'टी हाउस' वह केंद्र है जहां साहित्यिक अखाड़ेबाजी चलती है और तथाकथित 'नये' आंदोलन जन्म लेते और मरते हैं। इन दिनों यहां चर्चा का विषय है सरकार द्वारा साहित्यकारों का दमन एवं

अभिव्यक्ति के संवैधानिक अधिकार का हनन। इस गरम चर्चा के दौरान एक-दो ऐसे 'लेखकों' के प्रति सम्वेदनाएं प्रकट की गयीं जिन्हें सरकार ने 'रेल-हड़ताल' में भाग लेनेवाले कर्मचारियों को भड़काने के आरोप में गिरफ्तार किया है। उन्हें आंतरिक सुरक्षा-कानून के अंतर्गत गिरफ्तार किया गया था।

ऐसी बातों को लेकर एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उभरता है—क्या साहित्यकार या लेखक के नाते सारे कानूनों को सुविधा के साथ भोगने का भी अधिकार है? आश्चर्य यह है कि पिछले १०-१५ वर्ष में शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति सामने आया हो जिसे केवल लेखन के आधार पर सत्ता के आक्रोश का शिकार होना पड़ा है। कम-से-कम और कुछ नहीं, तो इतनी आजादी जरूर है कि हमारा लेखक मुक्त रूप से व्यक्ति, समाज और सत्ता की आलोचना कर सकता है। इसके प्रमाण हैं राजधानी में खेले जानेवाले वे अनेक नाटक, जिनमें वर्तमान सत्ता की खुलकर भर्त्सना की गयी है।

लेखन-स्वातंत्र्य की दुहाई मांगनेवाले लोग मात्र सतही स्तर पर जाकर ठहर जाते हैं। लेखक बनने का अर्थ यह नहीं है कि आप अराजक तत्त्वों में शामिल हो जाएं और अपनी सारी गलतियों को लेखक के मुखौटे में ढांक लें। जिस दिन लेखक ऐसी सुविधा की मांग करेगा वह राजनीतिज्ञों की श्रेणी में चला जाएगा। तब आज की गंदी राजनीति के विरोध का लेखक के लिए क्या अर्थ होगा?

पूरे सवाल को यदि सही नजरों से देखा जाए तो बहुत से अलेखक, अधलेखक एवं पत्रकार ये सब काम करते मिलते हैं और सही सृजनशील लेखकों और बुद्धिचेताओं को बदनाम करते हैं। हम उनके बारे में कुछ नहीं लिखना चाहेंगे, जो लेखक होकर भी नारेबाजी में विश्वास करते हैं, और किसी भी 'टी हाउसी' परिपत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं।

'पश्यन्ती' एक महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

दिल्ली से एक त्रैमासिक पत्रिका निकली है 'पश्यन्ती'। इसके सम्पादक हैं श्री प्रणवकुमार वन्द्योपाध्याय। पहला ग्रीष्म अंक देखकर संतोष हुआ। समूची पत्रिका सुव्यवस्थित और सुसंपादित है। एक छोटी पत्रिका को एक साथ इतने विशेषज्ञ लेखकों का सहयोग मिल जाना अपने आप में महत्त्वपूर्ण बात है। पत्रिका की विशेषता यह है कि वह राजनैतिक 'वादों' से परे है और उसने सभी तरह की विचारधाराओं को स्थान दिया है। किसी समय 'निकष' ने हिंदी साहित्य की अभिवृद्धि में अच्छा योग दिया था। 'पश्यन्ती' यदि उस आशा को पूरा कर सके तो वह छोटी पत्रिकाओं के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगी।

—अश्वमेध

कहानी

अंधकार

• ओमप्रकाश निर्मल

ताश की जोड़ी खरीदकर वह दूकान से निकला और बस-अड्डे की ओर बढ़ गया । हवा बंद थी और धूप टूटकर पड़ रही थी । उसकी आंखें धूप की तेजी में चौंधिया रही थीं । इधर-उधर देखे बिना वह पुल की ओर बढ़ता चला गया । पीछे से किसी ने उसे जोर से पुकारा तो उसने पलटकर देखा । एक मित्र के साथ साइकिल के पैंडल पर पांव रखे सुमनजी खड़े थे । वह बेमन से पलट पड़ा और सड़क पार करके दूसरी ओर के फुटपाथ पर आ गया । उसे मजबूरन मुसकराकर सुमनजी और उनके मित्र के प्रति आत्मीयता प्रकट करनी पड़ी । कोई और वक्त होता तो इन दोनों का मिलना उसे अच्छा लगता लेकिन जिस जगह वह पहुंचना चाहता था, वहां पहुंचने में इन लोगों के टोकने से विलंब होने की संभावना थी, अतः उसे बुरा-सा लगा था ।

"क्यों भई, आंखों की रोशनी कमजोर हो गयी या फिर हमसे कोई कुसूर कि तुम इस तरह अनजान बने आगे बढ़ गये ?" सुमनजी के चेहरे से लगा कि उन्होंने इसे गंभीर रूप से लिया था और वे यह मानकर चल रहे थे कि उनकी जान-बूझकर उपेक्षा की गयी थी ।

उसे पल भर के लिए धक्का-सा लगा, लेकिन आरोप को अ-गंभीर बनाने के लिए उसने उत्तर दिया, "भला मैं जानबूझकर आपकी उपेक्षा क्योंकर करूंगा ?"

"बात कुछ ऐसी ही है," वे मुसकराये, "ये मेरे मित्र मिस्टर सिंह हैं, तुम तो इन्हें जानते ही हो, और यह भी कि मैं उनके घर
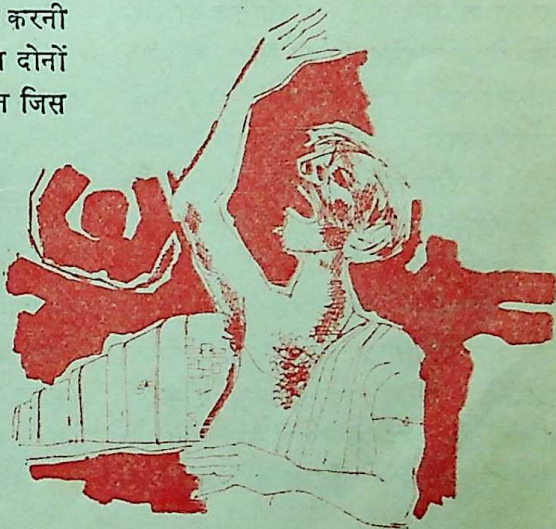
के दरवाजे पर खड़ा हूं और मेरा यह फर्ज हो जाता है कि जब इनके दरवाजे पर खड़ा हूं तो इस दरवाजे के सामने से गुजरनेवाले परिचित-मित्र का उचित सम्मान किया जाना चाहिए। चलो, इसी बात पर मिस्टर सिंह की ओर से चाय-कॉफी कुछ हो जाए।"

"चलिए!" मिस्टर सिंह ने हंसकर कहा और और फिर वे तीनों ठहाके लगाते हुए सामने के मदरासी होटल में घुस गये।

जोड़ियां खरीदीं तो ये कंबख्त मिल गये, पूरे तीन घंटे ले लिये। अब जाने से कोई लाभ भी नहीं है। छह से पहले क्या पहुंचा जाएगा!—होटल से निकलकर फुटपाथ पर खड़ा-खड़ा वह सोचने लगा। फिर वह मन बनाकर आगे बढ़ा ही था कि उसके पांव ठिठक गये। सामने पुल था। विशाल पुल और उस पर से इधर और उधर से धड़धड़ाते हुए छोटे-बड़े वाहन आ-जा रहे थे। धूप अब भी तेज थी इसलिए पैदल चलनेवालों की भीड़ नहीं थी। फुटपाथ पर तपते हुए सीमेंट पर उघड़े बदन भिखारी पेट पीट-पीटकर आने-जानेवालों से भीख मांग रहे थे। वह ठिठका खड़ा रहा—कमरे पर वापस लौट जाए। अब जाना बेकार है।

फिर अंदर से प्रेरणा हुई—चलो, अगर घर पर होंगे तो कुछ देर तो बैठा जा सकेगा। नीता की गलतफहमी दूर करने का कोई भी मौका उसे चूकना नहीं चाहिए। संभवत: इस बीच वे उसके कमरे पर आये हों और उसके न मिलने पर लौट गये हों—उसने सोचा।

सामने से उसे कुछ नारे सुनायी दिये। वह जरा आगे बढ़कर पुल के फुटपाथ पर एक ओर खड़ा हो गया। उसका दिल जोर-जोर से धड़कने लगा।

"हटो, हटो, भागो..."पुकारती हुई डंडेवाली पुलिस की दो-तीन टुकड़ियां उसके पास से जुलूस की दिशा में दौड़ गयीं। वे धारा १४४ तोड़कर जुलूस निकाल रहे थे। चारमीनार पर सत्याग्रह होने वाला था। दो-तीन हजार की भीड़ नारे लगाती हुई पुल की ओर बढ़ी आ रही थी। लंबा-चौड़ा विशाल पुल। दोनों ओर की रेलिंगों पर हांडी जितने बड़े-बड़े बिजली के गोले तेज धूप की रोशनी में खूब चमचमा रहे थे।

"तेलंगना—जिंदाबाद!"

"तेलंगना—ले. के रहेंगे!"

"सी. एम.—डाउन-डाउन!"

"चमचों में चमचा—गुरुमूर्ति चमचा, वी. वी. राजू चमचा!"

"सी. एम. भाड़खाऊ!"

"जय तेलंगना—
जयहिंद...!"

वह सहमा हुआ वहीं खड़ा रहा। उसके पास ही एक बुढ़िया भी खड़ी थी। उससे जरा हटकर एक अद्धड़ रेलिंग का सहारा लिये नदी के गंदले जल की ओर देख रहा था।

जुलूस पुल के बीच तक पहुंच गया

था। जब उसे होश आया तो वह फुटपाथ पर औंधा पड़ा था और उसकी पीठ जोर से दर्द कर रही थी। उसने हाथ-पांव हिलाये। शरीर के जोड़-जोड़ में दर्द था। यहां से वहां तक सारा पुल सुनसान था और पुल के दोनों ओर टोपवाली पुलिस खड़ी थी। उसने बेहोशी से पूर्व अपने पास खड़े हुए

उसने दिमाग पर जोर डाला और सोचना शुरु किया। जब वह जुलूस से बचकर पुल के इस ओर से दूसरी ओर जाने का प्रयत्न कर रहा था, तभी जुलूस पर पुलिस दोनों ओर से टूट पड़ी थी। पुल के दोनों ओर पुलिस की लारियां खड़ी थीं और अश्रु-गैस छोड़ी जा चुकी थी। फिर

अद्धड़ और बुढ़िया को खोजा। बुढ़िया की ओढ़नी का एक पल्ला उसे फुटपाथ के नीचे सड़क की नाली के पास दिखायी दिया और बूढ़े का कहीं पता नहीं था। पुल के बीच में कुछ फटे हुए कपड़े, उधड़ी हुई जेबें और टूटी हुई चप्पलें पड़ी थीं। लाल रंग के तेलंगना के नक्शेवाले कुछ कागज तेज हवा के कारण इधर-उधर उड़ रहे थे!

हाथों में डंडे लिये हुए भयंकर और डरावनी आवाजें करते हुए पुलिसवाले जुलूस में शामिल लोगों को घेरे में लेकर टूट पड़े थे। सड़क सुनसान थी। पुल वीरान था। लोगों की फटी हुए कमीजें और टूटी हुई चप्पलें यहां-वहां पड़ी हुई थीं। पुल पर से इतनी देर में एक भी सवारी नहीं गुजरी थी। उसने ताश की जोड़ी और जेब में पड़े ३—४

रुपये टटोले । [illegible] गया था ।

उसे लगा कि शायद अकस्मात पुल टूट गया है।

कोई भिखारी भी नजर नहीं आया। शायद वे भिखारियों को भी आंदोलनकारी समझकर गाड़ियों में ठूंस-ठूंसकर ले गये थे ।

उसे लगा, जिस तरह पुल अभी थोड़ी देर में फिर जीवंत हो जाएगा, चहल-पहल शुरू हो जाएगी और जीवन सामान्य हो जाएगा, उसी तरह सरकार और पुलिस और जनता के बीच जो एक अदृश्य पुल है, वह भी उसी तरह जुड़ जाएगा। कल फिर प्रदर्शन होंगे। लोग नारे लगाएंगे, धरना देंगे, गिरफ्तार होंगे और लाठी-गोली खायेंगे, लेकिन जो लोग इस सब झमेले में नहीं हैं, उनके टूटे हुए दिलों और दर्दभरी चोटों का क्या होगा ? इस अमानवीय दमन और क्रूरता के शिकार वे निरपराध और निरीह लोग भी क्यों बन जाते हैं, जिनका सिर्फ अपने पेट और परिवार से सरोकार है ? और तभी उसे लगा था कि पुल हहराकर टूटता जा रहा है। उसके सिर में एक भारी बूट की ठोकर मारता हुआ कोई दूसरी ओर भागा जा रहा था। उसकी आंखों में फिर एक बार अंधकार भर गया और वह अंदर तक भरता ही चला गया !

—२१-७-२५०,
चारकमान, हैदराबाद–२

इच्छाओं की आहट

छोड़ो भी छोड़ो भी, शहद-भरे शब्दों को
चखने दो चखने दो, थोड़ी-सी कड़वाहट

रोना ही रोना सिखलाता है पिछड़ापन
बच्चा बन जीना भी सचमुच है पागलपन

सीखो भी सीखो भी, चतुराई दुनिया की
रहने दो रहने दो, आकाशी अकुलाहट

बूंद-बूंद तृप्ति, और इतनी ये तृष्णाएं
कितने दिन और भला अमृत को ठुकराएं

तोड़ो भी तोड़ो भी, संयम के घेरों को
पीने दो पीने दो, भर-भरकर जीवन-घट

इंतजार-इंतजार, कैसा यह इंतजार
चलो-चलो शीघ्र चलो, यहीं कहीं है बहार

खोलो भी खोलो भी कानों के दरवाजे
आने दो आने दो, इच्छाओं की आहट

——पुष्पा राही
एफ ८/७ माडल टाउन, दिल्ली-११०००९

● यमुनादत्त वैष्णव

वरुण की राजधानी सुषा

पुराविदों द्वारा उत्खनित उन अनेक अति प्राचीन नगरों में से जो भारतीय पुराणों मे वर्णित हैं तथा जिन्हें भारतीयों ने कपोल-कल्पित समझकर संतोष कर लिया है, वरुण की राजधानी सुषा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। वह बाबेलु (बैबीलोन) से भी प्राचीन देश एलाम की राजधानी तथा हिंदू संस्कृति की प्राचीन केंद्र रही है। कालांतर में वह फारस के हख्मनीश (एक्मीनियन) वंश के शासकों की शरदकालीन राजधानी भी बनी।

मत्स्य पुराण में पृथ्वी के परिमाण के संदर्भ में पश्चिम दिशा के लोकपाल जल-देवता वरुण की राजधानी सुषा का तीन बार उल्लेख हुआ है। एक श्लोक में सूर्य की गति से सुषा की भौगोलिक स्थिति और दूरी भी दी गयी है।

सुषा के खंडहरों का, जो आजकल सुस नाम से प्रसिद्ध हैं, पाश्चात्य पुराविदों ने पिछले सौ-सवा सौ वर्षों से उत्खनन किया है। ये खंडहर फारस की खाड़ी में समुद्रतट से उत्तर पश्चिम की ओर केरखा और शाहपुर (या सौर) नदियों के संगम पर वर्तमान शुस्टर नामक नगर से ३० मील दूर स्थित हैं और संसार के सबसे पुराने नगर के खंडहरों में इन्हें माना जाता है। इन खंडहरों का सबसे पहले उत्खनन लौफ्ट्स तथा चर्चिल नाम के अंगरेज पुराविदों ने सन् १८५० में आरंभ किया किंतु वास्तविक उत्खनन, फ्रांस की सरकार द्वारा ही संपन्न हुआ।

फ्रांस सरकार के अनुदान से ही सन १८८४ में दितुलेफाय दंपति तथा डी. मॉर्गन के नेतृत्व में दो दल सुषा के उत्खनन के लिए भेजे गये। केरखा नदी के दोनों ओर खंडहरों के टीले समतल मैदान के अंत में आज भी बड़ी-बड़ी ऊंचाइयों तक उठे हुए दिखलायी देते हैं। डी. मॉर्गन ने इन खंडहरों को प्राचीन नगर के इन चार भागों में बांटा है।

१. दुर्ग—यह प्रागैतिहासिक काल से हख्मनीश शासकों के समय तक निरंतर प्रयोग में लाया जाता रहा है।
२. शाही नगर—इसमें डेरियस महान तथा उस वंश के राजाओं के भव्य प्रासाद थे।
३. व्यापारिक महल्ले, दूकानों आदि का क्षेत्र।
४. केरखा नदी के दक्षिणतट पर वर्तमान सौर और केरखा के बीच का क्षेत्र।

शाही नगर डेढ़ किलोमीटर लंबाई में फैला हुआ है और उसे एक परिखा,

जिसे यहां बाजार कहते हैं, दुर्ग से पृथक करती है। हख्मनीश शासकों का 'अपादान' उत्तरपूर्व में एक ३५०×३५० मीटर माप के चबूतरे पर स्थित है।

सुषा, ऐलाम के प्रागैतिहासिक काल से ही स्वतंत्र राज्य की राजधानी रही है। डी. मॉर्गन ने उत्खननों से २० मीटर की गहराई पर प्राप्त मिट्टी के बरतनों को ८,००० वर्ष ईसवी पूर्व का बताया है।

उत्खनन से छह फुट मोटी एक तह में कोई भी पुरातत्वीय सामग्री नहीं मिली है। इससे यह निष्कर्ष निकला है कि जल-प्रलय से पुराने नगर के ध्वस्त होने के बाद नये नगर का निर्माण किया गया। इस नये नगर के उत्खनन से बिना पकायी हुई मिट्टी की पट्टिकाओं पर अंकित लेख मिले हैं, जिन्हें डी. मॉर्गन ने ४,००० ई. पू. का बताया है।

एलाम-असुर संघर्ष

एलाम का असीरिया की तत्कालीन भाषा में अर्थ था पर्वत। बाबेलु के पूर्व के पहाड़ी क्षेत्र में असीरियनों के इस जाति से अनेक संघर्ष हुए थे। इसीलिए इस देश को एलाम या एलम्तु नाम दिया गया। सुमेरी जल-प्रलय के महाकाव्य 'गिलगमिस' में एलाम के शासक कुम्भाव द्वारा बाबेलु पर हुए आक्रमण का उल्लेख है। कुंभस्तिर, नखंतु, शुशिनाक, कुदुर (११८५ ई. पू.) आदि शासकों के नाम भी ऐतिहासिक हैं। अंतिम शासक ने अपने से २,००० वर्ष पुराने मंदिरों की मरम्मत करवाकर उनके मूल निर्माता के साथ अपना नाम भी अंकित किया। दोनों नाम आज भी पढ़े जा सकते हैं। पुराणों के अनुसार मनु के पौत्र आयु के वंशज 'एल' या 'आयव' कहलाते हैं। मनु का उल्लेख शतपथ ब्राह्मण में 'इला' के पिता के रूप में हुआ है। सुषा के लोग अपने को शिशंकु अथवा आंशन कहते थे। असुर देश के शासक

अपादान (ईरान के प्राचीन सिंहासन) में वरुण का विशाखयूप: दो मुखी वृषभ स्तम्भ

द्वारा १२४८ ई. पू. में एलाम पर हुए आक्रमण के ऐतिहासिक प्रमाण आज भी उपलब्ध हैं। असुर शासक तिगलाथ-पिलेसर ने सर्वप्रथम एलाम देश पर आक्रमण किया और सुषा के निकट दोनों देशों की सेनाओं में भयंकर संघर्ष हुआ। कहा

जाता है कि एलाम के घुड़सवारों के पास कवच और शिरस्त्राण नहीं थे किंतु असुर लोगों से कहीं अच्छे रथ थे। एलाम की सेना में आसपास के पर्वतों के अनेक छोटे राजाओं की सेनाएं थीं। दोनों दलों ने अपनी-अपनी विजय की घोषणा की किंतु असुर सेना को दूरिलु नामक स्थान पर अपनी हार माननी पड़ी। इसके उपरांत सेनाचेरिब (७०५–६८२ ई. पू.) नामक असुर शासक ने एलाम के समुद्री तट पर आक्रमण किया। इसी समय सुषा में आंतरिक विद्रोह में खल्लुदूश नामक शासक मारा गया और असुर शासक ने उस विद्रोह का लाभ उठाकर सुषा पर आक्रमण किया।

अशुरबाण अर्थात बाणासुर के अत्याचार

एलाम के शासक खुम्बान-कालदास ने ६७४ ई. पू. में बाबेलु पर आक्रमण करके सिपपार तक का भूभाग ले लिया। बाबेलु का शासक एसरहैड्डौन उस समय मिस्र देश के अभियान पर गया हुआ था। एसरहैड्डौन की मृत्यु के बाद असुर देश का सबसे अधिक प्रतिभाशाली शासक अशुरबाण (भारतीय पुराणों का बाणासुर) गद्दी पर बैठा। उसने अपने राज्यकाल (६६९–६२६ ई. पू.) में एलाम पर अनेक आक्रमण किये। पहला युद्ध सुषा नगर के निकट तुलिज नामक स्थान पर हुआ। एक एलामी सरदार ने अपने राजा को धोखा देकर उसे अशुरबाण के हवाले कर दिया। इस शासक के कटे हुए सिर को अशुरबाण ने निनेवा (शोणितपुर) भेज दिया। इस घटना के एक चित्र की प्रतिलिपि आज भी ब्रिटिश म्यूजियम में है। अशुरबाण ने अपनी विजय के उल्लास में सुषा के सेनानायकों की खाल उतरवा दी और सभी सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया। अशुरबाण की आज्ञा के अनुसार खुम्बान-इगास नामक व्यक्ति को एलाम का शासक बनाया गया और उसे एलाम की चंद्रदेवी नाना की मूर्ति को निनेवा भेज देने का आदेश दिया किंतु एलाम की प्रजा ने राजा को मूर्ति न भेजने के लिए विवश किया। क्रोधित होकर असुरों ने ६५१ ई. पू. में पुनः आक्रमण किया। खुम्बान-इगास के एक देशद्रोही भाई तम्मारितु ने असुरों से मिलकर उसकी हत्या करवा दी। तम्मारितु जब गद्दी पर बैठा तो एलाम की प्रजा ने इन्दुभगास नामक एक सामंत के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया और तम्मारितु देश छोड़ने को विवश हुआ। इन्दुभगास को आर्य जातीय सामंत माना गया है।

अशुरबाण ने तीसरी बार अपनी शरण में आये हुए तम्मारितु को लेकर फिर सुषा पर (६४५ ई. पू.) आक्रमण किया और नगरी को ध्वस्त कर चंद्रदेवी नाना की मूर्ति को निनेवा भेज दिया।

अगली शताब्दी में इंडो-यूरोपियन कही गयी जातियों के हख्मनीश वंश के शासकों ने सुषा को फिर अपनी राजधानी बनाया। इस वंश के प्रसिद्ध शासक दाराबहायुस (डेरियस महान) ने पश्चिम में

यूनान और मिस्र तथा पूर्व में सिंधु नदी घाटी तक अपनी राजसत्ता जमा दी।

बाबेलु के इतिहासकार सैग्स का कथन है कि सुषा का अरब शुमालीलैंड, उत्तरी सूडान तथा इथियोपिया से अगरु, धूपगंध आदि का व्यापार होता था। यह एक युक्तिसंगत परिकल्पना है किंतु भारत से उसका व्यापार प्रामाणिक तथ्य है।

दाराबहायुस का स्वर्णकाल

दाराबहायुस के समय में सुषा नगरी फिर चमक उठी। इस शासक ने सुषा से एजियन सागर के सार्डिस नगर तक १५०० मील लंबा राजमार्ग बनाया और उसे एक अधिकारी के संरक्षण में रखा। यह अधिकारी राजचक्षु कहलाता था। इस शासक ने अपने को 'आंशन के राजा' की उपाधि से भी घोषित किया। सुषा का यह उत्कर्ष अधिक दिनों तक नहीं टिका और सिकंदर महान ने इस नगर पर ३३१ ई. पू. की शीतऋतु में आक्रमण कर दिया।

असुर धनुर्धर और अंगरक्षक

कोलाक्षर लिपि की मिट्टी की पट्टिकाओं में से एक पट्टिका पर लिखित अभिलेख

ग्रीक इतिहासकारों ने, जो सिकंदर के साथ आये थे, सुषा के निवासियों को श्यामवर्ण का बताया है। आज भी फारस की सीमा से लगे पश्चिम बलूचिस्तान तक के इस भूभाग में श्यामवर्ण के निग्रोटो कहे गये लोग निवास करते हैं। प्राचीन-

काल में यह सारा भूभाग अनार्य लोगों से बसा था, जिन्हें ग्रीक इतिहासकारों ने अनार्यकॉय (ANARIAKOI) कहा है। होमर के महाकाव्य 'ओडेसी' में ट्राय के युद्ध में सुषा के श्यामवर्ण के राजा मेम्नन के आने का उल्लेख है।

भारतीय पुराणों में वरुण के पुत्र को सुषेण कहा गया है तथा यहूदी बाइबिल (ओल्ड टैस्टामेंट) में सुषा को सूसनगढ़ी और वहां के लोगों को सूसन कहा है। यहां के निवासी अपने को शिशकु कहते थे। अथर्ववेद में आये शिशुक शब्द (६-१४-३) को सायण के भाष्य में एक जंगली जंतु कहा गया है।

सुषा शब्द का सकार, प्राचीन पहलवी में हकार में परिवर्तित हो गया और कालांतर में सुषा को हुसा कहा जाने लगा। तुलनीय है असुर का परिवर्तन अहुर में तथा सप्त का हप्त में। पुरानी फारसी में एक और परिवर्तन 'ह' के 'ख' में बदल जाने पर हुआ। इसी भाषाजन्य विकार से हुसा (हुजा) को भी खुजा कहा जाने लगा। अहवाज नामक दक्षिण फारस के वर्तमान नगर का नाम भी सुषा या हुजा पर ही पड़ा है अर्थात हुजा लोगों का नगर किंतु स्वयं सुषा के निकट का क्षेत्र शाह रजा के फरमान से खुजीस्तान कहलाता है।

सुषा की प्राचीन भाषा

सुषा की प्राचीन भाषा न तो सुमेरी थी, न सेमेटिक। उसे पुराभाषाविद आंजनाइट, सुसियन या केवल एलमाइट कहते हैं। कई शताब्दियों तक विस्मृत रहने के बाद यह मूल भाषा १५०० ई. पू. के लगभग फिर जीवित हुई थी। डी. मॉर्गन के उत्खनन दल के पादरी सदस्य स्कील ने भी इस प्राचीन भाषा का अध्ययन किया और मिट्टी की पट्टिकाओं पर लिखे अभिलेखों को खोजा। मॉर्गन का कहना है कि एलाम में गणना के लिए दशमलव प्रणाली प्रचलित थी। बाबेलु में गणना साठ के आवर्तनों से होती थी, वहां के गणितज्ञों को दशमलव प्रणाली या शून्य का ज्ञान नहीं था। धातुकर्म में भी सुषा के लोग बाबेलु के लोगों से उन्नत थे।

ऋग्वेद में वरुण, इंद्र, यम, मित्र, अग्नि आदि की ही भांति एक ही सत् तत्व के अनेक नामों में से एक नाम है। 'भगवदगीता' में वरुण को मानव के सभी अच्छे बुरे कर्मों का द्रष्टा यादस (जल-दानव) कहा गया है।

वरुण का यह रूप कि वह मनुष्य के शुभाशुभ कर्मों का द्रष्टा है, फारस के शासकों द्वारा सुषा नगरी के शासक को राजचक्षु उपाधि देना, उसी भावना की झलक है। इस नगर को आंशन नाम देना और फारस के शासकों द्वारा स्वयं 'आंशन का शासक' की उपाधि अंगीकार करना भी वरुण का एक आदित्य माना जाना है क्योंकि अंश भी बारह आदित्यों में से एक आदित्य का नाम है, जो वरुण का सहोदर है। आंजन अर्थात् अंजन का देश भी वरुण देश का ही द्योतक है क्योंकि

'अमरकोश' में वर्णित आठ दिशाओं में पश्चिम के लोकपाल वरुण के दिशाधारक हाथी (दिग्गज) का नाम अंजन है।

कालांतर में वरुण जलमात्र का उपदेवता माना जाने लगा। इंडो-ईरानियों में भी एकमात्र उपास्य वरुण (अहुरमज्द) के सहायक देवी-देवता कालांतर में उसके प्रतिद्वंद्वी हो गये । अहुरमज्द के अनेक नामों में वरुण का ४४ वां और १०१ वां नाम था, किंतु वह फिर मोह तथा कुपथ - गमन का बोधक बन गया था (बुन्देहिश्न २८—३)।

नृतत्व विशारदों ने सिंधु घाटी की सभ्यता के लोगों को भी सुषा के उन प्राचीन निवासियों की भांति निग्रीटो, प्रोटो आस्ट्रालाइड, मेडिटेरेनियन आदि बताया है । भाषा शास्त्री डॉ. सुनीतकुमार चाटुर्ज्या के अनुसार इन्हीं लोगों ने गंगा, तांबूलवंग, लकुट, बाण, शाल्मली, गज, राका आदि अनेक शब्द संस्कृत भाषा को दिये। हिंदू धर्म में वैदिक सभ्यता का अंश केवल एक चौथाई माना गया है तथा शेष तीन चौथाई वही प्राचीन अनार्य संस्कृति का अंश है, जो आर्यों के आने से पहले सिंधु नदी घाटी में प्रचलित थी। सिंधु घाटी के श्यामवर्ण के पूर्व वैदिककाल के ये हिंदू अपने देवी-देवताओं की उपासना पुष्प, गंधाक्ष (रोली-चावल), नैवेद्य, धूप-दीप तथा शंख-घंट आदि से किया करते थे। डॉ. मॉर्गन के अनुसार पूर्वी ईरान में इंडो-आर्यन कही गयी जाति का आगमन ईसा के २५०० वर्ष पूर्व हुआ। उससे भी दो-ढाई हजार वर्ष पहले तत्कालीन हिंदू जाति का यह पश्चिम दिशा में स्थित वरुण द्वीप तथा पश्चिम एशिया में एलाम नाम से विख्यात देश पर्याप्त समुन्नत और सुसभ्य था। सुषा इसी सभ्य देश की राजधानी थी, जिसके विषय में पाश्चात्य शोधकर्ताओं ने अब प्रचुर पुरातात्विक सामग्री उपलब्ध कर ली है।

सोने के पत्तर पर वृषभ की आकृति अंकित है। कीलों के सूराख बताते हैं कि इसको दरवाजों के मढ़ने में प्रयुक्त किया जाता था

—रुहेला लॉज, तल्लीताल, नैनीताल

ईरानी दुनिया का अंधायुग

• दैरील द' मोन्ते

ईरान की राजधानी की स्थितियों के अंतर्विरोधों एवं असंगतियों का जायजा वहां जाकर ही लिया जा सकता है। तेहरान का वह इलाका जो पहाड़ी प्रदेशों के अधिक करीब है उत्तरी भाग कहलाता है और जो आधुनिक एवं पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से बुरी तरह आक्रांत है। जबकि इसका दक्षिणी भाग अब भी गंदा, निर्धन तथा पूर्वी पारंपरिक संस्कारों से जकड़ा हुआ है।

सच तो यह है कि राजधानी के उत्तरी हिस्सों में ही तैल उद्योग के व्यापार से प्राप्त राजस्व को सबसे ज्यादा खर्च किया जाता है। इसकी फिज़ूलखर्ची के वैभव का अंदाजा वहां की सड़कों पर आयातित कारें, लंदन की दूकानों से भी बढ़-चढ़कर लगनेवाली दूकानों और उन सड़कों पर अफसर-शाही मुद्रा में रोब के साथ घूमते हुए लोगों को देखकर लगाया जा सकता है।

सच पूछिए तो इस प्रकार की शानो-शौकत का कारण संसार भर में सबसे ज्यादा तैल का उत्पादन है। इसी की वजह से पिछले साल ईरान के राजस्व-खाते में तीन हजार लाख डालर की आश्चर्यजनक मुद्राएं जमा की गयी थीं।

मेरे खयाल से शायद इसी वजह से हमारी तीसरी दुनिया के अन्य देशों के नगरों में, ईरान की विकास-पद्धति को 'आदर्श' के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जब कि हकीकत यह नहीं है। अगर इसकी सच्चाई की तह में जाकर देखें तो उनकी तथाकथित उन्नति का सारा कौतुक मात्र तैल-उद्योग ही है। यदि इसे इसके उद्योग-क्षेत्र से अलग कर दें तो इनकी प्रगति एवं आर्थिक व्यवस्था इतनी कमजोर और शिथिल हो जाएगी कि इसका अनुमान लगाना भी मुश्किल है। वहां ले-देकर 'आर्यमेहर' स्टील उद्योग है जिसे रूस की सहायता से स्थापित किया गया है। खनिज पदार्थों की खानें बहुत ही कम हैं।

ईरान की सबसे बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि इसकी बहुत बड़ी रकम को देश के विकास की अन्य योजनाओं पर खर्च न करके सिर्फ युद्ध के लिए हथियार खरीदने पर अंधाधुंध बरबाद किया

जाता है। एक अंतर्राष्ट्रीय-कूटनीतिक विद्या अध्ययन संस्थान द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार पिछले साल ईरान के शाह ने लगभग आठ सौ लाख डालर वहां की सुरक्षा पर खर्च किया है जो कि इसके पिछले साल के बजट से दुगुना था।

हथियार, किसके खिलाफ?

'हथियार, मगर किस के खिलाफ?' इस प्रश्न के उत्तर में शाह का कहना है कि वे इसका उपयोग अपनी देश की सुरक्षा के लिए एवं आक्रामक पड़ोसी देशों के खिलाफ करेंगे। लेकिन सच्चाई इसमें भी नहीं है। अगर ईराक, जो ईरान का नंबर-एक दुश्मन समझा जाता है, की सैन्य संख्या की तुलना ईरान से करें तो इसका अंतर स्पष्ट हो जाएगा। मौजूदा हालात में ईरान की सैन्य संख्या लगभग बीस लाख की है जो ईराक से दुगुनी है। ईरान की हथियार खरीदने की मनोवृत्ति पर गौर किया जाए तो इसकी आंतरिक स्थितियों के अंदर एक बहुत बड़े विस्फोट की संभावना, जो अभी चिनगारी के रूप में है, नजर आती है। इधर शाह रूस और भारत के बीच हुए समझौतों के कारण काफी चिंतित नजर आते हैं। इससे भी ज्यादा चिंता उन्हें अफगान के नये शासक का रूस की ओर झुकाव देखकर हो गयी है।

इधर इसका दूसरा पक्ष यह है कि जब से 'फारस की खाड़ी' पूरी तरह से ईरान के कब्जे में चली गयी है तब से ब्रिटेन किसी भी तरह ईरान का साथ छोड़ना नहीं चाहता क्योंकि ईरान का यह हिस्सा अकेले पूरे तैल उत्पादन में साठ प्रतिशत योग देता है। यही हालत अमरीका की है। अतएव दोनों देश हर स्थिति में ईरान का साथ देने को हमेशा तैयार रहना चाहते हैं। इसीलिए इस देश के जितने भी चित्र हमें मिलते हैं, उनसे स्पष्ट होता है कि अधिक राजस्व प्राप्त होने पर भी. इस देश में विदेशी पूंजी

ईरान के शाह अपनी बेगम के साथ

की लागत बढ़ रही है। इसी अनुपात में विदेशी कर्ज भी बढ़ता जा रहा है।

ईरान द्वारा इस माला में हथियार खरीदने की मनोवृत्ति का अध्ययन किया जाए तो इसके पीछे काफी चिंताजनक स्थितियां नजर आती हैं। एक ओर शाह निरंकुश शासन करना चाहते हैं, दूसरी ओर उन्हें अपनी हत्या कर दिये जाने का भय हमेशा सताता रहता है। इन दिनों वे अपनी तमाम यात्राएं, छोटी से छोटी भी, हेलिकोप्टर के द्वारा करते हैं। इनकी तथा इनके परिवार के लिए काफी सुरक्षात्मक सावधानियां बरती जा रही हैं; इसके साथ ही ईरान के शाह स्वयं काफी फिजूलखर्च हैं। कहा जाता है कि आज ईरान का सैनिक सबसे बड़ा सुविधाभोगी और गणमान्य है।

ईरानी समाज का असंतुलन काफी हद तक पीड़ाजनक है। अगर तैल-उद्योग को छोड़ भी दिया जाए तो देश में उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं की दो-तिहाई खपत सिर्फ तेहरान में होती है। जबकि पूरे देश की आबादी तीस लाख के आसपास है और तेहरान की आबादी तीन लाख के पास। अगर इस शहर की भव्य दीवारों की सीमाओं के बाहर निकलकर देखा जाए तो अमीरी-गरीबी का भयंकर असंतुलन साफ-साफ दिखलायी पड़ता है। यहां तक कि तेहरान में भी हर चार में से एक व्यक्ति के लिए न तो जल की सुविधा है न बिजली की ही। वहां के सत्तर प्रतिशत मकानों को स्लम की संज्ञा दी जा सकती है। किसी भी अविकसित देश के तमाम लक्षण, जैसे शहर की ओर झुकाव, हर साल जनसंख्या में तीन प्रतिशत की वृद्धि आदि, वहां मौजूद हैं। इन स्थितियों में ईरान के शाह द्वारा अपने देश के विकास का दावा बड़ा ही हास्यास्पद प्रतीत होता है।

शासन की दमनात्मक मशीनरी को सुचारु रूप से चलाने में राजा के खतरनाक सुरक्षादल 'सावाक' का बहुत बड़ा हाथ है। 'सावाक' शब्द घरेलू बातचीत करने के दौरान बड़ा ही भयोत्पादक है। यदि आप तेहरान की सड़कों पर इस प्रकार की कुछ बातें करें तो लोग तुरंत कह देते हैं, "कृपा करके चुप हो जाइए ... इस प्रकार की बातें हम लोग घर पर भी नहीं करते। क्या जाने, हम लोगों का बाप भी 'सावाक' दल को सूचना देनेवालों में से एक हो?" यह जालिम संस्था हमेशा ही लोगों पर सतर्कतापूर्ण निगाह रखती है। ऐसा कहा जाता है कि थोड़ा संदेह हो जाने पर न सिर्फ सवाल करती है, बल्कि शारीरिक यंत्रणाएं भी दी जाती हैं।

शाह को सबसे ज्यादा घबराहट वहां के विद्यार्थी-संगठनों से है जिनके अड्डे अमरीका और जरमनी में हैं।

इस तरह ईरान अब तक तीसरी दुनिया के सामने जितनी तसवीरें पेश करता रहा है वे निहायत ही गंदी हैं।

अनु. राधेश्याम

कुसुम (फोम)
यू-बैक Rs. 27.00
फुल इलास्टिक कलाथ
कुसुम (प्लेन)
यू-बैक Rs. 24.95
पैरिस ब्यूटी ब्रेसियर्ज़
संगीता ब्रेसियर्ज़
*पैरिस ब्यूटी व संगीता ब्रेसियर्ज आपके शरीर की आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर ५० से भी अधिक आधुनिक डिज़ायनों में बनाई जाती हैं। हर डिज़ाइन पहनने में सुविधाजनक। मज़बूत सिलाई, बढ़िया इलास्टिक व स्ट्रैप...... एक बार प्रयोग करके देखिए—आपके सौन्दर्य में कितना निखार आता है।
भारत में सभी प्रसिद्ध विक्रेताओं से उपलब्ध
पैरिस ब्यूटी सेल्स कार्पोरेशन
बीडनपुरा, अजमलखाँ रोड
करोल बाग़, नई दिल्ली—११०००५ फोन : ५६६५६४
TRENDS

अब क्या कहें इनके मूड की

● निखिलचंद्र जोशी

संसार के श्रेष्ठ साहित्य के सृजन में लेखकों के 'मूड' ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। कहते हैं, बिना 'मूड' बने लेखक कभी अच्छा नहीं लिख पाता। किसी विषय पर, किसी लेखक से बिना उसका 'मूड' बने अच्छा लिखवा लेना बालू में से तेल निकालने के समान है। उसे थोड़ा भी लिखने के लिए लेखक को पहले अपना 'मूड' बनाना पड़ता है, और अगर 'मूड' नहीं बना तो उसका लेखन-कार्य महीनों क्या, वर्षों पड़ा रह सकता है। प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात ने कहा है—'लेखक का 'मूड' स्वयं 'मूड' के वश में नहीं होता।'

सर वाल्टर स्कॉट और एंथोनी ट्रोलोप सबेरे के नाश्ते के पूर्व अपना लेखनकार्य करने बैठते थे। उसके बाद का लिखना उन्हें चिड़चिड़ा बना देता था। ट्रोलोप साहब ने तो एक बार अपने एक नौकर को इसी बात पर निकाल दिया था कि उसने उन्हें देर से उठाया था और नाश्ते का समय हो जाने के कारण वे कुछ नहीं लिख सकते थे। एल. ए. जी. स्ट्रांग की भी यही आदत थी।

आम तौर पर कुरसी पर बैठकर लिखना सबके लिए आरामदायक होता है, लेकिन सुप्रसिद्ध आयरिश लेखक जेम्स ज्वायस पेट के बल लेटकर ही लिखते थे। जब तक वे लेटकर कलम नहीं पकड़ते थे उनका 'मूड' नहीं बनता था। अपनी प्रसिद्ध कृति 'यूलिसिस' की रचना उन्होंने इसी प्रकार की थी। स्टीवेंसन और नोएल कॉवर्ड भी इसी आदत के शिकार थे। फ्रांसीसी लेखक विक्टर ह्यूगो न तो बैठकर, न लेटकर बल्कि खड़े होकर लिखना पसंद करते थे। इस प्रकार लिखने के लिए उन्होंने कंधों तक ऊंची डेस्क बनवायी थी। 'ला मिजरेबिल' की रचना उन्होंने इसी प्रकार की थी।

प्रसिद्ध लेखक बालजाक लिखने से पहले काफी पर काफी पीते थे। एक बार एक पत्रकार-सम्मेलन में उन्होंने कहा था, 'मेरी मृत्यु लगातार दस हजार प्याले काफी के पीने के बाद ही होगी।' उनका लेखन-कार्य मध्यरात्रि से मध्यान्ह तक चलता था। वे लिखते समय अपनी रोजमर्रा की पोशाक उतार फेंकते और साधुओं के-से वस्त्र धारण कर लेते थे।

सुप्रसिद्ध जासूसी कथाकार एडगर वालेस लिखते समय हवा से बेहद 'परहेज' करते थे, और फिर जब तक वे लिखते, नौकर उन्हें चाय के प्याले पर प्याले पेश करता जाता। यह चाय इतनी मीठी होती कि स्वस्थ से स्वस्थ व्यक्ति भी कुछ ही महीनों में डायबिटीज का शिकार बन जाता।

टाटाका शॅम्पू

बालों को एक नई शान, नई जान देता है।

आपके बाल पहले से ज़्यादा, रेशम से मुलायम और तन्दुरुस्त रहते हैं।

भरपूर झाग

—रेशम से मुलायम बाल और सँवारने में आसानी

अपने बाल नियमित रूप से टाटा के शॅम्पू से धोइए। इसका भरपूर झाग मैल को पूरी तरह बाहर निकाल कर आपके बालों को एकदम साफ़, रेशम सा मुलायम और चमकदार बनाता है। आपके बाल इसकी भीनी भीनी ख़ुशबू से महकते रहते हैं।

इसका विशेष 'नैसर्गिक चमक' देने वाला फ़ार्मूला आपके बालों को एक नई शान, नई जान देता है और विशुद्ध नारियल के तेल के आधार पर बना होने के कारण, यह आपके बालों को तन्दुरुस्त भी रखता है।

टाटा का शॅम्पू सबसे ज़्यादा किफ़ायती शॅम्पू है, जो तीन साइज़ों की बोतलों में मिलता है। जो चाहे लीजिए, हर बोतल काफ़ी दिन चलती है।

OBM-2334 HIN

भारत में सबसे ज़्यादा बिकने वाला शॅम्पू

लेकिन प्रसिद्ध फ्रांसीसी कवि वरलेन और भयोत्पादक कहानियों के विख्यात जरमन लेखक हॉफमान अपने 'मूड' के लिए न तो काफी और न ही चाय-जैसे साधारण पेयों का इस्तेमाल करते थे। उन्हें तो इसके लिए एबिंसथ का प्रयोग करना पड़ता था। एबिंसथ एक ऐसा द्रव्य है, जिसकी तनिक भी मात्रा आम आदमी को एकदम पस्त कर सकती है।

सुविख्यात फ्रांसीसी उपन्यासकार अभी वे आधा पृष्ठ ही लिख पाये थे कि उन्हें भान हुआ कि वे गोष्ठी के विषय से संबंधित कुछ न लिखकर अपनी दिनचर्या लिख रहे हैं। ड्यूमा की एक अनोखी आदत और थी। वह यह कि जब वे लिखने बैठते तो मखमली फूलों से ढंकी हेलमेट, मुरगे के पंखों की बेल्ट और जापानी गाऊन पहन लेते। लेकिन वह ऐसी पोशाक तभी पहनते, जब उन्हें किसी रोमांटिक विषय पर कुछ लिखना होता।

बांयें से अलेक्जेंडर ड्यूमा, राबर्ट लुई स्टीवेंसन, सर वाल्टर स्काट

ड्यूमा का 'मूड' शायद बड़ा नाजुक था क्योंकि वह सिर्फ लेमन पीने मात्र से लौट आता था। एक बार एक साहित्यिक गोष्ठी में उन्हें कुछ पढ़ना था। रात गये जब वे घर लौटे और लिखने बैठे तो अचानक उन्हें याद आया कि लेमन तो खत्म हो चुका था। वे बहुत परेशान हुए, क्योंकि दूसरे ही दिन उन्हें गोष्ठी में जाना था। बहरहाल किसी भी तरह 'मूड' जगाने की कोशिश करते हुए वे लिखने बैठ गये।

जरमन कवि शिलर अपने को तरोताजा रखने और मानसिक विश्राम के लिए अपने लिखने की 'डेस्क' के भीतर सड़े हुए सेबों को डाल देते थे। उनका कहना था कि उन सड़े हुए सेबों की 'खुशबू' से उन्हें नये-नये प्लाट खोजने और उन्हें मूर्तरूप में उतारने में सहायता मिलती है।

क्राम्पटन मैकेन्जी पृष्ठभूमि में संगीत का बजना पसंद करते थे। संगीत भी हलका-फुलका नहीं, शास्त्रीय! सी. वी.

वेजवुड की भी यही आदत थी। लेकिन टॉमस कारलाइल तो मात्र कौवे की आवाज, बिल्ली की म्याऊं अथवा प्यानो के बजने से नर्वस हो जाते थे। एक बार एक जिद्दी कौवा उनके घर के सामने के पेड़ पर बैठकर कांव-कांव करने लगा। जब तक वह नहीं उड़ा, वे एक शब्द भी नहीं लिख सके।

वाल्टर पेटर लिखने के लिए अपने नोट्स टाफी की पन्नियों पर चिपके सफेद कागजों पर बनाते थे। लेकिन आरनौल्ड बैनेट अपने विशेष नोट हाथों पर बनाते। उनकी पत्नी इस आदत से बेहद परेशान थीं। सर ओसवर्ट सिटवैल विभिन्न प्रकार की नीली और बैंगनी स्याहियों से लिखते और संशोधन करते समय हरी स्याही प्रयोग में लाते। सर विंस्टन चर्चिल लाल स्याही से संशोधन करते। ई. एम. फोर्स्टर हरी स्याही से और जेम्स ज्वायस काली स्याही से लिखते। लार्ड डेविड सिसिल अधिकतर पेंसिल से ही लिखते। चार्ल्स डिकेंस नीले कागज पर नीली स्याही ही प्रयोग करते। रोनाल्ड फिरबैंक का 'मूड' चौकोर पोस्टकार्डों पर लिखने से ही बनता था।

सामरसेट मॉम अपने पास ताबीजनुमा एक वस्तु रखते थे। उस पर गुणा का निशान था। जब वह लिखने बैठते तो उसे मेज पर सामने रख लेते। यह ताबीज उन्हें मोरक्को से मिली थी। एक बार वे ताबीज कहीं रखकर भूल गये। उस दौरान वे अपने नये उपन्यास का उपसंहार लिख रहे थे। शेष पांडुलिपि प्रेस में छप चुकी थी। प्रकाशक के दबाव पर उन्हें सामग्री प्रेस भिजवानी पड़ी, लेकिन मॉम साहब उस समय प्रकाशक पर बुरी तरह फट पड़े, जब आलोचकों ने पूरे उपन्यास की वाह-वाही के साथ उपसंहार वाले अंश में लेखक की कड़ी आलोचना कर डाली। एक समीक्षक ने लिखा, उपसंहार लिखते समय शायद लेखक सो गया था। एक पत्रिका में छपा, 'मॉम से इतने घटिया अंत की उम्मीद नहीं थी' और प्रथम संस्करण के बाद मॉम ने उपसंहार को फिर बदल डाला। नया उपसंहार लिखते समय वह ताबीज उनके सामने थी।

स्वर्गीय मैथिलीशरण गुप्त कुछ भी लिखने से पहले पृष्ठ के शीर्ष स्थान पर 'श्रीराम' जरूर लिखते थे।

गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर जब लिखते-लिखते बीच में कहीं कांट-छांट कर बैठते तो उसे काटकर यूं ही नहीं छोड़ देते बल्कि उसे आगे-पीछे कांट-छांटकर सुंदर-सी कोई आकृति बना देते। प्रसिद्ध विद्वान राहुल सांकृत्यायन जब लिखने बैठते तो दर्जन भर उबले अंडे अपने आगे रख लेते और उनके टुकड़े बनाकर खाते जाते।

निरालाजी बिस्तर पर पेट के बल लेटकर लिखते। शरतचंद्र चट्टोपाध्याय का 'मूड' बगैर हुक्का पिये नहीं लौटा करता था। अब 'मूड' ही तो है!

—८, नवाब यूसुफमार्ग, सिविल लाइंस,
इलाहाबाद

बुद्धि-विलास

१. **सतीश** और अशोक में से एक को झूठ बोलने की आदत है और दूसरे को सच बोलने की। वे दोनों स्वयं के बारे में यह बात जानते हैं, पर एक-दूसरे के बारे में वे यह बात नहीं जानते। एक अन्य व्यक्ति सुरेंद्र यह जानता है कि इन दोनों में कौन सच्चा है और कौन झूठा! यह तथ्य जानने के लिए वह सतीश और अशोक में से किसी भी एक व्यक्ति से केवल एक प्रश्न कर सकता है। सुरेंद्र को क्या प्रश्न करना चाहिए (सतीश और अशोक आपस में भी प्रश्न कर सकते हैं) ?

२. **इनके** क्या कारण हैं—सर्दियों में सूती कपड़ों की अपेक्षा ऊनी कपड़े शरीर को गरम रखते हैं, लकड़ी या कोयले को जलाने पर धुआं निकलता है, सर्दियों में मेंढक तंद्रिल हो जाते हैं।

३. **अब** तक भारत के सारे प्रधानमंत्री उत्तरप्रदेश के वासी रहे हैं। क्या आप बता सकते हैं कि भारत के कौन-से राष्ट्रपति उत्तरप्रदेश के वासी रहे हैं?

४. **इनके** प्रसिद्ध वादकों के नाम बताइए—सरोद, सितार, शहनाई, तबला।

५. **चालीस** किलो का एक बाट गिरने से उसके चार टुकड़े किस तरह हों कि उससे एक से चालीस किलो तक के वजन की कोई भी वस्तु तौली जा सके।

६. **वह** कौन-सा पशु है जिसका एक अंग भी सीधा नहीं होता?

७. **कौन** अकेला घूमता है, और कौन बार-बार जन्म लेता है?

८. **वह** कौन-सी वस्तु है जो अपनी जगह से न हिलने के बावजूद चलती है?

९. **एक** चौकोर गांव है। उसके चारों कोनों पर चार सूखे कुएं हैं। बीच में एक रानी को अठारह चोर घेर लेते हैं। राजा का एक कर्मचारी चोरों को दौड़ा-दौड़ाकर मारता है और कुएं

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। एक प्रश्न के दो उत्तर भी हो सकते हैं। यदि आप सारे प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

में डाल देता है। जल्दबाजी में बेचारी रानी भी कुएं में चली जाती है (संकेत —यह एक खेल है)।

१०. **नौकर** बुद्धू था। गृहस्वामिनी ने उसे काम बताया—"ये दो सब्जियां ले आओ और इन्हें छीलकर भाजी तैयार कर लेना।" नौकर सब्जियां ले आया। उसने सोचा कि पत्ते तो फेंक ही दिये जाते हैं, सो वह उन्हें छीलता गया। अंत में भाजी के लायक कुछ नहीं बचा। बताइए, ये दो चीजें कौन-कौन-सी थीं ?

कटोरा ढकने से बुझ जाती है।
अंधेरे में उगाया जानेवाला पौधा लंबा हो जाता है।
अच्छी फसल उगाने के लिए खेत में खाद डालना जरूरी है।

१५. **इस** वर्ष 'इंडियन चैंबर्स ऑव कामर्स ऐंड इंडस्ट्री' के अध्यक्ष कौन हैं ?

१६. **भारत** ने प्रथम अणु-विस्फोट किस तारीख को किया और किस क्षेत्र में ? यह विस्फोट किस प्रकार का था और उस स्थान पर क्या भौतिक परिवर्तन हुआ ?

११. **'सोलह**-शृंगार' कौन-से हैं ?

१२. **आठों** सिद्धियां क्या हैं ?

१३. **अमरीकी** 'स्काईलैब' (तीसरी) के यात्री कब लौटे ? वे कितने दिन अंतरिक्ष में रहे ? उन के नाम बताइए।

१४. **निम्नलिखित** के कारण बताइए—
पहाड़ों पर आलू पकाने में अधिक समय लगता है।
रेल की दोनों पटरियों के बीच थोड़ी जगह छोड़ी जाती है।
किसी जलती मोमबत्ती पर

१७. **सबसे** बड़ा और छोटा ग्रह ?

१८. **किस** ग्रह के सबसे अधिक उपग्रह हैं, और किसका घनत्व सबसे अधिक है ?

१९. **सितारे** चमकने का कारण—
स्थिति में परिवर्तन होना
विविध परावर्ती पर्तों में उथल-पुथल
देखनेवाले की नजर में दोष

२०. **पाकिस्तान** ने बंगला देश को मान्यता कब दी ?

२१. **उपर्युक्त** चित्र में क्या है ?

बांधना है तो गंध को बांधो

तोड़ना है तो शूल को तोड़ो
फूल को यों ही मुसकराने दो

चाहे जंगल में हो या आंचल में
फूल को सिर्फ महमहाना है
तोड़ पायेगा कोई क्या इसको
टूटकर भी किसी जूड़े में जगमगाना है

बांधना है तो गंध को बांधो
रूप का क्या है! बिखर जाने दो

शोरगुल मत करो, जरा देखो
हर किरन फूल पर निछावर है
पास के जंगली सरोवर में
तिर रहा रात का महावर है

इंद्रधनु तितलियों के पंखों पर
बैठकर गा रहा है, गाने दो

जाने किस तरह बच निकलता है
रात की लंबी-लंबी बांहों से
जाने कितनों का दर्द पीता है
महकी-महकी हुई निगाहों से

रात भर भोगता रहा जो भी
वह इसे भोर को सुनाने दो

सूखे पत्तों में आग पतझर की
डर है झुलसें न अधखिली कलियां
सारा मधुवन उदास लगता है
सहमी-सहमी हैं गंधमय गलियां

आग के फूल तो मिलेंगे ही
राग के रिश्ते तो निभाने दो

——रमानाथ अवस्थी

—५१, पटौदी हाउस, नयी दिल्ली-१

क्या और क्यों नहीं?

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, रेणु, महादेवी, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', इलाचन्द्र जोशी, राजेन्द्र यादव, लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं निर्मल वर्मा।

'पवित्र जीवन अच्छे लेखन की गारंटी नहीं...

निर्मल वर्मा

विनोदकुमार कौशिक, बिजनौर
कहानी आपके मन में किस प्रकार आकार ग्रहण करती है? 'वे दिन' में वातावरण, मनस्थितियों आदि का इतना विषद चित्रण है कि आपसे उपन्यास की रचना-प्रक्रिया जानने का मन होता है?

बहुत छोटी, नगण्य-सी घटनाओं से। कभी महज एक दृश्य, एक उड़ता हुआ इंप्रेशन बहुत देर तक भीतर भटकता है, फिर मैं उसे भूल जाता हूं; फिर बरसों बाद वह दोबारा किसी अंधेरे कोने से बाहर आता है—बदला हुआ, वैसा नहीं जैसे पहली बार ग्रहण किया था एक स्मृति के रूप में। मेरी कहानियां बहुत कुछ स्मृतियों को जगाने की कोशिश हैं।

अशोक जैरथ, भुवनेश्वर: 'परिन्दे' संग्रह की सब कहानियां क्या जीवन की किसी वास्तविक घटना पर आधारित कथावस्तु लेकर लिखी गयी हैं, या उनका आधार केवल कल्पना है? यदि कोई कहानी वास्तविक घटना पर आधारित है तो उसका शीर्षक क्या है? इसी संग्रह में अंतर्द्वंद्व की एक सीधी रेखा सब कहानियों के बीच होकर चली गयी है। क्या उन दिनों लेखक बकार था, या जीवन के उस भाग में वह किसी पारिवारिक द्वंद्व से दुःखी था?

आपने लगभग ठीक अनुमान लगाया है, हालांकि इसके बारे में मैंने पहले कभी नहीं सोचा था। वे कालेज के बाद खाली लंबे दिन थे जब मैंने 'परिन्दे' की अधिकांश कहानियां लिखी थीं। मुझे यह भी आश्चर्य होता है कि उन्हीं दिनों मैं वामपक्षीय राजनीति में भी बहुत सजग, सचेत ढंग से हिस्सा लेता था, लेकिन उसका बहुत कम असर इन कहानियों पर है।

दोनों चीजें एक पत्र पर लिख हुए दो 'टेक्स्ट' थीं, एक के शब्द कभी दूसरे के शब्दों से अकस्मात् मिल जाते थे, लेकिन खुद मैंने कभी उन्हें जोड़ने की जरूरत महसूस नहीं की।

सुधांशु शेखर त्रिवेदी 'शेखर', **पटना : अपनी पहली प्रबुद्ध रचना (आपके दृष्टिकोण से) के प्रकाशन में आपको किन्हीं कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था या नहीं? क्या आप यह नहीं मानते कि साहित्य-जगत में प्रवेश पाने के लिए उदीयमान रचनाकारों को प्रायः अत्यधिक एवं अनुचित संघर्ष करना पड़ रहा है?**

नहीं, उन दिनों (१९५९ के आसपास) हालत दूसरी थी। कहानी-संग्रह उन दिनों भी उतनी ही मुश्किल से छपते थे जितने आज, लेकिन अच्छी पत्रिकाओं की कमी नहीं थी, (कहानी, कल्पना, कृति, नयी कहानियां) और मुझ-जैसे नये लेखक काफी आसानी से अपनी आरंभिक कहानियां प्रकाशित करवा सकते थे। संपादकों का आग्रह 'असली और अच्छे' पर था, क्योंकि वे स्वयं व्यवसायी या व्यवसायी पत्रिकाओं के मालिक नहीं थे। 'धर्मयुग' और 'हिन्दुस्तान' (साप्ताहिक) उन दिनों भी निकलते थे, लेकिन

आस-
-संग्रह
छपते
काओं
ल्पना,
–जैसे
अपनी
सकते
और
सायी
नहीं
प्ता-
लेकिन

हर नया, महत्त्वपूर्ण लेखक अपनी रचनाएं 'कल्पना' या 'कहानी' में प्रकाशित करवाने के लिए लालायित रहता था। संघर्ष शायद उन दिनों भी बहुत गहरा था, लेकिन वह नाम, यश, या स्टेटस (सामाजिक स्तर) का संघर्ष नहीं था, जिससे आज के अनेक नये-पुराने लेखक आक्रांत हैं, वह अपने को और अपनी दुनिया को समझने का संघर्ष था, जो वास्तव में नयी कहानी और नयी कविता को गौरव देता था। वह गौरव कैसे धीरे-धीरे खत्म हो गया, यह दूसरी कहानी है।

राजेन्द्र श्रीवास्तव, भोपाल: आपकी कहानियां, उपन्यास विदेशी रंग लिये हुए हैं। इसका कारण आपका व्यापक विदेश-भ्रमण है या और कुछ? आप मार्क्सवाद से भी प्रभावित रहे है, ऐसा मैंने पढ़ा है, पर आपकी रचनाओं में यह प्रभाव परिलक्षित नहीं होता। आपका क्या मत है?

मुझे 'विदेशी रंग' का शब्द कुछ वैसा ही अजीब जान पड़ता है, जैसे आंचलिक कहानियों का लोकल-कलर! मैंने अपने जीवन के बहुत से वर्ष यूरोप में गुजारे हैं, उसका असर अवश्य मेरी कहानियों पर पड़ा है। लेकिन यदि मैं विदेश न भी जाता, तो भी शायद मेरी कहानियों में कुछ ऐसा अवश्य रहता जिसे हिंदी आलोचक 'विदेशी' मानते हैं। मेरे विचार में, एक औपनिवेशिक देश का लेखक अपने को इन प्रभावों से मुक्त नहीं रख सकता, चाहे वह सारी जिंदगी अपने देश में ही क्यों न गुजार दे।

इसी 'औपनिवेशिक स्थिति' में मैं अपनी पीढ़ी के कुछ अन्य लेखकों की तरह मार्क्सवादी चिंतन से प्रभावित हुआ था, अब भी हूं। एक लेखक होने के नाते जो चिंताएं मुझे घेरती हैं वे उन चिंताओं से अलग नहीं हैं, जिन्होंने मुझे मार्क्सवादी बनने के लिए प्रेरित किया, किंतु उसका सीधा प्रभाव एक भारतीय लेखक पर वैसा ही नहीं पड़ता, जैसा एक यूरोपीय लेखक पर। मार्क्सवाद यूरोपीय चिंतन-पद्धति का अंश है, जबकि हम उसे एक 'दर्शन' के रूप में उतना नहीं जितना मानव-मुक्ति की खोज के दौरान स्वीकार करते हैं। इसलिए हमारे लेखन पर उसका प्रभाव काफी टेढ़े, उलझे ढंग से प्रगट होता है।

निर्दोष, चांदामेटा (छिंदवाड़ा): हिंदी नवलेखन किसी पूर्वनिर्धारित विचार-दर्शन से प्रतिबद्ध नहीं रहा, फिर भी उसका चिंतन-मनन पक्ष पर्याप्त समृद्ध और प्रेरक क्यों है?

मैं आपसे सहमत नहीं हूं। हमारे नवलेखन का सबसे कष्टदायी और निराशापूर्ण पक्ष उसके चिंतन की गरीबी है। 'नयी कहानी आंदोलन' के ही पक्षधर चिंतकों को लीजिए। उनकी मंशा चाहे कितनी ही अच्छी क्यों न रही हो, नयी कहानी के पक्ष में उनके तर्क इतने लस्तम-पस्तम, इतने अंतर्विरोधपूर्ण रहे कि 'अश्क'

जी बड़ी आसानी से उन्हें हास्यास्पद बना देते थे। 'नयी कविता' इस दृष्टि से बहुत सौभाग्यशाली थी — अज्ञेय, मुक्तिबोध, साही, नामवर के सामने नयी कविता के प्रखर विरोधी रामविलास शर्मा कहीं न ठहर सके और बराबर पीछे हटते गये। गद्य की गरिमा न तटस्थता में है, न गाली-गलौज में, बल्कि विश्वास और पैशन (तीव्रोत्साह) में वह प्रस्फुटित होती है और यह हमारा दुर्भाग्य रहा है कि पनपने से पहले ही हम उसे कुचल देते हैं।

दिनेश शर्मा, बेरटी, सोलन : 'वे दिन' की 'भूख' की सतह के नीचे कैसी सम्वेदना छिपी है?

छोटी घटनाएं कैसे धीरे-धीरे एक बिंदु पर पहुंचकर 'बड़ी' बन जाती हैं, और फिर अगर हम उसे पकड़ने में कायरता बरतते हैं, तो वे फिर अपनी जगह लौटकर छोटी बन जाती हैं। 'वे दिन' इस उतार-चढ़ाव की कहानी है, ऐसा मैं सोचता हूं। संभव है, उपन्यास का अंतिम अभाव इस मूल सम्वेदंना से बिलकुल अलग हो।

विजय अग्रवाल, दिल्ली : पवित्रता का लेखक के जीवन से क्या संबंध है?

आपका प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण है, और बहुत अस्पष्ट भी। संत और कवि हमेशा हर चीज के अस्तित्व में पवित्रता खोजते रहे हैं। उनका होना ही उनकी पवित्रता का प्रमाण है। दरअसल, 'प्रार्थना' के क्षणों में ईश्वर का नहीं, हमीं पवित्रता का बोध होता है। कैथरीन मेंसफील्ड ने एक जगह अपनी डायरी में लिखा है कि वे कहानी लिखने से पहले उतना ही पवित्र महसूस करना चाहती हैं जितना कोई प्रार्थना करने से पूर्व। इससे यह निष्कर्ष लगाना गलत होगा कि पवित्र जीवन अच्छे लेखन की गारंटी होती है। वह स्वयं अपने में उपलब्धि है, किसी चीज को उपलब्ध करने का माध्यम नहीं।

राजेशकुमार गोयल 'राजेश', औरंगाबाद : आपका प्रिय कवि कौन है?

यदि मैं अपने को हिंदी भाषा तक सीमित रखूं, और केवल अपने समकालीन या अपेक्षाकृत नये कवियों को ही 'प्रिय' बनाने की छूट मुझे मिले, तो मेरे प्रिय कवि हैं—केदारनाथ सिंह, रघुवीर सहाय, कमलेश और धूमिल।

हेमंतकुमार पंत, रामपुर : (१) आज के जन-मानस में जो आयातित और नकली उपभोक्ता संस्कृति (आपके शब्दों में 'बाजारू संस्कृति') गहराई के साथ जड़ें जमाती चली आ रही है, उसके प्रभाव से समकालीन लेखन किस सीमा तक अप्रभावित रह सकता है? इस स्थिति में आप एक रचनाधर्मी लेखक से किस दायित्व की अपेक्षा रखते हैं? (२) आपकी कहानियों के अधिकांश पात्र स्वयं को परिस्थितियों के प्रति असहज, अकेला और अजनबी महसूस करते हैं . . . क्या आपको यह नहीं लगता कि ऐसे अंतर्मुखी पात्रों की बारबार

आवृत्ति से आपका लेखन 'मैनरिज्म' की गिरफ्त में आता चला जा रहा है ?

(१) प्रश्न अपने को 'अप्रभावित' रखने का उतना नहीं जितना उसका सामना करने का है, क्योंकि हम उसी चीज का शिकार होते हैं जिससे बेखबर होते हैं। मुझे नहीं लगता कि 'बाजारू संस्कृति' से महज लेखन द्वारा लड़ा जा सकता है, हालांकि साहित्य का होना ही उस 'संस्कृति' के छद्म मूल्यों के लिए बड़ी चुनौती है।

(२) 'मैनरिज्म' और आवृत्ति में अंतर है। मैनरिज्म अपनी सफलता की पैरोडी है, जैसे मैं कहूं —"अकेलेपन पर कहानी लिखकर मुझे बड़ी ख्याति मिली, अब मैं अगली कहानी भी अकेलेपन पर लिखूंगा।" यहां वह विवशता गायब हो जाती है, जिससे पहली कहानी का जन्म हुआ था। अब वह बाहरी अलंकार बनकर रह जाती है, किंतु दूसरी ओर कोई लेखक 'अकेलेपन' की स्थिति को हर कहानी में नये सिरे से झेलता है, उसके नये आयामों को आलोकित करता है, जो पहले धुंधले थे। यहां 'अकेलापन' विषय नहीं है, एक स्थिति है जो लेखक उस समय तक उकेरता रहता है, जब तक स्वयं उससे छुटकारा नहीं पा लेता। ये सब मैं अपनी कहानियों के बचाव में नहीं कह रहा, केवल दो शब्दों के अलग-अलग अर्थों को स्पष्ट कर रहा हूं। इसके बावजूद, हो सकता है, मैं सचमुच उन्हें आपकी सही आलोचना से बचाने की कोशिश कर रहा होऊं!

नीरा अवस्थी, लिलुआ, हावड़ा: क्या 'परिन्दे' शीर्षक कहानी को नयी कहानी की पहली कृति मानते हैं?

मैंने कभी इसके बारे में नहीं सोचा क्योंकि मुझे इस प्रश्न में कभी कोई दिलचस्पी नहीं रही। यों भी 'नयी कहानी' के आंदोलन में मेरा कभी विश्वास नहीं रहा, इसलिए अपनी ही कहानी को 'नयी कहानी' की पहली कृति मानना न केवल आत्मप्रवंचना होगी बल्कि एक व्यंग्यपूर्ण विरोधाभास भी।

साजिद इनायतुल्ला चिश्ती, जुन्नारदेव: क्या आवश्यक है कि साहित्य-विवेचन के लिए उच्च शिक्षा ली जाए?

साहित्य-समीक्षा के लिए शायद उच्च शिक्षा उपयोगी हो, विवेचना के लिए विवेक काफी है, जो उच्च-शिक्षा से नहीं, निजी अनुभवों से प्राप्त होता है। •

समरभूमि

• केशवप्रसाद मिश्र

तीन बजे तक ही वोट देने का समय था। उस हिसाब से मतदान बंद होने में केवल दस मिनट की देर थी। उधर मत देनेवालों की संख्या काफी थी। गांव की पंचायत का चुनाव था। चुनाव-स्थल पर तैनात पुलिस दरोगा ने बचे हुए मतदाताओं को चुनाव-स्थल से सटकर कतार में खड़ा-कर एक रस्से के घेरे के भीतर कर लिया और अपने हस्ताक्षर की एक-एक चिट सबको थमाकर एलान कर दिया कि जिसके पास उसके हस्ताक्षर की चिट नहीं होगी, वह वोट नहीं दे सकेगा।

उसके बाद एक घने छायादार पेड़ के नीचे कुरसी खींचकर वह बैठा ही था कि नदी के उस पार से गांव के सबसे वयोवृद्ध नागरिक बीसू बाबा की पालकी चुनाव-स्थल की ओर आती दिखी। पालकी देखते ही दोनों उम्मीदवारों के दलों में फुसफुसाहट होने लगी। सबसे अधिक फुसफुसाहट उम्मीदवार पहलवान के दल में थी। पचपन साल के पहलवान छह भइया की ओर से खड़े थे, चार भइया की ओर से तीस साल का वकील खड़ा था। बीसू बाबा, छह भइया पट्टी के थे, लेकिन वे मिले रहते थे चार भइया पट्टी से। छह भइयावाले इसीलिए हमेशा बीसू बाबा से नाराज रहते थे। नाराजगी का एक कारण था, और वह यह कि भाई-भतीजों के
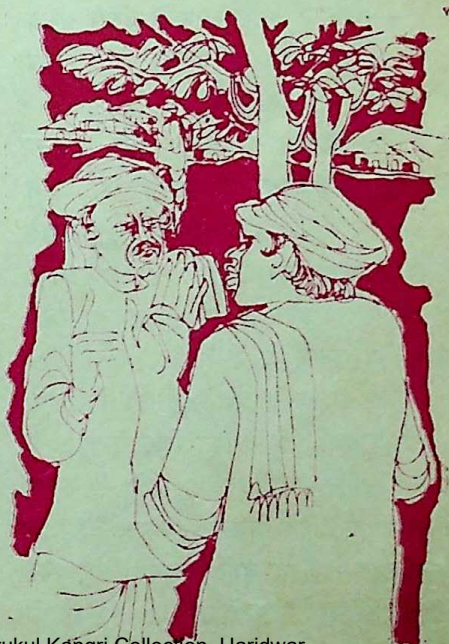
रहते संतानहीन बीसू बाबा ने अपनी जायदाद भांजे को क्यों लिख दी ?

बगीचे को लांघ, सूखी नदी पारकर जैसे ही कहार चुनाव-स्थल की ओर मुड़े तो छह भइया के विहारी गरम हो गये, "वाह ! ये कैसे होगा ? मैं अभी दरोगा से कहता हूं। दूसरे की परची लेकर ये वोट कैसे डालेंगे ? ग्राम-सभापति का चुनाव है कि लड़कों का खिलवाड़ !"

"ठहरो बिहारीजी, हर काम में उत्तेजना नहीं दिखायी जाती।" बगल में कुरसी पर बैठे हुए, रेलवे की नौकरी से रिटायर होकर आये बनारसीदास बोले।

"आप चुपचाप बैठिए भाईजी ! यहां रेलवे डिपाट की अफसरी नहीं है। ग्राम-पंचायत का चुनाव है। गांव की राजनीति समझने में अभी आपको थोड़ा समय लगेगा। बीसू बाबा तो परची बंटते समय थे नहीं, वे वोट कैसे डालेंगे ?"

बनारसीदास ने उन्हें रोका, "सुनो बिहारी, पहले बाबा की पालकी आ जाने दो। यह तुम कैसे निश्चयपूर्वक कह सकते हो कि वे वोट किसको देंगे ? आखिर बाबा भी तो छह भइया के ही हैं, उनके पुरखे क्या कोई दूसरे थे ?"

"जो आदमी भाई-भतीजों के रहते अपनी जायदाद भांजे को लिख सकता है, उसका कौन भरोसा भाईजी ? इतने धर्मात्मा होते तो भगवान ने उन्हें वंश न दिया होता ! ऐसा बेईमान आदमी आपको ढूंढ़े न मिलेगा। जब देखो तब चार भइयावालों से सांय-सांय, फुसफुस ! उनकी थाह कोई लगा सकता है ?"

तब तक कहारों के कंधों पर बाबा की पालकी मचमचाती हुई चुनाव-स्थल के पास रस्से के भीतर खड़े हुए आदमियों के निकट जमीन पर उतार दी गयी। पालकी उतरते ही वकील के दलवालों ने जोर से नारा लगाया, "बाबा विश्वनाथ की जै !"

पालकी उतरते ही कम सुननेवाले बीसू बाबा का पैर छूकर वकील प्रणाम कर गया था। बदले में बाबा ने उसके सिर पर हाथ फेर आशीर्वाद दिया था। यह सब पहलवान के समर्थक, यानी छह भइयावालों ने फटी आंखों देखा था। स्थूल शरीरवाले पचासी साल के बाबा पालकी में ही बैठे रहे। दोनों दलों के लोग बाबा के माध्यम से एक दूसरे पर बोली बोल रहे थे कि पहलवान के दल के लोका पंडित आये। वेश-विन्यास, आकार-प्रकार से एकदम संत विनोबा लगनेवाले, लेकिन बुद्धि से एकदम उखाड़-पखाड़, तोड़-फोड़ और दूसरे का बनंता काम बिगाड़ देनेवाले आते ही बाबा को ऊंची आवाज में प्रणाम करते हुए बोले, "आहा ! क्या रूप दिया है भगवान ने ! इस उम्र में मुंह पर यह तेज ! ललाट पर चंदन, अंगों में भभूत, गले में रुद्राक्ष की माला, साक्षात त्रिपुरारीनाथ बाबा, आप धन्य हैं।"

"कौन है ? लोका पंडित !"

"हां बाबा, लोका के सिवा और किसके कंठ में इतना तेज हो सकता है, जो आपकी

विरुदावली बखान सके !"

"हां, ठीक कहते हो, तुम्हारे बाप भी ऐसे कामों में आगे रहते थे। उनके कंठ में भी बहुत तेज था, उनके बेटे तुम भला पीछे कैसे रह सकते हो ?"

"तो बाबा, आप भी यहां आ गये!" लोका पंडित झेंप मिटाते हुए बोले।

"हां, जिंदगी का आखिरी मौका है। सोचा, तुम लोगों के यहां भी देख आऊं कि

इस बार की रंगत कैसी है ?"

"आपको कैसी लग रही है रंगत ?" लोका फिर बोले।

"पहले तुम बताओ लोका पंडित। टिकरी मिठाई खूब खाने को मिली होगी।"

लोका पंडित फिर झेंपे, "अरे भाई, ऐसी प्रचंड लू में बाबा वोट देने आये हैं। लगता है, किसी ने जलपान को भी नहीं पूछा। ले आओ, दस, पांच मिठाइयां तो लाओ !"

बाबा मुसकराते हुए बोले, "तुम्हारे ओर की चुक गयीं क्या लोका ?"

फिर ठहाका लगा। लोग इधर-उधर ताकने लगे तो बाबा फिर बोले, "चुनाव का क्या हाल है लोका ?"

"हाल ? खूब नगद, चाल में एकदम तेजी। दनादन वोट पड़ रहे हैं। बेलगाम, बेरोकटोक, एकदम फरजी। मर्द तो कम, औरतें ही ऐसा ज्यादा कर रही हैं बाबा ! एक औरत चार-चार, पांच-पांच बार वोट डाल रही है, साड़ी, चादर बदल-बदल-कर। घूंघट में कौन पहचाने ? बेटियां भी बहुएं बनकर 'ओट' डाल रही हैं।

"लेकिन यह हो कैसे रहा है ?"

"क्योंकि इस बार वोटरों की अंगुलियों पर न मिटनेवाला स्याही का निशान नहीं लगाया जाता। सरकार ने छूट दे रखी है।
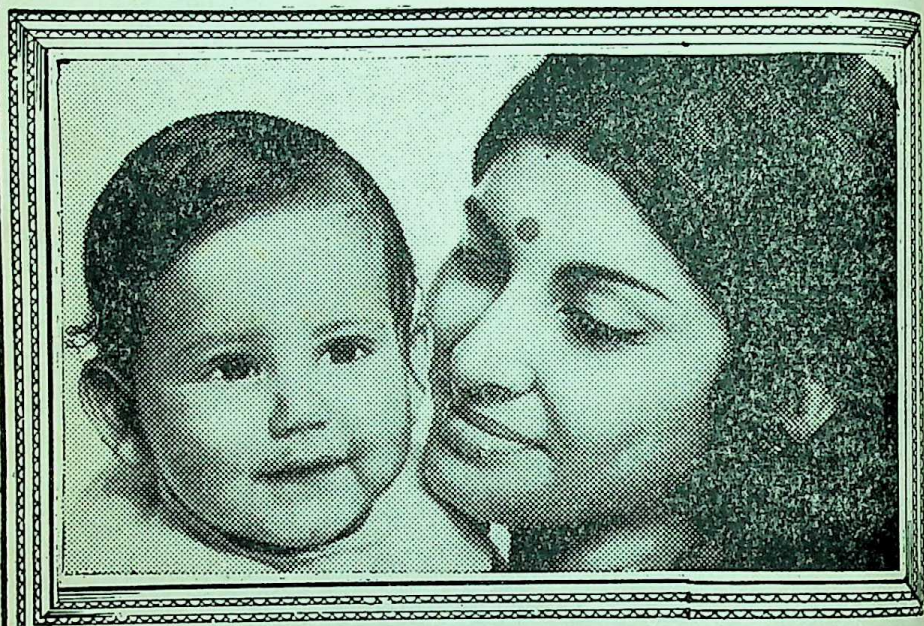
parag
INFANT MILK FOOD
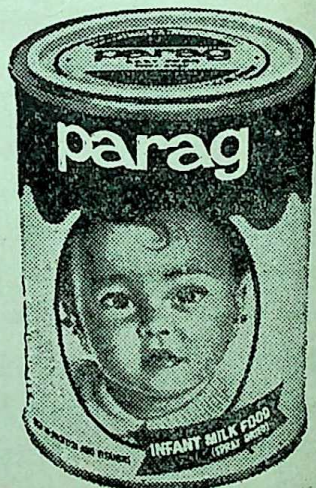
लोग नाजायज फायदा उठा रहे हैं।"

"तो इसमें कसूर किसका है ?"

"सरकार का, और किसका !" लोका बोले।

"सरकार ही वोट दे रही है, सरकार ही कह रही है कि तुम बेईमानी करो, जाल-फरेब रचो और फरजी वोट डालो ! गलत काम तो हम लोग करते हैं। पंच में परमेश्वर का वास होता है लोका, पर इस ढंग से पंच बन, बनाकर क्या होगा ?"

"वही होगा जो सरकार चाहती है। अगर सरकार ऐसा नहीं चाहती तो क्यों ऐसी छूट दे रखी है ?"

"इसलिए कि आप लोग पहले छोटी जगह में सही ढंग से काम करना सीखिए। छोटी सीमा में रहकर जो सही शिक्षा नहीं लेंगे वे बड़ी जगहों में काम किस तरह कर सकेंगे ?"

"वाह रे बीसू बाबा वाह ! क्या ज्ञान छांट रहे हो ? दिल्ली, लखनऊ के लोग तो सीधे स्वर्गपुरी से शिक्षा लेकर आते हैं," लोका का चेहरा तमतमा गया, "सरकार तो चाहती ही है कि कानून टूटे, नहीं तो राज्य चलेगा कैसे ? पुलिस, पियादे करेंगे क्या ? कचहरी, अदालत में होगा क्या ? सरकार जब जानती है कि गरीबी इस तरह फैली है, लोग, हक, पद, अधिकार के लिए पागल हो रहे हैं, तब ऐसा मौका क्यों देती है कि जनता गलत काम करे ? आप जानते नहीं कि आयेदिन सरपंचों की हत्या होती रहती है ! आखिर ये सब क्यों होता है ? गांव के लोगों में असंतोष के कारण, इन्हीं गलत तरीकों से किये गये फैसलों के कारण . . . !" लोका कहते-कहते रुक गये।

बाबा भी चुप थे। इसी बीच छह भइया के दूसरे समर्थक रामजी आ गये और बाबा का पैर छू उनकी हथेली पकड़कर अपने सिर पर फेरते हुए बोले, "बाबा, आप इस महाभारत के धृतराष्ट्र हैं।"

"छह भइया पट्टी का हूं तो जो चाहे कहो रामजी, लेकिन धृतराष्ट्र तो अंधे थे और युद्ध से अलग रहते थे। उनके पास संजय जाया करते थे। तुम लोगों में न तो कोई संजय है और न मैं युद्ध से अलग हूं। मैं तो समरभूमि में आ गया हूं।"

"क्योंकि अभी आपको कुछ इंद्रियों का सुख भोगना बाकी है, अभी आपकी आंखें बची हैं !"

"तो इन आंखों का फायदा उठाओ, मेरा कहा मानो। और नहीं तो क्या तुम लोग ये चाहते हो कि मैं उन्हें फोड़ लूं ?" बाबा हंसकर बोले।

समर्थन में चार भइयावालों ने ठहाका लगाया।

"नहीं, नहीं बाबा आपकी जीभ पर सुरसती का निवास है। बोलिए इसमें कौन जीतेगा, पहलवान या वकील ?"

बाबा स्वभाव के अनुसार हंसकर बोले, "भागती धूप से देह नहीं सेंकी जाती रामजी पंडित। जवानी के आलम में तुम लारी, बस फूंक चुके हो, तो अब

चला-चली की बेला में इस बूढ़ी देह को बाली मारकर मन ठंडा करने आये हो ?"

"नहीं, नहीं बाबा, यह आपने क्या कहा !" रामजी बाबा का पैर छूते हुए बोले, "वोट देने के लिए कलकत्ता, आसनसोल, पटना, गाजीपुर, बनारस, इलाहाबाद तक से दोनों दलों के 'नौकरिया' आये हैं, और बी.ए., एम.ए. पास । इसके पहले भी ग्राम-सभा के चुनाव हुए हैं पर ऐसे जोश का चुनाव कभी नहीं देखा ।"

"जब तुम लोगों ने एक-दूसरों के पुरखों के यश और तप का सवाल उठा दिया तो क्या होगा ? सुना, बाहर नौकरी करनेवालों को चिट्ठियां गयी थीं कि एक दल के लोगों ने दूसरे दल के लोगों के पुरखों के यश और तप को ललकारा है, तो क्या होगा ? ऐसे मौके पर पढ़ा-बेपढ़ा सब बराबर हो गया । और हंसी की बात तो ये है कि मैं नहीं जानता कि चार भइया, छह भइया दोनों के पुरखे एक ही थे; दोनों दल एक ही वंश और रक्त के हैं ।"

"इसी से तो पूछता हूं बाबा कि बताइए, जीतेगा कौन ? बिना संकोच, लिहाज के बोलिए, आप समरभूमि में बैठे हैं ।"

बाबा हंसकर बोले, 'कोउ नृप होहिं, हमें का हानी' कोई जीते, कोई हारे रामजी पंडित । पिछले कई वर्षों से लगातार ग्राम सभापति रहनेवाले को देखता आया हूं । दस वर्षों से ऊपर हुए, कीचड़, पांक से बचने के लिए गांव की एक गली में भी ईंटें नहीं बिछीं । बरसात के दिनों में नदी में पानी भर जाता है । ग्राम सभापति आज तक एक छोटा-सा भी पुल नहीं बना सके । गांव के चंदे से बना हुआ यह स्कूल है, इसकी दीवारों पर पलस्तर तक नहीं हो सका । मुकदमों का अंत नहीं, गांव धीरे-धीरे उजाड़ होता जा रहा है । जुआड़ी तो अपना दांव ताकता है, वकील शहर में जाकर वकालत करेंगे कि ग्राम की सरपंची ?
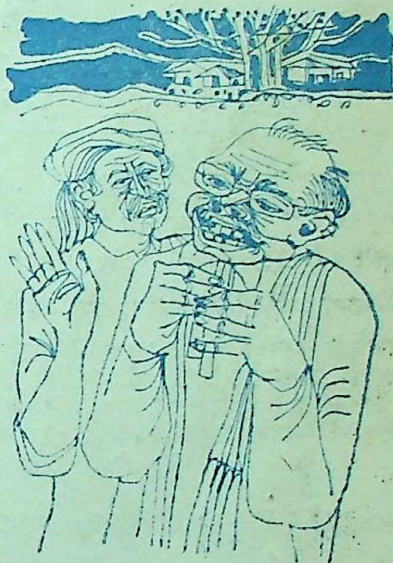
पहलवान बूढ़े हो चले, उन्हें दिल धड़कने की बीमारी है । शुरू में मेरे पास आये थे तो मैंने उनसे कहा था कि पहलवान पहले अपनी देह संभालो । पचपन-साठ के हो चले, इस झंझट में क्यों पड़ते हो ? कहीं सदमा लगा तो भहरा जाओगे । लेकिन वे मुझ पर बिगड़ गये, बोले कि मैं कुलद्रोही हूं ..."

बाबा थककर चुप लगा गये, गरम हवा से भरे हुए उस वातावरण में पलभर को ठहराव आ गया। बाबा सुस्ता रहे थे, लेकिन रामजी ने फिर छेड़ा।

"लेकिन एक तो आशीर्वाद देना ही है बाबा।"

आशीर्वाद किसको दूं, किसको न दूं, जीत तो एक की होनी है।"

"लेकिन किसकी ? निर्भीक होकर बोलिए बाबा, कोई आपका करेगा क्या ?'

"करने-कराने की बात अलग है रामजी। इसमें कहना क्या है ? तुम लोग तो खुद ही समझदार हो, वकील और पहलवान की लड़ाई है, बल और बुद्धि दोनों की..."

"एकदम महाभारत की तरह ।" रामजी फिर बोले।

बाबा हंसे, "महाभारत का समर, केवल बल से नहीं जीता गया था, सारथी कृष्ण की बुद्धि भी तो थी।"

"तो आपका मतलब है कि इसमें वकील जीतेंगे ?"

"पूछनेवाला आप ही इसका मतलब समझे।"

रामजी को जैसे चोट लगी, वे पीठ की धूल झाड़ने लगे।

वोट देनेवालों की कतार चुक गयी तो वकील बाबा के पास आकर बोला, "बाबा, अब पालकी से बाहर निकलिए, चलिए वोट देने।"

"वाह ! ये कैसे होगा !" रामजी कड़ककर बोले, "दरोगा से परची लेते समय बाबा यहां पर थे ?"

"थे या नहीं, पर दरोगाजी के हस्ताक्षर की पर्ची ये है, दोनों आंखें खोलकर देख लीजिए रामजी काका," कुटिल हंसी हंसते हुए वकील बोला।

रामजी गरम हो गये थे। पहलवान के बाकी समर्थक भी इस बात को लेकर गरम हो गये थे और दरोगा के पास शिकायत लेकर पहुंच गये।

उन लोगों की बातें सुनकर दरोगा ने वकील को अलग हटाकर कुछ बातें कीं, फिर बाबा के पास आया। बाबा मुसकरा रहे थे। बगल में खड़ा वकील भी वैसे ही मुसकरा रहा था।

दरोगा ने बाबा से पूछा "परची बंटते समय तो आप थे नहीं, वोट कैसे देंगे?"

बाबा हंसते हुए बोले, "मैं वोट देने कहां आया हूं दरोगाजी ?

"तब किसलिए आये हैं ?" रामजी पंडित तैश में बोल पड़े।

"इस गांव के कौरव-पांडवों की समरभूमि देखने बेटा.." वकील ठठाकर हंस पड़ा, उसके खुले हुए जबड़ों से, पान खाने के कारण गंदे दांतों की कतार साफ दीख रही थी।

—५३, म्योर रोड राजापूर इलाहाबाद-२

एक सहेली—"मेरे पति काफी बुद्धिमान हैं।"

दूसरी—"हुं ! बुद्धिमान होते तो तुम उनके साथ कैसे रहती !"

मानस आधुनिकता में

...ास बिरला

भौतिक दृष्टि से आज विश्व ने काफी प्रगति की है। विज्ञान के बल पर समय और स्थान की दूरियों को उसने पराभूत कर दिया है। वायुयानों की ही बात लीजिए। कभी ऐसा था कि पिस्टनचालित यानों को देखकर लोग चकित हो जाते और आज चक्र-चालित इंजन भी पड़ गये हैं। आज तो ध्वनि की जेट यान आम यातायात के ... हैं। सैनिक परिवहनों के ... गति सोनिक जेटों का युग ... यद्यपि से भी अधिक ती... वह कम जलपोतों अ...षण मानव- में भी अमहत्त्वपूर्ण सिद्ध वायुय... में उसका उपयोग ही ... लिए किया जाए ...सात्मक कार्यों के लिए। ...ति घंटे चलनेवाले राकेटों ...ही निराली है। वायुयान ही ...अंतरिक्ष-यान हैं। पहले जिस ... करने में दिन और महीने ... उसे कुछ मिनटों और घंटों ...या जा सकता है। संचार ... विलक्षण उपलब्धियां हैं।

...रण कार्य हुए। आज ... संचार-व्यवस्था और लेकि... उपकरणों के द्वारा मानव ...र्वा, ऋतु-विज्ञान एवं अंतरिक्ष ...न रहस्यों को जानने में भी सक्षम ...कता है। संभव है कि पृथ्वी की अनेक ...क्तताओं को अंतरिक्ष-ज्ञान द्वारा प्राप्त उपलब्धियों से पूरा किया जा सके। आकाश-वाणी की महत्ता से तो सारा विश्व परिचित ही है। उस पर टेलिविजन के आविष्कार ने तो समय और स्थान की दूरी

...ते ...वे ...ने ...श्रत ...कता ...नुष्य अपने ...ा है, जिसके लिए ...समाज मानव- ...है और सर्वोच्च- ...। जिसने ...है उसके
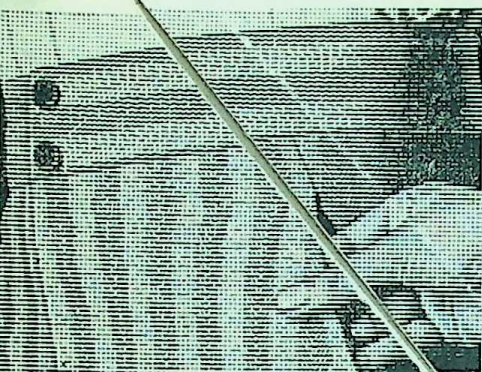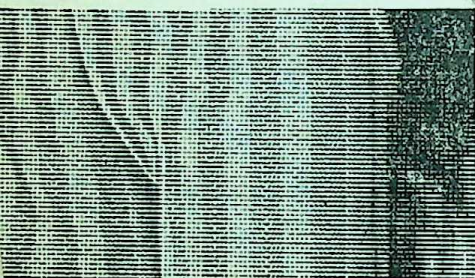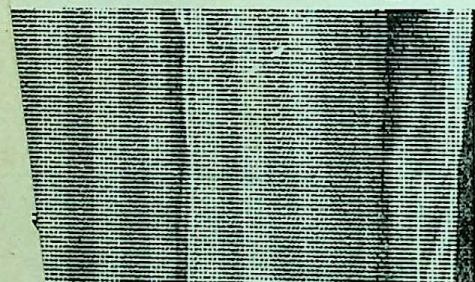
को प्रायः समाप्त ही कर दिया है। विश्व के विभिन्न देशों के नागरिक एक-दूसरे के बिलकुल समीप आ गये हैं। ज्ञान-विज्ञान, शिक्षा-संस्कृति आदि क्षेत्रों में एकता स्थापित हो ही रही है। इन यंत्रों ने संसार के सामान्य लोगों को भी ध्वनि एवं प्रकाश की गति के प्रति जिज्ञासु और सजग कर दिया है, पर इन भौतिक और वैज्ञानिक उपलब्धियों का एक और परिणाम निकला है। हर कोई 'शीघ्रतावादी' हो गया है। ठहरने, रुकने और रुककर विचार करने का अवकाश आज किसके पास है? यही कारण है कि पहले जिन आयोजनों और उपलब्धियों के लिए दशाब्दियां भी लग जाती थीं उतने ही आयोजन और उसी मात्रा में उपलब्धियां मानव ने पिछले दो दशकों में ही हस्तगत कर ली हैं। लेकिन वैचारिक तथा वैज्ञानिक दृष्टि से जीवन भले ही तीव्रगामी हो गया हो, मनुष्य शरीर तो वही है जो पहले था। विचार जितनी जल्दी - जल्दी बदल सकते हैं शरीर तो नहीं बदल सकता। शरीर नहीं बदल सकता तो उसकी आदतें भी नहीं बदल सकती हैं, और न आदतों पर आधारभूत उसके संस्कार उतनी ही तीव्र गति से बदल सकते हैं। परिणाम यह हुआ है कि वैज्ञानिक उपलब्धियों के कारण होनेवाले भौतिक परिवर्तनों एवं वैचारिक गतियों का साथ तो निःसंदेह आज के मानव ने दिया है, पर उस रफ्तार से नहीं जिसकी अपेक्षा थी।

परिणामस्वरूप पुरानी और नयी

पीढ़ियों के बीच एक खाई आ गयी है। नयी पीढ़ी की जिज्ञासाओं और आकांक्षाओं के प्रति पुरानी पीढ़ी पूरी तरह न्याय नहीं कर पाती। हम लोग अपनी ही बातें करें। एक जमाना था, जब अवाक चित्रों का प्रदर्शन किया जाता था, और हम लोग दांतों तले अंगुली दबाते थे। फिर सवाक चित्र आये। सवाक किंतु मंथर गतिवाले। हम और अधिक आश्चर्यचकित हुए। लेकिन आज की आधुनिक फिल्मों की अपेक्षा वे सब कहां छूट गये? तकनीक, गति एवं कथा-प्रवाह के घनत्व—हर दृष्टि से आज की सतरंगी फिल्मों की तुलना में कल की वे श्वेत-श्याम अवाक फिल्में महत्त्व-हीन हो गयी हैं। नयी पीढ़ी के लोगों ने अपनी जीवन-यात्रा उस जगह से शुरू की है जिस जगह आते - आते हम पुरानी पीढ़ीवाले भौतिक दृष्टि से अभिभूत हो गये हैं। नयी पीढ़ी के सामने तकनीक और विज्ञान की संभावनाओंवाला एक विशाल दृष्टि-पथ है और उनके कदम उस पर चलने के लिए आतुर हैं।

लेकिन विज्ञान ने समय और स्थान की दूरियों को लांघनेवाली जो 'गति' दी है, उस गति के कारण आज के जीवन में 'आपाधापी' आ गयी है। वह आपाधापी, उतावलापन, मानसिक तनाव, उत्तेजना एवं प्रतिपल विस्फोटित-सा रहनेवाला मनोभाव—ये सब उसी असंतुलित गति के परिणाम हैं। पुरानी पीढ़ी के सामने जो शिष्टाचार, आत्मसंयम, धीरे-धीरे सोच-विचार कर कार्य करने की पद्धति, आचार-विचार, नीति-नियम के प्रति स्वाभाविक आस्था, आचार-संहिता, परं-परानुरक्ति की प्रवृत्ति थी, आज की पीढ़ी में वह बहुत कम देखने में आती है। पर दोनों पीढ़ियों के मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणों में ऐसे तात्त्विक मतांतर होते हुए भी आज के सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थान सिद्धांततः उन्हीं पुरानी आचार-संहिताओं एवं परंपराओं की भित्ति पर आधारित हैं, जो बहुत कुछ विरोधा-भास-से लगते हैं। धर्म, शिक्षा तथा सामाजिक परंपरा आज के 'शीघ्रतावादी' युग में व्यक्ति विशेष के जीवन पर इसी कारण उस हद तक प्रभाव नहीं डाल पाते जिसकी आवश्यकता है। उसकी जगह वे वर्तमान जन-जीवन को प्रभावित करने लगे हैं—विभिन्न मत-वादों का तथाकथित सैद्धांतिक पागलपन और कट्टर धार्मिकता का दुराग्रह।

बर्ट्रेंड रसेल कहते हैं कि वही मनुष्य सुखी है जो अन्य पुरुषों के साथ अपने संबंधों को न तो अचानक तोड़ देता है, न उनमें विषैलापन पैदा होने देता है, जिसके व्यक्तित्व में अन्य व्यक्तित्व के लिए स्थान है और जो समस्त मानव-समाज के संबंध से आनंद प्राप्त करता है। मानव-जीवन की अविरल धारा प्रवाहित है और उसमें ओतप्रोत होकर ही जीवन की सर्वोच्च-उत्कृष्ट आनंदानुभूति होती है। जिसने आत्मानुरक्ति को अस्वीकार किया है उसके

सुख का मार्ग खुला हुआ है। शोक से त्राण और जीवन के अन्य उपयोग के लिए उत्तेजना पर विश्वास कम घातक नहीं है।

बुद्ध की व्याख्या और विशेषतया हिंदू संतों के छह दार्शनिक सिद्धांतों में एक प्रकार से इन सब की विवेचना है। जैसा कि मैक्समूलर ने लिखा है— भारत की दार्शनिक विचारधाराएं इस विश्वास से प्रारंभ होती हैं कि विश्व दुःख से भरा है और इस दुःख का अन्वेषण और निराकरण होना चाहिए। सांख्य और योग मत मुख्यतया मन के निरोध से संबंधित है जो आत्मा के साथ उपलब्धि का, जीवन के प्रति विरोधी आस्थाओं का तथा हास और अश्रु के बीच संचार का आधार है। चीन का दर्शन भी लोक के निवारण और आनंद-स्रोत की प्राप्ति के विषय में विशेष विचार-संलग्न है।

सब लोग शांति के अभाव में भटक रहे हैं। मानसिक शांति भौतिक पदार्थों से नहीं मिल सकती। ऐसे समय में 'रामचरितमानस' एक ऐसा ग्रंथ है जो हमें शांति दे सकता है। वह हमें उस तक पहुंचाने का मार्ग बताता है। ज्ञान-मार्ग, कर्म-योग, और भक्ति-मार्ग के बारे में हम लोगों ने सुन ही रखा है किंतु ज्ञाता लोगों के अनुसार मानस में एक और, चौथे मार्ग का दिग्दर्शन मिलता है। वह मार्ग है 'दीनता का मार्ग, भरतजी का बताया हुआ मार्ग, पर इस मार्ग में 'अहम्' कहीं नहीं आ पाता है। यह दीनता या दैन्य वह नहीं है जो किसी व्यक्ति के सम्मुख भय या आशा के कारण होता है। यह तो अखिल ब्रह्मांड-नायक के सम्मुख उद्भूत है। ऐसी दीनता का अर्थ है सर्वथा अहं-शून्यता, शील-विनय-संपन्नता एवं अभय, जो सर्वनियंता के प्रति 'समर्पण' से प्राप्त होता है। भरतजी द्वारा इंगित दीनता के अंतर्गत यही अर्थ निहित है। इससे अहम् का प्रलोच्छेद हो जाता है। 'मानस' के अनुसार इससे सरल कोई मार्ग नहीं है, यथा—

दुःख–सुख, पाप–पुण्य दिन राती,
साधु–असाधु, सुजाति–कुजाती।
दानव–देव ऊंच अरू नीचू,
अमिय सुजीवन माहुर मीचू॥

ये सब तो दुनिया में वर्तमान ही हैं। इस समय तो–'**राम कथा कलि कामद गाई सुजन सजीवनि मूरि सुहाई।**'

४०० साल पुरानी होकर भी 'मानस' की सूक्तियां नयी हैं, मानो इसी युग में लिखी गयी हों। इसका गंभीर तथ्य वही समझ सकते हैं जो मानस के दिखाये मार्ग पर चलने का विनम्र प्रयत्न करते हैं—

मति कीरति गति भूति भलाई।
जब जेहि जतन जहां जेहि पाई॥
सो जानब सतसंग प्रभाऊ।
लोकहुं बेद न आन उपाऊ।

——बुद्धि, यश, श्रेष्ठ गति, ऐश्वर्य तथा कल्याण जब भी किसी ने पाया है तब वह सत्संग के प्रभाव से ही मिला है, वेद में भी इसका दूसरा उपाय नहीं है।

–९/१ आर. एन. मुखर्जी रोड, कलकत्ता-१

कोश रचना के यात्रा-पथिक

• वियोगी हरि

श्री रामचन्द्र वर्मा को कई वर्षों से मैं जानता था। एक-दो बार उनसे मिला भी था। उनका अनुवादित एवं मूलरूप में लिखित कुछ साहित्य भी पढ़ा था। किंतु पांच वर्ष पूर्व कनखल (हरिद्वार) में जब वर्माजी के सत्संग का लाभ मिला, तब ऐसा लगा कि मैं शब्दब्रह्म के एक महान उपासक का साक्षात्कार कर रहा हूं। जराजीर्ण शरीर और आंखों पर मोटे शीशे का चश्मा। वेशभूषा बड़ी सादा। चर्चा का विषय प्रायः एक ही और उत्साहमयी जिज्ञासा। अनेक भाषाओं में पैठ और हिंदी के प्रति अगाध निष्ठा।

कहते हैं कि भगवान व्यास को अठारह पुराण और महाभारत रचने पर भी यथेच्छ संतोष नहीं हुआ था। वह हुआ श्रीमद्भागवत की रचना से।

वर्माजी ने भी पचासों पुस्तकें लिखीं—अनुवाद किये, संकलन किये और संपादन भी। पर उस सबको गौण माना। प्रथम स्थान तो उन्होंने कोश-रचना को ही दिया। यही उनका सर्वोत्तम कार्य कहा और माना गया है। कोश-कला का उन्होंने गहरा अध्ययन किया था। निरुक्ति या व्युत्पत्ति तथा अर्थ-विचार पर उन्होंने खासा प्रकाश डाला है। लगता है कि यास्क मुनि के इस कथन का उन्होंने गंभीरतापूर्वक मनन किया था :

स्थाणुरयं भारहारः किलाभूद-
धीत्यं वेदं न विजानाति योऽर्थम्।
यद्गृहीतम् विज्ञातंनिगदेनैव शब्दयतां-
अनग्नाविव शुष्कैंधो न तज्ज्वलति कर्हिचित्।
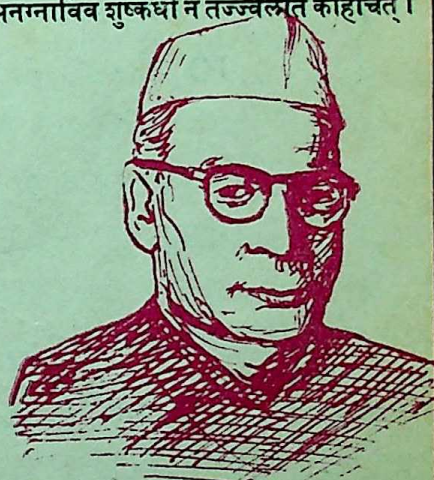
रामचन्द्र वर्मा

अर्थात वेद को पढ़कर उसके अर्थ को न जाननेवाला व्यक्ति भार से लदे हुए केवल एक ठूंठ के समान है। जिस मंत्र को, बिना अर्थ समझे, केवल पाठ-मात्र से पढ़ा जाता है, उसका कोई फल नहीं होता उसी तरह, जैसे, ईंधन भी बिना आग के कभी नहीं जलता।

वर्माजी ने यह कभी नहीं माना था कि कोश-संपादन के क्षेत्र में उन्होंने जो काम किया है वह त्रुटियों से रहित है। एक स्थान पर उन्होंने सुकवि घनानन्द की इस पंक्ति का हवाला दिया था कि—**'लोग हैं लागि कवित्त बनावत, मोहि तो मेरे कवित्त बनावत।'** कहा था कि, "यह बात अक्षरशः मुझ पर भी ठीक घटती है। भला, मुझमें शब्द-कोश बनाने की योग्यता कहां? हां, शब्द-कोश के संपादन-कार्य ने अलबत्ता मुझे बनाया और कार्य करने का रास्ता दिखाया। यदि लोग इन कोशों को मेरी रचनाएं न समझकर मुझे इनकी रचना समझें, तो शायद कुछ ज्यादा ठीक हो।"

ज्ञान-पिपासा उनकी बड़ी-ही तीव्र थी। मुझे एक पत्र में उन्होंने लिखा था:

"अपने ६० वर्षों की हिंदी-सेवा के परिणामस्वरूप मैं इसी निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि भाषा की दृष्टि से हिंदी तभी उन्नत और समृद्ध हो सकेगी, जब उसके

सभी शब्दों का वैसा ही विशद विवेचन होगा, जैसा अंगरेजी के बड़े-बड़े कोशों में हुआ है। मैंने अनेक प्रकार की कठिनाइयां और बाधाएं झेलकर मानक-कोश में बहुत-कुछ काम किया है। परंतु अभी तक बहुत अधिक काम बाकी है। हिंदी में यह विषय भी अभी तक समाज के हरिजनों की तरह ही उपेक्षित और तिरस्कृत रहा है। मैं मानता हूं कि हिंदीवालों के मन से इस उपेक्षा और तिरस्कार की भावना दूर करूं।"

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल को उन्होंने बहुत श्रेय दिया था। 'मानक हिंदी-कोश' के आरंभिक निवेदन में उन्होंने लिखा है:

"मैं आरम्भ से ही शुक्लजी की आर्थी विवेचना और व्याख्यानों के रचना-कौशल का बहुत सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन करने लगा था। आचार्य शुक्ल के निधन के उपरांत तो मानो कोश-रचना का विषय मेरा व्यसन-सा बन गया था, और मैं अनेक दूसरे कामों में लगे रहने पर भी शब्दों और मुहावरों के अर्थों और प्रयोगों पर यथासाध्य सूक्ष्म दृष्टि से विचार करता रहता था।"

२९ दिसंबर, १९६५ को वर्माजी ने मुझे जो पत्र लिखा था, वह मेरी लापरवाही से खो गया है। उनकी अनुपम शब्द-साधना के प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए सेवाग्राम से मैंने उसका निम्न उत्तर ५ फरवरी, १९६६ को दिया था:

प्रिय वर्माजी,

सादर नमस्कार।

दिल्ली से वर्धा जाते हुए कल मैंने 'शब्द और अर्थ' का अधिकांश पारायण कर डाला। प्रायः प्रत्येक पृष्ठ पर निशान भी लगाता गया। आपकी यह कृति बहुत अधिक बोधक और रोचक लगी। सचमुच 'शब्द' की चोट आपके मन को लगी है, जिससे आपका सारा तन बिंध गया है। शब्द-ब्रह्म का जो अनुग्रह आपने पाया, वह हिंदी-जगत् में किसी बिरले को ही मिला होगा। क्या अच्छा हो कि वैसे अनुग्रह के अधिकारी अधिक संख्या में हिंदी के साहित्यकार बनें। परन्तु इसके लिए साधना-निरत तपश्चर्या का जीवन चाहिए। आप की इस लंबी साधना की कद्र आज नहीं तो कल जरूर की जाएगी, इसमें संदेह नहीं।

अर्थ-विवेचन की कला का आपने गहरा मंथन किया है। शब्दों के अंतर में पैठकर उनके अर्थों का विश्लेषण करना सहज काम नहीं। शब्द-सागर ऐसा अपार और अगाध है कि उसकी थाह पाना और उसकी सीमा को मापना अच्छे-अच्छे वैज्ञानिकों के लिए भी कठिन है। आपने इसके तल में गहरे उतरकर ऐसा शोध-कार्य किया है, जो अबतक प्रायः उपेक्षित और तिरस्कृत भी रहा है। वर्तमान तथा भावी कोशकारों के मार्ग का वास्तव में आपने परिष्कार किया है। आपके इस सूत्र को पकड़कर कोशकार एवं शब्दो-

पासक आगे जा सकते हैं।

हम हिंदीवाले अपने स्वल्प ज्ञान को, अज्ञान या अहंकार के कारण, आज महा-निधि समझने लगे हैं। दूसरी भाषाओं—विदेशी तथा देशी-का अध्ययन नहीं करते हैं, जो हमारे लिए अभिशाप सिद्ध हो रहा है। दूसरी भाषाओं के शब्दों को या तो हम लेते नहीं हैं, और कुछ शब्दों को ले भी लेते हैं, तो अनाड़ीपन से या किसी अन्य हेतु से प्रेरित होकर। काश, इस क्षेत्र में हमारी दृष्टि व्यापक और विवेकयुक्त होती।

एक बुंदेलखण्डी शब्द मेरे सामने है, जो खासा अच्छा अर्थ-सूचक है। वह है 'मुराना'। रोटी, दाल, भात, हलवा—जैसी वस्तुओं को चबाया नहीं जाता, किन्तु 'मुराया' जाता है। चना-चबेना चबाया जाता है। 'मुराना' शब्द स्वयं ही कोमल है। यह तो यों ही मेरे ध्यान में आ गया। ऐसे कितने ही शब्द उपेक्षित पड़े हुए हैं, जिनके सूक्ष्म अर्थ को पहचानकर हम कोशों में शामिल कर सकते हैं।

आपका यह लिखना बिल्कुल सही है कि, "शब्दों के आगे अभिदेश देते समय कोशकार को यह भी देख लेना चाहिए कि हम जिस शब्द की ओर संकेत कर रहे हैं, उसमें ठीक और पूरा अर्थ आया भी है या नहीं।"

'अभी', 'आंख', 'आन' 'ऊपर', और 'पर', 'तथा' और 'क्या' इन छोटे-छोटे सामान्य शब्दों का विवेचन करके आपने कोशकारों के लिए एक अच्छा मार्ग खोल दिया है। 'पड़ना', 'झेलना', 'सकना' और 'भोगना' और इसी प्रकार 'पर्याप्त' और 'यथेष्ट' के संबंध में भी आपने जो यथार्थ विवेचन किया है, वह भी उपादेय है। 'पैर', 'पांव', 'मुंह' और 'हाथ' पर भी आपने खूब सोचा है।

'चूड़ी उतारना' और 'चूड़ी टूटना' ये प्रयोग भी कहीं-कहीं होते हैं, और उनको अमंगलसूचक नहीं कहा जाता। बुंदेल-खण्ड में तथा और भी कुछ जगहों में चढ़ाते हुए 'चूड़ी टूट गयी' और 'चूड़ी उतार लो' ये प्रयोग बराबर चलते हैं। 'दूकान बढ़ाना' के साथ-साथ 'दूकान बंद करना' भी चलने लगा है।

ऐसा अच्छा काम उठाने के लिए आपका मैं श्रद्धया अभिनंदन करता हूं।

आपका, वियोगी हरि

कोश-रचना का यात्रा-पथ लंबा और लंबा होता गया, और उस पर वे बड़े साहस के साथ निरंतर चलते ही रहे। उनके सतत श्रम ने उन्हें बहुत अंशों में लक्ष्य-सिद्धि करा दी। किंतु शरीर जर्जर हो गया। अपनी साधना में से रसानुभूति लेते हुए जीवन-रथ को आनंदपूर्वक उन्होंने चलाया। अनेक कथित साहित्य-रसिकों को उनकी यह आराधना और साधना भले ही नीरस मालूम दी हो, किंतु वे हर सांस उस पथ का निर्माण करने में लगाते रहे, जिसे सारस्वत-पथ कहा गया है।

—एफ १३/२ माडल टाउन, दिल्ली-९

विज्ञान
नयी उपलब्धियां

इस स्तंभ के अंतर्गत विज्ञान के क्षेत्र में नयी उपलब्धियों की चर्चा रहेगी। स्तंभ एक-एक महीने के अंतराल से प्रकाशित होगा——सं.

इलाज एक लाइलाज मर्ज का

कैंसर चिकित्सा की एक नयी पद्धति शीघ्र ही सामने आनेवाली है। इस नयी चिकित्सा का आधार एक आकस्मिक शोध है। दस वर्ष पूर्व दो ब्रिटिश वैज्ञानिकों (प्रोफेसर विलिएम बुलो और डॉ. एडना लॉरेंस, बर्कबेक कालेज, लंदन) ने यह शोध संयोगवश कर डाली थी। क्षति हो जाने पर ऊतकों की प्रतिक्रिया का अध्ययन करते समय उन्होंने प्राकृतिक विधि से उत्पन्न एक रसायन—कैलोन की—खोज की जो कोशिकाओं की वृद्धि रोकता है।

इस नयी पद्धिति का पशुओं के संबंध में सफल प्रयोग किया गया है। अब अगला कदम है अस्पतालों में मनुष्य पर इसका प्रयोग। इन परीक्षणों में अगर सफलता प्राप्त हुई तो कैलोन का वास्तव में रसायनी चिकित्सा से अधिक महत्त्व होगा। रसायनी चिकित्सा में एक बहुत बड़ी कमी होती है। इसमें प्रयोग किये गये अभिकर्ता कोशिकाओं की वृद्धि को विशेष तौर से नहीं रोक पाते। चूंकि कैंसर-कोशिकाएं बहुत तेजी से बढ़ती हैं, अतः हानि की आशंका बहुत तेजी से होती है। शरीर की शेष ऊतक पूरी तरह नष्ट नहीं होते, अतः प्रभाव में रसायनी चिकित्सा क्षीण होती है। इसके विपरीत, कैलोन विशिष्ट होता है। गुर्दे से अलग किये कैलोन गुर्दे में ही कोशिका-वृद्धि रोकते हैं।

शरीर में स्थित सारे ऊतक वृद्धि-नियंत्रण की सामान्य प्रक्रिया के अनुसार कैलोन उत्पादित करते हैं। अब चिकित्सक त्वचा-कैंसर के लिए त्वचा-कैलोन का प्रयोग करेगा, और यकृत-कैंसर के लिए यकृत-कैलोन आदि का प्रयोग करेगा। लेकिन एक समस्या और है। शरीर की कोशिकाओं में कैलोन की बहुत ही कम संख्या उत्पन्न हो पाती है।

यद्यपि ऊतकों के लिए कैलोन विशिष्ट होते हैं, पर किसी विशेष पशु के लिए ही वे विशिष्ट नहीं हैं। सुअरों, घोड़ों और

यहां तक कि चूहों से प्राप्त त्वचा-कैलोन मानव-त्वचा के लिए भी लाभकारी होते हैं। आशा है कि अंततोगत्वा कैलोन प्रयोगशाला में ही तैयार होने लगेंगे। लेकिन इससे पूर्व दो समस्याओं को हल करना पड़ेगा—एक तो अभी तक किसी को यह पता नहीं है कि कैलोन किस तरह के रसायन हैं; दूसरे उनका व्यापारिक स्तर पर उत्पादन कठिन है। चूंकि कैलोन अधिकतर बहुत बड़े अणु होते हैं, अतः व्यापारिक उत्पादन अभी तक तो कठिन ही लगता है।

लेकिन ये कठिनाइयां निकट भविष्य में हल होनेवाली हैं। फ्रांस के प्रोफेसर जॉर्ज माते ने इस संबंध में बताया है कि उन्होंने सफलतापूर्वक लसीका-कणिका के कैलोन का एक ऐसे मरीज पर प्रयोग किया जिसकी हड्डी पर मज्जा चढ़ायी गयी थी। फलस्वरूप, मज्जा का अस्वीकरण रुक गया। इस पहले प्रयोग ने सारे चिकित्सा-जगत में आशा उत्पन्न कर दी है। कैलोन के अन्य संभावित उपयोगों के बारे में तेजी से खोज-बीन शुरू हो गयी है।

प्रो. बुलो और लारेंस को ऐसा लगता है कि कैलोन, ऊतकों में वृद्धि-नियंत्रण व्यवस्थाओं का सर्वाधिक महत्त्व-पूर्ण काम करते हैं। वाशिंगटन में डॉ. जैक हाउक और उनके सहयोगियों ने कुछ समय पूर्व रक्तोद (ब्लड सीरम) में से एक ऐसा तत्त्व अलग किया है जो शरीर के बहुत से अंगों के अंदर जोड़नेवाले ऊतकों की कोशिकाओं (तंतु-प्रसू) को उत्प्रेरित करता है। उन्हें आशंका है कि कोशिका-झिल्ली के सम्वेदनशील स्थानों पर कैलोन और उत्प्रेरक के मध्य कोई स्पर्धा है। शायद अन्य ऊतकों में भी ऐसा ही संतुलन काम करता है। तात्पर्य यह है कि उत्प्रेरक से अधिक कैलोन के सक्रिय होने पर वृद्धि-प्रक्रिया रुक जाएगी।

कैंसर के बारे में एक चीज स्पष्ट है, और वह यह कि वृद्धि नियंत्रणहीन होती है। अब प्रश्न यह है कि कहीं कैलोन-विधि में गड़बड़ हो जाने के कारण तो ऐसा नहीं होता? लगता ऐसा ही है। कैंसर-कोशिकाएं अब भी कैलोन ग्रहण करने पर प्रतिक्रिया करती हैं और सामान्य ढंग से कैलोन उत्पन्न करती हैं। इसके बावजूद ट्यूमर में इसका अनुपात काफी कम होता है।

सारे प्रमाण इस ओर इंगित करते हैं कि कैलोन चुपचाप, दोषपूर्ण झिल्ली के द्वारा बाहर निकल जाते हैं। यद्यपि कैंसर कोशिकाओं से कैलोन साफ करना सरल है, सामान्य कोशिकाओं से ऐसा नहीं किया जा सकता। कैंसर-कोशिकाओं की झिल्ली में यह शक्ति नहीं रहती कि वह कैलोन को ठीक ढंग से जोड़े रख सके।

एक दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कैंसर-कोशिकाओं में कैलोन-निर्माण की क्षमता नष्ट नहीं होती। जिन पशुओं में ट्यूमर होता है उनके रक्त में कैलोन का सामान्यतया अधिक अनुपात होता है। लो एवं लॉरेंस के अनुसार त्वचा-कैंसर-

वाले खरगोशों के रक्त में त्वचा-कैलोन तैरते रहते हैं। इसका अर्थ है कि कैंसर-हीन त्वचावाले शरीर में घूमते हुए तथा असामान्य रूप से अधिक अनुपात में पाये जानेवाले त्वचा-कैलोन के कारण ही सामान्य वृद्धि दब जाती है। ट्यूमर जैसे-जैसे बढ़ता है, वृद्धि की रफ्तार धीमी होती जाती है। यदि पशु अधिक समय तक जीवित रहे, तो वृद्धि बिलकुल रुक जाती है। ट्यूमर के बढ़ने पर कैलोन का निर्माण भी अधिक होने लगता है। यह प्रक्रिया तब तक होती है जब तक कैंसर-कोशिकाएं अनुकूल प्रतिक्रिया न करने लगें।

डॉ. एडना लारेंस

प्रो. विलियम बुलो

डॉ. तापिओ रिटोमा (हेलिसेंकी) ही वे व्यक्ति हैं जिन्होंने कैंसर के विरुद्ध संभावित अभिकर्ता के रूप में कैलोन का सबसे महान प्रयोग किया है। उन्होंने एक बड़े, मांसल चूहे के क्लोरोल्यूकीमिआ-ट्यूमर में कैलोन का इंजेक्शन लगाया। कुछ ही सप्ताह में ट्यूमर फट गया, और अंततोगत्वा गायब हो गया। इस इलाज के बिना चूहा मर जाता। डॉक्टर ने उन चूहों पर भी कैलोन-चिकित्सा की जिन्हें ग्रेनूलॉकिटिक ल्यूकीमिया की शिकायत थी। उन्हें भी लाभ हुआ। जिन ४० चूहों की चिकित्सा नहीं की गयी वे २० दिन

के अंदर ही मर गये। जिन ४० चूहों की चिकित्सा की गयी और जिनका ग्रेन्यूलॉकिटिक-कैलोन से उपचार किया गया, उनमें से ९ जीवित रहे और पूर्णतया नीरोग हो गये। शेष की आयु काफी वढ़ गयी।

मनुष्य के लिए इनके संभावित उपयोग के संदर्भ में ये परिणाम विशेष रोचक और उत्साहवर्धक हैं। टेस्ट-ट्यूब परीक्षणों में मानव-कोशिकाएं, जिनमें ग्रैन्यूलॉकिटिक ल्यूकीमिआ होता है, ग्रैन्यूलॉकिटिक-कैलोन के प्रति सम्वेदनशील सिद्ध हुई हैं। उनमें कैंसर-कोशिकाओं की शिकायत समाप्त हो गयीं। दो ब्रिटिश कंपनियां—एल्गा प्रॉडक्ट्स और वेडाल फार्मास्यूटिकल्स — पशु-ऊतकों से कैलोन अलग करने का काम कर रही हैं। आगे कैंसर-चिकित्सा इसी पर निर्भर करेगी। ●

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. **सुरेंद्र** सतीश से कहेगा, "अशोक से पूछो और मुझे बताओ कि वह सच्चा है या झूठा।" जो भी उत्तर मिलेगा, वही सतीश की पहचान है। २. **ऊन** कुचालक है अतः शरीर के ताप को सुरक्षित रखता है और वातावरण की ठंड को बाहर ही रखता है; लकड़ी या कोयले को जलाने पर प्रकाश और ताप की अभिवृद्धि होती है। धुआं इस अभिवृद्धि का ही एक उत्पादन है; खुराक के स्रोत घट जाने के कारण वे शिथिल हो जाते हैं, और उनकी रस-प्रक्रिया धीमी हो जाती है। ३. **स्व.** जाकिर हुसेन। ४. **अली** अकबर खां, रविशंकर, विस्मिल्ला खां, गुदई महाराज। ५. १, ३, ९, २७ किलो के चार टुकड़े। ६. **ऊंट**। ७. **सूर्य,** चंद्रमा। ८. **घड़ी**। ९. **कैरमबोर्ड**। १०. **प्याज** और बंदगोभी। ११. **शौच;** उबटन; स्नान; केश-बंधन; अंगराग; अंजन; महावर; दंत-रंजन; तांबूल; वसन; भूषण; सुगंध; पुष्पहार; कुंकुम; भाल-तिलक और चिबुक-बिंदु। १२. **महिमा;** अणिमा; लघिमा; गरिमा; प्राप्ति; प्राकाम्य; ईशत्त्व और वशित्त्व। १३. ८ फरवरी, १९७४; ८४ दिन; गेराल्ड कार, विलियम पोग, एडवर्ड गिब्सन। १४. **पहाड़** पर वातावरण का दवाब कम होता है अतः उबालने में समय लगता है; ट्रैफिक चालू होने पर घर्षण से उत्पन्न ताप से विस्तार हो सके, फिर विकिरण के बाद ताप नष्ट होने के बाद संकुचन हो सके; उगती हुई फसल मिट्टी की उर्बरता नष्ट करती है, खाद इस उर्बरता को बनाये रखती हैं; आक्सीजन लौ तक नहीं पहुंच पाती; उगने के लिए पौधे को प्रकाश की जरूरत होती है, अंधेरे में रहने के कारण प्रकाश की तलाश में पौधा उस तरफ मुड़ जाता है, अतः लंबा हो जाता है। १५. **कृष्णकुमार** बिरला। १६. **१८ मई,** १९७४ को पश्चिमी राजस्थान के पोकरण क्षेत्र में; समतल मैदान के ऊपर पहाड़ी बन गयी। १७. **जुपिटर** (बृहस्पति), मर्करी (बुध)। १८. **बृहस्पति** के, बृहस्पति। १९. **दूसरा** कारण। २०. २२ फर्वरी, १९७४। २१. एक स्तरी तरल स्फटिक का ध्रुवण सूक्ष्मदर्शी से लिया चित्र।

गोभी वर्गीय सब्जियां हमारे देश में विदेशों से लायी गयी हैं। पात गोभी की उत्पत्ति लगभग ४००० वर्ष पहले फ्रांस के भूमध्यसागर के किनारे हुई थी। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि इसकी उत्पत्ति इंग्लैंड में डोवर के निकट के चाकी पर्वतों पर या डेनमार्क में हुई। फूल गोभी की उत्पत्ति लगभग २५०० वर्ष पूर्व साइप्रस या भूमध्यसागर के किनारे हुई थी। पात गोभी भारत में वास्कोडिगामा के समय में पुर्तगालियों के द्वारा लायी गयी थी। फूल गोभी का बीज १८२२ में ब्रिटेन से ईस्ट इंडिया कंपनी के द्वारा भारत लाया गया था। लगभग एक शताब्दी तक फूल गोभी के बीजों से उत्तरी भारत के इलाकों में यह सब्जी उगायी गयी तो एक नयी तरह के फूल गोभी की जाति विकसित हो गयी, जो अन्य यूरोपीय किस्मों से भिन्न थी। यह नयी किस्म जल्दी तैयार होने वाली और नमी तथा गरमी सहन करने वाली थी। इसको अब भारतीय फूल गोभी कहते हैं। आगे चलकर यही भारतीय फूल गोभी उपोष्ण कटिबंधीय प्रदेशों (श्रीलंका, वेस्टइंडीज, फिलीपीन और फ्लोरिडा) में उगायी जाने लगी। पात गोभी अधिक नमी और गरमी बरदाश्त नहीं कर सकती, इसलिए पात गोभी अधिकतर उन्हीं देशों में उगायी जाती है, जहां का तापमान शीतल है। पात गोभी की खेती हमारे देश में उत्तरी भारत में सफलतापूर्वक होती है और इसके बीज का उत्पादन कश्मीर और कुल्लू घाटी जैसे शीतल जलवायु वाले क्षेत्रों में होता है।

भूलाभाई बक्षी, मंदसौर : अंग्रेजी की पुस्तकों में दिये जाने वाले फुट नोट्स में कई बार (op cit) लिखा रहता है, जैसे (op cit) १३४ आदि (जो कि पृष्ठ संख्या होती है)। इसका क्या अभिप्राय है?

यह opera Citato का संक्षिप्त रूप है। इतालवी शब्द (Opus) का अर्थ होता है कृति। इस प्रकार उपर्युक्त शब्दों का अर्थ है— ऊपर जिस कृति का उल्लेख किया गया है उसमें। ये शब्द आप उन्हीं फुट नोट्स में लिखा पायेंगे, जिनमें ऊपर के किसी फुट नोट में उस ग्रंथ का पूरा संदर्भ होगा, जिससे कोई चीज उद्धृत की गयी हो। दोबारा उसी ग्रंथ से उद्धरण देने पर नीचे फुट नोट में ग्रंथ का पूरा संदर्भ देने के

यहां भी हाउस टैक्स ?
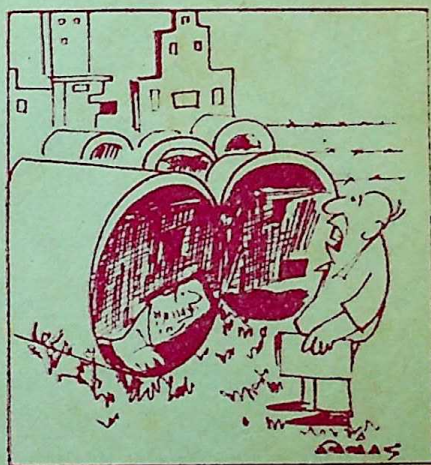
बजाय (op cit) लिख देते हैं, जिस प्रकार हिंदी में 'वही' या 'उपर्युक्त' लिखते हैं।

सूरजभान चौधरी, बुलंदशहर : धान सुखाने के लिए प्रयुक्त होनेवाले 'बैग ड्रायर' की कार्यप्रणाली क्या है ?

'बैग ड्रायर' में धान बोरे (बैग) में रखकर सुखाया जाता है। यह ड्रायर अधिकतर अनाज की थोड़ी मात्रा को सुखाने के लिए अधिक उपयुक्त होता है। यह किसी कमरे या गोदाम में फर्श से लगभग ६० सेंटीमीटर की ऊंचाई पर एक प्लेटफार्म के रूप में बना होता है। उसमें समान दूरी पर अनाज का बोरा रखने के लिए वर्गाकार छेद बने होते हैं, जिन पर बोरों का भार सहने के लिए तार की जाली लगी रहती है। इन वर्गाकार छेदों पर अनाज के बोरों को रखकर गरम हवा बर्नर और पंखे के द्वारा प्रवाहित की जाती है, जो अनाज के बोरों से नमी लेकर वायुमंडल में मिल जाती है। इस ड्रायर में हवा ४५ सेंटीग्रेड तक गरम करके ४ घनमीटर प्रति-बैग (४५ किलोग्राम) के हिसाब से प्रसारित की जाती है।

रमेशचंद्र यादव, हिसार : अंगरेजों के जमाने में हिंदुस्तानी लोग उनका विरोध करने के लिए एक नारा लगाया करते थे—टोड़ी-बच्चा हाय-हाय। मैं 'टोड़ी' का अर्थ जानना चाहता हूं।

'टोरी' शब्द हिंदी में टोड़ी हो गया, और साथ ही अपना मूल अर्थ खोकर अंग्रेजों का वाचक बन गया। टोरी वास्तव में इंगलैंड की एक राजनीतिक पार्टी का नाम था, जिसकी स्थापना १७वीं शताब्दी के अंत में की गयी थी। यह पार्टी अभिजात वर्ग के सामंतों तथा चर्च के उच्च अधिकारियों के हितों के लिए लड़ती थी। १९वीं शताब्दी के मध्य में इसी पार्टी से कंजरवेटिव पार्टी का विकास हुआ।

हरिप्रसाद सोलंकी, खुर्जा : एक रामायणी के मुंह से सुना कि रावण ने सीता का नहीं, बल्कि मायासीता का हरण किया था। मायासीता के बारे में तथ्य क्या है ?

तथ्य क्या रहा होगा या इस संबंध में कोई तथ्य रहा भी होगा, कौन जाने? हां, सुनी-सुनायी (कहीं-कहीं पढ़ी हुई भी) बात यह है कि सीता-हरण के पहले राम ने सीता से कहा कि रावण तुम्हारा अपहरण करेगा, इसलिए तुम अग्नि में छिपी रहना और अपनी जगह मायासीता को रख छोड़ना। सीता ने ऐसा ही किया। रावण ने असली सीता का नहीं, मायासीता का अपहरण किया और रावण का वध करने के बाद मायासीता अग्नि में प्रविष्ट हुई और असली सीता निकल आयीं।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

कु. क. ख. ग. : संसार की सबसे उपयोगी चिड़िया ?

मुर्गी, जो पैदा होने से पहले भी खायी जा सकती है और पैदा होने के बाद भी।

—बिंदु भास्कर

खोयी हुई कहानी १६
BUS STOP
परिणति
• दीप्ति खण्डेलवाल

बेहद गरम दिन था वह ! सारे दिन हवा, जैसे शोले भड़काती रही थी और, यद्यपि शाम के पांच बज रहे थे लेकिन शोले अभी भी भड़क रहे थे । शहर के आखिरी बस स्टाप पर वह खड़ा था । उस जगह उसे अचानक देखने की कोई उम्मीद नहीं थी ।

"हैलो दोस्त ।" मैंने हाथ बढ़ा दिया ।

प्रत्युत्तर में न उसने हाथ बढ़ाया, न कुछ कहा । वैसे ही खड़ा रहा, जड़वत ।

"मैं तुम्हीं से 'हैलो' कह रहा हूं दोस्त, क्या तुम महेन्द्र नहीं हो ?" मैं उसे साफ-साफ पहचान गया था और चाहने लगा था कि वह भी मुझे पहचाने ।

"महेन्द्र नाम के दो आदमी भी हो, सकते हैं ।" वह जैसे चिड़चिड़ा गया ।

"हां, हो सकते हैं, लेकिन एक-सी शक्ल के दो आदमी मुश्किल से ही होते हैं ।" मैंने हंसकर उसका हाथ पकड़ लिया।

उसने मेरी गिरफ्त से अपना हाथ खींचा नहीं, न उस गिरफ्त को कसा । वह वैसे ही खड़ा रहा, जड़वत् ।

"कहो, कैसे हो भाई ? मुझे अब भी नहीं पहचाना ? मैं हूं सतीश—सतीश शुक्ला ।" मैंने उसका साथ हिलाकर छोड़ दिया ।

वह कुछ क्षण मुझे खामोश देखता रहा । उन कुछ क्षणों में मैं सोचता रहा, आदमी, आदमी के बीच की पहचान कहां खो जाती है, क्यों खो जाती है ? आदमी इसलिए ही तो आदमी है कि उसमें पहचान है—भीतर की बाहर की, धरती की आकाश की । लेकिन उन क्षणों मेरे सामने खड़ा वह आदमी-जैसे बिलकुल पहचान-विहीन था । उसकी उन 'पहचान-विहीन' आंखों को देखता हुआ मैं एक उदास अहसास से घिर गया था—न पहचाने जाने का उदास अहसास !

वह महेन्द्र था । वर्षों पहले का वह महेन्द्र शर्मा मुझे याद था, जो कॉलेज में अपनी जिंदादिली के लिए जाना जाता था। मैं उसके अच्छे दोस्तों में था । वही महेन्द्र आज मुझे पहचान नहीं रहा है । शायद वह मुझसे —सबसे बचना चाहता है । शायद वह अपनी जड़वत स्थिति से उबरना नहीं चाहता, या उबर नहीं पाता ।

"हैलो सतीश ! सॉरी यार, जल्दी

पहचान नहीं सका ।" उसकी आंखों में एक उदास पहचान उभर आयी थी ।

"यहां कैसे और क्यों ?" मैं उसे कुछ देर के लिए निकट खींच लेना चाहता था । उसका खालीपन मुझसे सहा नहीं जा रहा था । आखिर वह कभी मेरा दोस्त था । क्यों टूट गया यह, कैसे टूट गया ? मेरे मन में प्रश्न उभर रहे थे ।

"अरे कुछ नहीं यार, अपनी तो जिंदगी ही भुस की लिपाई है । कुछ हासिल नहीं ।" महेन्द्र कह रहा था । 'कुछ हासिल नहीं' के शब्द, उसके ओंठों के ही नहीं, जैसे उसके संपूर्ण अस्तित्व के थे ।

"शहर जा रहे हो ?" मैं उसके दर्द को पकड़ना चाह रहा था ।

"हां, शहर जा नहीं रहा, शहर लौट रहा हूं, उस कबूतरखाने में जिसे घर कहते हैं ।" वह एक फीका रक्तहीन हंसी हंसा । हंसी भी इतनी उदास हो सकती है, यह मैंने महेन्द्र की उस हंसी को देखकर जाना ।

"फेमिली में कौन-कौन है ?"

"अमां, यह पूछो कि कौन-कौन नहीं है । मां, बीवी, तीन-तीन बच्चे । बहनों को ब्याह कर बिदा कर दिया, नहीं तो वे भी थीं ।" वह फिर हंसा । इस बार वह हंसी और भी रक्तहीन लगी ।

"तुम्हारे घर चल सकता हूं ?"

"ओह श्योर ! क्यों नहीं ? क्या तुम समझते हो, मैं सचमुच तुम्हें भूल गया !" उसने मेरा हाथ पकड़ लिया था, वह जैसे जिंदा होने लगा था ।

आत्मकथ्य

जन्म और मृत्यु के फासले को ही जिंदगी कहते हैं न ! मेरा यह फासला गतिहीन रहा । अस्वस्थता का ग्रहण ऐसा लगा कि मैं भूल गयी, मुक्त होना किसे कहते हैं ? नियति भी कोई चीज होती है न !

और लेखन. . .? लगता नहीं कि मैं लिखती हूं । लगता है, केवल उन्हीं कुछ क्षणों में मैं जीती हूं कि मेरा लेखन इस संपूर्ण जिंदगी का पर्याय बन सके, जिसे मैं भीतर-बाहर जी—भोग रही हूं । भीतर कहीं एक आग है, जो इस सारे अंधेरे के बीच लौ-सी जल रही है । अंधेरे मेरा यथार्थ रहे हैं, लेकिन इन आंखों से उजालों के सपने कोई नहीं छीन सका ।

वैसे कलम से कागज पर लिखना सन् १९६८ से ही संभव हो सका । भीतर और बाहर की सारी उठा-पटक कहानियों का रूप लेने लगी । मेरी इन कहानियों में स्थूल एवं सूक्ष्म मूल्य ध्वनित-प्रतिध्वनित होते रहे ।

हां, मेरा मूल स्वर कवि का था । अब वही स्वर कहानियों में भी सत्य और सुंदर की तलाश में भटक रहा है ।

तभी बस आती दिखायी दी। वह तत्पर हो उठा, "चलो यार, साले कभी-कभी बस नहीं रोकते तो फिर घंटे भर का प्राणायाम करना पड़ जाता है।"

वह झपटकर बस में चढ़ गया। उस समय जैसे उसे केवल अपने चढ़ने का होश था। मुझे वह फिर भूल गया था। मुझे अपने बगल में बैठते देखकर वह चौंक-सा गया, "अरे हां, तुम भी तो मेरे साथ चल रहे हो।" वह खुश ही लगा। लेकिन मेरे साथ चलने से अधिक खुशी शायद उसे बस में जगह मिल जाने की थी।

"यह रोज-रोज इतनी दूर जाना बड़ा भारी पड़ जाता है, यार! लेकिन मजबूरी का नाम है शुक्रिया। इतनी दूर जाकर ही सही, दाल-रोटी का कुछ तो जुगाड़ हो जाता है, वरना तो श्री महेन्द्र शर्मा मय बीवी-बच्चों, मां के हवा पर गुजारा करने का अभ्यास करने लगे थे।"

"क्यों, कोई अच्छी नौकरी नहीं मिली?" यह प्रश्न करते-करते मैं जान गया था कि मैं उसके दर्द की नब्ज पर अंगुली रख रहा हूं।

"नौकरी?" महेन्द्र फिर एक फीकी हंसी हंसा, "आजकल तो मौत मिल सकती है, नौकरी नहीं मिलती। तुम्हें याद होगा, बी. ए. नहीं कर सका था कि पिताजी की बीमारी का तार पाकर चला गया था।

उसके बाद लौटा ही कहां ?"

"फिर क्या हुआ ?"

"अरे, होना क्या था ? पिताजी नहीं रहे। दो बहनों और मां को मुझ पर लादकर आराम से चले गये....फिर उनकी लादी मैं ढोने लगा। खैर, जो कुछ थोड़ा-बहुत वे छोड़ गये थे उसे बेच-वाचकर बहनों को ठिकाने लगाया। लेकिन हम आज तक ठिकाने नहीं लगे। बस, कटी पतंग की तरह इधर-उधर मंडरा रहे हैं।" इतनी देर बाद महेन्द्र ने जेब से पसीना पोंछने के लिए रूमाल निकाला। मैंने देखा, साड़ी का टुकड़ा था। पैंट काफी मैली थी। कमीज का कालर फट चला था। उसका चेहरा और भी मैला था, वह चेहरा भी जैसे फट चला था। साड़ी के टुकड़े से पसीना पोंछता महेन्द्र क्या वही महेन्द्र था जो अपनी सदाबहार हंसी के लिए मशहूर था, अपने रोमांस के लिए भी...अरे, मुझे याद आया—इसके रोमांस का क्या हुआ? गीता के साथ इसका रोमांस था न!

"और गीता ?" मैंने गंभीरता से पूछा। उम्र के इस दौर में रोमांस को भी गंभीरता से ही याद किया जा सकता है।

"गीता...?" महेन्द्र ने अस्फुट स्वर में कहा। उसका स्टॉप आ गया था। हम उतर पड़े।

"चलो, कहीं कुछ खा-पी लिया जाए। फिर घर चलेंगे।" महेन्द्र बहुत थका लग रहा था।

"जरूर।" मैंने कहा। मैं तो स्वयं चाहता था कि महेन्द्र की उस थकान को, कुछ देर के लिए ही सही, हलका कर दूं।

हम एक सस्ते से होटल में घुस गये। मैं चाहता तो था कि किसी अच्छे होटल में चला जाए लेकिन महेन्द्र की मैली पैंट, फटा कालर और साड़ी के कपड़े का रूमाल मुझे रोक रहे थे। किसी अच्छी जगह उस चेहरे के साथ मुझे संकोच झेलना पड़ जाता। मेरे टेरेलिन के पैंट-शर्ट बिलकुल 'टिपटॉप' थे। इनश्योरेंस एजेंट हूं, यह टिपटॉप आवश्यक है मेरे धंधे के लिए। मैं सावधान रहता हूं।

मैंने प्याज की पकौड़ियों और चाय का आर्डर दिया। महेन्द्र सामने लगे गंदे से वॉश-बेसिन में मुंह-हाथ धो आया। "अब गरमी कुछ कम है," वह कह रहा था। मैं देख रहा था, धुलकर भी वह चेहरा ताजा नहीं हो सका था। शायद बासीपन उस चेहरे की नियति बन चुका था।

पकौड़ियां खाते वह खुश हो गया था, "अच्छी बनी हैं।"

"और लो," मैंने साधारण औपचारिकता से कहा।

"तुम कहते हो तो ले लूंगा।" उसका चेहरा वैसा ही बासी था, लेकिन उसकी थकान घटने लगी थी। 'चलो, इतना ही सही, मैं इस थकान को कुछ तो बांट सका,' मैं स्वयं से कह रहा था। उस गंदे प्याले में चाय पीते मुझे घिन लग रही थी। महेन्द्र सुड़क-सुड़ककर चाय पी रहा था। "एक कप और," मैंने कहा।

"तुम कहते हो तो जरूर !" महेन्द्र की आवाज में अपनत्व छलक आया। उस गंदे कप-प्याले से सुड़क-सुड़ककर चाय पीते, उस मैले, फटे चेहरेवाले अपने दोस्त को देखते मेरी पसलियों में कुछ दर्द करने लगा था। मैंने उस दर्द को भुला देना चाहा, "तुमने बताया नहीं वो तुम्हारी गीता . . . . ."

"और तुम्हारे क्या ठाठ है ?" वह शायद मेरे प्रश्न को टाल गया था। कहते उसके स्वर में अनुरोध, आग्रह याचना एक साथ थे, लेकिन मुझे वह स्व केवल 'निरीह' लगा। लगा कि यदि 'ना' कर दूं तो वह बिलकुल रो देगा। मेरी पसलियों में फिर दर्द-सा कु उठा। लेकिन इतना दुनियादार मैं हो चुका हूं कि शोलों से दामन साफ बचा लेता हूं।

"जरूर, जरूर, क्या तुम्हारे लि इतना भी नहीं करूंगा।" आश्वासन दे

"इन्श्योरेंस एजेंट हूं। आज सेठ जगनमल को पटाने गया था।"

"सेठ जगनमल ? अरे, वही साला तो अपना भी सेठ है जिसके यहां मैं खाता लिखता हूं। अरे दोस्त, याद आया, अगर तुम सेठ को मेरी जमानत दे दो तो अपनी नौकरी पक्की हो जाए। पांच सौ, केवल पांच सौ रुपये की बात है दोस्त।" 'दोस्त' अपने स्वर पर मुझे ग्लानि हो आयी। मैं निश्चय कर चुका था कि मुझे कुछ नहीं करना है।

"दोस्त, मेरे दोस्त . . . ?" वह उछल सा पड़ा, "मैं कहता था न कि कमी न क कुछ न कुछ जरूर होगा।"

"लेकिन अभी नहीं, आज तो मु अपने शहर लौट जाना है। अगले मही

जब आऊंगा तब हो सकेगा।" मैंने नीची नजरें किये कहा। कनखियों से देखा, उसका चेहरा एकदम फक पड़ गया है। क्या इस चेहरे को मैं सह पाऊंगा ? कहां की मुश्किल में पड़ गया मैं भी? यदि ऐसे चेहरों के लिए रक्तदान का प्रबंध करने लगा तो मेरा स्वयं का चेहरा रक्तहीन नहीं हो जाएगा?—मैंने स्वयं को कड़े स्वर में समझाया।

"अच्छा तभी सही!" उसका वह मैला, फटा चेहरा एकदम मर-सा गया। कुछ क्षण पहले उस पर छिटक आये उल्लास को मैंने देखा था। उस उल्लास को इतनी जल्दी मार देने का मैं अपराधी हो उठा। लेकिन और किया भी क्या जा सकता था ? मैंने नियतिवाद का सहारा ले लिया।

"चलो घर चलें।" वह उठा, चलने लगा। मैं उसके साथ था।

वह एक गली में मुड़ा। खुली नालियों-वाली उस गली में मुड़ते मेरा सिर बदबू से चकरा गया। वह एक पलस्तर उखड़े दीवारवाले घर में घुसा।

"मेरी दवा लाया बेटा?" एक थका वृद्ध स्वर आया।

"डाक्टर ने कहा है कि अभी दवा की कोई जरूरत नहीं है। अगले हफ्ते देखेंगे।"

वह साफ झूठ बोल रहा था। झूठ बोलने की पीड़ा उसके मुंह पर स्पष्ट थी। झूठ में भी कितनी पीड़ा हो सकती है!

"भई कुछ पानी-वानी लाओ।"

मैली साड़ी पहने, पीला चेहरा लिये जो नारी मूर्ति पीतल के दो गिलासों में पानी लिये आयी, उसे देखकर मैं चौंक गया। लगा, इस मुख को कहीं देखा है।

"तुम गीता को पूछ रहे थे न? वह

अब मेरी पत्नी है।" उसके स्वर में एक गुर्राहट थी। न कोई मिठास, न कोई तल्खी—केवल एक गुर्राहट।

हवा का एक बदबूदार झोंका आ गया था और सामने दीवार पर लगा फटा कैलेंडर फड़फड़ाने लगा था।

—न्यू रीडर्स क्वार्टर नं. १९
उस्मानिया युनिवर्सिटी,
हैदराबाद-७ (आ. प्र.)

गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक महात्मा मुंशीरामजी, संन्यास लेने के बाद आचार्य-पद से त्यागपत्र देकर जब चले गये तब उनके स्थान पर रामदेवजी, जो कई वर्षों से निर्वाह-मात्र वेतन लेकर गुरुकुल की सेवा कर रहे थे, आचार्य नियुक्त हुए। महात्माजी छात्रों को स्नेहभाव तथा वात्सल्य से काबू में रखते थे। प्रो. रामदेवजी कठोर नियंत्रण के पक्षपाती थे। उनके कठोर नियंत्रण से छात्र, अध्यापक-वर्ग तथा अन्य कर्मचारी असंतुष्ट रहने लगे। अंततोगत्वा उन्होंने ऐसा उग्र रूप धारण किया कि रामदेवजी को त्यागपत्र देने के लिए विवश होना पड़ा।

उनकी विद्वत्ता से प्रभावित एक भक्त ने उनसे प्रश्न किया, "प्रोफसरजी, अब आप क्या करेंगे?" "क्यों? गुरुकुल के वार्षिकोत्सव में दो-तीन ही महीने रह गये हैं। मैं स्वेच्छा से गुरुकुल के लिए धन-संग्रह का कार्य करूंगा," उनका संक्षिप्त-सा उत्तर था। वे सज्जन आश्चर्य में पड़ गये और बोले, "गुरुकुल ने आपके साथ ऐसा दुर्व्यवहार किया, आपको सेवा से पृथक कर दिया और आप उसी गुरुकुल के लिए धन-संग्रह करेंगे!" प्रोफेसर ने शांतभाव से उत्तर दिया, "गुरुकुल के विद्यार्थियों तथा कर्मचारियों ने मेरे विरुद्ध आंदोलन करके मुझे गुरुकुल की सेवा से वंचित किया है, गुरुकुल ने नहीं। जो गुरुकुल मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारा है, बाहर रहकर उसकी सेवा करने से मुझे कौन रोक सकता है? अब मैं अवैतनिक रूप से कुल माता की सेवा करूंगा, उसके लिए नगर-नगर जाकर धन-संग्रह करूंगा।" प्रोफेसर की आंखों में आंसू थे और वाणी में गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली के प्रति अटूट निष्ठा। कुछ क्षण चुप र कर वे फिर बोले. "मां यदि किसी बात पर नाराज होकर पुत्र को पीट दे तो भी अपनी मां को छोड़कर दूसरी मां कौन बनाता है?"

अपने संकल्प के अनुसार गुरुकुल के वार्षिकोत्सव तक एक अच्छी धन-राशि संग्रह कर उन्होंने गुरुकुल भेज दी।

बाद में अव्यवस्था तथा असंतोष होने पर गुरुकुल-स्वामिनी सभा ने पुनः उनसे गुरुकुल में जाकर कार्य-भार संभालने

की प्रार्थना की और वे बहुत वर्षों तक बड़ी निष्ठा के साथ गुरुकुल की सेवा करते रहे।

—सोमदत्त विद्यालंकार

रामशास्त्री पेशवाओं के न्यायाधीश थे। न्यायप्रिय होने के साथ-साथ वे बहुत ही निर्भय और साहसी भी थे। एक बार पेशवा राघोबा ने अपने भतीजे की हत्या कर दी। किंतु बाद में परिणाम के बारे में सोचकर मन-ही-मन कांप उठे। वे जानते थे कि रामशास्त्री के कानून में हत्या की सजा मौत है।

उनकी चिंता का कारण जानकर रानी ने रामशास्त्री को बुलवा भेजा। रानी ने उन्हें हत्या की बात बताकर पूछा, "इस संबंध में आपके क्या विचार हैं?"

रामशास्त्री बोले, "क्षमा करें! न्याय के आसन पर बैठकर मैंने एक ही बात सीखी है कि अपराधी को उचित दंड मिलना चाहिए।"

रानी ने कुछ कड़े स्वर में पूछा, "आपको मालूम है कि आप किससे बातें कर रहे हैं?"

रामशास्त्री ने 'हां' में सिर हिला दिया।

"इतने पर भी आपकी नीति और न्याय के निर्णय में अंतर नहीं पड़ेगा?"

रामशास्त्री ने दृढ़ स्वर में कहा, "आपके अथवा पेशवा के भय से या प्राणों के मोहवश मैं ऐसी कोई बात नहीं कर सकता जो न्याय या नीति के विरुद्ध हो।

वचन वीथी

गुण एकांत में विकसित होता है; चरित्र का निर्माण विश्व के भीषण कोलाहल में होता है।

—गेटे

अनुकरण करना सबसे निष्कपट चापलूसी है।

—कोल्टन

यदि तुम्हारी आदत है तो चिंता करके कष्टों का आवाह्न कर लो, पर उसे अपने पड़ोसी को उधार मत दो।

—रुडयार्ड किपलिंग

जो अकेले चलते हैं, वे शीघ्रता से आगे बढ़ते हैं।

—नेपोलियन

आपके कार्य की नींव आपका आत्म-विश्वास है। आप प्रत्येक कार्य कर सकते हैं, इस विचार में ही शक्ति है।

जो पुरुष अपने अंतःकरण का दास है, वह कभी नेता और प्रभावशाली पुरुष नहीं हो सकता।

——स्वेट मार्डेन

प्रेम-विश्वास से जन्म लेता है, आशा में जीता है और उसकी परिणति दान में है।

—आइविड

आपके बच्चे को बढ़ने के लिए
तिगुनी शक्ति चाहिए !
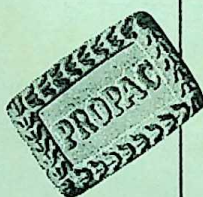
पेशवा को हत्या के अपराध में आजीवन प्रायश्चित करना ही होगा।"

रामशास्त्री ने पद छोड़ देना स्वीकार कर लिया, पर अन्याय करना नहीं।

अपने कुछ सेवकों के साथ उद्योगपति जमशेदजी सड़क पर चले जा रहे थे। तभी उनकी बगल से एक मजदूर गुजरा, सिर पर भारी बोरा उठाये हुए। अचानक बोरे का धक्का लगने से जमशेदजी गिर पड़े और उनकी पगड़ी नाले में जा पड़ी।

एक सेवक ने सहारा देकर जमशेदजी को खड़ा किया। दूसरे सेवकों ने गुस्से में आकर मजदूर का बोरा गिरा दिया और उसे पकड़कर दो-चार थप्पड़ लगा दिये।

लेकिन मजदूर की दशा देखकर जमशेदजी का हृदय पसीज गया। वे उसे क्षमा करते हुए बोले, "इस बेचारे का इसमें क्या दोष ? यह तो बोझ से झुका हुआ था। इस मामले में गलती मेरी है, मुझे खुद ही इसके लिए रास्ता छोड़ देना चाहिए था।" उन्होंने मजदूर को पांच रुपये का नोट दिया और एक सेवक से उसका बोरा उठवा दिया।

एमिलर्ड फ्रांस के विख्यात बैरिस्टर थे। उनकी प्रशंसा सुनकर एक व्यक्ति अपने मुकदमे में सहायता लेने के लिए उनके पास आया। उन्होंने उसे न्याय दिलाने का पूरा आश्वासन दिया। उस व्यक्ति ने एमिलर्ड को मनचाहा पारिश्रमिक दे दिया।

अदालत में मुकदमा शुरू हुआ। पैरवी करते समय एमिलर्ड अदालत में वह सनद पेश करना भूल गये जो उस मामले में बहुत सहायक होती। परिणाम यह हुआ कि वे मुकदमा हार गये। बड़ी अदालत में भी हार ही हुई।

जिस व्यक्ति का मुकदमा था वह बेचारा बहुत दुखी मन से एमिलर्ड से मिला और बोला, "मुझे पूरा यकीन है कि अगर वह सनद पेश की जाती तो हम बिलकुल न हारते।"

एमिलर्ड को उस सनद की याद ही नहीं थी। अब ज्यों ही उन्होंने अपने कागजों को उलटा-पलटा, वह सनद मिल गयी। एमिलर्ड ने उस से कहा कि कल मिलो।

दूसरे दिन वह व्यक्ति निश्चित समय पर आया। एमिलर्ड ने अपनी सारी संपत्ति उसके नाम लिख दी और संतोष की सांस लेते हुए कहा, "मेरी भूल के कारण तुम्हें काफी नुकसान हुआ। संपत्ति देकर मैं उस भूल का प्रायश्चित कर रहा हूं।" —कमला

• डॉ. मानवेन्द्र सिंह

जानलेवा रोग टिटेनस

टिटेनस—इससे कौन परिचित नहीं है! यह जानलेवा रोग गांवों में काफी समय तक देवी-देवताओं का प्रकोप समझा जाता रहा। इसका भूत उतारनेवाले तो यदा-कदा अब भी मिल जाते हैं। यह रोग इतना भयंकर है कि इसके लक्षण शुरू होने के कुछ ही घंटों के भीतर रोगी मर सकता है।

यह रोग विशेष प्रकार के रोगाणु (क्लास्ट्रीडियम टिटनाई) से होता है। गाय, भैंस एवं अन्य पशुओं की आंतों में रहनेवाला यह रोगाणु उन्हें कोई हानि नहीं पहुंचाता! उनके मल में मिलकर यह बाहर आ जाता है। ये अनिश्चित काल तक जीवित रह सकते हैं। सड़क के आसपास की मिट्टी, बाग, बगीचे एवं खेत की मिट्टी, जहां गोबर की खाद बहुतायत से प्रयुक्त की जाती है, इन रोगाणुओं से भरपूर होती है। जंग-लगे लोहे के औजारों, शेव करनेवाला उस्तरा, अस्पतालों में इंजेक्शन की सुई या अन्य उपकरण जंग लगने पर इसे अपनी ओर आकर्षित करते हैं। ऐसे उपकरण का उपयोग करने से बने घाव में ये रोगाणु अपना डेरा जमा लेते हैं। इनकी वृद्धि के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता नहीं होती। सड़े-गले घाव इनके लिए उपयुक्त माध्यम प्रदान करते हैं। घाववाले स्थान पर ही रहते हुए ये रोगाणु ऐसे विषैले पदार्थ उत्पन्न करते हैं जो स्नायु संस्थान को उत्तेजित करता है। इसे 'एक्सोटोक्सिन' कहते हैं।

रोग की शुरूआत मामूली-से लक्षणों, जैसे घबराहट, शरीर में दर्द एवं ऐंठन, कहीं-कहीं मांसपेशियों का फड़कना तथा घाव के निकट दर्द की अनुभूति के रूप में हो सकती है। बाद में गले एवं जबड़े की मांसपेशियों में ऐंठन होने लगती है जिसके कारण मुंह खोलने में कठिनाई होने लगती है। गरदन के पिछले भाग में भी असहनीय दर्द होता है जिसकी वजह से गरदन मोड़ना मुश्किल हो जाता है तथा वह पीछे की ओर ऐंठ कर मुड़ जाती है। धीरे - धीरे ऐंठन नीचे की ओर बढ़ने लगती है। चेहरे की मांसपेशियों में भी संकुचन होने लगता है तथा मुंह थोड़ा - सा खुल जाता है। माथे पर सिलवटें पड़ जाती है, आंखें भी आधी बंद हो जाती हैं। इस अवस्था में रोगी को देखने पर लगता है, जैसे वह पीड़ा के बावजूद हंस रहा हो। इसे 'राईसस सारडोनिकस' का नाम दिया गया है। कमर की मांसपेशियों में भी ऐंठन होने लगती है और सारा शरीर एक कमान की भांति

अकड़ जाता है। कई बार ऐसा देखा गया है, मानो शरीर सिर के पिछले भाग एवं एड़ियों के बल पर ही टिका हो। इस प्रकार की ऐंठन के दौरे मरीज को दिन में कई बार पड़ सकते हैं। थोड़ी आहट या मरीज को छेड़ने पर भी दौरे उत्पन्न हो सकते हैं। ये दौरे एक सेकंड से लेकर काफी मिनट तक रह सकते हैं। सारा शरीर पसीने-पसीने हो जाता है। गले की आंतरिक मांसपेशियों में भी ऐंठन होने लगती है तथा श्वासनली की मांसपेशियों के सिकुड़ने से सांस लेने में भी कठिनाई होने लगती है, लेकिन शुरू से आखिर तक रोगी होशोहवास में रहता है। इसमें अधिकतर बुखार की शिकायत भी हो जाती है।

भाग्यशाली ही इससे बच पाते हैं, लेकिन पूर्णतया ठीक होते दो सप्ताह तो लग ही जाते हैं। सांस लेने एवं कंठ की मांसपेशियों में संकुचन के कारण दम घुटने से मृत्यु भी हो सकती है। हृदय-गति भी रुक सकती है। ऐसा भी होता है कि कंठ-संकुचन के कारण जो कुछ भी मुख में डालने की कोशिश की जाए वह वस्तु श्वासनलिका में होते हुए फेफड़ों में प्रवेश कर जाती है, अतः निमोनिया की शिकायत पैदा हो जाती है।

कभी-कभी इसका आक्रमण बहुत हलका होता है और केवल घाव के आस-पास के भाग को प्रभावित करता है। अतः घाव के निकट मांसपेशियों में ऐंठन होती है, वह आगे नहीं फैलती।

इसका एक रूप और भी है। जब यह केवल चेहरे और गले की मांसपेशियों पर असर करती है तब इसे 'सिफेलिक टिटेनस' कहते हैं। इसमें शीघ्र ही दम घुटने से मृत्यु हो जाती है।

सीने के तथा पेट के घावों से जो टिटेनस उत्पन्न होती है, वह अधिकतर श्वास-नलिका की मांसपेशियों और खाना निगलने-वाली नलिका पर असर करती है, और एक-दो दिन में दम घुटने से रोगी की मृत्यु हो सकती है।

कुछ घटनाएं मामूली होते हुए भी इस भयानक रोग को जन्म दे सकती हैं। सब्जी काटते हुए हाथ में चाकू लग जाने से, सलाई से कान कुरेदते समय, जंग लगे उस्तरे से शेव करते हुए, बच्चों के सड़क पर पत्थर से टकराकर चोट लगने से, रिसते घावों एवं फोड़े - फुंसियों का खुले रहकर मक्खियों को अपनी ओर आकर्षित करने के कारण भी यह रोग हो सकता है। बाजारों की मिट्टी में ये रोगाणु प्रचुर मात्रा में होते हैं इसलिए सड़कों पर होनेवाली दुर्घटनाओं से बने घावों में मिट्टी के साथ ये शरीर में प्रवेश कर सकते हैं। भारत में नवजात शिशुओं की शीघ्र मृत्यु का एक बहुत बड़ा कारण टिटेनस है। यह बच्चे में किस प्रकार पहुंच जाता है? गांवों में घरेलू दाइयों का एक तरह से राज है। इन दाइयों को औजारों को कीटाणु-रहित करने के बारे में पूरी जानकारी नहीं है। प्रसूति के समय जंगलगे उस्तरे से

या सब्जी काटनेवाले चाकू से, यहां तक सुनने में आया है कि और कुछ न मिला तो घास काटनेवाले खुरपे से ही ये दाइयां शिशु की नाभि - रज्जु काट देती हैं। नाभि - रज्जु का जो भाग शिशु के साथ रह जाता है, यदि पूर्णतया सफाई बरती जाए तो वह लगभग पांच-छह दिन में स्वयं सूखकर गिर जाती है।

उपर्युक्त विधि से काटे जाने पर इसमें न केवल मवाद पड़ने का खतरा है, वरन् टिटेनस भी हो सकती है, तब मृत्यु निश्चित है। कुछ अंधविश्वासी महिलाएं नाभि-रज्जु को शीघ्र भरने में मदद देने के लिए पवित्र समझे जानेवाले गाय के गोबर को लगा देती हैं!

यदि पूरी सावधानी न बरती जाए तो प्रसूति के समय शिशु को ही नहीं, मां को भी टिटेनस का खतरा होता है क्योंकि बच्चे का जन्म कराते समय यदि हाथ एवं नाखूनों की सफाई भली-भांति न की जाए तो उनमें रोगाणुओं की उपस्थिति संभव है। ये रोगाणु प्रजनन-अंगों में पहुंच कर वहां बड़ी जल्दी पनप सकते हैं।

साधारणतया, रोगाणुओं को एक बार शरीर में घुसकर लक्षण उत्पन्न करने में पांच-सात दिन का समय लग जाता है, लेकिन देखा गया है कि यदि यह समय अधिक हो जाए तो रोग का आक्रमण इतना गंभीर नहीं होता। वृद्धावस्था में टिटेनस अवश्य जानलेवा होती है।

टिटेनस होने पर घर में इलाज संभव नहीं है क्योंकि जरा-सी आहट या स्पर्श मरीज के लिए घातक हो सकता है। इसलिए उपर्युक्त लक्षण प्रकट होते ही रोगी को तुरंत अस्पताल ले जाना चाहिए ।

ए. टी. एस. (A.T.S.) का नाम जाना-सुना है। इसका पूरा नाम 'ऐंटी टिटेनस सीरम' है। यह पशुओं में इस रोग के कीटाणुओं का प्रवेश कराके प्राप्त किया जाता है। चोट आदि लगने पर जितनी जल्दी हो सके ये इंजेक्शन लगवा लेने चाहिए, पर इंजेक्शन लगवाने से पहले जांच अवश्य करा लेनी चाहिए क्योंकि यह 'सैंसिटिविटी' पैदा कर सकता है । इसके कारण मृत्यु होने तक के समाचार मिले हैं ।

घाव की सफाई की तरफ विशेष ध्यान देना चाहिए । इसे हाइड्रोजन पैरा-क्साईड से जरूर धोना चाहिए । इस रोग से बचने का सबसे अच्छा उपाय है टिटेनस का प्रतिरोधक टीका लगवा लेना। बाजार में यह 'टेट-वेक' के नाम से मिलता है । इसका कार्य बिलकुल वही है जैसे चेचक के टीके का । बहुत थोड़ी मात्रा में रोगाणु निष्क्रिय करके शरीर में प्रविष्ट कर दिये जाते हैं। कुछ ही दिनों में शरीर इनके प्रति प्रचुर मात्रा में प्रतिरोधक शक्ति उत्पन्न कर लेता है । इसे तीन बार लगवाया जाता है। दूसरा टीका छह सप्ताह बाद और तीसरा छह महीने बाद । तत्पश्चात, हर पांचवें वर्ष। इस प्रकार आपको पांच वर्ष के लिए 'टिटेनस बीमा' हो जाता है। गर्भ के दौरान स्त्रियां भी इसे लगवा सकती हैं और प्रसूति के समय इस रोग का खतरा टल जाता है । नवजात शिशु को भी तीन महीने पश्चात 'ट्रिपल ऐंटिजन' के नाम से इंजेक्शन के तीन कोर्स दिये जाने चाहिए। ये तीन रोगों, डिप्थीरिया, काली खांसी और टिटेनस से बच्चे की रक्षा करता है। प्रत्येक माह एक टीका, फिर दो साल बाद, और फिर स्कूल के समय, तत्पश्चात हर पांचवें वर्ष ठीक उसी प्रकार से जैसे बड़ों के लिए ऊपर बताया गया है ।

कई ऐसे रोग हैं जो किसी-न-किसी प्रकार टिटेनस से मिलते-जुलते हैं।

शरीर में ऐंठन के दौरे मस्तिष्क एवं उसके आसपास के आवरण में खुजली होने पर भी पड़ सकते हैं । कैल्शियम की कमी से होनेवाले रोग जिसे 'टिटैनी' कहते हैं, ऐसे ही लक्षण उत्पन्न कर सकता है, लेकिन एक कुशल चिकित्सक रोग की ठीक पहचान कर सकता है। पागल कुत्ते के काटने से होनेवाले रोग के भी लक्षण ऐसे होते हैं। विशेष बात यह है कि इसमें रोगी को पानी से बहुत डर लगता है। बहुचर्चित रोग हिस्टीरिया के लिए भी (जो स्वयं रोगी द्वारा किसी प्रकार की उद्देश्यपूर्ति करने के लिए बनाया जाता है) टिटेनस के लक्षण उत्पन्न करना कोई बड़ी बात नहीं— विशेषकर इस लेख को पढ़ने के बाद ।

—९, गिल कालोनी, सहारनपुर

महत्वाकांक्षी

मैं उसके आगे था
वह मेरे पीछे था
मैं दिग्विजय के लिए
अपने घोड़े को हांके लिये जा रहा था
वह मुझे हांक रहा था
उसे फुरसत नहीं थी, मगर फुरसत पड़ी थी
वह फुरसत के समय भी मुझे कोंचता था
जैसे नहीं करते हुए भी
बहुत कुछ करता रहा हो वह
वह मेरे मन में था, मैं उसके फन में था
वह मेरा बुझौवल
तो मैं उसका लालबुझक्कड़
वह भीतर से अनमना
पर, ऊपर से तना रहा
मैं उसका अनुचर... अनुगत बना रहा
वह मुझे बाहर धकियाता
मैं उसके भीतर लुढ़कता चला जाता
वह मेरा अपना था, वह फिर भी सपना था
मैं दिग्विजय के लिए
अपने घोड़े को हांके लिये जा रहा था
वह मुझे हांक रहा था

—रामअवतार सिंह सिसौदिया

—३३ इंद्रपुरी, इंदौर—१

बाकी सभी हिसाब

एक रात के उजियारे-सी
अपनी सारी आब
बाकी सभी हिसाब
ऐसे हमने सौंपे तन-मन ऐसे सौंपे नाम
एक भीख में जैसे दानी ढूंढ़े कोई गुलाम
एक घात के अपनेपन-सा
अपना सारा भाव
बाकी सभी हिसाब
अनुबंधों में रही रेंगती थों अपनी पहचान
लंगड़ा जैसे सीढ़ी-सीढ़ी ऊंची चढ़े मचान
एक पात के उपवन-जैसा
अपना सभी शबाब
बाकी सभी हिसाब
हमने बांधे, हमने फाड़े दृश्यों के अलबम
अभिशापित-सा जमा हुआ है सतरंगी मौसम
एक बात पर दस जवाब-सा
अपना सारा चाव
बाकी सभी हिसाब

—सोमेश्वर

छात्रावास, आर. बी. एस. कॉलेज ऑव
एजूकेशन, आगरा-२

देवनागरी : एक समीक्षा

• बुद्धदेव चटर्जी

अन्य लिपियों की तरह देवनागरी भी 'मानव-लिपि' है। विश्व की लिपियों में यद्यपि देवनागरी लिपि को ध्वनि-सिद्धांत के निकटतम लिपियों में माना जाता है, तथापि तुलनात्मक एवं व्यावहारिक दृष्टि से इसे और सरल तथा व्यापक बनाने की आवश्यकता है।

अन्य भारतीय लिपियों तथा नागरी लिपि की जननी ब्राह्मी लिपि ही है। ईसा से पांच वर्ष पूर्व पाणिनि ने ब्राह्मी लिपि में संशोधन कर उसे पूर्णतया ध्वनि-लिपि (फोनेटिक स्क्रिप्ट) का स्थान दिया। इस ब्राह्मी लिपि से देवनागरी सहित अन्य प्रादेशिक लिपियों का विकास हुआ।

देवनागरी, अथवा नागरी लिपि देवों की लिपि कहलाती है। हिंदू, जैन तथा बौद्ध धर्मों के आदि ग्रंथ इसी लिपि में लिखे जाने एवं प्राचीन काल से राम और कृष्ण की भूमि उत्तर भारत में इसका प्रचलन होने के कारण यह लिपि न केवल आदरणीय है, अपितु देव-वाणी की लिपि या सनातन लिपि कहकर पुकारी जाती है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण

वैज्ञानिक लिपि क्या है? जो ज्ञान प्रयोग और प्रेक्षण द्वारा उपलब्ध तथा परीक्षित एवं तर्क-पूर्ण विशिष्ट प्रणाली द्वारा नियम-बद्ध हो, वह 'वैज्ञानिक ज्ञान' है।

संसार की विभिन्न लिपियों का जन्म एवं विकास मानव की सहज प्रेरणा, कलात्मक विचार-शक्ति, जाति वैशिष्ट्य के शब्दोच्चारण और अंकन-कला के प्रभाव से हुआ है। काल के प्रवाह में आकर बदलते समाज तथा व्यावहारिकता के

आर्य लिपि अक्षर 'स' और 'ख' का विकास

काल	स्थान व लिपि	लिपि 'स' का रूप	लिपि 'ख' का रूप
३००० से ६०० वर्ष ईसा पूर्व	सिन्धु घाटी व सिन्धु लिपि	[illegible]	[illegible]
३०० वर्ष ईसा पूर्व से २ री सदी	उत्तर भारत ब्राह्मीलिपि	𑀲	𑀔
१५वीं सदी	उत्तर भारत नागरी	स	ख
वर्तमान समय	आधुनिक नागरी	स	ख

चित्र १ : आर्य लिपि का विकास

दबाव से लिपियां बदलती रहीं। हां, कभी भाषाओं के लिए पाणिनि—जैसे वैयाकरण आये और अपने समय की भाषा के व्याकरण और कदाच् लिपि को संशोधित तथा नियमबद्ध कर गये, पर सामाजिक रीति और स्थिति की तरह मनुष्य के ध्वनि-उच्चारण में नयी ध्वनियों का समावेश तथा लेखन-कला में नये प्रकरणों का जन्म होता रहा। लिपियों का विकास इस प्रगति से धीमा रहा। (चित्र १)

अतः किसी लिपि को पूर्ण वैज्ञानिक कहना अतिशयोक्ति मात्र है। नागरी लिपि यद्यपि एक प्रकार से प्रणालीबद्ध, विशिष्ट सिद्धांत पर आधारित है तथापि अन्य लिपियों की व्यावहारिकता से तुलना करने, वैज्ञानिक नियमों से परखने और वर्तमान समय की आवश्यकताओं को ध्यान में रखने से यह कई क्षेत्रों में संपूर्ण तर्क-अकाट्य लिपि नहीं है।

ध्वनि की सीमितता

पाणिनि ने ध्वनि-वर्गीकरण मुख के विशेष भागों (कंठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, दंत्य और ओष्ठ्य) और श्वास-निष्कासन की विधि (महाप्राण, उष्माण, नासिक्य आदि) के आधार पर किया था। लिपि को 'एक अक्षर, एक उच्चारण' के आधार पर लिखा गया जो मौलिकता का परिचायक था। पाणिनि के इस वर्गीकरण का प्रभाव दक्षिणी पूर्वी एशियायी लिपियों में पाया जाता है।

पाणिनि के इस वर्गीकरण में समकालीन प्राकृत एवं संस्कृत में उच्चारित ध्वनियों का ही ब्योरा है। मनुष्य द्वारा अन्य उच्चारित विभिन्न ध्वनियों का, जिसका प्रयोग आज की अन्य भाषाओं में किया जाता है, इस वर्गीकरण में स्थान नहीं है। अरबी एवं फारसी के विशेष प्रकार से उच्चारित 'क' 'फ' 'ख' या 'ज' इस वर्गीकरण में नहीं हैं। नागरी में ये ध्वनियां अब अक्षर के नीचे बिंदु लगाकर (क़, फ़, ख़ और ज़) प्रयोग में लायी जाती हैं। कई अंगरेजी, फ्रांसीसी-उच्चारण नागरी लिपि में नहीं हैं। इसी प्रकार कुछ भारतीय भाषाओं के कतिपय व्यंजन और स्वर-उच्चारण नागरी लिपि में नहीं लिखे जा सकते; उदाहरणतया—मराठी का विशेष 'च', मलयालम और तमिल के विशेष 'ड़', उड़िया, बंगला और असमिया के प्रथम स्वर अक्षर, तेलुगु, कन्नड़ और तमिल लिपि के दीर्घ 'ओ' एवं 'ऐ', दक्षिण भारत की चारों लिपियों के दीर्घ 'र' आदि। अंतर्राष्ट्रीय ध्वनि-वर्णमाला (इंटरनेशनल फोनेटिक एल्फाबेट) देखने से पता चलता है कि विश्व की अनेक भाषाओं की ध्वनियां देवनागरी लिपि में नहीं हैं।

अंतर्निहित 'अ' स्वर

नागरी लिपि की विशेषता प्रत्येक व्यंजन के अंत में 'अ' स्वर का अंतर्निहित होना है। इससे अनेक लाभ हैं। एक शुद्ध 'व्यंजन' का उच्चारण बिना 'स्वर' की सहायता से प्रायः कष्टसाध्य है। शुद्ध

व्यंजनवाली लिपियों को अलग नाम से पहचाना जाता है; जैसे रोमन के उच्चारण 'ह' को 'एच', 'र' को 'आर' आदि। नागरी में सब व्यंजनों का उच्चारण अक्षरशः किया जाता है।

इस अंतर्निहित 'अ' से लाभ तो हैं, पर इससे लिपि में अन्य अवगुणों का समावेश अधिक है। इससे नागरी में कहीं-कहीं पर नियमों का व्यतिक्रम दृष्टिगोचर होता है और इसकी व्यावहारिकता अथवा क्योंकि अन्य कई प्रयोगों में अंतर्निहित 'अ' को लोप न मानकर लिपि को हलंतयुक्त या अर्द्ध किया जाता है, जैसे 'हठात्' और 'अल्प' में क्रमशः 'त' हलंत युक्त और 'ल' अर्द्ध हैं। इसके अलावा जहां 'वन', 'सुन्दर', 'फल' आदि शब्दों के अंताक्षर 'न', 'र' और 'ल' हिंदी में 'अ' रहित व्यंजन हैं वहां संस्कृत तथा मराठी में 'अ' सहित। अतः नागरी में शुद्ध व्यंजन कहीं पर अर्द्ध लिपि, कहीं पर
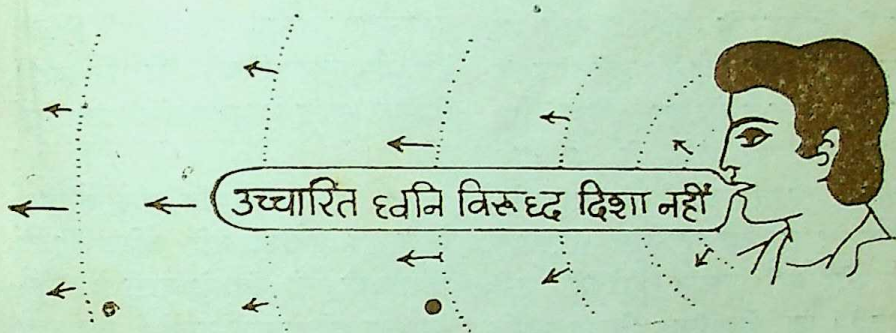
चित्र दो : लिपि लिखने का क्रम ध्वनि के क्रम में होना चाहिए

लचीलेपन में कमी आयी है। कुछ उदाहरण लीजिए। शुद्ध व्यंजनवाली लिपि के साथ कोई भी स्वर जोड़ने पर व्यंजन का उच्चारण स्वरयुक्त हो जाता है (जैसे रोमन R+(EE)=REE। अतः किसी शब्द के उच्चारण की कड़ी को विश्लेषण कर समीकरण के रूप में लिखा जा सकता है (जैसे रोमन REETI R+(EE)+T+I) पर नागरी लिपि में यह समीकरण सरल नहीं — रीति— र-अ-।-ई-।-त-अ-।-इ। यह एक व्यतिक्रम है हलंत के प्रयोग से और कहीं पर पूर्ण अक्षर द्वारा लिखे जाते हैं!

नागरी व्यंजन में 'अ' अंतर्निहित होने के कारण यह लिपि हूबहू असमिया, बंगला और उड़िया व्यंजन के उच्चारण के लिए व्यवहृत नहीं हो सकती। इन व्यंजनों के उच्चारण के लिए नागरी-लिपि के व्यंजनों में अलग से एक स्वर-मात्रा (ऑ) लगाने की आवश्यकता पड़ेगी। यदि नागरी लिपि में 'अ' स्वर अंतर्निहित न हो, तो समान रूप से 'अ'

की मात्रा को जोड़कर वर्तमान नागरी व्यंजनमाला और 'ऑ' की मात्रा को जोड़-कर असमिया, बंगला एवं उड़िया व्यंजन-माला लिखना संभव था। इस तरह की नागरी लिपि इन भाषाओं के व्यवहार में लायी जा सकती थी।

मात्राएं

बोली जानेवाली भाषाएं किसी स्थान एवं सुननेवाले के लिए 'एक दिशावाली' (यूनीडायरेक्शनल) होती हैं। किसी एक ही दिशा (चित्र २) में ध्वनियों की स्थिति समय के संदर्भ से मापी जा सकती है, अर्थात मुंह से ध्वनि निकलने का क्रम एक-के-बाद-एक होता है; वाद्य संगीत की भांति दो या तीन ध्वनियां एक साथ नहीं निकलतीं। ध्वनि-निष्कासन का रुख उच्चारण करनेवाले की ओर नहीं पलटता ('रिवर्स' नहीं होता)। यह वैज्ञानिक सिद्धांत यद्यपि शैक्षिक (एकेडेमिक) जान पड़ता है पर लिपि को क्रमबद्ध करने के लिए महत्त्वपूर्ण है। देवनागरी मात्राओं में कई शुद्ध व्यंजनों के व्यवहार में इस सिद्धांत का उल्लंघन पाया जाता है। उदाहरणार्थ 'निर्दिष्ट' शब्द को लीजिए। ध्वनि-विश्लेषण करने पर—**न्+इ+र+द्+इ+ष्+ट्=निर्दिष्ट** का स्वरूप मिलता है। इसी शब्द को लिपि और मात्राओं के क्रम से विश्लेषण करने पर—**इ (मात्रा) +न+इ (मात्रा) +द+र (रेफ) +ष्+ट=निर्दिष्ट** अर्थात, 'इ' की मात्रा का स्थान 'न' और 'द' के पहले है, यद्यपि 'इ' ध्वनि 'न' और 'द' के बाद आती है। इसी प्रकार 'र्' की ध्वनि 'दि' के पहले है पर 'र्' (रेफ) चिह्न 'द' के बाद (ऊपर) लगाया गया है। ध्वनि-सिद्धांत के अनु-सार मात्राओं का स्थान (लगाना) व्यंजन के पहले, ऊपर या नीचे न होकर व्यंजन की दायीं ओर होना चाहिए (नागरी बायीं से दायीं ओर लिखी जाती है)। आधुनिक काल में टाइपराइटरों, कंप्यू-टरों तथा ध्वनि को लिखित भाषा में बदलनेवाली मशीनों में इस ध्वनि-सिद्धांत पर आधारित लिखने की विधिवाली लिपियां अत्यंत लाभप्रद और सरल सिद्ध हुई हैं।

गति और जटिलता

लिपि की बनावट यदि जटिल हो तो लिखने की गति मंद हो जाती है। कौन-से अक्षर जटिल माने जाएंगे? यदि अक्षर की बनावट एकाधिक रेखाओं द्वारा हो और लेखनी से कई बार रेखाओं को आंकना पड़े तो वह अक्षर निश्चय ही जटिल है। शायद नागरी अक्षरों में 'आ' अथवा 'ऋ' जटिलतम हैं।

लेखन में गति लाने के लिए नागरी लिपि की ऊपर की पड़ी रेखा (**bar**) बहुधा छोड़ दी जाती है। गुजराती लिपि नागरी लिपि से इस कारण ही अधिक सरल होती है। सिद्धांततः लेखन की गति बढ़ाने के लिए निम्नलिखित बातें आवश्यक हैं—

(क) लिपि का एक अक्षर लिखने के

लिए लेखनी को एक बार से अधिक कागज को स्पर्श न करना चाहिए।

(ख) एक अक्षर की विभिन्न रेखाओं की कुल लंबाई न्यूनतम हो।

(ग) लिपि की आरंभिक और अंतिम रेखा की दिशा अन्य अक्षरों को जोड़ने में सहायक हो। (चित्र ३)

तुलनात्मक दृष्टि से रोमन, उर्दू अथवा महाराष्ट्र की मोड़ी लिपि नागरी से सरल और 'गति' वाली हैं।

स्पष्टता, सरल और सादी अमूर्त लिपि से भी निखर सकती है।

विकास का लक्ष्य सुधार करना है। अतः देवनागरी में सुधार करते समय लाखों अशिक्षितों को कम समय में पढ़ाने, दक्षिण भारत एवं अन्य देशी-विदेशी भाषाओं की नयी ध्वनियों का समावेश करके व्यापक एवं सर्वसम्मत बनाने, नयी लेखन-मशीनों के लिए सहज बनाने और हस्त-लेखन को सरल एवं द्रुत बनाने की आवश्यक-

सरल अक्षर: LU — तमिल का 'ट' व 'प'; रप — नागरी का 'र' व 'प'; LU — रोमन का 'एल' व 'यू'; उर्दू का 'दाल' व 'लाम'

जटिल अक्षर: तमिल का 'इ' व 'ह'; क्ष ओ्रौ — नागरी का 'क्ष' व 'औ'; तेलुगु का 'ऊ' व 'भ'; M W — रोमन का 'एम' व 'डब्ल्यू'

चित्र तीन : लिपियों का सामंजस्य

स्पष्टता और सुंदरता

किसी आदर्श लिपि प्रणाली के आवश्यक गुणों में स्पष्टता और सुंदरता अंतिम गुण हैं। नागरी लिपि में स्पष्टता है, इसमें संदेह नहीं। सुंदरता से क्या तात्पर्य है? यह एक आपेक्षिक गुण है। जहां तक लिपि का प्रश्न है, लिपि सुडौल और सानुपातिक हो, तो दृष्टि-कटु नहीं लगती। सुंदरता और

ताओं को ध्यान में रखना आवश्यक है। यदि नागरी को वैज्ञानिक लिपि बनाकर इसे व्यापक, सरल एवं त्रुटिरहित करना है तो संशोधन का समय यही है, अन्यथा फिर संभव न होगा।

—३८०/११, पनहेरा लाइंस क्वार्टर्स,
जी. सी, एफ. एस्टेट,
जबलपुर (म. प्र.)

• अशोक ओझा

लेसर वह किरण है, जो मृत्यु-किरण भी बन सकती है और जीवन-किरण भी। अनंत उपयोगवाली और विभिन्न किस्मों वाली लेसर आजकल वैज्ञानिकों का अधिक ध्यान आकृष्ट कर रही है।

गैस लेसर, विशेषकर कार्बनडाइ-ऑक्साइड लेसर, को तकनीकी कार्य में खूब प्रयोग किया जाता है। ३/८ इंच मोटी टिटानियम धातु को गैस लेसर से १० इंच प्रति मिनट की गति से काटा जा सकता है। कपड़ों की तहों को लेसर मशीन से काटना संभव है। कार-निर्माण-उद्योग में भी अब इसका उपयोग होने लगा है।

सामरिक अनुसंधान में

लेसर की विशेषताओं ने सामरिक वैज्ञानिकों का ध्यान भी आकृष्ट किया। यह देखा गया कि लेसर में होनेवाली प्रकाशकीय अंतर्क्रिया से बल और तनाव की

रूस ने लेसरचालित ऐसे प्रक्षेपणास्त्रों के आविष्कार का दावा किया है जिन्हें पनडुब्बियों में इस्तेमाल कर, अदृश्य रह कर पानी के नीचे से जमीन पर वार किया जा सकता है।
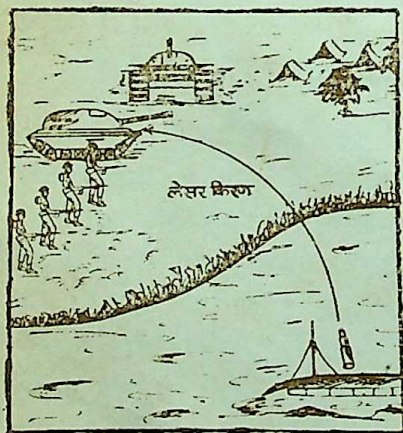
उत्पत्ति हो सकती है जिसके कारण उसके संपर्क में आनेवाले सभी पदार्थों का विनाश निश्चित है। स्रोत से लक्ष्य तक ऊर्जा को भेजने के दौरान क्रिया और प्रतिक्रिया का ऐसा दौर चलने लगता है जिससे बड़े विनाशकारी ढंग से लक्ष्य पर चोट होती है।

अमरीका और रूस में टैंकवेधी हथियारों और राइफलों से लेकर अंतर्महाद्वीपीय प्रक्षेपणास्त्रों को नष्ट करने में लेसर का उपयोग किया जाता है।

लेसर संचालित राइफल

लेसर किरणें अविलंब लक्ष्य निर्धारित करने में समर्थ हैं। शुरू-शुरू में हाथ से चलानेवाली राइफल में लेसर का प्रयोग किया गया। रासायनिक लेसर जो लाल रंग का प्रकाश उत्पन्न कर निशाने पर

दूरदर्शन यंत्र

लेसरचालित प्रक्षेपणास्त्र
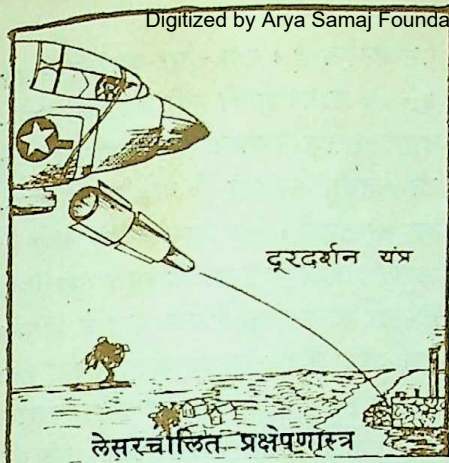
वर्षों में अधिक संहारक शक्तिवाली लेसर बनायी जा रही हैं। संभवतः विगत एकाध वर्ष में गुप्त प्रयोगों में गतिमान गैस लेसर (जी. डी. एल.) द्वारा कई हजार सौ वाट की शक्ति अमरीका में प्राप्त की गयी है। इतनी बड़ी शक्ति कैसी विनाशलीला प्रस्तुत कर सकती है, इसका तो सिर्फ अंदाज लगाया जा सकता है।

जब ऐसी लेसर को प्रक्षेपणास्त्र में व्यवहृत करके अंतर्महाद्वीपीय प्रक्षेपणास्त्रों

और संहार की भूमिका

वार कर सकती है, इन राइफलों में प्रयुक्त होता है। अमरीका की 'न्यू मेक्सिको वेपन लैब' में हो रहे ऐसे सामरिक अनुसंधानों की विस्तृत सूचनाएं अभी रहस्य ही बनी हैं।

वार को रोकने के लिए प्रहार

वियतनाम-युद्ध के दौरान प्रक्षेपणास्त्रों के निर्माण के होड़ को नये आयाम मिले हैं। व्यक्तिमारक प्रक्षेपणास्त्र, टैंक तथा विमानवेधी हथियारों में लेसर का उपयोग सामरिक अनुसंधान की आधुनिकतम उपलब्धि है। १९६३ में इस कार्य में अमरीका ने ६० लाख डालर खर्च किये। १९६४–६५ में यह खर्च तिगुना बढ़ा। अब तो उससे भी कहीं ज्यादा हो रहा है। ऐसा अनुमान है कि १९७० के बाद के

लेसरयुक्त बम : भीषण विध्वंस के लिए इनका वियतनाम-युद्ध में प्रयोग हुआ।
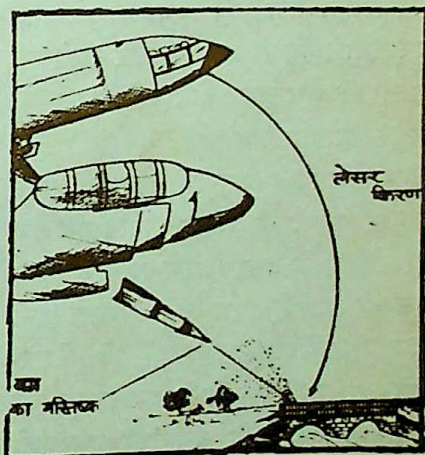
के विरुद्ध छोड़ा जाता है तब इनकी गति पांच से दस मील प्रति सेकंड से कम होने लगती है। रूस से अमरीका तक की दूरी २० से ३० मिनट में तय करने में समर्थ जिन प्रक्षेपणास्त्रों को रडार, रेडियो-संकेत, आंधी-तूफान—जैसी कोई शक्ति नहीं रोक सकती, उन्हें रोकने के लिए लेसर-संचालित प्रक्षेपणास्त्र शस्त्र सक्षम हैं। बटन दबाते ही १,८६,००० मील प्रति सेकंड (प्रकाश की गति के बराबर) की गति से ये शस्त्र शत्रु को रोकने चल पड़ते हैं।

समुद्र के नीचे से वार

अब समुद्र के गर्भ में भ्रमण करनेवाली पनडुब्बी भी लेसरयुक्त बनने लगी है। ऐसी पनडुब्बियों में व्यवहृत लेसर २०० मील दूर से ही जमीन पर खड़े टैंक और पूरी सेना को चपेट में लेकर बर्बाद कर सकती है। यही नहीं, अब सतह-से-सतह पर तथा सतह से वायु में मार करनेवाले शस्त्र भी लेसरयुक्त होने लगे हैं।

लेसर-संचालित बम

लेसर-किरण जितनी नुकीली होगी, विनाश उतना ही अधिक होगा। एक इंच की गोलाई के लेसर-किरण-पुंज १० हजार जूल की ऊर्जा से संपन्न हैं। पिछले दिनों वियतनाम में प्रयुक्त शस्त्रों की लेसर-किरण पेंसिल की नोक के बराबर नुकीली होती थीं। वहां के अमरीकी बमवर्षकों का निशाना अचूक होता था। पहले के २०० बमों के बदले लेसरयुक्त एक ही बम पर्याप्त है। एक लेसर-बम की कीमत ५,००० डालर आंकी गयी है। बम छोड़ने-वाला चालक पहले अपने लक्ष्य पर लेसर की पतली, नुकीली किरण को निशाने-बद्ध करता है। यह किरण नंगी आंख से अदृश्य लगती है। बम के साथ एक ऐसा कंप्यूटर लगा होता है जो स्रोत से निशाने तक जाने और लौटकर अपने स्थान तक पहुंचने की पूरी प्रक्रिया का ब्योरा रखता है। लक्ष्य तक लेसर-ऊर्जा के पहुंचने की पूरी प्रक्रिया के साथ-साथ बम का कार्य भी होता रहता है और बड़े ही नियंत्रित तथा संतुलित ढंग से एक पेट्रोलियम की टंकी के बराबर लक्ष्य पूर्णतः क्षतिग्रस्त किया जा सकता है।

दूरदर्शन नियंत्रित बम

एक अन्य प्रकार के बम ढोनेवाले विमान में दूरदर्शन कैमरा लगा होता है जिसके परदे पर कुछ मील पहले ही लक्ष्य का चित्र प्रगट हो जाता है। ऐसा होते ही चालक उसे कैमरे में 'बंद' कर लेता है और लक्ष्य से मीलों दूर स्थित होने के बावजूद बम छोड़ देता है, जिसे दूरदर्शन अपने नियंत्रण में लक्ष्य तक पहुंचाता है।

इस प्रकार जिस लेसर का उपयोग कभी शांतिपूर्ण कार्यों के लिए शुरू हुआ था, उसका अमरीका और रूस अपने-अपने शस्त्रों को अधिकाधिक संहारक बनाने के लिए प्रयोग कर रहे हैं।

—ई-१०१ (१५६१) मोतीबाग १,
नयी दिल्ली—२१

शिकार : दुनिया के सबसे बड़े जल्लाद का

● उदयन परमार

बेचारा छोटा - सा बालक देखता ही रह गया। उसके माता-पिता, भाई-बहनों को नाजी सैनिक मौत के घाट उतारने के लिए पकड़ ले गये। उनका अपराध यही था कि वे यहूदी थे। नन्हें बालक ने उसी क्षण मन-ही-मन प्रतिज्ञा की कि जब तक वह अपने माता-पिता, भाई-बहनों की हत्या का बदला नहीं ले लेगा, तब तक चैन से नहीं बैठेगा। शायद ऐसा ही प्रण हंगरी तथा अन्य यूरोपीय देशों के लाखों यहूदियों ने भी किये थे, तभी तो बीस वर्षों बाद भी, लाखों यहूदियों की हत्या का आदेश देनेवाला व्यक्ति पकड़ा गया और जघन्य अपराध के आरोप में फांसी पर चढ़ाया गया।

कौन था वह क्रूर व्यक्ति?

वह था, एडोल्फ आइशमन, जिसने अपने निजी आदेश से ६० लाख यहूदियों को मरवा दिया था।

१९४५ में जब द्वितीय महायुद्ध खत्म हुआ तो आइशमन की खोज की गयी परंतु वह पहले से ही जरमन एयर फोर्स के एक मृत कारपोरल की वरदी पहनकर युद्धबंदी शिविर में दाखिल हो चुका था। इससे पहले ही कि किसी को उसके बारे में कुछ पता चलता, वह वहां से भी भाग निकला।

आइशमन का बचपन आस्ट्रिया के लिंज नामक एक शहर में बीता था। वहीं पर उसकी पत्नी एवं बच्चे रहते थे। उनकी निगरानी के लिए गुप्तचर तैनात किये गये। आइशमन ज्यादा समझदार निकला, वह कभी घर लौटा ही नहीं। इस बीच समय-समय पर आइशमन के पश्चिमी जरमनी, सीरिया, मिस्र, तुर्की, स्पेन आदि देशों में देखे जाने की खबरें आती रहीं पर उसका सही पता न चला।

अचानक कई वर्षों बाद खबर मिली कि आइशमन को अर्जेंटाइना की राजधानी ब्यूनसआयर्स में देखा गया है, परंतु जिस व्यक्ति ने उसे देखा था, उसने पीछा करने में गड़बड़ कर दी और आइशमन एक बार फिर गायब हो गया। उसकी

खोज के लिए बीस गुप्तचर और भेजे गये। तीन महीने तक उन्होंने सारे शहर का चप्पा-चप्पा छान डाला पर उसका कोई पता न चला। अंत में इजराइल में एक विशिष्ट गुप्तचर टुकड़ी तैयार की गयी। इसमें वह छोटा-सा बालक जो अब तक एक हृष्ट-पुष्ट नवयुवक बन गया था. 'सांडोर फेकेंत' नाम से शामिल हुआ। इस टुकड़ी को आइशमन के बारे में पता लगाने के लिए पहले पश्चिमी जरमनी भेजा गया। इसी बीच एक विश्वस्त सूत्र से पता चला कि आइशमन ब्यूनोस-आयर्स में ही मौजूद है। तुरंत फेकेत तथा छह अन्य व्यक्तियों को एक महिला के साथ वहां भेजा गया। पर्यटकों, व्यापारियों इत्यादि के छद्म वेश में ये लोग अलग-अलग वहां पहुंचे। वहां पहुंचकर इन्होंने अपने-आपको हंगरी की नाजी पार्टी का सदस्य बताया। धीरे-धीरे वहां रहनेवाले नाजियों से उनका परिचय बढ़ने लगा। कई महीने बीत गये। फिर अचानक एक दिन एक यहूदी गुप्तचर ने ऐसा वाक्य सुना, जिसने अंततः आइशमन को गिरफ्तार ही करवा दिया। वाक्य था—'बेचारा आइशमन ! कहां तो वह ज़रमनी के सबसे शक्तिमान लोगों में से एक था और कहां अब कारों के पुरजे बना रहा है।' अब यहूदी गुप्तचरों ने कारों के कारखानों पर अपना ध्यान केंद्रित किया। आखिर एक दिन उनकी मेहनत सफल हुई। एक गुप्तचर ने देखा एक लंबा, पतला-सा व्यक्ति, जिसके लंबोतरे से चेहरे पर उभरे हुए कान स्पष्ट दिखायी दे रहे थे, मर्सिडीज बेंज फैक्ट्री से निकला और एक बस में चढ़ गया। यही व्यक्ति था, साठ लाख यहूदियों का हत्यारा एडोल्फ आइशमन, जो अब गुप्त रूप से एक साधारण मजदूर का जीवन बिता रहा था। उस दिन तो वह गुप्तचर केवल यह देखकर लौट आया कि आइशमन शहर के किस कोने में जाता है। इसके बाद तुरंत इजराइल में मुख्य कार्यालय को सूचना दी गयी।

ये बहुत ही उत्तेजना के क्षण थे। कहीं आइशमन अचानक गायब हो गया तो? एक प्रश्न यह भी था कि आइशमन के साथ क्या किया जाए?

यह तय किया गया कि आइशमन का अपहरण कर उसे बंदी बना लिया जाए और इजराइली विमान के आने पर उसे इजराइल ले जाया जाए। सांडोर फेकेत और तीन तगड़े व्यक्तियों को आइशमन को दबोचने का काम सौंपा गया। कुछ लोगों को निगरानी के लिए चुना गया। अन्य लोगों को दो कारों से उनका पीछा करना था ताकि यदि पहली कार खराब हो जाए तो दूसरी कार में बैठकर भागा जा सके, या पीछा किया जा रहा हो तो उसकी सहायता से ट्रैफिक रोक सकें। दिन चुना गया ११ मई, १९६०।

इजराइली गुप्तचरों का भाग्य अच्छा निकला। ११ मई को आकाश में खूब बादल घुमड़ रहे थे। रह-रहकर वर्षा

भी हो रही थी। सड़कों पर बहुत कम लोग आ जा रहे थे। शाम को वर्षा रुकी। कारखाने में छुट्टी का भोंपू बजा। कारखाने के द्वार ने धीरे-धीरे श्रमिकों को उगलना शुरू किया। अंत में आइशमन भी कारखाने से निकला। खयालों में खोया हुआ वह चुपचाप अपनी बस में जा बैठा। तभी दो कारें उसका पीछा करने लगीं। कुछ समय बाद बस रुकी। जैसे ही क्लिमेंट नामधारी आइशमन अपनी गली में मुड़ा, एक कार वहां आकर रुकी और उसमें से चार व्यक्ति बिजली की तेजी से उसकी ओर लपके। इससे पहले ही कि वह स्थिति समझ पाता, किसी ने उसके सिर पर प्रहार किया और वह बेहोश हो गया।

जब आइशमन को होश आया तब वह शहर से कई मील दूर एक खेत के बीच में बने मकान में था। उसे दस-बारह इजराइली खुफियाओं ने घेर रखा था। कई वर्ष तक छिपकर जीवन व्यतीत करने के कारण वह पहले से भी अधिक भीरु और कायर हो गया था। उसने प्राण की भीख मांगनी शुरू कर दी। इजराइलियों ने भी उससे कहा कि वे उसे मारेंगे नहीं, अपितु इजराइल ले जाएंगे। पहले तो उसे धमकी देकर यह लिखवा लिया गया कि वह स्वयं अपनी इच्छा से इजराइल जा रहा है ताकि यदि कोई अनहोनी दिक्कत आ जाए तो उसे यह पत्र दिखाकर दूर किया जा सके। जितने दिनों वे लोग इजराइली विमान की प्रतीक्षा करते रहे, आइशमन रोज उनसे अपने जीवन के लिए याचना करता। कभी तो वह यह बताने का लालच देता कि वह अपने पुराने साथियों के बारे में जानकारी देगा, कभी कुछ कहता। आइशमन के एक-एक शब्द को टेप कर लिया गया।

आखिर १९ मई की शाम को इजराइली विमान-सेवा का एक हवाईजहाज ब्यूनोसआयर्स पहुंचा। अर्जेन्टाइना की सरकार के कागजात में यह उन कई सौ किराये के विमानों में एक था, जिन्हें स्वतंत्रता दिवस-समारोह के उपलक्ष्य में अर्जेन्टाइना में उतरने की अनुमति दी गयी थी। अगले दिन रात को बारह बजे वह अपनी पेट्रोल की टंकियों को पूरा भरकर फिर उड़ा, और तेइस तारीख को आइशमन की गिरफ्तारी के समाचार से दुनिया आश्चर्यचकित हो गयी। आइशमन पर नाजी अत्याचारों का फैसला करनेवाले अधिनियम के अंतर्गत मुकदमा दायर किया गया। आरोप था कि आइशमन ने अपने आदेश द्वारा ६० लाख यहूदी पुरुष, स्त्रियों और बच्चों की हत्या करवायी।

मुकदमा काफी दिन तक चलता रहा। आइशमन ने दलील दी कि उसने तो मात्र आदेशों का पालन किया था, उसका कोई कुसूर नहीं था; पर उसकी कोई दलील नहीं सुनी गयी और अंत में उसे फांसी की सजा दी गयी।

—५२ ए, कमलानगर, दिल्ली—७

नये नगर: नये लोग

● राजेंद्र अग्रवाल

'गुतन ताग', अर्थात 'शुभ दिन' के अभिवादन से हंसते हुए कोई आपका स्वागत करे तो समझिए कि आप पश्चिमी जरमनी के उत्तरी भाग में हैं। हम्बुर्ग—जरमनी का दूसरा बड़ा नगर है। पहला बड़ा नगर है बरलिन (पश्चिम)। हम्बुर्ग पश्चिमी जरमनी का सबसे बड़ा बंदरगाह भी है। इसकी जनसंख्या २० लाख से ऊपर है। पश्चिमी जरमनी ११ प्रांतों में बंटा है, जिनमें से तीन नगर केंद्र प्रशासित हैं—बरलिन, हम्बुर्ग, ब्रेमन।

हम्बुर्ग, धनिकों की नगरी है। इसके बीच से बहनेवाली ऐले नदी समुद्र में मिलने से पूर्व एक झील का रूप धारण करती है। यहां अच्छी-खासी संख्या में करोड़पतियों ने विशाल इमारतें बनवायी हैं, जो आधुनिक भवन-निर्माणकला का सुंदर उदाहरण हैं। हमने वहां एक ऐसा मकान बनते देखा, जो नींव से प्रारंभ न हो जमीन पर बन रहा था। दूसरे शब्दों में, वह भवन बिना नींव के बन रहा था।

जरमनी में सुंदर उद्यानों की कमी नहीं है। इनमें यहां का 'प्लांटन उम ब्लूमन' उद्यान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। जरमनी में 'प्लांटन' पौधों और 'ब्लूमन' फूलों को कहते हैं।

वहां खिलते पुष्पों के साथ नाचते फव्वारे भी हैं। रात्रि की बेला में रंग-बिरंगे फव्वारे एक अद्भुत ही दृश्य उपस्थित करते हैं। झील में रंग-बिरंगी रोशनियां जब नाचते हुए फव्वारों पर पड़ती हैं तब मनुष्य अपने-आपको भूल जाता है। जैसे-जैसे संगीत में उतार-चढ़ाव आता है, फव्वारे भी थिरकते हैं उसकी धुन पर! दूसरे शब्दों में, ये फव्वारे संगीत पर नाचते हैं। भिन्न-भिन्न जाति के सुंदर गुलाब इस उद्यान की शोभा में चार चांद लगाते हैं। सौ फुट ऊंची शीशे की एक मीनार भी इस उद्यान का आकर्षण-केंद्र है। यह उद्यान केवल गरमियों में ही खुलता है, अर्थात मई से सितंबर तक। जरमनी में मुख्यतः दो ही ऋतुएं होती हैं, शीत एवं ग्रीष्म! ग्रीष्म ऋतु में अधिकतर वर्षा होती रहती है रिमझिम, रिमझिम। जिस दिन सूर्य के दर्शन होते हैं, वह अत्यंत भाग्यशाली दिवस माना जाता है। धूप, वहां के लोगों के लिए दुर्लभ वस्तु होती है। सूर्य के दर्शन करते ही नर-नारी प्रसन्नता से झूम उठते हैं।

बंदरगाह होने के नाते नगर में काफी

चहल-पहल रहती है और विदेशी भी पर्याप्त संख्या में वहां आते हैं परंतु जरमन-नागरिक अपनी ही भाषा (जरमन भाषा) में दूसरे लोगों से बातें करते हैं। अंगरेजी भाषा जाननेवाले जरमन भी अपनी मातृ-भाषा में ही बोलते हैं। यह अपनी भाषा के प्रति अगाध प्रेम का प्रतीक है, परंतु इससे विदेशियों को असुविधा होती है। कई बार मुझे कुछ लोगों की सहायता-हेतु दुभाषिये का कार्य करना पड़ा। वहां की कुछ ट्राम गाड़ियों में कोई कंडक्टर नहीं होता, केवल चालक होता है। यात्रा करनेवाले पहले से टिकट खरीद लेते हैं, और जिस स्थान पर उन्हें जाना होता है उसके अनुसार ही उतनी कीमत के टिकट ट्राम में लगी मशीन पर स्वयं पंच कर लेते हैं।

प्रातःकाल स्थान-स्थान पर समाचार-पत्र रखे रहते हैं और उनके पास ही बंद डब्बे। लोग समाचारपत्र उठाकर उसकी कीमत डब्बे में डाल देते हैं।

जरमनी में लोकल ट्रेनें दो प्रकार की हैं। 'एस वाहन', यानी भूमि के ऊपर चलनेवाली और 'यू वाहन', यानी भूगर्भ में चलनेवाली। इनमें भूगर्भ में चलने-वाली ट्रेनें अधिक सुविधाजनक हैं। इसके अतिरिक्त ट्राम और टैक्सी की पर्याप्त सुविधा होने के कारण वहां सुबह-शाम लंबे-लंबे 'क्यू' नहीं लगते। वहां बायीं ओर के स्थान पर दायीं ओर यातायात चलता है। पर्यटकों के लिए विशेष बसें भी चलती हैं।

एक नयी बात ने मुझे वहां काफी आश्चर्यचकित किया। वहां के लोग बहुत कम पानी पीना पसंद करते हैं। दूध, चाय, कॉफी, बीयर, शराब, फलों का रस, कोका-कोला आदि सब चाहते हैं पर पानी शायद ही। उनका कहना है, पानी भी कोई पीने की वस्तु है। एक तो जरमनी वैसे ही बहुत ठंडा देश है, दूसरे

चुस्त और फुरतीली जरमन कन्याएं
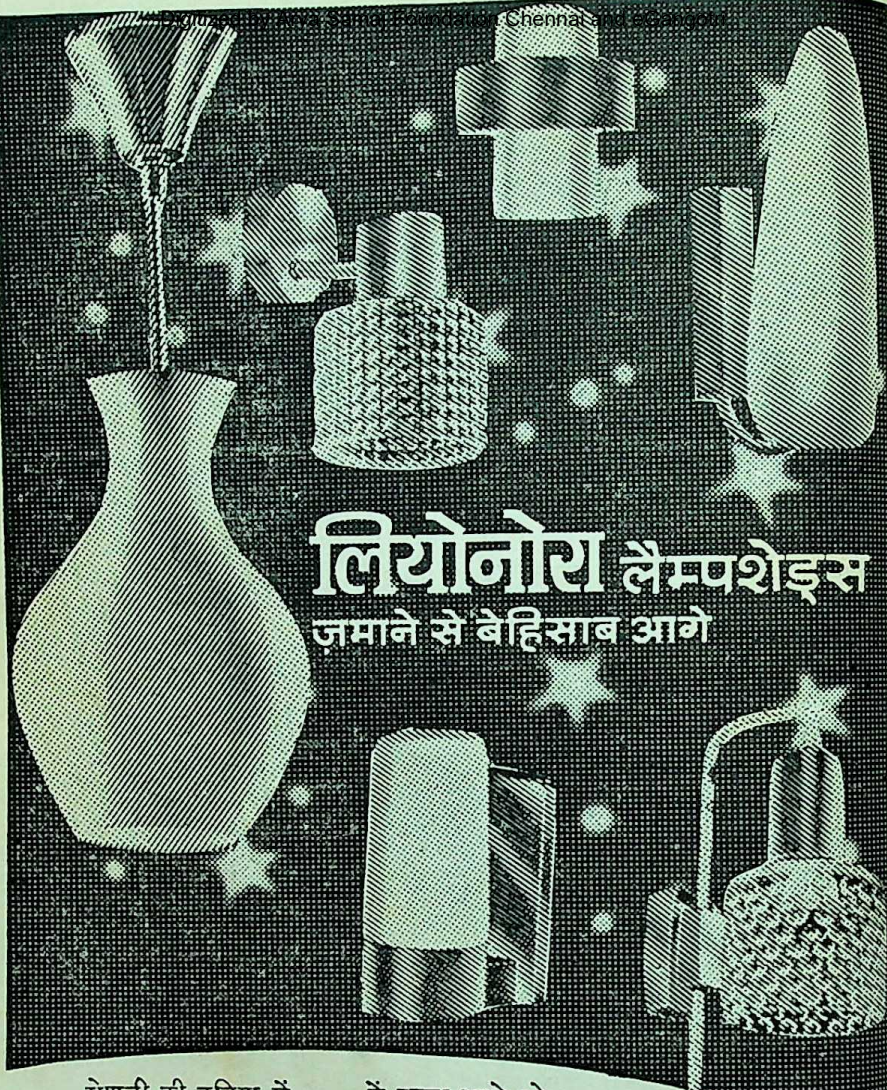
वहां के निवासी किसी प्रकार के मसाले भी नहीं खाते, अतः उन्हें पानी की आवश्यकता बहुत कम रहती हैं।

हम्बुर्ग का टाउनहाल भव्य है। जहाज के आकार का बना 'चाईल हाउस' व्यापारिक गतिविधियों का एक मुख्य केंद्र है। नगर में कुल १,२८३ पुल बने हैं।

यहां से डेनमार्क, स्वीडन, नार्वे आदि देशों के लिए ट्रेनों द्वारा जा सकते हैं। ये ट्रेनें कभी समुद्र पर बने पुल पर से गुजरती हैं तो कभी जहाज पर सवार होकर समुद्र पार करती हैं।

हम्बुर्ग में एक बड़ा ताप बिजलीघर है जिसमें अमरीका से आयातित कोयला जलाया जाता है। अमरीका से आयातित कोयला जरमनी में उपलब्ध कोयले से सस्ता पड़ता है। इसकी भी एक कहानी है। जरमनी की छोटी कार 'वाक्सवैगन', जिसे जरमनी में 'फाक्लस वागन' अर्थात 'जनता की गाड़ी' कहते हैं, एक दिन में ७,००० बनती हैं। इनमें से ५० प्रतिशत से अधिक गाड़ियां अमरीका को निर्यात की जाती हैं। ये गाड़ियां जहाजों में अमरीका भेजी जाती हैं। ये जहाज वहां से खाली आने का बजाय कोयला डाल लाते हैं। अतः येह अमरीका से आया कोयला, जरमनी के मध्य भाग से आये कोयले से सस्ता पड़ता है।

जरमनी में विदेशी मुद्रा का भी कोई संकट नहीं है। अतः उन्हें जहां, जो वस्तु सस्ती मिलती है, उसे खरीद लेते हैं। जरमनी का प्रमुख समाचार पत्र 'बिल्ड' हम्बुर्ग से ही छपता है। इसका मुद्रणालय जरमनी का सबसे बड़ा मुद्रणालय है। जहाजरानी का प्रमुख केंद्र होने के नाते यहां जहाज बनाने के प्रमुख कारखाने हैं। आयात-निर्यात का कार्य भी यहां बड़े पैमाने पर होता है। जरमनी में यही ऐसा नगर है जहां केवल एक दूकान पर भारतीय पापड़, अचार, मुरब्बे, बेसन और गेहूं का आटा, मसाले आदि मिल सकते हैं। यह माल वी. पी. पी. द्वारा भी मंगवाया जा सकता है।

हम्बुर्ग में एक दूसरे से मिली तीन झीलें हैं, जो पूरे शहर की सुंदरता में चार चांद लगाती हैं। प्रवासियों की सुविधाओं के लिए हम्बुर्ग में विशेष व्यवस्थाएं हैं। नगर के केंद्रीय रेलवे स्टेशन पर उन लोगों की सूची होती है जो अपने घर 'पेइंग गेस्ट' रखना चाहते हैं। इस सूची के अतिरिक्त किराये के मकानों आदि की भी व्यवस्था का प्रबंध है। इसके लिए उन्हें कुछ कमीशन भर देना पड़ता है।

ऐल्बे नदी के नीचे बनी हुई सुरंग इस नगर की एक अन्य विशेषता है। यह सुरंग १९०८ में बननी प्रारंभ हुई और १९११ में बनकर तैयार हो गयी। इस सुरंग की लंबाई ४५० मीटर (लगभग १,५०० फुट) और गोलाई ६ मीटर (लगभग २० फुट) है। यह पानी की सतह से २१ मीटर (लगभग ७० फुट) नीचे बनी है। सुरंग के दो भाग हैं। एक

फिल्म-उद्योग हो या व्यापार-उद्योग या खेल-कूद, सभी क्षेत्रों में पश्चिमी जरमनी में नये और आधुनिक प्रयोग जारी हैं

भाग यातायात आने के लिए और दूसरा यातायात जाने के लिए। पैदल चलनेवालों के लिए फुटपाथ बने हैं। सारी सुरंग भलीभांति प्रकाशमान है। इस सुरंग में एक घंटे में १४,००० यात्रियों का आवागमन होता है। सुरंग में जाने के लिए तीन लिफ्ट निरंतर कार्य करती हैं। नदी के दूसरी ओर भी तीन लिफ्ट हैं। मोटर-गाड़ियां आदि लिफ्ट द्वारा नीचे उतरती जाती हैं। सुरंग द्वारा नदी पार कर, दूसरे किनारे पर फिर लिफ्ट द्वारा ऊपर पहुंचा जा सकता है। पैदल यात्रियों के लिए अलग लिफ्ट है। इस सुरंग के बनने में १ करोड़ १० लाख जरमन मार्क, अर्थात लगभग तीन करोड़ रुपये खर्च हुए। दायीं ओर हरे गुंबद के नीचे लिफ्ट चलती है और उनके द्वारा गाड़ियां एवं यात्री नदी के दूसरी ओर पहुंच जाते हैं। इस सुरंग के कारण जहाजों के आने-जाने में कोई बाधा नहीं आती। यह सुरंग सिविल इंजीनियरिंग की एक उपलब्धि है। यह कहीं से जरा भी नहीं टपकती।

यह बंदरगाह जरमनी के अत्यंत व्यस्त बंदरगाहों में से एक है। माल उतारने एवं चढ़ाने के लिए गोदी पर विभिन्न 'क्रेन' लगे होते हैं। कई 'क्रेनें' चलती-फिरती नावों पर, या छोटे जहाजों पर भी लगी रहती हैं। इनके द्वारा दूर पानी में खड़े जहाजों से माल उतारा एवं चढ़ाया जा सकता है।

—२१, रघुमार्ग, लाजपतनगर, अलवर

र दूसरा
लनेवालों
ी सुरंग
सुरंग में
आवा-
लए तीन
नदी के
मोटर-
र,
पर
तयों के
के बनने
, अर्थात
। दायीं
लती है
ी नदी
स सुरंग
में कोई
ल इंजी-
ह कहीं

अत्यंत
। माल
विभिन्न
चलती-
पर भी
ानी में
चढ़ाया

अलवर
म्बिनी

१

२

चित्र १ : हैम्बर्ग में एल्बे नदी के नीचे बनी सुरंग, नीचे की ओर सुरंग का भीतरी दृश्य

चित्र २ : हैम्बर्ग बंदरगाह

चित्र ३ : हैम्बर्ग की तीन झीलें

चित्र ४ : हैम्बर्ग में अलस्टर की बारहदरी

४

तेल
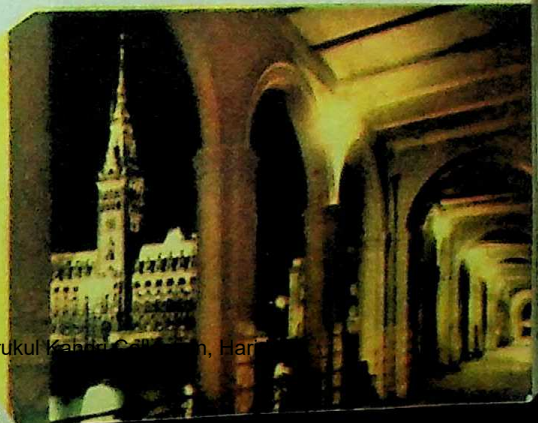
यासानूरी कबाका

"कल रात फिर मुझे अपने तिल का सपना आया--हां वही तिल जिसके लिए तुमने मुझे अनेक बार डांटा है। यह तिल मेरे दायें कंधे पर है . . . नहीं, शायद मेरी पीठ पर है ।

"और खेलो, इसके साथ, बस अब जल्दी ही अंकुर फूटेंगे इसमें से । सेम से भी बड़ा हो गया है ।

बेशक, तुमने मुझे इस तिल के लिए हमेशा छेड़ा ही है, पर साथ-ही-साथ तुम हमेशा यह भी तो कहा करते थे कि यह बेहद खूबसूरत है।

"जब मैं नन्ही बच्ची थी तब बिस्तर में लेटे-लेटे इसके साथ खेला करती थी, और जब तुमने इसे पहली बार देखा था तब मुझे कितनी शर्म आयी थी। तुम्हें चकित देख कितना रोयी थी!

"अब बस भी करो सायोको! तुम इसे जितना छुओगी, उतना ही बड़ा होता जाएगा . . .

"मेरी मां भी बचपन में अकसर मुझे इसी बात के लिए डांटा करती थी, पर मैं हमेशा इसे चुपके-चुपके छूती रहती। जब मां डांटा करती थी तब मैं तेरह बरस की बच्ची थी; और जब तुमने पहली बार मेरा तिल देखा था तब भी मैं बच्ची ज्यादा और पत्नी कम थी। नहीं जानती, तुम एक पुरुष होने के नाते मेरी शर्म की कल्पना भी कर सके थे या नहीं, सिर्फ शर्म ही क्यों? मुझे तो विवाह एक भयानक चीज लगी थी, मेरा मन आशंका से भर गया था। मुझे लगा था कि तुम मेरे सभी भेद जान गये हो। मानो, एक-के-बाद एक मेरे भेदों के आवरण तुमने उतार फेंके हो। मुझे लगा था, मैं एकाएक अनाथ हो गयी हूं।

"तुम तो बड़े मजे में सो जाते थे, अकसर तो मुझे इस बात की बड़ी राहत मिलती थी, पर कभी-कभी मैं एकदम अकेली रह जाती और एकाएक एक झटके से मेरी नींद टूट जाती और मेरा हाथ धीमे-धीमे तिल तक पहुंच जाता। मैं सोचती—अब तिल छूने पर भी पाबंदी लग गयी है।

"एक बार सोचा, मां को यह बात लिख दूं पर सोचते समय मेरा मुंह शर्म के मारे लाल हो गया था। 'एक तिल के लिए इतना तिलमिलाना निहायत बेवकूफी है'—जिस दिन तुमने मुझसे यह बात कही थी, उस दिन मैं बहुत प्रसन्न थी, मैंने हलके से सिर हिलाया था। कितना

अच्छा होता अगर तुम मेरी इस बुरी आदत को प्यार कर सकते।

"दरअसल मुझे इस तिल की तनिक भी चिंता न थी। तिल चाहे कितना भी बड़ा क्यों न हो जाए, आखिर किसी को कुरूप नहीं बना सकता है। और फिर लोग दूसरों की पीठ पर तिल तो नहीं ढूंढ़ते फिरते हैं।

"क्या तुम जानते हो मुझे तिल से खेलने की आदत कैसे पड़ी ? और तुम्हें इस आदत पर इतना गुस्सा क्यों आता था ? 'बस करो . . . बस करो' तुम मुझसे कहते थे । सैकड़ों बार तुमने मुझे इसके लिए डांटा होगा । 'बायां हाथ प्रयोग करना क्या एकदम जरूरी है,' तुम झुंझलाये थे। तुम्हारे इस सवाल ने मुझे चौंका दिया था। पर यही सच था । अनजाने ही मैं सदा बायां हाथ काम में लाती थी। 'दायें कंधे पर तिल है, दायां हाथ ही ठीक रहेगा—' तुम्हारी इस सलाह पर मेरे मुंह से निकल पड़ा था, 'ओह !' मैं बोल पड़ी थी—पर कितना अजीब लग रहा है ? तुमने कहा था—बिलकुल नहीं । मैं बोली—फिर भी बायां हाथ ठीक रहेगा । तुम बोले—पर दायां ज्यादा पास है । मेरा जवाब था—दायां उलटा करना पड़ता है, तकलीफ होती है। तुम आश्चर्य से बोल पड़े थे–उलटा !

"हां, देखो न ! या तो मैं बांह को गरदन के आगे लाऊं या फर गरदन के पीछे इस तरह से हाथ लेकर जाऊं मैंने तुम्हें समझाने का यत्न किया था ।

"अब मैं तुम्हारी हर आज्ञा चुपचाप नहीं मानती थी । उत्तर देते समय मैंने महसूस किया था कि जब मैं बायें हाथ को सामने से काम में लाती हूं तब लगता है कि अपने से ही लिपट रही हूं, और तुम्हें दूर कर रही हूं । ऐसा करना तिल के प्रति अन्याय भी था । धीमे स्वर में मैंने पूछा था—पर बायें हाथ में बुराई भी क्या है ? तुम्हारा जवाब था–बायां हो या दायां, आदत तो बुरी है । मेरे यह कहने पर कि जानती हूं, तुम बोल पड़े थे—तुम्हें कितनी बार कहा है कि इसे डॉक्टर से कटवा लो । मैंने असमर्थता जतायी कि मैं नहीं जा सकती, शर्म आती है । पर तुम कहां चुप होनेवाले थे ! तुरंत बोले—यह तो बहुत ही आसान काम है । बहुत से लोग तिल कटवाने डॉक्टर के पास जाते हैं। मैं झुंझला पड़ी थी—शायद वे लोग जाते हैं जिनके मुंह पर तिल होते हैं । कंधे का तिल कटवाने कोई नहीं जाता। डॉक्टर भी हंसेगा, समझ जाएगा कि यह तुम्हें पसंद नहीं है ।

"तिल को मैं सह सकता हूं, पर इसके साथ तुम्हारा खेलना मुझे कतई पसंद नहीं है—तुम्हारा जवाब था । मैंने सफाई-सी दी—मैं जानबूझकर नहीं...

"कितनी जिद्दी हो ? मैं कुछ भी कहता रहूं, तुम अपने को मत बदलना—तुम अप्रसन्न हो उठे थे।

"कोशिश तो करती हूं । ऊंचे गले की कमीज भी पहनकर देख ली, पर अपने

आपको रोक नहीं सकी—मैंने आंखें झुकाकर कहा।

"पर और कितने दिन तुम ऐसा करती रहोगी—तुम शायद द्रवित हो उठे थे। मैंने कहा—इसे छूने में डर ही क्या है? तुम्हें जरूर लगा होगा कि मैं तुम्हारा विरोध कर रही हूं। तुमने कहा—डर तो कोई नहीं, पर मुझे पसंद नहीं है, इसीलिए मना करता हूं।

"क्यों नहीं पसंद तुम्हें?"

"जब-जब तुम इसे छूती हो तुम्हारे चेहरे पर एक अजीब खोया-खोया भाव छा जाता है। मुझे बेहद नफरत है उससे—तुम्हारी यह बात मेरे मन को छू गयी थी, अत: बोली कि अगली बार तुम मेरे हाथ को चपत लगा देना, या बेशक मेरे मुंह पर ही चांटा जड़ देना।

"तुम पिछले तीन साल से एक छोटी-सी आदत नहीं छोड़ सकीं, यह सोचकर तुम्हें जरा भी घबराहट नहीं होती—तुमने फिर प्रश्न दाग दिया था।

"मैंने इसका उत्तर नहीं दिया था, मैं तो तुम्हारे कहे इन शब्दों के बारे में सोच रही थी कि 'मुझे बेहद नफरत है उससे'।

कहीं ऐसा तो नहीं था कि मेरा समर्पण पूर्ण नहीं था। कहीं हमारे बीच पूरा ब्रह्मांड तो नहीं था? तिल को छूते ही कहीं मेरे मन के भाव मेरे चेहरे पर तो नहीं छा जाते थे? बचपन में तो यही था।

"शायद, इसीलिए तुम मुझसे इतने असंतुष्ट रहते थे। अगर तुम मुझसे संतुष्ट होते तो इतनी छोटी-सी बात पर मुसकरा भर देते और उसे एकदम भुला देते। शायद दुनिया में ऐसे भी आदमी हों जिन्हें ऐसी आदत आकर्षक लगे! सोचते ही मैं कांप उठी थी, भयभीत हो गयी थी। तुम्हारे प्यार के ही कारण तुम्हें मेरा तिल नजर आया था, इसमें तो मेरे मन को कोई संदेह नहीं, पर यह छोटी-सी नाराजगी धीरे-धीरे हमारी जिंदगी में धंस गयी थी। अगर प्यार सच्चा होता तो ऐसे झक्कीपन की कौन परवाह करता? पर कुछ ऐसे भी पति होते हैं जो हर कदम पर उलझ जाते हैं। कितना ही अच्छा होता, तुम मेरी इस आदत को नजरअंदाज कर देते।

तुमने मुझे कितना मारा था! मैं कितना रोयी थी! मिन्नतें की थीं कि मुझे इतनी जोर से मत मारो। एक तिल के लिए मुझे कितनी पीड़ा सहनी पड़ी थी! पर वह तो सतही बात थी। तुमने पूछा था—इसका क्या इलाज क्या है? तुम्हारी आवाज कांप रही थी, क्योंकि तुम्हारी बात मैं समझती थी। शायद इसीलिए तुम्हारा मुझे मारना ठीक ही था।

"अगर मैं इस बारे में किसी से जिक्र भी करती तो वह तुम्हें पशु ही समझता। हम एक ऐसे बिंदु पर पहुंच चुके थे जहां बहुत ही छोटी-सी कोई बात हमारे बीच तनाव पैदा कर देती थी। तुम्हारा मुझे मारना हमें इसी खिंचाव, इसी तनाव से मुक्ति दिलवाता था!

"मैंने दोनों हाथ जोड़कर तुम्हारे सीने पर इस तरह रख दिये थे, मानो यही मेरा पूर्ण समर्पण था, और कहा—मेरे हाथ बांध दो। यह आदत कभी नहीं छूट सकती, कभी नहीं।

"तुम कितने लज्जित लग रहे थे। तुम्हारे गुस्से ने तुम्हें एकदम शिथिल बना दिया था। तुमने मेरे ही किमोनो की पेटी से मेरे हाथ बांध दिये थे। बंधे हाथों से मैं अपने बाल संवारने लगी थी। तुम्हें देखकर मैं खुश थी—अब शायद यह पुरानी आदत छूट जाए।

"और जब मेरे प्रति तुम्हारा शेष स्नेह भी मर गया तब मैं इसका कारण समझ गयी थी—मेरी आदत छूटी नहीं थी। जब-जब मैं तिल को छूती तुम मुझे न देखने का आडंबर करते। तुम चुप रहते, मानो कह रहे हो कि जो जी में आये करो, मैंने तुम्हें छोड़ दिया।

"फिर एक अजीब घटना घटी। जो आदत तुम्हारे डांटने और मारने से न छूटी, वह अपने आप छूट गयी।

"सुनो, मैंने अब तिल से खेलना बंद कर दिया है—मैं उत्तेजित थी, पर तुम लापरवाही से कुछ बुदबुदाये भर थे।

"अगर यह बात तुम्हारे लिए इतनी महत्त्वहीन थी, तो मुझे इतना मारा-पीटा क्यों? तुम यही पूछ सकते थे कि अगर यह आदत इतनी आसानी से छूट सकती थी तो पहले क्यों नहीं छोड़ी? लेकिन तुमने तो मुझसे बात करना ही छोड़ दिया था! तुम्हारा चेहरा मुझे तुम्हारे मन की बात बता रहा था—क्या फर्क पड़ता है! यह आदत न तो दवा है और न ही जहर, पूरे दिन इसके साथ खेलो। यही कह रहा था न तुम्हारा चेहरा? सिर्फ तुम्हें नाराज करने के लिए एक बार मैंने सोचा था कि तिल को छू लूं, पर मेरे हाथ ने हिलने से ही इनकार कर दिया था। मैं एकदम अकेली थी और मुझे बेहद गुस्सा आया था।

"जब तुम आसपास न होते तब मैं सोचती कि क्यों न तिल को छू लूं, फिर इस खयाल के आते ही मैं लज्जित-सी हो जाती। उस बार भी मेरे हाथ ने हिलने से इनकार कर दिया था।

"मैंने जमीन की ओर देखा था और अपना होठ काट लिया था। मैं इंतजार करती रही थी कि अभी तुम पूछोगे—'तुम्हारा तिल कहां गया?' पर तिल शब्द तो हमारी बातचीत से गुम ही गया था। इसके साथ और भी कितनी ही बातें गुम हो चुकी थीं।

"अपनी मां के घर लौट आयी थी मैं। एक दिन मैं मां के साथ नहा रही थी तो वे बोलीं—

"तुम्हारा वह तिल कितना सुंदर लगता था—

"कितनी पीड़ा सही है मैंने उस तिल के लिए... पर मां को कैसे बताऊं?

"हम तुम्हारे तिल को याद करके बहुत हंसा करते थे। शादी के बाद भी तो तुम्हारा तिल से खेलना छूटा नहीं होगा!

—मां ने पूछा। मैं बोली—हां, खेला करती थी। फिर पूछ बैठी—मां, कब शुरू हुई थी यह बुरी आदत ?

"मालूम नहीं, जब भी तिल निकला होगा तब से। छोटे बच्चों के तो शायद तिल होते ही नहीं—मां ने बताया।

"मेरे बच्चों के तो नहीं हैं—मैंने कहा। मां बोल पड़ीं—हां बाद में ही निकलते हैं, और फिर कभी नहीं जाते हैं। लेकिन इतना बड़ा तिल मैंने कभी नहीं देखा। यह कहकर मेरी मां धीमे-से हंस दीं।

"मुझे अच्छी तरह से याद है; जब मैं छोटी थी तब मेरी बहनें और मां मेरे तिल को छुआ करती थीं। कितना खूबसूरत लगता था यह तब! शायद मुझे तभी से आदत पड़ गयी थी।

"कितने अरसे से मैं अपने तिल से नहीं खेली ? कितने दिन ? कितने वर्ष मुझे याद नहीं आता। अपने घर में, जहां मेरा जन्म हुआ था, मैं अपने तिल से मन भरकर खेल सकती थी; मुझे कोई नहीं रोक सकता था—पर क्या फायदा ? जैसे ही मेरी अंगुलियों ने तिल को छुआ आंखों में ठंडे आंसू भर आये। मुझे तुम्हारी याद आ गयी है।

"मैं एक तिरस्कृत पत्नी हूं न, और शायद तुम मुझसे संबंध तोड़ लोगे। मेरा तकिया गीला हो गया है। मैंने उसे पलट लिया है। और फिर वह तिलवाला सपना आया।

"नींद टूटने के बाद कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि मेरा कमरा कहां है, पर तुम वहां जरूर थे। हमारे साथ एक और औरत थी। मैंने बहुत शराब पी रखी थी। मैं मदहोशी की हालत में बार - बार किसी चीज के लिए प्रार्थना कर रही थी। आदत से मजबूर मेरा बायां हाथ फिर गरदन के पीछे पहुंच गया था। लेकिन यह क्या ? तिल तो उखड़कर मेरी अंगुलियों के बीच आ गया था! बिना किसी कष्ट के मानो यह संसार की सबसे स्वाभाविक घटना हो। मानो मेरा तिल सेम का एक भुना हुआ दाना हो। बिगड़े हुए बच्चे की तरह मचलकर मैंने कहा—मेरे तिल को अपनी नाक के तिल के साथ रख लो। मैंने अपना तिल तुम्हारी ओर बढ़ाया और तुम्हारे सीने से चिपक गयी।

"और जब मेरी नींद खुली तब भी मैं रो रही थी। मैं बेहद थक गयी थी। कुछ पल मैं लेटे-लेटे मुसकराती रही। सोचती रही कि क्या सचमुच तिल गायब हो गया है ? पर चाहते हुए भी मैं तिल को छू न सकी।

"यही मेरे तिल की कहानी है बस! मैं अब भी उसे अपनी अंगुलियों से महसूस कर सकती हूं। तुम्हारी नाक के पास भी एक तिल है, मैंने कभी उसके बारे में नहीं सोचा है। कभी कुछ नहीं कहा है। अगर मेरा दिल तुम्हारे तिल के पास लगा दिया जाए और तुम्हारा तिल फूल जाए, फैल जाए तो कैसी सुंदर परिकथा बने! और अगर कहीं तुम्हें मेरे तिल का सपना आ

जाए तो मुझे बेहद खुशी होगी। हां, एक बात तो मैं भूल ही गयी। तुमने कहा था न कि मुझे बेहद नफरत है। तुम्हारा ऐसा कहना तो तुम्हारे स्नेह का प्रतीक था, और मैं जब-जब तिल को छूती तो मेरे मन में तुच्छ विचार उठते। अपनी बहनों और मां को दोषी ठहराकर मुझे मुक्ति नहीं मिल सकती।

"मैंने अपनी मां से भी पूछा है कि बचपन में जब मैं तिल से खेला करती थी तब क्या वह मुझे डांटती थीं। उनका जवाब था कि हां डांटती थी। मेरे यह पूछने पर कि क्यों डांटती थीं, मां ने जवाब दिया—क्यों? क्योंकि यह बुरी आदत थी।

"मैंने पूछा—मुझे तिल से खेलते देख तुम्हें कैसा लगता था? कुछ देर सोचने के बाद वे बोलीं—अच्छा नहीं लगता था।

"यह तो सच है, पर देखने में कैसा लगता था? क्या तुम्हें अफसोस होता था? क्या तुम नफरत करती थीं—मैंने पूछा।

"कभी सोचा नहीं, पर जब मैं तुम्हारा खोया-खोया चेहरा देखती थी तब यह जरूर सोचती थी कि तुम यह आदत छोड़ क्यों नहीं देतीं—मां ने कहा था।

"तुम्हें मुझ पर गुस्सा भी आता था—मेरे यह पूछने पर मां ने कहा कि थोड़ा-थोड़ा। फिर मैंने पूछा—तुम सब मुझे चिढ़ाने के लिए ही तो मेरे तिल को छूते थे न। मेरे इस प्रश्न के उत्तर में मां ने केवल एक शब्द कहा—शायद!

"अगर यह सच है तो शायद मैं मां और अपनी बहनों के प्यार को याद करके अपने तिल को छूती रही हूं। तिल को छूकर मैं उन सभी लोगों को याद करती थी जिन्हें मैं प्रेम करती हूं। मुझे तुमसे यही बात कहनी है। इस तिल को लेकर शुरू से आखिर तक हमारे बीच गलतफहमी पैदा हो गयी है। तुम्हारे पास रहकर क्या मैं किसी और के बारे में सोच भी सकती थी! बार-बार सोचती हूं कि मेरी यह क्रिया जो तुम्हें इतनी नापसंद थी, क्या उस प्रेम की घोषणा न थी, जो मैं तुम पर शब्दों द्वारा व्यक्त न कर सकी।

"तिल को छूना, तिल से खेलना बहुत ही छोटी-सी बात है। मैं कोई बहाना नहीं बनाना चाहती, पर क्या ऐसा संभव नहीं कि वे सब बातें जो तुम्हें नापसंद थीं, जिन्होंने मुझे एक बुरी पत्नी बनाया, इसी बिंदु से शुरू हुई हों? अपने प्रेम-प्रदर्शन का इससे बेहतर ढंग शायद मुझे सूझा ही न हो, और तुम्हारी अवहेलना ने ही इसे कुरूपता दे दी हो!

"तुम्हें ये सब पढ़ते-पढ़ते ऐसा तो नहीं लगता कि एक दुष्ट पत्नी के साथ अन्याय हुआ है... नहीं, ऐसा नहीं हुआ! यह सच नहीं है। और सच है तो भी ये बातें तुम्हें बतानी तो थीं!

—अनु. सरोज वसिष्ठ

क्षणिकाएं

वस्तु-स्थिति

घर पर आकर
श्रीमतीजी से पूछा
'क्या हो रहा है'
उत्तर मिला
'जी, राशन से लाये हुए
कंकड़ों में से
चावल बीन रही हूं'

आशावादी

एक फटेहाल कवि ने
दूसरे कवि से कहा
'धैर्य रखो
अपने भी अच्छे दिन आ रहे हैं
क्योंकि अब सभी नामी कवि
फिल्म-लाइन में जा रहे हैं'

परिचय

आप
जी हां, मेरे बाप
इन्होंने ही किया है
मुझे पैदा करने का पाप

—विश्वास महाजन

नयी कला

कुरसी मिलने के बाद
जन्म लेती है नयी कला
आदमी सोचना भूल जाता है
कि बुरा क्या है
और क्या भला

—सूर्यकुमार पाण्डेय

प्रार्थना

हे ईश्वर
हमें भी दुम देते
मौका आता
दुम दबाकर
भाग तो लेते

बजट-प्रतिक्रिया

पढ़कर
प्लेटफार्म-टिकट के बढ़े भाव
सी-ऑफ करनेवालों में छा गया सन्नाटा
कि लोक-शिष्टाचार निबाहने से भी गये
इतना महंगा हो गया टा-टा

—इसाक 'अश्क'

विराग

जी नहीं करता
फूल तोड़ूं
तुम्हारे जूड़े में खोंसूं
पौधे के सर उतारूं
तुम्हारे सर चढ़ाऊं
जी नहीं करता
बगिया उजाड़ूं
तुम्हें सजाऊं

—रमेश दुबे

सूर्य की परछाइयां

● शांताराम पारपिल्लेवार

"मैं दफनाया जाना नहीं चाहता। मेरा दाह-संस्कार किया जाए और मेरे अवशेष न्यूयार्क की किसी गगनचुंबी अट्टालिका पर से सूर्योदय के समय दिग्-दिगंत में बिखरा दिये जाएं।" यह पढ़कर पल भर को भ्रम हो जाता है कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपने अंतिम संस्कार के संबंध में ऐसी ही इच्छा व्यक्त की थी, लेकिन वास्तविकता कुछ और है। ये भावुक उद्गार एक अमरीकी युवा कवि के हैं जो आज से लगभग बयालीस वर्ष पूर्व हुआ। कितनी समानता है दोनों की अंतिम इच्छाओं में ! वह अमरीकी युवा कवि था—हैरी क्रासबी !

हैरी क्रासबी की शिक्षा हार्वर्ड विश्व-विद्यालय में हुई। आरंभ से ही उसकी पढ़ाई में रुचि न थी, किंतु परिजनों की इच्छा से उसने अध्ययन किया। दो वर्ष में ही ऊबकर उसने कालेज को तिलांजलि दे दी और पेरिस के एक बैंक में नौकरी कर ली। क्रासबी के जीवन एवं विचार-जगत में एक वस्तु केंद्र-बिंदु-स्वरूप परिल-क्षित होती है, और वह है सूर्य के प्रति उसकी आसक्ति। वान गॉग को भी दिनकर की स्वर्णिम रश्मियों के प्रति अनुराग था। यह अनुराग धीरे-धीरे उन्माद में परिणत होता गया और एक दिन उस महान चित्रकार की आत्मा नश्वर शरीर से मुक्त हो रवि के रश्मि-पथ पर चलकर अपने आराध्य से जा मिली।

रवि-किरणों के प्रति ऐसा ही अटूट अनुराग था हैरी क्रासबी का। इसके साथ-साथ क्रासबी नीत्शे के दर्शन से प्रभावित हुआ। उसका विचार था कि जिस दिन हमारा जन्म हुआ उसी दिन हमारी मृत्यु भी हो गयी। उमर खय्याम के शब्द 'वह फूल जो एक बार खिलता है सदा के लिए मर जाता है', क्रासबी का जीवन-दर्शन बने। इस जीवन-दर्शन से जीवन एक बोझ बनने लगता है। चूंकि इस बोझ से मुक्ति मृत्यु द्वारा ही संभव है अतः मनुष्य मृत्यु की कामना करने लगता है। क्रासबी सदा मृत्यु के लिए तत्पर रहता था।

जीवन के तीस वसंत देखने से पूर्व ही जीवन के प्रति उसकी इतनी उदासी-नता का आखिर कारण क्या था? सिद्धार्थ के संबंध में प्रख्यात है कि उन्होंने जराग्रस्त मनुष्य की व्याधियों, वेदना तथा मृत्यु में जीवन की परिणति देखी। उन्होंने मानव-जीवन की इन स्थितियों पर चिंतन कर 'बोध' (ज्ञान) प्राप्त किया जिससे वे 'बुद्ध' कहलाये, किंतु उनका चिंतन बौद्धिक

था। क्रासबी ने भी संभवतः ऐसा ही कुछ देखा जिसने उसके विचारों को आंदोलित किया किंतु उसकी दृष्टि में बौद्धिक चिंतन एवं विश्लेषण के स्थान पर थी सम्वेदना। उसने युद्ध की विभीषिका और सैकड़ों मृत सैनिक देखे। उनका चित्र उसके मानस-पटल पर अमिट हो गया।

ज्वॉयस वेलेरी प्रूस्त और इलियट से क्रासबी को कला का धर्म (रिलीजन ऑव आर्ट) मिला किंतु उसके मन में इस धर्म का अंकुरण बहुत पहले हो चुका था। 'मैं मेधावी हूं' यह विचार उसके मन में दृढ़ होता गया और इसी की प्रेरणा पर वह इटली, स्पेन आदि होता हुआ अफरीका के सुदूर मरुप्रदेश में जा पहुंचा, शहरों के कोलाहल से बहुत दूर; किंतु सिद्धार्थ के समान उसकी आत्मा को जिस शांति की खोज थी वह न मिली। उसे लौटना पड़ा।

क्रासबी के चिंतन, मनन, लेखन एवं मानसिक परिवर्तन का अधिकांश संबंध पेरिस से है। इस नगर की अंधेरी बदनाम गलियां, नाइट क्लबों की रंगीन रातें, और एक मीठी खुमारी में अर्ध-चेतन सा जीवन मानो उसके जीवन का प्रधान अंग बन गये। यहीं पर उसकी महान कृति 'सूर्य की परछाइयां' (शैडोज ऑव द सन) का सूत्रपात हुआ। इस प्रकार से यह कृति उसकी डायरी ही है जिसमें उसका अध्ययन, चिंतन एवं कार्यों का चित्रण, विशद रूप से किया गया है। आस्कर वाइल्ड की 'डोरियन ग्रे' पढ़ने के बाद उसने लिखा—**'शरीर एक बार पाप करता है और वहीं उसकी इति हो जाती है क्योंकि शुद्धीकरण का एक ही मार्ग है। किसी लालसा के आगे नत हो जाना ही उससे मुक्ति है।'** इस विचारधारा से प्रभावित क्रासबी प्रायः कहता—**'खतरे में भी जियो और हर मौके को झपट लो'** (लिव डेंजरसली ऐंड सीज द डे)। ख्वाजा अहमद अब्बास के अनुसार नेहरूजी ने भी 'लिव डेंजरसली' शब्द
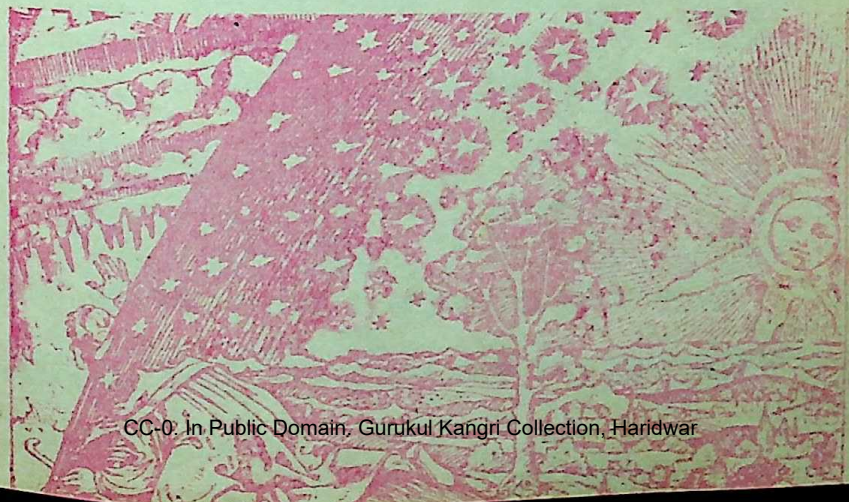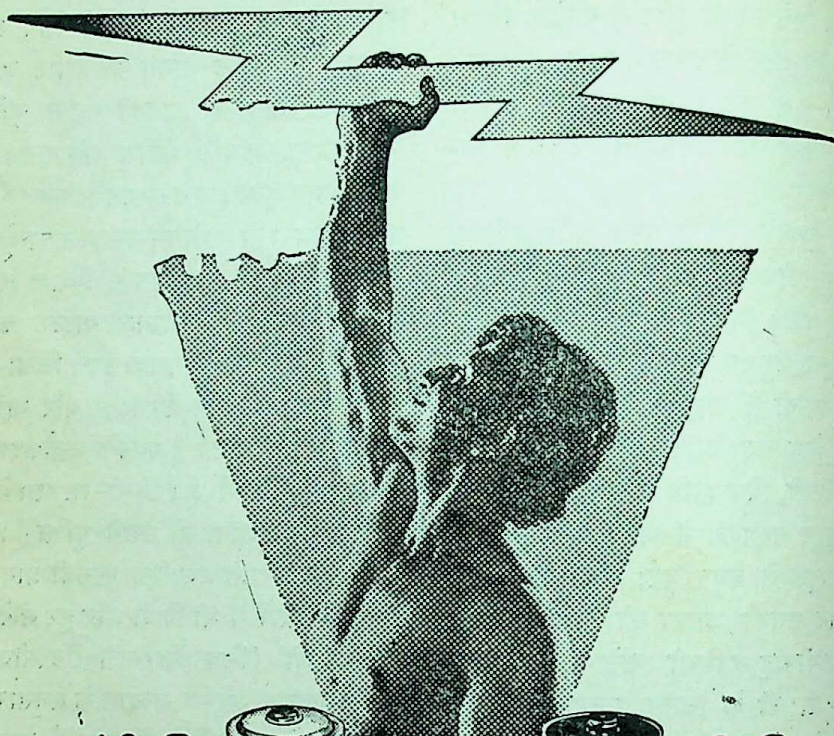
का प्रयोग कई बार किया है। इससे प्रतीत होता है कि वे क्रासबी की विचारधारा से प्रभावित थे।

कला-उपासक के जीवन में भी धर्म, श्रद्धा तथा उपासना का अंश तो रहता ही है। क्रासबी का धर्म थी कला, श्रद्धा थी कविता और आराध्य था सूर्य। उसी के शब्दों में—**'मेरी केवल सूर्य में श्रद्धा है क्योंकि वही सत्य और शाश्वत है'।** उसका दृढ़ विश्वास था कि सूर्य को आराध्य मानकर उसमें अपनी आत्मा को एकाकार करने पर ही जीवन सफल होगा। सूर्य के प्रति उसके इस अनुराग का उन्मादावस्था तक पहुंचने का एक प्रमाण यह भी है कि उसने अपने संपर्क में आनेवाली प्रत्येक महिला का नामकरण सूर्य के नाम पर ही (सूर्य-कन्या, सूर्यमुखी आदि) किया! कारण स्पष्ट था, सूर्य के प्रति उसका अनुराग।

क्रासबी की जीवन-नाटिका के अंतिम क्षण अशांतिपूर्ण रहे। विश्व के कोने-कोने से आकर पेरिस में एकत्रित साहित्यकारों, चित्रकारों आदि का अपना अलग दृष्टिकोण था। इस वर्ग के सदस्य दिन-रात रंगीनियों में रत रहा करते थे। समाज, देश-काल तथा विश्व की गतिविधियों में इनकी रुचि नहीं थी। आज भी इस वर्ग को भटकी हुई पीढ़ी (लॉस्ट जेनरेशन) के नाम से जाना जाता है। क्रासबी इस पीढ़ी की मुख-पत्रिका का कुछ समय तक प्रधान संपादक भी रहा किंतु पत्रिका समाज में स्थान न बना सकी और कुछ समय बाद बंद हो गयी। इसके साथ - साथ इस पीढ़ी के कलाकारों को जब चारों ओर से गहरी निराशा ही हाथ लगी तब सबके सब हारे हुए जुआरी की तरह स्वदेश लौटने लगे। क्रासबी भी अछूता न रहा।

हैरी क्रासबी के जीवन के कुछ प्रसंग बड़े रोमांचक हैं। सन १९२८ में मृत्यु से कई वर्ष पूर्व उसने अपना एक वसीयतनामा (जिसे मृत्यु-लेख कहना उचित होगा) तैयार किया। उसने स्वयं अपनी मृत्यु का दिन ३१ अक्तूबर, १९४२ निश्चित किया और उसका नाम रखा सूर्य - मोक्ष (सन डेथ), अर्थात आत्मा का सूर्य में विलय। मृत्यु की तिथि निश्चित करने के पश्चात उसने अपने मित्र की सहायता से आत्महत्या की एक योजना बनायी और मृत्यु के पश्चात उसका अंतिम संस्कार किस प्रकार किया जाए, यह भी अपने वसीयतनामे में अंकित कर दिया। किंतु वह संतुष्ट नहीं हुआ। न जाने क्यों उसे संदेह-सा हो गया कि लोग उसे मरने भी न देंगे, अतः उसने एक अन्य योजना बनायी। उसने तय किया कि मृत्यु-तिथि को बिना किसी को बताये वह अकेला वायुयान द्वारा किसी अज्ञात दिशा की ओर अनंत यात्रा आरंभ कर देगा। संसार के कोलाहल से परे किसी सुनसान वन-प्रदेश में विमान गिरा दिया जाएगा। विस्फोट होगा और वायुयान के साथ मेरे शरीर का दाह-संस्कार हो ही जाएगा। शरीर

के अवशेष स्वतः पवन पर सवार होकर दिग् - दिगंत में विलीन हो जाएंगे और शरीर के बंधन से मुक्त आत्मा रवि के रश्मि-पथ पर चलकर उसमें विलीन हो जाएगी। किंतु विधाता की योजना कुछ और थी।

स्वेच्छा से मृत्यु-तिथि निश्चित करने के पश्चात मृत्यु की प्रतीक्षा में दिन उसे पहाड़ से लगने लगे। प्रतीक्षा की इन बोझिल घड़ियों में प्रतिदिन प्रातः आंख खुलते ही उसे ऐसा प्रतीत होता मानो वह मृत्यु की आंखों में ही झांक रहा हो। उसके व्यवहार एवं चेष्टाओं से मित्रों को भी संदेह-सा होने लगा। प्रतीक्षा की इन उबा देनेवाली घड़ियों से तंग आकर वह पेरिस गया किंतु भटकी हुई पीढ़ी तथा उसकी पत्रिका 'ट्रांजिशन' का स्थगन फिर उसके मर्म को उत्पीड़ित कर गया। किंतु अब की बार वह १९२८ में पेरिस से एक बदला हुआ जीवन, उत्साह एवं प्रफुल्लता लिये लौटा।

१० दिसंबर, १९२९ की एक मादक संध्या में...

क्रासबी ने अपने एक मित्र से उसके कमरे की चाबी ली और प्रफुल्लता एवं उत्साह में कमरे की ओर चल पड़ा। कुछ समय बाद जब मित्र ने फोन किया तब बड़ी देर तक घंटी बजने पर भी कोई प्रत्युत्तर न मिला। मित्र को कुछ घबराहट हुई। वह तुरंत कमरे की ओर चल पड़ा। जोर - जोर से खटखटाने पर भी जब द्वार न खुला तब उसे तोड़ा गया। अत्यंत हृदयविदारक एवं अविश्वसनीय दृश्य था।

क्रासबी एक प्रतिष्ठित महिला की बाहों में मृत पाया गया। आज भी यह घटना रहस्य है। संभव है, मानव-जाति के उस पराजित देवदूत के पास संसार को सुनाने के लिए कुछ न हो, अथवा उसने सुनाने की आवश्यकता ही न समझी हो क्योंकि उसे जो कुछ कहना था, वह तो अपनी कृति 'सूर्य की परछाइयां' में पहले ही कह चुका था!

हेमिंग्वे को 'भटकी हुई पीढ़ी' (लॉस्ट जेनरेशन) का जन्मदाता माना जाता है। क्रासबी अपने क्षण - भंगुर जीवन से मानो उस पीढ़ी का आलोक-स्तंभ बन गया। इस पीढ़ी का ही एक लेखक मालकम कैली क्रासबी की सहनशीलता के विषय में विशेष रूप से लिखता है—

'वह कमजोर नहीं था। वास्तव में तो उसके अंतर में निहित दुर्दांत शक्ति ने ही उसके प्राण लिये। क्या कोई कमजोर व्यक्ति चिंतन की उन गहराइयों तक पहुंच सकता है जहां क्रासबी की मानस-भूमि थी? कमजोर तो केवल जी भर सकता है। अतः सूर्य का यह अनन्य प्रेमी, अपूर्व उपासक तथा उसी का वरद पुत्र एक दिन स्वयं स्वेच्छा से उसी में विलीन हो गया और पीछे छोड़ गया – सूर्य की परछाइयां।'

—पी. डब्ल्यू. आई. हरदा (दक्षिण)
होशंगाबाद (म. प्र.)

व्यंग्य

परीक्षा भवन की नयी आचार संहिता

• सूर्यबाला

छात्र-संघ के नवनिर्वाचित, यूनियन-लीडर के पद से दिये गये भाषण की प्रतिलिपि—

सहयोगियो ! सब से पहले इस पद को सुशोभित करने का दायित्व मुझे सौंपने के लिए हार्दिक धन्यवाद ! मैंने आप लोगों को भड़काते समय, क्लास से वाक्-आउट करने के लिए ललकारते समय, लेक्चररों और डीन का घेराव करवाते समय तथा ईंट-पत्थरों की थोक एवं फुटकर सप्लाई करते समय, अपने भविष्य के बारे में सोचा अवश्य था किंतु केवल किसिंगर-पद तक ही। आप मेरे साहसिक कारनामों से प्रभावित होकर मुझे एकदम निक्सनीय पद का अधिकारी बना देंगे, इसकी आशा न थी। बहरहाल, ईश्वर और छात्र जो करते हैं, अच्छा ही करते हैं। आप प्रभावित हो गये, अच्छा ही हुआ वरना मैं छात्रसंघ के अध्यक्ष-पद से भाषण देने के बदले इस समय रोजगार-दफ्तर के बाबू को, बगल में दरख्वास्त दबाये, लस्सी पिला रहा होता।

हां, तो आज हम सब जो यहां एकत्र हुए हैं, उसका कुछ मकसद है। हमेशा हम छात्र किसी-न-किसी विशेष मकसद से ही एकत्र होते हैं, यह तो अब पुलिस भी भलीभांति जान गयी है। और जब हमारे और पुलिस के मकसद टकराते हैं तो बहुत-सी सरकारी, गैर-सरकारी समस्याएं

चुटकी बजाते हल होने लगती हैं। हम यह सोचकर ही कदम आगे बढ़ाते हैं कि आज के छात्र कल के शासक नहीं, वरन आज के छात्र आज के ही शासक हैं। (तालियां)

दोस्तो, हमारी तबाही की कहानी आज से नहीं, तब से प्रारंभ होती है जब जिंदगी भर न भूलनेवाली बरसात की रात में आचार्य लोग दो मुट्ठी चने देकर सुदूर जंगल से लकड़ियां लाने के लिए हमें भेज दिया करते थे। और इतनी मशक्कत के बाद हम छात्र अपने हठवश जो कुछ थोड़ा बहुत सीख पाते, उसे जाते समय गुरु-दक्षिणा के रूप में अंगूठा कटवाकर ले लिया जाता था। तानाशाही का इससे बड़ा उदाहरण कहीं मिल सकता है भला? और आज, जब हम एकलव्य के बेताल को कंधे से लटकाये, हाथ में द्रोणाचार्य-वाला चाकू लिये, हर शिक्षक के पास एकलव्य का कटा अंगूठा ढूंढ़ रहे हैं तब हमें अनुशासनहीन बताया जा रहा है। एकलव्य परममूर्ख था, जो उसने अपने अंगूठे के रूप में आनेवाली संतति की नाक कटाकर रख दी। खैर . . . अब हम दिखा देना चाहते हैं कि छात्र, जो मेड़ तोड़कर बहते पानी को रोक सकते हैं चलती ट्रेनें और परीक्षाएं भी रोक सकते हैं। हमारे पास एकलव्य और आरुणि की संक्रमित क्षमता है, केवल उसका उपयोग हम आधुनिक संदर्भ में करते हैं। हमने सब धर्मों में श्रेष्ठ 'क्षात्र-धर्म' को ही अपना धर्म मान लिया है और इस धर्म तथा इस धर्म में सहायक सामग्रियों की सहायता से हम शिक्षा में समाजवाद लाने की जीतोड़ कोशिश कर रहे हैं। सिनेमा-हॉलों से लेकर रेलवे प्लेटफार्म और चौराहों की पान की दूकानों तक —हर विद्यार्थी इस दिशा में सजग है। विद्यालय में समाजवाद लाने का दायित्व कुछ अधिक कर्मठ सहयोगियों को सौंपा गया है। ये इस बात पर कड़ी दृष्टि रख रहे हैं कि विद्यालयों में चल रही परीक्षाएं समाजवादी एवं सुविधावादी सिद्धांतों के अनुरूप हों।

सारे दायित्वों के बावजूद हम

अपने प्रमुख उद्देश्य से अपरिचित नहीं कि हमें परीक्षा में पास होना है। सो, हम स्वयं और अपने सहयोगी बंधुओं को पास करा-कर ही रहेंगे। **(तालियां)**

इस दृष्टि से मैंने सर्वसम्मति से परीक्षार्थी एवं परीक्षकों के लिए एक संशोधित आचार-संहिता बनायी है, जो छात्रों एवं परीक्षकों, दोनों पर समान रूप से लागू होगी। आचार-संहिता इस प्रकार है :

(१) प्रश्नपत्र, उस प्रश्नपत्र की सही और सटीक प्रतिलिपि होंगे, जिसे यूनियन-लीडर सहित वरिष्ट छात्र नेताओं ने डीन का घेराव कर उन्हें इस मांग के साथ दिया था कि परीक्षा में यही प्रश्न पत्र दिये जाएंगे।

(२) परीक्षा भवन में प्रवेश के संबंध में कोई प्रतिबंध नहीं माना जाएगा। पास होने की जिम्मेदारी हमारी है और हम उसके प्रति सजग हैं।

(३) प्रश्नपत्र देखने के पश्चात् यदि विद्यार्थी चाहें तो उसमें संशोधन की प्रार्थना कर सकते हैं। संशोधन की स्वीकृति का अधिकार समान रूप से सभी निरीक्षकों को प्राप्त होगा, चाहे साहित्य की कक्षा में गणित का ही निरीक्षक क्यों न हो; नियम समान रूप से लागू होगा।

(४) परीक्षार्थी उत्तर-पुस्तिका के एक तरफ लिखे, चाहे दोनों तरफ, अथवा किसी भी तरफ नहीं, इसका उसे मिलने-वाले प्राप्तांकों पर कोई असर नहीं पड़ना चाहिए।

(५) आज का, सामाजिक, राज-नीतिक, यानी हर दृष्टि से सक्रिय छात्र लगातार तीन घंटे परीक्षा भवन में नहीं बैठ सकता, अतः एक सामाजिक प्राणी के रूप में वह परीक्षा भवन के बाहर आवा-गमन कर सकता है।

(६) यह सुविधा निरीक्षकों को भी समान रूप से प्राप्त होगी। छात्र नेता इसके लिए सहर्ष अनुमति देगा।

(७) परीक्षार्थी यदि किसी विवादा-स्पद प्रश्न पर परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करना चाहें तो उन्हें इसका अधि-कार होगा। हम दावे के साथ कहते हैं कि
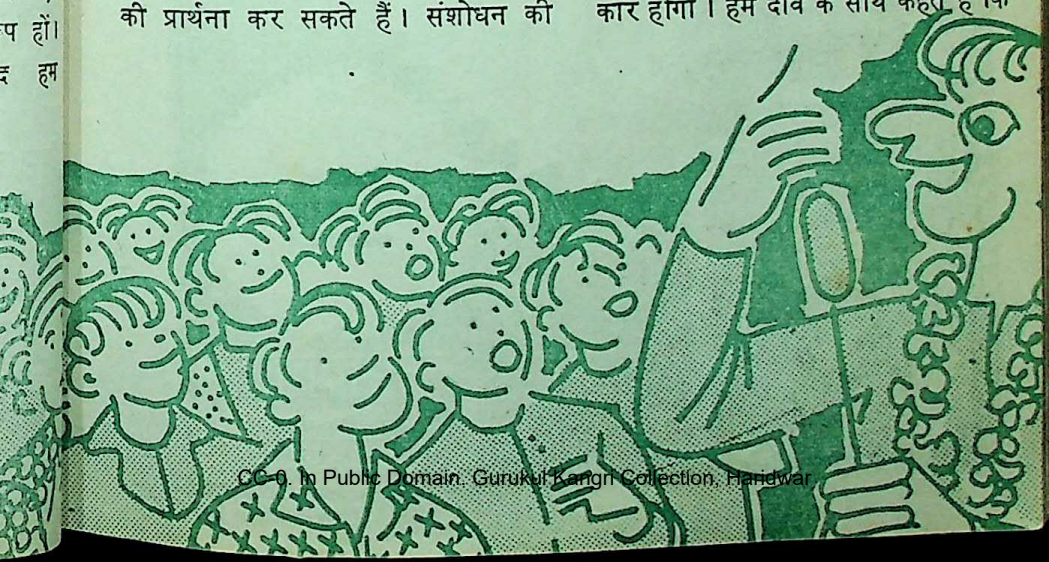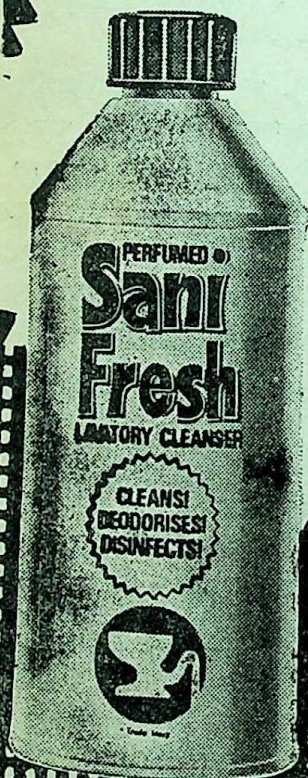
इससे निरीक्षकों का कोई अहित न होगा। संघर्ष की स्थिति तभी आएगी, जब निरीक्षक या पुलिस हस्तक्षेप की कोशिश करेंगे।

(८) प्रत्येक परीक्षार्थी के चारों ओर इतना स्थान हो कि वह घर से लायी गयी संदर्भ-पुस्तकों एवं गेस पेपर्स को रख सके एवं आवश्यकता पड़ने पर निरीक्षक महोदय से अपने विषय से संबद्ध कोई भी पुस्तक मांग सके। परीक्षार्थी की जरूरत की पुस्तक निरीक्षक उसे हर स्थिति में उपलब्ध कराएगा।

(९) बोर्ड एवं विश्वविद्यालयों की ओर से प्रत्येक विषय के परीक्षकों के नाम एवं पतों की लिस्ट परीक्षार्थियों को निःशुल्क वितरित की जानी चाहिए। इससे शिक्षक एवं विश्वविद्यालयों के अधिकारी उन खतरों से सहज ही मुक्त हो सकेंगे, जो उन्हें आयेदिन त्रस्त किये रहते हैं। तब परीक्षार्थी सीधे तौर पर अपने परीक्षकों से ही निपट लेंगे।

(१०) परीक्षार्थी को अधिकार होगा कि वह अनुशासन की रक्षा के लिए छुरी, चाकू - जैसा कोई भी एक हथियार रख सकता है। हम विश्वास दिलाते हैं कि इनका उपयोग हमारे सहयोगी आक्रामक नहीं, वरन सुरक्षात्मक रूप में करेंगे, जिस तरह पुलिस करती है।

(११) प्रत्येक विषय के प्राप्तांक, विद्यार्थी को सूचित कर, उसकी अनुमति के पश्चात ही, परीक्षाफल के रूप में घोषित किये जा सकेंगे। बिना भेद-भाव एवं पक्षपात की नीति अपनाये सभी परीक्षार्थियों को प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करना अनिवार्य होगा क्योंकि हम शिक्षा के क्षेत्र में प्रथम श्रेणी का समाजवाद लाना चाहते हैं।

(१२) अंतिम चेतावनी के रूप में हम परीक्षकों, निरीक्षकों, उपकुलपति तथा पुलिस से अपील करते हैं कि उपर्युक्त आचार-संहिता का शांतिपूर्ण ढंग से पालन होने पर, हम किसी प्रकार की असामाजिक स्थिति उत्पन्न किये बिना अनुशासन बनाये रखेंगे। साथ ही समस्त अधिकारीगण सहित, पुलिस-परिवार के कुशल-क्षेम को अपना दायित्व समझेंगे। (तालियां)

—फैक्ट्री इंजीनियर ग्लैक्सो लेबोरेट्रीज,
पो. बा. १, अलीगढ़

एक दूकानदार ने अपनी पत्नी को भेजकर पड़ोसिन से एक किलो आटा मंगाया। दूसरे दिन ही पड़ोसिन ने उससे एक किलो चीनी मांग ली। दूकानदार की ईमानदारी देखने के लिए पड़ोसिन ने चीनी तौली तो वह तौल में कम थी। वह धड़ल्ले से उसके घर जा पहुंची और बोली, "यह चीनी तो किलो से बहुत कम निकली है।"

दूकानदार की पत्नी बोली, "कम कैसे हो सकती है? कल तुम्हारे यहां से जो आटा आया था उसी से तो तौलकर चीनी भेजी है।"

ऊर्ध्व शैल-मंदिरों में देव-दर्शन

● सूरज सराफ

प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर, पर्वतीय स्थलों में निर्मित, जम्मू के पवित्र देव-मंदिर पुण्य तीर्थ ही नहीं, प्राचीन भारत की श्रेष्ठ स्थापत्य एवं उत्कृष्ट मूर्तिकला के प्रतीक हैं। इनमें से कुछ मंदिरों का इतिहास बड़ा समृद्ध है। वह किसी भी पुरातत्त्ववेत्ता के लिए ज्ञानकोश सिद्ध हो सकता है।

जम्मू-स्थित तीर्थस्थानों में वैष्णव देवी की दूर-दूर तक ख्याति है। यों तो वैष्णव देवी के दर्शनार्थ वर्ष भर यात्री आते रहते हैं, पर नवरात्रों के अवसर पर विशेष भीड़ होती है। यह यात्रा प्रतिवर्ष प्रथम नवरात्र से प्रारंभ होती है।

वैष्णव देवी, महालक्ष्मी, महाकाली तथा महासरस्वती का समन्वित रूप मानी जाती हैं। यात्रीगण एक पर्वतीय गुहा के भीतर एक चबूतरे पर स्वयं-निर्मित तीन पिंडिकाओं के रूप में इन तीनों देवियों का पूजन करते हैं। प्राकृतिक तत्त्वों द्वारा स्वयं-निर्मित ये पाषाण पिंडिकाएं इतनी पूर्ण हैं कि लगता है जैसे, मानव-निर्मित हों।

गुहा में जाने के लिए पाषाण-संधि का प्रवेश-द्वार इतना संकीर्ण है कि भीतर रेंगकर प्रविष्ट होना पड़ता है। भीतर भी यात्रियों को चौकन्ने होकर चलना पड़ता है, ताकि सिर कहीं चट्टानों से न टकरा जाए। यद्यपि गुहा का ऊपरी भाग काफी चौड़ा है, फिर भी गुहातल से चट्टान एक ओर इतनी तिरछी है कि सीधे चल पाना कठिन है। लगभग सौ फुट अंदर चलने पर यात्री लक्ष्य पर पहुंचता है।

गुफा के भीतर कुछ दूर छत पर अनेक विभिन्न प्रकार की देवाकृतियां हैं। सामान्यतः यात्री इनकी उपेक्षा कर देते हैं, विशेषकर उन दिनों में जब यात्रियों की संख्या काफी बढ़ जाती है। तब प्रत्येक यात्री को शीघ्रता से वैष्णव देवी के दर्शन कर बाहर आना पड़ता है ताकि बाहर एकत्र अन्य दर्शनार्थी भी भीतर जा सकें।

वैष्णव देवी की गुफा से भी अधिक रहस्यपूर्ण शिव-खोड़ी की गुफा है। इस गुफा के विषय में जम्मू-क्षेत्र के बाहर बहुत कम लोग जानते हैं। जैसा कि गुफा के नाम से ही स्पष्ट है, यह शिलावेश्म शिव का निवास-स्थल भी माना जाता रहा है। यह गुफा वैष्णव देवी की गुफा से लगभग तीस मील की दूरी पर है। लगभग तीन
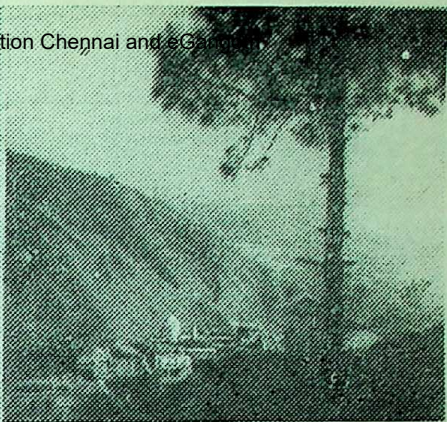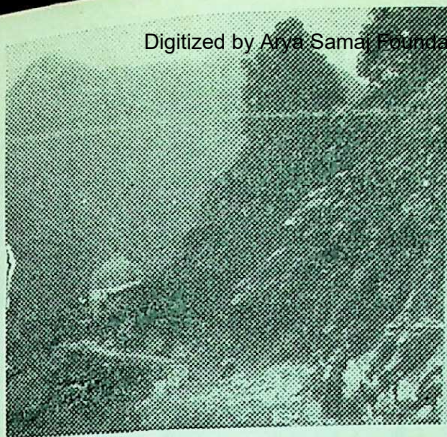
वैष्णव देवी के मार्ग पर अधक्वारी का मोहक दृश्य

फरलांग लंबी इस गुफा के भीतर रेंगकर चलना पड़ता है। कोई दो फरलांग की दूरी पर साठ फुट लंबा-चौड़ा एक भव्य आगार है। आगार में तीन फुट का एक शिव-लिंग है। इसकी पूजा के लिए शिव-रात्रि के अवसर पर हजारों तीर्थयात्री आते हैं। आगार की छत से जल निरंतर टपकता रहता है। छत पर अनेक पवित्र देव-विग्रह हैं, जो शायद टपकते जल में मिश्रित कैलशियम कारबोनेट की करामात हैं।

यह गुफा केवल. इस आगार तक आकर समाप्त नहीं हो जाती, अपितु इसके काफी आगे तक चली जाती है। नाना कारणों से कोई भी व्यक्ति इस गुफा के आगे नहीं जाता।

जम्मू के अन्य शैल-मंदिरों में शुद्ध महादेव के शिवमंदिर तथा भद्रवाह के वासुकि नाग के मंदिर (पांच हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित), बूढ़ा अमरनाथ, सुकराला देवी (तीन हजार पांच सौ फुट की ऊंचाई पर स्थित) तथा बिलावर के मंदिर प्रसिद्ध हैं। यहां पर विभिन्न धार्मिक पर्वों पर हजारों तीर्थ-यात्री आते हैं।

२४,४०० फुट की ऊंचाई पर मेघाच्छादित तथा तुषारमंडित पर्वतों के मध्य स्थित कप्लाश झील भी यात्रियों के आकर्षण का एक केंद्र है।

यहां पहुंचने वाले यात्रियों का विश्वास है कि यात्रा के इस अवसर पर झील में अनेक सिरोंवाला एक नाग प्रकट होता है। जो यात्री इसके दर्शन कर पाता है, उसकी आकांक्षाएं पूरी हो जाती हैं।

जम्मू शहर से पचास किलोमीटर दूर सिखों का सबसे प्रसिद्ध गिरि देव-स्थल डेरा बाबा नानक है। यह गुरुद्वारा बंदा वैरागी की स्मृति में बनाया गया है।

जम्मू के इन ऊर्ध्व शैल-मंदिरों में वर्षभर लाखों श्रद्धालु अपनी धार्मिक-पिपासा की तुष्टि के लिए तथा देवी-देवताओं के दर्शन-लाभ के लिए आते रहते हैं।

—पत्रकार, जम्मू

शेवर स्विश और बदमाशपुर के डाकू,

बदमाशपुर के डाकुओं ने बैंक लूटने के इरादे से एक छोटे से शहर को घेर लिया है। उनका सरदार बदनाम डाकू कालू है।

तारें काट दी गई हैं। पुलिस कोई बाहरी मदद नहीं मँगवा सकती। अब तो बस शेवर स्विश का ही सहारा है; मगर...
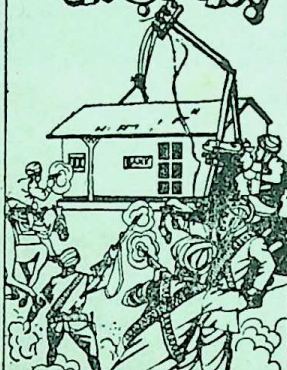
शेवर स्विश तो अपना आत्मविश्वास खो बैठा है। वजह! उसने शेव जो नही की! अब शहर में अपना ही राज समझो!

मुझे जल्द ही कुछ करना होगा।

ढप-ढाप!

अगर स्विश बहुत जल्द शेव न कर सका तो मामला हाथ से निकल जायेगा।

आत्म विश्वास जगाने के लिये पहले स्विश से शेव! तापक्रिया से सख्त किये हुये ये स्टेनलेस ब्लेड चलते तो अधिक हैं ही, पर इनसे दाढ़ी भी क्या खूब बनती है

यह हमेशा की बात है:
स्विश से दाढ़ी बनाने वाले को कोई मात नहीं दे सकता।

mcm/cl/14a hin

अजीब हैं फ्रांसीसी भी

• डेविड शून्ब्रुन

फ्रांसीसी अनन्य देशभक्त हैं, लेकिन वे अपना धन विदेशों में लगाकर खुश होते हैं। फ्रांसीसी परिवार में तो कंजूसी की हद तक किफायतशारी करेगा, लेकिन राष्ट्रीय धन को खुलेहाथों खर्च करने में संकोच नहीं करेगा। सभी फ्रांसीसी शांतिपूर्ण वातावरण में जीना चाहते हैं, लेकिन फ्रांस एक ऐसा देश है जिसने दूसरे देशों की अपेक्षा सबसे ज्यादा समय युद्धों में बिताया है।

यह विरोधाभास उन लोगों को उलझन में डाल सकता है जो यह नहीं जानते कि फ्रांसीसी लोग जो कहते हैं, वह सब करते नहीं हैं। अगर आप फ्रांसीसियों की बातों पर विश्वास करें, तो आप कहेंगे कि उनकी राजनीति में बिलकुल ही दिलचस्पी नहीं है। फिर भी दस में से आठ व्यक्ति मत डालने जाते हैं। वे प्रायः उन्हीं नेताओं और राजनीतिक दलों को सत्ता सौंपते हैं, जिनसे वे घृणा करते होते हैं।

इन विरोधाभासों का कारण है। फ्रांसीसी व्यक्ति लोगों की नजरों में मूर्ख दिखायी देने से घृणा करता है। इससे
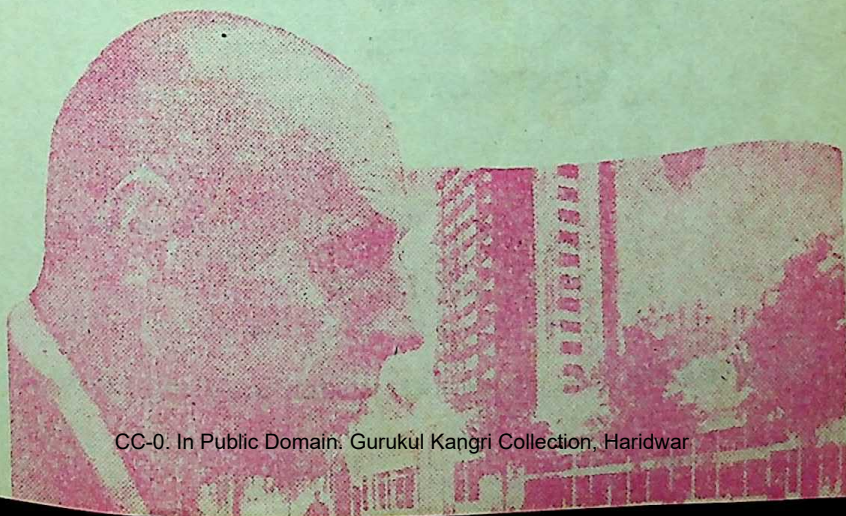
भी अधिक घृणा वह इस बात से करता है कि कोई उसे मूर्ख बनाये, इसलिए वह दूसरों के सामने दिखावा करता है कि उसका किसी चीज या व्यक्ति पर विश्वास नहीं है। इस प्रकार वह खुद को ही मूर्ख बनाता है, जो कि कम दुःखद बात है।

वर्तमान फ्रांसीसी समाज में एक बौद्धिक व्यक्ति 'हीरो' के समान है। वह बड़े जोश-खरोश से राजनीति में हिस्सा लेता है और फ्रांसीसी राजनीतिज्ञ बौद्धिक जीवन में हिस्सा लेता है। और किसी देश में ऐसा नहीं है।

बौद्धिकता के प्रति यह सम्मान फ्रांसीसियों का सबसे बड़ा अवगुण भी है। फ्रांस में बुद्धिवाद अपनी चरम सीमा को पहुंचकर एक तरह की हास्यास्पद विसंगति बन गया है। स्वयं को पूर्ण रूप से स्वतंत्र विचारवान कहलानेवाला फ्रांसीसी अंततः अपने सिद्धांतों का गुलाम रह गया है। एक बार एक फ्रांसीसी राजनेता ने कहा था कि वह कोई सैद्धांतिक समझौता करने के बजाय उस देश को खो देना बेहतर समझता है जो उसके देश के अधीन हो। इसी 'सिद्धांतवाद' की बदौलत फ्रांस बहुत से देशों से हाथ धो बैठा है।

समाज के हर एक क्षेत्र में यह बुद्धिवाद है। वेटर, टैक्सी-ड्राइवर, या कोई भी अन्य तथाकथित छोटा व्यक्ति हो, वह

ऐसी गरमा-गरम बहस छेड़ सकता है कि शायद ही किसी अन्य देश का व्यक्ति उसका मुकाबला कर सके। सबसे ज्यादा अराजकतावादी और चढ़-चढ़कर बातें करनेवाले टैक्सी-ड्राइवर ही हैं। मैंने जानबूझकर कई टैक्सी-ड्राइवरों को बहस के लिए उत्तेजित किया है।

एक बार आधी रात के वक्त मैं एक टैक्सी में घर जा रहा था। सामने लाल बत्ती देखकर ड्राइवर ने टैक्सी की रफ्तार धीमी की, और फिर एकाएक आगे बढ़ गया। कुछ देर के बाद उसने फिर ऐसा ही किया। जब मैं टैक्सी से उतरा तब भाड़ा देते हुए उससे बोला, "कानून तोड़ने और जिंदगी को खतरे में डालने के लिए तुम्हें शर्म आनी चाहिए।"

उसने हैरानी से मेरी ओर देखा, बोला, "शर्म आनी चाहिए? मुझे अपने पर गर्व है जनाब! आपने कभी सोचा है कि लाल बत्ती का क्या मतलब होता है?"

"वह रुकने के लिए संकेत करती है, और बताती है कि दूसरी तरफ से गाड़ियां आ रही हैं," मैंने कहा।

ड्राइवर ने झट कहा, "यह बात आधी सही है। लाल बत्ती रुकने के लिए जरूर कहती है, लेकिन यह नहीं कहती कि दूसरी तरफ से गाड़ियां आ रही हैं। जरा देखिए तो, क्या कोई गाड़ी आ रही है? मैंने गाड़ी की रफ्तार धीमी करके बड़ी सावधानी से देखा था। दायें-बायें से कोई गाड़ी नहीं आ रही थी, इस पर भी क्या मैं किसी गूंगे जानवर की तरह रुक जाता . . . नहीं साहब, मैं आदमी हूं, मशीन नहीं . . . ईश्वर ने मुझे सोचने-समझने और फैसला करने की शक्ति दी है। अगर मैं अपने लिए इन लाल-हरी बत्तियों को सोचने का मौका दूं तो यह कुदरत के खिलाफ कदम उठानेवाली बात होगी . . ." फ्रांसीसी बौद्धिकता की मौलिकता लाजवाब है!

एक और फ्रांसीसी व्यक्ति, जो अपने को मशीन नहीं समझता है, पेरिस में एक रेस्तरां चलाता है। नाम है, राजर द फ्राग। वह छोटे से कद का व्यक्ति है और उसकी छोटी-छोटी चमकीली आंखें हैं। काफी रात बीत जाने पर, जब ग्राहकों की भीड़ कम हो जाती है, राजर किसी ग्राहक के सामने बैठकर शराब पीता हुआ बतियाने लगता है। तब उसका असली व्यक्तित्व उभरता है—मेहनती और सदाचारी। फिर पता लगता है कि वह एक अनाथालय चलाता है, अपना अधिकांश समय और धन अनाथ बच्चों के लिए खर्च करता है और अपने दोस्तों और ग्राहकों को इस बात के लिए मजबूर करता है कि वे उन बच्चों को उपहार भेजें।

एक रात मैंने उससे शिकायत की कि वह शनिवार को रेस्तरां बंद क्यों रखता है जबकि खुद उसे भी काफी नुक्सान उठाना पड़ता है।

"कैसा नुकसान ? मैं इतना कमा रहा हूं कि मेरे परिवार और अनाथालय के बच्चों का बहुत अच्छा गुजारा हो रहा है। ज्यादा पैसे क्यों कमाऊं ? डॉक्टर की जेब भरने के लिए ? आप यह क्यों नहीं सोचते कि मुझे एक या दो रातें आराम करने के लिए चाहिए ? आप किसी और रेस्तरां में जाकर खा-पी सकते हैं। इस तरह आपके दिल में मेरे रेस्तरां की कद्र और ज्यादा बढ़ेगी। यह रेस्तरां एक तरह से मेरा घर है, जहां मैं अपने दोस्तों-साथियों का स्वागत करता हूं। यह पैसे कमाने का कारखाना नहीं है।"

फ्रांसीसी लोग व्यक्तिवादी हैं। यह उनका व्यक्तिवाद ही है, जो किसी स्थायी सरकार को अस्तित्व में नहीं आने देता।

इस व्यक्तिवाद का कारण क्या है ?

सदियों से फ्रांसीसी अपने घरों, अपनी जायदाद, अपनी स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने के लिए विदेशी लोगों से ही नहीं, अपने देशवासियों से भी लड़ते आये हैं। वे पीढ़ी-दर-पीढ़ी हुकूमत में, यहां तक कि समाज में भी अविश्वास करते आये हैं।

फ्रांसीसियों के इस 'अनागरिक' रवैये के संबंध में मैंने एक बार पेरिस में प्रमुख व्यक्तियों से बात की, जो एक पार्टी में आये थे। उन्होंने बताया कि एक फ्रांसीसी में यद्यपि नागरिक चेतनता का अभाव है, लेकिन वह बुरा नागरिक नहीं है। फ्रांसीसी बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि राष्ट्र और उसकी सरकार में अंतर है। आदमी की वफादारी खासतौर पर अपने देश के लिए होनी चाहिए, न कि किसी खास सरकार के लिए।

व्यक्तिवादी फ्रांसीसियों में नागरिकता और सामाजिक एकता का अनुभव पैदा करने के लिए स्कूल ही उपयुक्त है, लेकिन फ्रांस की वर्तमान शिक्षा-प्रणाली यह अनुभव कराने में असमर्थ है। उसका मुख्य उद्देश्य है व्यक्ति का विकास करना। एक फ्रांसीसी बच्चे की योग्यता यह नहीं मानी जाती कि वह किसी विषय को किस हद तक जानता है, बल्कि इस बात से देखी जाती है कि वह दूसरे बच्चों से किस हद तक बढ़िया है। इससे मुकाबले में पीछे रह जानेवाले बच्चों के मन में एक दूसरे के प्रति विरोधी भावनाएं पैदा होती हैं।

फ्रांसीसी यह पसंद करें या न करें (वैसे वे बेहद नापसंद करते हैं) लेकिन इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि आज संसार में जैसे परिवर्तन हो रहे हैं, वे फ्रांसीसियों के लिए बहुत बड़ी चुनौती हैं। आज के परिवर्तनशील संसार में फ्रांसीसियों का परंपरावादी व्यक्तिवाद अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकेगा। लेकिन तब फ्रांस के लिए ही नहीं, सारे संसार के लिए यह दुःख की बात होगी, अगर यांत्रिक लाल बत्ती के बजाय अपने दिमाग पर ज्यादा भरोसा करनेवाले उस टैक्सी-ड्राइवर और राजर-जैसे व्यक्ति अपना व्यक्तित्व खो बैठें। ●

लॉन टेनिस की प्रतिष्ठा का प्रतीक डेविस कप

• योगराज थानी

लॉन टेनिस की दुनिया में डेविस कप का सर्वोच्च स्थान है। जो देश इस कप पर अपना अधिकार प्राप्त करता है उसे लॉन टेनिस के खेल का आधिपत्य और वर्चस्व प्राप्त होता है। इस कप पर अधिकार जमाने की होड़ में अमरीका और आस्ट्रेलिया की प्रतिद्वंद्विता सब से पुरानी है। डेविस कप के पिछले ६२ वर्षों के इतिहास में (यों इस प्रतियोगिता की शुरूआत १९०० में हुई थी, लेकिन १२ बार इसके आयोजन में व्यवधान पड़ा) अमरीका ने इस पर २४ बार और आस्ट्रेलिया ने २३ बार अधिकार जमाया है। केवल चार देश ऐसे हैं जिन्हें यह कप जीतने का गौरव प्राप्त हुआ है। अमरीका और आस्ट्रेलिया के अतिरिक्त ब्रिटेन ने ९ बार और फ्रांस ने ६ बार इस कप पर अधिकार जमाया। इन चार देशों के अलावा दुनिया का कोई अन्य देश यह कप जीतने का गौरव प्राप्त नहीं कर सका है जबकि डेविस कप-प्रतियोगिता में अब दुनिया के ५० से अधिक देश भाग लेने लगे हैं। प्रारंभिक मुकाबलों के लिए इन देशों को जिन चार [illegible] में बांट दिया जाता है उनके नाम हैं—पूर्वी क्षेत्र, अमरीकी क्षेत्र, यूरोपीय क्षेत्र 'ए' और 'बी'।

डेविस कप : तब और अब

पहले इस प्रतियोगिता में केवल शौकिया खिलाड़ी भाग ले सकते थे। बाद में इसे भी विंबलडन की तरह खुली प्रतियोगिता का रूप दे दिया गया। पहले डेविस कप में एक चुनौती-मुकाबला (चैलेंज राउंड) होता था। इसकी शुरूआत १९०४ में ही हो गयी थी।

यहां चुनौती-मुकाबले की थोड़ी व्याख्या करना जरूरी है। जो देश डेविस कप जीतता था उसके लिए अगले वर्ष नये सिरे से क्षेत्रीय मुकाबलों में भाग लेना जरूरी नहीं होता था। बाकी देश आपस में क्षेत्रीय और अंतर्क्षेत्रीय मुकाबलों में हिस्सा लेते और जो टीम इन मुकाबलों में विजयी होती वह चुनौती-मुकाबले में पहुंचने का अधिकार प्राप्त करती। जिन देशों को चुनौती मुकाबले में पहुंचने का गौरव प्राप्त हुआ है उनके नाम हैं—रूमानिया ([illegible]), इटली, स्पेन और

पश्चिमी जरमनी (२–२ बार), भारत, जापान, मैक्सिको तथा बल्जियम एक-एक बार, लेकिन ये सभी देश चुनौती मुकाबले में पहुंचकर हार गये थे।

भारत को १९६६ में चुनौती-मुकाबले में पहुंचने का गौरव प्राप्त हुआ था। तब कलकत्ता के साउथ क्लब में भारत ने अंतर्क्षेत्रीय फाइनल में ब्राजील को ३–२ से हराया था। उस जीत का श्रेय रामनाथन कृष्णन् को प्राप्त हुआ जिन्होंने आखिरी सिंगल मैच में ब्राजील के टामच कोच को हराया। उसके बाद चुनौती-मुकाबले में भारत आस्ट्रेलिया से ४–१ से हार गया था।

लेकिन अब डेविस कप में चुनौती-मुकाबले की प्रथा भी समाप्त कर दी गयी है और विजेता देश को भी अन्य देशों के साथ क्षेत्रीय और अंतर्क्षेत्रीय प्रतियोगिताओं में हिस्सा लेना पड़ता है।

भारत फिर पूर्वी क्षेत्र का चैंपियन

इस बार डेविस कप के मुकाबलों में एक और चमत्कार हो गया। इस वर्ष भले ही और कोई टीम डेविस कप जीते लेकिन इतना निश्चित है कि ऑस्ट्रेलिया या अमरीका में से कोई भी देश डेविस कप नहीं जीत सकेगा। कारण यह कि लॉन टेनिस के ये दो महारथी देश इस बार क्षेत्रीय मुकाबलों में ही हार गये हैं। ४० वर्षों में ऐसा पहली बार हुआ है कि आस्ट्रेलिया और अमरीका में से कोई भी टीम फाइनल में नहीं पहुंच पायी है। गत वर्ष की रनर-अप अमरीकी टीम अपने प्रारंभिक मुकाबलों में ही कोलंबिया से हार गयी। फिर उसके बाद मई

भारतीय खिलाड़ी रामनाथन कृष्णन जिन्होंने १९६६ में डेविस कप में भारत को चुनौती-मुकाबले तक पहुंचा दिया
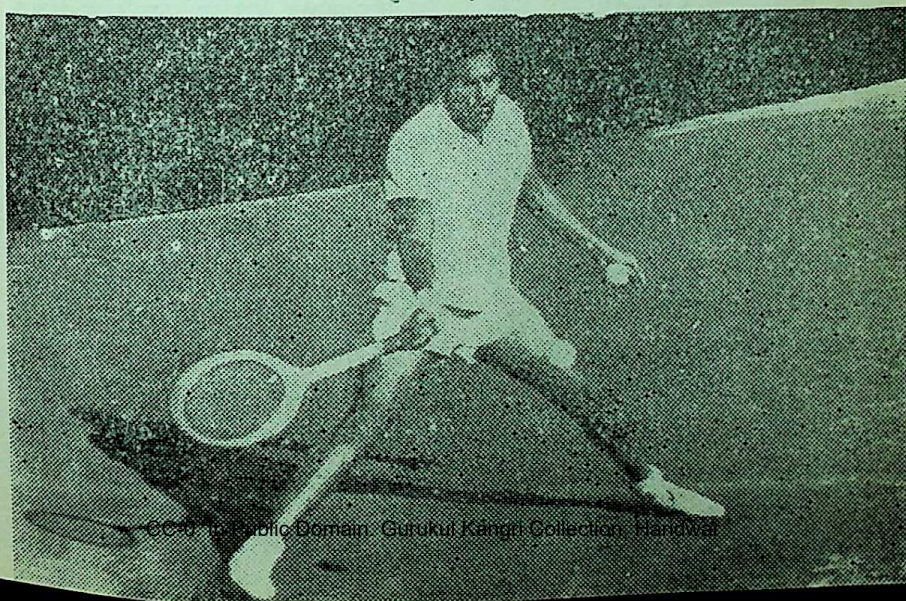
के महीने में कलकत्ता में खेले गये पूर्व क्षेत्रीय फाइनल में भारत ने डेविस कप विजेता देश ऑस्ट्रेलिया को ३–२ से हराकर एक और ऐतिहासिक विजय प्राप्त की। उस मैच में भारत के जसजीत सिंह ने पहले सिंगल मुकाबले में ऑस्ट्रेलिया के बॉब गिल्टिनन को, डबल्स मुकाबले में विजय अमृतराज और आनंद अमृतराज की जोड़ी ने जॉन एलेग्जेंडर और कॉलिन डिबली की जोड़ी को, और आखिरी मुकाबले में विजय अमृतराज ने बॉब गिल्टिनन को हराया था। इस प्रकार भारत एक बार फिर अंतर्क्षेत्रीय सेमी-फाइनल मुकाबले में पहुंच गया।

इस बार ऑस्ट्रेलिया की हार का एक कारण यह भी था कि उसके चोटी के पेशेवर खिलाड़ी (रॉड लेवर, जॉन न्यूकांब, टॉनी रॉश, माल ऐंडर्सन आदि) भारत के विरुद्ध खेलने नहीं आये। वे सब अमरीका की पेशेवर टेनिस-प्रतियोगिताओं के प्रलोभन में आ गये थे।

आस्ट्रेलिया के जॉन एलेग्जेंडर

डेविस कप का इतिहास

डेविस कप की शुरूआत १९०० में हुई थी। उन दिनों अमरीका के हार्वर्ड विश्वविद्यालय में एक रईस बाप का बेटा ड्विट एफ. डेविस पढ़ता था। उसी के मन में पहले-पहल लॉन टेनिस की एक प्रतियोगिता शुरू करने और विजेता टीम के लिए एक चलती-फिरती ट्रॉफी तैयार करवाने का विचार आया।

८, ९ और १० अगस्त, १९०० को लांगवुड (बोस्टन) में अमरीका और इंगलैंड के बीच डेविस कप का पहला मैच खेला गया था। उस समय भी चार सिंगल्स और एक डबल मैच का आयोजन किया गया। इस मैच में ट्राफी प्रदान करनेवाले खिलाड़ी डेविस ने भी हिस्सा लिया। अन्य अमरीकी खिलाड़ियों के नाम वार्ड और विटमैन थे। इंगलैंड के खिलाड़ियों के नाम बैरेट, ब्लैक और गार थे। इस कप पर अमरीका ने अधिकार प्राप्त किया। १९०१ में इस प्रतियोगिता का आयोजन नहीं हो सका। १९०२ में फिर अमरीका जीता लेकिन १९०३ में ब्रिटेन ने पहली बार यह कप जीता। १९०४ में डेविस कप में भाग लेनेवाले ४ हो गये।

डेविस कप और भारत

डेविस कप प्रतियोगिता में भारत ने १९२१ में पहली बार प्रवेश किया। उस समय जिन खिलाड़ियों ने भारत का प्रतिनिधित्व किया उनके नाम थे—मोहम्मद सलीम, एस. एम. जेकब, एल. एन. डीन तथा ए. ए. फौजी। इस मुकाबले में भारत ने पहले दौर में तो फ्रांस को ४–१ से हरा दिया पर अगले दौर में भारत जापान से ५–० से हार गया। उसके बाद भारत अनियमित रूप से इन प्रतियोगिताओं में हिस्सा लेता रहा लेकिन उसे कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली। १९२९, ३१, ३३, ३५, ३६ और ३७ में भारत किन्हीं कारणों से हिस्सा नहीं ले सका।

१९५६ में भारत पहली बार अंतर्क्षेत्रीय फाइनल मुकाबले में पहुंचा। उससे पहले भारत ने पूर्वी क्षेत्र के मुकाबलों में श्रीलंका और जापान को हराया था। १९२३ में डेविस कप के मुकाबले अमरीका और यूरोप, केवल दो क्षेत्रों में बांटे गये थे लेकिन १९५२ से पूर्वी क्षेत्रों की अलग प्रतियोगिताएं होने लगीं; अर्थात १९४८ तक भारत डेविस कप में यूरोपीय क्षेत्र की ओर से ही खेलता रहा था।

१९५८ में बोस्टन में रामनाथन कृष्णन् ने रॉड लेबर को हराया था लेकिन और कोई मैच भारत नहीं जीत सका।

१९६७ में भारत बारसेलोना में खेले गये अंतर्क्षेत्रीय सेमी फाइनल मुकाबले
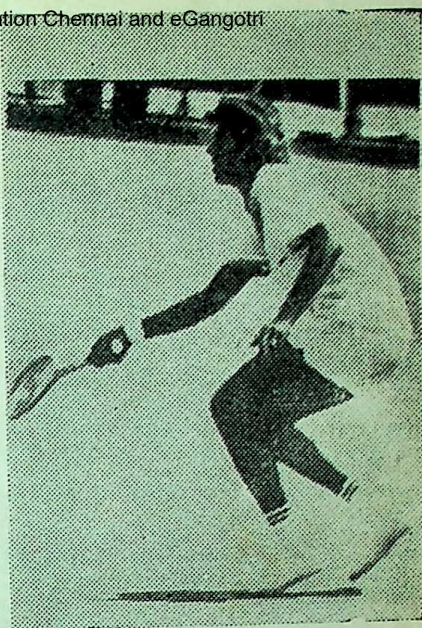
विजय अमृतराज : छोटी उम्र बड़ा नाम

में दक्षिण अफ्रीका से ५–० से हार गया था। १९६८ में भारत अंतर्क्षेत्रीय फाइनल में अमरीका से ४–१ से, १९६९ में अंतर्क्षेत्रीय सेमी फाइनल में रूमानिया से ४–१ से, १९७० में पश्चिमी जरमनी से ५–० से, और १९७१ में अंतर्क्षेत्रीय फाइनल में रूमानिया से ४–१ से हार गया।

१९७२ में बंगलौर में खेले गये पूर्वी क्षेत्रीय फाइनल में और १९७३ में मद्रास में खेले गये पूर्वी क्षेत्रीय फाइनल में आस्ट्रेलिया ने भारत को हराया था। इस वर्ष भारत ने बदला ले लिया।

—९९९२, रोहतक रोड,
नयी दिल्ली

"२६ जनवरी, १९५२ को जन्म, बैतूल से बी.एस-सी. एवं आमला में शिक्षक, १९६५ से अब तक ५०० कविताएं लिखीं, पर सभी अप्रकाशित। सांसों ने कार्बन-डाई-ऑक्साइड लेकर ऑक्सीजन देना सीखा। जीवन की हर खुशी को समेटना चाहा लेकिन दर्द का उबाल ही पाया; अब दर्द को अपनी समूची आस्था और ईमानदारी में समेट लेने को जी चाहता है।"

स्नेह वह झरना है...
जिसका उद्गम
गहनता के जलकुंड से होता है
जिसका जल
सूखे कंकालों को सींचता है
जिसकी गति समानता में
सबको लाने के लिए तत्पर
जिसकी मिठास से
मन का खारापन दूर हो जाता है
जिसकी शीतलता में
सबकी उष्णता घुल जाती है
जिसके अभाव से
मानव वस्त्रहीन, नंगा है
व्यवहारों की यह
पुण्य सलिल गंगा है
जिसके स्पर्श से
क्रोध का गरूर चला जाता है
और यही स्नेह जल
शुष्क कणों को छूकर
आंखों में भरकर, सृष्टि
दृष्टि में छा जाता है

——योगेश ठाकरे

—सेंट्रल स्कूल के सामने, मेन रोड, बोड़खी,
आमला, बैतूल (म. प्र.)

तीन अंगूठियां

मिनी कहानियां

सुलतान सलादीन मिस्र और सीरिया के शासक थे। वे बहुत कट्टर मुसलमान थे और यहूदियों तथा ईसाइयों के प्रति धार्मिक द्वेष रखते थे, यद्यपि थे वे स्वाभिमानी एवं उदार।

महान दार्शनिक यहूदी नाथन उनके समकालीन थे और यरूशलम में रहते थे। एक बार सुलतान ने नाथन को बुलाया और कहा, 'मैंने तुम्हारे पांडित्य की बड़ी प्रशंसा सुनी है। मैं आशा करता हूं कि मुझे तुमसे कुछ शिक्षा मिलेगी। बताओ कौन-सा धर्म सच्चा है—यहूदी धर्म, इसलाम या ईसाई धर्म ?'

नाथन समझ गये कि सुलतान मेरी परीक्षा लेना चाहते हैं। लेकिन जरा भी विचलित हुए बिना वे बोले, "उत्तर देने से पहले एक आख्यान सुनाने का अवसर दें।"

अनुमति पाकर नाथन ने कथा आरंभ की: प्राचीन समय में एक व्यक्ति के पास जादू की अंगूठी थी। जिसके पास वह अंगूठी होती, और यदि उसका अंगूठी पर दृढ़ विश्वास होता, वह आसानी से ईश्वर के निकट पहुंच सकता था। अंगूठी सदियों से उसी खानदान में चली आ रही थी। एक से अधिक पुत्र होने की सूरत में अंगूठी वह पाता जिस पर पिता का सबसे अधिक स्नेह होता। एक अवसर आया कि उस खानदान में एक पिता के तीन पुत्र हुए। वह तीनों को एक-सा प्यार करता था। अतः समस्या खड़ी हो गयी कि अंगूठी किसे दी जाए !

काफी सोच-विचार के बाद उसने सुनार बुलाया और उसी नमूने की दो और अंगूठियां बनवायीं। सुनार ने हूबहू वैसी ही अंगूठियां बना दीं। मृत्यु का समय निकट आया जान पिता ने पुत्रों को बुलाया और प्रत्येक को एक-एक अंगूठी प्रदान की। कुछ समय बाद पुत्रों में यह विवाद उठ खड़ा हुआ कि असली अंगूठी किसके पास है। अंत में तीनों न्यायाधीश के पास गये।

न्यायाधीश ने प्रत्येक से पूछा—तुम अपने भाइयों में सबसे अधिक प्यार किसे करते हो ?

तीनों असमंजस में पड़ गये। न्यायाधीश बोले—बताओ वह अंगूठी कौन-सी है जिसके द्वारा मनुष्य अपने भाइयों से प्रेम कर सकता है, और भगवान

न राज्यं प्राप्तमित्येवं वर्तितव्यं सांप्रतम् ।
श्रियं ह्यविनयो हन्ति जरारूपमिवोत्तमम् ॥

'राज्य मिल गया'—यह समझकर अनुचित व्यवहार नहीं करना चाहिए क्योंकि कठोरता या अहंकार लक्ष्मी को निश्चय ही नष्ट कर देते हैं; जैसे रूप-रंग को बुढ़ापा ।

दक्षः श्रियमधिगच्छति
पथ्याशीकल्यतां सुखं रोगी ।
अभ्यासी विद्यान्तं
धर्मार्थ यशांसि च विनीतः ॥

चतुर-नीति-निपुण लक्ष्मी, सुंदर तथा हलका भोजन करनेवाला नीरोगता एवं रोगहीन सुख, अभ्यासी विद्यापारगामिता, और सुशील या विनम्र मनुष्य धर्म, धन और सुयश को प्राप्त करता है ।

यस्य त्वेतानि चत्वारि वानरेन्द्र यथा तव ।
धृतिर्दृष्टिर्मति दाक्ष्यं स कर्मसु न सीदति ॥

✓ जिस मनुष्य में ये चार गुण (जैसे हनुमानजी तुममें हैं)—धैर्य, तीक्ष्ण दृष्टि, सूझ, बुद्धि और दक्षता (कार्यकुशलता) होते हैं, उसे कभी विफलता नहीं मिलती ।

क्रुद्धः पापं न कुर्यात्कः क्रुद्धो हन्याद् गुरूनपि
क्रुद्धः परुषया वाचा नरः साधूनधिक्षिपेत् ॥

क्रोध में आकर मनुष्य क्या पाप नहीं करता ? वह तो पूज्यों को भी मार डालता है, क्रोध में भरकर सत्पुरुषों पर भी आक्षेप करने में वह नहीं चूकता ।

—प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त शर्मा

के निकट पहुंचने में समर्थ हो सकता है मेरे खयाल में तुममें से किसी के पास असली चीज नहीं है क्योंकि तुममें से किसी के हृदय में प्रेम नहीं है । तीनों भाई निरुत्तर हो गये । स्वयं न्यायाधीश भी कोई निर्णय नहीं कर सके । इसके बावजूद उन्होंने उन्हें बड़ी नेक सलाह दी—अंगूठियां तुम्हारे दिवंगत पिता के प्रेम का प्रतीक हैं असली अंगूठी में अवश्य ही वह करामात है कि जिसके द्वारा भगवान को प्राप्त किया जा सकता है, बशर्ते अंगूठी पहननेवाले को अंगूठी पर दृढ़ विश्वास हो । प्रत्येक के पास जो अंगूठी है उसकी शक्ति और श्रेष्ठता पर विश्वास करो, और सच्चा व्यक्ति बनने का प्रयत्न करो ।

यह कथा सुनाकर नाथन बोले "सुलतानेआला ! ये तीन अंगूठियां ही तीनों मजहब हैं । कौन कह सकता है कि यहूदी धर्म ही सच्चा है, या इसलाम या ईसाइयत ही अच्छी है । तीनों धर्म उस परमपिता परमेश्वर के प्रेम के प्रतीक हैं भक्त के हृदय में यदि अपने धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा हो और वह उसकी शिक्षाओं पर ईमानदारी से अमल करे, तो परमात्मा को पा सकता है ।"

नाथन के तत्त्वज्ञान ने सुलतान को बड़ा प्रभावित किया । इस घटना के बाद सुलतान सलादीन के व्यवहार में यहूदियों और ईसाइयों के प्रति सहिष्णुता उत्पन्न हो गयी ।

—गोविंदराम गुप्त

पिछले अंक में आपने प्रख्यात हस्तरेखाविद प्रो. पी. टी. सुन्दरम से जीवन-रेखा के बारे में जानकारी प्राप्त की । अब यहां प्रस्तुत है मस्तिष्क-रेखा का परिचय

• पी. टी. सुन्दरम्

बुद्धिमत्ता की प्रतीक मस्तिष्क-रेखा

हाथ की रेखाओं में मस्तिष्क-रेखा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह रेखा जीवन-रेखा के कुछ ऊपर शुरू होती हुई हथेली में आड़ी जाती है। यह रेखा सीधी, घुमावदार, छोटी अथवा लंबी हो सकती है। उत्तम मस्तिष्क-रेखा जरा-सा घुमाव लेकर चंद्र-पर्वत के ऊपर, हथेली की किनार तक जाती है (**चित्र १,१–१**) । यदि ऐसी रेखा के साथ अच्छा अंगूठा, धनुषाकार अच्छी जीवन-रेखा भी हो तो उससे व्यक्ति की इच्छा-शक्ति, श्रेष्ठ बुद्धिमत्ता, तर्क-शक्ति, निष्ठा, प्रेम, स्नेह, आदर तथा निर्णय-क्षमता की शक्तियां पता चलती हैं। यदि मस्तिष्क-रेखा गुरु पर्वत से शुरू होकर जीवन-रेखा को स्पर्श करे तो ऐसा व्यक्ति घोर महत्त्वाकांक्षी होता है। उसकी महत्त्वाकांक्षा तर्क-सम्मत भी होती है। ऐसी रेखावाला व्यक्ति दूसरों को नियंत्रण में रखता है तथा अपने इस गुण पर उसे गर्व भी होता है ।

पुराने ज़माने में यह विश्वास किया जाता था कि हथेली के 'मंगल क्षेत्र' के आरपार गुजरनेवाली मस्तिष्क - रेखा जीवन-संग्राम की सूचक होती है। ऐसी

रेखा व्यक्ति को अतिरिक्त धैर्य और शांति के साथ सुख-दुःख झेलने की क्षमता भी देती है। आम मस्तिष्क-रेखा अंगूठे और तर्जनी के मूल के मध्य, हथेली के एक छोर से शुरू होती है। यदि यह रेखा कनिष्ठा के नीचे समाप्त होती है तो व्यक्ति की प्राकृतिक विज्ञान में गहरी दिलचस्पी होती है (**चित्र १, २–२**)। अनामिका के नीचे अथवा अनामिका और कनिष्ठा के मध्य खत्म होनेवाली मस्तिष्क-रेखा व्यक्ति को अंतःप्रेरणा शक्ति देती है। उद्योग-व्यवसाय में कठिनाइयां झेलनेवाले व्यक्तियों की मस्तिष्क-रेखा मध्यमा के नीचे दो भागों में बंट जाती है (**चित्र १, ३–३**)। प्रतिष्ठित कलाकारों, विशेषकर विदूषकों की, मस्तिष्क-रेखा गहरी और द्वि-शाखा-वाली होती है। ऐसी रेखावाले व्यक्ति सफल चरित्र अभिनेता होते हैं।

कुछ हाथों में मस्तिष्क तथा जीवन-रेखा परस्पर मिली होती हैं। ऐसी रेखाओं-वाले व्यक्ति काफी भावुक होते हैं। यही भावुकता उन्हें संचालित भी करती है। ऐसे व्यक्ति अपने निजी स्वार्थों के लिए घोर परिश्रम कर सकते हैं। वे संपत्ति और शक्ति के भी स्वामी होते हैं, पर खेद की बात यह है कि वे घृणा की दृष्टि से भी देखे जाते हैं (**चित्र–४**)।

चौड़ी तथा रोम-जैसी शाखाओंवाली मस्तिष्क-रेखा उलझे हुए विचारों की सूचक होती है। ऐसे व्यक्ति अस्थिर बुद्धि-वाले भी होते हैं (**चित्र ४–अ**)। जंजीर-दार मस्तिष्क-रेखा स्पष्ट विचारों के अ[भाव] को दर्शाती है। ऐसी रेखाओंवाले व्य[क्ति] किसी एक बात पर ध्यान केंद्रित नहीं [कर] पाते। उनका ध्यान हमेशा बदलता र[हता] है। यदि मस्तिष्क-रेखा के अंत में बा[रीक-] बारीक स्पष्ट रेखाएं हैं तो व्यक्ति [अधिक] मानसिक परिश्रम नहीं कर पाता। [यदि] घुमावदार मस्तिष्क-रेखा से कोई शा[खा] ऊपर हृदय - रेखा की ओर जाती है [तो] उससे व्यक्ति की गहरी सम्वेदनाओं [का] पता चलता है। (**चित्र ४, आ-आ**) मस्तिष्क-रेखा से नीचे की ओर जानेवा[ली] रेखाएं शुभ-चिह्न नहीं हैं। ऐसी रेखा[ओं-] वाला व्यक्ति हमेशा असंतुष्ट रहता है।

मस्तिष्क-रेखा का अध्ययन क[रते] समय दोनों हाथों की मस्तिष्क-रेखा[ओं] का अध्ययन करना चाहिए। दायां हा[थ] मस्तिष्क के बाहरी आवरण की तंत्रि[का] कोशिकाओं की गतिविधियों का प्रति[निधि] होता है। बायां हाथ व्यक्ति के सुप्त अ[थवा] अर्धसुप्त पैतृक चारित्रिक-गुणों को [दर्शा]ता है। किसी-किसी व्यक्ति के [दायें] हाथ की मस्तिष्क-रेखा बिलकुल सी[धी] तथा बायें हाथ की रेखा नीचे की [ओर] घुमावदार होती है। ऐसी रेखाओंवा[ले] व्यक्ति काफी सोच-समझकर कार्य कर[ने] वाले होते हैं, पर संकट और दबाव के क्ष[णों] में उनके विचारों और कार्यों पर कल्[पना] हावी हो जाती है। यदि दायें हाथ [की] मस्तिष्क-रेखा घुमावदार तथा बायें हा[थ] की मस्तिष्क-रेखा सीधी हो तो [...]

रेखाओंवाले व्यक्ति कठोर, निर्मम और व्यावहारिक होते हैं।

कुछ हाथों में मस्तिष्क-रेखा कुछ दूर सीधी जाकर अचानक चंद्र-पर्वत की ओर, अथवा हथेली के निचले भाग की ओर मुड़ जाती है। ऐसे व्यक्ति क्रूर और गहन अवसाद में डूबते-उतराते रहते हैं। (चित्र ४, इ-इ)

मस्तिष्क-रेखा पर द्वीप की स्थिति किसी-न-किसी प्रकार के मानसिक तनाव की सूचक होती है। (**चित्र ४,१**) द्वीप की लंबाई से इस तनाव की अवधि का पता लगाया जा सकता है। कुछ लोगों के हाथों में दोहरी मस्तिष्क-रेखा होती है। ऐसी रेखाओंवाले व्यक्ति अपने विचार बारी-बारी से बदलते रहते हैं। सामान्यतः ऐसे व्यक्ति काफी बुद्धिमान एवं कल्पना-प्रवण होते हैं, अपनी विविध गतिविधियों के लिए हमेशा समय की कमी की शिकायत करते रहते हैं। उलझन में पड़ने पर वे मनोवैज्ञानिकों की सहायता लेते हैं।

जीवन-रेखा के भीतर मंगल-पर्वत से निकलनेवाली मस्तिष्क-रेखा चिड़चिड़े स्वभाव के साथ-साथ चिंताकुल एवं अस्थिर बुद्धि की सूचक होती है (**चित्र ४, ई-ई**)। चंद्र-पर्वत पर द्विशाखा के साथ समाप्त होनेवाली मस्तिष्क-रेखा कल्पनाशील, साहित्यिक प्रतिभा की सूचक होती है। यदि सीधी मस्तिष्क-रेखा थोड़ा घुमाव लिये हुए मंगल की ओर उठती है तो ऐसी रेखावाले व्यक्ति व्यवसाय में असाधारण रूप से सफल होते हैं। ऐसे व्यक्ति धन का महत्त्व जानते हैं तथा जितनी तेजी से हो सकता है, धन संग्रह करते हैं। (**चित्र ४, उ-उ**)

हथेली के मध्य में ही खत्म होनेवाली छोटी मस्तिष्क-रेखा भौतिकवादी होने की सूचक है। ऐसी रेखावाले व्यक्ति में कल्पना का अभाव होता है, पर व्याव-

बिभिन्न मस्तिष्क रेखाओंवाले हाथ
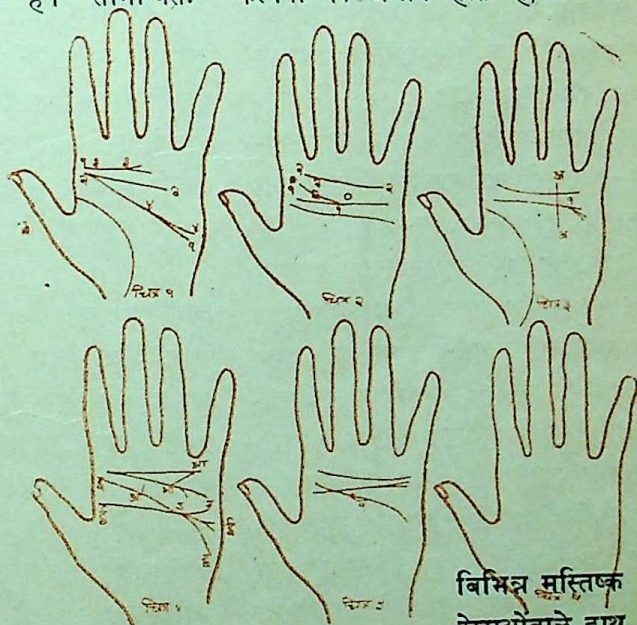
हारिक मामलों में वह काफी चतुर होता है। असाधारण रूप से छोटी मस्तिष्क-रेखा मानसिक लगाव के कारण होनेवाली मृत्यु की सूचक होती है। शनि-पर्वत के नीचे टूटी मस्तिष्क-रेखा दुर्घटनाजन्य मृत्यु की सूचक होती है (**चित्र २, १-१**)। बारीक-बारीक रेखाओं तथा अनेक द्वीपयुक्त मस्तिष्क-रेखा मानसिक विकारों की सूचना देती हैं।

दोनों हाथों में टूटी हुई मस्तिष्क-रेखा से दुर्घटनाजन्य मृत्यु या मस्तिष्क में चोट का पता लगता है। यदि मस्तिष्क-रेखा से गुरु-पर्वत की ओर कोई रेखा जाए अथवा यह रेखा गुरु-पर्वत पर स्थित तारे में प्रवेश करे तो उससे जीवन में असाधारण सफलता का पता लगता है। चतुर्भुज से गुजरनेवाली मस्तिष्क-रेखा दुर्घटना से बचाव की सूचना देती है। ऐसे चिह्नोंवाला व्यक्ति अपने साहस और प्रत्युत्पन्न-मति से खतरों का सफलतापूर्वक सामना करता है (**चित्र २, २-२**)।

मस्तिष्क एवं जीवन-रेखा के मध्य अंतर लाभदायक होता है, पर यह बहुत अधिक नहीं होना चाहिए। यदि यह अंतर मध्यम है तो व्यक्ति में असाधारण जीवन-शक्ति होती है। ऐसा व्यक्ति तत्काल कार्यवाही करता है। वह हाजिरजवाब और विनोदप्रिय भी होता है। मस्तिष्क-रेखा पर बिंदुओं से स्नायुविक दुर्बलता और मानसिक आघातों का पता चलता है। यह हीन-भावना का भी द्योतक होता है। हाथ की बनावट के संदर्भ में मस्तिष्क-रेखा का अध्ययन करना चाहिए। ढलावदार मस्तिष्क रेखा के बीच में संकरा-सा द्वीप दिमागी बुखार अथवा अधिक बोझ के कारण अस्थायी उन्माद का भी सूचक है। (**चित्र ५-१**)

चौकोर हाथ के संदर्भ

चौकोर हाथ से तर्क, कार्य-प्रणाली, युक्तियुक्तता और विज्ञान-संबंधी प्रतिभा का पता लगता है। ऐसे हाथों में मस्तिष्क-रेखा सीधी और लंबी होती है। नीचे झुकी हुई मस्तिष्क-रेखा विकसित काल्पनिक प्रतिभा का पता देती है।

चपटे हाथ के संदर्भ

ऐसे हाथ में मस्तिष्क-रेखा लंबी, स्पष्ट और नीचे की ओर थोड़ा झुकी होती है। ऐसी रेखावाले व्यक्ति की चारित्रिक विशेषता दोहरी और शक्तिशाली होती हैं। यदि चपटे हाथ में ऐसी मस्तिष्क-रेखा नहीं है तो व्यक्ति अपनी कल्पना साकार नहीं कर पाता। उसका स्वभाव भी चिड़चिड़ा होता है।

दार्शनिक हाथ

दार्शनिक हाथ में मस्तिष्क-रेखा लंबी और जीवन-रेखा से काफी जुड़ी होनी चाहिए। ऐसे हाथ में रेखा यदि काफी नीचे होती है तो व्यक्ति आलोचक, विश्लेषक के साथ-साथ सनकी भी होता है। उसका काम केवल औरों की गलती निकालना और उनकी आलोचना करना होता है। व्यक्ति को न किसी भौतिक और न किसी आध्यात्मिक बात का ही डर होता है।

अखिल भारतीय स्तर पर कुछ ऐसे प्रतिष्ठान काम कर रहे हैं जिनके संबंध में उपयोगी जानकारी आवश्यक है। जून अंक में आपने नेशनल बुक ट्रस्ट के बारे में पढ़ा। प्रस्तुत है नागरी प्रचारिणी सभा के बारे में जानकारीपूर्ण लेख।

● **बलदेव वंशी**

नागरी प्रचारिणी सभा

श्री सुधाकर पांडे नागरी प्रचारिणी सभा के वर्तमान महामंत्री एवं कांग्रेस संसदीय दल की शिक्षा-संबंधी अस्थायी समिति के संयोजक हैं। वे एक प्रतिष्ठित साहित्यकार भी हैं। बातचीत के दौरान उन्होंने बताया, "मैंने होश संभालते ही आचार्य नरेन्द्रदेव, संपूर्णानंद, पंडित गोविंदवल्लभ पंत, अमरनाथ झा-जैसे महान लोगों के साथ सेवा-कार्य सीखा है और राजनीति मेरे लिए सत्ता की नहीं, सेवा की वस्तु है। मैंने अध्ययन, अध्यापन किया है। संसद-सदस्यता की शपथ लेने के उपरांत अपने कालेज के कंपाऊंड में भी मैं नहीं गया, न ही वेतन या बकाया लिया। मैं हिंदी को, राष्ट्र की कड़ी को जोड़ने के रूप में मानता हूं; इसलिए राजनीति एवं हिंदी की उन्नति की विभाजन-रेखा का बोध मुझे है। राजनीति को यदि संस्कृति एवं साहित्य का आधार नहीं मिलेगा तो वह तोड़नेवाली चीज हो जाएगी, जोड़नेवाली नहीं। काशी की अपनी एक परंपरा रही है—और वह यह कि चाहे सुश्री ऐनी बेसेंट हों, चाहे श्री मदनमोहन मालवीय हों, या श्री भगवानदास हों, ये सब हंस की तरह पानी और दूध को अलग करना जानते थे। उसी देश में कोई बालक उत्पन्न हो और उसे अपनी परंपरा का बोध न हो, ऐसा कैसे हो सकता है? ये लोग तो हिमालय थे। मैं तो उस देश की धूल मात्र हूं, पर मूल का धूल से सनातन संबंध होता है। उसके गुणों की छाया में निर्गुण भी सगुण हो जाता है। क्या तुलसी, कबीर या भारतेन्दु अपने युग के परिप्रेक्ष्य में राजनीति की

सेवा करने वाले नहीं थे ?"

नागरी प्रचारिणी सभा हिंदी की-मातृ संस्था है, जिसकी स्थापना १६ जुलाई, १८९३ ई. को हुई थी। इसके प्रमुख संस्थापक थे—स्व. श्यामसुन्दरदास, स्व. रामनारायण मिश्र और स्व. ठाकुर शिवकुमार सिंह। इस समय श्रीमती इंदिरा गांधी सभा की संरक्षक तथा पंडित कमलापति त्रिपाठी अध्यक्ष हैं। अन्य संवद्ध लोगों में सर्वश्री शेरसिंह, कृष्णचन्द्र पंत, सेठ गोविंददास, सुमित्रानन्दन पंत, डॉ. नगेन्द्र आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

प्रकाशन

अव तक सभा द्वारा विभिन्न विषयों के १,००० से भी ऊपर ग्रंथों का प्रकाशन हो चुका है। त्रैमासिक शोध पत्रिका—'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' तथा मासिक 'नागरी पत्रिका' का निर्व्यवधान प्रकाशन हो रहा है। अन्य प्रकाशनों में 'हिंदी-शब्दसागर', 'हिंदी व्याकरण', 'वैज्ञानि[क] शब्दावली', 'सूर', 'तुलसी', 'कबीर' 'जायसी', आदि मुख्य-मुख्य कवियों [की] ग्रंथावलियां, 'कचहरी – हिंदी कोश' 'द्विवेदी-अभिनंदन ग्रंथ', 'संपूर्णानंद अभिनंदन ग्रंथ', 'हिंदी साहित्य का वृहत् इतिहास', 'अहिंदी विश्वकोश' आदि ग्रंथ मु[ख्य] हैं। सभा के पास सन १९५३ से अप[ना] मुद्रणालय भी है।

अन्यान्य प्रवृत्ति[यां]

अहिंदीभाषी छात्रों को हिंदी पढ़ने [के] लिए छात्रवृत्तियां देना, हिंदी की सं[केत] लिपि (शार्टहैंड) तथा टंकण (टाइ[प] राइटिंग) की शिक्षा देना, व्याख्यानों [का] आयोजन आदि सभा के कार्यों के अंग हैं। सुप्रसिद्ध-पत्रिका 'सरस्वती' का आ[रंभ] और 'अखिल भारतीय हिंदी-साहि[त्य] सम्मेलन' का संगठन और आयोजन [भी] सभा ने ही किया था। सभा ने दिल्ली [में]

सभा के एक समारोह में भाषण देते हुए हेमवतीनंदन बहुगु[णा] बायें से: उमाशंकर दीक्षित, कमलापति त्रिपाठी, अमृतलाल नागर, सुधाकर पां[डे] के. सी. पांडे, दिनेश सिंह, डॉ. नगेंद्र, डॉ. रत्नाकर, प्रो. शेरसिंह, राज बहादु[र]

भवन बनाने के लिए भूमि प्राप्त कर ली है।

आर्थिक पक्ष और आरोप

सभा के महामंत्री श्री सुधाकर पांडे से हमने पूछा, **"सभा पर धन-संबंधी अनियमितताओं के जो आरोप पत्रों में प्रायः छपते रहते हैं, उनके संबंध में आपका क्या कथन है?"**

"पत्रों में जो कीचड़ उछाला जाता रहा है, वह उन असंतुष्ट लोगों का काम है जो सभा से निकाले गये हैं या असंतुष्टों के अनुगामी रहे हैं, या नौकरी से निकाले गये हैं। हिसाब-किताब चार्टर्ड एकाउंटेंट देखता है। आंतरिक लेखा-जांच पड़ताल भी बराबर होती रहती है। रखरखाव का अनुदान भारत सरकार से १०,००० रुपये और उ. प्र. सरकार से १०,००० रुपये मिलता है, जो कि कर्मचारियों के एक महीने के वेतन के बराबर भी नहीं हैं; जबकि सभा का बजट लगभग ४०,००,००० रुपये वार्षिक है और वास्तविक खर्च २०–२२ लाख रुपये होता है। विश्वकोश की बिक्री के रुपये भारत सरकार ले लेती है।"

उद्देश्य

यह सभा भाषा, साहित्य तथा देवनागरी-लिपि की उन्नति तथा प्रचार-प्रसार करनेवाली अग्रणी संस्था है। इस संस्था ने अपने उद्देश्यों के लिए जब कार्य आरंभ किया तब अंगरेजी, उर्दू और फारसी का बोलबाला था तथा हिंदी का प्रयोग करनेवाले बड़ी हेय दृष्टि से देखे जाते थे। इसके बावजूद तत्कालीन विद्वतमंडल और जन-समाज के सक्रिय सहयोग पर यह आगे बढ़ती गयी। गांधीजी, मालवीयजी, सुधाकर द्विवेदी, गौरीशंकर हीराचंद ओझा, गुलेरी, प्रसाद, रवीन्द्र आदि-जैसे विद्वान समय-समय पर कार्यकारिणी के सदस्य रहे हैं।

विश्वकोष के प्रकाशनोद्घाटन के अवसर पर बायें से बैठे हुए : सुधाकर पांडे, कमलापति त्रिपाठी तथा श्रीमती इंदिरा गांधी। खड़े हुए रत्नाकर पांडे, श्रीनाथ सिंह

दूसरे चित्र में स्वर्गीय दिनकर, वियोगी हरि एवं सेठ गोविंददास

सदस्यता

नियम है कि सभा की कार्यकारिणी में विदेश के तीन विद्वान भी रहते हैं, क्योंकि यह हिंदी की अंतर्राष्ट्रीय संस्था है। वाचस्पति सदस्य वही हो सकता है जो उच्चकोटि का विद्वान हो और जिस का नाम कार्यकारिणी के सर्व-सम्मत निर्णय तथा साधारण सभा के तीन चौथाई निर्णय पर सामने आये। कार्यकारिणी के सदस्यों की संख्या २१ से अधिक नहीं होती।

सभा के उद्देश्यों को मानकर चलने-वाली इस समय हिंदी की ७५ संस्थाएं इससे संवद्ध हैं, जो अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखतीं हैं। 'राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा,' 'दक्षिण भारत हिंदी-प्रचार-सभा', 'नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा' आदि स्वतंत्र रूप से हिंदी-विकास कार्य करतीं हुई सभा से संवद्ध हैं।

आर्यभाषा पुस्तकालय

सभा का पुस्तकालय देश में हिंदी का सबसे बड़ा पुस्तकालय है। सन १८९६ में स्व. ठा. गदाधर सिंह ने अपना पुस्त-कालय सभा को प्रदान किया, उसी से इसकी स्थापना हुई। बाद में स्व. पं. महावीर-प्रसाद द्विवेदी, स्व. जगन्नाथदास रत्ना-कर, स्व. पं. मायाशंकर याज्ञिक, स्व. डॉ. हीरानंद शास्त्री, स्व. पं. रामनारायण मिश्र तथा डॉ. संपूर्णानंद के अपने-अपने संग्रह भी इस पुस्तकालय को प्राप्त हो गये, जिससे इसकी उपयोगिता और वढ़ गयी। देश-विदेश के शोधार्थी इसका उपयोग कर रहे हैं। पुस्तकालय को भारत सरकार पांचवीं पंचवर्षीय योजना में बीस लाख रुपये के अनुदान देगी, यह घोषणा श्रीमती गांधी ने की है।

हस्तलिखित ग्रंथों की खोज

प्राचीन विद्वानों के हस्तलेख नगरों और देहातों में उपेक्षित पड़े नष्ट हो रहे हैं। इसे देखकर सभा ने सन १९०० से अनेक अन्वेषकों को गांव-गांव, घर-घर भेजकर उन्हें एकत्र करने की योजना चलायी। इन हस्तलेखों से संबंधित रिपोर्ट भी प्रका-शित की जाती है। अनेक ज्ञात-अज्ञात लेखकों की कृतियां प्रकाश में आयी हैं। अभी तक हिंदी, गुरुमुखी, फारसी, संस्कृत के २०,००० के लगभग हस्तलिखित ग्रंथ भी पुस्तकालय में एकत्र हो चुके हैं।

"क्या कारण है कि फिर भी साहित्य जगत में सभा के प्रकाशनों एवं कार्यों की तीखी आलोचना होती है?"

"एक समय ऐसा था जब नवयुवकों का प्रवेश नागरी-प्रचारिणी सभा में नहीं हो पाता था। मैंने निष्णात, चुके हुए लोगों से संघर्ष किया और संघर्ष के पश्चात निर्माण भी किया, अतः उन सबका कोप-भाजन कौन बनेगा—मैं ही तो! जितने भी निर्णय मेरे कार्यकाल में लिये गये हैं वे सब सर्व-सम्मत हुए हैं। अब साधारण सभा की बैठकों में १२० से २०० तक सदस्य जुटते हैं, जबकि पहले मुश्किल से कोरम पूरा होता था।"

"'प्रेमचंद-स्मारक' के संबंध में पत्रों में

कई बार चर्चा चली है कि उस स्मारक की उपेक्षा हुई है, क्या खयाल है?"

"जब सभा में मैं प्रभाव में आया उससे काफी पूर्व से प्रेमचंद-स्मारक का कार्य हो रहा था। जिस मकान में प्रेमचंद पैदा हुए थे उसके मालिक दो पट्टीदार थे। उनमें से एक ने सभा से १,५०० रुपये जमीन के लिये। दूसरे पट्टीदार प्रेमचंद के भाई श्री महताबरायजी ने अपना अंश सभा को दान में दे दिया था, लेकिन इनको मिलाकर इनके घर के तीन व्यक्ति सभा के विशिष्ट सदस्य बने थे, जिसका शुल्क ५०० रुपये प्रति व्यक्ति होता है। इस सदस्यता का लाभ उन्होंने लिया। जब मैं आया, मुझे ठीक-ठीक स्मरण नहीं है (स्मृति के आधार पर बता रहा हूं) तब प्रेमचंद-स्मारक के नाम पर ८–१० हजार रुपये शेष थे, जिसमें एक चहारदीवारी, दो कमरे, बरामदा, चबूतरा और प्रेमचंदजी की संगमरमर की मूर्ति की स्थापना की गयी। मैं मानता हूं कि प्रेमचंदजी के व्यक्तित्व के अनुकूल यह स्मारक नहीं है किंतु मेरे समय में कुछ हुआ उसकी तो लोग भर्त्सना कर रहे हैं और जिन्होंने कुछ नहीं किया, उनसे कभी किसी ने कुछ नहीं पूछा। लगता है, ऐसा इसलिए किया जाता है कि इन आलोचना करनेवाले मित्रों का मुझसे 'प्रेम' है, लेकिन ऐसा करनेवालों में शायद ही कोई मिला हो जिसने मेरे समय में एक पैसा (स्मारक के लिए) भी दिया हो। कोई सरकार भी प्रेमचंद पर दयालु नहीं हुई। यदि कोई प्रेमचंद-स्मारक चलाना चाहे, और सभा को यह विश्वास हो जाए कि वह इसे चला लेगा, तो सभा उसे यह कार्य सहर्ष सौंप देगी।"

सुधाकर पांडे : नागरी प्रचारिणी सभा के महामंत्री

नयी योजनाएं

"हिंदी साहित्यकारों का मत है कि सभा घटिया प्रकाशनों पर व्यर्थ ही पैसा खर्च करती है, और सामयिक साहित्य की नितांत उपेक्षा कर रही है।"

"हम चाहते हैं कि उन (युवाओं) के अच्छे साहित्य को संकलन रूप में प्रकाशित कर हिंदी-जगत के समक्ष प्रस्तुत किया जाए। जो नवयुवक साहित्यकार शोध-संबंधी कार्यों में लगे हैं, उनको तो सभा प्रोत्साहन दे ही रही है किंतु रचनात्मक साहित्य के प्रोत्साहन के लिए कविता, कहानी, नाटक आदि के संकलनों की योजना कार्याधीन है।"

—सी.–१/१७३ लाजपतनगर, नयी दिल्ली-११००२४

लगभग तेरह साल पुरानी बात है। तब मैं उत्तर प्रदेश शासन के एक विभाग में नया-नया अधिकारी नियुक्त हुआ था। नियमानुसार मेरे हस्ताक्षर हमारे निदेशक महोदय से सत्यापित होकर खजाने तथा बैंक में जाने थे। मैं सदैव ही हिंदी में हस्ताक्षर करता था। मेरे हस्ताक्षर जब निदेशक महोदय ने देखे तो उन्होंने उनको सत्यापित करने से मना कर दिया और कहा कि इस विभाग के कुछ अधिकारियों में हिंदी का 'मीनिया' है। मेरे अड़ जाने पर उन्होंने बहुत दिन बाद हिंदी हस्ताक्षरों को सत्यापित किया। परंतु इसके बाद भी खजाने तथा बैंक में जो कठिनाइयां उपस्थित हुईं, उनको न ही लिखा जाए तो अच्छा है। निदेशक महोदय का यह व्यवहार एकल व्यवहार नहीं है। हिंदी के प्रति जो व्यवहार आज हो रहा है पिछले तेरह वर्षों में उसमें शायद गिरावट ही आयी है। क्या एक हिंदुस्तानी के लिए यह याद रखने लायक बात नहीं है ?

—पूरनचन्द्र जोशी महाप्रबंधक, मॉडर्न बेकरीज (इंडिया) लि., नयी दिल्ली

गहन पशु - विकास - परियोजना रायपुर में हम चार राजपत्रित अधिकारी कार्यरत हैं। प्रथम श्रेणी का एक अधिकारी परियोजना का प्रभारी अधिकारी है। हम चारों अधिकारी 'न्यू ब्लड' वाले हैं। प्रभारी अधिकारी एक वृद्ध सज्जन हैं, जो दो वर्षों में रिटायर हो जा रहे हैं।

परियोजना के विभिन्न कार्यकला[illegible] को द्रुत गति देने हेतु हम चारों अधिका[illegible] 'फील्ड-स्टाफ' को अनवरत काम में लगा[illegible] रखने के पक्ष में होते हैं। फलतः अ[illegible] कार्यकर्ताओं के प्रति हमारा रुख न[illegible] रहता है तथा शिथिल एवं टालमटो[illegible] करनेवाले लोगों के प्रति गंभीर। जब ऐ[illegible] लोगों के प्रति प्रभारी अधिकारी से स[illegible] अनुशासनात्मक कार्यवाही किये जा[illegible] का निवेदन किया जाता है तब वे 'नर[illegible] हो जाते हैं। इससे काम न करनेवालों [illegible] तो प्रोत्साहन मिलता है, लेकिन हम लो[illegible] में घोर निराशा छा जाती है, यह सोच[illegible] कि आखिर इससे परियोजना की प्रगति कै[illegible] होगी, और वह निर्धारित लक्ष्य की प्रा[illegible] समय पर कर पायेगी भी अथवा नहीं।

—अनुज शर्मा, सांख्यिकीय अधिका[illegible] गहन पशु - विकास - परियोजना, राय[illegible] (म. प्र.)

जो व्यक्ति चलता है, संसार के सारे गान, सारे प्राण उसे घेरे रहते हैं। मगर जो चुपचाप बैठा रहता है, वह केवल मृत्यु का आह्वान करता है। सत्य, निष्ठा और श्रम का संबल लिये मैं जीवन-पथ पर निरंतर चलती रही। मेरी एकनिष्ठ साधना ने मेरे उत्थान के मार्ग खोल दिये। प्रदेशीय सरकार एवं विभाग ने मुझे सम्मानित किया। पदोन्नतियां मेरा अभिषेक करने लगीं।

सहसा मेरी खुशियां, मेरी हंसी, मेरे साथियों की ईर्ष्याग्नि से कुम्हलाने लगी। मेरा विनाश उनका धर्म बनने लगा। संहार-यज्ञ शुरू हुआ। बड़े-बड़े ध्वजधारी नेता उतरे। प्रेस-जगत के कर्णभेदी घोष गूंज उठे। नामी-अनामी महारथियों के मर्मांतक तीर चले जिनके प्रहार सहते-सहते मैं हताश हो उठी। उनिंद्र रातों में आघात खाये पक्षी की तरह मैं तड़पने लगी। प्रतिष्ठा का सवाल था।

मेरे खिलाफ जांच बैठायी गयी। मैंने विरोधियों की चुनौती को निर्भीकता से स्वीकार किया। उन समस्त तथ्यों को प्रस्तुत किया जिनके अंतर्गत मैं उत्थान के सोपान तक पहुंची थी। जांचकर्ता की संधानी दृष्टि से यह छुपा नहीं रहा कि यह व्यूह रचना मेरी अनिष्ट-सिद्धि के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

—लीला कपूर, मुख्य चिकित्सा अधिकारी, लेडी लायल अस्पताल, आगरा

कुछ वर्ष पहले मैं दिल्ली नगर-निगम में एक अधिकारी था। हर वर्ष निगम की विभिन्न उपलब्धियों का ब्यौरा मुझे बनाना पड़ता था। एक वर्ष निगम ने बिजली दाह-केंद्र प्रारंभ किया। उप-स्वास्थ्य अधिकारी ने सूचना देते हुए लिख भेजा, 'इस वर्ष बिजली-दाह-केंद्र तैयार हुआ है। आशा है केंद्रीय सरकार, दिल्ली प्रशासन तथा दिल्ली-नगर-निगम के वरिष्ठ अधिकारी तथा अन्य मान्यगण इस व्यवस्था से शीघ्र लाभ उठा सकेंगे।'

मैं हैरान रह गया।

मैंने उपर्युक्त नोट का इस प्रकार उपयोग नहीं किया और उप-स्वास्थ्य अधिकारी को इस प्रकार न लिखने की सलाह दी। नियति का खेल, केवल छह मास बाद उसी उप-स्वास्थ्य अधिकारी के, जो उस समय बिलकुल हृष्ट-पुष्ट तथा स्वस्थ था, दाह-संस्कार के लिए बिजली-दाह-केंद्र पर मुझे जाना पड़ा। उसका छह मास पहले लिखा गया नोट अनायास ही मेरी आंखों के आगे आ गया।

—एस. आर. सिंह, डाइरेक्टर, मिनिस्टरी ऑव स्टील्स ऐंड माइंस

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत हों पर वे १५० शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिए। —संपादक

कालेज के कम्पाउंड से

हमारी हिंदी की शिक्षिका कोई भी कविता पढ़ाने से पहले, एक बार पढ़वाकर उसका भावार्थ पूछा करती थीं। एक दिन बच्चनजी की कविता का भावार्थ पूछा गया। पंक्तियां ये थीं—

तीर पर कैसे रुकूं मैं आज लहरों में निमंत्रण

मैं जैसे ही बताने के लिए खड़ी हुई, रिसेस की घंटी बज गयी और दूसरी कक्षाओं की लड़कियों ने शोर मचाना प्रारंभ कर दिया, और इसी बीच मैंने कहा—"कवि का भाव है कि जब बाहर इतनी हलचल मची हुई है तब मैं शांत होकर कैसे बैठ जाऊं।"

मेरा इतना कहना था कि शिक्षिका ने कहा, "हां ठीक भी तो है! जब बाहर लड़कियां इतना शोर कर रही हैं तब [illegible] कैसे शांत होकर बैठ सकती हैं?" हंसी [illegible] प्रवाह कक्षा में फूट पड़ा।

—निशि तनेजा, रघुनाथ गर्ल्स कालेज, मे[illegible]

यह स्तंभ युवा-वर्ग के लिए है। कालेज के छात्र-छात्राएं इसके लिए रोचक एनक-डोट्स भेज सकते हैं। रचना के साथ अपना चित्र और कालेज का पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना आवश्यक है, अन्यथा रचना पर विचार नहीं किया जाएगा।

—संपादक

मैं तब द्वितीय वर्ष का छात्र था [illegible] उच्चतर माध्यमिक से उत्तीर्ण [illegible] के कारण मुझे सीधे द्वितीय वर्ष [illegible] ही प्रवेश मिला था। मैं नये वाताव[illegible] से पूरी तरह परिचित भी नहीं हुआ [illegible] अक्तूबर का महीना था। इंटरवल [illegible] धूप में बैठा विचारों में खोया था कि [illegible] की आवाज से मेरा ध्यान उस द्वार [illegible] गया जिससे शिक्षक महोदय निकले थे।

वे दस कदम ही गये होंगे कि [illegible] से उन्हीं के डील-डौल का लड़का दौ[illegible] हुआ आया। उसने शिक्षक महोदय [illegible] कॉलर पकड़ लिया। वे तुरंत पीछे [illegible] गये। छात्र बोला, "सर, मेरा ए[illegible] बना दीजिएगा।" नाम तो नहीं, पर उ[illegible] परिचय के लिए इतना बता दूं कि [illegible] बिहार के एक वरिष्ठ नेता का बेटा [illegible]

—रवीन्द्रकुमार [illegible]

अनुग्रहनारायण कालेज, प[illegible]

कालेज में जिस समय फर्स्ट इयर [illegible] एडमीशन लिया उस समय [illegible] लोगों की कक्षा भी ठीक से नहीं होती [illegible] हम नाच और गाने में लगे रहते। उस [illegible] भी यही हालत थी। कक्षा खाली [illegible] बगलवाले कमरे में बी. ए. की [illegible]
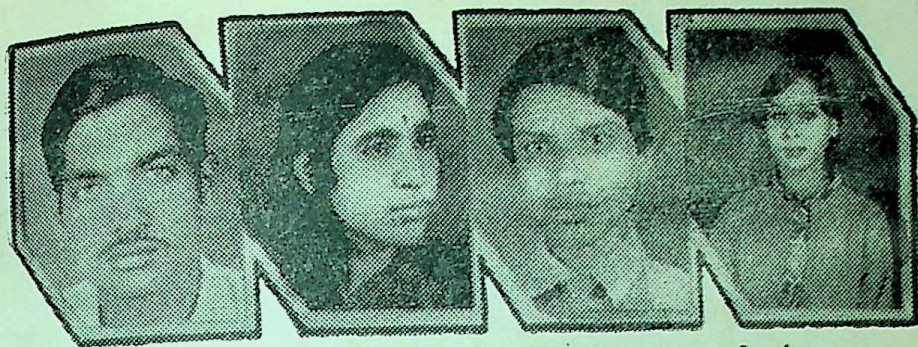
बायें से : राकेशकुमार सिंह, निधि तनेजा, रवीन्द्रकुमार वर्मा, कंचन

लगी थी, पर हमें पता नहीं था। एकाएक 'शट अप' का स्वर सुनायी दिया और क्रोध से पैर पटकते प्रोफेसर साहब हाजिर हुए। हम सब घबरा गये। मुझे कुछ नहीं सूझा तो मैं दौड़ती हुई एक बड़ी मेज के नीचे छिपकर बैठ गयी। अन्य लड़कियां खड़ी रह गयीं। प्रोफेसर साहब ने उनके नाम पूछे और नोट करके चले गये।

मैं अपनी चालाकी पर खुश थी। इतने में चपरासी एक कागज लेकर आया। पीछे से एक प्रोफेसर भी आये। उन्होंने पांच, पांच रुपये फाइन् बतलाया। सबसे पहले मेरा नाम था!

दो, तीन महीने बाद हम लोग बातें कर रहीं थीं। उस समय चर्चा का विषय था कि कौन कितनी होशियार है। जब मैं अपने बारे में कुछ कहने लगी, मेरी एक निकटतम सहेली बोली, "अरे चुप रहो! याद नहीं तुमको कि तुम बिल्ली की तरह मेज के नीचे घुस गयी थीं और मैंने किस सफाई से अपना नाम बदलकर तुम्हारा नाम बता दिया था!

—कंचन, फजलअली इंगलिश कालेज, मोकोक चुंग नगालैंड

जब तक सी. एम. पी. डिग्री कालेज, इलाहाबाद में बी. एस-सी. का छात्र रहा, यह अनुभव किया कि विज्ञान के विद्यार्थियों के साथ हमेशा यह विडंबना रही है कि उनके संबंधित विषय के प्रयोगात्मक अंक काफी हद तक कालेज के अध्यापक के हाथ में ही होते हैं। यदि कोई छात्र अनुशासनहीनता करता है तो अध्यापक यह धमकी देते हैं—"तुम्हें पता है कि इसका नतीजा क्या होगा? तुम्हारे प्रैक्टिकल के अंक हमारे हाथ में हैं।" यदि छात्र कोई प्रश्न पूछे और उत्तर देने में अध्यापक असमर्थ हो तो वे समझते हैं कि छात्र ने उनका अपमान किया है, और वे तुरंत ऐसी धमकी देने लगते हैं।

—राकेशकुमार सिंह, एल. एल. बी. (प्रथम वर्ष), धर्म समाज कालेज, अलीगढ़

राजेन्द्र बाबू के व्यक्तित्व पर एक नयी दृ

सादगी और सचाई को साथ लेकर व्यक्ति किस ऊंचाई तक पहुंच सकता है, उसका एक उदाहरण भारत के प्रथम राष्ट्रपति स्व. राजेन्द्रप्रसाद के व्यक्तित्व से स्पष्ट था। **'स्वतंत्र भारत की झलक'** और **'राजेन्द्र बाबू की आत्मकथा'** नामक दो नवप्रकाशित पुस्तकें उनकी सरलता और सहजता को साकार करतीं हैं। प्रथम पुस्तक उन पत्रों का संकलन है जिन्हें राजेन्द्र बाबू ने पुत्री-तुल्य डॉ. ज्ञानवती

दरबार को समय-समय पर लिखे। सन १९५८ से लेकर १९६० तक के इन पत्रों में बाबूजी के राजनीतिक, पारिवारिक, सामाजिक जीवन की अनेक घटनाएं एवं उनकी प्रतिक्रियाओं की झलक मिलती है। ये पत्र राजनीति के औपचारिक क्षणों में से झांकते अनौपचारिक पल हैं जिनकी तलाश प्रत्येक व्यक्ति को होती है। इनमें अंतरिम सरकार, संविधान, कश्मीर-समस्या, कृषि, गांधी, कांग्रेस आदि विभिन्न विषयों पर ईमानदारी से अपनी भाव और विचार प्रगट किये गये हैं। क कहीं इनमें लेखक की तीव्र प्रति भी दिखायी देती है। गणतंत्र-दिवस संबंधित समारोह 'बीटिंग द रिट्रीट' आधुनिक समय में निरर्थकता प्रद करते हुए उन्होंने व्यक्त किया है कि सकता है किसी समय इसका अर्थ रहा किंतु अब न वे सिपाही रहे, न वे छा नियां और न ही वे परिस्थितियां रही हैं।' अनेक पत्रों में सी. राजगोपाल चार्य, श्री कृष्ण मेनन के प्रति उन प्रतिक्रियाएं भी हैं। कई स्थलों पर स कार की आलोचना भी है। विशेष रूप 'होलसेल' में उच्चपदाधिकारियों की विदे यात्रा जिनका देश को कोई लाभ न पहुंचता। राजेन्द्रबाबू के संबंध में क जाता है कि वे भारतीय संस्कृति की आ थे। संस्कृति की बात करते हुए सिने की अतियथार्थता तथा 'इल्यूजन' नयी पीढ़ी के लिए घातक माना है। स गता और दूरदर्शिता उनके अन्य गुण पाकिस्तान और कश्मीर के संबंध में विचार उन्होंने प्रगट किये थे वे आज ज्यों के-त्यों खरे उतर रहे हैं। यह पुस्त तत्कालीन अनेक घटनाओं का निष्प विश्लेषण करती है।

दूसरी पुस्तक राजेन्द्र बाबू की आत्म कथा का संक्षिप्त संस्करण है जिसमें उन

प्रारंभि राजनी पलनि है। इ परिव बल पद आने नवपी उदाह पुरुषो बाबू त्मक नहीं का

स्वत लेख सस्त सर आत राज संक्षे सा नय रूप

अ क प

प्रारंभिक जीवन, शिक्षण, छात्र-आंदोलन, राजनीतिक गतिविधि तथा विभिन्न पदोपलब्धियों का क्रमिक विकास दर्शाया गया है। इससे पता चलता है कि एक विशाल परिवार में जन्म लेकर अपनी प्रतिभा के बल पर वे किस प्रकार भारत के सर्वोच्च पद के अधिकारी हुए। छात्र-जीवन में आनेवाली अनेक कठिनाइयों का वर्णन नवपीढ़ी के लिए कर्मठता का एक सजीव उदाहरण है। विभिन्न विद्वानों और महापुरुषों से संपर्क तथा उनके प्रभावों को बाबूजी ने बेहिचक स्वीकारा है। तथ्यात्मक घटनाओं के वर्णन में कहीं भी शुष्कता नहीं है। सीधी-सादी भाषा में घटनाओं का प्रवाह आद्योपांत रोचक है।

पुस्तकें निस्संदेह प्रेरक हैं।

स्वतन्त्र भारत की एक झलक
लेखक : डॉ. ज्ञानवती दरबार, प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, कनाट सरकस, नयी दिल्ली, पृष्ठ : ३३८, मूल्य : आठ रुपये

राजेन्द्र बाबू की आत्मकथा
संक्षेपकार : ओंकार शरद्, प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, कनाट सरकस, नयी दिल्ली, पृष्ठ : २९४, मूल्य : छह रुपये

एक उपन्यास

'रिश्ता' उपन्यास मानवीय कुंठाओं और कामनाओं का मिश्रित रूप प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास रिश्तों की सीमाओं और संभावनाओं में जीती एक नारी की मनोवैज्ञानिक कहानी है, जो प्रेम को एक उपलब्धि मानती है और यह उपलब्धि उसे प्राप्त होती है एक विवाहित कलाकार में। यह कलाकार प्रकृति से कायर है। नारी के कौमार्य से निरंतर वह भयभीत रहता है और अंत तक असंतुलित मनःस्थिति में रहता है। सामाजिक वर्जनाओं से विवश वह उस कलाकार (पॉल) को छोड़कर एक लेक्चरार से विवाह कर लेती है किंतु पहला प्रेम यहां भी आड़े आता है। रिश्ते की एक और श्रृंखला टूट जाती है। यहां उसे पता चलता है कि पॉल की पुत्री का विवाह, जिसे उसने जन्म दिया था, पॉल की पहली पत्नी के लड़के से हो जाता है। इसके अतिरिक्त एक और रिश्ता है उन विवश बहनों का, जिनका भाई उनसे पेशा करवाता है। उपन्यास के विविध रिश्ते अपनी विचित्रताओं के साथ चित्रित हुए हैं। उपन्यास रोचक है, किंतु घटनाओं का जाल कहीं-कहीं गति में अवरोध उत्पन्न करता है।

रिश्ते
लेखक : सुदर्शन चोपड़ा, प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली, पृष्ठ :-१६३, मूल्य : आठ रुपये

एक कहानी-संग्रह

'आबनूस' (सुरेन्द्र वर्मा) एक कहानी-संग्रह है। इसकी अधिकांश कहानियां

लघु हैं। 'चेहरे', 'कैलेन्डर' और 'आबनूस'—जैसी अनेक कहानियां मन के किसी कोने में छिपी कुंठाओं की बात करती हुई अपने को तलाशती हैं। बाह्य परिवेश में सब ही कहीं-न-कहीं 'मिसफिट' हो रहे हैं। आधुनिक सभ्यता से ग्रस्त मनुष्य की विवशता भी कुछ कहानियों में व्यक्त होती है। कुल मिलाकर, संग्रह समय काटने के लिए अच्छा है।

आबनूस

लेखक : सुरेन्द्र अरोड़ा, प्रकाशक : भारती भाषा प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ : १०२, मूल्य—पांच रुपये पचास पैसे

एक नाटक

'युगावतार' भारतेन्दु के अंतरंग जीवन पर आधारित त्रिअंकीय नाटक है। मल्लिका नामक नर्तकी के प्रेम-पाश में बंधे होने के कारण उनका पारिवारिक जीवन असंतुष्ट था। आर्थिक रूप से संकट-ग्रस्त होते हुए भी आवश्यकता-ग्रस्त लोगों की सहायता करना उनकी उदारता कही जा सकती है। नाटक में भारतेन्दु की रचनाओं से मूल पंक्तियां भी उद्धृत की गयी हैं। भारतेन्दु के जीवन के साथ-साथ तत्कालीन साहित्यिक परिवेश भी उभर सका है। नाटकीयता की दृष्टि से यह शिथिल है।

युगावतार

लेखक : अमृतलाल नागर, प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली, पृष्ठ : ६४, मूल्य : चार रुपये

दो अन्य पुस्तकें

'सप्त सरिता' में गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिंधु, कावेरी—इन सात नदियों के प्रति भक्ति प्रदर्शित करते हुए लेखक ने उनका सजीव वर्णन किया है। इन नदियों के उद्गम-स्थल हिमालय, विंध्य, सतपुड़ा और सह्याद्रि नामक तीन पर्वतों को भी श्रद्धांजलि अर्पित की है। संक्षेप में, इन नदियों का सांस्कृतिक महत्त्व प्रदर्शित किया गया है।

'गांधीजी और स्वाधीनता आन्दोलन' गांधीजी के राजनीतिक व्यक्तित्व के प्रति नेहरूजी की श्रद्धांजलि है। पुस्तक में 'राष्ट्रपिता' और 'बापू मेरी नजर में' आदि पुस्तकों में संकलित सामग्री का उपयोग किया गया है। गांधीजी पर यों तो अनेक पुस्तकें निकल चुकी हैं, किंतु संक्षिप्त आकार में यह उपयोगी पुस्तक है।

—डॉ. शशि शर्मा

सप्तसरिता

लेखक : काका साहब कालेलकर, प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, कनाट सरकस, नयी दिल्ली, पृष्ठ : १०७, मूल्य : तीन रुपये

गांधीजी और स्वाधीनता आन्दोलन

प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, कनाट सरकस, नयी दिल्ली, पृष्ठ : ११८, मूल्य : तीन रुपये

दो गीत-पुस्तकें

भीड़ में हर पल, क्षण टूटने और बिखरने के इस युग में '**हरापन नहीं टूटेगा**' नवगीतकार रमेश रंजक के मन का मोहक किंतु अनाहत दर्प है, और अंतर का हरियाया हुआ लचीलापन गीतों के हर शब्द, हर पंक्ति में ही नहीं दिखता, बल्कि आवरण पृष्ठ पर भी बुरक दिया गया है। प्रतीकों की अनोखी योजना में हरापन अपने आप में एक दर्पीला प्रतीक है। यह दर्प, चाहे इसे कवि की रचनात्मकता अथवा सृजनात्मकता का हरा लचकदार (बंसीला, बंसवर, केन—जो टूटता नहीं, चाहे झुक जाए) प्रतीक माना जाए, है यह चुनौती ही। 'अपनी बात' में कवि की गीत और गीतात्मकता के बीच सूक्ष्म विभाजक रेखा साफ-साफ झलकी है, इस सत्य को ईमानदारी से स्वीकारा है। हृदयगत भावनाओं की तीखी अभिव्यक्ति भाषायिक पैनेपन के साथ उभरी है। बाहरी भीड़ से उत्तर मांगते हुए प्रश्न नश्तर से चुभते हैं, साथ ही दर्पदंश की स्थिति से बाध्य होकर स्वप्न-सा टूट जाने की आत्मस्वीकृति भी है। मानवीय लाचारगी की व्यंग्यपूर्ण किंतु निरीह बयानगी, 'हरापन नहीं टूटेगा' इस दर्प को, आस्था-अनास्था के बीच झूलता हुआ छोड़ देती है। देशज शब्दों को ध्वनि-सहित पकड़ने का अभाव एकाध जगह खलता है। कहीं-कहीं प्रतीकों की बाजीगरी समझ में नहीं आती।

हरापन नहीं टूटेगा

लेखक: रमेश रंजक, प्रकाशक: अक्षर प्रकाशन प्रा. लि., २।३६ अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली—६, पृष्ठ: ९५, मूल्य: आठ रुपये

इसी जोड़ का नवगीतकार नचिकेता का प्रथम संकलन '**आदमकद खबरें**' है। आवरण पर खड़ा है लंबूतरा अस्थिपिंजर—अत्याधुनिक कटु यथार्थ भूमि पर बामुश्किल टिकाकर खड़ा किया गया प्रबल प्रत्यक्ष प्रमाण। गीतों में लयात्मकता की क्षतिपूर्ति शिल्प की विशिष्टता और तेवर के पैनेपन से हुई है। गीतों में जीवन की कटु यथार्थता की छोटी-छोटी मानसिक प्रतिक्रियाओं की सहज अभिव्यक्ति, अद्भुत त्वरायुक्त प्रतीकों के माध्यम से कटु-व्यंग्य के रूप में हुई है।

—मीना सिंह

आदमकद खबरें

लेखक: नचिकेता, प्रकाशक: अंतराल प्रकाशन, नवागढ़ी, गया (बिहार). पृष्ठ: ६४, मूल्य: पांच रुपये

पत्नी: यदि तुम मेरे पति होते तो मैं तुम्हें एकदम जहर दे देती।

पति: और यदि तुम मेरी पत्नी होती तो मैं वह जहर बड़ी खुशी से पी जाता।

खतरनाक खेल

रिचर्ड कोनेल

रहस्य-रोमांच से पूर्ण साहित्य रचने में सिद्धहस्त रिचर्ड कोनेल की कहानियों एवं उपन्यासों का संसार की कई प्रमुख भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। 'खतरनाक खेल' उनके ऐसे ही एक विश्व प्रसिद्ध उपन्यास 'द डेंजरस गेम' का सार-संक्षेप है। प्रस्तोता हैं —रानी त्रिवेदी

"उस ओर दायीं तरफ कहीं एक द्वीप है। उसके विषय में बड़ी रहस्य-मय बातें कही जाती हैं।" विटनी ने बात शुरू करते हुए कहा।

उसके पास ही डेक पर खड़े रेंसफोर्ड ने पूछा, "कौन-सा द्वीप है वह? क्या नाम है उसका?"

"असली नाम का तो पता नहीं, पर पुराने नक्शों में तो उसे 'नौका-विध्वंसक द्वीप' कहा गया है। पता नहीं, नाविक क्यों उससे बहुत डरते हैं!"

कृष्ण पक्ष की रात के घने अंधेरे में आंखें गड़ाते हुए रेंसफोर्ड ने फिर पूछा, "कहां है वह? मुझे तो कुछ भी नहीं दिख रहा है?"

विटनी हंस पड़ा, "माना कि तुम्हारी शिकारी आंखें बहुत तेज हैं, फिर भी अंधियारे पाख की इस चंद्रविहीन रात्रि के सघन अंधेरे में तुम लगभग एक मील दूर स्थित द्वीप तो नहीं देख सकोगे। खैर, हमारे रियो पहुंचते तक रातें उजियारी होने लगेंगी। अमेजन के तट पर हमें काफी अच्छा शिकार मिलेगा।"

रेंसफोर्ड उससे पूरी तरह सहमत था, बोला, "हां, दुनिया का सबसे अच्छा खेल यही है।"

"पर केवल शिकार करनेवाले [illegible] लिए। मरनेवाले के लिए तो. . ."

"बको मत विटनी, तुम शिकारी [illegible] दार्शनिक नहीं। दुनिया में केवल दो [illegible] हैं। एक है शिकार और दूसरा शिका[illegible] सौभाग्य से हम दोनों शिकारी हैं। [illegible] तुम्हारा क्या खयाल है, द्वीप निकल गया[illegible]" रेंसफोर्ड ने पूछा।

"इस अंधेरे में भला मैं क्या [illegible] सकता हूं? वैसे वह निकल ही गया [illegible] तो अच्छा है। इस द्वीप के कारण ज[illegible] पर बेहद आतंक छाया है। कप्तान [illegible] भयभीत है।"

"सुनी-सुनायी बातों को मान[illegible] लोग व्यर्थ दुःख उठाते हैं। अपने [illegible] साथ दूसरों के मन में भी डर पैदा [illegible] हैं," रेंसफोर्ड धीरे-से बोला।

विटनी को नींद आ रही थी। उ[illegible] कोई उत्तर नहीं दिया और सोने [illegible] गया। रेंसफोर्ड डेक की रेलिंग के [illegible] खड़ा होकर पाइप पीने लगा। [illegible] उसने दूर अंधेरे में कहीं गोली चलने[illegible] आवाज सुनी। वह उछल पड़ा। [illegible] रेलिंग के सहारे ऊंचे खड़े होकर दे[illegible]

की कोशिश की तभी रस्सी में उलझ जाने से उसका पाइप छूट गया। रेंसफोर्ड ने उसे पकड़ने के लिए झुकने की कोशिश की और संतुलन न संभाल पाने के कारण अंधकार से भरे सागर में गिर पड़ा। उसने तुरंत ही ऊपर आकर जहाज को पकड़ने का प्रयत्न किया, पर वह सफल न हो पाया। जहाज हर पल दूर होता जा रहा था। धीरे-धीरे वह अंधेरे में गायब हो गया।

स्वयं को असहाय पाकर रेंसफोर्ड कुछ घबराया, पर शीघ्र ही उसने खुद को संभाल लिया। अब उसका दिमाग तेजी से काम करने लगा। सबसे पहले उसने अपने कपड़े उतारे। उसे याद था कि गोली चलने की आवाज दायीं ओर से आयी थी। वह उसी दिशा में तैरने लगा।

कुछ दूर तक तैरने के बाद वह थक चला। तभी उसे लगा, जैसे कोई भयभीत जानवर कराह रहा है। जाने क्यों, इस आवाज से रेंसफोर्ड को शक्ति मिली। एक नयी आशा के साथ वह उसी ओर बढ़ चला। सहसा 'धांय-धांय की ध्वनि ने बीच में ही उसे रोक दिया। उसने सोचा

"पिस्तौल चली है,' इसका यह भी अर्थ था कि तट बहुत अधिक दूर न था। रेंसफोर्ड का अनुमान ठीक था। दस मिनट बाद ही उसे चट्टानों पर लहरों के टकराने की सुखद ध्वनि सुनायी पड़ी। जीवन में शायद ही कभी कोई ध्वनि उसे इतनी प्रिय लगी थी। रही-सही शक्ति समेटकर वह फेनिल पानी में आगे बढ़ता गया। अंत में वह एक समतल स्थान पर पहुंच ही गया। तट पर पहुंचते ही रेंसफोर्ड को थकावट ने घेर लिया और वह रेत पर गिर पड़ा। शीघ्र ही नींद ने उसे धर दबोचा।

रेंसफोर्ड की जब नींद खुली तब ऊपर आसमान में सूरज चमक रहा था। थकान दूर हो जाने से वह स्वयं में नयी शक्ति का अनुभव करने लगा था। उसे भूख भी लग आयी थी। उसने स्वयं से तर्क किया, 'जहां पिस्तौल होगी वहां मनुष्य होगा, और जहां मनुष्य होगा, वहां भोजन तो होगा ही'; और वह तट के किनारे-किनारे चलने लगा।

कुछ दूर जाने के बाद उसकी दृष्टि एक छोटी-सी चमकदार वस्तु पर पड़ी। उसने उसे उठाया। वह एक खाली कारतूस था। नं. २२ की गोली! वह सोच में पड़ गया। आसपास की घास किसी विशाल पशु द्वारा रौंदी प्रतीत हो रही थी, शिकार के लिए छोटी बंदूक का उपयोग शिकारी के साहस का परिचायक था। अब रेंसफोर्ड बारीकी से जमीन का निरीक्षण करते हुए आगे बढ़ने लगा। जैसी कि उसे आशा थी, शीघ्र उसे शिकारी-बूटों के चिह्न दिखायी दे गये। अब वह उन निशानों के सहारे तेजी से आगे बढ़ने लगा।

सांझ घिर आयी थी। रेंसफोर्ड रात घिरने के पूर्व ही किसी ठिकाने पर पहुंच जाना चाहता था। एकाएक उसे बहुत-सी बत्तियों का प्रकाश दिखायी दिया। पहले तो उसे लगा, जैसे वह किसी छोटे शहर में पहुंच गया है, लेकिन पास पहुंचने पर उसने देखा कि सारी बत्तियां एक ही इमारत की थीं। यह इमारत पानी में आगे निकली एक चट्टान पर थी।

महल के मुख्य द्वार पर पहुंचकर रेंसफोर्ड ने कुंडा खटखटाया। कुछ देर बाद दरवाजा खुला और अब रेंसफोर्ड के सामने लंबी काली दाढ़ीवाला एक हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति हाथ में रिवाल्वर लिये खड़ा था। रेंसफोर्ड ने उसे अपना परिचय दिया, पर वह दैत्याकार व्यक्ति मूर्ति की तरह हाथ में रिवाल्वर लिये खड़ा रहा।

तभी रेंसफोर्ड ने देखा, सायंकालीन वस्त्रों में सुसज्जित इकहरे बदनवाला एक व्यक्ति संगमरमर की सीढ़ियों से नीचे उतरकर उसकी ओर बढ़ रहा है। उस व्यक्ति ने रेंसफोर्ड की बात सुन ली थी। उसकी ओर हाथ बढ़ाते हुए वह बोला, "अपने गरीबखाने में संसार के मशहूर शिकारी सेंगर रेंसफोर्ड का स्वागत करते हुए मैं खुशी और गर्व का अनुभव कर रहा हूं।" रेंसफोर्ड से हाथ मिलाते हुए उसने

कहा, "मैं जनरल जेरोफ हूं।"

रेंसफोर्ड ने उसे ध्यान से देखा। वह एक लंबा-सा, अधेड़ व्यक्ति था। उसके सिर के बाल तो सफेद थे लेकिन मूंछों और दाढ़ी के बाल काले थे। उसकी आंखों में भी अनोखी चमक थी। जनरल जेरोफ नामक उस व्यक्ति ने रिवाल्वर लिये व्यक्ति को इशारा किया। उसने रिवाल्वर हटा लिया और अभिवादन कर चला गया।

"इवान असाधारण शक्ति-संपन्न व्यक्ति है," जनरल बोला, "दुर्भाग्यवश वह गूंगा और बहरा है। सीधा, लेकिन खूंख्वार है।"

"क्या वह रूसी है?"

"कज्जाक है! वही मैं भी हूं। च... आपको इस समय कपड़ा, खाना तथा आ... की जरूरत है।" जनरल ने कहा।

कुछ समय बाद रेंसफोर्ड, जन... जेरोफ के साथ बैठा भोजन कर रहा... जनरल ने रेंसफोर्ड को अपने बारे में ... बातें बतायीं। उसने कहा, "मैं भी शि... हूं और इस द्वीप पर जंगली भैंसे से ... अधिक खतरनाक जानवर का शि... करता हूं। पर एक बात है, प्रकृति ... उन्हें यहां पैदा नहीं किया है। मुझे ... उन्हें यहां लाना पड़ता है।"

"तो आप शेर लाते होंगे?" रेंस... ने पूछा।

जनरल मुसकराया, "नहीं, शेरों के शिकार से मेरी तबीयत ऊब चुकी है। अब शेर के शिकार में न कोई खतरा महसूस होता है, न कोई उत्तेजना। मैं तो खतरे से जूझने के लिए ही जीवित हूं, पर अब बढ़िया शिकार होगा। उसमें शामिल होंगे—मैं और आप!"

"लेकिन जानवर कौन-सा होगा?" रेंसफोर्ड ने उत्सुकता से पूछा।

"बताता हूं। हर तरह के शिकार से ऊबने के बाद मैंने अपनी बुद्धि का प्रयोग कर एक नये जानवर का आविष्कार कर डाला।" जनरल ने चैन से कहा।

रेंसफोर्ड को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ, "नये जानवर का आविष्कार! नहीं, आप मजाक कर रहे हैं!"

जनरल अब एकदम गंभीर होकर बोला, "मि. रेंसफोर्ड, मैं शिकार के मामले में कभी मजाक नहीं करता। मुझे एक नये जानवर की आवश्यकता थी, सो मैंने उसे खोज लिया। फिर मैंने यह द्वीप खरीदा, घर बनवाया, और अब चैन से यहीं उस जानवर का शिकार खेलता हूं।"

रेंसफोर्ड की उत्सुकता सीमा पार कर गयी। जनरल कहता गया, "मुझे ऐसे जानवर की जरूरत थी जो चतुर होने के साथ-साथ तर्क करने की क्षमता भी रखे।"

"लेकिन तर्क करने की क्षमता तो किसी भी जानवर में नहीं होती!" रेंसफोर्ड ने आश्चर्य से कहा।

"क्यों दोस्त, क्या वह दो पैर के जानवर में नहीं होती?" जनरल ने ढिठाई से पूछा।

"नहीं, नहीं, आपका आशय मनुष्य से नहीं हो सकता!" रेंसफोर्ड परेशान होकर चिल्ला-सा पड़ा।

"मेरा आशय बिलकुल वही है। आप ठीक समझे हैं।"

"यह शिकार नहीं, हत्या है।"

जनरल जोर से हंस पड़ा, "मैं दावे के साथ कहता हूं कि आप मेरे साथ शिकार पर चलेंगे तो आपकी यह राय बदल जाएगी। आपको बेहद मजा आएगा।"

"धन्यवाद, मैं शिकारी हूं, हत्यारा नहीं!" रेंसफोर्ड कड़वाहट से बोला।

"अरे भई, आप तो फिर वह बेतुका शब्द इस्तेमाल कर रहे हैं! मैं तो इस संसार की गंदगी, यानी जहाजों से गिरे खलासी नाविकों, नीग्रो, चीनी आदि लोगों का शिकार करता हूं।"

"आपको यह सब मिलते किस स्थान से हैं?"

रेंसफोर्ड की इस बात पर जनरल ने अपनी बायीं आंख दबाकर इशारा किया, "इस द्वीप को 'नौका-विध्वंसक' कहा जाता है? आओ, इस खिड़की से आकर देखो।"

रेंसफोर्ड खिड़की के पास पहुंचकर बाहर समुद्र की ओर देखने लगा।

"देखो, उस तरफ देखो," एक बटन दबाते हुए जनरल ने कहा। रेंसफोर्ड ने कुछ दूरी पर रोशनी देखी। ये रोशनियां वहां पर एक खाड़ी होने का संकेत देती

हैं, जबकि हैं वहां पर तलवार-सी नुकीली चट्टानें। उनसे टकराकर जहाज टुकड़े-टुकड़े हो सकता है। ये रोशनियां असल में बिजली की बत्तियां हैं। यहां हम सभ्यता के साथ रहते हैं।"

"सभ्यता के साथ ! मनुष्य का शिकार करके ?"

"मैं अपने मेहमानों की पूरी खातिर-दारी करता हूं," जनरल बड़ी प्रफुल्लता से बात कर रहा था, "उन्हें भरपेट बढ़िया खाना खिलवाता हूं। व्यायाम करवाकर उनका स्वास्थ्य सुधारता हूं। कल मैं आपको अपना प्रशिक्षण केंद्र दिखाऊंगा। वह नीचे तहखाने में है। इस समय उसमें, उन चट्टानों से टकरा जानेवाले एक अभागे स्पेनिश जहाज के करीब दो दर्जन नाविक हैं।"

इस बीच इवान कॉफी ले आया था। जनरल बेझिझक कहता जा रहा था, "यह एक खेल है। इनमें से एक को मैं शिकार खेलने का सुझाव देता हूं। तीन घंटे पहले उसे रवाना कर मैं केवल एक साधारण-सी पिस्तौल लेकर पीछा करता हूं। शिकार यदि तीन दिन तक मुझसे बचा रहे तो वह विजयी माना जाता है, और यदि मैं उसे खोज लेता हूं तो वह . . . वह हार जाता है।" जनरल मुसकरा उठा।

"अगर वह जीत जाए तो क्या होता है ?"

जनरल ठठाकर हंस पड़ा। बोला, "आज तक तो मैं हारा नहीं हूं। मि. रेंसफोर्ड, मैं बेजा घमंड नहीं करता हू। एक बार एक नाविक करीब-करीब जीतनेवाला था। तब मुझे शिकारी कुत्तों की सहायता लेनी पड़ी थी !"

"शिकारी कुत्ते !" रेंसफोर्ड ने हैरान होकर पूछा।

"इधर आकर देखिए।"

जनरल उसे दूसरी खिड़की की ओर ले गया। रेंसफोर्ड ने जो कुछ देखा, उससे उसके रोयें खड़े हो गये। जनरल ने मानो जानवर का ही अविष्कार नहीं किया था बल्कि खूंख्वार कुत्ते भी तैयार किये थे। उसने इतने खूंख्वार कुत्ते नहीं देखे थे। उसका मन जनरल के प्रति घृणा से भर गया। इसीलिए जब जनरल ने उसे शिकार पर चलने को कहा तब उसने बेरुखी से जवाब दिया, "जी नहीं, मैं आपके साथ नहीं चल सकूंगा।"

जनरल ने हंसकर क[हा], "तब तो मुझे बहुत खेद होगा। खैर कोई बात नहीं। मेरा आज का शिकार भी काफी मनोरंजक होगा। वह एक तगड़ा चालाक नीग्रो है।"

दूसरे दिन जब रेंसफोर्ड की जनरल से भेंट हुई तब उसने कहा, "जनरल, मैं आज ही द्वीप से जाना चाहता हूं !"

जनरल क्षण भर उसे गौर से देखता रहा, फिर सहसा पुलककर बोला, "आज रात हम दोनों शिकार खेलेंगे।"

रेंसफोर्ड ने असहमति से सिर हिलाया।

जनरल ने कंधे उचकाकर कहा, "तब आपको इवान के हवाले कर दिया जाएगा। आप दोनों के बीच चुनाव कर

सकते हैं पर मैं एक बार फिर कहूंगा, तरीके इवान से कहीं बेहतर हैं।"

"आप यह क्या कह रहे हैं?" रेंसफोर्ड ने उत्तेजित होकर कहा।

"अगर तीसरे दिन की मध्य रात्रि तक मैं आपको न खोज सका तो मैं खुशी-खुशी हार मान लूंगा और फिर मेरा जहाज आपको किसी शहर तक पहुंचा देगा।"

क्षण भर रुक उसने कहना शुरू किया, "इवान आपको शिकार की आवश्यक वस्तुएं, कपड़े, खाना, चाकू आदि दे देगा। मेरा सुझाव है कि आप हरिण की खाल से बने जूते पहनें क्योंकि उनसे कम निशान पड़ते हैं। एक और सलाह है कि द्वीप के कोने में जो दलदल है, उससे आप दूर रहने की कोशिश करें। एक बेवकूफ उधर जा पहुंचा था। अच्छा, अब मुझे आज्ञा दें। मैं दोपहर के भोजन के बाद सोता जरूर हूं। मेरा खयाल है, अब आप यहां से निकल जाना पसंद करेंगे। मैं शाम के पहले पीछा नहीं करूंगा। रात का शिकार दिन से कहीं ज्यादा उत्तेजक होता है न?" इतना कहकर जनरल राजसी ढंग से अभिवादन की मुद्रा में झुका और कमरे के बाहर चला गया। दूसरे दरवाजे से इवान अंदर आया। उसके पास रेंसफोर्ड के लिए शिकार का सामान था।

झाड़ियों में दो घंटे चलने के बाद रेंसफोर्ड रुका। उसने सोचा, अपनी

बुद्धि ठिकाने रखना चाहिए। सीधे भागना व्यर्थ है क्योंकि इस तरह तो समुद्र पर जा पहुंचूंगा। अब तो जो कुछ करना है, वह भूमि पर ही करना है।

रेंसफोर्ड को सहसा पीछा करनेवाले को उलझाने के लिए निशान छोड़ने के तरीकों का ध्यान आया, और उसने जंगल में गोल-गोल घूमकर भूल-भुलैया-से निशान छोड़ दिये। रात घिर रही थी। उसने सोचा, अब तक तो मैंने लोमड़ी का काम किया, अब बिल्ली बनने की बारी है।

पास ही छितराई डालोंवाला एक बड़ा-सा पेड़ था। कोई भी निशान न छोड़ने की सावधानी बरतते हुए रेंसफोर्ड उस पर चढ़ गया और एक चौड़ी डाल पर लेट गया। कुछ देर के आराम ने उसमें नया विश्वास भरा।

घायल सांप की तरह रेंगती हुई वह शंकाभरी रात बीत गयी। सुबह होने ही वाली थी कि एक चौंके हुए पक्षी की आवाज की ओर रेंसफोर्ड का ध्यान गया। कोई झाड़ियों के बीच से आ रहा था। जैसे-जैसे वह आया था, बिलकुल उसी रास्ते से वह भी आ रहा था। रेंसफोर्ड डाल पर चिपक गया और पत्तियों के बीच से देखने लगा।

आनेवाला व्यक्ति जनरल जेरोफ ही था। पेड़ के नीचे आकर वह रुक गया और घुटनों के बल बैठकर, जमीन को ध्यान से देखने लगा। रेंसफोर्ड का मन हुआ कि वह चीते की तरह उस पर कूद पड़े, लेकिन उसने देखा कि जनरल के दायें हाथ में एक छोटा-सा पिस्तौल है।

जनरल ने कई बार इस तरह सिर हिलाया मानो उसकी कुछ समझ में नहीं आ रहा है, फिर उसने एक सिगरेट सुलगा ली। उसका तीखा धुआं रेंसफोर्ड की नाक की ओर बढ़ने लगा। रेंसफोर्ड ने तुरंत सांस लेना बंद कर दिया। जनरल ने अब जमीन की ओर देखना बंद कर दिया था। उसकी आंखें एक-एक इंच कर ऊपर पेड़ की ओर बढ़ रही थीं। रेंसफोर्ड का समस्त शरीर निश्चल था, लेकिन मांसपेशियां मौका आने पर उछल पड़ने को तैयार थीं। शिकारी की तेज आंखें रेंसफोर्डवाली डाल तक पहुंचने के पहले ही रुक गयीं। उसके गंदुमी चेहरे पर एक मुसकराहट फैल गयी। उसने आराम से सिगरेट से ढेर सारे धुएं का छल्ला उड़ाया और पेड़ की ओर पीठ करके जिस रास्ते आया था, उसी से लापरवाही के साथ चलता लौट पड़ा। उसके जूतों द्वारा झाड़ियों में उत्पन्न ध्वनि क्रमशः धीमी होती गयी।

रेंसफोर्ड ताड़ गया कि जनरल उससे खिलवाड़ कर रहा है और उसे अगले दिन के शिकार के लिए बचा रहा है। इस समय जनरल बिल्ली बना हुआ था और वह स्वयं था चूहा। रेंसफोर्ड का प्रथम बार भय से परिचय हुआ था। उसने स्वयं से कहा, 'मैं अपना संतुलन नहीं खोऊंगा, मैं अपना संतुलन बनाये रखूंगा।'

वह पेड़ से उतर जंगल में घुस गया। तीन सौ गज बढ़कर वह रुक गया, वह

पर एक बड़ा-सा सूखा वृक्ष दूसरे छोटे हरे पेड़ पर खतरनाक स्थिति में टिका था। रेंसफोर्ड ने अपना छुरा निकाला और काम में जुट गया।

जब उसका काम खत्म हो गया तब वह सौ गज दूर पेड़ के लठ्ठे के पीछे छिप गया। उसे अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। बिल्ली, चूहे के साथ खिलवाड़ करने वापस आ रही थी।

शिकारी कुत्ते की-सी निश्चितता से पदचिह्नों का अनुसरण करता हुआ जनरल जेरोफ आ रहा था। जनरल पदचिह्न देखने में ऐसा दत्तचित्त था कि रेंसफोर्ड की बनायी चीज पर पहुंचकर उसे पता चला कि उसका पैर बाहर निकले हुए सूखी डाल के खटके पर पड़ चुका है। उसे खतरे की आशंका हुई और तत्काल बंदर-जैसी फुरती से उछलकर अलग हो गया, फिर भी कुछ देर हो ही गयी थी, क्योंकि कटे हुए हरे पेड़ पर टिका सूखा वृक्ष जनरल के कंधों को रगड़ता हुआ हरहराकर नीचे गिर पड़ा था। यदि जनरल ने इतनी फुरती न दिखायी होती तो कुचला जाना निश्चित था। घायल कंधे को सहलाता हुआ वह खड़ा रहा। भय से धड़कते हृदय के साथ रेंसफोर्ड ने जनरल की उपहासभरी हंसी को जंगल में गूंजते सुना, "रेंसफोर्ड, अगर तुम मेरी आवाज सुन रहे हो तो मेरी बधाई स्वीकार करो। इस तरह का फंदा बनाना बहुत कम लोगों को आता है। सौभाग्यवश, मैं तो मलाया में शिकार खेल चुका हूं। इस समय मैं अपनी चोट की मरहमपट्टी कराने जा रहा हूं। छोटी - सी चोट है, मैं अभी लौटकर आता हूं।"

जनरल के जाते ही रेंसफोर्ड फिर भागा। शाम हो चुकी थी। रात का अंधकार धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था, लेकिन रेंसफोर्ड बढ़ता ही गया। उसने अनुभव किया, जैसे नीचे की जमीन नरम होती जा रही है। झाड़ियां भी अधिक और घनी होती जा रही थीं। अनेक प्रकार के कीड़े उसे बेतहाशा काटने लगे थे। सहसा उसका पैर गीली मिट्टी में धंस गया। काफी जोर लगाकर रेंसफोर्ड ने उसे बाहर निकाला। रेंसफोर्ड समझ गया कि वह दलदल के समीप पहुंच गया है। नरम मिट्टी ने उसे एक विचार सुझा दिया। बालुई दलदल से करीब तीन गज दूर हटकर उसने जमीन खोदनी शुरू कर दी। धीरे-धीरे गढ़ा गहरा होता गया। कंधे तक गहरा गढ़ा खोदकर वह बाहर आया, फिर कड़ी लकड़ी-वाले पौधों से उसने पैनी नोकवाले खूंटे बनाये। इन खूंटों की नोक ऊपर रखकर उसने उन्हें गढ़ में गाड़ दिया। उसने झाड़ियों, टहनियों, पत्तों आदि का कालीन-जैसा बुनकर गढ़े का मुंह ढंक दिया। इसके बाद वह बिजली से जले एक ठूंठ के पीछे छिप गया। उसका शरीर पसीने से भींग गया था और थकावट के कारण वह चूर-चूर हो रहा था।

नरम मिट्टी में थप-थप की आवाज से रेंसफोर्ड समझ गया कि उसका शिकारी

आ रहा है। रात की हवा के साथ जनरल की सिगरेट की सुगंध भी आयी। शिकार बने रेंसफोर्ड को महसूस हुआ कि जनरल असाधारण तेजी से चला आ रहा है। अचानक उसने टहनियों के चरमराने की आवाज के साथ गट्ठे के ऊपर रखे ढक्कन को टूटते हुए सुना। साथ ही उसने नुकीले खूंटों से घायल होनेवाले किसी प्राणी के चीखने की आवाज सुनी। गढ़े से तीन गज उस पार टार्च लिये कोई खड़ा था।

"शाबाश रेंसफोर्ड!" जनरल खुश होकर बोला, "तुम्हारे बर्मा शैली के शेर पकड़नेवाले गढ़े ने मेरे सबसे अच्छे कुत्ते को खतम कर दिया है। इस बार भी तुम उत्तीर्ण रहे। अब मुझे देखना है कि तुम मेरे कुत्तों के दल से कैसे निपटते हो?"

पौ फटने को ही थी कि दलदल के समीप सोते हुये रेंसफोर्ड की नींद दूर से हलकी रुक-रुककर आती आवाजों से उचट गयी। रेंसफोर्ड समझ गया, शिकारी कुत्तों के दल के भौंकने की आवाज है।

रेंसफोर्ड एक पेड़ पर चढ़ गया। उसने देखा, एक-एक फर्लांग की दूरी पर स्थित बरसाती नाले के पास की झाड़ियां हिल रही हैं। उसे जनरल का इकहरा शरीर भी दिखायी दिया। उसे जंगली झाड़ियों में से निकलती कुत्तों की आकृतियां भी दिखायी दीं। रेंसफोर्ड कांप उठा। कुत्तों के झुंड के पीछे इवान के साथ जनरल था। इस सामूहिक शक्ति से बच निकलना करीब-करीब असंभव था, लेकिन रेंसफोर्ड भी हार मानने को तैयार न था। उसके पास समय बहुत कम था। वह तेजी से सोचने लगा। उधर वे लोग उसके पास आते जा रहे थे। सहसा रेंसफोर्ड को एक युक्ति कौंध गयी। उसने युगांडा के आदिवासियों से यह तरकीब सीखी थी।

पेड़ से उतरकर रेंसफोर्ड ने एक पतले तनेवाले लचीले पेड़ को झुकाया और उस पर चाकू बांध दिया। फिर उसे मुड़े हुए पेड़ के तने से बांध दिया। चाकू की नोक, जिस ओर से दल आ रहा था उसी ओर थी। इसके बाद वह अपने प्राण लेकर भागा। शिकार की भरपूर गंध पाकर कुत्ते तेजी से दौड़ने लगे थे। रेंसफोर्ड के लिए वे मौत के समान थे। उसके लिए एक पल रुकना भी खतरे से खाली नहीं था। एकाएक कुत्तों की भयावनी आवाजें रुक गयीं। रेंसफ़ोर्ड चौंककर ठिठक गया। एक अज्ञात भय के कारण उसके हृदय की धड़कन रुकने-सी लगी। उसने अनुमान लगाया कि वे सब अब छुरेवाले पेड़ के पास पहुंच चुके होंगे और वहां जरूर कोई ऐसी बात हुई होगी, जिसके कारण उन्हें रुकना पड़ा है। यह विचार आते ही उसमें एक नयी शक्ति का संचार हुआ और वह उत्साहित होकर एक पेड़ पर चढ़ गया। रेंसफोर्ड ने देखा, जनरल जैरोफ तो ज्यों-का-त्यों खड़ा है, पर इवान नहीं है। जनरल जैरोफ को देखकर रेंसफोर्ड एक बार फिर जीवन से निराश हो गया। फिर भी इस बात की उसे खुशी थी कि

उसका छुरा व्यर्थ नहीं गया।

रेंसफोर्ड फिर फुरती से नीचे उतरने लगा। वह अभी भूमि पर पहुंचा भी न था कि शिकारी कुत्तों ने फिर से भौंकना शुरू कर दिया। इवान के घायल होने के कारण वे रुक गये थे, पर अब फिर तेजी से दौड़ रहे थे। रेंसफोर्ड इस समय भय और घबराहट से बचना चाहता था। उसके लिए अपनी बुद्धि स्थिर रखना जरूरी था। कुछ दूर जाने के बाद जंगल खत्म हो गया। सामने पेड़-पौधों से रहित साफ जगह थी, और फिर उसके आगे था गहरा समुद्र जंगल की ओर मुड़ने के रास्ते पर साक्षात मृत्यु खड़ी थी। रेंसफोर्ड बिना कुछ सोचे आगे दौड़ता गया। अचानक उसे रुक जाना पड़ा। उस समय वह समुद्र तट की एक चट्टान पर खड़ा था। वहां से बीस फुट नीचे समुद्र गरज रहा था। सर्पों की तरह फुफकारती हुई उसकी विशाल लहरें चट्टानों से टकरा रही थीं। समुद्र का विकराल रूप देखकर रेंसफोर्ड हिचकिचाया, लेकिन फिर यह सोचकर कि समुद्र में डूबने से होनेवाली मौत, शिकारी कुत्तों द्वारा नोचे जाने अथवा उस नर राक्षस के हाथों पड़ने से अच्छी होगी, रेंसफोर्ड आंखें बंद कर समुद्र में कूद पड़ा।

कुछ देर बाद जनरल और उसके शिकारी कुत्ते भी वहां आ पहुंचे। किनारे पर पहुंचकर जनरल पानी की गहराई का अंदाज लगाता रहा, फिर निश्चितता से कुछ दूर चट्टान पर बैठ गया। अब उसका काम खत्म हो गया था। आराम से गीत गुनगुनाते हुए उसने एक सिगरेट जलाकर मुंह से लगा ली।

महल लौटकर वह दिन भर चैन से सोता रहा। रात को उसने बढ़िया शराब के साथ भोजन किया। तीन दिन के बढ़िया शिकार ने उसकी भूख जगा दी थी, लेकिन इवान-जैसे दुर्लभ सेवक के मारे जाने और शिकार के समुद्र में कूद जाने की घटनाएं याद आ-आकर उसके
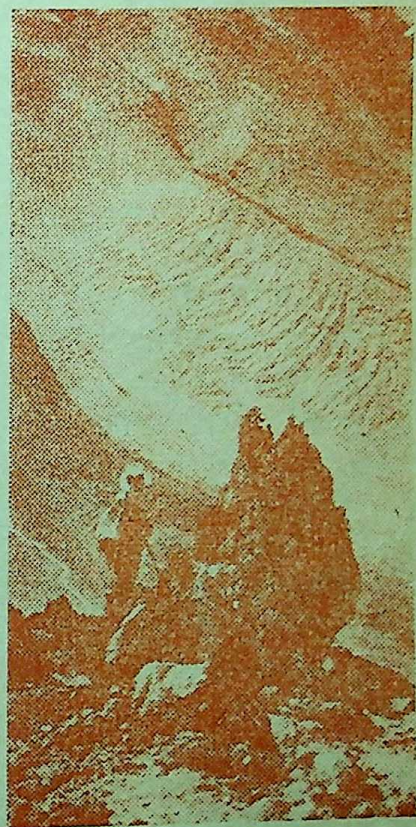
आनंद में बाधा डाल रही थीं। दिन भर सोते रहने के कारण उसे नींद नहीं आ रही थी, अतः लायब्रेरी में बैठकर वह एक पुस्तक पढ़ने लगा। घड़ी ने जब टन्न-टन्न कर दस बजाये तो वह सोने के लिए शयनागार की ओर बढ़ा। आकाश में चांदनी छिटकी हुई थी। जनरल खिड़की के पास जा खड़ा हुआ। बाहर सहन में उसके शिकारी कुत्ते घूम रहे थे। एक बार फिर वह मौज में आ गया, और अपने कुत्तों को आवाज देता हुआ बोला, "अगली बार किस्मत जरूर साथ देगी।"

इसके बाद उसने बत्ती जलायी। कमरे के दूसरी ओर निगाह पड़ते ही वह चौंककर दो कदम पीछे हट गया। उसके शानदार पलंग के पीछे लगे परदे के पास रेंसफोर्ड खड़ा हुआ था। उसके हाथ में रिवाल्वर था।

'रेंसफोर्ड तुम! तुम यहां कैसे आ गये?" जनरल लगभग चिल्लाकर बोला।

"क्यों, क्या जंगल के अतिरिक्त यहां आने का कोई रास्ता नहीं था। जिस जगह मैं समुद्र में कूदा था, वहां से तुम्हारा यह महल दिख रहा था। शिकारी होने के साथ मैं एक बहुत अच्छा तैराक भी हूं, यह शायद तुम नहीं जानते थे?" रेंसफोर्ड ने उत्तर दिया।

अब तक जनरल ने अपने भय पर नियंत्रण कर लिया था। अब उसके चेहरे पर चालाकी की छाया थी। वह मुसकरा कर बोला, "मेरी बधाई स्वीकार करो रेंसफोर्ड! इस बार तुम, शानदार ढंग से विजयी रहे हो।"

जनरल की इस खुशामद पर रेंसफोर्ड मुसकराया नहीं बल्कि दांत पीसता हुआ बोला, "नहीं जनरल जेरोफ, मैं वही जान बचाता, भागता हुआ जानवर हूं। अब तुम तैयार हो जाओ।"

जनरल ने जरा-सा झुककर बड़े नाटकीय ढंग से रेंसफोर्ड की बात का स्वागत किया, और उत्साह का ढोंग रचाते हुए, हलके से कांपते हाथों से पिस्तौल उठाकर, अहंकार और आत्मविश्वास-भरे स्वर में बोला, "वाह! यह तो उस बढ़िया शिकार का और भी मजेदार अंत है। अब मैं अपने प्यारे कुत्तों की निराशा दूर कर सकूंगा। यों तो हम दोनों को बराबर का अवसर मिल रहा है। हो सकता है, तुम ही इस सुंदर शैया पर आज की रात बिताओ और मैं..."

इस वाक्य के अंतिम शब्द दो पिस्तौलों के साथ-साथ चलने की आवाज में डूब गये।

सुबह दोनों शिकारी, दो किस्म के बिस्तरों पर पड़े थे। एक तो जनरल के मुलायम बिस्तर पर सुख की नींद सो रहा था, और दूसरा, अपने खून से सना, फर्श पर पड़ा था।

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

महाशयजी
मैं राज्य असेम्बली के उप-चुनाव में खड़ा हो रहा हूं। आपकी मदद की जरूरत है
कहिए, मैं आपके किस काम आ सकता हूं ?
प्रदेश-कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष मेरे ही नाम की सिफारिश करेंगे। क्षेत्र की जनता मेरी ही मानेगी
तब आपको और क्या चाहिए ?
मुख्य मंत्री ने भी टिकट दिलवाने का वायदा किया है
फिर मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं ?
आप तो बस श्रीमान 'र' से कह दीजिए कि वे मुख्य मंत्री और कांग्रेस अध्यक्ष से सिफारिश कर दें क्योंकि श्रीमान 'र' साहब प्रधान मंत्री के बहुत निकट हैं, आप राजधानी में हैं आपका बहुत रौब है।
महाशयजी, टिकट का फैसला तो इन दोनों को ही करना है, लेकिन मुख्य मंत्री और कांग्रेस-अध्यक्ष दोनों चाहते हैं कि मैं केन्द्रीय नेता श्रीमान 'र' से यह बात उन तक पहुंचाऊं। यहीं आपकी जरूरत है।
मेरे दोस्त, तब तो आप मजे से घर में बैठिए।
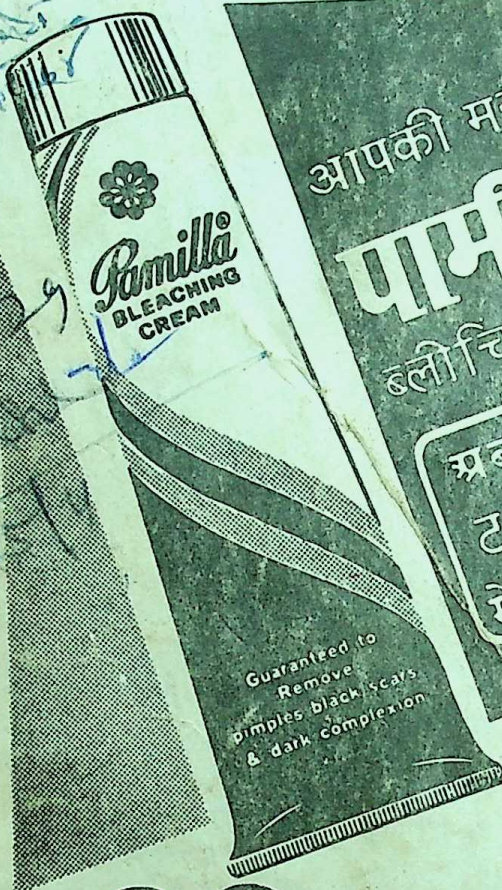
आपकी मनपसन्द
पामीला®
ब्लीचिंग क्रीम
अब आकर्षक
ट्यूब पैकिंग
में भी उपलब्ध
Pamilla®
BLEACHING
CREAM
Guaranteed to
Remove
pimples black scars
& dark complexion
चेहरे के सभी बदनुमा दागों,
कीलों, छाइयों को दूर
करने और रंगत निखारने के
लिये गारंटी शुदा
उच्च कोटि का गर्वपूर्ण उत्पादन
पामीला प्रफ्यूमरी (प्रा०) लि०
जालन्धर शहर फोन: २७४४,६८८७

कादम्बिनी
भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका
भीगी बरसात • परमाणु विस्फोट का रहस्यमय आलोक
मुक्तिपर्व विशेषांक

रु. २) में २०

जब हम कोई चुनौती
स्वीकार करते हैं तो
हमारी वर्तमान पीढ़ी के लिये जरूरी हो जाता है
कि वह कुछ न कुछ त्याग करे. यही समय है
जब हममें से हर एक को, उज्ज्वल भविष्य
के लिये बलिदान
करना ही होगा.
INDIANOIL

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और पृष्ठ ८ पर दिये उत्तरों से मिलाइए।

१. **भुक्तभोगी**—क. जिसने किसी विषय को भोगकर उसके कष्ट का अनुभव किया हो, ख. पापी, ग. अनुभवी, घ. दुःखी।

२. **प्रवाद**—क. लोकचर्चा, ख. अपवाद, ग. जोरदार भाषण, घ. विवाद।

३. **कोलाहल**—क. भीड़भाड़, ख. हल्लागुल्ला, ग. कलह, घ. चिल्लाहट।

४. **संकुल**—क. संपूर्ण वंश, ख. व्याकुल, ग. खिला हुआ, घ. परिपूर्ण।

५. **मंगल**—क. आनंद, ख. सुख-चैन, ग. कल्याण, घ. अभीष्ट-सिद्धि।

६. **विजन**—क. जनहीन, ख. नीरव, ग. घोर, घ. डरावना।

७. **परिजन**—क. आत्मीय जन, ख. नौकर-चाकर जो सदा साथ रहते हैं, ग. मित्र, घ. पड़ोसी।

८. **विहार**—क. निवास, ख. मटरगश्ती, ग. केलि, घ. सानंद परिभ्रमण।

९. **धुन**—क. तरंग, ख. सोच-विचार, ग. चिंता, घ. लगन।

१०. **हार्द**—क. मर्म, ख. हृदय, ग. बीज, घ. गूदा।

११. **उल्लास**—क. उन्माद, ख. आह्लाद, ग. उत्साह, घ. नृत्य।

१२. **ठेठ**—क. निर्मल, ख. सीधा, ग. पूरा पूरा, घ. असल।

१३. **उत्तरोत्तर**—क. बार-बार, ख. अधिकाधिक, ग. ठेठ उत्तर की ओर, घ. क्रमशः।

१४. **प्रायः**—क. बहुधा, ख. लगभग, ग. सदृश, घ. प्रतिदिन।

१५. **प्रवर्तन**—क. बदलना, ख. प्रचलित करना, ग. घटित करना, घ. प्रचार करना।

१६. **शतक**—क. शताब्दी, ख. सौवां, ग. सैकड़ा, घ. शतंजीवी।

१७. **दुर्धर्ष**—क. विशालकाय, ख. बलवान, ग. दुस्साहसी, घ. दुर्दमनीय।

१८. **विवृति**—क. विवरण, ख. टीका, ग. विशेषोक्ति, घ. व्यंग्य।

१९. **निवारण**—क. अवरोधन, ख. दूर करना, ग. मना करना, घ. निमंत्रण देना।

● विशालाक्ष

संकेत-चिह्न

तत्-तत्सम, सं.-संज्ञा, वि.-विशेषण, क्रि.-क्रिया, क्रि. वि.-क्रिया-विशेषण, पुं.-पुंलिंग, स्त्री.-स्त्रीलिंग, लो. भा.-लोकभाषा, समा.-समानार्थी।

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. क. जिसने किसी विषय को भोगकर उसके कष्ट का अनुभव किया हो। **भुक्तभोगी** की सलाह उपयोगी होगी। तत्., वि., पुं.। संस्कृत—**भुक्तभोगिन्।**

२. ख. अपवाद, झूठी बदनामी। उसने चोरी की, यह **प्रवाद** मात्र है। तत्., सं., पुं., समा.—**मिथ्यापवाद, अफवाह।**

३. ख. हल्लागुल्ला । बच्चों का **कोलाहल** भी प्रिय होता है । तत्., सं., पुं.। समा.—**शोरगुल।**

४. घ. परिपूर्ण। विपत्**संकुल** जीवन, श्वापद-**संकुल** वन। तत्., वि., पुं.। समा.—**आकीर्ण, समाकीर्ण।**

५. ग. कल्याण। आपका **मंगल** हो, बाल-**मंगल** सदन। तत्., सं., पुं.। समा.—**शुभ, क्षेम।**

६. क. जनहीन। **विजन** वन, मार्ग, परिवेश। तत्., वि., पुं.। समा.—**एकांत, वीरान।**

७. ख. नौकर-चाकर जो सदा साथ रहते हैं। वे स्वजन-**परिजनों** सहित आये। तत्., सं., पुं.। समा.—**आश्रित** वर्ग, **पोष्यजन।**

८. ग. केलि। पक्षी स्वैर **विहार** कर रहे हैं। तत्., सं., पुं.। समा.—**क्रीड़ा, सानंद भ्रमण।**

९. घ. लगन। पढ़ने की, गाने की, भगवद्भक्ति की **धुन**। लो. भा., सं., स्त्री.। समा.—**लौ।**

१०. क. मर्म । कविता, काव्य, ... झौते का **हार्द**। तत्., सं., पुं.। समा.—**बीजार्थ।**

११. ख. आह्लाद। स्वाधीनता ... पर हमारे **उल्लास** की सीमा नहीं र... तत्., सं., पुं.। समा.—**हर्ष, आनंद**

१२. ग. पूरा-पूरा। **ठेठ** हिंदी, ... सरिता-तट तक । लो. भा., वि. समा.—**ऐन, बिलकुल।**

१३. घ. क्रमशः, लगातार आ... आगे। **उत्तरोत्तर** वृद्धि, उन्नति, विकास तत्., क्रि. वि.।

१४. क. बहुधा। वे **प्रायः** आते ... वहां **प्रायः** भीड़ होती है। तत्., क्रि. वि. संस्कृत-**प्रायस्, प्रायशः**। समा.—**अक्सर साधारणतः।**

१५. ख. प्रचलित करना । ... **प्रवर्तन**, मत-**प्रवर्तन**, इस पत्र का प्रवर्तन तत्., सं., पुं.। स्थापना, नियोजन, प्रारंभ

१६. ग. सैकड़ा, सौ का समूह नीति-**शतक**; इस **शतक** में पांच आम ... हैं। तत्., सं., पुं.। समा.—**शत-समष्टि**

१७. घ. दुर्दमनीय। **दुर्धर्ष** योद्धा पुरुष। तत्., वि., पुं.। समा.—**प्रचंड, अति प्रबल, दुर्दांत, दुर्निवार।**

१८. क. विवरण। टीका में पर्याप्त **विवृति** नहीं है। तत्., सं., स्त्री.। समा.—**विस्तार, व्याख्या।**

१९. ख. दूर करना। रोग-निवारण, शत्रु का **निवारण**। तत्., सं., पुं.। समा.—**रोक, निषेध, वारण।**

इधर बहुत दिनों बाद आपको पत्र लिख रही हूं। कारण, अचानक एक अंक आपकी 'कादम्बिनी' का हाथ लगा और उलटते-पलटते जो भावनाएं मन में उमड़ीं उनको आप तक पहुंचाने की उत्कट इच्छा हुई। आपने तो 'कादम्बिनी' का रूपांतर ही कर दिया। अत्यंत रोचक, हृदयग्राही उत्कृष्ट साहित्य से संवारी हुई यह पत्रिका बहुत आकर्षक हो गयी है। इसके लिए आपको बधाई। **—सुमित्राकुमारी सिन्हा, आकाशवाणी, लखनऊ**

'कादम्बिनी' यथार्थ में भारतीय भाषाओं की एक विशिष्ट पत्रिका है। इसमें प्रकाशित सभी लेख एवं कविताएं आकर्षक होती हैं। हंसिकाएं—गद्य एवं काव्य दोनों में मन को मोह लेती हैं। मेरे पुस्तकालय में सभी पाठक बड़ी उत्सुकता से 'कादम्बिनी' के आगमन की प्रतीक्षा करते हैं। जुलाई, १९७४ का अंक पढ़ा। सभी लेख पठनीय तथा कविताएं मनमोहक हैं। इसी अंक में प्रकाशित 'कोश रचना के यात्रा पथिक', 'सूर्य की परछाइयां' तथा 'जनतंत्र में बुद्धिजीवियों की भूमिका' शीर्षक लेख तथा 'तिल' कहानी पठनीय है।
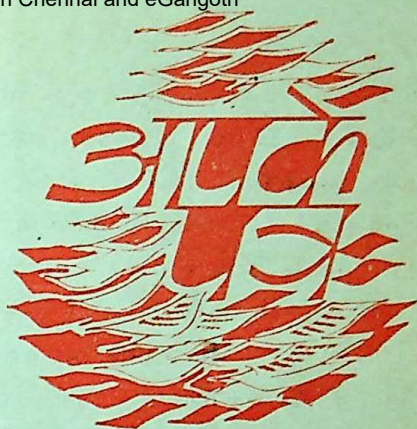
—उदयशंकर भंडारी

निदेशक, उदयपुर पुस्तकालय, मुजफ्फरपुर-१

जुलाई अंक में श्रीमती शीला झुनझुनवाला के विचारपूर्ण लेख 'बीमार देश (?) का परमाणु विस्फोट' के प्रकाशन के लिए बधाई! इस गंभीर विषय को विदुषी लेखिका ने बहुत ही रोचक किंतु तर्कपूर्ण शैली में प्रस्तुत किया है। यह लेख भारत की स्थिति तथा नीति को भी सुस्पष्ट करता है।

—हरिकृष्ण जयपुरिया, चुर्क

हिंदी कहानी : विकास और दिशाएं

हिंदी कहानी और उससे संबंधित आंदोलनों को लेकर एक पठनीय रोचक और विचारोत्तेजक अन्वेषण-लेखन की दिशा में हमारा एक और विशिष्ट स्तंभ :

शब्द वेध मेधा

आज के लेखकीय-परिवेश और रचनात्मक समस्याओं को लेकर इस स्तम्भ को लिख रहे हैं हिंदी के जाने-माने और सुपरिचित कथाकार : राजेंद्र यादव

अक्तूबर अंक से प्रारंभ

जुलाई अंक देख-पढ़कर 'कादम्बिनी' के निरंतर बढ़ते स्तर की प्रशंसा करने को मजबूर हो गया हूं। 'सार-संक्षेप' के अंतर्गत प्रकाशित रिचर्ड कोनेल का उपन्यास बहुत रोचक व रोमांचक लगा। परमाणु विस्फोट व ईरान संबंधी लेख अच्छे लगे। 'तंबाकू कितनी दोस्त, कितनी दुश्मन' (डॉ. सुधीर क्षीरज) व 'काल-चिंतन' ने विशेष रूप से प्रभावित किया।

——किरणजीत सिंधु, सहारनपुर

'कादम्बिनी' में आयुर्वेदाचार्य पं. खुशीलाल शर्मा का लेख 'आयुर्वेद और कैंसर का इलाज' प्रकाशित करने के लिए बहुत-बहुत बधाइयां।

'कादम्बिनी' के माध्यम से मैं केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री से प्रार्थना करूंगा कि वे देश के विद्वान आयुर्वेदाचार्यों को इस विषय पर शोध-कार्य के लिए आमंत्रित करें। भारत सरकार द्वारा ऐलोपेथी को जितनी सहायता दी जाती है, अगर उतनी ही सहायता आयुर्वेद को भी मिलती तो वह उन्नति के शिखर पर होता।

आपका 'काल-चिंतन' तो निरंतर चिंतन का विषय बन गया है। अगर हम इसे सार्थक सिद्ध कर सकें तो इससे उत्तम क्या बात हो सकती है?

——ब्रजभूषण बजाज, हैदराबाद

जुलाई १९७४ के अंक में 'रेल हड़ताल के बाद' लेख विवेचनापूर्ण एवं सारगर्भित है, परंतु रेल कर्मचारियों के परिवारों द्वारा भोगी गयी यातनाओं एवं उसके दूरगामी प्रभाव का विश्लेषण न किये जाने से लेख एकांगी प्रतीत होता है।

कर्मचारी यूनियनों की नकेल राजनीतिक नेताओं के हाथ में न रखे जाने के निष्कर्ष से सहमत होते हुए भी जनसाधारण को यह सवाल कोंच रहा है कि हड़ताल के पृष्ठपोषक असंतोष को समाप्त करने हेतु, प्रबुद्धजन पहल क्यों नहीं करते। शासन ने जिस संकल्प एवं दृढ़ता से रेल हड़ताल का सामना किया, उसके मूल कारणों को उतनी समग्रता से क्यों नहीं दूर किया जा सकता? **——तारादत्त पांडे, कुमायूं**

लोकसेवा संघ, कानपुर के ज्ञान प्रकाश शास्त्री एवं मुंशीराम शर्मा ने निम्नलिखित पत्र की प्रतिलिपि हमें भेजी है—

डॉ. श्री ओम्पाल शास्त्री
मंत्री, आर्यसेवा संघ
रसूलपुर जाहिद, मेरठ।

हमें 'कादम्बिनी' (नई दिल्ली) अप्रैल ७४ के अंक में प्रकाशित 'समय के हस्ताक्षर' शीर्षक के अंतर्गत यह पढ़कर आश्चर्य और खेद हुआ कि आप संघ की ओर से ऐसे प्रमाणपत्र और उपाधियां वितरण कर रहे हैं, जिनमें हम दोनों का नाम है। इस उपाधि-वितरण में आप रुपये ले रहे हैं।

आपकी संस्था से हमारा कोई संबंध नहीं है, फिर भी आप हम दोनों के नाम का दुरुपयोग कर रहे हैं। इसी संदर्भ में एक पत्र कुछ दिन पूर्व भेजा गया था। परंतु आपने अभी तक उस पत्र का उत्तर नहीं भेजा।

अतः आपसे इस पत्र द्वारा स्पष्ट कर देना चाहते हैं, कि यदि आपने हमारे नाम का ऐसे कार्यों में उपयोग किया तो सारा दायित्व आप पर होगा।

भवदीय,

ज्ञानप्रकाश शास्त्री, मुंशीराम शर्मा

जुलाई अंक में 'ये सरकारी प्रतिष्ठान' स्तंभ के अंतर्गत 'नागरी प्रचारिणी सभा' संबंधी लेख में अधिकांश बातें गलत कही गयी हैं। नागरी प्रचारिणी सभा में धन संबंधी अनियमितता वर्षों से चल रही है। कर्मचारियों को कभी भी वेतन समय से और पूरा-पूरा नहीं मिलता है। सभा ने पिछले वर्ष अपनी जीप के लिए २६ हजार रुपये पेट्रोल (तब सस्ता था) में व्यय किये जब कि यह जीप शायद ही कभी सभा के काम आयी हो। टेलीफोन का उपयोग व्यक्तिगत और राजनीतिक कार्यों के लिए किया जाता है, जिसका हजारों रुपयों का बिल सभा को देना पड़ता है। सभा के भवन को निजी भवन बना लिया गया है। इन सब कारणों से सभा के कर्मचारियों में भीषण असंतोष व्याप्त है और सब कामना करते हैं कि इस संस्था को सरकार अपने हाथ में ले ले।

—रामप्यारेसिंह, वाराणसी

जुलाई अंक में प्रकाशित 'महत्त्वाकांक्षी' कविता के कवि हृदयेश्वर त्रिपाठी हैं। पाठक कृपया सुधार कर लें।

—संपादक

क्यों और क्यों नहीं ?

चौबीसवें लेखक

राजेन्द्र अवस्थी

इस लेखमाला के अंतर्गत अमृतलाल नागर, सुमित्रानंदन पंत, अज्ञेय, डॉ. बच्चन, यशपाल, डॉ. भारती, जैनेंद्र कुमार, दिनकर, रेणु, महादेवी वर्मा, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ अश्क, इलाचन्द्र जोशी, राजेन्द्र यादव, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी, कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा, भवानीप्रसाद मिश्र, शिवप्रसाद सिंह एवं मन्नू भंडारी के संबंध में पाठकों के प्रश्न अब तक आमंत्रित किये जा चुके हैं। अंतिम चौबीसवें लेखक हैं : राजेन्द्र अवस्थी

इस लेखमाला का उद्देश्य, लेखक तथा पाठक को आमने-सामने लाना है।

एक प्रश्नकर्ता दो से अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक कोने पर यह अवश्य लिखिए—'क्यों और क्यों नहीं?' स्तंभ के लिए। संपादक के पास प्रश्न पहुंचने की अंतिम तिथि है : २० अगस्त, १९७४।

प्रमुख कृतियां : उपन्यास : सूरज-किरन की छांव, जंगल के फूल, जाने कितनी आंखें, उतरते ज्वार की सीपियां, बहता हुआ पानी, बीमार शहर। कहानी : एक प्यास पहेली, मकड़ी के जाले, तलाश।

वर्ष १४ : अंक
अगस्त, १९

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

सार-संक्षेप

मुखपृष्ठ छाया :-प्रेमकपूर

सह-संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक । चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

कहानी विशेषांक के
विशिष्ट आकर्षण
अक्तूबर में प्रकाश्य
• पिछले २५ वर्षों की कहानी का लेखा-जोखा
• हिंदी कहानी और उससे संबंधित आंदोलनों को लेकर एक विचारोत्तेजक विशिष्ट स्तंभ का प्रारंभ
• खोयी हुई कहानी ही क्यों ?
'समय के हस्ताक्षर' के अंतर्गत विशेष टिप्पणी
• कुछ उल्लेखनीय कहानियां और उनके कहानीकार :
बधाई--अमरकांत, सांवली चांदनी की रात--गुलजार, प्रतीक्षा में कितना आनंद है--गोरुर रामास्वामी आयंगार, पीढ़ियों का भुगतान--शशिप्रभा शास्त्री, दो मिनट का मौन---कन्हैयालाल गांधी, रोग--ममता कालिया, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल की कहानी। साथ ही सभी स्थायी स्तंभ एवं अन्य पठनीय रचनाएं।

कागज-संकट और सस्ती किताबें
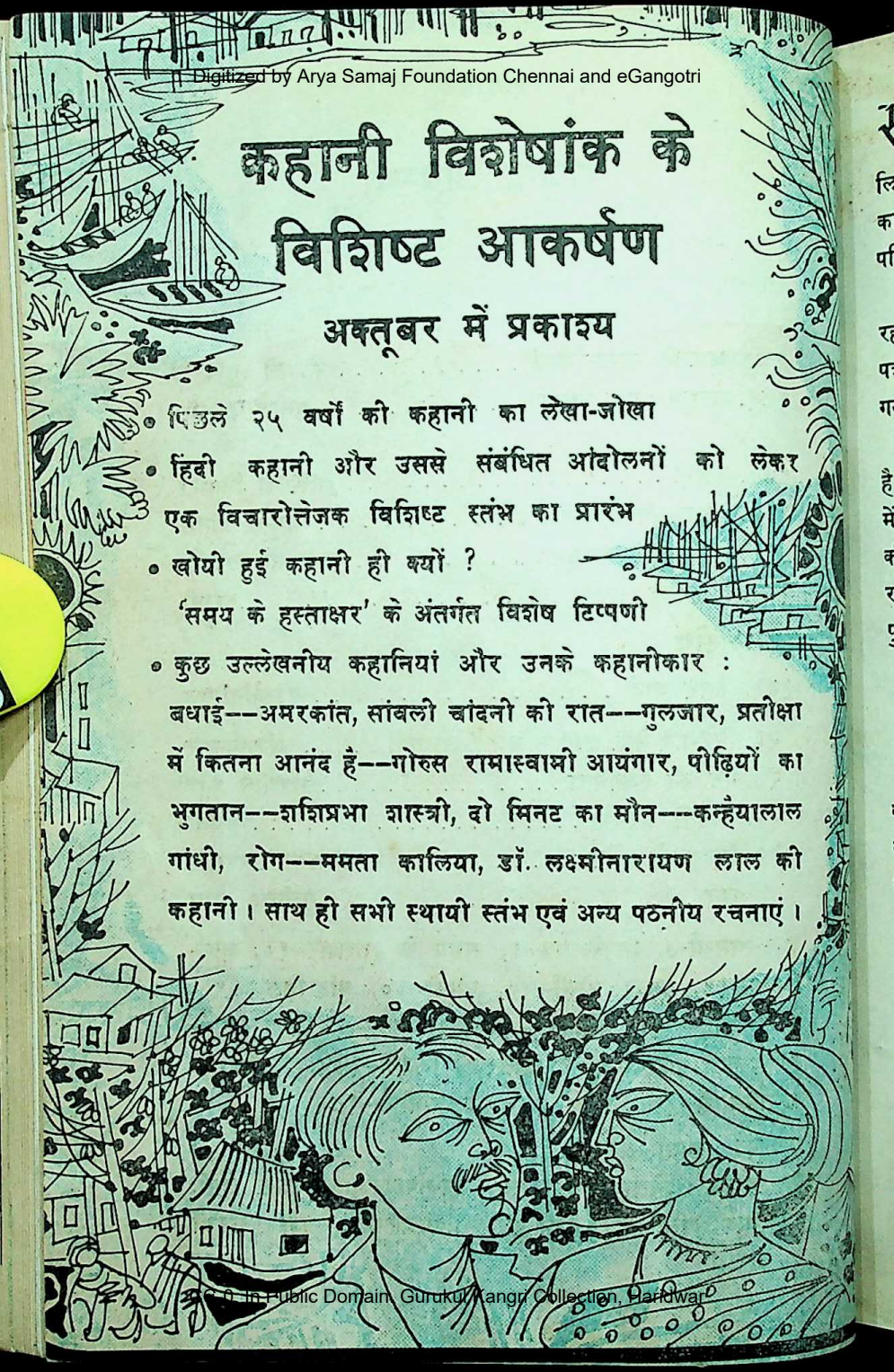
सन '७४ का आरंभ बुद्धिजीवियों, लेखकों, पाठकों और विद्यार्थियों के लिए घातक सिद्ध हुआ है। निरंतर हो रही कागज की कमी ने समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं को आघात पहुंचाया है।

हिंदी के समाचार-पत्र मात्र 'पम्फलेट' रह गये हैं और अनेक सुप्रसिद्ध साप्ताहिक पत्रों की काया सिकुड़कर इतनी छोटी हो गयी है कि वे दयनीय लगने लगे हैं।

हिंदी पुस्तकों के प्रकाशकों का कहना है कि उनका समूचा व्यवसाय ही खतरे में है। वैसे ही कीमतें बढ़ी हैं। कागज की कीमतें और बढ़ जाने से उन्हें अधिक मूल्य रखना पड़ता है। हिंदी का पाठक वैसे ही पुस्तकें खरीदने की स्थिति में नहीं है।

मजे की बात यह है कि बाजार में कागज की कमी नहीं है। अधिक दाम देकर कैसा भी कागज (जिसमें न्यूजप्रिंट भी शामिल है) खरीदा जा सकता है। यह हमारी सत्ता की नीतियों का परिणाम है।

एक ओर जहां कागज का अकाल है, वहां दूसरी ओर पाकेट बुक्स देखकर हैरानी होती है। अधिकांश प्रकाशन सस्ती और निम्न-स्तर की पुस्तकें धड़ल्ले के साथ पाकेट बुक एडीशन में छाप रहे हैं। उन पुस्तकों की लाखों प्रतियां छपती हैं और जो कागज अच्छे साहित्य के प्रकाशन में लगाया जा सकता था, वह ऐसी पुस्तकों में नष्ट किया जाता है।

सस्ती फिल्मों की तरह ये सस्ती पुस्तकें जनरुचि को बिगाड़ने में कमी नहीं करतीं। कुछ दिन पहले पता चला था कि चंडीगढ़ में हरियाणा के डी. आई. जी. की हत्या उनके नौकर ने एक हिंदी फिल्म से प्रेरणा लेकर की थी। इसी तरह दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में भी एक फिल्म को देखकर चोरी करने की योजनाएं बनायी गयी थीं। फिल्मों की तरह सस्ते अपराध-साहित्य की पुस्तकें पढ़कर कच्चे मस्तिष्क के कम पढ़े-लिखे व्यक्ति कुछ भी कर डालते हैं। ऐसे कई प्रकरण भी सामने आये हैं।

कागज की इस कमी के समय निम्न स्तर का साहित्य मात्र सस्ते मनोरंजन के लिए छापना सामाजिक अपराध है। हमारी सरकार यदि कागज की समस्या हल नहीं कर सकती तो कम से कम ऐसे साहित्य और पुस्तकों पर रोक तो लगा सकती है। सही साहित्य के निर्माण के लिए भी यह आवश्यक है कि सस्ते स्तर की पाकेट बुक्स के प्रकाशन पर रोक लगायी जाए और उनमें खर्च होनेवाला कागज विद्यार्थियों और बुद्धिजीवियों के उपयोग के लिए दिया जाए। ●

काल-चिंतन

—किसी ने मार्टिन लूथर किंग से पूछा था, 'आपका लक्ष्य क्या है?'
—किंग ने उत्तर दिया था, 'वही जो मनुष्य का है!'
—मनुष्य का लक्ष्य?
—शैतान ने एक बार भिक्षा देने के पहले याचक से मांग की थी, 'खाने के बदले तुम्हें अपना ईमान मुझे देना पड़ेगा।'
—भूखे व्यक्ति ने तत्काल अपना ईमान शैतान के हवाले कर दिया था।
—घर से आक्रांत शेक्सपियर ने बाहर भटकने के बाद अपनी डायरी में लिखा था, 'आज बीमारी का दूसरा दिन है, घर की कितनी याद सता रही है।'

*

—घर और भूख, यही मानव मात्र की आदिम भटकन है।
—मार्टिन लूथर किंग की तलाश इन दोनों के लिए थी, क्योंकि भूखे आदमी का कोई ईमान नहीं होता और आश्रय के बिना आदमी में ठहराव नहीं आता।
—विकास के लिए ईमान और ठहराव इन्हीं दोनों की जरूरत है।
—विकास की दौड़ में भागते हुए भी हमारे हाथ से यही दो वस्तुएं छूट गयी हैं।
—इसीलिए हम बार-बार मुड़ते, ठहरते और परेशान होते हैं।
—सहज गति का आभास हमसे दूर चला गया है।
—सूर्य की गति तिरछी है, अग्नि-शिखा ऊपर की ओर ही उठती है, संकल्प को इन्हीं की तरह एक सहज लकीर का पथचारी होना जरूरी है।

★

—बीते हुए कल को जिंदगी के साथ जीने के लिए कुछ लोगों को छोड़ देना आदमी की बर्बरता की कहानी है।
—पत्थरों को तोड़कर उसका सीमेंट ले जाते हुए वह दूसरे भूखे और आश्रयहीन आदमी के हाथ एक डंडा थमा जाता है!

—उसे एक संज्ञा देता है : तुम चौकीदार हो!
—उसे गरिमामय आडंबरपूर्ण शब्दों से वह विभूषित करता है : 'संस्कृति का संरक्षण तुम्हारे हाथ है।'
—वह 'संस्कृति' नाम की नपुंसक डोर हाथ में लिये मूर्खों की तरह बैठा रहता है।
—तब तक दूसरा आदमी युगों आगे बढ़ जाता है।
—वहां से वह लौटकर उस पहरुए को देखता है। उससे कहता है, कभी तुम्हारे पूंछ रही है, वह धीरे-धीरे गलकर टूट गयी। देखो तो, वह कहां थी?
—वह सुखमय मुद्रा में अपनी पूंछ टटोलने लगता है!
—बढ़ा हुआ आदमी अट्टहास करता आगे गुजर जाता है!
—उसके वैभवमय यंत्र संस्कृति के भागीदार पुरातन पुरुष के चित्र छापकर अपने विकास का ढोल पीटते हैं।
—लगता है, यह ढोल निरंतर भीतर और बाहर दोनों जगह पीटा जा रहा है!
—घर के भीतर हम उसे पीट रहे हैं और बाहर से दूसरे उसे पीटकर उसका शोर हमारे कानों तक छोड़ जाते हैं।
—इन्हीं को हम अपने सांस्कृतिक संग्रहालय में सुरक्षित रखे हैं और दूसरे हमें अपने संग्रहालय में रखना चाहते हैं।

★

—भीतर और बांहर का यह समूचा द्वंद्व हमारी चेतना से कुछ मांग करता है।
—क्षमाशील पुरुष में एक दोष पाया जाता है—लोग उसे असमर्थ समझ लेते हैं।
—बोझ को कितना भी कसकर बांधा गया हो, जब उसे दूसरी बार बांधते हैं, तब पहला बंधन ढीला पड़ जाता है।
—इसलिए एक बंधे को बार-बार बांधना अपनी ही प्रगति को अवरुद्ध करना है।
—असमर्थता के कगार तक ले जानेवाली क्षमाशीलता आत्मघाती है।
—हम चिंतन और क्रियाशीलता के एक दोराहे पर खड़े हैं।
—यह दोराहा हमसे सबसे पहली मांग भूख और घर की करता है।

भ्रष्टाचार के जंगल में चरित्र की तलाश

● योगेशचन्द्र श

भारत से स्वदेश लौट रहे एक रूसी यात्री से जब एक पत्रकार ने पूछा, "आपने भारत में क्या-क्या देखा ?" तो उसे उत्तर मिला, "अब मैं भी ईश्वर-वादी हो गया हूं।" फिर अपने कथन को स्पष्ट करते हुए उसने कहा, "जिस देश में नीचे से लेकर ऊपर तक चारों ओर भ्रष्टाचार हो, वह देश तब भी चल रहा है, यह जरूर ईश्वर की ही कृपा है।" कल्याणकारी राज्य और समाजवादी समाज की रचना का दम भरने वाले हम भारतीयों पर यह एक कठोर व्यंग्य पर उसमें सच्चाई भी छिपी हुई है।

भ्रष्टाचार—क्या

भ्रष्टाचार का अर्थ स्पष्ट है। अपने क और दायित्वों का पालन भली प्रका कर भ्रष्ट आचरण करना ही भ्रष्टा है। भ्रष्टाचारी व्यक्ति के पास चरि जैसी कोई चीज नहीं होती। उसे न की चिंता होती है न समाज की और किसी विशेष सिद्धांत की। उसका उ अपनी स्वार्थसिद्धि ही रहता है।

मात्र नारों तक सीमित भ्रष्टाचार-विरोधी आक्रोश

प्रशासन में भ्रष्टाचार का कारण कर्मचारियों, अधिकारियों का गैर-जिम्मेदार होना है। कार्यालय में दायित्वों के प्रति उनका कोई लगाव नहीं होता। इसके विपरीत वह कार्यालय में कार्य के लिए आनेवाले लोगों से रिश्वत लेने की फिराक में रहता है।

ऐसी ही स्थिति प्रशासन के लगभग प्रत्येक विभाग में है। एक विभाग की जांच-पड़ताल के लिए और उसे भ्रष्टाचारी बनने से रोकने के लिए दूसरे विभाग की नियुक्ति की जाती है। थोड़े समय बाद पता चलता है कि उस दूसरे विभाग में भी भ्रष्टाचार का कीड़ा लग गया है। तब उस कीड़े को नष्ट करने के लिए तीसरा विभाग बना दिया जाता है और कुछ समय बाद चौथा और पांचवा भी। मगर अंत सबका वही होता है—भ्रष्टाचार के उन्मूलन के स्थान पर भ्रष्टाचार से सह-

छात्रों में भ्रष्टाचारी तत्त्व

भारत में शिक्षा को भ्रष्टाचार से सामान्यतः मुक्त समझा जाता रहा है। अब हमारी शिक्षण संस्थाएं भी भ्रष्टाचार से मुक्त नहीं रहीं। लखनऊ विश्वविद्यालय की जांच के लिए नियुक्त सिह-आयोग ने अपने प्रतिवेदन में उसे विद्या का मंदिर नहीं बल्कि पाप का घर बतलाया था। प्रतिवेदन के अनुसार विश्वविद्यालय का वातावरण गंदा और दम घोटनेवाला है। वहां पर विद्यादान का स्थान भ्रष्टाचार ने, विचार-स्वातंत्र्य का स्थान कुटिल राजनीति और संकीर्ण दृष्टिकोण ने ले लिया है। देश की अन्य अनेक शिक्षण संस्थाओं में भी कमोबेश यही बुराइयां मौजूद हैं। शिक्षक वर्ग भी पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष के वशीभूत होकर गलत आचरण करता है, फलतः वह अपना

भ्रष्टाचार के विरोध में भाषण ही एकमात्र चारा ?

सम्मान और आदर खोता जा रहा है।
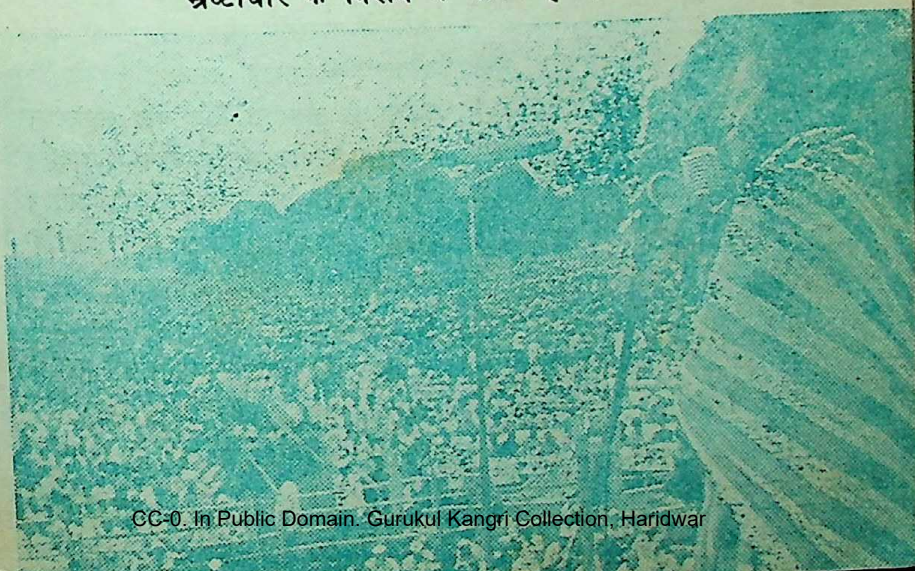
आजकल अक्सर आयोजित किये जानेवाले छात्र-आन्दोलन भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज उठाते हैं और उसके उन्मूलन की बातें करते हैं। मगर वास्तव में ये आंदोलन अधिकांशत: स्वयं भ्रष्टाचार में लिप्त हो जाते हैं। भ्रष्टाचारी तत्व छात्रों का ध्यान अपनी तरफ से मोड़ने के लिए उन्हें तोड़फोड़ के दूसरे कार्यों में लगा देते हैं। इससे न केवल वे स्वयं भ्रष्टाचार के लिए स्वतंत्र हो जाते हैं, बल्कि नये भ्रष्टाचारों को भी जन्म देते हैं।

खाली कुर्सी और पांच लोलुप 'भेड़ें'

राजनीतिक क्षेत्रों में फैला भ्रष्टाचार न केवल शोचनीय ही है, बल्कि अनेक दोनों में फैले भ्रष्टाचार का मुख्य कारण भी है। सिद्धांतप्रियता और राष्ट्रहित की बात तो लगता है, नेताओं के भाषणों तक सिमटकर रह गयी है। सत्तारूढ़ पक्ष हर तरीके से कुर्सी से चिपका रहना चाहता है। विरोधी पक्ष द्वारा विरोध भी अक्सर केवल विरोध के लिए किया जाता है और जब यह विरोध सड़कों पर आ जाता है तो उस समय न देश की संपत्ति की सुरक्षा की कोई चिंता रह जाती है और न जनता की सुख-सुविधा की। आज की राजनीति में फैली आपाधापी और भ्रष्टाचार को प्रतीकात्मक रूप में प्रकट करने के लिए गत वर्ष गुजरात के नागरिकों ने अहमदाबाद में एक भेड़-जुलूस निकाला था जिसमें एक खाली कुर्सी के चारों तरफ पांच भेड़ें बांधी गयी थीं। स्पष्ट ही खाली कुर्सी सत्ता की प्रतीक थी और भेड़ें पद-लोलुप राजनेताओं की। राजनेताओं की वेशभूषा में सज्जित कुछ युवक अपने गले में चप्पलों और बीयर की खाली बोतलों की माला लटकाये हुए थे। इस घटना के कुछ ही दिन बाद अहमदाबाद के मुख्य बाजार माणक-चौक में नागरिकों और छात्रों द्वारा मुख्यमंत्री की कुर्सी की नीलामी की गयी। ये घटनाएं राजनीतिक भ्रष्टाचार से तंग आयी सामान्य जनता की मनोभावना को प्रकट करती हैं।

जनतंत्रीय शासन-पद्धति की सफलता में राजनेताओं का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व होता है। उनसे उच्च आदर्शों की अपेक्षा

तुम्हारी तोंद का कुछ करना पड़ेगा, जमाखोरी पर पुलिस की कड़ी निगाह है, अगर तुम पर नजर पड़ गयी तो मैं कहीं की न रहूंगी...

की जाती है। ये आदर्श आज की राजनीति से तिरोहित हुए से लगते हैं। भोपाल से प्राप्त समाचार के अनुसार वहां पर एक विधायक ने स्थानीय कॉलेज की एक परीक्षा में अपने नाम से किसी अन्य व्यक्ति को वैठाकर परीक्षा पास करने का तरीका अपनाया। केंद्रीय निर्माण एवं आवास-मंत्री के द्वारा दी गयी सूचना के अनुसार दिसंबर, १९७३ में नौ भूतपूर्व संसद सदस्यों और मंत्रियों के पास अनधिकृत रूप में सरकारी आवास थे। इन लोगों पर किराये के लाखों रुपये बाकी थे। आश्चर्य तो यह है कि स्वयं भ्रष्टाचार में लिप्त रहते हुए भी इस प्रकार के व्यक्ति अकसर जनता से चरित्र की बातें करते हैं और अपने को सही अर्थों में जनप्रतिनिधि कहकर सार्वजनिक कार्यों में हस्तक्षेप करने का प्रयत्न करते हैं।

चुनाव का चंदा या रिश्वत !

राजनीतिक क्षेत्रों में भ्रष्टाचार का प्रारंभ चुनाव से ही हो जाता है। कानून द्वारा चुनाव-व्यय की जो सीमाएं निर्धारित की गयी हैं, सामान्यतः कोई भी व्यक्ति उस सीमा में रहकर चुनाव नहीं लड़ पाता। फलस्वरूप निर्वाचन के बाद उम्मीदवार का सर्वप्रथम कार्य अपने चुनाव-व्यय का अकसर झूठा हिसाब प्रस्तुत करना होता है। चुनाव-व्यय के काफी अधिक बढ़ जाने के कारण साधारण व्यक्ति चुनाव में नहीं खड़े हो पाते। यह खर्च इतना अधिक होता है कि देश के राजनैतिक
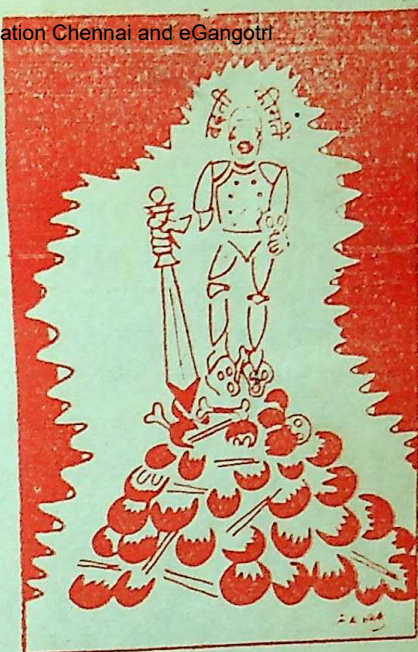
दलों को धनी लोगों से चंदा लेना पड़ता है। बड़ा व्यक्ति जब किसी राजनीतिक दल को चुनाव-चंदा देता है तो स्वभावतः वह बदले में उस दल से अपने लिए कुछ सुविधाओं की भी कामना करता है। इस प्रकार चुनाव-चंदा आज के युग में रिश्वत का रूप धारण करता जा रहा है।

बिहार के राज्यपाल श्री भंडारे ने बिहार के राजनीतिक नेताओं के भ्रष्टाचारी जीवन के बारे में स्पष्ट शब्दों में अनेक सनसनीखेज बातें कही थीं। उन्होंने यहां तक कहा था कि 'मेरे पास उन विधायकों की फाइलें मौजूद हैं, जिनके बारे में यह सिद्ध हो चुका है कि वे भ्रष्टाचारी थे। इसीलिए मैंने उन्हें मंत्री नहीं बनने दिया। जब गवर्नर का शासन होगा तो

में इन लोगों की जेल तक भिजवाने में संकोच नहीं करूंगा।'

श्री भंडारे के इस वक्तव्य के बाद उन विधायकों की जांच के लिए आयोग की नियुक्ति होनी चाहिए थी, पर इसके विपरीत चर्चा इस बात पर चल निकली कि क्या राज्यपाल को सार्वजनिक रूप में इस प्रकार के आरोप लगाने का अधिकार प्राप्त है? यह तथ्य इस बात को सिद्ध करता है कि भ्रष्टाचार के अत्यधिक प्रसार के बावजूद हम इस बुराई को गंभीरता से नहीं ले रहे हैं।

यूनान के एक प्रसिद्ध विचारक ने कहा था, "किसी भी राष्ट्र का निर्माण चट्टान, नदी, वृक्ष और पहाड़ों से नहीं होता, बल्कि उस राष्ट्र में रहनेवाले नागरिकों के चरित्र से होता है।" बात पूर्णतः सत्य है। युद्ध की विभीषकाओं में नष्ट हो जाने के बावजूद जर्मनी, जापान—जैसे छोटे देशों ने जो तरक्की की, उसका मुख्य कारण इन देशों का उच्च राष्ट्रीय चरित्र ही था।

इस दृष्टि से हम अपने देश को देखें तो निराशा ही हाथ लगेगी। हमें चारों ओर भ्रष्टाचार का ही घना और भयानक जंगल नजर आता है।

चरित्रहीनता और भ्रष्टाचार के मूल में दो विशेष कारणों की चर्चा करना भी आवश्यक है। ये हैं—कालाधन और कंट्रोल। कालेधन के रूप में हमारे यहां लगभग १५०० करोड़ रुपये के धन का अनुमान है, जो निरंतर बढ़ता जा रहा है। इस धन ने हमारे यहां एक ऐसी समानांतर अर्थव्यवस्था कायम की है, जिस पर सरकार का कोई नियंत्रण नहीं। कालाधन स्वयं ही भ्रष्टाचार की उपज है, दूसरी ओर यह नये भ्रष्टाचार को भी जन्म देता है।

भ्रष्टाचार के इस वातावरण के विरुद्ध जनमत इतना मजबूत होना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति भ्रष्टाचार करने का साहस ही न कर सके। जनमत जागृत करने के लिए दो प्रकार के कार्य जरूरी हैं। प्रथम—जनता को जनतंत्र का प्रशिक्षण और दूसरे—प्राथमिक शिक्षा तथा समाचार-साधनों का प्रसार। प्रशिक्षित जनता स्वयं ही अपने दायित्वों को महसूस करेगी और भ्रष्टाचार को समाप्त कर देगी।

—राजकीय कालेज, दौसा (राज.)

एक अमरीकी और एक अंगरेज खाने बैठे, तो दोनों को मछली के दो टुकड़े परोसे गये। अमरीकी ने बड़ा टुकड़ा उठा लिया तो अंगरेज को बहुत दुःख हुआ। उसने व्यंग्य किया, "हम लोग शिष्ट व्यवहार के बारे में बातें तो बड़ी ऊंची-ऊंची हांकते हैं, पर व्यवहार में शून्य रहते हैं। अगर मैं तुम्हारी जगह होता तो खुद छोटा टुकड़ा लेता।"

"अरे! तो फिर अपनी आत्मा को क्लेश क्यों देते हो तुम? छोटा टुकड़ा तो तुम्हें मिल ही गया है न?" अमरीकी ने धृष्टतापूर्वक पूछा।

ज्ञात न था

लिली !
तुझ पर बरखा की बूंद
ज्यों ही खिली
तू खिली
ज्यों ही ढली
तू ढली
तेरी तान, तेरी लय
(मुझे ज्ञात न था)
मुझसे ही
मिली
लिली !
तुझ पर बरखा की बूंद . . .

वे आ गयीं

लो, अब वे भी आ गयीं
भदर . . . भदर . . .
मुटकी चाची के साथ हीं
बड़ी-बड़ी तिरछी बूंदें
खड़खड़ा उठीं खिड़कियां
भड़भड़ाने लगे
दरवाजे . . .
किन्हें खोलें, किन्हें मूंदें ?
उन्हें छोड़ उनके हाल पर
हमने हटने दीं
लगी हुईं बरस-दर-बरस की फफूंदें

घिरे-भरे मेघ

घिरे-भरे मेघों की आज हुई जय
आंगन में थाली पर बूंदों का शोर
भर गयी कटोरी, वाह ! बरखा का जोर
खिड़की के शीशों पर पानी की बूंद
माताजी ध्यानमग्न, आंखों को मूंद
तुलसी के पौधों में जान भर गयी
बूंद की कटारी में सान धर गयी
बिरही बिसूरेंगे, इतना है तय

जून बीत गया औ जुलाई आ गयी
सावन की सोचकर रुलाई छा गयी
कैसे बीतेंगी बालम बिन रतियां
धीरज क्या देंगी परदेसिन पतियां
भाभी यह सोचकर उदास हो गयीं
दिन के सपनों में चुपचाप खो गयीं
बरखा का नहीं, हाय ! बिरहा का भय

कोने में उगी हुई तुरई के फूल
बूंदों की मारों से गये झूल-झूल
टीनों पर रिमझिम का शोर छा गया
आंगन में 'टपक-टपक' ताल आ गया
खंभे के ऊपर की भूरी गौरैया
पानी में नाच उठी ता-ता-था-थैया
बूंदों के नर्तन में रागों की लय
घिरे-भरे मेघों की बोलो अब जय

—अजितकुमार
जी-६, माडलटाउन, दिल्ली-११०००९

• त्रिलोक दीप

सिक्किम में जागृति की लहर

सिक्किम के चोग्याल और सिक्किम कांग्रेस के ७३-वर्षीय नेता काजी लेंदुप दोरजी के संबंधों में जो विषम स्थिति पैदा हो गयी थी, उसे भारतीय नेताओं से चोग्याल के विचार-विमर्श के फलस्वरूप भलीभांति सुलझा लिया गया है। चोग्याल ने संविधान विधेयक पर हस्ताक्षर कर दिये हैं। लेंदुप दोरजी ने सरकार बना ली है और विधानसभा के सदस्यों ने दिल्ली में आकर भारतीय नेताओं का 'आशीर्वाद' प्राप्त कर लिया है। ऊपर से स्थिति सामान्य हो गयी है, लेकिन क्या वास्तव में ऐसा है—यह अभी एक प्रश्नचिह्न है।

चोग्याल और काजी लेंदुप दोरजी की लड़ाई नयी नहीं है। दोनों में पिछले डेढ़ दशक से परस्पर संदेह बना हुआ है। फर्क सिर्फ यह आया है कि लोगों ने काजी के तर्कों को तभी समझना शुरू किया जब उनमें जागृति आयी। पहले वे चोग्याल को ही अपना अन्नदाता और सब कुछ मानते थे। लेकिन समय ने करवट बदली और अप्रैल, १९७३ के शुरू में चोग्याल-समर्थकों और दोरजी-समर्थकों में ठनी तो चोग्याल को लोगों की मांगों को स्वी-कार करना पड़ा और अपना अड़ि[यल] रुख बदलना पड़ा। ८ मई, १९७३ [को] जनमत की मांगों को लेकर भारत सर[कार] के प्रतिनिधि, चोग्याल तथा विभि[न्न] राजनीतिक दलों के नेताओं के बीच [एक] समझौते पर हस्ताक्षर हुए। उसके अनु-सार सिक्किम को एक ऐसा संविधान देने की योजना थी जिसके द्वारा जनता के प्रति उत्तरदायी शासन की स्थापना हो। जनता को मौलिक अधिकार, वैधा-निक शासन, स्वतंत्र तथा निष्पक्ष न्याय-पालिका आदि के देने पर भी जोर दिया गया, इस समझौते के अनुसार वयस्क मताधिकार तथा एक व्यक्ति एक मत के सिद्धांत के अनुसार मतदान की योजना बनायी गयी। सिक्किम में नेपाली-भाषी ७५ प्रतिशत और वहां के स्थानीय भोटिया-लेप्चा जाति के लोग केवल २५ प्रतिशत हैं। सिक्किम की ३२ सदस्यीय विधान-सभा में यह व्यवस्था होनी थी—१५ स्थान नेपाली मूल के लोगों को मिलें और १५ भोटिया-लेप्चा लोगों को। एक-एक स्थान बौद्धमठ और हरिजनों के लिए छोड़ दिये गये थे। ७२०० वर्ग-किलोमीटर में फैले सिक्किम की आबादी

२,०८,६०९ है। लिहाजा नये निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन किया गया। पिछली सिक्किम काउंसिल में नेशनल पार्टी सबसे बड़ी पार्टी थी। यह पार्टी चोग्याल की पार्टी मानी जाती है। लेकिन १५ अप्रैल, १९७४ को विधानसभा के लिए जो चुनाव हुए थे उसमें नेशनल पार्टी ने केवल

संविधान का प्रारूप तैयार करने के लिए भारत ने अपने एक संविधान-विशेषज्ञ पी. आर. राजगोपाल को सिक्किम भेजा। संविधान का जो प्रारूप तैयार हुआ वह चोग्याल को स्वीकार नहीं था। चोग्याल ने २० जून को यह कहकर विधानसभा का अधिवेशन बुलाया कि वे वहां

चोग्याल अपनी अमरीकी पत्नी होप कुक के साथ

६ उम्मीदवार ही खड़े किये थे, जबकि सिक्किम कांग्रेस ने सभी स्थानों के लिए अपने उम्मीदवारों को खड़ा किया था। सिक्किम कांग्रेस को ३१ और नेशनल पार्टी को एक स्थान मिला।

चुनाव के बाद सिक्किम कांग्रेस और चोग्याल में अनबन शुरू हो गयी।

भाषण देंगे। कहते हैं, जब नवनिर्वाचित सदस्य वहां इकट्ठे होने लगे तो चोग्याल-समर्थक कुछ अधिकारियों और महल के प्रहरियों ने उन्हें विधानसभा के अंदर जाने से रोका। इस पर केंद्रीय आरक्षित पुलिस ने हस्तक्षेप किया। कुछ आंसू-गैस के गोले भी छोड़े गये। बाद में शांति

स्थापित [illegible] देने नहीं आये, लेकिन विधानसभा ने जरूर दो प्रस्ताव पास किये। एक प्रस्ताव के अनुसार संविधान के प्रारूप का अनुमोदन किया गया और चोग्याल से अनुरोध किया गया कि वे उसका कार्यान्वयन करें। दूसरे प्रस्ताव में कहा गया था कि सिक्किम के हितों की देखरेख भारत सरकार करे। भारत अपनी आर्थिक और सामाजिक संस्थाओं तथा भारतीय राजनीतिक और संसदीय प्रणाली में योगदान और सहयोग की सुविधा सिक्किम को प्रदान करे। किसी मामले की अंतिम अपील की सुनवाई भी भारतीय उच्चतम न्यायालय द्वारा ही की जाए। ऐसा करने का मतलब यह हुआ कि सिक्किम का एक प्रतिनिधि संसद में प्रतिनिधित्व करे। इस से चोग्याल द्वारा सिक्किम की विशिष्ट और अलग स्थिति की तुष्टि नहीं होगी और उनके सपने बिखर जायेंगे।

तुम्हीं ने तो कहा था जिंदगी में बड़े पापड़ बेले हैं, तो फिर रोटियां बेलने में क्या हर्ज है?

वास्तव में यह चोग्याल और [illegible] द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों की [illegible] लड़ाई थी, जिसका निबटारा या तो [illegible] मिल बैठकर कर सकते थे या फिर [illegible] सरकार। अंततः भारत सरकार के [illegible] मर्श से ही दोनों पक्षों में समझौता [illegible]

१९४७ में जब भारत स्व[illegible] हुआ तो सिक्किम भी एक छो[illegible] शाही राजघराना था, यहां के शासक [illegible] १५ तोपों की सलामी का ही अ[illegible] था। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर[illegible] नेहरू के मतानुसार सिक्किम और [illegible] को विशेष दर्जा दिया गया। नेहरू[illegible] मान्यता थी कि सीमावर्ती पहाड़ी [illegible] पिछड़े हुए इलाकों को ऐसा रुतबा [illegible] जाए ताकि वे अपने व्यक्तित्व का [illegible] कर सकें।

१९४९ में भारत और सि[illegible] में एक समझौता हुआ और सि[illegible] भारत का संरक्षित प्रदेश बन गया। [illegible] सरकार उसके विदेशी मामलों, प्रति[illegible] और संचार के लिए जिम्मेदार थी। [illegible] वहां के लोगों को पूर्ण स्वायत्तता [illegible] जाने पर भी सहमत थी। इस सम[illegible] पर सिक्किम के चोग्याल टाशी नम[illegible] ने हस्ताक्षर किये थे। १९६३ में उ[illegible] मृत्यु हो गयी और वर्तमान चोग्याल [illegible] उनकी गद्दी संभाली थी। उसके [illegible] जनता और चोग्याल-समर्थक वर्ग ने [illegible] अधिक स्वायत्तता की मांग की। सम[illegible] में परिवर्तन की भी मांग की जाने ल[illegible]

इस बीच चोग्याल की जनता से लड़ाई के साथ-साथ उनकी अमरीकी पत्नी होप कुक से भी संघर्ष की स्थिति बन गयी। उनकी पत्नी ने यह धमकी दी कि यदि सत्ता पर उनका पूर्ण अधिकार नहीं रहेगा तो वे उन्हें छोड़ देंगी। चोग्याल में जनता की अवहेलना करने का साहस नहीं था। अतः जनमत के सामने उन्हें अपना एकाधिकार छोड़ना पड़ा। उसके साथ ही चोग्याल की अमरीकी पत्नी अमरीका लौट गयी। बहरहाल, चोग्याल ने इस समय स्थितियों से समझौता कर लिया है।

यह भी मुमकिन है कि चोग्याल के दिमाग में कोई और योजना हो। यह बात तो सही है कि भारत सरकार सिक्किम के विकास-कार्यों के लिए जितना धन देती रही है वह खर्च नहीं होता रहा। दूसरे चोग्याल की अपनी पुश्तैनी जायदाद भी है। स्वाभाविक ही है कि वह इस पैतृक संपति को बचाने और कहीं ठिकाने लगाने की फिक्र करें। यही वजह है कि राजनीतिक पार्टियां उनकी चल और अचल संपत्ति के बारे में जानने की इच्छुक हैं। वे यह भी चाहती हैं कि चोग्याल अपनी जमीन भूमिहीनों में वितरित कर दें और वे उसी में संतोष करें जो नये संविधान के अंतर्गत उन्हें प्राप्त हो।

—द्वारा 'दिनमान'
बहादुरशाह जफर मार्ग,
दिल्ली

पेट की स्वतंत्रता

किसी भी दिन
उदास नजरों से देखते
हम यहां से चल देंगे
अपने पेट की स्वतंत्रता
पाने की अभिलाषा में
मासूम बचपन की पुकार
भूख . . . भूख . . . भूख . . .
साये की तरह हमारे साथ होगी
रात की निस्तब्धता में
सिक्कों की खनक पर रक्स करते
निस्तेज यौवन की खामोश आवाज
भूख . . . भूख . . . भूख . . .
हमें सोने न देगी
कांपते हाथ फैलाये
बूढ़ी, हड्डियों की कराह—
भूख . . . भूख . . . भूख . . .
हमारे जिस्म में ऐंठन भर देगी
फिर भी हमें
काला और निर्दयी फंदा
दिखायी क्यों नहीं देता ?
ठूंठ के नीचे
छाया की प्रतीक्षा करना ही क्रांति है?
खामोश उमंगों की अग्नि में जलकर
राख की तरह बिखर जाना ही
क्रांति है ?
और ऐसे में मैं—
खानाबदोशों की बैलगाड़ी
की लीक खोजती फिरती हूं
जो कम से कम
'इस लोक' से तो अलग है

—गुरजीत कौर

तुलसीघाट की नागनथैया

● इंदुजा अवस्

गंगा के प्रवाह को बांसों-बल्लियों और नावों-बजरों से घेरकर बनाया हुआ एक अनोखा रंगमंच। घाट के पचास फुट ऊंचे सोपान-क्रमों पर, नावों-बजरों पर, दूर अस्सी घाट के ऊंचे टीले पर, घाट के मंदिरों-घरों के बरामदों-बुर्जियों पर भारी संख्या में दर्शकों (या दर्शनार्थियों) की भीड़ और जय वृंदावन विहारी का गगन-भेदी उद्घोष। वाराणसी के तुलसीघाट पर तुलसी-प्रवर्तित कृष्णलीला की नाग-नथैया लीला तुलसी की समन्वयवादी चेतना का एक अनूठा दृश्यविधान प्रस्तुत करती है।

रामलीला के दिनों में सुना था कि काशी की तीन लीलाएं बड़ी प्रसिद्ध हैं— नाटी इमली का भरत-मिलाप, चेतगंज की नाककटैया और तुलसीघाट की नागनथैया या कालियदमन। कृष्णलीला और वह भी तुलसीघाट पर! सुनकर कुछ आश्चर्य हुआ और कुतूहल भी। इसी से तुलसी-प्रवर्तित इस कृष्णलीला को देखना अनि-वार्य-सा जान पड़ा।

कृष्णलीला का यह प्रस्तुतीकरण की रासलीला से सर्वथा भिन्न, रामल की पद्धति पर होता है। वाराणसी गोस्वामी तुलसीदासजी के अखाड़े में वर्ष कार्तिक कृष्ण द्वादशी से लेकर म शीर्ष कृष्ण प्रतिपदा तक २२ दिन

कदंब के वृक्ष पर श्रीकृष्ण

लीला नियमित रूप से खेली जाती है। इसमें कृष्ण के ब्रज-जीवन के सभी प्रसंगों को प्रस्तुत किया जाता है।

रामलीला की भांति ही इसे मुकुट-पूजन से आरंभ करते हैं। कृष्ण-जन्मोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाते हैं। फिर पूतनावध, तृणावर्तवध, नामकरण आदि प्रसंगों का अभिनय होता है। माखनचोरी बाललीला का सबसे आकर्षक प्रसंग होने के नाते दो दिन तक दिखाया जाता है। फिर कंस के भेजे अनेक असुरों का वध दिखलाया जाता है। कृष्ण-राधिका के प्रथम मिलन का प्रसंग बड़ी सुंदरता से प्रस्तुत होता है। अनेक ग्वालबालों के साथ चकई-भौंरा खेलने की लीला भी बड़ी स्वाभाविकता से अभिनीत होती है। कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को रासोत्सव में अनेक कृष्ण बनाये जाते हैं और गंगातट पर शुभ्र चांदनी में वाद्य-ध्वनि के साथ कुछ-कुछ गुजराती गरबा की पद्धति पर रास होता है। ब्रज की रासलीला के नृत्य की शैली भिन्न है। वह नृत्य के-से तानों-टुकड़ों से युक्त होती है, परंतु इस नृत्य में लोकनृत्य की-सी भंगिमाएं और पदसंचालन होता है। गोचारण, चीरहरण और पनघट—ये सभी लीलाएं बड़ी मनोरम हैं, परंतु नागनथैया लीला के दिन तो मानो तुलसी के उस प्राचीन स्थल पर सचमुच धनुर्धारी राम वंशीधारी बनकर अवतरित हो जाते हैं। लीला के समय ढोल मंजीरों के साथ ठीक उसी तरह 'ब्रजविलास' का पाठ होता है जैसे पारंपरिक रामलीलाओं में 'रामचरितमानस' का। यह पता नहीं चलता कि इस लीला में 'ब्रजविलास' का प्रयोग कब से होने लगा, क्योंकि कहा जाता है कि पहले श्रीमद्भागवत का पाठ किया जाता था।

मंचविधान रामलीला की भांति बहु-दृश्यपरक होता है। गंगातट पर वृंदावन बनाया जाता है। सुंदर वृक्ष-लताओं, पुष्पमालाओं, झाड़ियों आदि से वृंदावन की 'कुंजगलियां' साकार हो उठती हैं। घाट के एक ओर तुलसी-मंदिर (तुलसीदास के प्राचीन निवास-स्थान) की ऊंची बुर्जी पर मथुरा बनती है, जहां अत्याचारी कंस अपना दरबार लगाकर बैठता है और किसी न किसी अनुचर को कृष्ण का वध करने के लिए ब्रजभूमि भेजता रहता है। वृंदावन में एक ओर नंद-यशोदा का भवन बनता है और बीच में कृष्ण की लीला-भूमि। वहीं एक ओर राधिका भी अपनी सखियों के साथ बैठती हैं।

नागनथैया के दिन रंगस्थल गंगातट नहीं वरन गंगा का प्रवाह होता है। गत ३० अक्तूबर को नागनथैया के दिन हमने जो मनोरम दृश्य देखा उसकी एक झांकी प्रस्तुत है: तट की ओर लगा तथा गंगा के प्रवाह पर झुका एक ऊंचा कदंब का वृक्ष और उसके ठीक सामने रंगमंच के दूसरी ओर काशिराज का सुंदर जलरथ—आगे बने दो सुंदर काठ के सजीव-से घोड़े मानो उसे खींचकर ही लाये हों। बजरे में काशिराज का संध्यावंदन-कक्ष और उसके

आगे सुंदर [illegible] सिंहासन । रंगस्थल से ऊपर की ओर देखने पर ऊंची सीढ़ियां ग्रीक 'एम्फी-थियेटर' का-सा दृश्य प्रस्तुत करती हैं । दर्शकों की अपार भीड़; पीली, लाल, हरी साड़ियां; अंगोछे, धोतियां—अनेक रंगों की झिलमिली । उधर गंगा को एक घेरे में बांध-सा लिया गया है—वह भी मानो सहस्त्रों जनों की समर्पित श्रद्धा का यह मर्मस्पर्शी दृश्य देखने को थम-सी गयी है। पौने पांच बजते-बजते गंगा पार से अनेक नावें और बजरे रंगस्थल के घेरे के पास सिमट आये हैं। ठीक पांच बजे काशीनरेश अपने बजरे पर दिखायी देते हैं और जनता जय-जयकार द्वारा उनका स्वागत करती है। कदंब के वृक्ष के पास कृत्रिम कमलों के निकट जल के नीचे लकड़ी और कपड़े के बने कालियनाग को मल्लाहों ने थाम रखा है। पास ही राधिका अपनी सखियों के साथ विराजमान हैं। तभी कृष्ण अपने सखाओं और बलराम के साथ वृंदावन की कुंज-गलियों से आते हुए प्रवेश करते हैं। कृष्ण की वेशभूषा आकर्षक है । रंगीन और चमकीले पाउडर से उनके मुख पर पत्रावली चित्रित है । मोरपंखों से युक्त चमकीला मुकुट, साटन की झालरों और गोटे से सज्जित सुंदर मखमली वस्त्र-विन्यास । हाथ में वंशी तथा गले में वैजयंती माला। गोपाल के मंच पर 'अवतरित' होते ही चारों ओर से तुमुल हर्षध्वनि होती है । पुष्प फेंके जाते हैं। कृष्ण ग्वालबालों के [illegible] हैं । यशोदा मैया [illegible] से कहती हैं—**'लाला कंस तुम्हारे कूं [illegible] अतिगाडहै—या तें कहूं दूर खेलि[illegible] मति जायो करै।'** भोजपुरी के उस प्रदे[illegible] यह शुद्ध ब्रजभाषा का वाक्य मानो [illegible] गंगातट पर रामभक्ति और कृष्णभक्ति [illegible] संगम का प्रतीक बन जाता है । कृष्ण [illegible] मुख पर मंद मुसकान खिल उठती है [illegible] वे यशोदा का हाथ छुड़ाकर नटखटपन [illegible] अपने सखाओं के पास भाग आते हैं [illegible] वहीं तट पर उनकी कंदुक-क्रीड़ा प्रा[illegible] होती है। कंदुक 'यमुना' में गिर जाता है [illegible] कदंब के वृक्ष पर चढ़कर कृष्ण 'यमु[illegible]' में कूदते हैं । सहसा चारों ओर प्रका[illegible] जगमगा उठता है—पाठ में तथा ढोलक [illegible] ध्वनि में और तेजी आती है । कृष्ण [illegible] बजाते हुए परंपरागत त्रिभंगी मुद्रा [illegible] चारों ओर घूम-घूमकर दर्शन देते [illegible] और अचानक 'यमुना' में कूदकर अदृ[illegible] हो जाते हैं। भीतर मल्लाहों ने उन्हें [illegible] रखा है। बहुत धीरे-धीरे वे सात फनों [illegible] 'कालियनाग' पर चढ़े हुए वंशी बजा[illegible] त्रिभंगी मुद्रा में—मनमोहक मुस[illegible] सहित जल के ऊपर दिखायी देने लगते हैं [illegible] जनता, जो कृष्ण के जल के भीतर अदृ[illegible] हो जाने के दो मिनटों के अंतराल [illegible] पूर्णतया स्तब्ध हो गयी थी, वृंदावनविहा[illegible] की तुमुल जय-जयकार से आकाश [illegible] देती है । कृष्ण नाग पर ही रंगस्थल [illegible] चारों ओर गोलाई में तिरते जाते हैं [illegible] तुलसीघाट के महंत उन्हें माला पहनाते [illegible]

और फिर काशिराज के भव्य बजरे से उन्हें माल्यार्पण होता है। मेहताबियों का तीव्र प्रकाश तट को एक अपूर्व आभा से उद्भासित कर देता है। हजारों दर्शकों की जय-जयकार से वायु-मंडल गूंज उठता है। लीला समाप्त हो चुकी है और भीड़ छंटने लगी है। नावें और बजरे दूर-दूर सरकते जाते हैं। थोड़ी-सी देर में ही तट पर

पुरुषोत्तम को साकार होते देख रसस्निग्ध हो उठे हों! उनके मनों में तो वे युग-युग से इसी प्रकार वंशी बजाते, अत्याचारी का दमन करते प्रतिष्ठित हैं न! वैसे भी सामान्य भारतीय जन के पास मनोरंजन के और साधन भी क्या हैं? वही घटिया दर्जे की फिल्म ही न! लीला-नाटकों के नाट्यानुभव क्या उनके जीवन को सांस्कृ-

तुलसी घाट पर श्रद्धालु दर्शकों की अपार भीड़ और ग्वाल-बालों के साथ श्रीकृष्ण

शेष रह जाती है उस लीला की अनुगूंज।

अचानक मुझे किसी का आरोप याद आ जाता है—"क्या यह बेचारी अनपढ़ जनता का धर्म के ठेकेदारों द्वारा शोषण नहीं? यह जय-जयकार के नारे दर्शन तथा धर्म की भावना का सामंती रूप नहीं तो और क्या है?" मैं क्या उत्तर देती! मौन-भाव से सोचती रह जाती हूं—लौटते हुए उन हजारों दर्शनार्थियों के चेहरों पर कैसी तृप्ति और उल्लास की चमक थी, मानो उनके सूने घटनाहीन जीवन लीला-

तिक रूप से कुछ समृद्ध नहीं बना देते? सांस्कृतिक संपन्नता इन्हीं से प्राप्त होती है। इसी से शताधिक बार दोहरायी जाती ये लीलाएं उन्हें हर बार उसी प्रकार आकर्षित करती हैं और बार-बार उन्हें देखने के लिए हजारों लोग आदर और श्रद्धा के भाव से खिंचे चले आते हैं। सहसा इस राम-भूमि पर बने अनोखे वृंदावन में क्रांति-दर्शी समन्वयवादी तुलसी के प्रति मन श्रद्धा से झुक जाता है।

—डी–२/२२७, विनयमार्ग, नयी दिल्ली

● अरुणेश वाजपेयी

समृद्ध और ऊबे हुए समाज में आत्महत्याएं

अमरीका आज संसार का सर्वाधिक विकसित और समृद्ध देश माना जाता है, लेकिन जब हम वहां के समाज के अंदर झांककर देखते हैं तो ऐसे वीभत्स दृश्य भी दिखायी देते हैं जो उसकी समृद्धि के महल पर बदनुमा धब्बों के समान हैं।

अपराधों के मामले में अमरीका आज दुनिया में पहली पंक्ति में गिना जाता है। गंभीर अपराधों के सिलसिले में वहां हर साल लगभग ८० लाख व्यक्ति पकड़े जाते हैं। भारत में जहां प्रति-घंटा केवल १... व्यक्ति पकड़े जाते हैं वहां अमरीका में इ... आठ गुने अधिक व्यक्ति, अर्थात प्रति-घं... ८४१ अपराधी पकड़े जाते हैं। यह सही... कि भारत की अपेक्षा अमरीका की पुलि... धरपकड़ के मामलों में तेज है, फिर ... इतना बड़ा अंतर महत्त्वहीन नहीं है... नवीनतम सूचनाएं उपलब्ध नहीं हैं, लेकि... आज से तीन साल पहले वहां हर १८ मिन... में एक बलात्कार, १७ सेकंड में एक लू... मार, २५ सेकंड में एक चोरी, ४१ सेकं... में एक कार-चोरी, २ मिनट में एक घात... हमला तथा ३९ मिनट में एक हत्या की घटना होती थी। आज स्थिति तब से अधिक भयावह ही बतायी जाती है। अमरीका के बड़े अपराधी भारी संख्या में पुलिस को क्षति पहुंचाते हैं। १९६०–७० के दौरान वहां ७०० पुलिस-कर्मचारी अपराधियों के साथ हुई मुठभेड़ों में शहीद हुए थे।

शस्त्रास्त्र रखना अब वहां एक फैशन सा बनता जा रहा है। जानलेवा शस्त्रों का व्यापार आजकल वहां खूब फलफूल रहा है। इस समय वहां लगभग ४ करोड़ बंदूकें

तथा रिवाल्वर लोगों के पास हैं। अनुमान है कि गत वर्ष ६ करोड़ ५६ लाख डालर के शस्त्रास्त्रों की बिक्री हुई, जो १९६८ की तुलना में लगभग दुगुनी है। 'बोस्टन ग्लोब' ने लिखा है कि शस्त्रास्त्र अब अमरीकी जीवन के अनिवार्य अंग बन गये हैं।

नयी पीढ़ी में अपराध-भावना

पेशेवर अपराधियों के साथ-साथ अमरीकी बालक-बालिकाओं में भी अपराध-भावना बढ़ रही है। १७ से १९ वर्ष की उम्र के बालक-बालिकाओं में भी अपराधों की संख्या में खासी वृद्धि हुई है। अमरीका की स्वास्थ्य तथा जनकल्याण-संस्था की एक रिपोर्ट में बालिकाओं में अपराध-भावना में वृद्धि का कारण उनका रवैया अधिकाधिक मनमाना होते जाना तथा उनमें विद्रोह-भावना का उत्पन्न होना बताया गया है। १९६० में जहां अपराधी लड़के-लड़कियों का अनुपात ४ : १ था वहां १९७० में बढ़कर ३ : १ हो गया। १९७० में अमरीकी अदालतों में दर्ज लड़के-लड़कियों के अपराधों के मुकदमों की संख्या १० लाख से अधिक थी। इनमें से अधिकांश अभियुक्तों को घातक हमलों, चोरी, नकबजनी, मोटर-चोरी तथा आवारागर्दी के आरोप में बंदी बनाया गया था।

नयी पीढ़ी में मादक पदार्थों के सेवन की आदत छूत की बीमारी की तरह फैल रही है। बढ़ते हुए अपराधों तथा अनेक समस्याओं के लिए बढ़ती हुई नशे की प्रवृत्ति को दोषी पाया गया है। यही कारण है कि अमरीकी सरकार आज मादक पदार्थों के विरुद्ध जोरदार अभियान में लगी हुई है।

अमरीका में रहनेवाले सभी लोग समृद्ध हों, ऐसा नहीं है। अमरीका के ही एक प्रमुख पत्र 'न्यूयार्क टाइम्स' द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार ६ करोड़ से अधिक अमरीकी आज भयंकर गरीबी में गुजारा कर रहे हैं। काम करने लायक आबादी के ६ प्रतिशत लोग बेकार हैं। अमरीका की आमदनी का ४७% बीस प्रतिशत शीर्ष-परिवारों में बंट जाता है।

दूषित वातावरण

दूषित वायुमंडल में सांस लेने के कारण विभिन्न प्रकार के तनावों से बचने के लिए एक औसत अमरीकी को नित्यप्रति २२ गोलियों का सेवन करना पड़ता है। अमरीका हर साल १ अरब ४२ करोड़ टन धुआं, ७० लाख टूटी कारें, २ करोड़ टन रद्दी कागज, ४ अरब ८० करोड़ खाली डिब्बे तथा ३०० अरब गैलन कारखानों से निकला दूषित द्रव पैदा करता है। इस प्रकार हर अमरीकावासी प्रतिदिन ४ पौंड वजन का कूड़ा-कचरा इधर-उधर फैलाता है, जिसके कारण शहरों की हवा धीरे-धीरे घातक होती जा रही है। अमरीका में वातावरण स्वच्छ रखने के लिए ५ अरब वार्षिक डालर के खर्चे से नयी विधियों और प्रक्रियाओं का विकास चल रहा है। वहां वातावरण स्वच्छ बनाने का कार्य लोगों को रोजगार दिलाने का एक बड़ा साधन बनता

भीगती बरसात

बादल की सारी में लिपटी
भीग रही रिमझिम बरसात
जल की छुअन हृदय तक पहुंची
नींद उड़ गयी आधी रात

हवा सुलगती थी सांसों में
जलते थे होंठों पर गीत
नदी पार अनजान शिखर पर
खोया था संन्यासी मीत

मिलीं न उसकी चंदन-बांहें
सुनी न उसकी कोई बात
बौछारों ने कही कहानी
बजते हैं बरगद के पात

खिलती है जब कली कहीं पर
आती है आवाज यहां
कस्तूरी मृग चंचल खुशबू
ढूंढ़े आखिर कहां-कहां

सांझ सुरमई, रात अंधेरी,
पंछी के कलरव-सा प्रात
हर पल जाने कैसे धड़कन
लगती है मन पर आघात

बिखरा जाती केश-राशि को
हवा कर रही अठखेली
रेशा-रेशा सनी बूंद से
सखी सयानी अलबेली

होंठों पर बिजली का चुंबन
आलिंगन मेघों के साथ
नख से शिख तक खिले अचानक
रसभीगे स्वर्णिम जलजात

—कंचना

जा रहा है। आज इनकी संख्या लगभग ६ लाख ६० हजार है। श्रम-विभाग के [illegible] अधिकारी के अनुसार १९८० तक [illegible] कार्य में लगे आदमियों की संख्या १२ लाख से भी अधिक होगी।

घटते विवाह : बढ़ते तलाक

मुक्त प्रेम और अनियंत्रित वासना [illegible] अमरीकावासियों के लिए भारी समस्या बन गयी है। आज अमरीका में अवैध बच्चों की जन्मदर १० प्रतिशत है।

इसका सबसे बुरा परिणाम [illegible] रूप में सामने आ रहा है कि वहां [illegible] विवाहों की संख्या घटती जा रही [illegible] और तलाकों की संख्या बढ़ रही है। अम[illegible]रीका में १९६५ में विवाहों की संख्या २२,८१,०४५ थी, जो निरंतर घटते-घटते १९७० में लगभग १८,०५,००० [illegible] रह गयी। दूसरी ओर १९६० में तलाकों की संख्या ८० प्रतिशत बढ़ गयी। १९[illegible] '६२ के बीच जहां अमरीका में ४ लाख तलाक हुए वहां १९७१ में उनकी संख्या ७ लाख ६८ हजार हो गयी।

आज स्थिति यह है कि अमरीका [illegible] निवासी भौतिक एवं औद्योगिक समृद्धि से ऊब गये हैं और अध्यात्म की ओर भा[illegible] रहे हैं। वहां का मनुष्य नैतिकता के अभाव में अपने को असुरक्षित अनुभव कर रहा है। शायद यही कारण है कि वहां [illegible] साल लगभग १८ हजार व्यक्ति आत्महत्या कर लेते हैं।

—धर्मशाला मार्ग, हरदोई (उ.प्र.)

परमाणु-विस्फोट का रहस्यमय आलोक

● एम. एस. सोढा, ए. के. घटक

विगत १८ मई, '७४ को राजस्थान में किया गया भूमिगत परमाणु-विस्फोट हमारी परमाणु-शक्ति-योजना के अंतर्गत एक महत्वपूर्ण घटना है। इस संदर्भ में कुछ तथ्य विशेष उल्लेखनीय हैं।

परमाणु के भीतर एक छोटा-सा केंद्रीय नाभिक होता है, जो धनात्मक होता है और जिसमें परमाणु का समस्त द्रव्यमान निहित होता है। इस नाभिक के चारों ओर धनावेशी इलेक्ट्रान चक्कर काटते रहते हैं। नाभिक प्रोटोन एवं न्यूट्रान से बना होता है, जो लगभग एक ही द्रव्यमान के कण हैं। प्रोटोन धनावेशी एवं न्यूट्रान आवेश-रहित होते हैं।

नाभिक के भीतर प्रोटोन की कुल संख्या परमाणु की आणविक संख्या कहलाती है, जो नाभिक के चारों ओर चक्कर काटने वाले इलेक्ट्रान के बराबर होती है। यह आणविक संख्या ही तत्व के रासायनिक गुणों का निर्धारण करती है। दूसरी ओर, नाभिक के भीतर स्थित न्यूट्रान और प्रोटोन की कुल संख्या अणु के द्रव्यमान का निर्धारण करती है और इसे परमाणु की द्रव्य-संख्या कहा जाता है।

जिन परमाणुओं की आणविक संख्या ९२ है और जिनके विभिन्न आणविक द्रव्यमान २३३, २३५ एवं २३८ हैं वे एक ही यूरेनियम तत्व के समस्थानिक (आइसोटोप) कहलाते हैं और उनको क्रमशः यू-२३३, यू-२३५ और यू-२३८ लिखा जाता है। यू का तात्पर्य यूरेनियम है एवं संख्या द्रव्य-मान है। इन समस्थानिकों के नाभिक में ९२ प्रोटोन के अलावा क्रमशः १४१, १४३ और १४६ न्यूट्रान भी होते हैं।

इसी प्रकार हाइड्रोजन के तीन समस्थानिक होते हैं, जिनमें प्रोटोन तो सबमें एक होता है, लेकिन उनके नाभिक में न्यूट्रान या तो बिलकुल नहीं होते (एच-१ अथवा मात्र हाइड्रोजन) या एक होता है (एच-२, जो ड्यूटीरियम कहलाता है) अथवा दो होते हैं (एच-३, जिसे ट्रिटियम कहते हैं।)

समान आवेशवाले कण एक दूसरे को दूर धकेलते हैं। इस नियम के अनुसार चूंकि प्रोटोन धनावेशी होते हैं, इसलिए नाभिक के अंदर उनको एक-दूसरे से दूर भागना चाहिए। लेकिन नाभिक की स्थिरता से पता चलता है कि उसके अंदर प्रोटोन और प्रोटोन, प्रोटोन और न्यूट्रोन तथा न्यूट्रोन और न्यूट्रोन की शक्तियां एक-दूसरे को आपस में खींचती हैं। इन शक्तियों का उद्भव पूर्णरूप से समझा नहीं जा सकता है। इसलिए यदि एक नाभिक को उसके भागों अर्थात प्रोटोन एवं न्यूट्रोन में विभक्त किया जाए तो नाभिक को बांधे रखनेवाली शक्ति पर काबू पाने के लिए काफी शक्ति की आवश्यकता होगी।

एक विशेष प्रकार की संगलन-प्रतिक्रिया में ट्रीटियम (एच-३) जब ड्यूटीरियम (एच-२) के साथ मिलता है एक हीलियम-४ नाभिक (एच-४) और एक न्यूट्रोन उत्पन्न होता है। एच-२ और एच-३ नाभिक के संघटक-कणों की तुलना में हीलियम-४ नाभिक के संघटक-कण आपस में बड़ी मजबूती से जुड़े रहते हैं। इस तरह एच-२ के एक नाभिक के साथ एच-३ के एक नाभिक के मिलने से लगभग १७.६ मिलियन इलेक्ट्रान वोल्ट्स की ऊर्जा उत्पन्न होती है। हीलियम-४ नाभिक और न्यूट्रोन का कुल द्रव्यमान एच-२ और एच-३ के मिश्रित द्रव्यमान से कम होता है और द्रव्यमान के इस अंतर का परिणाम ही ऊर्जा है।

दो हल्के नाभिकों से एक भारी नाभिक के उत्पन्न होने की प्रतिक्रिया को संगलन प्रतिक्रिया कहते हैं। जब एक नाभिक ...

डॉ. एच. एन. सेठना, पोकरण क्षेत्र : विस्फोट के पहले (ऊपर), विस्फोट के बाद (नीचे)
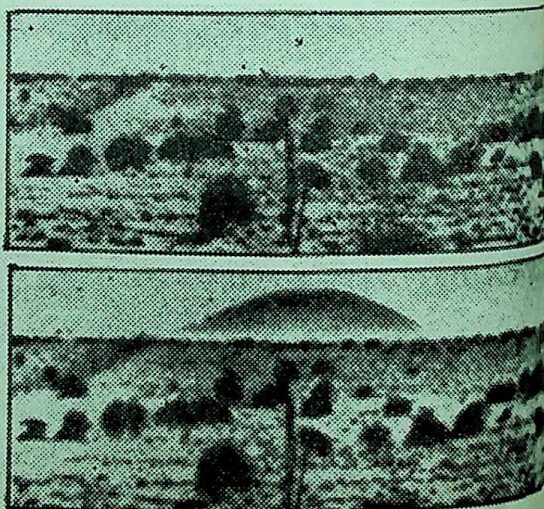
यू-२३५ एक न्यूट्रोन से टकराता है, तो एक उत्तेजित नाभिक यू–२३६ बनता है, जो समान आकार के दो भागों में विभाजित हो जाता है तथा जिसकी द्रव्यमान संख्या ८०–१५० के आसपास होती है। इस विभक्तीकरण में, जिसे विखंडन-प्रक्रिया कहते हैं, लगभग २००मिलियन इलेक्ट्रान वोल्ट्स की ऊर्जा उत्पन्न होती है तथा कुछ न्यूट्रोन (कभी दो और कभी तीन) बनते हैं। ये न्यूट्रोन यू-२३५ के साथ पुनः टकरा सकते हैं और ज्यादा विखंडन-ऊर्जा तथा अधिक न्यूट्रोन उत्पन्न कर सकते हैं। इस प्रकार एक निरतर स्वतः-नियंत्रित प्रतिक्रिया शुरू हो सकती है।

फिर भी, एक विखंडन-प्रक्रिया में निकले हुए सभी न्यूट्रोन ज्यादा विखंडनों में सहायक नहीं हो सकते। कुछ तो बाहर भाग जाते हैं और कुछ बिना विखंडन किये ही खप जाते हैं।

विखंडन-प्रक्रिया से उत्पन्न ऊर्जा का एक बड़ा भाग (८० प्रतिशत से ऊपर) उच्च रेडियो सक्रिय विखंडित टुकड़ों की गत्यात्मक ऊर्जा के रूप में प्रकट होता है। यदि इन टुकड़ों को मुक्त छोड़ दिया जाए, तो ये एक सेकंड में हजारों मील चले जाएंगे। शेष २० प्रतिशत ऊर्जा इलेक्ट्रान, विकिरण एवं द्रुतगामी न्यूट्रोन के रूप में प्रकट होती है।

यू-२३५, यू-२३३ और प्लूटोनियम-२३९ के नाभिकों में न्यूट्रोन से होने वाले विस्फोट तुरंत होते हैं। प्लूटोनियम,

परमाणु-चिह्न
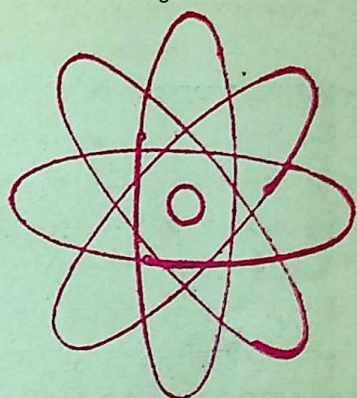
जो आणविक संख्या ९४ का तत्व है, प्रकृति में नहीं मिलता है, वरन् प्रजनक अभिक्रियकों (ब्रीडर रिऐक्टर) में उत्पन्न किया जाता है। सामान्य धारणा के विपरीत यू-२३५, यू-२३३ या प्लूटोनियम-२३९ जैसे नाभिकों में विखंडन नहीं होता, लेकिन यू-२३६, यू-२३४ और प्लूटोनियम-२४० जैसे अस्थिर समस्थानिकों में, एक और न्यूट्रोन के साथ मिलने पर, विखंडन अवश्य होता है।

एक आणविक विस्फोटक में बहुत शद्ध यू-२३५, यू-२३३ या प्लूटोनियम-२३९ होते हैं। जब उनमें से किसी एक तत्त्व के लघु खंड एक-दूसरे से टकराये जाते हैं तो अत्यंत तीव्रगति से, सेकंड के दस-लाखवें भाग में ही, काफी ऊर्जा उत्पन्न होती है। यदि इन खंडों के एक-दूसरे से मिलने में ज्यादा समय लगता है तो अपेक्षाकृत अविकसित और कमजोर विस्फोट
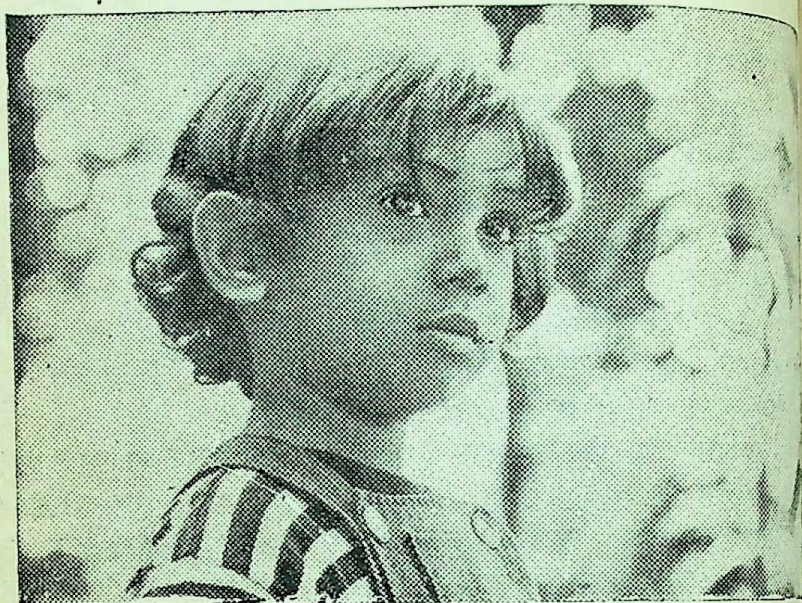
उसका भविष्य फिर से जगमगा उठा.

एक साल पहले वह घोर अंधकार में डूब रहा था. उसकी आंख के भीतर 'रेटिना' की तुरंत शल्यक्रिया करने के लिए 'लेसर बीम' की ज़रूरत थी, जो भारत में उपलब्ध ही नहीं थी. इस तरह एक उज्ज्वल भविष्य ज़रा से नाज़ुक धागे में लटका था.

हमसे सम्पर्क किया गया और हमने ५ महाद्वीपों में 'लेसर बीम' की खोज करायी. क्षण-क्षण बेचैनी में बीत रहा था और उधर एयर-इंडिया के कर्मचारी संसार भर के अस्पतालों में उसकी तलाश कर रहे थे. बेचैनी तब मिटी जब अंत में उक्त यंत्र मैनहेम में मिल गया. हम बच्चे को अपने विमान से फ्रैंकफ़र्ट ले गये और वहां से दूसरी एयरलाइन के सहयोग से वह मैनहेम पहुंचा.

आज हमें कितनी खुशी होती है उस बच्चे को देखकर जब वह तितली का पीछा करता है, फूलों के गुच्छे तोड़ता है. चमकीली और सुंदर चीज़ों को प्यार करता है. सचमुच, हमें अपने काम पर नाज़ होता है. हमारा काम ही है लोगों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाना, और यहां तक कि कभी-कभी तो हम अंधकार से प्रकाश में ले जाते हैं.

किसी भी परिस्थिति में आपकी सहायता के लिए हमारे पास संचार सुविधाओं की समुचित व्यवस्था है. संसार भर में हमारे १२९ कार्यालय और ३४ मंज़िलें हैं. इसलिए संसार के कोने-कोने में आपके दोस्त हैं. ऐसे दोस्त, जो ज़रूरत पड़ने पर आपकी हर तरह से मदद करने के लिए हाज़िर हैं. एक बार सेवा का मौका दीजिए और तब आप हमेशा ही एयर-इंडिया से सफ़र करना चाहेंगे.

होता है। इसलिए दोनों के बीच में बिलकुल नगण्य समय होना चाहिए। भारत में जो विस्फोट किया गया उसमें १५ किलोटन टी. एन. टी. के बराबर ऊर्जा उत्पन्न हुई और उसमें १५ किलोग्राम प्लूटोनियम का प्रयोग किया गया था।

प्राकृतिक रूप में मिलने वाले यूरेनियम में ०.७ प्रतिशत यू-२३५ और ९९.३ प्रतिशत यू-२३८ होता है। यू-२३३ तथा प्लूटोनियम-२३९ प्राकृतिक रूप से उपलब्ध नहीं हैं। फिर भी, यू-२३८ में जब एक न्यूट्रोन समाविष्ट होता है, तो यू-२३९ बनता है, जो एक इलेक्ट्रान को उत्सर्जित करने के बाद एनपी-२३९ में परिवर्तित हो जाता है। यह एनपी-२३९ एक इलेक्ट्रान के उत्सर्जन के बाद पुनः परिवर्तित होकर प्लूटोनियम-२३९ बनाता है।

प्लूटोनियम-२३९ बहुत ही जहरीली एवं रेडियोधर्मी वस्तु है जिसको काफी सावधानी से इस्तेमाल करना चाहिए। आणविक शक्ति कार्यक्रम का एक वर्ष पूर्ण होने के समय भारत प्रतिवर्ष लगभग ३ टन प्लूटोनियम तैयार करने में सक्षम हो जाएगा। अभी हम केवल ९० किलोग्राम प्लूटोनियम तैयार कर पाये हैं। यह मात्रा अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबंध से परे है और विस्फोट के काम लायी जा सकती है।

यू-२३३ भी प्रकृति में नहीं मिलता है। फिर भी, यू-२३३ को थोरियम-२३२ के न्यूट्रोन किरणीयन से उत्पन्न किया जा सकता है। पहले थोरियम-२३२ थोरियम-२३३ में परिवर्तित होता है, फिर थोरियम-२३३ (यू-२३९ के समान) एक इलेक्ट्रान को उत्सर्जित करने के बाद पीए-२३३ में बदलता है, जो पुनः एक इलेक्ट्रान के उत्सर्जन के बाद यू-२३३ में परिणत हो जाता है। इस प्रकार यदि थोरियम को अभिक्रियक (रिऐक्टर) के आवरण के रूप में प्रयुक्त किया जाए तो जो न्यूट्रोन अभिक्रियक से बाहर निकलेंगे वे थोरियम के साथ टकराकर यूरेनियम-२३३ उत्पन्न करेंगे। इस प्रकार के अभिक्रियकों को, जो चालू रहने के समय ईंधन (यथा यू-२३३) उत्पन्न करते हैं, प्रजनक (ब्रीडर) कहा जाता है।

जब कभी भूमिगत विस्फोट होता है, तो सेकंड के दस-लाखवें से भी कम हिस्से में बड़ी मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होती है। इसके फलस्वरूप विस्फोट के निकट १० लाख डिग्री तक के तापमान वाले वातावरण के दबाव में चारों ओर का सारा पदार्थ गैस में परिणत हो जाता है।

यदि विस्फोट अत्यधिक गहराई में नहीं होता है तो उसकी चिमनी या मुख के ऊपरी भाग में एक विवर बन जाता है। स्पष्टतः यही भारतीय परमाणु-विस्फोट में हुआ, जिसमें चिमनी के भीतर से उछले हुए पदार्थों से एक पहाड़ी निर्मित हो गयी थी। पृथ्वी के १०० मीटर नीचे किये गये १५ किलोटन शक्ति के विस्फोट से पृथ्वी पर २०० मीटर के व्यास का एक विवर बन गया। ●

• श्रीराम शुक्ल

लगभग पंद्रह वर्ष पूर्व, अखबारों में छपी एक खबर से सनसनी फैल गयी थी। कानपुर के एक होटल में खाना खाते समय जब एक व्यक्ति ने कटोरी में हाथ डाला तो गोश्त के साथ आदमी की एक पूरी अंगुली ही आ गयी। मामला गुप्तचर विभाग को सौंपा गया तो रहस्य खुला।

बाजार जाकर होटलवाला सारा ढेर-सा सामान खरीदता था और उसे झल्लीवाले के सिर पर लदवाकर अपने होटल में लाता था। बावर्चीखाने के पीछे एक कमरा था जिसके नीचे एक तहखाना था। दरवाजे से दो कदम आगे कमरे का फर्श तोड़कर उस पर लकड़ी का एक पटरा रख दिया गया था, जो थोड़ा-सा जोर पड़ते ही तहखाने में गिर जाता था।

होटलवाला मजदूर को बावर्ची-खाने के रास्ते से ले जाकर पीछेवाले कमरे में सामान रख आने को कहता था। बोझ से लदा हुआ मजदूर कमरे में घुसकर जैसे ही पटरे पर पांव रखता, नीचे गिर जाता था और तहखाने में पहले से मौजूद हत्यारे उसकी हत्या कर देते थे।

इस प्रकार रोज ही कोई न कोई ह[...] कट्टा मजदूर पल भर में लाश बन [...] और उसका गोश्त पकाने के लिए बा[...] खाने में पहुंचा दिया जाता था। होट[...] उस मांस के नये और बढ़िया स्वाद [...] आकर्षित ग्राहकों की संख्या रोज ही ब[...] जाती थी। उस होटल में तीन महीने [...] मनुष्य का मांस खानेवाले पहल[...]

कविराम भट्ट ने बताया, "मेरा स्वा[...] दिनोंदिन बढ़ता गया और मेरे साथियों [...] भी इस पर आश्चर्य होने लगा। इस [...] में मुझे वह स्वाद मिला जो किसी अन्य [...] में मिल ही नहीं सकता। लगभग तीन म[...] तक मैं उस होटल में चटखारे लेकर म[...] का मांस अनजाने ही खाते रहा लेकिन [...] यह रहस्य खुला कि वह मनुष्य का [...] था तो मुझे किसी भी प्रकार का मांस [...] से घृणा हो गयी।"

होटल में बेचारे ग्राहक तो अनजाने [...] मनुष्य का मांस खाते रहे, लेकिन [...] जाता है, अघोरी लोग तो श्मशान में [...] खाते हैं, शव-साधना करते हैं। लेकिन [...] में विदेश में पूरी जानकारी होते हुए [...]

मृत मनुष्य का मांस खाने की एक रोमांचक घटना प्रकाश में आयी है।

यह दर्दनाक और अमानुषिक घटना इस बात का प्रतीक है कि अपने निजी व्यापार के लिए जबरन लाशें जीवित व्यक्तियों को खिलायी जाती थीं। लेकिन 'आपत्तिकाले मर्यादा नास्ति' संकट के समय कोई धर्म, कोई मर्यादा नहीं होती, इसका उदाहरण है एक विमान दुर्घटना।

१३ अक्टूबर, १९७२ को एक वायुयान एंडीज पर्वत शृंखला के ऊपर उड़ते हुए दुर्घटनाग्रस्त हो गया। इस जहाज में यूरेग्वे के रग्बी खेल-दल के १५ सदस्य, उनके २५ संबंधी, मित्र तथा चालक-दल के ५ सदस्य यात्रा कर रहे थे। कुछ यात्री और चालक-दल के अधिकांश सदस्य घटना-स्थल पर तुरंत मर गये। बचे हुए यात्रियों में से काफी लोग बर्फ की चट्टानों पर ध्वस्त विमान में घायल हो गये थे।

दुर्घटनाग्रस्त विमान को खोजने का सरकारी प्रयास ८ दिन बाद बंद कर देना पड़ा। जो लोग बच गये थे उनके लिए शून्य से भी ४० डिग्री कम तापक्रम में भूखे रहकर जीवित रहना एक चुनौती बन गया। काफी प्रयास के बाद जो बर्फ के ढेर से बाहर आ सके उन लोगों ने सहायता प्राप्त करने के लिए 'साहसिक यात्रियों' का एक दल बनाया। साथ ही उन्होंने अपने मरे हुए साथियों का मांस खाकर जीवित रहने का निश्चय किया। अंत में, अपने दो साथियों के साहसपूर्ण प्रयास के फलस्वरूप केवल १६ व्यक्ति दस सप्ताह की कठिन परीक्षा में जीवित रहे।

एक युवा अंगरेज उपन्यासकार पियर्स पॉल रीड ने अपनी पुस्तक 'एलाइव' में इस आश्चर्यजनक घटना का प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत किया है। वास्तव में, मानव के मांस को खाने का निश्चय जल्दी

बचे हुए लोगों में सब से दुबला व्यक्ति सैनटिआगो अस्पताल की ओर

ही कर लिया गया था। व्यवहारवादियों को अपने उन साथियों को जो मनुष्य का मांस खाने से घृणा करते थे, आश्वस्त करना पड़ा कि जीवित रहने के लिए ऐसा कार्य करना नैतिक कर्म है। कुछ लोगों ने मानव मांस खाने की समता ईसामसीह के स्मरणीय

भोज के साथ करके संतोष व्यक्त किया ।

यद्यपि इन लोगों ने यह स्वीकार कर लिया था कि मृत साथियों का शरीर सिवा मांस के और कुछ नहीं तथापि कुछ लोगों को उसके प्रति स्वाभाविक अरुचि से काफी संघर्ष करना पड़ा। कुछेक ने पक जाने पर ही उस मांस को खाया, यद्यपि काफी मांस बिना पका हुआ ही दिया गया था ताकि ईंधन की बचत हो सके और उसमें प्रोटीन की अधिक मात्रा भी बनी रहे। अंततोगत्वा बचे हुए सभी लोग कठोर-हृदय बनते गये और उन्होंने शरीर के किसी भाग को बिना खाये हुए नहीं छोड़ा ।

शुरू में अपने सहयात्रियों के शवों का मांस खाने में जो घृणा और भय उत्पन्न हुआ, बचे हुए यात्री धीरे-धीरे उसके अभ्यस्त हो गये । यहां तक कि उन लोगों ने मनुष्य की खाल को मोजों और दस्तानों के रूप में भी इस्तेमाल किया ।

'एलाइव' में दिखाया गया है कि उस समाज में शारीरिक एवं मानसिक रूप से सबलतम व्यक्तियों का एक विशेष साहसी वर्ग उत्पन्न होता है, जिसे अतिरिक्त खाना मिलता है तथा जो रोजमर्रा के छोटे-मोटे कामों से मुक्त रहता है ताकि उनमें इतनी क्षमता बनी रहे कि वे कठिन परिस्थितियों से बचकर निकल सकें । लेकिन जब उन साहसी यात्रियों में से कुछेक अनायास अपने विशेष अधिकारों का दुरुपयोग करने लगते हैं, तो एक विरोधी शक्ति पैदा हो जाती है जो कमजोर वर्ग की रक्षा करती है। तीसरा वर्ग केवल निर्बल व्यक्तियों का है, जिसमें वही लोग हैं जो अपने नेताओं के दिशा-निर्देश और आदेशों पर निर्भर रहते हैं ।

सभी बचे हुए लोग उच्च मध्यवर्गीय रोमन कैथोलिक हैं और रग्बी के अच्छे खिलाड़ी हैं । इन युवकों में फरनांदो पैरादो एक निष्कलंक नायक के रूप में उभरा है। विमान ध्वस्त होने से पहले तक वह डरपोक और चंचल लड़का था, लेकिन दुर्घटना के बाद उसका साहसपूर्ण नेतृत्व पहली बार को एकदम अविश्वसनीय ठहरा देता है ।

सामान्य रूप से फरनांदो पैरादो में कोई विलक्षणता नहीं दिखायी पड़ती । वह २४ वर्ष का लंबा, सुंदर युवक है जो म.टेविडियो, यूरेग्वे में अपने पिता के कारखाने में कार्य करता है । साथ ही मिकैनिकल इंजीनियरिंग का कोर्स भी कर रहा है। फिर भी पैरादो एक असाधारण व्यक्ति है । वास्तव में वह ध्वस्त विमान के बचे यात्रियों में जो, अपने साथियों की लाशें को खाकर १० सप्ताह तक जीवनयापन करते रहे थे, सबसे अधिक प्रभावशाली व्यक्ति है । अपनी साहसपूर्ण रोमांचक कहानी के संबंध में 'न्यूजवीक' की प्रतिनिधि पैट्रीशिया जे. सेठी के साथ बातचीत के दौरान पैरादो ने कुछ प्रश्नों के बड़े रोचक उत्तर दिये ।

प्रश्न—दुर्घटनाग्रस्त होने के बाद मनुष्य का मांस खाने के आपके साहसिक कार्य को लोग सबसे अधिक नाटकीय पहलू

समझते हैं । क्या आप इससे सहमत हैं ?

उत्तर—नहीं, मैं सहमत नहीं हूं । मनुष्य का मांस खाना एक ऐसा काम था जिसने हम लोगों को बच निकलने का रास्ता दिखाया । हम लोगों ने मनुष्य का मांस खाने के बारे में कभी नहीं सोचा था । हम किसी-न-किसी प्रकार अपनी भूख मिटाना चाहते थे, ताकि जिंदा रह सकें । यदि विमान की धातु चबाकर पेट भरना हमारे लिए संभव होता तो वैसा ही करते, लेकिन वह संभव नहीं था । हम सब ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों से घिरे हुए थे । रात में तापक्रम शून्य से ४० डिग्री कम हो जाता था और हम लोगों के पास पहनने के लिए केवल कमीज और स्वेटर था । हम जिंदा रहना चाहते थे । जिस शरीर से बहुत पहले आत्मा निकल चुकी हो, उसे खाने, न खाने का प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण नहीं था जितना कि किसी दोस्त को जीवित रखना ।

—आप इस अनुभव का सबसे अधिक दुःखपूर्ण भाग कौन-सा समझते हैं ?

—व्यक्तिगत रूप से, दुर्घटना में मेरी मां और बहन की मृत्यु मेरे लिए सबसे दुःखांत बात थी । उसने मुझे और अधिक दृढ़ निश्चयी बना दिया । मुझे इसकी अधिक चिंता थी कि मेरे पिता यह सोचकर दुःखी होंगे कि उनका सारा परिवार विमान-दुर्घटना में समाप्त हो गया । अतः मैंने प्रण किया कि अपने पिता को यह बताने के लिए कि मैं जिंदा हूं, किसी न किसी तरह पहाड़ पर सरक-सरककर घर पहुंचूंगा ।

—'एलाइव' के अनुसार आपने ही सबसे पहले सुझाव दिया कि विमान-चालकों की लाशों को भोजन बनाया जाए । क्या यह सही है ?

—दुर्घटना के आठवें दिन हमारे पास खाने के लिए कुछ भी नहीं बचा था । हम लोग जान गये थे कि अब हमारी मौत नजदीक आती जा रही है । मैं समझता
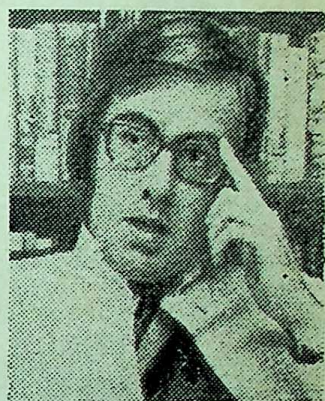
फरनांदो पैरादो : बचे हुए लोगों का नायक

हूं कि उस समय आदमी का मांस खाने का विचार हरेक के दिमाग में आया होगा, लेकिन मैंने ही इसे व्यक्त किया ।

—आपने अपने मृत साथियों के मांस की तुलना 'स्मरणीय भोज में ईसा मसीह के शरीर' से कब की ? क्या यही आपके कार्य का आधार था या बाद में इस युक्ति की उत्पत्ति हुई ?

—यह विचार बाद में आया । हममें से चिकित्सा-छात्रों के लिए मनुष्य का मांस खाना एक शारीरिक आवश्यकता थी,

क्योंकि जीवित रहने के लिए प्रोटीन की आवश्यकता थी । कुछ युवकों को इसका ज्ञान नहीं था, अतएव मनुष्य का मांस खाने की तुलना 'स्मरणीय भोज' से करते हुए हमने समझाया कि किस तरह से ईसा मसीह ने अंतिम भोज में अपना शरीर अपने शिष्यों के भोजन हेतु अर्पित किया था, और यहां हमारे साथियों ने हमें जीवित रखने के लिए अपना शरीर अर्पित किया है। तभी हम लोगों ने एक समझौता-सा कर लिया कि यदि बचे हुए लोगों में से कोई मर जाए तो शेष लोग जीवित रहने के लिए उसके शरीर का मांस खा लें । एक मित्र दूसरे मित्र की जीवन-रक्षा के लिए अपना शरीर दे, इससे बढ़कर और क्या बात हो सकती है !

—आपके इस अनुभव से क्या आपमें धार्मिक प्रवृत्ति बढ़ी या घटी ?

—हम लोग ईश्वर के इतना समीप हो गये थे कि उसका स्पर्श अनुभव कर सकते थे । उसी की दया से हम वहां से बचकर निकल सके । यदि हम लोग अपने-आप चाहते तो बर्फ से ढंकी १४, ००० फुट ऊंची पर्वत-माला पर नहीं चढ़ सकते थे ।

—क्या आपको यह सोचकर हैरानी नहीं होती कि ईश्वर ने आपको बचा लिया, जबकि आपकी मां और बहन को नहीं बचाया ?

—हां, मुझे हैरानी होती है, लेकिन यह उसका न्याय है और हम उसे मानते हैं । हो सकता है कि ईश्वर उन्हें स्वर्ग में चाहता हो और वहां वे इस जीवन से ज्या[दा] सुखी हों । जीवन एक संयोग है और मृ[त्यु] ही यथार्थ है । आप यह नहीं जानते कि आ[प] कितने समय तक जीवित रहेंगे, लेकि[न] मौत निश्चित है, यह आप जानते हैं।

इस दुर्घटना के फलस्वरूप जीवन [के] बारे में आपके विचारों में क्या [कोई] परिवर्तन हुआ ?

—जैसे ही हम लोग बचकर निक[ले] हम लोगों ने प्रतिदिन प्रार्थना करना [शुरू] किया । मैंने कहा कि मैं बाहर भी [उसी] प्रकार से अच्छाई करूंगा जैसे कि दुर्घट[ना] के बाद पहाड़ पर कर रहा था, अ[र्थात्] अपने साथियों के प्रति निस्वार्थ रूपसे भल[ाई] लेकिन सभ्यता इसे कठिन बना देती है [।] एंडीज पर हमको बर्फ पिघलाकर [एक] गिलास पानी तैयार करने में दो घंटे ल[गते] थे । यहां टोंटी घुमाकर पानी लेना, खा[ना] गरम कमरे में सोना आदि एक आ[दत] सी बन गयी है ।

—क्या आप सोचते हैं कि इस घ[टना] से आपके जीवन में कोई मोड़ आया है [?]

—मेरे जीवन का यह एक मोड़ [ही] था । इससे मेरा आत्मविश्वास प्रब[ल हो] गया है । अब मुझमें शीघ्र निर्णय लेने [की] क्षमता आ गयी है और यह विश्वास [हो] गया है कि वे निर्णय ठीक होंगे । फिर [भी] मैं अपने को 'नायक' नहीं महसूस क[रता] हूं । मैं अपने पुराने ढंग से ही जीवन व्य[तीत] कर रहा हूं । हां, मेरे प्रति दूसरों की भा[वना] और व्यवहार में परिवर्तन हो गया है।

राष्ट्रवाणी का ओजस्वी स्वर

• विजयेन्द्र स्नातक

हिंदी प्रदेशों में कविता के माध्यम से जन-जागरण और क्रांति उत्पन्न करनेवाले कवियों में दिनकर का स्थान मूर्धन्य है। महात्मा गांधी के सत्याग्रह और असहयोग आंदोलन के समय जो कवि अपनी ओजस्वी वाणी को राष्ट्रीय स्थान के लिए प्रयुक्त कर रहे थे, दिनकर उनमें अग्रणी थे। जब कभी हिंदी की राष्ट्रीय कविता का इतिहास लिखा जाएगा तब दिनकर की कविताओं से उसका कलेवर निर्मित होगा। दिनकर शुद्ध अहिंसावादी सत्याग्रही व्यक्ति नहीं थे। अपनी मान्यताओं के अनुकूल उन्होंने परतंत्रता के पाश छिन्न-भिन्न करने के लिए अतीत गौरवगान के साथ वीर-रस की शौर्यपूर्ण रचनाओं का मार्ग अपनाया था।

कविवर दिनकर ने लगभग चालीस वर्षों तक हिंदी साहित्य के मंजर को विविध विधाओं द्वारा भरने का प्रयत्न किया। उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। इतिहास, संस्कृति, कविता और दर्शन उनके प्रिय विषय थे। इसके अतिरिक्त भाषण-कला में भी वे पूर्ण दक्ष थे। अपने ओजस्वी भाषणों से उन्होंने जन-जागरण का सराहनीय कार्य किया था। लेखनी और वाणी पर उनका समान अधिकार था। जिस

बहुमुखी प्रतिभा के धनी दिनकर

किसी सभा-समारोह में दिनकर बोलते तो ऐसा लगता कि शार्दूल दहाड़ रहा है। उत्साह और जोश से भरी हुई उनकी वर्चस्वी वाणी आज भी प्रतिध्वनित होती हुई प्रतीत हो रही है।

दिनकर ने हिंदी-काव्यक्षेत्र में जब पदार्पण किया उस समय दो प्रकार की विचारधाराएं कविता में प्रवाहित थीं। छायावादी रोमानी कविता के पैर जमे हुए थे। उस समय के प्राणवान कवि छायावादी शैली में प्रेम, शृंगार, प्रकृति, नारी तथा रहस्योन्मुखी रचनाओं से हिंदी काव्य को समृद्ध बना रहे थे। दूसरी धारा के कवि वे थे जिनके भीतर राष्ट्रीयता की भावना हिलोर मार रही थी और जो देश-प्रेम की मस्ती में राष्ट्रीय कविताएं लिख रहे थे। माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्राकुमारी चौहान, रामनरेश त्रिपाठी, सनेही आदि कवियों ने जन-जागरण तथा विदेशी शासन के विरोध में काव्य-सृजन कर युगानुकूल धारा बहायी थी। दिनकर इसी धारा के कवि थे, किंतु उनकी कविता में एक ऐसी इंद्रधनुषी छवि थी कि इन कवियों के साथ उन्हें एक पंक्ति में नहीं बिठाया जा सकता। यदि भावावेश को आधार माना जाए तो दिनकर ने राष्ट्रीय काव्यधारा को नयी गति, नयी चेतना, नया प्रवाह, नया ओज, नयी क्षमता और नया रूप प्रदान किया था। इसीलिए दिनकर अनुकरण करनेवाले कवि न होकर अपना नया स्वतंत्र मार्ग बनानेवाले कवि थे। वे स्वयं अनुकरणीय हो गये थे।

दिनकर को अपने जीवन में लगभग सोलह वर्ष सरकारी नौकरी करनी पड़ी। इन सोलह वर्षों को वे अपने जीवन की कठिन-कसौटी कहते थे। दो वर्ष के लगभग हिंदी-प्रोफेसर भी रहे, किंतु उसे उन्होंने सरकारी नौकरी होने पर भी नौकरी नहीं माना। वे कहते थे कि मुझे कविता लिखने का मौका मिला ही नहीं। 'दिन भर सरकारी फाइलें पीटने के बाद भी क्या कविता के लिए कोई जीवनीशक्ति शेष रह सकती है?' एक स्थान पर उन्होंने लिखा है कि जब अफसर लोग लॉन में टेनिस का आनंद लेते थे तब मैं बंद कमरे में कविता की पंक्तियां जोड़ता था। सचमुच यह देश का बड़ा दुर्भाग्य ही है कि इतने महान कलाकार को जीविका के लिए वह करना पड़ा जिसे वह स्वप्न में भी नहीं करना चाहता था। अंगरेज अफसर तो सदैव रुष्ट ही रहे। चार साल में चौबीस बार उनका ट्रांसफर किया—परेशान किया कि कविता लिखने का धंधा छोड़कर सरकारी नौकरी में वफादारी का सबूत दें। लेकिन दिनकर ने आत्मा की आवाज ही सुनी—अफसरों की आवाज को एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल दिया। 'रेणुका', 'हुंकार', 'द्वन्द्वगीत', 'कुरुक्षेत्र', 'बापू', 'रसवन्ती' जैसी श्रेष्ठ कृतियां सरकारी नौकरी के समय ही लिखी गयीं। कौन कह सकता है कि जिन परि-

स्थितियों में कवि ने [illegible] रचना की होंगी वे विषमता और प्रतिकूलता की चरमसीमा न रही होंगी। विस्मय तब और अधिक होता है कि दिनकर को परिवार-पोषण के लिए जीविका की सख्त जरूरत थी और नौकरी से निकाले जाने का पूरा भय था, फिर भी वे अपने को अनल-किरीट धारण करनेवाला आलोकधन्वा कवि कहने का साहस रखते थे—

ज्योतिर्धर कवि मैं ज्वलित सौरमंडल का
मेरा शिखंड अरुणाभ, किरीट अनल का
रथ में प्रकाश के अश्व जुते हैं मेरे
किरणों में उज्ज्वल गीत गुंथें हैं मेरे

हिंदी कविता को नया मोड़ देने के लिए एक सरकारी नौकर जो प्रेरणादायक प्रयत्न कर रहा था उसका मूल्यांकन आज हम तटस्थ भाव से कर सकते हैं। न तो आज विदेशी शासन है और न विदेशी शासन को ललकारने और झकझोरनेवाला शार्दूल कवि ही जीवित है। 'हिमालय' कविता में दिनकर ने नवयुवकों के आक्रोश को वाणी दी थी—ऐसी वाणी जो हिमालय की गगनस्पर्शी चोटियों से लेकर समुद्र की अतल गहराइयों तक गूंज उठी थी। उस तेजोद्दीप्त वाणी में युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन का अजेय पराक्रम हुंकार उठा था। 'दिल्ली' शीर्षक कविता में तत्कालीन दिल्ली का जो रूप कवि ने अंकित किया वह इतना सटीक था कि दिल्ली का अतीत और वर्तमान अपनी संपूर्ण विषमता में साकार हो उठा था—

दिल्ली आह ! कलंक देश का
दिल्ली आह ! ग्लानि की भाषा
दिल्ली आह ! मरण पौरुष का
दिल्ली छिन्न-भिन्न अभिलाषा

दिनकर ने भाषा के माध्यम से शाप और शर का प्रयोग किया था। ऐसा प्रखर प्रयोग संभवतः उस समय माखनलाल चतुर्वेदी के सिवा और कोई कवि नहीं कर सका था। 'कोकिल और कैदी' शीर्षक कविता में चतुर्वेदी जी ने जिस स्वर का संधान किया था वही स्वर दिनकर का प्रिय स्वर था। उसी स्वर को पंचम तक पहुंचाने का श्रेय दिनकर को है।

दिनकर केवल कवि ही नहीं, उच्च-कोटि के मनीषी भी थे। 'कुरुक्षेत्र' में युद्ध-दर्शन को उन्होंने विचार के स्तर पर प्रस्तुत कर अपने वैदुष्य का अच्छा परिचय दिया था। 'कुरुक्षेत्र' के भीष्म और युधिष्ठिर कवि दिनकर के आभ्यंतर संवाद के दोनों पक्षों के प्रतीक हैं और उनके विचार-विमर्श को ही काव्यभाषा में प्रस्तुत करते हैं। दिनकर ने 'कुरुक्षेत्र' में जीवन की उन समस्याओं पर गहरे उतरकर विचार किया था जो उस युग में अहिंसा, शांति, विश्वप्रेम और मैत्री की पुकारों के बीच भी हिंसा, युद्ध और शत्रुता को बढ़ावा दे रही थीं। दिनकर ने एक प्रश्न उठाया था —ऐसा प्रश्न जो आज भी उठाया जाना चाहिए। अर्थात्, रण को कौन बुलाता है और जो बुलाता है उसके लिए विश्व के न्यायालय में दंड की क्या व्यवस्था है?

दिनकर ने ललकारकर कहा था—

चुराता न्याय जो, रण को बुलाता भी वही है
युधिष्ठिर! स्वत्व की अन्वेषणा पातक नहीं है

दिनकर ने युद्ध और शांति की समस्या ही नहीं, और भी ऐसी अनेक समस्याएं उठायी थीं जो मानवजाति के सामने प्रश्नचिह्न बनकर खड़ी रहती हैं। दिनकर मानव-धर्मी कवि थे। मानव-समाज के कल्याण की प्रत्येक प्रक्रिया को सूक्ष्म दृष्टि से देखना उनका स्वभाव बन गया था। आस्था और विश्वास खोकर किसी अंधी गली में भटकने के लिए उन्होंने मानव को प्रेरित नहीं किया था। अवचेतन और अचेतन की गहन गुफा में टोह लगाना उनके स्वभाव में नहीं था। 'कुरुक्षेत्र' में शंकाओं का अंबार लगा देने के बाद भी उन्होंने आस्था, विश्वास का संबल हाथ से नहीं जाने दिया,

भावना मनुष्य की न राग में रहेगी लिप्त
सेवित रहेगा नहीं जीवन अनीति से
हार से मनुष्य की न महिमा घटेगी और
तेज न बढ़ेगा किसी मानव की जीत से
स्नेह बलिदान होंगे माप नरता के एक
धरती मनुष्य की बनेगी स्वर्ग प्रीति से

'संस्कृति के चार अध्याय' में उन्होंने भारतीय संस्कृति की दीर्घकालीन यात्रा का शोधपरक दृष्टि से संधान किया है। एक कवि के द्वारा यह अनुसंधान इतना विस्मयकारी लगता है कि संस्कृति के साथ-साथ भारतीय समाज के निर्माण, पुनर्निर्माण, जागरण, पुनर्जागरण का पूरा लेखा-जोखा इसमें समाया हुआ है। कवि दिनकर ने हिंदी कविता को राष्ट्रीयता का स्वर ही नहीं दिया वरन समकालीन कवियों तथा रचनाकारों को कलाकार के दायित्वों का बोध भी कराया था। जन-साधारण की उपेक्षा करनेवाले कलाकार को उन्होंने कभी वरीयता नहीं दी। उनकी दृष्टि में जनता की उपेक्षा करनेवाला कवि या लेखक डिक्टेटर के सदृश ही जनता से बहुत दूर होता है। दिनकर की काव्य-चेतना निषेध से स्वीकृति, अकर्मण्यता से कर्मठता और स्वप्न से सत्य की ओर अग्रसर हुई थी। पहले कवि दिनकर भाव-प्रवण थे, फिर विचारप्रवण हुए, फिर आगे चलकर प्रचंड तेज के साथ युद्ध की स्वीकृति देकर क्रोधानल में आहुति डालने लगे। उसके बाद जीवन की प्रौढ़ता पर पहुंचकर उन्होंने अध्यात्म और दर्शन की ओर ध्यान लगाया। वे गीत लिखनेवाले कवि या भाषण देनेवाले व्याख्याता ही नही बने रहे, बल्कि बलिदानी वीर पुरुष के समान कर्म और प्रेरणा को मिलाकर विचार-सागर में गहरे उतरते चले गये।

आज उनकी ओजस्वी वाणी का स्वर मौन हो गया है किंतु उन्होंने इस महान राष्ट्र की राष्ट्रीयता और भारत की राष्ट्र-भाषा हिंदी के लिए जो कार्य किया वह इस देश के इतिहास में सदैव अंकित रहेगा।

—'स्नातक सदन'
ए-५/३, राणाप्रतापबाग, दिल्ली-११०००७

हिंदी में सहकारी बंधुवाद

सहकारी खेती की तरह हिंदी के सृजनात्मक साहित्य में 'सहकारी बंधुवाद' का उदय भी जोरों से हुआ है। यदि 'सहकारी बंधुवाद' की व्याख्या को सही ढंग से समझ लिया जाए तो साहित्यिक आंदोलनों की भरमार के कारण भी आसानी से समझ में आ जाएंगे। ये आंदोलन रातोंरात जन्म लेते हैं और उनके साथ ही नये साहित्यकार 'नयी पौद' की तरह उभर आते हैं। ये सब आंदोलनी काफिले में शामिल होकर किसी एक की 'शोभायात्रा' के अंग बन जाते हैं।

इन आंदोलनों की सारी कार्य-प्रणाली सहकारी-उद्यमों के आधार निश्चित होती है, किंतु परिणाम तक बड़े ही 'एकाधिकारी' रहे हैं, ऐसा नहीं कि अन्य सहयोगियों को फल से पूर्णतः वंचित रह पड़ा हो। शर्त या शोहरत में से कुछ अंशों में हरेक के पल्ले ही है।

क्या आपने ऐसे नाम सुने हैं आगे पदार्थ अथवा स्थान-बोधक या विशेषण जुड़े हों? दिल्ली के टी में हमने ऐसे नामों की चर्चा सुनी वस्तुतः हिंदी साहित्य के क्षेत्र में उद्यमों के सूचक हैं। जैसे—(दूध) सिंह, (काशी) नाथ सिंह और ना... इन नामों की सफल उपज की देखा संयुक्त-खेती की तरज पर कुछ साहि आंदोलनों का जन्म हुआ।

इसी सहकारी वोटवादी राज में साहित्यिक के चुनाव-टिकट भी जातियों के आधार पर दिये जाते उदाहरण के लिए—साहित्य के वादी खेमे से मान्यता प्राप्त करने के आपके नाम के आगे एक जाति विशेषण की आवश्यकता है—वह या 'वर्मा' में से कुछ भी हो सकता जैसे बिहार की राजनीति में घुसपैठ लिए आपके नाम के सामने एक 'सर नेम' होना जरूरी है।

पिछले १० सालों की हिंदी साहि की यही उपलब्धि है।

छोटी पत्रिकाएं और दलीय राजनीति

हिंदी की छोटी पत्रिकाएं, और तथाकथित 'साहित्यकार' किधर जा रहे हैं ? अचानक 'स्लोगनवाला' लेखन मौलिकता के नाम पर गिनाया जाने लगा है। ये लेखक विभिन्न राजनीतिक संगठनों से प्रतिबद्ध होते जा रहे हैं और संगठन की मांग पर रचनाएं गढ़ रहे हैं।

साहित्यकार को दलीय गाड़ी का पुरजा मात्र माननेवाले ये छुटभैया लिखाड़ी स्वयं भी लेखन में दलीय निर्देशों का पालन करने के लिए अभिशप्त हैं। मजा यह है कि दलीय पहचान, जो रंगारंग होती जा रही है, की खातिर इन्हें वैसी शब्दावली का प्रयोग भी करना पड़ता है अन्यथा उनकी दलीय तस्वीर धूमिल हो जाएगी और निष्ठा को बट्टा लगेगा। दलीय पैसे पर छोटी-छोटी वैचारिक रंगीनीवाली पत्रिकाएं निकालकर स्वयं उनके संपादक होने का गर्व ये लोग पाल सकते हैं और लेखक-पाठक को अपने स्वार्थों के घेरे में घेर लाना चाहते हैं। आखिर यह घेराबंदी और यह फंदाबंदी क्यों ? साहित्य के लिए ?

आप यदि गौर करें, इन प्रतिबद्ध रचनाओं को ध्यान से देखें, तो वे, एक नये प्रकार के हठवाद की शिकार लगेंगी। 'आधुनिकता' पर जमकर बहसें करनेवाले ये 'बुद्धिजीवी' वस्तुतः मानसिक रूप से मध्ययुगीन [illegible] के भोंपू बनकर रह जाते हैं, जहां अविवेक को विवेक की खाल पहनाकर प्रस्तुत किया जाता है।

प्रश्न उठता है, क्या साहित्यकार के लिए यह विवशता स्थितिजन्य है या उसकी पिछलग्गू मनःस्थिति की उपज ? लगता है, आज का यह स्वघोषित, स्व-प्रतिष्ठित साहित्यकार साहित्य से ज्यादा राजनीति से कुछ पाने की फिसलन पर पेट के बल लगातार रपटता चला जा रहा है। विश्व-स्तर के साहित्यकार जबकि राजनीतिक फंदों से मुक्त होने के लिए बड़े-बड़े खतरे मोल ले रहे हैं, छटपटा रहे हैं, तो हिंदी का नया उभरता लेखक नारों के बीच फंसता जा रहा है। इससे भी मजे की बात है कि वह इसके बावजूद शोर कर रहा है कि उसके मौलिक लेखन को और उसकी स्वतंत्रता को सत्ता दबा रही है। बिके हुए दास की तरह सेवा नहीं करेंगे तो काम कैसे चलेगा ?

• डॉ. शचीरानी गुर्टू
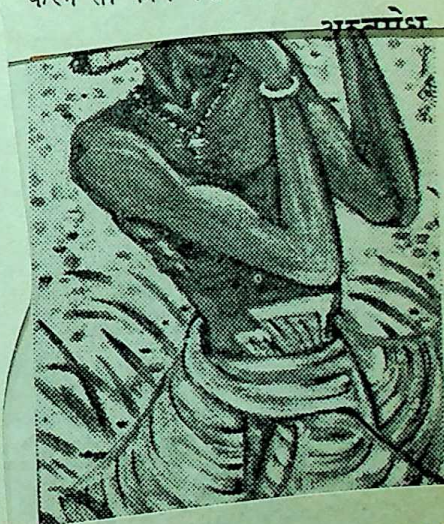
रंग और रेखाओं का जादूगर

सृजन की अदम्य प्रेरणा, अभिव्यक्ति का आकुल आग्रह और रंगों की चिरअतृप्त प्यास मन में संजोये, चिरंतन चेतन के पंखों पर विराट सपनों की परिकल्पना को साकार करने की इच्छा लिये सुधीर खास्तगीर उस अनंत पथ के अनुगामी बन चुके हैं जहां जाकर कोई लौटता नहीं। उनके असमय और आकस्मिक निधन ने कला-जगत में ऐसी रिक्ति पैदा

• सृजनात्मक साहित्य में सहकारी बंधुवाद' का उदय भी जोरों से हुआ है। यदि 'सहकारी बंधुवाद' की व्याख्या को स[ही] ढंग से समझ लिया जाए तो साहित्यि[क] आंदोलनों की भरमार के कारण आसानी से समझ में आ जाएंगे। ये आं[दो]लन रातोंरात जन्म लेते हैं और उन[के] साथ ही नये साहित्यकार 'नयी पौद' की तरह उभर आते हैं। ये सब आंदोलनी काफिले में शामिल होकर किसी एक की 'शोभायात्रा' के अंग बन जाते हैं।

तसवीर, सामूहिक जीवन की ...

... के व्यापक तानेबाने की ... त्मक मुखरता को व्यंजित करनेवाले ... कारों में उनके रंग गहराये, रेखाएं ... कर उठीं और अंतरंग के संस्पर्श ने ... जान डाल दी।

'भिक्षुणी', 'मां', 'गरीब की दुनिया', 'विधवा', 'दुःख', 'तूफान'—सभी में ... स्थल को स्पर्श करनेवाली सूक्ष्मता ... भावों की सृष्टि हुई है। 'बांसुरी बजाने वाले' में जिस अविराम गति से बांसुरी का स्वर लहराता ज्ञात होता है, ... ही त्वरा से राधा-कृष्ण की भंगिमाएं अंकित हुई हैं। स्वर, लय, ताल एकाकार हो ... रंग, रेखाओं और आकर्षक चित्र-सज्जा के साथ समाहित हुए-से लगते हैं। 'ढोलिए' में भी यही त्वरा और प्रभावो-त्पादक सौंदर्य है। कतिपय चित्रों में कम-नीय कोमलता और करुणा से आप्लावित राग है, जो रंगों के मिश्रण से भीतर ... नीरव विह्वलता में रम गया है। 'नववधू', 'वसंत', 'स्रोत' सभी में जीवन का ... सत्य व्यंजित हुआ-सा लगता है। कभी-कभी सांसारिक थपेड़े कलाकार के मन को विचलित कर देते हैं और एक ... उदासी उसे आच्छन्न कर लेती है। पत्नी के असमय निधन ने उसके अंतर को झक-झोरा था, जिसकी व्यथा कितने ही चित्रों में साकार होकर उभरी। 'विधवा', 'दुःख', 'गरीब की दुनिया', 'आधुनिक शिक्षा के भार से विपन्न कन्याएं' निराश और भग्न हृदय की झांकियां हैं। मूर्ति के रूप ...

निर्मित 'महाकवि' और '[illegible]' में कलाकार के अंतर का चिंतन फूट पड़ा है। जो सूझबूझ और कौशल उनके चित्रों में द्रष्टव्य है वही सजीवता और सच्चाई उनकी मूर्तियों में भी फलित हुई है। उनके लाइन-चित्र चाहे काले या सफेद अथवा इकरंगे हों, बहुत ही स्पष्टता एवं सुनिश्चितता लिये हुए हैं। 'पछवाई हवा' में तरुणी बाला के लहराते बाल और निरावरण शरीर की अस्तव्यस्त स्थिति इकरंगी रेखाओं द्वारा इतनी सजीवता से आंकी गयी है कि कलाकार की उदात्त अनुभूति इस विस्मयकारी निर्माण में आत्मसात हुई-सी प्रतीत होती है। चारकोल पेंटिंग, ब्रश-ड्राइंग, तैलचित्र, पेंसिल स्केच, मिट्टी तथा पत्थर-चित्रकारी सभी में सुंदर सजीव चित्रण है। प्रत्येक दृश्यचित्र कलाकार की आंखों के द्वार से सीधा मानस तक पहुंच जाता है।

सुधीर खास्तगीर को बचपन से ही प्रकृति से लगाव था। शांतिनिकेतन में नंदलाल बसु के तत्वावधान में कला-प्रशिक्षण के पश्चात ये वर्षों देहरादून के सुप्रसिद्ध दून स्कूल में कला-विभाग के अध्यक्ष के तौर पर कार्य करते रहे। प्रकृति के क्रीड़ाक्रोड़ में बिखरे रंगों का जादूभरा आकर्षण कलाकार के मन को मुग्ध कर-

ऊपर : पछवाई हवा
नीचे : वांसुरीवाला
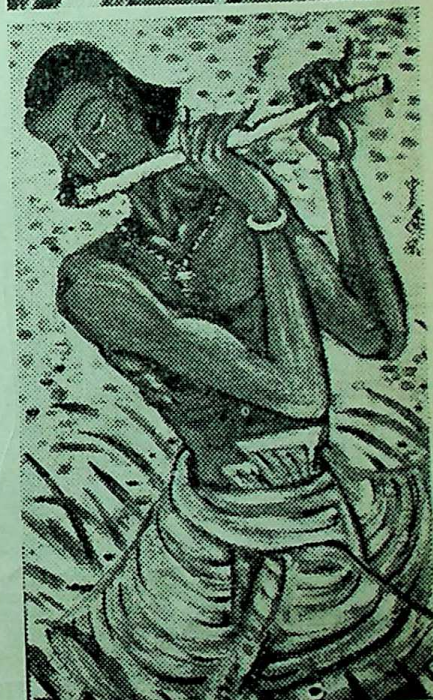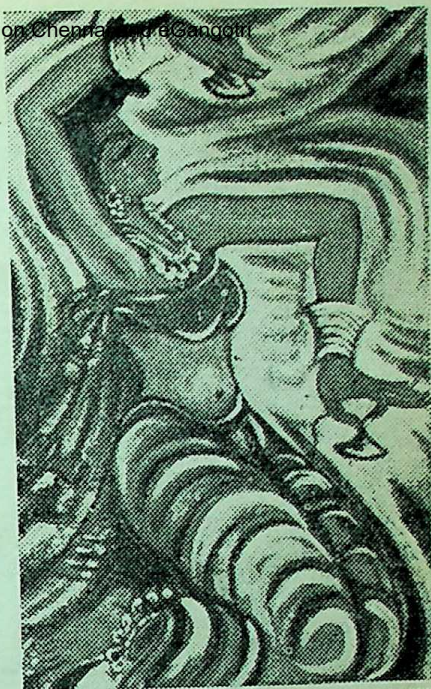
देता है और वह फिर सौंदर्य के सृजन में क्या कुछ नहीं लुटाता !

सुधीर खास्तगीर की कला में पूर्व और पश्चिम दोनों का समन्वय है—अंतर है व्यवहार-रीतियों में। एक स्थल पर उन्होंने लिखा है—"आधुनिकतावादी प्रयोगों ने कला-जगत में उथल-पुथल मचा दी है। यह नहीं कि वहां की उथल-पुथल का धक्का हमारे समुद्रतट तक पहुंचा ही नहीं, यहां जो लोग नरम शिथिल रूप से खड़े थे, जिनकी जड़ें कमजोर थीं और जो अपने मुंह से अपने को प्रगतिशील, सार्वदेशिक और न जाने क्या-क्या बताते थे, उखड़ कर ढह गये; पर जो लोग इस तूफान में थमे रहे, वे तो वही थे जो परंपरा के अनुयायी थे। इस तूफान से कुछ बिगड़ा नहीं, बल्कि अपनी अभिज्ञता से उन्होंने कुछ सीखा ही। उन्हीं के लिए पाश्चात्य कला तथा संस्कृति का अंधानुकरण संभव है जिनमें व्यक्तित्व का कुछ बोध नहीं है और जिन्होंने कभी भारतीय कला तथा संस्कृति के ऐश्वर्य का अनुभव नहीं किया है। वे मूर्खतावश अपने को दिवालिया समझते हैं और जो भी कूड़ा-करकट मिल गया उसे अपने झोले में डाल लेते हैं।"

तीव्र भावोन्माद, सृजनात्मक शिल्प-शक्ति और सौंदर्य-बोध की भित्तियों पर आधारित खास्तगीर के चित्रों में से एक चित्र, वासंतिक नृत्य। जीवन-तल स्पर्श करनेवाली एक-एक रेखा में नूतन अनुभव और सरस भाव अंतर्निहित हैं।

उनकी कला में सौंदर्य की रंगीनियां मुखरित हैं, स्वप्निल मादकता है, कल्पना का विस्तार है। वे अंतरतम की सिहरन, स्पंदन और कंपन को रंगों एवं तूलिका की सहायता से कागज पर उतारने में समर्थ हुए हैं। लगता है—उनकी चित्र-कृतियां चिरंतन अनुभूतियों की अमर गाथाएं हैं, अनुभावित सत्य हैं जो कल्पनामय छायालोक से पृथ्वी पर उतर कर अस्पष्ट धुंधलके में सिमट गयी हैं।

—४९ बी, हेवलौक स्क्वायर,
नयी दिल्ली—११०००१

अनजानी राह का पथिक रॉबर्ट फ्रॉस्ट

• जगदीश चंद्र

जब श्री जवाहरलाल नेहरू का निधन हुआ था, उस समय उनकी डायरी में उनके ही हाथ से लिखी एक अंगरेजी कविता की चार पंक्तियां बहुचर्चित हुई थीं :

जंगल हैं प्रिय, घने और गहन
लेकिन करनी है मुझे पूरी
अपनी प्रतिज्ञा
कि सोने से पहले मुझे
जाना है मीलों दूर
मीलों दूर

ये पंक्तियां थीं इस सदी के महान अमरीकी कवि रॉबर्ट फ्रॉस्ट की। इन पंक्तियों के माध्यम से वह व्यापक रूप से भारतीयों के भी परिचय में आए। कवि रॉबर्ट फ्रॉस्ट अपने देश के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि थे। अमरीका के राष्ट्रपति जॉन एफ. केनेडी ने उनको सबसे बड़ा सम्मान प्रदान किया था जो उस देश में एक कवि का अपने प्रकार का पहला और अनूठा सम्मान था। राष्ट्रपति केनेडी ने सन १९६१ में समारोह का उद्घाटन करते समय उनसे कविता-पाठ करने का आग्रह किया था। उन्होंने उस समय ८६ वर्षीय फ्रॉस्ट को राष्ट्रकवि की उपाधि प्रदान की थी।

रॉबर्ट फ्रॉस्ट का जन्म २६ ... १८७४, को सेन फ्रांसिस्को में हुआ ... इस वर्ष विश्व भर में उनकी जन्म... मनायी जा रही है। वह प्रकृति... ग्राम-निवासी, दार्शनिक कवि थे। ... प्रकृति के कवि होते हुए वह प्रकृति के ... रोमांटिक नहीं थे। वह किसी प्रचलित ... से आबद्ध नहीं हुए, वरन उन्होंने ... शैली को नया रूप दिया। काव्य-सृ...

रॉबर्ट फ्रॉस्ट जिनकी इस वर्ष जन्म-शती मनायी जा रही है

क्षेत्र में उनकी निजी विशेषताएं थीं। उनकी इन विशेषताओं के संदर्भ में 'दी रोड नाट टेकेन' शीर्षक से निम्नलिखित कविता एक विशिष्ट और प्रतिनिधि रचना है, जिसकी अंतिम पंक्तियां हैं—

कभी किसी दिन
लेकर मैं उच्छ्वास कहूंगा
कहीं अनागत युग में ऐसा——
दो राहें छितरायी पीले जंगल में
उनमें से मैं एक राह पर चला
कि जिस पर चले बहुत कम लोग
बनायें हैं जिसने ये अंतर सारे

रॉबर्ट फ्रॉस्ट ने नित्यप्रति के जीवन-जगत को व्यापक अर्थ देते हुए प्रायः संलाप की विधा में काव्य का सृजन किया है। उनकी भाषा और विषय-वस्तु लोकाधारित है।

रॉबर्ट फ्रॉस्ट का व्यक्तित्व विरोधाभास-पूर्ण और स्वयं-निर्मित था। उनके काव्य की गहराई में जाने के लिए उनके जीवन का भी अध्ययन करना चाहिए। बचपन की घटनाओं व तद्जन्य मनोवृत्तियों का उनके काव्य पर बहुत प्रभाव पड़ा है।

२१ वर्ष की आयु में रॉबर्ट ने अपने स्कूल की एक सहछात्रा से शादी कर ली। शादी के पश्चात जीविका चलाने के लिए इधर-उधर स्कूलों में अध्यापन-कार्य करना पड़ा। लेकिन उनका जीवन स्थायित्व न प्राप्त कर सका। इसी बीच उनके बड़े बच्चे की और कुछ समय बाद मां की मृत्यु
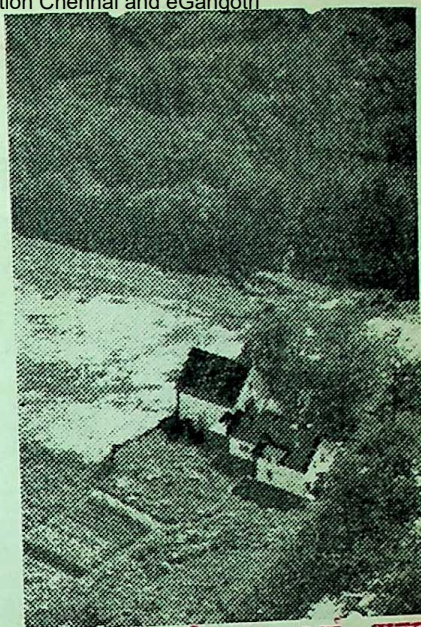
गांव स्थित कवि का फार्म हाउस जिसे अमरीकी सरकार ने उनके स्मृति-भवन के रूप में विकसित किया है

हो गयी। इसका उन पर गहरा प्रभाव पड़ा जिसके कारण उनमें हताशा और हीनत्व की भावना घर कर गयी। कुछ समय बाद उनके दादा की मृत्यु हो गयी, लेकिन दादा की मृत्यु से उन्हें दादा की संपत्ति (डेरी गांव स्थित खेत, बाग-बगीचा, गाय-घोड़ा और मकान आदि) मिल गयी जिससे उनके जीवन में स्थिरता आयी। उन्होंने अपने जीवन के अगले दस वर्ष इसी मकान में, खेती-बागवानी करते और कविता लिखते हुए बिताये, लेकिन उनकी कविताएं प्रकाश में न आयीं।

दस वर्ष बाद इस संपत्ति को बेचकर

वह पास के स्कूल में अध्यापन कार्य करने लगे, और कुछ वर्ष बाद सपरिवार इंगलैंड चले गये। इस समय तक वह बाप के दुर्व्यवहार, मां के प्यार, बच्चे व मां की मृत्यु आदि के कारण घमंडी, सनकी, हताश, बीमार और शर्मीले युवक थे, लेकिन गरीबी और परिस्थितियों से संघर्ष के कारण कठिन परिश्रमी और संवेदनशील भी। इन दिनों के बारे में वृद्धावस्था में कवि ने विभिन्न बयान दिये हैं।

इंगलैंड आने के बाद उनके दो कविता संकलन–'ए ब्वाय'ज विल' और 'नॉर्थ ऑव बोस्टन' प्रकाशित हुए जिनसे कवि के रूप में उनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैली।

इस सफलता के कारण रॉबर्ट फ्रॉस्ट में एक नये व्यक्तित्व ने जन्म लिया। उनके स्वभाव में खुश-मिजाजी, आत्मविश्वास, चुस्ती और जिंदादिली की प्रवृत्तियों ने उनके कृतित्व को प्रभावित किया और उसने निजी रचना-शैली का विकास किया। कवि का कहना था, "शैली ही व्यक्ति की विशेषता है। शैली के माध्यम से ही मनुष्य स्वयं को उद्घाटित करता है।"

रॉबर्ट फ्रॉस्ट ने ८८ वर्षीय जीवन में सर्वाधिक लोकप्रियता और सम्मान अर्जित किया। उनके अनेक काव्य-संकलन प्रकाशित हुए जिनमें 'दि क्लियरिंग', 'ए मोक्स ऑव रीजन', 'दि रोड नाट टेकेन', 'स्टीपल बुश' और 'यू कम टू' आदि उल्लेखनीय हैं।

—ए-१, २४२ ए, लारेंस रोड,
नयी दिल्ली-११००३५

जाना है मीलों दूर

कौन-से हैं, ये जंगल
जिनके बारे में सोचता हूं कि मैं उन्हें जानता हूं
उसका घर है गांव में, फिर भी
वह मुझे वहां ठहरा हुआ नहीं पाएगा
क्योंकि, देखने के लिए उसके जंगल
जो लदे हैं बर्फ से
मैं उपस्थित रहूंगा वहां

मेरा नन्हा घोड़ा उसकी विचित्रता को
समझेगा जरूर
और चाहेगा रुकना
हालांकि, होगा नहीं वहां कोई भी घर
वहां होगी केवल
जंगलों और बर्फ-जमी झील के बीच
वर्ष की सबसे अंधेरी शाम

वह झटकेगा अपने साज की घंटियां
यह पूछने के लिए कि क्या कमी है यहां
वहां एकमात्र दूसरी ध्वनि होगी
बुहारती-सी
बहती हुई शांत हवा की और
कोमल रोओं वाली बर्फीली सतह की

जंगल हैं प्रिय, घने और गहन,
लेकिन करनी है मुझे पूरी अपनी प्रतिज्ञा
कि सोने से पहले, मुझे
जाना है मीलों दूर, मीलों दूर

—रॉबर्ट फ्रॉस्ट

विनयकुमार परुथी, नीमच : प्रकाश को पूर्ण रूप से अवशोषित करने पर वस्तु काली व पूर्णतः परावर्तित करने पर वस्तु श्वेत दीखती है, और प्रकाश के किसी विशिष्ट भाग को अवशोषित करने पर वस्तु किसी विशिष्ट रंग की दीखती है। तब सलेटी (ग्रे) रंग के दीखने का क्या कारण है? यह रंग किस अवस्था में दृष्टिगत होता है?

उस अवस्था में, जब न तो पूर्ण प्रकाश होता है, न पूर्ण अंधकार। सुबह के झुटपुटे में या शाम के धुंधलके में किसी उद्यान में चले जाइए, हर रंग के फूल आपको सलेटी रंग के दिखायी देंगे।

शिव उदयभान सिंह चंदेल, धरमंगदपुर (कानपुर) : नाम बदलकर लिखनेवाले लेखक का नाम क्या किसी सरकारी संस्था में रजिस्टर्ड होना आवश्यक है? यदि हां तो कहां और कैसे?

आप आराम से कोई छोटा-सा नाम रख सकते हैं। किसी रजिस्ट्रेशन की जरूरत नहीं। अर्थात नाम बदलकर लिखने के लिए लेखक को अपना नाम कहीं रजिस्टर नहीं कराना पड़ता।

वसंत ओझा, रायगढ़ : क्रायोलाइट नामक खनिज पानी में डालते ही अदृश्य हो जाता है, यद्यपि वह पानी में घुलता नहीं है और निकालने पर फिर ज्यों का त्यों निकल आता है। अभिप्राय यह है कि वह पानी में मौजूद तो रहता है, पर दिखायी नहीं पड़ता। ऐसा क्यों?

इसलिए कि क्रायोलाइट और पानी का वर्तनांक समान होता है और जब किसी वर्तनांक का ठोस उसी वर्तनांक के द्रव में डाल दिया जाता है तो वह दिखायी देना बंद हो जाता है।

सह्याद्रि, खुंटोवलि (महाराष्ट्र) : सुनता हूं, सुबह नींद से उठते ही पानी पीने से लाभ हैं और दौड़ने के बाद तुरंत पानी पीने से हानियां। यदि हां, तो कैसे और क्यों?

बात यह है कि रात भर नींद में होने के कारण आप पानी नहीं पी पाते और शरीर को जल की आवश्यकता सुबह होने तक बढ़ जाती है। इस प्रकार सुबह सोकर उठने पर आप वास्तव में प्यासे होते हैं। स्पष्ट है कि प्यास लगी होने पर पानी पीने से लाभ होगा, क्योंकि उस समय आपके शरीर को पानी की आवश्यकता होती है। पानी की यह आवश्यकता शरीर को उस समय भी होती है, जब आप दौड़ कर आते हैं, अर्थात् प्यास आपको उस समय भी लगी होती है, लेकिन दौड़ने के

शरीर में गरमी आती है और सांस तेजी से चलने के कारण श्वास-नलिका फूली हुई होती है। ऐसी स्थिति में एकाएक पानी पी लेने से शरीर का तापमान एकाएक कम हो जाने और श्वास-नलिका के अचानक संकुचित होने से रोग होने का खतरा रहता है।

तिलक मोहन भारद्वाज, रुड़की : क्या ध्वनि-ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में रूपांतरित किया जा सकता है?

जी हां। ध्वनि-तरंगें भौतिक कंपन हैं, अतः उच्च आवृत्ति और उच्च शक्तिवाली ध्वनि-तरंगों को उसी प्रकार यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है, जिस प्रकार विद्युत-ऊर्जा को। विद्युत-ऊर्जा को यांत्रिक कंपनों में परिणत करने के लिए क्वार्ट्ज रवे की विशिष्ट क्षमता का लाभ उठाया जाता है। ध्वनि-ऊर्जा से संचालित होनेवाला 'अल्ट्रासोनोरेटर' यंत्र क्वार्ट्ज रवे का उपयोग करके ही बनाया जाता है। कुछ अति-स्वन यंत्रों में रवे के स्थान पर धातु की छड़ का उपयोग किया जाता है। उनमें इस तथ्य से लाभ उठाया जाता है कि वैकल्पिक चुंबकीय क्षेत्र से कुछ धातुओं में संकुचन तथा प्रसारण की क्रिया होने लगती है। जब ऐसी किसी धातु की छड़ एक धातु की झिल्ली से जोड़ दी जाती है तो छड़ के सिकुड़ने और फैलने से उस धात्विक झिल्ली में कंपन उत्पन्न होने लगते हैं और फलस्वरूप ध्वनि-तरंगें उत्पन्न होने लगती हैं। ऐसी अवस्था में यदि कोई द्रव धात्विक झिल्ली के ऊपर से गुजारा जाए तो उसमें भी कंपन होने लगेंगे। ध्वनि-ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित करने की संभावना के आधार पर ही तो यंत्र-मानव (रोबोट) की कल्पना हो सकी थी।

सुशीला रोहतगी, मेरठ : बच्चे अंगूठा क्यों चूसते हैं? उनसे अंगूठा चूसना छुड़वाने का क्या उपाय है?

अंगूठा चूसने के कई कारण बताये जाते हैं। फ्रायड ने तो इसे काम-सुख से संबंधित क्रिया मानकर बहुत दिनों तक लोगों को इस भ्रम में रखा कि यह क्रिया बच्चे को आनंद देती है, लेकिन बाद की खोजों से यह धारणा मिथ्या सिद्ध हो चुकी है! मनोवैज्ञानिक प्रमुख रूप से इस क्रिया

जब देखो बस मैदान में चौके लगाने की रहती है! घर के चौके चूल्हे का ख्याल क्यों आता?

के दो कारण मानते हैं। एक तो यह कि बच्चा यदि अक्सर भूखा रहे तो अंगूठा चूसकर काल्पनिक क्षुधा-तृप्ति करता है, और दूसरा यह कि माता-पिता द्वारा उपेक्षित होने पर वह इस क्रिया से उनका ध्यान अपनी तरफ खींचना चाहता है। इसलिए यदि बच्चा भूख के कारण अंगूठा चूसता है तो उसे पर्याप्त मात्रा में दूध या भोजन दीजिए और यदि वह उपेक्षा के कारण ऐसा करने लगा है तो उसकी तरफ ध्यान दीजिए, उसे स्नेह दीजिए। हां, बच्चे को इस बात के लिए कभी चिढ़ाइए नहीं और ध्यान रखिए कि दूसरे, खास तौर पर उसके समवयस्क साथी तो उसे बिल्कुल ही न चिढ़ाएं, क्योंकि इससे अंगूठा चूसने की आदत तो नहीं छूटती, बच्चा हीनभाव से ग्रस्त और हो जाता है, जिसके कारण वह समाज से कटकर एकांतप्रिय हो जाता है।

सुरेशकुमार निगम, पीपरीडीह : सिलाई की मशीन का आविष्कार किसने और कब किया?

कहते हैं कि सिलाई की सबसे पहली मशीन का आविष्कार १८१८ में रेवरेंड जान एडम्स डाज नामक अमरीकी ने किया था, लेकिन उसने न तो अपने आविष्कार को पंजीकृत कराया, न कोई मशीन ही बनायी। इसलिए सिलाई की मशीन का वास्तविक आविष्कर्ता एक फ्रांसीसी दर्जी को माना जाता है, जिसका नाम बरथेलेमी थिम्मोनियर था। इस भले आदमी ने सिलाई की जो मशीनें बनायीं, वे ... की बनी हुई भारी और बेडौल मशीनें ... फिर भी १८४१ में पेरिस में उसकी बनायी हुई ८० मशीनें चलती थीं, जिनसे सेना ... वर्दियां सिली जाती थीं। आविष्कार ... पर धन और यश मिलता है, किंतु ... थिम्मोनियर को उसके पुरस्कार में ... के दर्जियों के लात-घूंसे खाने को मिले ... उन्होंने सिलाई की मशीन को अपने ... पर कुठाराघात समझा और थिम्मोनियर को पीटने के साथ-साथ उसकी बनायी हुई सारी मशीनें तोड़ डालीं। फिर ... थिम्मोनियर अपने आविष्कार को ... अधिक अच्छा बनाने के काम में ... रहा और लकड़ी के बजाय उसने ... की मशीन बना ली। इतने पर भी ... आविष्कार की सराहना और प्रचार ... हो सका।

आजकल हमें सिलाई की मशीन जिस रूप में मिलती है, उस रूप में ... सबसे पहले न्यूयार्क निवासी वाल्टर ... १८३२ में बनाया था।

चलते चलते एक प्रश्न और...

कु. क. ख. ग. : विवाहिताओं की पहचान के लिए तो उनके शरीर पर कई चिह्न रहते हैं, विवाहितों की पहचान के लिए क्यों नहीं?

इसलिए कि उनके चेहरे पर छायी हुई खीझ और परेशानी खुद ही ... देती है कि वे विवाहित हैं।

अलीपुर बम केस और अरविंद

● डॉ. सुरेशचंद्र त्यागी

कलकत्ता का मजिस्ट्रेट किंग्सफोर्ड अपने क्रूर निर्णयों के लिए पहले ही बदनाम था, पर 'संध्या' के संपादक ब्रह्म-बांधव उपाध्याय को राजद्रोही ठहराकर जब उसने उन्हें सजा दी, और फलतः कैंपबेल अस्पताल में उनकी मृत्यु हो गयी, तब क्रांतिकारियों का रक्त खौल उठा। इस अग्नि में घृत पड़ा तब, जब कलकत्ता के एक लड़के सुशील सेन को 'बंदे मातरम्' शब्द का उच्चारण करने, या ऐसे ही किसी अभियोग में किंग्सफोर्ड ने अदालत में सरे-आम कोड़ों से पीटने की सजा दी। किंग्स-फोर्ड की हत्या का काम उग्रपंथियों ने खुदीराम बोस और प्रफुल्ल चाकी को सौंपा। दोनों ने ३० अप्रैल, १९०८ को मुजफ्फरपुर में एक घोड़ागाड़ी पर यह समझकर बम फेंके कि उसमें किंग्सफोर्ड है। अनुमान गलत निकला और दो निर्दोषों—श्रीमती केनेडी तथा उनकी पुत्री—की हत्या हो गयी। खुदीराम बोस को फांसी दी गयी थी और प्रफुल्ल चाकी अन्य क्रांति-कारी साथियों का भेद खुल जाने के भय से स्वयं 'शहीद' हो गये थे।

इस घटना से सरकार बौखला गयी। जगह-जगह छापे मारे गये। सरकार का विचार था कि सारे षड्यंत्रों के पीछे 'भारत के सबसे खतरनाक व्यक्ति' (श्री-अरविन्द) का मस्तिष्क ही कार्य करता है। २ मई को पुलिस ने मानिकटोला बागान में बम बनाने के एक छोटे कारखाने पर छापा मारा और बारीन्द्रकुमार घोष को अनेक साथियों सहित पकड़ लिया। ४ मई को प्रातः श्रीअरविन्द को भी गिर-फ्तार कर लिया गया। श्रीअरविन्द ने 'कारा कहानी' में अपनी गिरफ्तारी का स्वयं वर्णन करते हुए लिखा है—

'सवेरे लगभग ५ बजे मेरी बहन बड़ी घबराई हुई मेरे कमरे में घुसी और मेरा नाम लेकर मुझे पुकारा। मैं जाग उठा। दूसरे ही क्षण छोटा-सा कमरा सशस्त्र पुलिस से भर गया। सुपरिंटेंडेंट क्रेगन, २४ परगना के क्लार्क साहब, सुपरिचित श्रीमान विनोदकुमार गुप्त की लावण्यमय और आनंददायक मूर्ति और अन्य भी कई इंसपेक्टर, लाल पगड़ीधारी, जासूस और खानातलाशी के साक्षी। हाथ में पिस्तौल

लिये, वीरता के गर्व से भरे दौड़ते हुए वे इस प्रकार आये मानो बंदूक-कमान लिये कोई सुरक्षित किले पर दखल करने जा रहे हों। सुना कि एक श्वेतांग वीर ने मेरी बहन के सीने पर पिस्तौल टिका दी थी, लेकिन ये सब अपनी आंखों से देखा नहीं। अब भी मैं अर्धनिद्रित अवस्था में बिस्तर पर बैठा था कि क्रेगन ने पूछा--'अरविन्द घोष कौन है? आप ही हैं क्या?' मैंने कहा --'हां, मैं ही हूं।' तुरंत ही उन्होंने एक सिपाही को मुझे गिरफ्तार कर लेने के लिए कहा। फिर क्रेगन द्वारा प्रयोग किये गये अत्यंत अभद्र वाक्य के कारण हम दोनों में कुछ क्षण के लिए झड़प हो गयी। मैंने खाना-तलाशी के वारंट की मांग की, उसे पढ़ा और हस्ताक्षर किये। वारंट में बम का जिक्र देखकर मैं समझ गया कि पुलिस व सेना का यह आगमन मुजफ्फर-पुर के हत्याकांड से संबद्ध है। ... उसके बाद ही क्रेगन के हुक्म से मेरे हाथों में हथ-कड़ी और कमर में रस्सी बांध दी गयी।'

श्रीअरविन्द फर्श पर ही सोते थे। यह देखकर क्रेगन ने श्रीअरविन्द से पूछा था कि पढ़े-लिखे व्यक्ति के लिए सजावट-विहीन कमरे में रहना क्या शर्म की बात नहीं है? श्रीअरविन्द ने कहा, "मैं दरिद्र हूं और दरिद्र की तरह रहता हूं।" क्रेगन ने इस कथन का मजाक उड़ाया। तलाशी में श्रीअरविन्द के कागज-पत्र और उनकी साहित्यिक रचनाएं ही मिलीं, विस्फोटक सामग्री वहां नहीं थी। एक डिब्बे में दक्षिणेश्वर की पवित्र मिट्टी रखी [illegible] यह तलाशी लगभग पांच घंटे चलती रही।

एक दिन हवालात में रखने के [illegible] श्रीअरविन्द को अलीपुर जेल ले [illegible] गया और एक वर्ष तक वे वहीं रहे। [illegible] काल को उन्होंने आश्रम-वास कहा [illegible] अपनी कोठरी के बारे में वे लिखते हैं

'मेरी निर्जन कालकोठरी ९ [illegible] लंबी, ५-६ फुट चौड़ी थी। उसमें [illegible] खिड़की नहीं थी। सामने के भाग में [illegible] सा लोहे का छड़दार फाटक था। [illegible] पिंजरा मेरा निर्दिष्ट आवास था' [illegible] इस तपते हुए कमरे में जेल के ही बने [illegible] दो मोटे कंबल हमारे बिछौने थे। तकिया नहीं था। इसलिए एक कंबल बिछाकर और दूसरे को तह करके तकिया बनाकर सोता था। जब गरमी का क्लेश असह्य हो उठता और रहा नहीं जाता, तो जमीन पर लोटकर शरीर को शीतल करके आराम पाता। मां वसुधरा के शीतल स्पर्श में क्या सुख है, यह सब मेरी समझ में आता।'

श्रीअरविन्द के गिरफ्तार होने [illegible] समाचार बड़ी तेजी से सारे देश में फैल गया। १८ मई, १९०८ को मजिस्ट्रेट बिर्ले की अदालत में मुकदमा शुरू हुआ [illegible] १३ जून, १९०८ के 'बंदे मातरम्' [illegible] श्रीअरविन्द की बहन सरोजिनी देवी [illegible] एक अपील प्रकाशित हुई। उनकी [illegible] अपील का प्रभाव हुआ, लेकिन जो धन एक[illegible]

हुआ वह शीघ्र ही खच हो गया। १९, अगस्त, १९०८ को यह केस सेशन-सुपुर्द कर दिया गया।

इस केस में बचाव-पक्ष की ओर से बैरिस्टर चितरंजन दास और सरकारी पक्ष के वकील नॉर्टन के कानूनी दाव-पेंच और मेधा शक्ति का मुकाबला अदालती कार्यवाहियों के इतिहास में अप्रतिम है। चितरंजनदास १० माह तक एकाग्रचित होकर इस केस में लगे रहे। उन्होंने कोई फीस तो ली ही नहीं बल्कि घोड़ा-गाड़ी भी बेच दी और जब केस समाप्त हुआ तो वे ५०,००० रुपये के ऋणी हो चुके थे।

वैसे तो अलीपुर बम-केस में अनेक अभियुक्त थे लेकिन सरकार का असली निशाना थे श्रीअरविन्द। फैसले में सेशन जज बीचक्राफ्ट ने भी इसे स्वीकार किया। उनका एक पत्र भी, जो उन्होंने अपनी पत्नी को लिखा था, षड्यंत्र के सबूत के रूप में अदालत में प्रस्तुत किया गया था। इस पत्र में लिखा था——

'आजकल मेरा अपना कोई काम नहीं है। मैं सदैव उस (भगवान) के काम में व्यस्त रहता हूं। मेरे मन में एक स्वाभाविक परिवर्तन हुआ है। मैं वही करता हूं जो करने के लिए उस (भगवान) की आज्ञा होती है। मेरी अपनी कोई इच्छा नहीं है। वे (भगवान) तुम्हारे प्रति भी सदय होंगे और वे तुम्हें सही मार्ग दिखाएंगे। तुम मेरी पत्नी (सहधर्मिणी) हो, क्या मेरे लक्ष्य में मेरी सहायता नहीं करोगी?'

सरकारी पक्ष की ओर से कहा गया कि पत्र में श्रीअरविन्द अपनी पत्नी से भी षड्यंत्र में शामिल होने के लिए कह रहे हैं। चितरंजनदास ने स्पष्ट किया कि इसका संबंध आध्यात्मिक विश्वास से है, षड्यंत्र से नहीं। बहस समाप्त करते हुए
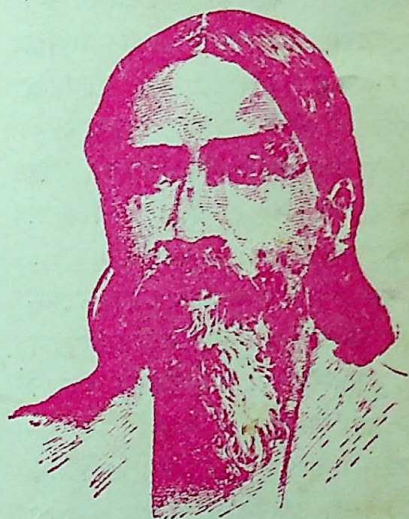
श्रीअरविन्द

चितरंजनदास ने जो कुछ कहा, वह भविष्यवाणी से कम नहीं है, और देशबंधु की अंतर्दृष्टि का परिचायक है। उन्होंने कहा, "मेरी अपील आपसे यह है कि इस षड्यंत्र के मौन हो जाने के बहुत बाद, इस आंधी-तूफान के समाप्त हो जाने के बहुत बाद, उनके देहावसान के बहुत बाद उन्हें संसार देश-भक्ति का कवि, राष्ट्रीयता का मसीहा और समस्त मानवता का प्रेमी मानेगा। बहुत बाद तक उनके शब्द

ध्वनित एवं प्रतिध्वनित होते रहेंगे केवल इस देश में नहीं, अपितु समुद्रपार देश-देशांतरों में।"

६ मई, १९०९ को बीचक्राफ्ट ने अलीपुर बम-केस का फैसला सुनाया। फैसले के अनुसार श्रीअरविन्द और कुछ साथियों को रिहाई का हुक्म मिला, कुछ को कालेपानी की सजा मिली और वारीन्द्र एवं उल्लासकर दत्त को फांसी की सजा सुनायी गयी। चित्तरंजनदास ने इस फैसले के खिलाफ हाईकोर्ट में अपील की, और वहां वारीन्द्र एवं उल्लासकर की सजा कालेपानी में बदल दी गयी।

जेल में श्रीअरविन्द का योगाभ्यास, दैवी अनुभूतियां, आत्म-चिंतन और गीता-उपनिषद पर विचार चलता रहा। वहां ध्यानस्थ मुद्रा में उन्हें विवेकानंद की वाणी भी सुनायी दी। अपने सब अनुभवों का विवरण श्रीअरविन्द ने बाद में पांडिचेरी में साधकों के साथ बातचीत करते हुए समय-समय पर सुनाया था। १४ मई, १९०९ को उन्होंने देशवासियों के नाम एक पत्र में कृतज्ञता व्यक्त की।

३० मई, १९०९ को श्रीअरविन्द ने उत्तरपाड़ा में एक सभा को संबोधित किया। उनका यह उत्तरपाड़ा अभिभाषण बहुत प्रसिद्ध है। उन्होंने कहा—

'भारत का उठना दूसरे देशों की तरह नहीं है। वह अपने लिए नहीं उठ रहा है कि दुर्बलों को कुचले। वह संसार पर उस शाश्वत प्रकाश को फैलाने के लिए उठ रहा है, जो उसे सौंपा गया है। भारत का अस्तित्व सदा से ही मानवता के लिए रहा है, अपने लिए नहीं। अतः यह आवश्यक है कि वह महान बने, अपने लिए नहीं, मानवता के लिए....मैंने देखा कि मैं जेल की ऊंची दीवारों में, जिन्होंने मुझे लोगों से अलग कर दिया था, कैद नहीं हूं। वे स्वयं वासुदेव ही थे जिन्होंने मुझे चारों ओर से घेर रखा था।'

अतः अलीपुर बम-केस श्रीअरविन्द के जीवन की ही परिवर्तनकारी घटना नहीं है, अपितु हमारे राष्ट्रीय आंदोलन का भी एक गौरवशाली अध्याय है।

—अध्यक्ष, हिंदी विभाग, महाराजा[illegible] कालेज, सहारनपुर (उ. प्र.)

चित्रकार : जे. साहा

सामने के पृष्ठ पर प्रकाशित श्रीअरविंद के चित्र के प्रणेता जे. साहा बातिक विधा में सिद्धहस्त हैं। अपने बातिक चित्रों में इन्होंने भारतीय परंपरा को स्वीकारते हुए [illegible] निजी मौलिकता को कहीं नहीं छोड़ा है। श्री साहा का रंग-चयन दर्शकों को सहज ही आकर्षित करता है। देश के अतिरिक्त विदेशों में भी इनकी कला-कृतियां प्रदर्शित और प्रशंसित हो चुकी हैं।

आम नहीं, दुर्लभ और अति उत्कृष्ट है, यह है मनुष्य की नैतिक उन्नति का पुष्पित रूप, स्वार्थरत पशुत्व से स्वार्थरहित देवत्व की ओर हमारे क्रमिक उदय का प्रमाण जो राष्ट्र राष्ट्रीय तौर पर आत्मबलिदान करने की सामर्थ्य रखता है उसका भविष्य सुरक्षित है।

● अरविन्द

क्यों और क्यों नहीं?

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, 'रेणु', महादेवी, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', इलाचन्द्र जोशी, राजेन्द्र यादव, लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी और निर्मल वर्मा पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं कृष्णा सोबती।

मैं अंदर देखने की आदी हूं — कृष्णा सोबती
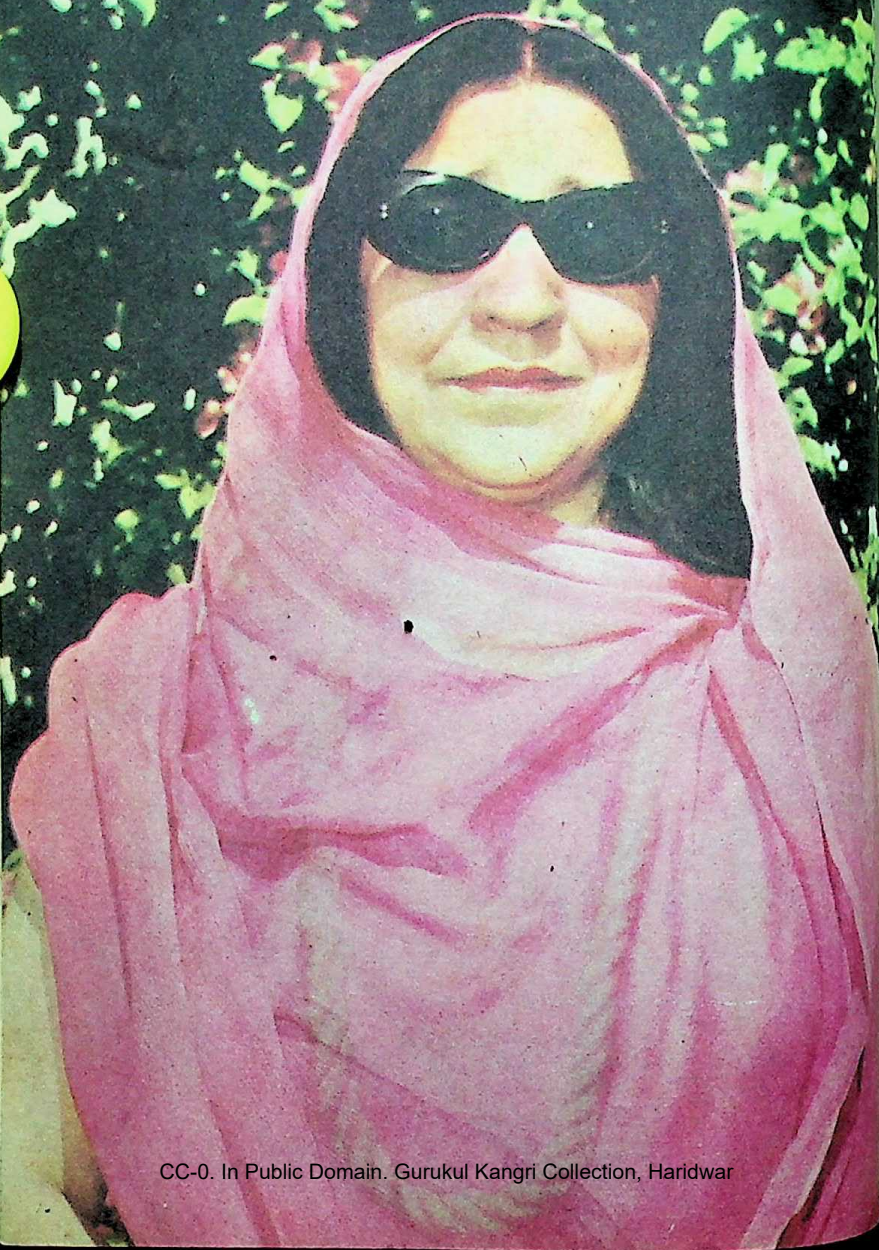
निर्मल मेहतो, पूर्णिया : आपका जन्म कब और कहां हुआ?

सदियों पुराने अंदाज में यह न पूछिए कि कब और कहां हुआ—पूछिए यह कि क्यों हुआ!

हम खुद भी अपने से यही सवाल कई बार पूछ चुके हैं कि आखिर हम पैदा हुए तो क्यों! हमने अपने हाथों से न कभी कुछ बनाया, न संवारा, बस सुबह-शाम नाश्ते में 'वक्त' घोल-घोलकर पीते रहे!

जय जैन 'घायल', बीकानेर : आप रचना करते समय किसी अन्य साहित्य से प्रेरणा लेती हैं या किसी मानवीय बिंदु से ही प्रभावित होकर लिखती हैं?

बिलकुल ठीक कहा आपने, मानवीय बिंदु से ही।

डॉ. हरिमोहन बघौलिया, उज्जैन : (१) आपकी रचनाओं का प्रमुख उद्देश्य क्या है?

गुस्ताखी माफ, ऐसे सवालों के जवाब नौसिखिये लेखक नहीं दिया करते!

(२) नये लेखकों को प्रकाश में आने के लिए बड़ा संघर्ष करना पड़ता है। इसके लिए आपकी दृष्टि में सीधा-सादा, स्पष्ट और सरल रास्ता क्या है?

लेखक नया हो या पुराना, अगर जिंदगी में जूझता नहीं, संघर्ष नहीं करता तो वह कभी बालिग नहीं होता। उम्र भर नाबालिग ही रहता है। अगर कहें कि उसकी जद्दोजहद सिर्फ शोहरत के लिए ही होती है तो साहब यह गुनहगारी हम से न हो सकेगी।

लेखक का दिल-दिमाग कुछ ऐसे जज्बातों का मालिक होता है, कुछ ऐसे सपने संजोया करता है जो सिर्फ उसके खुद के ही नहीं होते। लोगों की जिंदगी को, उनकी खुशी, गमी और उम्मीदों, हसरतों को ईमानदारी से पेश करना ही लेखक के जिम्मे है।

हां, सीधा-सादा रास्ता तो लेखक

के लिए तभी शुरू होता है जब वह लिखने के नाम पर बटेरबाजी करने लगे। अलग-अलग पैंतरों से अलग-अलग खेमों की चोंचें लड़ाया करे। ऐसे हुनर और करतबों से बेशक लेखक की तौफीक बढ़ती है, मगर अफसोस वह कलम से जाता रहता है।

मोहनचंद्र पांडे, रामपुर : आपने जितना लिखा है वह सब आपको संतुष्टि प्रदान करता है? अगर नहीं, तो लेखिका के नाते आप अपने परिवेश को संदर्भ मानकर यह स्पष्ट करें कि कलाकार की क्षमता अपेक्षित क्यों होती है?

हमने बहुत कम लिखा है। बड़ा ... होने का न हमारा कोई दावा है, न ... कोई गुमान ही। ऐसी हालत में संतुष्टि देनेवाली प्राप्ति हमारे नजदीक कैसे ... सकती है। हां, कलाकार की किस ... की ओर आपने इशारा किया? ... मानिएगा, सोचने का यह ढंग जरा ... काना है। कलाकार को, (अगर वह ... है तो) किसी भी चौखटे में बांधना ... सिब नहीं! उसे खुले में पनपने दी...
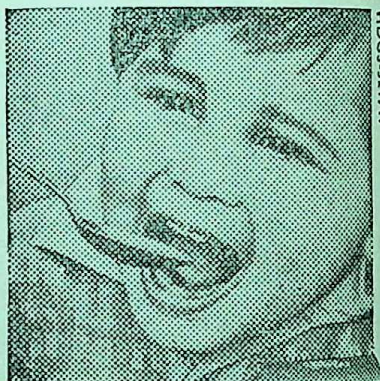
फसल तभी अच्छी होगी।

प्रभाषचंद्र जैन, रायबरेली : आदमी क्यों लिखता है? आप क्यों लिखती हैं? क्या यह सही है कि लेखक अपने अंतःपटल पर उभरे एक ऐसे संसार (जो कि रंगीन भी हो सकता है और रंगहीन भी) को शब्दबद्ध करता है जिसे कि वह प्रत्यक्ष रूप से वास्तविक जगत में नहीं भोग सकता?

बड़े जोर का सवाल पूछ लिया आपने! आदमी क्यों लिखता है? आप क्यों लिखते हैं? हम क्यों जीते हैं? आप क्यों जीते हैं? हम अपने को क्यों सालते हैं, दर्द को क्यों पालते हैं? पाठक साहित्य को क्यों बांचते हैं? आलोचक साहित्य को क्यों जांचते हैं?—ऐसी गहरी और ऊंची बातों का हम कोई घटिया जवाब न दे बैठें—इसलिए माफी।

शशि पराड़कर, बड़नगर: आप लिखने के लिए लिखती हैं या कोई घटना आपको इतना झकझोर देती है कि कलम उठाने पर विवश हो जाती हैं?

जी हां, कोई घटना, घटना का टुकड़ा, एक क्षण। घटना के पीछे और परे फैली जिंदगी की मजबूरियां। अपनी-अपनी खिड़की की चौखटों से दीखते छोटे-बड़े आकाश। उन पर टिकी प्यासी, भरी, खोयी-खोयी, हसरतों से लबालब निगाहें। किसी कोने में टिकी चारपाई, उसके गिर्द उगती हाड़-मांस की कोंपलें—कुछ भी और सब कुछ लेखक के लिए कीमती है।

सबसे बड़ा जादू तो लेखक की उस निगाह में होता है जो पहले सरसरी तौर पर देखती है, फिर पैनेपन से जांचती, पहचानती है। उसी के बल पर लेखक जिंदगी को सही करता है और फिर अपनी औकात के मुताबिक लेखनी से आंककर जिंदगी को जिंदा करता चला जाता है।

रामचंद्र ढींगरा, दिल्ली : (१) आपकी कहानियां मात्र सामाजिक परिप्रेक्ष्य का चित्रण करती हैं या उनका कुछ उद्देश्य भी है? कम से कम आपकी 'यारों के यार' और 'मित्रो मरजानी' से तो कुछ स्पष्ट नहीं होता?

'यारों के यार' और 'मित्रो मरजानी' से अगर आपको 'परिवेश' और परिप्रेक्ष्य वाले सवालों के जवाब नहीं मिले तो फिर से साहित्य का कायदा शुरू कीजिए!

(२) क्या यह कहना गलत होगा कि आपकी कहानियों ने यौन-कुंठा का समर्थन किया है?

आप ही को मालूम होगा कि 'यौन-कुंठा' की माजून किस माप-तौल या दर से हमारी रचनाओं में मौजूद है। तबीयत हो तो इसका ब्योरा संपादक को लिख भेजिए।

चरणजीत नैयर, अंबाला छावनी : मेरा मत है कि प्रत्येक कृति का कोई न कोई प्रेरणा स्रोत, कोई घटना, व्यक्ति अथवा वातावरण अवश्य होता है। क्या आप सहमत हैं? यदि हां, तो 'मित्रो मरजानी' की रचना का उद्यम जिस घटना

अथवा वातावरण से प्राप्त हुआ, उसका ब्योरा देने का कष्ट करें।

आपने सही फरमाया कि हर कृति का प्रेरणास्रोत, किसी न किसी घटना, व्यक्ति अथवा वातावरण पर ही निर्भर होता है। रही 'मित्रो मरजानी' की बात, तो उसके बारे में यह जानकारी आप हमसे न पा सकेंगे।

अपनी रचनाओं की जन्मकुंडलियां हम कभी किसी के सामने पेश नहीं करते! हां, इतना कह दें कि मित्रो हाड़-मांस की जीती-जागती तसवीर है। सच पूछिए तो खयाली पुलावों के जोर से नोनी-मीठी मुश्कें नहीं उठ सकतीं।

रामविलास गुप्त अक्षय, गाजीपुर : श्लीलता और अश्लीलता के प्रश्न को क्या आप साहित्य के संदर्भ में देखती हैं? विशेष रूप से यह प्रश्न हम 'यारों के यार' के संदर्भ में कर रहे हैं, जिसको कुछ समीक्षकों ने ही नहीं, कुछ प्रसिद्ध पुराने और नये कथाकारों तक ने एक अश्लील कहानी घोषित किया है। कहानी में ऐसे स्थलों पर क्या सिर्फ संकेतों के द्वारा काम नहीं चला सकते, अथवा सही रचना के लिए यह आपके निकट मात्र एक बाधा है?

'यारों के यार' जैसी कहानी की रचना-प्रक्रिया इसे पन्नों पर शब्द-बद्ध करने में नहीं, इसके जीने में थी। दफ्तरों के समूचे माहौल को सिर्फ एक कोण विशेष से नहीं, संपूर्णता और समग्रता से जानना था।

यह एकसाथ धीमी, आत्मीय और तटस्थता की एक ऐसी प्रक्रिया थी जिसमें धंसे विना इसे जान लेना मुश्किल ही नहीं, असंभव भी था। जानने या जान लेने की शर्त है—यह मानकर चलना कि हम कुछ जांच नहीं रहे हैं; फैसले नहीं दे रहे, हम एक ऐसी खोज में रत हैं जिससे सत्य या सच्चाई की खुदाई की जा सके। जाहिर है कि यह धातु हमारे देखने, छूने या मन--माने ढंग से प्रस्तुत करने से बदल नहीं सकती। आंख के भ्रम से इसका घनत्व भी बदला नहीं जा सकता। सत्य जैसा है, यथार्थ जो है, लेखक के नाते 'यारों के यार' द्वारा हमें इस तक पहुंचने की तलाश थी। व्यक्तिगत रूप से 'यारों के यार' मेरे लेखन के लिए एक बड़ी चुनौती थी। मैं अकसर अंदर देखने की आदी हूं। 'यारों के यार' में मुझे अंदर और बाहर दोनों को देखना था। आंख का पैनापन और कहानी को पर्त्त-दर-पर्त्त उकेरना और कैमरे की सीध ऐसी कि कहानी का कोई भी अंश, कोई भी पात्र आउट-ऑव-फोकस न हो जाए।

ऐसा नहीं हुआ—मैं इसके लिए आश्वस्त हूं और अपने लेखन के प्रति कृतज्ञ भी।

हरामजादे, उल्लू के पट्ठे, आदि जैसे जाने-पहचाने शब्दों को अगर आप 'फुटनोट' या डैश-डैश की मदद से पहचानना चाहें तो हमें क्या एतराज हो सकता है।

वैसे इतना हम कह दें कि लेखक के निकट जिंदा जबान इस्तेमाल कर सकने

की हिम्मत उसमें संयम और सामर्थ्य होने की गवाह है।

भाषा के मसले को समधियाने को अटाने-पटानेवाला पैंतरेबाज खेल न समझ लीजिए। हां, एक सवाल हमें भी आपसे पूछना है—जो गालियां आपके चाहने या न चाहने के बावजूद बड़े भोलेपन से हर जवान पर टंगी रहती हैं—उनका क्या कीजिएगा ?

वाणी सेनगुप्त, कलकत्ता : आपके साहित्य को पढ़कर हम आपके प्रभाव-क्षेत्र को जानने के इच्छुक हैं।

ठेठ गांव की सीधी-सादी मगर जीवंत जिंदगी से लेकर शहरी तामझाम से लैस महानगर की तराशी हुई पोशाक और लिपे-पुते मुखौटों तक जो-जो भी इन आंखों के आगे गुजर जाए।

हमने विपरीत रंगों को विपरीत दिशाओं से छुआ है, देखा है और जिया है।

आपकी इजाजत से आपके शब्दों को अगर हम अपने लिए उधार लें तो हमारे प्रभाव-क्षेत्र की इतनी ही खूबी है !

वासुदेव नागर, दिल्ली : पिछले १५-२० वर्षों के हिंदी-साहित्य ने क्या अपने समय की सही अभिव्यक्ति की है ?

बेशक पिछले पंद्रह-बीस बरसों में हमारे साहित्य की उपलब्धि उन जाने-पहचाने और अनजाने हस्ताक्षरों में है जिन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा साहित्य में जन-जीवन के जिंदा खुरदरेपन को, उसके मजबूत जीवट को, गहरी आस्था को, उसकी कुंठाओं, चाहत, आशा-निराशा, उसके रूप-कुरूप और बहुरूपीपन को एकसाथ ईमानदारी से अंकित किया है।

दुर्गादत्त दुर्गेश, चूरू : एक समय था जब साहित्यकार ईमानदार, सहृदय, यथार्थवादी होता था और छल-फरेब से दूर रहता था, पर आज वह बात नहीं रही। रचनाओं में वह जितना उदार, हमदर्द और सच्चा है, यथार्थ में उसका उलटा। ऐसा क्यों ?

मालूम होता है कि आप किसी कलम के धनी से चोट खाये हुए हैं। संत का चोला बेचारे लेखक को क्यों पहनाना चाहते हैं ? लेखक जो करता है, करने दीजिए। आपको तो उसके लेखन से मतलब। न सहन हो सके तो, यही मान लीजिए कि पूरे देश के साथ लेखक भी राजनीति के अखाड़े में डट गया है। वहां न किसी चीज की मनाही है, न किसी बुराई से परहेज।

अच्छा तो आपके लिए भी यही होगा कि आप नये मूल्यों और मान्यताओं से कुछ लगाव पैदा करें वरना आज की दौड़ में पिछड़ जाएंगे।

राकेशकुमार, इलाहाबाद : क्या आज का साहित्य समाज पर कोई प्रभाव डाल रहा है ?

गजब कर दिया आपने। इलाहाबाद में रहकर आप इतना नहीं जानते कि साहित्य समाज और जीवन का दर्पण है।

हमारी मानिए। हर शाम सिविल लाइंस के काफीहाउस में बैठा कीजिए। वहां की साहित्यिक चर्चाएं सुन-सुनकर दिल-

दिमाग रोशन हो जाएगा और फिर आप इंटलेकचुअल मसीहा बनकर ही दम लेंगे।
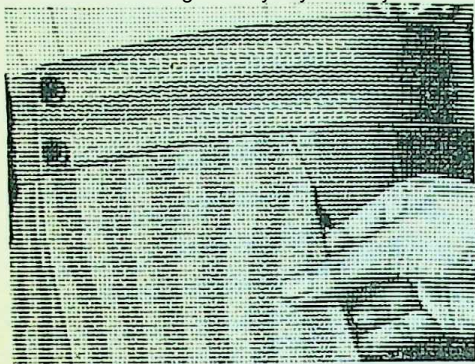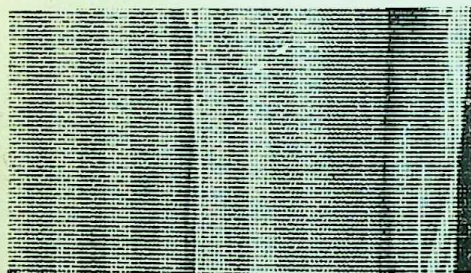
तब आलम यह होगा कि आप हमसे पूछेंगे और हम जवाब देने से कतराएंगे।

सुरेश सीकरीवाल, अलवर: आपका साहित्य जन-साहित्य से कटा हुआ है और वर्ग-विशेष का साहित्य है। इस संदर्भ में आपका क्या उत्तर है?

हमें यकीन है कि हमारे लेखन पर इस तरह के एकतरफा फतवे तभी दिए जा सकते थे जब आपने इसे पढ़ न रखा हो। हमारी राय में हमारे साहित्य पर 'जनवादी' या 'वर्गविशेष' के ठप्पे लगाने से पहले 'यारों के यार', 'मित्रो मरजानी' और 'डार से विछुड़ी' पढ़ डालिए। आंखों पर की धुंध छट जाएगी।

ईश्वरचन्द्र मिश्र, जबलपुर: विचारों को कागज पर उतारने की शक्ति जन्मजात होती है या माहौल पर निर्भर करती है या प्रयास के द्वारा प्राप्त की जा सकती है?

हमारे लिए ऐसे सवाल का जवाब देना खतरे से खाली नहीं। आप क्यों बेकार में लेखकीय प्रतिभाओं का पर्दाफाश करना चाहते हैं!

जिन्हें जो-जो मुगालते हैं, रहने दीजिए। लेखक और उसका लेखन एक-दूसरे से इतने जुड़े-गुंथे होते हैं कि हजारों तार एक-दूसरे से उलझे हों, लिपटे हों। किसी एक का सिरा निकालना मुश्किल है।

—८, रेवेरा अपार्टमेंट्स,
४५, दि माल, दिल्ली-११०००७

मुखौटे
अखिलेश तिवारी

कार्यकारिणी-परिषद के चुनाव की तारीख घोषित कर दी गयी है। अचानक शहर में जनसेवा की लहर दौड़ गयी। ईसप की लोककथा का राजकुमार जैसे किसी चिरनिद्रा से जाग उठा हो। शहर में आने के बाद मुरारी ने दो चुनाव देखे हैं। जब मकानों की दीवारें, चहार-दीवारियां, बिजली के खंभे आदि शब्द-अंकित कागजी ओढ़नी से ढकने लगते हैं, मोटरों और तांगों में लाउडस्पीकर पर फिल्मी गानों के साथ-साथ कुछ नारे और अनजाने नाम आधी रात तक कानों पर टिड्डी-दल की तरह छाये रहते हैं, तब मुरारी जान जाता है कि चुनाव होने-वाला है। यदा-कदा दो-चार लोग उसकी झुग्गी के पास आकर हाथ जोड़ बेमानी मुसकान के साथ कुछ परचे भी पकड़ा जाते हैं। इससे अधिक मुरारी का चुनाव से कोई संबंध नहीं रहा है। चुनाव का इससे अधिक कोई मूल्य नहीं है।

शहर की विपुल संपत्ति और वैभव के चुंबक से खिंचकर मुरारी यहां आया था, पर अपनी आजीविका कमाना उसे किसी स्वर्ण-मरीचिका को पाने से कम दुर्लभ नहीं लगा। न जाने कितने धक्के खाने के बाद उसने फलों की चाट बेचने का धंधा पकड़ा था। उसने सोचा था कि उसके चाट बेचने में किसी को क्या आपत्ति हो सकती है! पर शहर के नियम अलग हैं।

एक दिन वह इंटरवल के समय स्कूल के सामने चाट बेच रहा था जब पहली बार नगरपालिका के दो कर्मचारि उसे आ पकड़ा था।

"कहां है तुम्हारा लाइसेंस ?" आवाज में सत्ता का पूरा कसैलापन

"लैसंस ! हुजूर, लैसंस तो है . . ."

"वह तो हमें मालूम था। अच्छा, यह झाबा और चल कमेटी के दफ्तर

नगरपालिका द्वारा नियमों के करने की विधि का पहला अ तब मुरारी को हुआ था। सारा दिन जाने तथा बिक्री के सारे पैसे और के फलों की आहुति चढ़ाने के बाद ही अपनी झुग्गी वापस लौट सका था। छ बदहवास-सी प्रतीक्षा कर रही थी। भय से मुरझाये कोने में बैठे थे।

"मैं तो बहुत डर गयी थी... देर कहां लगा दी ?" छबीली ने भय के बोझ से मुक्त होते हुए पूछा

"मूनिसपिलटी के दफ्तर गया

"किसलिए भला ?"

"माल बेचने का लैसंस नहीं था..

"हाय राम ! सर पर झल्ली ढो भी लैसंस चाहिए ! . . ."

"चाहिए होगा, नहीं तो हमें पकड़ते . . ." निर्लिप्त भाव से जैसे यह स्वीकार लिया था।

हर धंधे-व्यवसाय के नियम हो कुछ परोक्ष और कुछ अपरोक्ष। मु इन अपरोक्ष नियमों से अनजान था।

उस दिन नगरपालिका के

से छूटने से पहले वहां के एक बाबू ने उसे एक छपा फार्म थमा दिया था।

साथ में एक सख्त चेतावनी भी मिली थी, "... और बेटा, अब बिना लाइसेंस के सड़े-गले फल बेचते पकड़े गये तो जेल की हवा खानी पड़ेगी...।"

बाबू के कहे अनुसार फार्म बनवाने के लिए उसने कमेटी के दफ्तर के दर्जनों बार चक्कर काटे। अपनी सामर्थ्य भर लोगों को खुश करने की कोशिश की, लेकिन वहां की लालफीते से जकड़ी नियमों-उपनियमों की गुत्थी को सुलझाने में वह असमर्थ रहा। आखिर उसे छबीली की बात ही माननी पड़ी—

"सुनो, अगर मेरी बात मानो तो इस लैसंस का चक्कर भूल जाओ। न जाने कितना टाइम और पैसा इसके पीछे बरबाद कर चुके हो..."

"...इससे अच्छा तो मूनिसपिलटी के बाबू के लिए दस-बीस रुपये माहवारी बांध दो, फिर कोई झंझट नहीं होगा ...!"

मुरारी ने यह समझौता स्वीकार कर लिया। उस इलाके के नगरपालिका इंसपेक्टर और गश्ती पुलिसवालों को उसने अपनी आमदनी का एक हिस्सा देना आरंभ कर दिया। धंधा फिर से चल निकला।

शाम को चाट बेचकर मुरारी घर लौटा। हाथ-मुंह धोकर खाने के लिए बैठा ही था कि किसी ने बाहर से आवाज दी। थाली छोड़कर वह बाहर निकल आया। छबीली पीछे थी। बाहर इतने

आत्मकथ्य

लगता है, किसी स्वर्ण-मरीचिका की खोज में भटकते हम भूल गये हैं कि हम साधारण जीव हैं जिनके लिए सुख और शांति के प्रकाश की छोटी-सी किरण ही पर्याप्त है। जिन्हें कुर्सी मिली है वह और ऊंची कुर्सी पाने की हवस में, जिन्हें धन-संपत्ति मिली है वह और अधिक धन जुटाने की लालसा में इस भटकन के दलदल में और गहरे धंसते जा रहे हैं। जो कुर्सी और संपत्ति से वंचित हैं, वह इस दलदल में फंसने के लिए लालायित हैं। ऐसी स्थिति में लेखक की बात, मनोरंजन के स्तर से हटकर, क्या कोई भी सुनने को तैयार है? शायद हां, शायद नहीं!

इसी 'हां, ना' की कशमकश में कहानी लिखने का सिलसिला पिछले पांच वर्षों से शुरू हो गया है। सरकारी नौकरी की सुरक्षा के कारण 'लिखना' मेरे लिए विवशता नहीं है। फिर भी बिना लिखे कहीं कुछ अधूरा लगता है।

लोगों का समूह देखकर क्षण-भर को उसके अंदर किसी अज्ञात भय की बिजली कौंध गयी, पर उन लोगों के चेहरे पर बिखरी मुसकराहट देखकर वह आश्वस्त हो गयी।

"चौधरी, वर्मा साहब मिलने आये हैं। नगरपालिका के वाइस प्रेसीडेंट हैं। परिषद का चुनाव लड़ रहे हैं..." समूह के एक व्यक्ति ने परिचय कराया।

मुरारी ने एक बार पुनः अचकनधारी वर्मा साहब को प्रणाम किया।

"हुजूर, आपने बड़ी किरपा की। आप हमारी झुग्गी पर आये हम तो करतारथ हो गये..."

"नहीं चौधरी, कृपा किस बात की? आप लोगों की सेवा करना तो हमारा [illegible] है..." वर्मा साहब की आवाज विनम्र[illegible] के शहद में डूबी थी।

छबीली पीछे खड़ी सब कुछ [illegible] रही थी। उसने मुरारी से कुछ कहा।

"क्यों! क्या कह रही है चौधरानी?" वर्मा साहब ने आग्रह से पूछा।

"कुछ नहीं हुजूर! आप मुनि[illegible]पिल्टी के पिरेसीडेंट हैं तो उसी के मैं [illegible] हमारी घरवाली कुछ विनती करना चा[illegible] रही थी, पर हमें कहते सरकार [illegible] आती है। आप सोचेंगे, इसने अपने स्वार[illegible] की बात छेड़ दी..."

"ऐसा क्यों सोचते हो, चौधरी। ह[illegible] लोग अगर आपका दुख-दर्द नहीं समझें[illegible] आपके काम नहीं आएंगे तो किस मुंह से आपसे मदद की अपेक्षा करेंगे।" मुसकरा[illegible]कर वर्मा साहब ने उसे प्रोत्साहन दिया।

"तो सुनें हुजूर! फलों की चाट बेचता हूं, पर लैसंस नहीं है। हर दूसरे चौथे किसी न किसी की मुट्ठी गरम करनी पड़ती है। तंग आ गये हैं। अ[illegible] आप ही कुछ मदद कर दें..."

"अरे यह कौन-सी बड़ी बात है!" वर्मा साहब ने कुशल नेता के अंदाज में कहा। फिर अपने समूह के एक व्यक्ति की तरफ इशारा कर बोले, "इनका काम डायरी में नोट कर लो। कल ऑफिस में याद दिलाना।"

चुनाव की सरगर्मी बढ़ने लगी।

इस बार मुरारी को लगा कि चुनाव का भी कोई अर्थ है। शायद इसके द्वारा उसके और उसकी रोजी-रोटी के बीच खड़ी भ्रष्टाचार और अकर्मण्यता की भीति टूट सके।

एक बार फिर मुरारी नगरपालिका गया। मालूम हुआ, चुनाव के कारण वर्मा साहब के दफ्तर आने का कोई ठीक समय नहीं है। जरूरी काम वह कोठी से ही निपटा देते हैं। साहस बटोरकर दूसरे दिन वह वर्मा साहब की कोठी पर गया। कोठी में दफ्तर से ज्यादा चहल-पहल थी। वर्मा साहब अन्य लोगों से बातें करने में व्यस्त थे। काफी देर बाद उनका ध्यान मुरारी की तरफ गया। उसने झुककर प्रणाम किया।

"हां भाई, तुम्हारे क्षेत्र में अपना कैसा काम चल रहा है? . . . ."

वह क्षण भर चुप रहा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या उत्तर दे। फिर भी उसने कह ही दिया, "हुजूर, बहुत बढ़िया . . ."

"बहुत खूब . . ." फिर वर्मा साहब दूसरी तरफ मुखातिब हो गये। मुरारी के लाइसेंस का जिक्र भी नहीं छिड़ सका।

उसने एक बार फिर हिम्मत बांधी। मौका देखकर कह ही दिया।

"सरकार, हमारा लैसंस भी बनवा देते तो बड़ी मेहरबानी होती . . ."

इस बार वर्मा साहब ने भौंहें सिकोड़कर उसे ध्यान से देखा।

"अरे लाइसेंस . . .। हां-हां जरूर बन जाएगा। हमारे होते हुए चिंता किस बात की करते हो? अपना काम किये जाओ, कोई बखेड़ा उठे तो हमें खबर कर देना . . .।"

"क्यों नहीं हुजूर . . ." मुरारी ने यंत्रवत उत्तर दे दिया और बाहर निकल आया।

अपनी झुग्गियों से वर्मा साहब को वोट दिलाने का उत्तरदायित्व जैसे उसने अपने ऊपर ले लिया।

मुफ़्त!
Care of your teeth and gums
बिल्कुल नयी
फ़ोरहॅन्स पुस्तिका: "दाँतों
और मसूढ़ों की रक्षा"

चुनाव का दिन आ गया। सुबह से मुरारी और छबीली ने भाग-दौड़ शुरू कर दी। हर झुग्गी में जाकर लोगों की खुशामद करके वोट डालने भेजा। उस दिन उसने अपना धंधा बिलकुल बंद रखा।

चुनाव का परिणाम निकला। वर्मा साहब भारी बहुमत से चुनाव जीत गये। मुरारी ऐसे खुश हुआ जैसे उसे कोई अमूल्य निधि प्राप्त हो गयी हो। एक बड़ी फूल-माला लेकर वह वर्मा साहब को बधाई देने गया। लैसंस के साथ-साथ नगर-पालिका से कोई दूकान लेने तक के स्वप्न उसने देख लिये। लौटकर आया तो छबीली से बोला, "सोच रहा हूं, लैसंस के साथ-साथ कमेटी की कोई दूकान भी वर्मा साहब से कहकर ले लूं। आखिर सर पर झल्ली ढोये-ढोये कब तक काम चलेगा। . . ."

अपनी दूकान के नाम से छबीली का चेहरा खिल उठा। तुरंत बोली—

"फिर देर किस बात की है। वर्मा साहब से बात कर लो ना. . ?"

"दो चार दिन ठहर जा। इतनी भाग-दौड़ के बाद इनसान थक ही जाता है। जरा वर्मा साहब की थकान उतर जाने दे फिर सब काम करा लूंगा मैं . ."

कुछ दिन यूं ही बीत गये। उस दिन चौबीस जनवरी थी। गणतंत्र दिवस परेड का पूरा रिहर्सल होनेवाला था। आज के दिन हजारों लोग परेड देखने आते हैं। खूब बिक्री होती है। मुरारी और छबीली ने भी इन दिनों दो झाबे फल और चाट की दूकान लगाने का फैसला किया। दस बजे तक पेड़ के नीचे ईंटों पर दो थाल सजाकर, दोनों परेड समाप्त होने की प्रतीक्षा करने लगे।

लगभग ग्यारह बजे भीड़ का पहला रेला आया। दस बारह लोग उसके थालों के पास जमा हो गये। उन दोनों के हाथ यंत्र की-सी शीघ्रता से चाट बनाने लगे। समय कैसे बीता पता ही नहीं चला। पलक झपकते-झपकते ही एक पूरा झाबा फल बिक गये। दोनों के मन खुशी से भर उठे। सहसा नगरपालिका का एक ट्रक सामने रुका। ग्राहक एक तरफ हटने लगे। जब तक मुरारी और छबीली अपने होश संभालते, ट्रक से पांच-छह व्यक्ति नीचे कूदे और उन दोनों को ऐसे घेर लिया जैसे वह खतरनाक अपराधी हों। भरे और खाली झाबे ट्रक में डाल दिये गये। एक ने थालों में ठोकर मारी। थाल झन-झनाकर सड़क पर गिर गये।

मुरारी क्रोध से जल उठा, "अरे, तुम लोगों की यह हिम्मत। इतना पैसा खिलाया उसका यही अंजाम मिला . . ."

सत्ता के प्रतिनिधियों के लिए इससे बड़ी चुनौती क्या हो सकती है। नगर-पालिका के कर्मचारियों में से एक ने मुरारी को गले से पकड़ा, "अबे क्या बकता है! एक तो बिना लाइसेंस सड़े फल बेचकर लोगों को मारना चाहता है और उस पर हम पर झूठा इलजाम लगा रहा है . . ."

"हां हां, पकड़ो साले को। बड़ी

लंबी जबान ... दफ्तर, वहां खबर लूंगा . . ." दूसरे ने आदेश-सा दिया।

"हां हां, जहां चाहे ले चलो। वर्मा साहब से कहकर अगर एक-एक की खबर न ली, तो अपने बाप की औलाद नहीं . . ." मुरारी बकने लगा।

अन्य सामान के साथ उसे भी ट्रक में डाल दिया गया। छबीली पागल-सी सड़क पर बिखरे फल बटोरती रही।

नगरपालिका के दफ्तर में उसका सारा सामान जब्त कर लिया गया।

मुरारी के दिमाग में अब बस एक ही विचार जलते अंगारे की तरह दहक रहा था कि किस तरह वह वर्मा साहब तक पहुंचकर इन क्रूर हत्यारों को कड़ी-से-कड़ी सजा दिला सके।

किसी तरह सुबह हुई। हाथ-मुंह धोकर वह वर्मा साहब की कोठी भागा।

पोर्टिको में काफी देर प्रतीक्षा करने के बाद वह बरामदे में चढ़ा और कमरे का दरवाजा धीरे-से खटखटाया। खाकी वरदी पहने एक व्यक्ति अंदर से निकला।

"पिरेसीडेंट साहब हैं?" मुरारी ने अधीरता से पूछा।

"क्यों? क्या बात है!"

"भाई साहब, मेरा नाम मुरारी-लाल है . . . पिरेसीडेंट साहब मुझे अच्छी तरह जानते हैं . . .

"कमेटीवालों ने मेरा चालान कर दिया है, वही . . ."

"अच्छा तो प्रेसीडेंट साहब ने ... चालान की जिम्मेदारी ले रखी है . . ." फिर जरा रुककर मुरारी के पास ... हुए व्यंग्यात्मक स्वर में बोला, "... भांग खाकर तो नहीं आया है! प्रेसीडेंट साहब के पास और बहुत काम हैं। ... सुबह-सुबह दिमाग खराब मत कर . . ."

फिर वह व्यक्ति अंदर वापस ... लगा। मुरारी का साहस और विश्वास लड़खड़ाने लगा था। वह अभेद दीवार जो उसके और उसकी रोजी-रोटी के बीच खड़ी थी और जिसके टूटने के स्वप्न वह चुनाव की आत्मीयता के दिनों में देखने लगा था, फिर उसके सामने मजबूती से उठती नजर आने लगी। फिर भी उसने एक बार पुनः प्रयत्न किया।

पर उत्तर में उस कमरे के जालीदार दरवाजे बंद हो गये।

वह कुछ देर गुमसुम-सा, वहीं खड़ा रहा। वर्मा साहब के बल पर उसने कुछ दिनों से गश्ती पुलिसवालों की मुट्ठी गरम करना कम कर दिया था। पर अब वह बल टूट गया था। चुनाव के अवसर पर लगाये मुखौटे ने वर्मा साहब का चेहरा ढक लिया था, चुनाव के बाद वह मुखौटा उतर गया था और अब उसे महसूस हुआ कि वर्मा साहब या नगर-पालिका के इंसपेक्टर या गश्ती पुलिस-वालों के चेहरों में कोई अंतर नहीं है।

—१३, बाजार लेन, बाबर रोड, नयी दिल्ली-१

लैला खालिद और विमान अपहरण

● लैला खालिद

फिलिस्तीनी 'फिदाई' लड़की लैला खालिद ने विमान का अपहरण करके सारे विश्व का ध्यान आकर्षित कर लिया था। इसकी रोचक और रोमांचक कहानी लैला खालिद के ही शब्दों में प्रस्तुत है :

२९ अगस्त, १९६९ को जब मैंने टी. डब्लू. ए. के विमान बोइंग ७०७ का अपहरण किया, तो मैंने अपने आपको हर स्थिति के लिए तैयार कर लिया था। रोम के फ्यूमिसेनो हवाई अड्डे पर, विमान अपहरण की योजना में शामिल मेरा सहयोगी सलीम अवादी ठीक समय पर नजर आया। उसकी छवि मुझे दी गयी थी। पहले से निश्चित संकेतों द्वारा हमने एक-दूसरे को अपनी पहचान करा दी।

...विमान को हवा में उड़ते हुए वीस मिनट हो चुके थे। मैंने परिचारिका से कहा, "मेरे पेट में दर्द है और ठंड महसूस हो रही है। मेरे लिए एक कंबल ला दीजिए।"

कंबल मिलते ही मैंने उसे अपने पैरों पर डाल लिया। इस अवसर का लाभ उठाकर मैं अपने पर्स से हथगोला निकालना चाहती थी और पिस्तौल को जेब में ऊपर करके अपने हाथों में मजबूती से पकड़ लेना चाहती थी।

जिस समय विमान-परिचारिका ट्रे लिये हुए पायलट के केबिन में जाने लगी तो मैंने सलीम को उस ओर बढ़ने का संकेत किया। वह तुरंत अपनी सीट से उछल पड़ा और केबिन के द्वार पर जाकर खड़ा हो गया।

"नहीं ! नहीं !" परिचारिका चीखी। उसके हाथ से चाय की ट्रे छूटते-छूटते बची। मैं सलीम के पीछे खड़ी थी। मैंने परिचारिका को रास्ते से हट जाने को कहा। वह तुरंत हट गयी। सलीम का डील-डौल बहुत लंबा-चौड़ा था अतः मैं यह नहीं देख सकी कि विमान के चालक तथा अमले पर इसकी कैसी प्रतिक्रिया हुई है।

लैला खालिद

मैंने सलीम को यह कहते हुए सुना, "इस विमान पर फिलिस्तीनी मुजाहिदों का कब्जा हो गया है और इसकी कप्तान अब शारिया अबू गिजाला है!"

मैं हथगोला हाथ में लिये पायलट के केबिन में घुस गयी और घोषणा की, "अब मैं इस विमान की कप्तान हूं।"

विमान का अमला मुझे देखकर

लैला खालिद : पृष्ठभूमि में चे ग्वेवारा

हैरान था लेकिन उनके चेहरों पर भय छाया हुआ था। मैंने पायलट को हथगोले का सेफ्टीपिन दिखाकर बोलना प्रारंभ किया, "यदि तुम मेरा आदेश मानोगे तो किसी को कोई कष्ट नहीं होगा और यदि तुमने मेरी बात टालने की कोशिश की तो तुम इस विमान और इसके यात्रि[illegible] के विनाश के जिम्मेदार होगे। [illegible] चलो!" मैंने आदेश दिया।

इसके बाद मैंने मुसाफिरों से [illegible] करनेवाले इंटरकॉम सिस्टम को [illegible] करने का आदेश दिया। मेरे तमाम आदे[illegible] का पालन किया गया। मैंने यात्रियों [illegible] संबोधित किया—

"महिलाओ और सज्जनो, ध्या[न] दीजिए। अपनी सीट की पेटी बांध लीजि[ए]। फिलिस्तीन की आजादी के जनमोर्चा [की] चे ग्वेवारा यूनिट ने टी. डब्लू. ए. के [इस] विमान की कमान अपने हाथ में ले ली है। हम चाहते हैं कि आप अपनी जगह शां[ति] से बैठे रहें। अपनी रक्षा के लिए अप[ने] हाथ अपने सिर के पीछे रखें। ऐसी को[ई] हरकत न करें जिससे विमान के दू[सरे] यात्रियों का जीवन संकट में पड़ जाए। अपनी योजना की सीमाओं में रह[कर] हम आपकी आवश्यकता पूरी करने [का] प्रयत्न करेंगे। यात्रियों में एक ऐसा व्यक्ति भी है जो बहुतेरे फिलिस्तीनी लोगों [की] मौत और मुसीबतों का जिम्मेदार है जिसके कारण हम यह कार्रवाई कर रहे हैं, ताकि अपराधी को फिलिस्तीन के क्रांति-कारी न्यायालय के सामने ले जा सकें। जब विमान जमीन पर उतरेगा, शेष लोगों को बिना भेदभाव इस बात की स्वतंत्रता होगी कि वे जहां जाना चाहें जाएं। हमारा लक्ष्य वहां है जहां एक मित्र देश आपका स्वागत करेगा।"

रास्ते में मैंने यूनान के क्रांतिकारियों और दक्षिणी यूरोप की जनता को उनके साथ अपनी एकता का संदेश दिया। अब तक सारी बातें हमारी योजनानुकूल ही हो रही थीं। जब मिस्र के ट्रैफिक कंट्रोल से हमारा रेडियो-संपर्क स्थापित हुआ तब मैंने उसे अरबी भाषा में फिलिस्तीनी इंकलाब की ओर से संदेश दिया और यह सूचना दी कि मैं लीदा की तरफ उड़ान ले रही हूं। उसने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "क्यों? आखिर क्यों? इजराइल के ऊपर उड़ान लेना खतरनाक है!"

"मैं अपने वतन जा रही हूं, मैं उसे देखना चाहती हूं!" मैंने कहा, जिसके उत्तर में वह अरबी में कुछ कहना चाहता था पर उसके शब्द मुझसे दूर होते चले गये।

...फिलिस्तीन का समुद्र-तट मेरी दृष्टि के सामने था। १९४८ में जब मैं ४ वर्ष की अबोध बालिका थी, उस समय मैंने मातृभूमि को अलविदा कहा था। उस समय से मां-बाप, भाई-बहनों, दोस्तों और अन्य विस्थापितों से सुनी हुई यादें अकथनीय पीड़ा बनकर मेरी छाती में सुलग रही थीं। आज मैं दुबारा अपने देश के वातावरण में उड़ान भर रही थी। मैंने अधिकृत फिलिस्तीन में अपने देश-बंधुओं से कहा, "आप लोग अडिग रहें, हम लोग शीघ्र वापस आएंगे और अपनी धरती को मुक्त कराएंगे।"

इसके बाद मैंने इजराइली फिजाई मीनारों को अंगरेजी में संबोधित किया, "हम वापस आ गये हैं। शारिया अबू गिजाला (एक फिलिस्तीनी 'मुजाहिद' महिला जिसे सेहूनी जालिमों ने यातना दे-देकर मार डाला, पर जिसने अपने उद्देश्य के साथ गद्दारी नहीं की)

विद्रोही गतिविधियां

जिंदा हो गयी है और लाखों शारियाएं इस धरती की मुक्ति के लिए बार-बार आएंगी।"

...कुछ ही क्षणों में हमारा विमान हैफा के ऊपर उड़ने लगा... मेरा प्रिय नगर हैफा!

पायलट ने मुझसे पूछा, "अब हम क्या करें ?"

"मैं सात मिनटों के लिए इस नगर की परिक्रमा करना चाहती हूं जहां मेरा जन्म हुआ था।"

मैं यह महसूस करने लगी कि मेरे शरीर का कोई खोया हुआ अंग मुझसे आ मिला है। मैं कुछ क्षणों के लिए मौन हो गयी। मैंने फिलिस्तीन की हरियाली और पहाड़ों को हसरत भरी नजर से देखा। प्रेम और आकांक्षा की मिली-जुली भावना से मेरा मन भर आया। अचानक मुझे इस बात का अनुभव हुआ कि मेरा मिशन मेरी भावनाओं से कहीं अधिक जरूरी है।

मैंने पायलट से कहा, "विमान को लेबनान ले चलो, जहां मेरे देश के लोग विस्थापितों का जीवन जी रहे हैं।"

विमान बेरूत का चक्कर लगाने लगा। उसके बाद मैंने पायलट से कहा कि वह दमिश्क की ओर मुड़े। उसने आपत्ति प्रस्तुत की, "दमिश्क के हवाई अड्डे पर बोइंग ७०७ को उतारने की जगह नहीं।"

"बकवास बंद करो! क्या तुम समझते हो कि अरब इतने पिछड़े हुए हैं कि इस विमान का प्रबंध नहीं कर सकते ?"

ईंधन का मीटर बता रहा था कि विमान का पेट्रोल बस अब समाप्त ही होने को है। पायलट अधिकारियों को

अनुमति की प्रतीक्षा कर रहा था । मैंने उसे विमान को हवाईअड्डे से दूर मैदान में तुरंत उतारने का आदेश दिया कि विमान बिना किसी झटके के जमीन पर उतरे, वरना अगर मैं फर्श पर गिर पड़ी और मेरे हाथ का यह बम फट गया तो एक सुखद यात्रा का दुखद अंत होगा !

कप्तान ने विमान को बिना झटका दिये, बड़े आराम से जमीन पर उतार दिया । मैंने और सलीम ने मुसाफिरों से कहा कि वह जल्दी न करें और अपना सामान अपने साथ ले जाएं । लेकिन सब हड़बड़ी में थे। बहुत से लोग नंगे पांव बाहर निकल गये । विमान के अमले के लोग भी जैकेट छोड़कर बाहर आ गये।

सारे मुसाफिर उतरकर जा चुके थे। मैंने विमान का हर भाग चेक किया । सलीम ने पायलट के केबिन में तार जोड़कर फ्यूज जला दिया । संकटकालीन अवस्था में बाहर निकलने के लिए जो रास्ता था उसी रास्ते से निकलकर मैं तेजी से जमीन पर कूद गयी । सलीम भी उसी तरफ से कूदा और मेरे कंधों पर गिरा. . .विमान में हमारी योजनानुसार आग नहीं लगी । सलीम पुनः विमान के भीतर गया और सारे प्रबंध ठीक करने लगा। उस समय विमान में किसी भी क्षण आग लग सकती थी, पर वह अपनी जान की बाजी लगाकर भीतर चला गया ।

सीरिया के सिपाही विमान की ओर बढ़ने लगे । उनका ध्यान हटाने के लिए मैं चीखी, "उधर देखो, इजराइली अफसर भागे जा रहे हैं, उन्हें पकड़ो ।" वे उधर दौड़ गये । सलीम विमान के भीतर ही था। मुझे उसकी सुरक्षा की चिंता थी । मैं हृदय से उसकी त्याग-भावना, उसकी वीरता और बुलंद हौसले की प्रशंसक हो गयी थी। वह विमान के द्वार तक आया और हाथ हिलाकर मुझे विश्वास दिलाया । उसने विमान के पंखों पर एक-दो फायर भी किये, पर उसका कोई भी असर न हुआ। बात यह थी कि विमान में पेट्रोल बिलकुल नहीं रह गया था, इसलिए उसमें आग नहीं लग रही थी।

अंत में जब विमान से चिनगारियां उड़ने लगीं तो हमने बीस गज पीछे हटकर अपनी जान बचायी। लगभग आधा मील की दूरी पर इस विमान के यात्री बोइंग के जलने का दृश्य देख रहे थे और उसके धमाकों की आवाज सुन रहे थे। सीरिया के सिपाही आश्चर्यचकित-से वापस आये । उनकी हैरानी और बढ़ गयी जब मैंने और सलीम ने अपने आपको उनके हवाले कर दिया और अपने हथियार भी उनके हवाले कर दिये। 'अलहदफ' के फोटोग्राफर को 'महाज' ने हमारा विमान उतरने की फिल्म बनाने के लिए भेजा था, पर वह इतना भावुक हो चुका था कि अपने कैमरे के लैंस से ढक्कन उतारना ही भूल गया था । . . .बहरहाल, हमने अपना मिशन पूरा कर लिया !

—प्रस्तोता : जहीर न्याजी

एक अनमोल रत्न : एक साहित्यकार

• वियोगी हरि

पारसनाथसिंह से १९३२ में दिल्ली में मेरा जो परिचय हुआ, वह देखते-देखते दो-तीन वर्षों में ही घनिष्ठ मित्रता में परिणत हो गया। साप्ताहिक पत्र 'हरिजन-सेवक' का मैं संपादन करता था और उसी कारण से हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस प्रति सप्ताह कम-से-कम दो दिन मुझे जाना पड़ता था। तब यह प्रेस पुरानी दिल्ली के श्रद्धानंद बाजार में था। नयी दिल्ली के कनाट सर्कस में तो बहुत बाद में इसका स्थानांतरण हुआ। श्री देवदास गांधी कुछ समय बिड़ला मिल के अतिथि-भवन में रहे थे, और बाद में हमारे हरिजन-निवास में। पारसनाथसिंहजी के साथ एक ही टेबल पर बैठकर वे प्रेस का व्यवस्था-कार्य करते थे। उनके शब्दों में कहा जाए तो 'पारसनाथजी से वे उन दिनों प्रशिक्षण ले रहे थे।'

'हरिजन-सेवक' के कार्य से अवकाश पाते ही मैं प्रायः पारसनाथजी के पास चला जाता था। उनके साथ बात करने में आनंद आता था। अर्थशास्त्र तथा व्यावसायिक क्षेत्र से संबंध रखते हुए भी, जिसे अकसर 'शुष्क' कहा जाता है, वे एक उच्चकोटि के साहित्य-रसिक थे। बात करने का उनका ढंग बड़ा आकर्षक था। हिंदी और अंगरेजी के वे सफल लेखक थे। संस्कृत, उर्दू-फारसी, हिंदी और अंगरेजी की सूक्तियां वे अपने निबंधों में इस खूबी के साथ चस्पां करते थे कि पढ़नेवाले का मन बरबस उन पर खिंच जाता था। डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में 'सहज भाषा, प्रसन्न शैली और सरस संकेत उनके निबंधों की विशेषता है। बहुत साधारण विषयों को भी उन्होंने

पारसनाथसिंह

मानव के अभियान
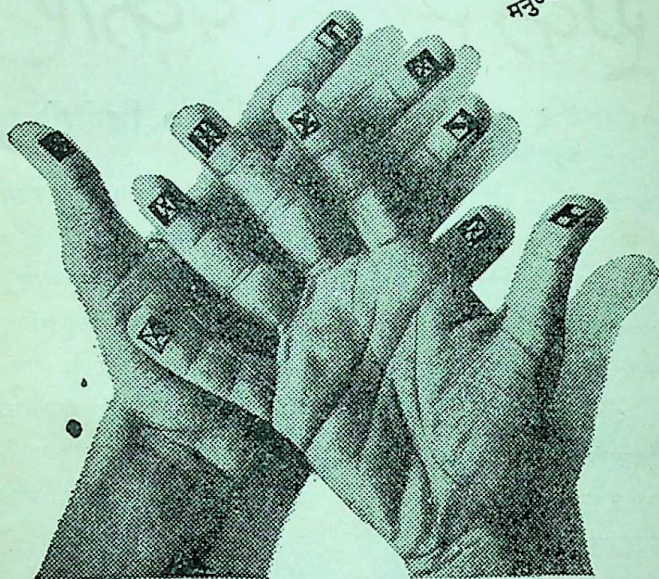
भारत की संसार को सबसे उपयोगी देन

बहुत पहले मनुष्य पत्थरों को आधार बना कर अपनी चीजें गिना करता था. धीरे-धीरे उसने हाथ की अंगुलियों का सहारा लेकर गिनना शुरू किया, लेकिन इस तरह वह दस से आगे नही गिन सकता था.

भारत ने ही सबसे पहले दस चिह्नों द्वारा मनुष्य को गिनना सिखाया और इस प्रकार उसे अंगुलियों द्वारा गिनने के बन्धन से मुक्त कर दिया. मानवता को भारत द्वारा दिये गए उपहारों में सबसे सूक्ष्म लेकिन बहुत ही अनमोल उपहार है—शून्य का चिह्न. शून्य के प्रयोग ने गिनती के क्षेत्र में एक क्रान्ति पैदा कर दी.

1 2 3 4 5

6 7 8 9 0

ये दस अंकों के चिह्न पूजा के काम में लाए जाने वाले यज्ञ-कुण्ड के चोकोर आकार से लिए गए है, हर चिह्न का मूल्य अंक में उसके स्थान पर निर्भर करता है. इन चिह्नों द्वारा सब कुछ गिना जा सकता था.

ये अंक सम्राट अशोक के युग (२७३-२३२ ई० पू०) में खूब प्रचलित थे. इसके एक हज़ार साल बाद मोहम्मद इब्न-ए-मूसा अलख्वारज़मी ने बगदाद में इनका प्रचार किया. अरबों के यहां प्रयोग में रहने के बाद ये अंक योरोप पहुंचे. गिनती को सादा और आसान बनाकर इन चिह्नों ने अनगिनत को भी गिन डाला.

इसके साथ ही मनुष्य अपनी विभिन्न जरूरतों के अनुसार अंकों और गणित की दूसरी समस्याएँ सुलझाने के लिए नए नए साधनों की खोज भी करता रहा.

आधुनिक युग के प्रगतिशील साधनों में कंप्यूटर ने हमको इस योग्य बना दिया है कि हम गिनती और आंकड़ों के कठिन से कठिन प्रश्नों को क्षण भर में हल कर सकते है. इस तरह जीवन की उन समस्याओं को हल करना संभव हो गया जिनका पहले कोई हल नही था.

भारत में बने आई बी एम कंप्यूटर देश की विकास-शक्ति को लाखों करोड़ों गुना बढ़ाने में सहायक हो रहे है.

मानव-शक्ति को और अधिक बढ़ाने के लिए आज जीवन के हर क्षेत्र में—प्रगति के हर काम में मनुष्य कंप्यूटर का उपयोग कर रहा है.

IBM

असाधारण बना दिया है ।'

लेकिन मुझे तो उनके लेखन से कहीं अधिक आनंद उनके बात करने की शैली में आता था । बिना पूरा सुने उठने को मन नहीं करता था । दरभंगा के 'खां साहब' की कहानी वे रसपूर्वक सुनाया करते थे । खां साहब पर उन्होंने एक लेख भी लिखा था, जो उनके निबंध-संग्रह 'कुसुमावली' में संकलित है ।

लोक-नेताओं में, खास करके मालवीयजी और लाला लाजपतराय तथा डॉ. भगवानदास के कितने ही जीवन-प्रसंगों को वे प्रायः सुनाया करते थे । पं. पद्मसिंह शर्मा और अकबर इलाहाबादी के वे भारी प्रशंसक थे । महाकवि अकबर के व्यंग्यात्मक शेर सुनाते हुए वे थकते नहीं थे और खूब दाद देते थे । उनके कितने ही विनोदपूर्ण प्रसंग अकसर याद आ जाते हैं । एक दिन किसी अखबार की एक कटिंग कागज पर चिपकाकर मुझे उन्होंने लिखा था । कटिंग में एक समाचार का यह शीर्षक छपा था—

'श्री वियोगी की गजनफर अली से डेढ़ घंटे बातें' ।

लिखा था : **इस समाचार से अपनी मित्र-मंडली में सनसनी फैल गयी है । हम सब जानना चाहते हैं कि आप गजनफर अली से क्यों मिलने गये थे और डेढ़ घंटे तक आप दोनों की बातें किस विषय पर हुईं ? ब्रजभाषा के संबंध में ? हरिजनों के बारे में ? आपको इस पर प्रकाश डालना चाहिए ।**

जिज्ञासु
पारसनाथ

समझते देर न लगी कि प्रेस के 'भूत उपाधिधारी' कृपालु मित्रों ने 'नियोगी' के स्थान पर 'वियोगी' कंपोज कर दिया होगा । जब मैं दो-तीन दिन बाद पारसनाथजी से मिला, तो उन्होंने उसी बात को

उदयशंकर भट्ट
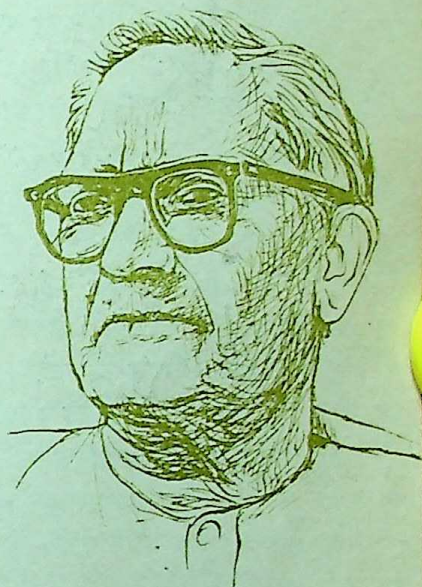
छेड़कर कहा, "प्रेसवालों ने आपकी भेंट जनाब गजनफर अली से तो करा दी, मगर मुझे उम्मीद है कि आप मुसलिम लीगी नहीं बन जाएंगे । हो सकता है कि गजनफर अली साहब को आप ब्रजभाषा के रस का चस्का लगा दें और वे दूसरे 'रसखान' बन जाएं ।" हम दोनों और देवदास भाई इस पर ठहाका मारकर

हंसने लगे ।

पारसनाथजी असमय ही चल बसे। उनकी रुग्णावस्था में मेरी अंतिम भेंट मुजफ्फरपुर में हुई थी । बड़े प्रेम से मिले थे । बोलते हुए जबान कुछ-कुछ लड़खड़ाती थी । देखकर मेरी आंखें तर हो आयीं । पारसनाथजी का क्या ही व्यक्तित्व था, क्या ही तबीयत थी ! सचमुच वे एक अनमोल रत्न थे । तारीफ है श्री घनश्यामदास बिड़ला की, जिन्होंने ऐसे रत्न का जौहर बहुत पहले पहचान लिया था और अपनी मंजूषा में बड़े प्रेम से रख लिया था।

● उदयशंकर भट्ट अंत तक मेरे 'केवल' बंधु रहे। वे साहित्यिक बंधु थे या सामाजिक या 'राष्ट्रीय' बंधु--ऐसे किसी विशेषण की आवश्यकता मैंने कभी अनुभव नहीं की थी । वह विशुद्ध बंधुता ही रही । छतरपुर के मेरे ही मोहल्ले के तथा सहपाठी श्री श्यामसुंदर भट्ट की बहन उनको ब्याही थी । अतः हमारा उनके साथ परिवार का-सा संबंध था । मिलना कभी-कदास ही होता था । हमारी चर्चाओं में कोई विशेष हेतु नहीं रहता था ।

आकृष्ट मैं भट्टजी के 'व्यक्तित्व' पर ही सदा रहा। उनके 'कृतित्व' का तो साधारण-सा ही परिचय था । शायद ही कभी उनकी कोई रचना पूरी पढ़ी होगी, पर उनको स्वयं को कुछ-कुछ पढ़ा था । और, जितना भी पढ़ा और गुना था, उनमें एक अनूठा आकर्षण पाया था । अपने-आपको प्रकटाने का भट्टजी कभी प्रयास नहीं करते थे। उनका [illegible] अनजान में ही प्रकट हो जाता था ।

१९२५ के अंत में, लाहौर में, उदयशंकरजी से मेरा प्रथम परिचय हुआ था, लाला लाजपतरायजी के निवास-स्थान पर। श्रद्धेय टंडनजी को उस दिन वे अपनी एक नयी रचना सुनाने आये थे । टंडनजी ध्यान से सुन रहे थे और उस पर मुग्ध हो रहे थे । मुझे उस रचना के 'क्रीड़ा और व्रीड़ा' इन तुकांतों के अलावा और कुछ भी याद नहीं आ रहा । टंडनजी ने तुकांत 'व्रीड़ा' पर खूब दाद दी थी। मैं भी झूम उठा था । 'वीरसतसई' लिखने का आरंभ मैंने वहीं दो-तीन दिन पहले किया था, और उसके चार-पांच दोहे भट्टजी को भी उसी दिन सुनाये थे, परंतु संकोचवश टंडनजी के सामने नहीं। तब की उस स्मृति का वह चित्र आज भी मेरे सामने वैसा ही खचित है । उस चित्र की कुछ रेखाएं ऐसी हैं जो कभी मिटने की नहीं, और रंग भी फीके पड़ने के नहीं ।

भट्टजी, ऐसा नहीं कि, वर्तमान काल की गतिविधियों से परिचित नहीं थे। साहित्य और समाज की अद्यतन रूप-रेखाओं से उनका खासा अच्छा परिचय था । किंतु भारत की मूल प्रकृति और स्वस्थ परंपरा का तंतु उन्होंने किसी भी अर्थ में विच्छिन्न नहीं होने दिया था, क्योंकि वे सच्चे अर्थ में एक विद्या-विनय-संपन्न तेजस्वी ब्राह्मण थे ।

—एफ, १३/२ माडल टाउन, दिल्ली

बुद्धि-विलास

१. **एक** आदमी ने एक वर्गाकार मकान बनवाया और उसकी चारों दीवारों में खिड़कियां लगवायीं। ये खिड़कियां दक्षिण दिशा की ओर खुलती हैं। क्या यह संभव है?

२. **कल्पना** कीजिए कि पचास हजार की आबादीवाले एक शहर में राजधानी से एक व्यक्ति आता है। अपने साथ वह एक चटपटी खबर लाता है। जिस परिवार में वह ठहरता है, उसके तीन सदस्यों को वह यह खबर सर्वप्रथम सुनाता है। खबर सुनाने में पंद्रह मिनट का समय लगता है।

इस प्रकार उस आदमी के शहर पहुंचने के पंद्रह मिनट बाद— मान लीजिए सुबह के सवा आठ बजे—उस खबर को केवल चार लोग जानते हैं, यानी, उस परिवार के तीन सदस्य और स्वयं खबर सुनानेवाला।

इन तीनों में से प्रत्येक इस खबर को तुरंत दूसरे तीन लोगों को सुनाता है, अर्थात साढ़े आठ बजे इस खबर को ४+(३×३)=१३ लोग जान जाते हैं। इन नौ नये लोगों में से प्रत्येक इस खबर को और तीन-तीन लोगों तक पहुंचाता है। ८.४५ बजे यह खबर १३+(३×९)=४० लोगों तक पहुंच जाती है।

इसी प्रकार यदि यह अफवाह फैलती रहे तो बताइए १०.३० बजे तक कितने लोगों को यह खबर पता लग जाएगी?

३. **टेलीविजन** का प्रदर्शन पहली बार कब हुआ?

४. **संसार** में सबसे बड़ा मंदिर कौन-सा है और कहां है?

५. **संसार** की मुख्य समाचार-समितियों के नाम गिनायें।

६. **ये** पहले किस नाम से पुकारे जाते थे—इस्तंबोल, इराक, तायवान, थाइलैंड, तमिलनाड़, इजराइल, कर्नाटक, इथियोपिया।

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

---

७. पंचामृत' में क्या -क्या पदार्थ होते हैं ?

८. 'अष्टछाप' के अंतर्गत कौन-कौन से कवियों के नाम आते हैं ?

९. वह कौन-सी उपयोगी वस्तु है जिसे संसार-भर में सब जगह समान हिस्सों में ही बांटा गया है ?

१०. 'ओशन ऑव स्टार्म्स' (ocean of storms) के बारे में आप क्या जानते हैं ? यह किस महाद्वीप या प्रायद्वीप में स्थित है ?

११. निम्नलिखित धातुएं किस उपयोग में आती हैं, और भारत में ये कहां-कहां उपलब्ध हैं—

अभ्रक, तांबा, मैंगनीज, बॉक्साइट, जिप्सम ।

१२. काला सागर (ब्लैक सी) से बंबई तक का मार्ग तय करने के लिए किसी जलयान के लिए कौन-सा सामान्य मार्ग पकड़ना चाहिए ?

१३. गरमियों में एक साधारण पेंडुलम वाली घड़ी किस प्रकार चलती है—क. अपेक्षाकृत धीमी, ख. अपेक्षाकृत तेज, ग. समय काल में बिना किसी परिवर्तन के।

१४. इस वर्ष जो विश्व इसलामी सम्मेलन हुआ था, वह किस स्थान पर आयोजित हुआ और किस तारीख को ?

१५. इन प्रश्नों के सही उत्तर बताएं:

बादलों भरी रात सामान्यतया गरम क्यों होती है ?

कार में रेडिएटर की क्या आवश्यकता होती है ?

'एयरोडाइनेमिक्स' का क्या मतलब है ?

दैनिक जीवन में उपयोग किये जाने वाले नमक की रासायनिक संज्ञा क्या है ?

'एल. एस. डी.' क्या है ? ये अक्षर किस शब्द के द्योतक हैं ?

१६. इनके लिए एक शब्द बताइए—अमृता, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति, मानदा, पूष, शशिनी, कांति, चंद्रिका, ज्योत्सना, श्री, प्रीति, अंगदा, पूर्णा और पूर्णामृता।

१७. निम्नलिखित शब्दों का क्या महत्त्व है—

गर्भाधान, पुंसवन, सीमंत, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारंभ, समावर्तन, विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास, अंतिम संस्कार।

१८. ऊपर दिये चित्र को ध्यान से देखिए और बताइए यह क्या आकृति है ?

• अनन्तप्रिय

दुर्दांत नायक संताजी घोरपड़े

मराठा नायक छत्रपति शिवाजी के ज्येष्ठ पुत्र शंभाजी का औरंगजेब के द्वारा निर्मम वध (११ मार्च, १६८६) कराये जाने के बाद मराठों के सम्मुख अंधेरा छा गया। लगा कि शिवाजी के समस्त प्रयास धूल-धूसरित हो जाएंगे, क्योंकि शिवाजी का द्वितीय पुत्र राजाराम केवल १९ वर्ष का अनुभवहीन नवयुवक था।

इस संकटकाल में अमात्य रामचंद्र पंत ने, संताजी और उसके साथी धनाजी जाधव को शत्रु की फौजों को विनष्ट करने का काम सौंपा।

संताजी के प्रारंभिक जीवन के विषय में कुछ भी इतिहास सम्मत नहीं प्राप्त होता। छिटपुट विवरणों से मात्र इतना ज्ञात हो सका है कि बाल्यावस्था में वह नवयुवकों के उस जत्थे में शामिल था जिसे सैनिक एवं नागरिक प्रशासन की शिक्षा दी जा रही थी, ताकि शिवाजी की सफलताओं को स्थायित्व प्राप्त हो सके। शंभाजी के शासनकाल में वह किस पद पर रहा, यह अज्ञात है। रायगढ़ के पतन (३ नवंबर, १६८९) की विषम स्थिति में, वह प्रकाश में आया, जब कि छत्रपति राजाराम और मराठा राज्य के संरक्षण का भार उस पर सौंपा गया।

अपने उत्तरदायित्व को उसने असाधारण क्षमता से निबाहा। वह दुर्दांत और तीक्ष्ण बुद्धि का व्यक्ति था। छापामार युद्धशैली में वह प्रवीण था। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ सर यदुनाथ सरकार ने लिखा है—**'ईश्वर ने संताजी को विशाल मराठा क्षेत्र में विस्तृत सैनिक समूहों का प्रबंध करने की विलक्षण बुद्धि प्रदान की थी। शत्रु की चालों में परिवर्तन के अनुसार अपनी योजनाओं को भी बदलने की उसमें पूरी क्षमता थी। उसके दांवपेचों की सफलता, सैनिकों की तत्परता और अधीन अधिकारियों द्वारा उसकी आज्ञाओं के निष्ठापूर्वक पालन करने पर निर्भर**

थी। वह [illegible] में कठोर अनुशासन लागू करता था।'

संताजी ने धनाजी के साथ योजनानुसार कार्य करते हुए आश्चर्यजनक सफलताएं प्राप्त कीं। वे मुगल टुकड़ियों पर एकाएक टूट पड़ते और उनका सफाया कर देते। यहां तक कि मुगल सेनापति जुल्फिकार खां को रायगढ़ के विरुद्ध युद्ध में सहायता भी न मिल सकी। संताजी अपने साथियों सहित मूसलाधार वर्षा की एक रात में कोड़ेगांव स्थित मुगल शिविर में घुस गया। देखते-देखते डेरे के रस्सों को काट दिया गया जिससे विशाल तंबू नीचे आ गिरा और अंदर के लोग मारे गये।

इस घटना ने औरंगजेब का हृदय दहला दिया। वह कोड़े गांव का शिविर त्यागकर बीजापुर जा पहुंचा। उस रात वह अपनी पुत्री के शिविर में होने के कारण बच गया था। उसने घोषणा कर दी थी कि जो व्यक्ति संताजी का सिर उसे भेंट करेगा उसे अच्छा पुरस्कार दिया जाएगा।

उक्त साहसिक कार्य से संताजी की ख्याति चतुर्दिक फैल गयी और छत्रपति ने उसे 'ममुल्कत मादार' की उपाधि से विभूषित किया। उसने विभिन्न मुगल सेनापतियों— अलीमर्दानखां, जुल्फिकार खां और असदखां जैसे अनुभवी युद्धकुशल व्यक्तियों को बुरी तरह पराजित किया। उसकी कूटनीतिज्ञता का उदाहरण देखिए:

अक्तूबर १६९५ में औरंगजेब ने जिंजी का भयानक घेरा डाल रखा था। इसका [illegible] खां कर रहा था। जिं के मार्ग में संताजी कोई गड़बड़ी न कर सके इसलिए औरंगजेब ने अपने विश्वस्त सेना नायक कासिमखां को भेजा। कासिमखां के साथ अन्य कर्मठ सेनापति हिम्मतखां को भी भेजा गया। दोनों सेनापतियों ने संताजी को आगे-पीछे से घेर लिया। संताजी और धनाजी ने स्थिति पर विचार किया। तदनुसार धनाजी कर्नाटक की ओर हटकर इस स्थिति में हो गया कि किसी भी परिस्थिति का सामना कर सके और आवश्यकता पड़ने पर संताजी की सहायता भी कर सके। संताजी और धनाजी की संयुक्त रणकुशल चालों के सामने मुगल सेनाओं की सुरक्षा को खतरा पैदा हो गया। कासिम खां ने औरंगजेब को यथास्थिति लिखी। औरंगजेब ने यथाशीघ्र उच्च-पदस्थ सामंत खानाजादखां को तुरंत दक्षिण भेज दिया। कासिमखां ने खानाजादखां के सत्कार के लिए अडोनी से बहुमूल्य तंबू, फर्नीचर, खाने के मूल्यवान बरतन आदि मंगवाये तथा एक सुसज्जित शिविर तैयार किया।

खानाजादखां के स्वागतार्थ सुसज्जित शिविर पर, भोर में, संताजी अकस्मात झपट पड़ा तथा सारे स्थान पर आग लगा दी। कासिमखां ने जल्दी से संताजी पर आक्रमण किया। उसी समय खानाजादखां भी उससे आकर मिल गया। संताजी इसके लिए भलीभांति तैयार था। उसने एक अतिरिक्त दल पास में ही छिपा रखा था, जो भूखे भेड़िये-सा उन पर टूट पड़ा

और उन्हें दो दलों के बीच जकड़ लिया। मराठों की विनाशक अग्नि का सामना करने में असमर्थ, दोनों मुगल सेनानायक भयभीत हो, चित्रदुर्ग से लगभग २५ मील पूर्व में दुंदेरी नामक एक छोटे-से गढ़ की ओर भाग गये। 'युद्ध की समस्त योजनाओं को त्यागकर मुगल सेना अस्त-व्यस्त होकर भाग निकली। बड़ी कठिनाई से वह दुंदेरी पहुंची।'

संताजी शीघ्र वहां भी जा पहुंचा और उस स्थान को घेर लिया। वहां अन्न-जल का कोई प्रबंध नहीं था। तीन दिनों तक भूखे-प्यासे मुगल सैनिक विकट घेरे में पड़े रहे। मराठा तोपों की भयंकर मार से बचने का कोई उपाय नहीं था। कासिमखां ने बादशाह द्वारा पदच्युत कर दिये जाने के भय से विष खाकर प्राणांत कर लिया। खानाजादखां ने भी समर्पण कर दिया।

बाद की विजयों ने जहां संताजी को युद्धजयी बनाया, वहीं उसमें दर्प भी भर दिया। संताजी का सहयोगी धनाजी जहां मधुरभाषी और विनयशील था, वहां संताजी उग्र और कठोर स्वभाव का था। खफीखां लिखता है—**"संताजी अपने अनुचरों को कठोर दंड देता था। तुच्छतम अपराधों पर भी वह अपराधी को हाथी के पैरों तले कुचलवाकर मरवा देता था। अपने प्रगल्भ और उद्धत आचरण के कारण वह अपने स्वामी की निगाहों में घृणा का पात्र बन गया और कठोर आदतों के कारण उसके अधीनस्थ भी समान रूप से उससे असंतुष्ट हो गये। यह उसके पतन का कारण भी सिद्ध हुआ।"**

खानाजादखां की दुर्दशा का समाचार मुगल सम्राट तक पहुंचा भी न था, उससे पहले ही उसने हिम्मतखां और कासिमखां के नेतृत्ववाली सेनाओं के सहायतार्थ युद्धसामग्री सहित एक अन्य सेनापति हमीदुद्दीन खां को रवाना कर दिया था। एक अन्य मुगल अधिकारी हिम्मतखां, जो पास ही था, शीघ्र मराठों की ओर बढ़ा। बसवपट्टन के निकट घोर युद्ध में संताजी ने हिम्मतखां और उसके पुत्र को मौत के घाट उतार दिया। तभी हमीदुद्दीनखां आ धमका। उसकी सेना में नया जोश था, जबकि संताजी के सैनिक लंबे युद्धों के कारण थके हुए थे। फिर भी संताजी ने उसे हराकर भगा दिया। इन चमत्कारिक सफलताओं से मराठों के हर्ष का वारापार न रहा। संताजी गर्वोन्मत्त होकर सीधा छत्रपति राजाराम के पास जा पहुंचा।

राजाराम को उसकी यह उद्दंडता अनुचित लगी। फलतः दोनों में कटु विवाद हो गया। संताजी ने राजाराम से यहां तक कह डाला कि 'आपकी स्थिति केवल मेरे कारण है। मैं छत्रपति बना सकता हूं और बिगाड़ सकता हूं।'

यह गर्वोक्ति राजाराम के लिए असह्य थी। उसने तुरंत संताजी को सेनापति के पद से हटाकर धनाजी को उसके स्थान

पर नियुक्त [illegible] अप-मान को बर्दाश्त न कर सका। संताजी और धनाजी गालियों के बाद लड़ने पर उतर आये। कांची के समीप ऐवरगुडी नामक स्थान पर उनमें युद्ध हुआ। युद्ध में धना-जी हार गया और उसका नवयुवक वीर समर्थक अमृतराव निम्बालकर बंदी बना लिया गया। बाद में संताजी ने अमृतराव को हाथी के पैरों से कुचलवाकर मरवा दिया।

धनाजी की पराजय से छत्रपति राजा-राम बहुत दुखी हुआ। स्वामिभक्ति की भावना से अनुप्राणित तथा संताजी की निष्ठुरता से अप्रसन्न अनेक सरदार राजा-राम के पक्ष में आ चुके थे। राजाराम ने जब धनाजी को यह आज्ञा दी कि वह संता-जी को पकड़कर बंदी बना ले और उसके सम्मुख उपस्थित करे, तो वह भाग निकला। धनाजी ने कर्नाटक से निकलकर महाराष्ट्र में उसका पीछा किया। बीजापुर के समीप उनमें युद्ध हुआ, जिसमें संताजी की करारी हार हुई। अपनी प्राण-रक्षा के लिए वह सतारा के पूर्व में स्थित महादेव की पहा-ड़ियों में भाग गया।

अमृतराव निम्बालकर की बहन राधाबाई नागोजी माने को ब्याही थी। नागोजी अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए पहले से ही संताजी के विनाश के लिए औरंगजेब के साथ षड्यंत्र कर रहा था। अब अपने भाई की मृत्यु का बदला लेने के लिए राधाबाई ने नागोजी को उक-[illegible]। नागोजी धनाजी के साथ हो लिया।

जून, १६९७ को जब संताजी एक झरने पर स्नान कर रहा था तब नागोजी के सिपाहियों ने उस पर घात लगाकर हमला कर दिया। उसका सिर काटकर वे नागोजी के पास ले आये। नागोजी ने तुरंत उस सिर को ले जाकर ब्रह्मपुरी में मुगल सम्राट के शिविर में उसे भेंट कर दिया और बदले में सम्राट से घोषित पुरस्कार तथा एक जागीर प्राप्त की।

निस्संदेह संताजी एक वीर और बुद्धि-मान नायक था। वह काफी समय तक मराठों का प्रबल सहायक रहा तथा उनकी आश्चर्यजनक सफलताओं में उसका विशेष हाथ था। यदुनाथ सरकार ने लिखा है—**"शंभाजी के रक्त से रंजित लाल बादलों में जब मराठा राजसत्ता का अस्त हो गया और जनता का युद्ध आरंभ हुआ, उस समय मराठों के संघर्ष के दीर्घ इतिहास में लग-भग दस वर्ष, दक्षिण के आकाशमंडल में दो देदीप्यमान तारे प्रकाश फैलाते रहे। वे थे संताजी घोरपड़े और धनाजी जाधव। उन्होंने विदेशी आक्रांताओं को पंगु बना दिया।"**

उस वीरात्मा की मृत्यु मराठों के भाग्य पर भारी आघात सिद्ध हुई। उसने अपने वीरोचित कर्तव्यों से दुश्मनों के दिल दहला दिये थे और उन पर आतंक छा गया था।

—अशरफटोला,
संडीला (उ.प्र.)

पंजाबी कहानी

अपना-अपना कर्ज

● अमृता प्रीतम

वह एक टूटी हुई बात की तरह थी। किसी को मालूम नहीं कि वह कौन थी, कहां से आयी थी, कब आयी थी, शायद कुंआरी थी, शायद विधवा थी, क्योंकि मर्द के नाम पर उसकी झुग्गी में कोई दो बरस का एक बच्चा था, पर वह उसका भी हो सकता था और उस दूसरी, उससे कुछ पक्की उम्र की औरत का भी।

नयी, बन रही बस्ती में, सभी नये थे। वे भी—जो वहां अपने घरों की नींवें खुदवा रहे थे, और वे भी जो ईंटें और चूना ढोकर दीवारें खड़ी कर रहे थे। सो, नीम के पेड़ों के नीचे बनी हुई उसकी चाय की झुग्गी न जाने पेड़ों की आयु की थी, या हाल में ही खुदी नींवों की आयु की।

लोगों को केवल यह मालूम था कि उसका नाम मूर्ति है और उसकी झुग्गी में सवेरे से लेकर शाम के पांच बजे तक, मजदूरों की छुट्टी होने के समय तक, गरम दालचीनीवाली चाय मिलती है।

वह अक्सर मोटी मलमल की लाल धोती बांधे रहती थी और चूल्हे में जलती हुई लकड़ियों के पास बैठी हुई वह भी चूल्हे की आग-जैसी मालूम होती थी।

वह दूसरी, उससे पक्की आयुवाली, जब धूप चढ़ती तब बच्चे को खिलाती हुई बाहर नीम के पेड़ों के नीचे बैठी दिखायी देती और जब शाम की ठंड उतरने लगती, तब बच्चे को आंचल में लपेटकर वह झुग्गी के भीतर जाती हुई दिखायी देती। चाय सिर्फ वह मूर्ति बनाती और बरताती दिखायी देती थी।

राज बख्शी के घर की छतें जब पड़ चुकीं, तब काम कुछ दिनों के लिए थम

गया, पर बख्शी साहब इन दिनों भी नियम से आते थे और चौकीदार को भेजकर चायवाली झुग्गी से चाय मंगवाते थे तथा कुछ देर वहां अकेले कुरसी पर बैठे रहते थे।

एक दिन कुछ देर से आये। बन रहे सब मकानों के चौकीदार अपनी-अपनी झुग्गी में आग जलाकर कुछ पका-वका रहे थे और मूर्ति की झुग्गी में भी चाय के बरतन मांजे-धोये जा चुके थे, जिस समय उन्होंने चौकीदार को चाय लाने के लिए भेजा।

मूर्ति ने नये सिरे से चाय का पानी रखा। चौकीदार शायद उनके लिए सिगरेट लेने चला गया था, मूर्ति ने चाय बनाकर उसका इंतजार किया, फिर स्वयं जाकर बख्शी साहब को चाय दे दी।

नीम के पेड़ों से झड़े हुए पत्ते जमीन पर कुछ इस तरह हिल रहे थे जैसे मिट्टी को टटोल-टटोलकर अपनी जड़ें खोज रहे हों।

राज बख्शी ने चाय का प्याला हाथ में लेते हुए मूर्ति की ओर देखा था, पर फिर आंखें परे कर ली थीं। फिर भी आंखों में से कुछ उतर कर अभी तक मूर्ति के मुंह पर हिल रहा था...

वे चाय पी रहे थे। मूर्ति परे कुछ दूर पर संध्या के सिमटते हुए उजाले की तरह खड़ी रही।

"मूर्ति!" अचानक उसकी आवाज ऐसे आयी जैसे हवा के एक झोंके से नीम के पेड से बहुत सारे पत्ते झड़ पड़े हों।

"जी!" न जाने क्यों मूर्ति को लगा जैसे उसकी आवाज पीपल के पत्ते की तरह कांप गयी थी। शायद उन तक पहुंची नहीं थी। होंठों में ही कांप गयी थी।

"तुम यहां कब आयीं? किस तरह?"

मूर्ति ने परे शून्य में देखा ... परे, तक—जो आंखों की पहुंच के बाहर था, फिर कहा, "काफिले के साथ, जब ... लोग आये थे।"

राज बख्शी ने नजर भरकर उसकी ओर देखा। गोधूलि के इस समय में वह ... की मूर्ति की भांति खड़ी हुई लगती थी।

उन्हें खयाल आया—पिछले वर्ष ... धरती का विभाजन एक और गजनी की तरह आया था जिसने न जाने कितनी मूर्तियां तोड़ी थीं और यह एक मूर्ति न जाने किस मंदिर में से उठाकर यहां एक झुग्गी में लाकर रख दी थी...

पर साथ ही राज बख्शी को डूबते हुए सूरज की लाली-जैसा एक तीखा-सा एहसास हुआ—लोग सदा अपने घर-बार, काम-रोजगार और रहन-सहन—जैसी हैसियतों से ही पहचाने जाते हैं, ये सब चीजें जब उनके पास से खो जाएं—उनके चेहरे भी खो जाते हैं। पिछले बरस उन्होंने कई काफिले और काफिले देखे थे—अपनी-अपनी हैसियत के बिना लोगों के अपने चेहरे भी खोए हुए थे। सब कुछ एक भट्ठी में गलकर एक-जैसा हो गया जान पड़ता था—चेहरे भी, आवाजें भी, खयाल भी...

"पर यह मूर्ति किस तरह साबत की साबत..." राज बख्शी को मूर्ति का घर-बार या उसकी हैसियत का पता नहीं

था, पर एक गहरा-सा एहसास था—"वह जो भी थी—वही है। उसकी किसी मंदिर या महल में रहनेवाली अदा यहां इस झुग्गी में भी है..."

मूर्ति उसी तरह एक दूरी पर खड़ी हुई थी। चाय का प्याला उसी तरह राज बख्शी के हाथों में थमा हुआ था। शायद वह खाली प्याले को लेने के लिए खड़ी हुई थी, पर पांवों के आगे बिछी हुई खामोशी को न वह तोड़ सकती थी, न वह...

फिर अचानक खामोशी टूट गयी। चौकीदार के पैरों की आवाज ने तोड़ दी। राज बख्शी ने खाली प्याला चौकीदार को थमा दिया, चौकीदार से मूर्ति ने ले लिया और पीछे झुग्गी की ओर मुड़ती हुई मूर्ति को चौकीदार ने जब दो आने दिये, वह चीनी की प्लेट में इस तरह छनके, जैसे दो टकड़ों में टूटी हुई खामोशी से कुछ और कंकड़ गिर आये हों...

राज बख्शी अगले दिन भी आये, उससे अगले दिन भी, उससे अगले दिन भी, पर उन्होंने स्वयं झुग्गी के पास जाकर चाय मांगी, पी और दो टुकड़ों में टूटी हुई खामोशी फिर एक साबत टुकड़ा मालूम होने लगी।

कुछ आवाजें ऐसी होती हैं—जो खामोशी के बदन में लहू की नसों की तरह चलती हैं और उनके कारण वह चुप बड़ी जीती-जागती मालूम पड़ती है। एक दिन चाय बनाते समय मूर्ति के पास खेलते हुए बच्चे की आवाज भी ऐसी ही थी।

"यह बच्चा?"

"मेरा है।"

यह सवाल और जवाब भी लहू की हरकत की तरह थे। ठंडी खामोशी कुछ तपते हुए रंग की हो गयी।

"वह ?" राज बख्शी ने अंदर झुग्गी में बैठी हुई दूसरी औरत की ओर देखा।

जवाब में मूर्ति ने पहले बच्चे से कहा, "जा, अंदर अपनी मां के पास जा।" फिर बख्शी साहब से कहा, "वह मेरे बच्चे की मां है।"

खामोशी जैसे जोर-जोर से धड़कने लगी।

अगले दो दिन राज बख्शी के कानों में मूर्ति की आवाज पत्तों की शां-शां की तरह बजती रही। उन्होंने उसकी झुग्गी से रोज चाय पी, पर फिर कुछ पूछा नहीं।

मूर्ति के शब्द सीधे थे—"यह मेरा बच्चा है, वह मेरे बच्चे की मां है।" पर अर्थ सिर्फ पत्तों की शां-शां जैसे थे, पकड़ में नहीं आते थे।

यह नयी बन रही बस्ती शहर से आठ मील दूर थी, जिसके आस-पास अभी कोई मंडी या बाजार नहीं बना था। शहर से इस बस्ती तक एक बस चलती थी, दिन भर में शायद तीन बार। यह बस न मिलने पर आठ मील पैदल चलने के सिवा कोई चारा नहीं था।

इसी रास्ते पर एक दिन राज बख्शी ने मूर्ति को शहर से बस्ती की ओर आते हुए देखा। मूर्ति के दोनों हाथों में कुछ गठरियां, पोटलियां थीं। राज बख्शी ने अपनी गाड़ी रोक ली।

"बस दो मिनट का फर्क पड़ गया, बस निकल गयी," मूर्ति ने गाड़ी में गठरियां पोटलियां रखते हुए कहा, "चाय की पत्ती, चीनी और लटरम-सटरम लेने के लिए कभी-कभी शहर जाना पड़ता है।"

राज बख्शी ने गाड़ी को पहले से दूसरे और दूसरे से तीसरे गियर में डालते हुए धीरे से कहा, "बहुत मेहनत करनी पड़ती है ?"

संध्या समय की इठलाती हवा की भांति मूर्ति हंस दी, बोली कुछ नहीं।

"मूर्ति ! तुम्हारे बच्चे का बाप ?" राज बख्शी के मुंह से अधूरा-सा वाक्य निकला जो उन्हें कुछ गलत-सा भी लगा। फिर उसी वाक्य को कुछ ठीक करते हुए उन्होंने कहा, "तुम्हारा आदमी वहीं फसादों के दिनों में ..."

"हां, बलवाइयों ने मार दिया।"

अगली खामोशी में फिर उस दिनवाले मूर्ति के शब्द राज बख्शी के कानों में शां-शां करने लगे ...

कुछ देर बाद कह सके, "लोग अजीब-अजीब बातें करते हैं।"

"मेरी ?" मूर्ति ने पूछा, पर आवाज में फिक्र—जैसा कुछ नहीं था।

"वह दूसरी औरत ?"

"उसका नाम रुक्मणी है, वह मेरी रुक्की बहन है।"

"यह बच्चा उसका है ?"

"हां !"

"तुम्हारा नहीं ?"

"मेरा भी।"

राज बख्शी हंस पड़े, "बहुत किसका है ?"

"बहुत उसका है। मूर्ति में ... की काम करती हो, ... हो, मर्द की तरह..."

पड़ी।

राज बख्शी एक पल की खामोशी के बाद गंभीर-से स्वर में कहने लगे, "असल में तुम दोनों में एक को औरत होना चाहिए था, एक को मर्द।"

"हां, पर तुम्हारी जगह यह खयाल रुब को आना चाहिए था।" मूर्ति ने कहा तो राज बख्शी ने कुछ चौंककर मूर्ति की ओर देखा। फिर कहने लगे, "तुम्हें मालूम है लोग क्या कहते हैं?"

"क्या?"

"एक दिन मेरे ठेकेदार का मुंशी किसी से कह रहा था ..."

"क्या?"

"कि तुम्हें...फिर से ब्याह करने में कोई एतराज नहीं...अगर..." राज बख्शी इस 'अगर' के आगे कुछ नहीं कह सके।

मूर्ति ने ही कहा, "लोग ठीक कहते हैं, मैंने ही कहा था—अगर कोई मेरे और रुक्की दोनों के साथ ब्याह करे, मैं कर सकती हूं।"

"अजीब शर्त है!"

"नहीं, अजीब नहीं है।" मूर्ति सामने वाली सड़क की ओर देखती रही, फिर कहने लगी, "साहब! अभी तुमने कहा था—'हम दोनों में, मुझमें और रुक्की में, एक को औरत होना चाहिए था, एक को मर्द', यह सच बात कही थी। मुझे रुक्की-जैसा मर्द चाहिए था।"

"पर इस वक्त तो तुम उसके लिए

"मैं ऐसे ही ठीक हूं।"

"पर वह बात?"

"आखिर मैं मर्द नहीं, मर्द की जगह हूं, मर्द की तरह..."

राज बख्शी ने सोचा नहीं था कि वे कभी मूर्ति से बातें करके इस तरह आश्चर्य में पड़ जाएंगे, हंस-से दिये। मानो हंसी से आश्चर्य को ढक रहे हों।

मूर्ति ने ही कहा, "असल में मर्द न उसे मिला, न मुझे।"

"उसका आदमी भी फसादों के दिनों में...?"

"वही, जिसे बलवाइयों ने मार दिया...।"

"मूर्ति!" राज बख्शी झड़ते हुए पत्तोंवाली टहनी की तरह खाली-खाली से मूर्ति की ओर देखने लगे। फिर कहने लगे, "वह आदमी तुम्हारा भी, उसका भी? यह बच्चा तुम्हारा भी. उसका भी?"

"हां, साहब!" मूर्ति हंस पड़ी, "रब एक बात पर चूक गया तो फिर चूकता ही गया।"

राज बख्शी ने गाड़ी की चाल को हलका किया, कहा, "बस्ती आने वाली है, मूर्ति! अगर तुम्हें एतराज न हो, मैं यहां कुछ देर गाड़ी रोक दूं।"

मूर्ति की खामोशी, बख्शी साहब से ज्यादा मूर्ति को अजीब लगी, कहने लगी, "हां, साहब! मैंने सुना है, तुम अच्छे

शिकाकाई, आमला, ब्राह्मी
सुन्दर बालों का सदियों पुराना रहस्य,
हेलीन कर्टिस के
टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू में
इस में शुद्ध शिकाकाई की मृदु स्वच्छतादायक सफ़ाई और आमला ब्राह्मी आदि जड़ी-बूटियों की स्वास्थ्यप्रद केशवर्धक क्षमता का सुंदर संगम होने के कारण यह आपके बालों को मुलायम, सुगंधित और सुशोभित रखता है और उनमें स्वाभाविक निखार ला देता है।
टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू इस्तेमाल कीजिए और प्यार से अपने बालों की देखभाल कीजिए।
यह केवल शैम्पू ही नहीं है, एक संपूर्ण सौंदर्य प्रसाधन है।
TIARA
SHIKAKAI
HERB
SHAMPOO
दो साइज़ों में मिलता है
१५० मि.ली. तथा ७० मि.ली.
न टूटने वाले साफ़ प्लास्टिक की बोतल में
जे. के. हेलीन कर्टिस लि., बम्बई-४०० ००१ का एक उत्कृष्ट उत्पादन
ARMS-HC-13-708-HIN

आदमी हो।"

"और क्या सुना है?" राज बख्शी गाड़ी रोककर पूछने लगे।

"और...और यह कि तुम्हारे कोई बच्चा नहीं है..."

"बच्चे की मां भी नहीं," राज बख्शी हंसने लगे।

"हां, कोई भी नहीं।"

"कहां सुना था?"

"तुम्हारे ठेकेदार, चौकीदार—सब मेरे पास चाय पीने आते हैं।"

"वे यह बातें भी करते हैं?"

"सिर्फ उस दिन कर रहे थे—जिस दिन तुम्हारे मकान की नींव रखी गयी थी। तुमने उस दिन न हवन किया, न मोतीचूर के लड्डू बांटे। वे सब लोग तुम्हारी इज्जत करते हैं—सिर्फ सोचते हैं—तुम्हारा कोई नहीं, इसलिए तुम्हें मकान की खुशी नहीं..."

राज बख्शी बहुत देर तक चुप रहे। लगा—उनमें और मूर्ति में बात करने-वाली सड़क टूट गयी है।

पर यह सड़क शायद वह थी—जो राज बख्शी की अपनी जिंदगी की ओर मुड़ती थी। वे उधर से पलटकर उस दूसरी ओर देखने लगे, जो मूर्ति की जिंदगी की ओर जाती थी। कहने लगे, "अच्छा, मूर्ति! वह दूसरी औरत रुक्की मर्द नहीं थी, इसलिए तुम्हें किसी और से ब्याह करना पड़ा..."

"हां, साहब!" मूर्ति हंस-सी पड़ी, "उसकी मेरी किस्मत एक ही थी, इसलिए हमारा ब्याह भी एक ही जने के साथ हुआ और हमारा, दोनों का बच्चा भी एक ही है।"

बाहर कुछ बूंदाबांदी होने लगी थी। राज बख्शी ने धुंधले-से हो रहे विंडस्क्रीन की ओर देखा, वाइपर चलाया, और कहने लगे, "दोनों का ब्याह तो एक आदमी के साथ हो सकता है, लेकिन बच्चा किस तरह?"

"तन और मन में कितना-सा फरक होता है, साहब? बस यह समझ लो—मन सिर्फ उसका था, मेरा नहीं था, मेरा सिर्फ तन था।"

शायद 'हूं' जैसा कुछ राज बख्शी ने कहा, फिर कितनी ही देर चुप रहे।

अचानक बोले, "उस समय एक आदमी से ब्याह करना शायद कोई मजबूरी थी, या सिर्फ जरूरत थी, पर अब क्यों?"

"वह जरूरत सिर्फ पैसे की थी। भट्ठेवाले की पहली औरत रुक्की थी—नहीं, पहली नहीं—पहली मर गयी थी। फिर उसने रुक्की से ब्याह कर लिया। —रुक्की के बच्चा नहीं हुआ। लोग कहते थे, भट्ठेवालों को पहली का शाप लगा है। सो साहब, बच्चे की खातिर उसने मुझे एक तरह से मोल खरीद लिया—पर साहब तुम यह सब क्यों पूछ रहे हो?"

राज बख्शी एकटक उसका मुंह देखते रहे फिर बोले, "मैं यहां रोज सिर्फ मकान के खातिर नहीं आता—मैं तुम्हारे

लिए आता हूं, तुम्हारे साथ ब्याह कर सकता हूं—पर तुम मेरे लिए भी वही शर्त लगाओगी, वही रहकीवाली शर्त ?"

"साहब ! . . . बख्शी साहब ! यह बात पक्की है कि जहां मैं रहूंगी, वहीं रखकी। जिस हाल में मैं रहूंगी, उसी हाल में वह . . ." मूर्ति कह रही थी कि बख्शी साहब ने बात काटी, "इससे मुझे कोई इनकार नहीं है। वह पूरे सुख में, पूरे आराम में रहेगी।"

मूर्ति हंस-सी पड़ी, "किस तरह ?"

बख्शी साहब को मूर्ति का 'किस तरह' अर्थहीन-सा लगा, पर कहने लगे, "पूरी इज्जत के साथ, आराम के साथ, घर की मां की तरह, बहन की तरह . . ."

मूर्ति ने सामने विंड-स्क्रीन की ओर देखा। वाइपर चल रहा था, फिर भी हथेली से उसकी धुंध को पोंछते हुए बोली, "बस यही बात है, बख्शी साहब ! तुम चाहे कितने ही अमीर हो, वह घर में मां की तरह रहेगी तो मां नहीं होगी, सिर्फ मां की तरह होगी। बहन नहीं होगी, बहन की तरह होगी। यह 'तरह' बहुत दिन नहीं चलती।"

राज बख्शी को लगा—इस वक्त शायद मूर्ति के कंधे को उनके हाथ की जरूरत नहीं थी, लेकिन उनके हाथ को मूर्ति के कंधे की जरूरत थी। उन्होंने बायां हाथ कुछ कांपता-सा, मूर्ति के कंधे पर रख दिया।

मूर्ति कहने लगी, "पर जब कोई औरत किसी की बीवी होती है, वह बीवी होती है, बीवी की तरह नहीं होती।"

"हां, मूर्ति !" राज बख्शी ने दलील मान ली, पर कहा, "तुम्हें जिंदगी में पहली बार भी जो कुछ मिला, उसके साथ बांटना पड़ा, अब दूसरी बार तुम जान-बूझकर. . ."

"सौकन कहलानेवाली औरत जो कुछ बंटाती है, मैं उसकी बात नहीं करती . . ."

"फिर ?"

मूर्ति कितनी ही देर चुप रही—जैसे कुछ बताने या न बताने का अपने साथ फैसला कर रही हो। फिर एक बार उसने एक गहरी निगाह से बख्शी साहब के मुंह की ओर देखा, लगा—उनके मुंह पर कुछ ऐसा सच था जो उसने पहले कभी किसी मर्द के मुंह पर नहीं देखा था। सोच लिया कि उसका अपना सच चाहे कैसा ही था, पर सच के बदले में सिर्फ सच देना है।

कहने लगी—"मेरे लिए भट्ठोंवाले की मांग बहुत दिनों से थी। मां-बाप गरीब थे, पर इतने नहीं कि मुझे बेचे बिना उनका काम न चलता। जो जवान लड़का मुझे अच्छा लगता था, उसने मुझसे ब्याह करने का इकरार कर रखा था। गरीब था, पर जवान था . . ." मूर्ति ने कड़वी-सी हंसी का एक घूंट पिया, फिर कहने लगी—"उससे ही मुझे दिन चढ़ गये थे . . ."

राज बख्शी चुप थे, मूर्ति भी चुप-सी हो गयी। फिर कहने लगी, "यह हमारी औरतों की जबान समझ गये हो न ?"

राज बख्शी ने हां में सिर हिलाया।

मूर्ति कहने लगी, "पर जब उसे पता चला वह ब्याह करने से मुकर गया। सो, किसी मर्द का बंदला किसी मर्द से लेने के लिए मैंने मां-बाप से कह दिया कि मैं भट्टों-वाले से ब्याह करूंगी।"

"सो यह बच्चा..."

"यह भट्ठोंवाले का नहीं है।"

"इस बात का रुक्की को पता है?"

"सिर्फ उसे पता है, और किसी को नहीं।"

मूर्ति कह रही थी, "इस बच्चे को मैंने मन की पूरी नफरत के साथ जन्मा था, पर रुक्की ने मन के पूरे प्यार से इसे पाला है। उस समय तक रुक्की को कुछ पता नहीं था। वह भीतर से अच्छे मन की है—वह अपने तन की हसरत मेरे तन में से..." मूर्ति की आवाज बाहर दूर तक बरसती हुई बूंदों में जैसे भीग गयी।

"फिर?"

"फिर वह कमीना—जिसका यह बच्चा था, और भी कमीनेपन पर उतर आया। मुझे धमकाकर उसने दो बार मुझसे पांच-पांच सौ रुपये लिये। मैंने तंग आकर सोचा कि मैं भी मर जाऊं और उसके बच्चे को भी जीता न रहने दूं। उसकी फिर धमकी आयी थी, मैं पागल-सी हो गयी थी—एक दिन बच्चे को उठाया, आधी रात के वक्त, और बाहर कुएं की ओर चल दी। बच्चा रुक्की के पास सोया करता था, मैंने उसे सोते हुए उठाया था, सो रुक्की जाग गयी... मुझे तब पता चला जब वह भी मेरे पीछे कुएं की ओर दौड़ती हुई... वहां मैंने अपने मुंह से सब कुछ बता दि... पर वह अपने बाप की बेटी मुझे... गले से लगाकर वापस लौटा लायी..."

"उसने उस आदमी को कुछ... बताया?... उस भट्ठोंवाले को?" ... बख्शी हैरान थे।

"बिलकुल नहीं। उसे सचमुच... बच्चे का मोह हो गया था... सिर्फ इ... ही नहीं, उसने सबकी चोरी से उसे ... भेजा जो मुझे आये-दिन धमकाता ... उससे कहने लगी कि भट्ठोंवाले को ... कुछ मालूम है, सो धमकी का कोई फा... नहीं है, उलटे भट्ठोंवाले ने उसे मरवा... का बंदोबस्त किया हुआ है—सो अ... वह जान की सलामती चाहता है तो फि... कभी इस गांव से न गुजरे..."

राज बख्शी की आंखों में पानी-... भर आया। उन्होंने झुग्गी के हलके अं... में बैठी हुई रुक्की को दूर से देखा हुआ ... पर आंखों में उसकी पहचान नहीं थी... उन्होंने मूर्ति की ओर देखा—लगा, मूर्ति के मुंह पर जो एक लौ है वह केवल उसकी जवानी की नहीं है, वह उस रुक्की की भी है—जिसे उन्होंने देखा नहीं था।

मूर्ति कह रही थी, "यह बच्चा तो सचमुच में उसका है, मेरा तो यूं ही एक बहाना है..."

राज बख्शी की हथेली मूर्ति के कं...

पर बस-सी गयी। मूर्ति कहने लगी, "मुझे पता है मेरी उम्र छोटी है, इसलिए सब मेरी तरफ ताकते हैं, पर अब जो हक उसे नहीं मिलेगा मैं भी नहीं लूंगी ..."

राज बख्शी बहुत देर चुप रहे। फिर हथेली से मूर्ति का मुंह अपनी ओर मोड़कर अपने सामने करके कहने लगे, "तुम्हें भी जिंदगी का एक कर्ज चुकाना है... मुझे भी जिंदगी का एक कर्ज चुकाना है..."

मूर्ति चुप पूरे ध्यान से उनकी ओर देखती रही। राज बख्शी एक गहरी सांस लेकर कहने लगे, "मुझे अपने सगे भाई का कर्ज चुकाना है... मेरी भाभी ने—मुझे अच्छी तरह होश भी नहीं था—जब मेरे साथ संबंध जोड़ लिया था... मैं बहुत अनजान था, कुछ नहीं समझा था... बस, शरीर जलता रहा, और मैं दिन-दिन बुझता रहा...."

मूर्ति जाने समझ सकी थी या नहीं, राज बख्शी ने ध्यान से उसकी ओर देखा, फिर कहा, "उसका जिस साल ब्याह हुआ था, उसे उसी साल कोई रोग हो गया था...यह बात मुझे बरसों बाद मालूम हुई, पर उसे तब से ही पता थी और उसने बच्चे की आस छोड़ दी थी ... बहुत छोटे घर से आयी थी ... सब कुछ अपने पास रखने के लिए सोचती थी कि मैं भी उसके बस में रहूं... मैं कई बरस तक एक रुकी हुई घड़ी में वक्त देखता रहा... मैंने समझा नहीं... भाई का दुख भी देखा, लेकिन मैंने समझा नहीं... मुझे अपने भाई के बदले का कर्ज चुकाना है, मूर्ति।"

मूर्ति—जो रोज कांसे की मूर्ति के समान दिखायी देती थी—हाड़-मांस की औरत की तरह कांप उठी।

राज बख्शी कह रहे थे, "अब उससे कोई वास्ता नहीं है, पर मेरे भाई का शक उसी तरह है... मैं बीते हुए बरस लौटाकर नहीं दे सकता...पर आगे से..."

"आगे से?" मूर्ति के होंठ धीरे से हिले।

मेह की बौछार से चारों ओर धुंध फैली हुई थी। राज बख्शी गाड़ी के अंदर वाले हलके-से उजाले में मूर्ति के मुंह की ओर देखते रहे, फिर कहने लगे, "आओ, मूर्ति! हम अपने-अपने कर्ज उतार दें।"

"तुम..." मूर्ति उनकी ओर देखकर कुछ हैरान-सी अपनी ओर देखने लगी, जैसे अपने आपको उनकी आंखों से देख रही हो....

राज बख्शी ने 'हां' में सिर हिलाया।

मूर्ति को शायद अभी इस 'हां' की एक बार और जरूरत थी, मुंह से निकला, "और रुक्की भी...?"

राज बख्शी ने मूर्ति के माथे के पास सिर झुकाकर उसके माथे को ऐसे चूमा कि मूर्ति को लगा—उनकी 'हां' उसके विश्वास-जितनी हो गयी थी।

के–२५, हौजखास,
नयी दिल्ली–१६

सन १९३९ में, जिन दिनों गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर कुछ बीमार रहने लगे थे, डॉक्टरों ने सलाह दी कि उन्हें दिन में कुछ देर के लिए जरूर आराम करना चाहिए। पर गुरुदेव थे कि बराबर काम में लगे रहते थे।

संयोग से उस समय गांधी जी शांतिनिकेतन आये हुए थे। किसी और की बात तो गुरुदेव मानने वाले नहीं थे। सोचा गया कि गांधी जी के कहने पर वे आराम करने के लिए अवश्य तैयार हो जाएंगे। इसलिए शांतिनिकेतन के कुछ कार्यकर्ताओं ने गांधी जी से निवेदन किया कि वे गुरुदेव से दिन में भोजन के बाद एकाध घंटा आराम करने के लिए कहें।

... दोपहर को भोजन क... के बाद गांधी जी अकेले ही टहलते ... गुरुदेव के निवास की ओर चल दि... वे बाहर बरामदे में बैठे अपने का... तन्मय थे। गांधी जी पास गये और सी... सीधे उलाहना देते हुए बोले, "मेरी ... बात आपको माननी ही पड़ेगी। ... दिन में भोजन के बाद कुछ देर आ... अवश्य कर लिया करें, नहीं तो आप... स्वास्थ्य गिरता ही जाएगा।"

गुरुदेव मुसकराये और बोले, "आप... यह बात मैं बिलकुल नहीं मान सकता।"

"क्यों?" गांधी जी ने पूछा।

गुरुदेव ने सहज भाव से बताया, "ज... मेरा यज्ञोपवीत संस्कार हुआ, उस सम... मैं बारह साल का था। तभी मैंने प्रति... की थी कि मैं दिन में कभी, किसी ... दशा में आराम नहीं करूंगा। मैंने आ... तक अपने इस संकल्प को बराबर निभाया। अब आप ही बताइए कि अपने बचे हु... जीवन में इसे कैसे तोड़ दूं?" गांधीजी निरुत्तर हो गये।

नागार्जुन आयुर्वेद के महान आचार्य थे। एक बार उन्हें अपनी प्रयोगशाला के लिए एक सहायक की जरूरत पड़ी। उम्मीदवार दो युवक उनके पास आये।

उन्होंने दोनों युवकों को एक पदार्थ देकर दो दिनों में घर से उसका रसायन तैयार कर लाने के लिए कहा।

दो दिन बाद उनमें से एक युवक

रसायन तैयार कर लाया। जब उसने रसायन का पात्र आचार्य के समक्ष रखा तो उन्होंने पूछा, "रसायन तैयार करते समय कोई विशेष अड़चन तो नहीं आयी?"

युवक ने कहा—"अड़चनें तो अनेक आयीं, मेरी मां तेज बुखार में तड़प रही थी। पिता पेट-दर्द से व्याकुल थे। छोटे भाई के पैर की हड्डी टूट गयी थी पर मैं तो अपनी साधना में लगा रहा," उसके स्वर में गर्व भरा था।
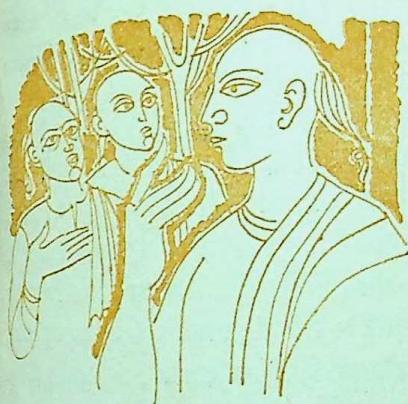
आचार्य केवल मुसकरा भर दिये।

कुछ देर बाद दूसरा युवक भी आ पहुंचा और बोला, "क्षमा करें, आचार्य मैं रसायन तैयार नहीं कर सका।"

आचार्य ने पूछा—"क्यों नहीं तैयार कर सके रसायन?"

युवक ने बताया, "आचार्य! जब मैं यहां से लौटकर घर जा रहा था तो मुझे रास्ते में एक बूढ़ा मिला, जो बीमार होने के साथ-साथ असहाय और निर्धन भी था। दो दिन उसी की सेवा-परिचर्या में बीत गये। कृपया मुझे दो दिन का समय और दीजिए।"

आचार्य उसकी बात सुनकर गंभीर हो गये, फिर पहले युवक की तरफ मुड़कर बोले, "तुम जा सकते हो। मैंने इस युवक को अपना सहायक रखने का निश्चय किया है। रसायन जीवन-रक्षा के लिए होता है। यदि उसको बनाने वाला जीवन-रक्षा से ही विमुख हो जाये तो उसे कैसे योग्य समझा जा सकता है?"

दुर्गादास राठौर और मुगलों में घोर शत्रुता थी। मुगलों ने दुर्गादास को छल से मारने के अनेक प्रयत्न किये। एक बार उन्हें एक मराठा सरदार के घर रात बितानी पड़ी। सरदार मुगलों की नौकरी में था। दुर्गादास जब गहरी निद्रा में थे तब सरदार कटार निकालकर दुर्गादास की हत्या करने के लिए आगे बढ़ा, तभी बिजली की तरह तड़पकर उसकी वीर पत्नी आगे आयी और पति से कटार छीनकर गरजते हुए बोली, "धिक्कार है तुम्हें! मुगलों के टुकड़ों पर पलने से लगता है कि तलवार के साथ-साथ तुम्हारी आत्मा को भी जंग लग गयी है। तुमने आज मराठा-जाति को कलंकित कर दिया। मैं ऐसे कायर की पत्नी बनकर एक क्षण भी जीना नहीं चाहती।" यह कहकर उसने अपने सीने में कटार उतार ली।

—कमला

रणप्रियाएं

• आर. एन. सालतौरे

रणप्रिय स्त्रियों के उदाहरण अत्यंत प्राचीनकाल के वर्णनों में भी उपलब्ध हैं। कैकेयी ने युद्ध के मैदान में पति के रथ का फंसा हुआ पहिया निकाला था। स्पष्ट है कि युद्ध के मैदान में रणप्रियाएं ही जा सकती हैं, मात्र प्रियाएं नहीं। मध्ययुग भी स्त्री-योद्धाओं से अछूता नहीं रहा। घुड़सवारी में दक्ष ऐसी महिलाएं युद्ध के मैदान में पुरुषों के छक्के छुड़ा देती थीं।

मौर्यों के दरबार में राजा के स्वागतार्थ पुरुष-वेश में हथियारबंद स्त्रियां खड़ी रहती थीं। इन्हें हाथी और घोड़े की सवारी करना आता था। ये रथ भी हांक सकती थीं। क्या मौर्य-काल में एकाएक स्त्रियां अस्त्रधारी हो गयीं? संभव है, हथियारबंद स्त्रियों की परंपरा बहुत पहले से चली आ रही हो और मौर्य युग में उसी परंपरा का पालन किया गया हो। जब स्त्री सामने बैठकर पुरुषों के साथ शास्त्रार्थ कर सकती थी तो योद्धा क्यों नहीं बन सकती थी?

हथियारबंद स्त्री-योद्धाओं की बात कल्पना की बात नहीं है। स्त्री-सेना की बाकायदा टुकड़ियां होती थीं। उन्हें कभी-कभी युद्ध में हिस्सा लेने की इजाजत थी। वे हर तरह के हथियारों से भलीभांति परिचित थीं। उनकी परेडों में राजा खास रुचि लेते थे। इसीलिए उनका चुनाव बड़ी सावधानी से किया जाता था। कश्मीर और पंजाब की स्वस्थ एवं सुंदर लड़कियां इन टुकड़ियों में शामिल की जाती थीं।

युद्ध की कला में निपुण महिलाएं अक्सर पुरुषों के छक्के भी छुड़ा देती थीं। इन रण-प्रियाओं की अपनी सैनिक टुकड़ियां होती थीं।
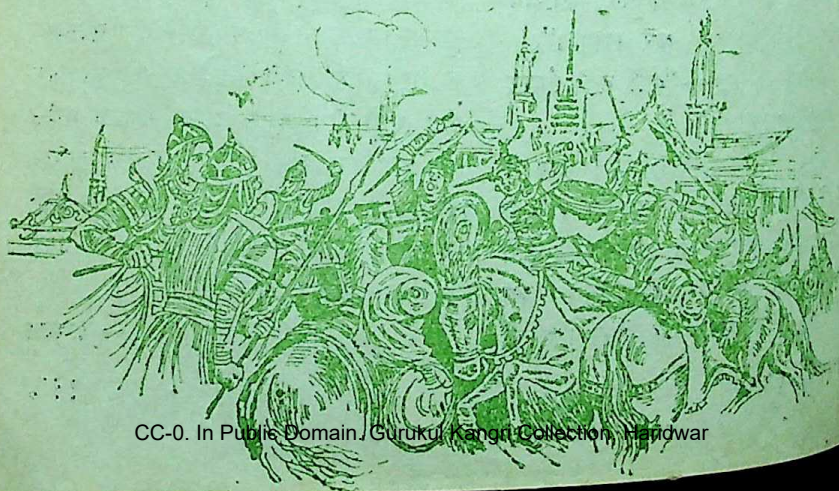
इनका डील-डौल आकर्षक होता था। सुंदर पोशाक में, हथियारों से लैस ये पुरुषवेशी रणप्रियाएं महाराजाओं का मनोरंजन करती थीं। इन्हें घुड़सवारी की इजाजत थी। यह परंपरा शताब्दियों से हिंदू, मुसलमान और सिख राजाओं के दरबार में पायी जाती थी।

ऐसा भारत में ही नहीं, भारत के पड़ोसी देशों और उपनिवेशों में भी था। मुसलमान यात्री इब्नबतूता ने अपने संस्मरण में लिखा है (१४वीं शताब्दी)—"जावा में स्त्रियों की एक सेना है जो अपनी रानी के साथ युद्ध के मैदान में जाती है। रानी के स्त्री-सैनिकों को घुड़सवारी और बरछा फेंकने का पूरा ज्ञान है। प्रतियोगिता में वे किसी भी पुरुष-योद्धा को पछाड़ सकती हैं....एक बार शत्रु से मुठभेड़ होने पर रानी ने अपनी स्त्री-सेना की मदद से शत्रु को हराया ही नहीं बल्कि कत्ल कर दिया।"

विजयनगर में भी हथियारबंद रणप्रियाओं की परंपरा थी। सन १५२०–२२ के बीच वहां बारह हजार रणप्रियाओं की टुकड़ियां थीं जिन्हें ढाल-तलवार के दांवपेंच मालूम थे। वे कुश्ती लड़ने में माहिर थीं और तुरही-मृदंग भी बजा सकती थीं। युद्ध हो या शांति, वे अपने दायित्वों से परिचित थीं और उनका निर्वाह करना भी जानती थीं।

शेरेपंजाब रणजीतसिंह के दरबार में जो स्त्री-सेना थी वह देश ही नहीं, विदेश में भी मशहूर थी। पुरुष-योद्धाओं के सारे गुणों के साथ उनमें स्त्रियोचित विशेषताएं भी थीं। इन पुरुष-वेषी स्त्री-सैनिकों को महाराजा की ओर से छोटी-बड़ी जागीरें मिली होती थीं। इन्हीं में से एक थी पद्मा,

महाराजा रणजीतसिंह के दरबार में अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित महिलाओं की टुकड़ी। इनका काम था राज्य में शांति स्थापित करना।
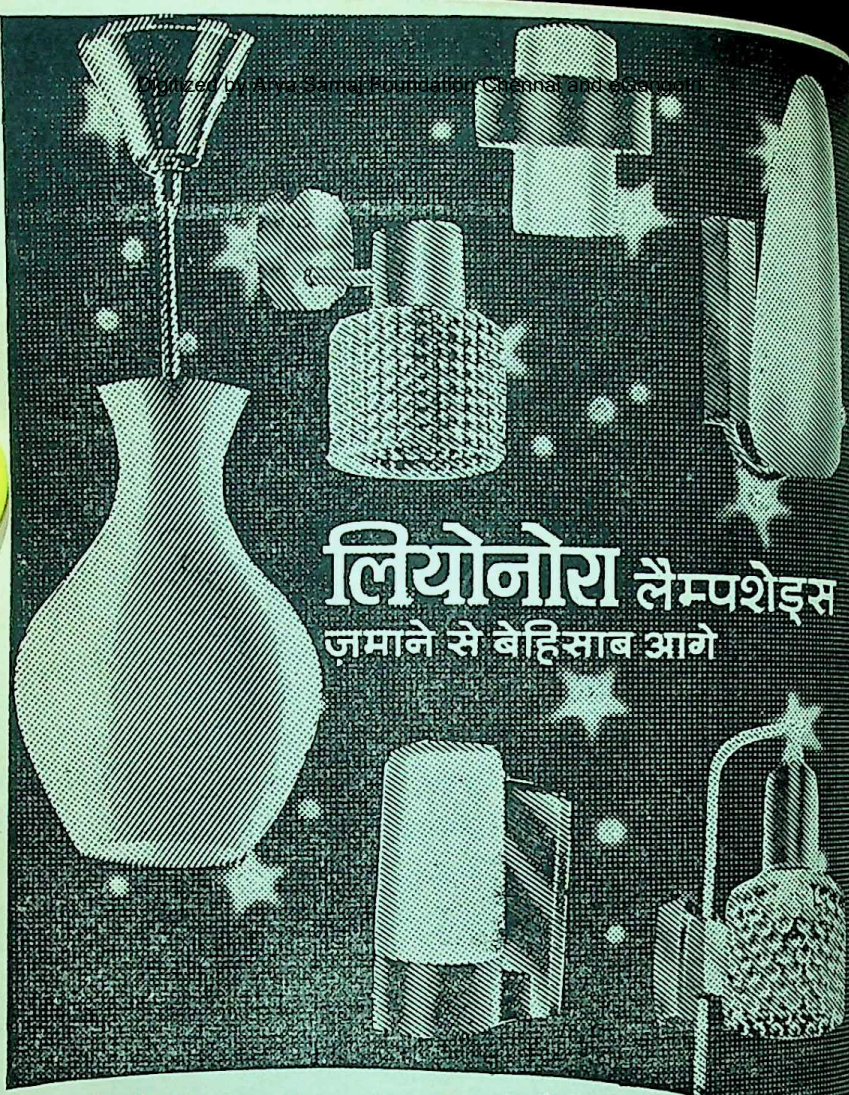
वह मरकर जी उठा

• ब्रह्मदत्त स्नातक

बात मार्च १९३८ के शुरू की है। तब तत्कालीन निजाम हैदराबाद की गुलबर्गा सेंट्रल जेल में २३-२४ वर्ष के एक समवयस्क, अतिशय सुंदर और प्रभावशाली व्यक्तित्व के साधु से परिचय हुआ। हमें वहीं हिरासत में रखा गया था और इसीलिए अपने घर के कपड़े पहनने की छूट थी। उन दिनों जाड़ा नाम को न था। भगवे रंग में रंगी, बढ़िया आधी आस्तीनवाली विदेशी इजिप्शियन बनियान, कपड़े की दो कत्तरों से बनी लंगोटी के ऊपर बढ़िया पारदर्शी धोती का अद्धा, आंखों में बारीक सुरमा, बालों में सुगंधित तेल व चेहरे पर अच्छे किस्म की ब्यूटी क्रीम व पैरों में कॉफ के हलके ब्राउन रंग के न्यू कट जूते—यही उस युवा साधु की वेशभूषा थी। वह बड़ा खुशमिजाज और दोस्ताना तबीयत का था। चूंकि वह उस समय आर्यसमाज के सत्याग्रह में अजमेर से आनेवाले जत्थे का नायक होकर मुझे शोलापुर कैंप में मिल चुका था, अतः हम दोनों शीघ्र ही प्रगाढ़ मित्र बन गये।

हम लोगों को एक साल के सपरिश्रम कैद की सजा दी गयी। कैद में हमें सबसे अधिक कठिनाई वहां मिलनेवाले निकृष्ट भोजन की थी। और कोई चारा न था। किसी तरह हमें पता चला कि जेल में बीमार कैदियों को विशेष भोजन के रूप में परांठे व गाढ़ी उड़द की दाल के साथ प्रत्येक समय आधा सेर दूध दिया जाता है। जब साधु को इस बात का चला तो उसने हम तीन-चार साथियों के लिए बीमार बनकर इस विशेष खुराक को जुटाने का जिम्मा लिया। हमारे एक अन्य मित्र से. जो संप्रति रेलवे सर्विस कमीशन के चेयरमैन हैं, कहा कि उसके समाधि की दशा में पहुंचते ही वह अविलंब शोर मचाकर व भागकर जेल के डॉक्टर को बुला लाये। साधु ने मुझसे कहा, 'समाधि में पहुंचते ही यदि एक घंटे में मेरे हृदयस्थल पर पांच मिनट तक धीरे-धीरे हाथ फेरोगे तो मैं फिर से जिंदा हो जाऊंगा, पर देर हो जाने पर आत्मा मेरा शरीर छोड़कर चली जाएगी।' बड़ा खौफनाक खेल था, परंतु स्वादिष्ट भोजन का प्रलोभन भी था।

योजनानुसार वह स्वामी जमीन पर लेट गया। उसने लंबी सांस खींची। २ मिनट बाद ही उसका शरीर निर्जीव हो गया। सांस बिलकुल बंद, नाड़ी रुकी हुई। साथी तुरंत डॉक्टर के पास भागे और जेल में खतरे की घंटी बजते ही सारे कर्मचारी ५ मिनट में बैरक में जमा हो

गये। सिविल सर्जन ने आंख व जीभ की भलीभांति परीक्षा की, हृदय की गति जांची, और फिर उदास हो गया। दवा देने का आग्रह करने पर डॉक्टर ने कहा कि 'हार्टफेल के कारण रोगी की मृत्यु हो गयी है, उसे लाशघर पहुंचाना होगा। इसी बीच मैंने धीरे-धीरे वक्षस्थल पर हाथ फेरा और शीघ्र ही स्वामी पूर्वावस्था में आ गया। होश में आते ही उसने पानी मांगा और कहा, 'मैं अब ठीक हूं।' परंतु डॉक्टर ने संभावित खतरे को देख रोगी को अस्पताल में तीन दिन तक रखकर पूरी क्लिनिकल-जांच व देखभाल रखी और उसके बाद पूर्ण विश्राम (सख्त कैद में मशक्कत करनी होती थी) के साथ विशेष खुराक तय करके वापस बैरक में भेज दिया। अब स्वामी के भोजन को आपस में बांटकर खाने से हमारे दिन अच्छे कटने लगे।

कुछ समय बाद सारे साथियों का अलग-अलग जेलों में तबादला कर दिया गया और इस तरह उस स्वामी से हमारा साथ छूट गया। बाद में कई लोगों ने हमें बताया कि माफी मांग लेने के कारण स्वामी को जेल से छोड़ दिया गया था। उस समय स्वामी ने अपना नाम परमानंद सरस्वती बताया था, परंतु मुझे उस पर विश्वास नहीं हुआ। इसका भी कारण था। अचानक एक दिन उसके पास बैठे-बैठे मुझे लगा कि इस साधु को मैं पहले भी कहीं देख चुका हूं। दो-तीन दिन तक बराबर इसी उधेड़बुन में रहा। सहसा याद आया कि जाड़े के दिनों में दो कत्तर की लंगोटी पहने इस-जैसे एक साधु को हाथ में खप्पड़ लिये और बदन में भभूत रमाये दो साल पहले वृंदावन में देखा था। आंखें लाल तथा जटाएं लटकी हुई थीं। वह ताश तथा बल-प्रदर्शन के अनेक खेल लोगों को दिखाता था।

उसका सबसे अंतिम खेल पहले दांतों, फिर जटाओं से क्रमशः दस सेर, बीस सेर और बाद में एक मन के बांटों को उठाना था। इसके बाद वह अपना अंतिम खेल करने से पहले दर्शकों में से महिलाओं, लड़कियों एवं २० वर्ष से कम आयु के युवकों को तुरंत चले जाने का आदेश देता। इस खेल तक वह किसी से कोई पैसा या फीस नहीं मांगता था। उसका अंतिम खेल

होता था, अपनी मलनली से उसी प्रकार क्रमशः दस-बीस व चालीस सेर के बांटों को सबके सामने उठाना। इस खेल को दिखाने के बाद वह अपना खप्पड़ लेकर प्रत्येक दर्शक के पास जाकर कहता, 'तुम्हारे पास रुपया छोड़कर जो भी सिक्का हो वह मुझे दे दो, न दोगे तो घर पहुंचते ही मृत्यु या अन्य सांघातिक दुर्घटना में ग्रस्त हो जाओगे।' लोग उसकी जवांमर्दी व शाप के भय से तुरंत खप्पड़ में सिक्के डाल देते। इस तरह एक बार में लगभग चार-पांच रुपये उसे मिल जाते। ऐसा खेल वह दिन में एक-दो बार करता। एक बार मैंने भी उसे ऐसा प्रदर्शन करते देखा था।

अब मेरे सामने प्रश्न था कि इस वर्तमान सम्मानित, चमत्कारी महायोगी संन्यासी का संबंध उस खप्पड़वाले नागे बाबा से कैसे जोड़ूं? यहां मेरी याददाश्त ने साथ दिया, और मुझे याद आया कि वह बाबा अपने खेल दिखाते समय 'को है का है, को है का है' जैसे निरर्थक शब्द बोलता हुआ श्रोताओं का ध्यान अपनी ओर खींचे रहता था। मुझे तरकीब सूझी। स्वामी से बातचीत करते समय मैंने धीरे-धीरे उन्हीं निरर्थक शब्दों को एक-दो बार, परंतु दिन में कई बार दोहराना शुरू कर दिया। पहले तो कोई फल नहीं निकला, परतु मैंने अपना प्रयत्न नहीं छोड़ा।

एक दिन जब मैं और स्वामी एकांत में बैठे थे और मैं उन शब्दों को दोहरा रहा था, तो स्वामी मेरे कंधे पर हाथ रख कर, अपनी सौगंध दिलाकर बोला 'आज तो तुम्हें इस 'को है का है' बकवास का राज मुझे बताना ही पड़ेगा।'

मेरे लिए इतना इशारा काफी था। मैंने तुरंत चप्पल उठाकर स्वामी से कहा कि पहले अपना ठीक अता-पता दो। अब वह पस्त और परेशान नजर आ रहा था। मुझसे बोला, 'मैं उन दिनों किसी कातिल की तलाश में जगह-जगह घूमकर इसी खेल के माध्यम से सब स्थानों पर पहुंचा करता था। (कातिल पर २,०००) का इनाम था। अंत में मैंने उसका पता लगा ही लिया था।' स्वामी ने मुझे विश्वास दिलाया कि उस सत्याग्रह में वह स्वेच्छा और सद्भावना से ही आया था। परंतु उसके एकाएक गायब होने की खबर ने मुझे उसके महत्त्व को कभी दिल में जमने नहीं दिया।

इंडियन जर्नल ऑव मेडिकल रिसर्च ने हाल में उदयपुर में एक योगी द्वारा छह दिन की समाधि के दौरान हृदयगति के पूर्ण अवरोध का विवरण छापा है। इससे पूर्व भी विज्ञान की अनेक देशी-विदेशी पत्रिकाओं में इस प्रकार के विवरण छपे हैं, परंतु आंखों-देखी उपर्युक्त घटनाओं के प्रकाश में मुझे किसी अध्यात्म-शक्ति का प्रकाश नहीं दिखायी पड़ता। आप अपनी सम्मति बनाने में स्वतंत्र हैं।

—३/६३२, रामाकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली

जिसे स्वयं पर विश्वास नहीं है, वह अन्य पर विश्वास कैसे कर सकता है। —शैली

दोस्ती एक सर्प की

• समुअल किंग

पूर्वी भूटान के पहाड़ों से निकली हुई फास्कोवा नदी, हिमालय की तलहटी में विस्तृत 'दोआर' चाय-बागान को सींचती है। अक्तूबर की एक शाम, मैं नदी के किनारे खड़ा, पतली और तेज जलधारा की अठखेलियों में खोया हुआ था। तभी मेरी तंद्रा टूटी, पानी के ऊपर कुछ हलचल हो रही थी। मैंने ध्यान से देखा, वहां एक सर्प तट की ओर आने के लिए तेज धारा से लड़ रहा था। एक सूखी टहनी उठाकर मैंने उसकी ओर फेंक दी, वह टहनी के सहारे धीरे-धीरे किनारे आ गया। मैंने कौतूहलवश जमीन पर छड़ी पटकी, तो गुस्से से फुफकार मारकर उसने फन फैला दिया। यह कोई जलसर्प नहीं, काला नाग था।

कुछ पल तक तो वह केवल अपनी काली जीभ बाहर-भीतर करता रहा, फिर सहसा लपलपाती हुई जीभ भीतर खींच ली और घूमकर भागना चाहा। मैं इस बीच उसे पकड़ने के लिए अपने को तैयार कर चुका था। मैंने तुरंत उसकी

काला नाग : भयंकर होने के साथ-साथ तेज और चालाक
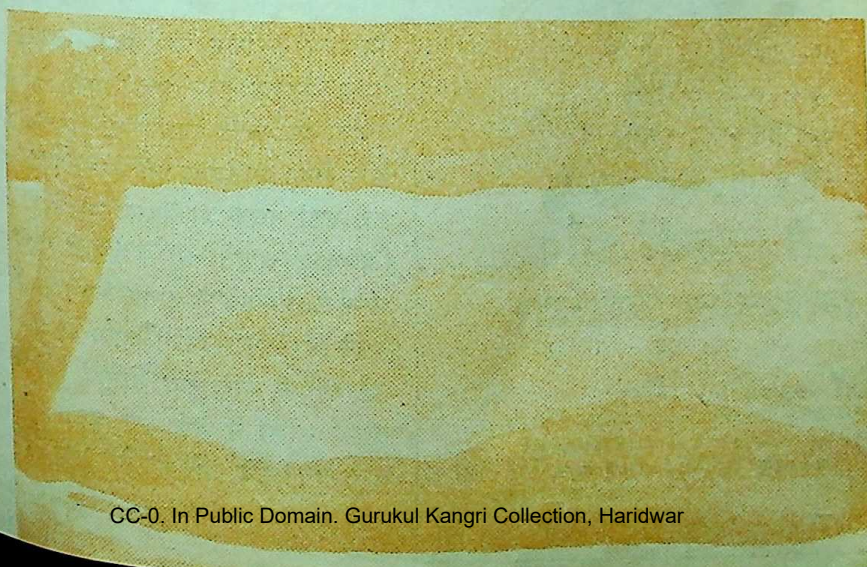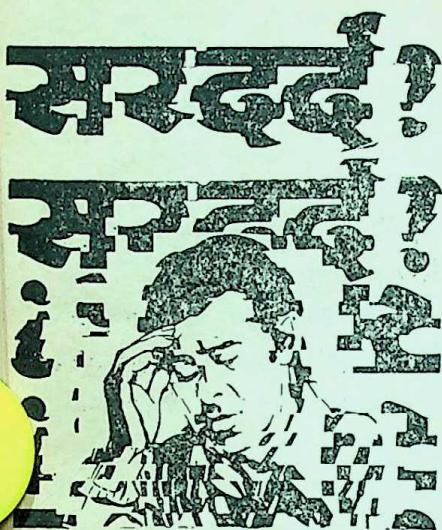
पूंछ पकड़ ली और उसे हवा में हिलोरा। पास ही एक झोपड़ी थी, जहां से बोतल की शक्लवाली एक तुमड़ी लेकर मैंने उसमें सर्प को बंद कर दिया और ऊपर से एक कपड़ा ठूंस दिया।

बंगले पर पहुंचकर, एक खाली कोठरी में, मैंने उसे काठ के संदूक में बंद कर दिया। संदूक के ऊपर जाली लगी थी। पहले तो कुछ दिनों तक, जब मैं उसके पास जाता तो वह फुफकारता और जाली पर फन पटकता, पर बाद में सिर्फ निद्रा भंग होने पर क्रोध प्रदर्शित करता, अन्यथा किसी आहट की परवाह ही नहीं करता। उसकी चमकदार काली चमड़ी के साथ फैले हुए फन पर उजला 'पद-चिह्न' अत्यंत आकर्षक लगता था। यद्यपि वह अभी बच्चा था, फिर भी उसकी लंबाई लगभग ४ फुट थी।

एक सप्ताह बाद मैंने उसे पहली बार बाहर निकाला और अपने लॉन में मुक्त विचरण के लिए छोड़ दिया। मेरे आस-पास घूमता हुआ वह इतना खूबसूरत लगता कि उसके साथ बीता एक-एक क्षण मेरे लिए आनंदप्रद हो उठता। मैं उस पर कड़ी नजर भी रखता था, कहीं भी खिसकना चाहता तो मैं उसकी स्वतंत्रता छीन लेता। जब मैं उसका ध्यान आकर्षित करने के लिए मुट्ठी दिखाता तो वह फन उठाकर न जाने क्या सोचता हुआ चमकीली आंखों से मेरी ओर घूरता। पहली बार मैंने उसे अधिक देर तक बाहर

नहीं रखा।

लगभग सात दिन बाद जब मैंने उसे फिर बाहर निकाला तो वह अधिक नम्र के लिए उसके मुंह में छुरी डाल दी, पर जब मैं बिगड़ा तो उसने छुरी बिना झिझक मुझसे कुछ इंच की दूरी पर बैठ गया और मुझे मनमाना व्यवहार करने दिया। मेरी दोस्ती पक्की हो गयी, विरोध का कोई स्थान नहीं रहा।

चूहा खाना उसे बहुत पसंद था और उछलते हुए पीले मेढक को वह बड़े चाव से खाता था। कभी-कभी, विशेष रूप से चूहों के साथ, वह पहले खेलता, उन पर झपटता और जानबूझकर छोड़ देता। वह अपने शिकार को इतनी तेजी और चालाकी से काटता कि मुझे इसका पता तब चलता जब शिकार मरने लगता। मैं देखता कि चूहा अपने पिछले पैर पर संदूक के किनारे खड़ा है, फिर अकड़ गया और मरकर गिर पड़ा।

चार-पांच सप्ताह के बाद ऐसा होने लगा कि जब सर्प सुस्त और काला पड़ने लगता तो मैं समझ जाता कि वह केंचुल छोड़ेगा। वह संदूक के बगल में अपने मुंह का कोना रगड़ता और थोड़ी चमड़ी फाड़ लेता। मैं उसे बाहर निकालकर उसके केंचुल को फाड़ता जाता। मैं जब तक यह करता वह बिना हिलेडुले चुपचाप पड़ा रहता। मुझे भी ऐसा करने में आनंद आता।

संपेरे उसे देखने आते और मुझे यही सलाह देते कि मैं उसका जहरीला दांत तोड़ दूं या उसकी विषग्रंथि का जहर निकाल दूं। एक संपेरे ने तो विषदंत तोड़ने हो गया था। मुझे आश्चर्य हुआ कि वह संदूक से निकलकर पालतू जंतु की तरह निकाल ली।

मेरे सभी शुभचिंतकों की यही राय हुई कि मैं अपने इस काले नाग को मार डालूं। ऐसी सलाह से मुझे पहले तो बड़ी तकलीफ हुई, पर जब मैंने भी देखा कि वह सुस्त होता जा रहा है, तो एक दिन निश्चय कर ही लिया कि इसे सदा के लिए आजाद कर दूं।

एक वर्ष पहले जहां वह मुझे मिला था, मैं वहीं संदूक को ले गया। धीरे से जाली खोलकर थोड़ी दूर पीछे खड़ा होकर देखने लगा। कुछ क्षणों बाद, सर्प ने फन ऊपर निकाला और चारों ओर के वातावरण का निरीक्षण किया। फिर जल्दी से संदूक से निकलकर वह पानी की धारा के विपरीत चट्टानों पर सरकता हुआ मेरी दृष्टि से ओझल हो गया। उस प्यारे सर्प से अपनी एक वर्ष की दोस्ती को 'अलविदा' कहते हुए मन न जाने कैसा हो रहा था।

—अनु. ललिता नारायण

फिर कोई
जिंदगी के नाम
खत लिखने का हौसला न कर सके

—सुशील गुप्ता
१६२/८३, लेकगार्डन्स, कलकत्ता-४५

विरह की वर्षगांठ

आंसू कितने प्यारे लगते
आज विरह की वर्षगांठ है
मन की छाया वस्त्र बदलकर
खूब लगी तन से बतियाने
प्यास अचानक लगी तानने
शहदीले कुछ ताने-बाने
मुंह मीठा हो गया दर्द का
उदासियों के बड़े ठाठ हैं
महकी कठिन मौन की बरती
अधरों के खिल उठे हाशिए
लज्जा से कुछ लगे बोलने
सिहरन के चंचल दुभाषिए
सूनापन झूले पर झूला
सपनों का जलसा विराट है
झुंझलाहट हो गयी समर्पित
शांत प्रतीक्षामान क्षणों को
लगा उठाने भीतर का तम
बरबस ओढ़े आवरणों को
इच्छाएं सब पावन होकर
बैठीं—करती मंत्र-पाठ हैं

—नारायण लाल परमार
धमतरी, जि. रायपुर (म. प्र.)

खत

जिंदगी के नाम रुख्सत किये गये खत
लावारिस बादलों की तरह
कई-कई दरवाजों से भटकते हुए
डेड लेटर आफिस में जमा हो गये हैं
कभी-कभी ऐसा होता है, न
लिखे हुए पते सही होते हैं
जिंदगी ही अपना ठिकाना बदल देती है
अब लौटे हुए खत की तरह
यह लौटा हुआ प्यार भी
बेहद अपमानजनक है
ऐसा करो मेरे अजीज
इसे शहर के चौराहे पर टांग दो
ताकि
फिर कोई
जिंदगी के नाम
खत लिखने का हौसला न कर सके

—सुशील गुप्ता
१६२/८३, लेकगार्डन्स, कलकत्ता-४५

वासुदेव कृष्ण : एक या अनेक

● जैनेन्द्र वात्स्यायन

वासुदेव-कृष्ण की उपासना की उत्पत्ति और विकास के प्रश्न पर विद्वानों में मतभेद है। संभवत: प्राचीन वैष्णव धर्म के इस पक्ष पर अपेक्षाकृत अधिक शोध भी किया गया है। देवता के रूप में वासुदेव-कृष्ण की उपासना का आरंभ, कुछ प्राचीन पुरातात्त्विक साक्ष्यों के आधार पर, निश्चित किया जा सकता है। ईसापूर्व पहली-दूसरी शती का एक महत्त्वपूर्ण अभिलेख नागरी, जो चित्तौड़ के निकट है, के घोसुण्डी नामक स्थान से प्राप्त हुआ है। इस अभि-लेख में 'सर्वताक' नामक एक व्यक्ति की चर्चा है, जो अपने को 'वासु-देव' और 'संकर्षण' का भक्त बतलाता है तथा अपने लिए 'भागवत' नाम का प्रयोग करता है। वह अपने को 'अश्वमेधयाजी' भी कहता है। इस अभिलेख से प्रमाणित होता है कि सर्वताक कोई ब्राह्मण राजा था।

अभिलेख में संकर्षण और वासुदेव की चर्चा है और उन्हें भगवत, सर्वेश्वर और अनिहत् अर्थात् अजेय कहा गया है। इन देव-ताओं के लिए किसी पूजा-शिला के निर्माण की चर्चा है, जिसे 'नारा-यणवाटिका' कहा गया है: **'संकर्षण-वासुदेवाभ्यां** (अनिहताभ्यां **सर्वेश्वरा) भ्यां पूजा-शिला प्रकारो नारायण-वाटका**।' इसी प्रकार का एक और महत्त्वपूर्ण अभिलेख, जिसका समय ईसापूर्व दूसरी शती है, वेसनगर से प्राप्त हुआ है। यह अभिलेख उसी स्तंभ पर है जिस पर गरुड़ध्वज की स्थापना की गयी है। स्तंभ का शीर्षभाग इस समय प्राप्त नहीं है। उसके अभिलेख से यह मालूम होता है कि यह स्तंभ शुंग नरेश काशीपुत्र भागभद्र के राज्यकाल में निर्मित हुआ और तक्षशिला निवासी दिय का पुत्र हेलियोदोरस, यवन नरेश अंतलिकित का राजदूत बनकर शुंग नरेश भागभद्र की राज्यसभा में उपस्थित हुआ। साथ ही इस अभिलेख से यह भी मालूम होता है कि हेलियोदोरस ने वैष्णव धर्म की दीक्षा ली थी। हेलियोदोरस ने अपने को इस अभिलेख में भागवत और भगवत् देव वासुदेव का भक्त कहा है।

ईसापूर्व की प्रथम शती के सातवाहन नरेश सातकर्णि प्रथम की धर्मपत्नी नागानिका का नानाघाट अभिलेख है, जो विभिन्न देवताओं की प्रार्थना से आरंभ होता है। इसमें संकर्षण और वासुदेव का नाम भी गिनाया गया है। अभिलेख के संदर्भ में थोड़े बाद के

से प्राप्त शक राजा सोडास का अभिलेख, जिसमें भगवत वासुदेव के महास्थान में तोरण, देवकुल आदि बनाने की चर्चा है। (**वसुना भगवतो वासुदेवस्य महास्थान (के देवकु) लं तोरणं वे (दिका प्रति) ष्ठापितं (तम्)**

इस प्रकार अभिलेखीय साक्ष्यों से यह प्रमाणित होता है कि वासुदेव-कृष्ण की उपासना ईसापूर्व की प्रथम शती तक चारों ओर फैल चुकी थी और गुप्तकाल तक आते-आते यह उपासना का एक मुख्य केंद्र बन गयी।

श्रीकृष्ण जन्मभूमि, मथुरा
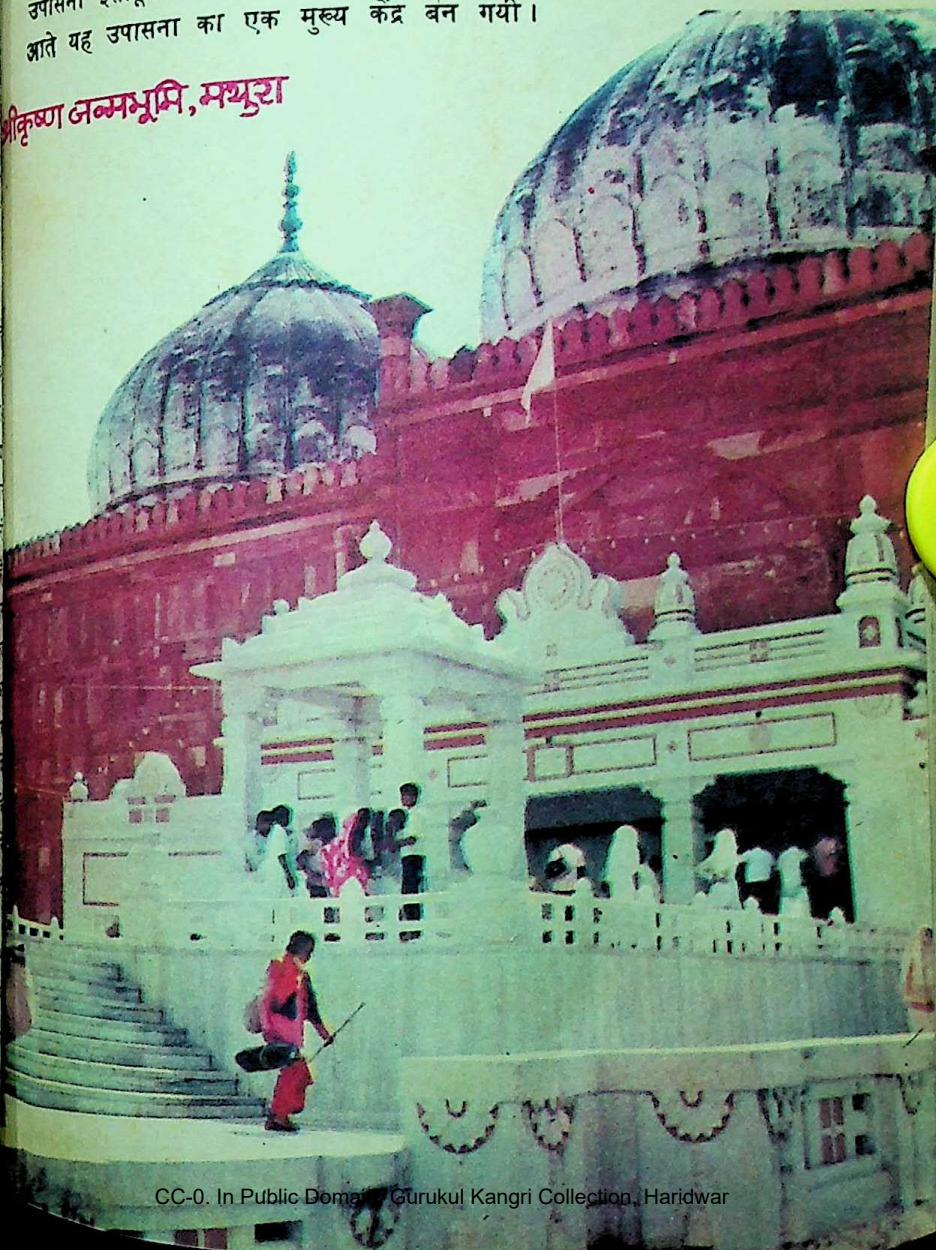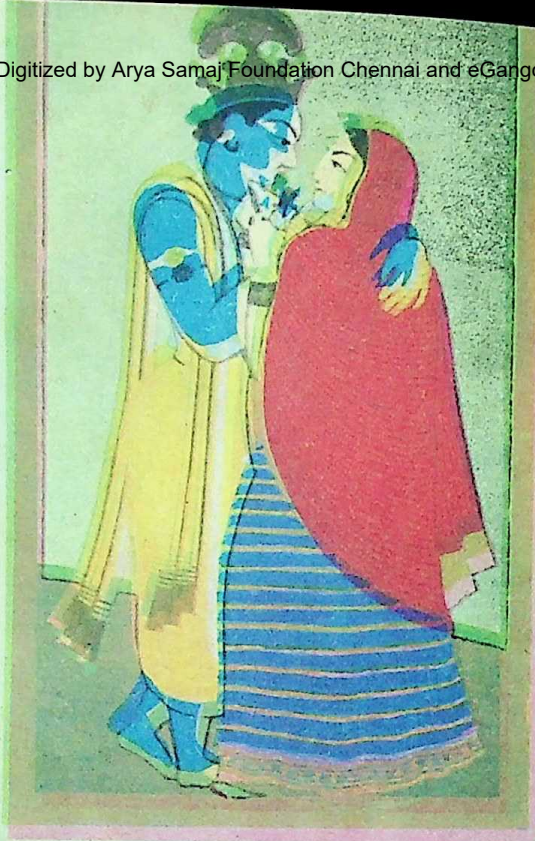
ऊपर : राधा और कृष्ण
(पहाड़ी शैली)
नीचे : श्रीकृष्ण द्वारा अरिष्टासुर नामक महाकाय दैत्य वृषभ का वध
(पहाड़ी शैली, समय १७६० ई.)

—भारत कला भवन, वाराणसी के सौजन्य से

साहित्यिक साक्ष्यों, यदि 'महाभारत' को न भी लें तो पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' के अतिरिक्त कुछ अन्य साक्ष्यों का भी नाम लिया जा सकता है। पतंजलि के 'महाभाष्य' में विभिन्न रूपों में वासुदेव-कृष्ण के देवत्व के उल्लेख हैं। एक स्थान पर स्पष्ट रूप से वासुदेव को देवता माना गया है और एक क्षत्रिय वासुदेव तथा देवता वासुदेव में थोड़ा भेद किया गया है। यद्यपि यह संदर्भ इसका निश्चित प्रमाण नहीं है कि देवता वासुदेव और वृष्णिकुल के वासुदेव, दोनों भिन्न-भिन्न कुल के थे। जो विद्वान वासुदेव-कृष्ण को प्रारंभ में एक ऐतिहासिक व्यक्ति और बाद में देवता के रूप में विकसित कल्पना मानते हैं उनको भी 'महाभाष्य' के इस उद्धरण से कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। पतंजलि के 'महाभाष्य' से यह लगता है कि वासुदेव क्षत्रिय नाम भी है और देवता का भी। यद्यपि प्राचीन पालि ग्रंथ अंगुत्तर निकाय में जहां एक स्थान पर उस काल की धार्मिक मान्यताओं का उल्लेख है वहां वासुदेव की पूजा की चर्चा नहीं है, पर पालि ग्रंथ 'निद्देश', जिसे बौद्ध साहित्य में बुद्ध वचन के समान ही महत्त्व प्राप्त है, विभिन्न प्रकार के देवताओं की पूजा का उल्लेख करते हुए वासुदेव और बलदेव की पूजा का भी उल्लेख करता है। इस ग्रंथ के काल के विषय में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। डॉ. भाण्डारकर ने इसे ईसापूर्व चौथी सदी का माना है तथा कुछ विद्वानों ने इसे पहली शती पूर्व का माना है।

इस प्रकार के प्रमाणों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि कम से कम पाणिनि के समय में, जिसे ईसा पूर्व पांचवीं-छठी शती के पूर्व रखा जाता है, वासुदेव पूजा का उदय हो चुका था। इनके पूजक प्रायः अपने को भागवत कहते थे। वासुदेव-कृष्ण की पूजा का इतिहास इसके पूर्व कहां तक ले जाया जा सकता है अथवा किस तरह इस देवता का विकास हुआ, इस विषय में कुछ भी कहना कठिन है। डॉ. भाण्डारकर के अनुसार वासुदेव शायद ऐतिहासिक व्यक्ति थे और यह नाम किसी वृष्णिवंशी व्यक्ति का था। उनका अनुमान है कि अकेले वासुदेव शब्द से ही पिता और पुत्र दोनों का बोध होता है, इसलिए यह मानना ठीक नहीं है कि देवता वासुदेव का नाम तथाकथित पिता वसुदेव के नाम पर पड़ा है। डॉ. भाण्डारकर कृष्ण नाम को एक गोत्र का नाम मानते हैं। इस अनुमान की पुष्टि एक बौद्ध जातक कथा और उससे प्राप्त एक व्याख्या के आधार पर होती है। कृष्ण नाम एक ब्राह्मण गोत्र का नाम हो सकता है, इसलिए डॉ. भाण्डारकर ने वैदिक साहित्य में ऋषि परंपराओं की ओर संकेत किया है।

ऋग्वेद के आठवें मंडल के एक सूक्त में एक ऋषि का नाम कृष्ण है। परवर्ती ग्रंथों के अनुसार यह कृष्ण आंगिरस-

परिवार का था। कौशीतिकी ब्राह्मण में भी एक कृष्ण अंगिरस की चर्चा है। पाणिनि के सूत्र से संबद्ध गणपाठ में कृष्ण एवं रण से 'कार्ष्णायण' एवं 'रामायण' गोत्र नाम बनाये गये हैं। ये दोनों ब्राह्मण गोत्र हैं। फिर 'छांदोग्य' उपनिषद (३।१७।६) में देवकी-पुत्र रूप में कृष्ण नाम मिलता है। वे घोर आंगिरस के शिष्य थे। प्राचीन काल में यह पद्धति थी कि क्षत्रिय यजमानों के साथ-साथ उनके ब्राह्मण गोत्र के नाम भी जुट जाते थे। इसीलिए डॉ. भाण्डारकर ने यह अनुमान लगाया कि वासुदेव का कृष्ण नाम बाद में पड़ा है किंतु इस विचार से सहमत नहीं हुआ जा सकता। वासुदेव और कृष्ण एक ही व्यक्ति के नाम हैं। कृष्ण उनके सांवले वर्ण का द्योतक है। इसी प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि वासुदेव नाम, पिता वसुदेव के नाम पर आधारित होना, जैसा कि पौराणिक कथाओं में मिलता है, असंभव नहीं है। प्राचीन काल में माता-पिता के नाम पर नामकरण करने की पद्धति प्रचलित थी।

मेगस्थनीज के कुछ वक्तव्यों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि ईसापूर्व चौथी शती में वासुदेव कृष्ण की पूजा प्रचलित रही होगी। उसके अन्य उल्लेखों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उत्तर भारत में विशेषकर मथुरा प्रदेश में कृष्ण पूजा की परंपरा रही होगी। वैदिक साहित्य में वृष्णि और कृष्ण के अलावा अन्य स्थल पर भी कृष्ण का नाम आता है जहां पर उन्हें एक लंबी संख्या [illegible] योद्धाओं के साथ यमुना नदी के कि[illegible] इंद्र से युद्ध करने के लिए उपस्थित बता[illegible] गया है। यह कथा महत्त्वपूर्ण लगती [illegible] और इसकी पूरी संभावना है कि म[illegible] भारत और पुराणों के वासुदेव-कृष्ण [illegible] इस वैदिक कृष्ण से अवश्य कोई सं[illegible] होगा, क्योंकि पौराणिक कथाओं में [illegible] कृष्ण का इंद्र के साथ विरोध है जैसा [illegible] पारिजात हरण और गोवर्धन-धारण [illegible] कथाओं से प्रकट होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कृ[illegible] की एक लंबी परंपरा है, जो ऋग्वेद [illegible] एक ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में प्रा[illegible] होती है और महाभारत की रचना [illegible] के समय में आकर देवत्व को प्राप्त [illegible] लेती है। यदि इसे सत्य मान लिया [illegible] तो वासुदेव कृष्ण का इतिहास ईसा [illegible] की ७ वीं—६ ठी शताब्दी तक सर[illegible] से ले जाया जा सकता है। यह क[illegible] कठिन है कि देवता रूप में वासुदेव [illegible] का विकास इसलिए हुआ कि वे परि[illegible] के एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे और [illegible] धीरे उनका दैवीकरण हुआ अथवा [illegible] लिए कि उन्होंने कोई धार्मिक आंदो[illegible] प्रारंभ किया जो एकेश्वरवादी था [illegible] भक्ति की शिक्षा देता था। बाद में कृष्ण [illegible] उनके इष्ट देवता से तादात्म्य कर [illegible] गया और पूजा की परंपरा बनी रही।

—द्वारा कलाधरप्रसाद एंड [illegible]
नीचीबाग, वाराणसी-२२१०[illegible]

व्यंग

मिश्र बंधुओं का युग

● रवीन्द्रनाथ त्यागी

हिंदी-प्रेमी होने के नाते मुझ यह अनुभव करते हुए परम सुख प्राप्त होता है कि मिश्रबंधुओं का युग हमारे बीच फिर से आ गया। पुराने जमाने में मिश्रबंधुओं की संख्या केवल तीन थी और स्थिति यह थी कि सारा काम इन्हीं तीन व्यक्तियों को करना पड़ता था। उन्होंने ही हिंदी के नवरत्नों की खोज की और उन्हीं बेचारों ने देव को विहारी से ऊंचा उठाकर एक एसा विवाद खड़ा किया कि बाबू गुलाबराय के शब्दों में, साहित्य में सजीवता नाम की स्थिति प्रकट हो गयी। मेरा निजी मत यही है कि मिश्रबंधु भी उठाना विहारी को ही चाहते थे, मगर विहारी थे भारी और मिश्रबंधु थे मात्र तीन। नतीजा वही हुआ जो होना था; देव ऊपर उठ गये। जहां तक बेचारे बिहारी का प्रश्न है, वे वहीं 'बिहार' में रह गये। पद्मसिंह शर्मा ने मौके का फायदा उठाया और इस विवाद को इतना तूल दिया कि कि वह एक आंदोलन बन गया जिसके माध्यम से उन्होंने बिहारी और देव के साथ अपना नाम भी किसी हद तक अमर कर लिया।

खैर, मिश्रबंधुओं की संख्या भले ही तीन रही हो पर यह एक निश्चित सत्य है कि वे तीनों अपना सारा काम अलेक्जेंडर ड्यूमा के तीन बंदूकचियों की भांति विधिवत बांट कर करते थे। प्रत्येक की जिम्मेदारी बराबर रहती थी। वे हर काम को बराबर-बराबर बांटा करते थे और उसे इस प्रकार करते थे कि कहीं-कहीं तो सामूहिक खेती का आनंद आ जाता था। यशपाल ने मिश्रबंधुओं को अपनी एक कहानी सुनायी थी, जिसे टुकड़े-टुकड़े करके तीनों बंधुओं ने अलग-अलग बारी-

बारी से इस ईमानदारी से सुना था कि वह घटना स्वयं में एक कहानी बन गयी।

इन दिनों मिश्रबंधुओं की संख्या सहस्त्रों में है और वे देव और बिहारी तो क्या, उनकी नायिकाओं तक को उठा रहे हैं। जिस किसी पदार्थ को लीजिए उसमें मिश्रण किया जा रहा है और मिश्रण करने वाली इन विभूतियों को यदि मिश्रबंधु नहीं कहेंगे, तो क्या बाबू श्यामसुंदर दास कहेंगे? सरसों के तेल में किसी और वस्तु का तेल मिश्रित किया जा रहा है जिससे जलोदर नामका साहित्यिक रोग संक्रामक रूप से फैलने लगा है। इन आदरणीय मिश्रबंधुओं के सामने पुराने तीन मिश्रबंधु कहीं नहीं टहर पाते। ये नये लोग तो इतने होनहार हैं कि यदि आंखों में धूल भी झोंकेंगे तो उसमें भी मिलावट होगी।

मिश्रण का वर्तमान युग ऐसा स्वर्ण युग है कि जहां कोई भी वस्तु किसी दूसरी वस्तु से मिलायी जा सकती है। विरोधी पार्टियां सत्ता से सांठगांठ करने को हाजिर हैं। ठेकेदार, इंजीनियर के भीतर बर्म की तरह घुसा जा रहा है और लड़के लोग जो हैं वे लड़कियों से इतने मिश्रित होते जा रहे हैं कि थोड़े दिनों बाद उन्हें एक-दूसरे से अलग देखने के लिए संभवतः सूक्ष्मदर्शी की सहायता लेनी पड़े।

गाय का नाम आपने सुना ही होगा। संस्कृत में इसे धेनु भी कहते हैं। गाय हमें दूध देती है जो कि भैंस के दूध से पतला

होता है। आप लोगों के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए दयालु ग्वाले इस दूध को अधिक पतला करने के लिए उसमें पानी मिलाते हैं। एक ग्वाला था, जो रोज दूध में पानी मिलाता था और रोज कसम खाकर कहता था कि उसने ऐसा कभी नहीं किया। कसम वह सच्ची ही खाता था क्योंकि वह दूध में पानी नहीं मिलाता था; बल्कि पानी में दूध मिलाता था जो और भी ऊंचे दर्जे की कला है। मेरे खयाल से उस ग्वाले को वकील बनना चाहिए था ताकि अदालत में दूध का दूध और पानी का पानी अलग-अलग कर सकता।

गाय के साथ-साथ आपने सोने का नाम भी शायद सुना हो। हाल ही में की गयी खुदाइयों से पता लगा है कि सोना एक प्रकार की धातु होती थी जिससे राजाओं के मुकुट और रूपवती युवतियों के गहने बनते थे। आजकल सोने के सिर्फ बिस्कुट बनते हैं।

छायावादी कवि तो सोने के तार-सा दिन ही खींचते रहे, जब कि रीतिकालीन कवियों ने सोने का इतना उपयोग किया जितना शायद नायिकाओं का भी नहीं। कुछ कन्याएं कनकछड़ी हो गयीं।

बहरहाल, बात यह है कि मैं गाय को भी जानता था और सोने को भी। मगर धेनु और धन के संबंध कितने घनिष्ठ हो सकते हैं यह मैंने कभी नहीं सोचा था। इन गुप्त-संबंधों का एहसास मुझे उस दिन हुआ जिस दिन अखबार में पढ़ा कि लुधि-

याना के पास एक गाय के पेट से सोने के आभूषण निकले। कितनी महान आत्मा थी! जहां शेष धेनुएं दूध और बछड़ा ही देती हैं, वहां इस स्वर्णगर्भा धेनु के पेट से यह कीमती खजाना निकला। अब तो सचमुच लगता है कि हमारा देश शायद वास्तव में ही सोने की चिड़िया है; अगर कहीं और सोना न मिला तो गाय माता की शरण ले ली। गाय सच्चे अर्थों में हमारी जननी रही। मेरी तो स्थिति इधर ऐसी हो गयी है कि जहां कहीं भी किसी गाय को जाते देखता हूं, यही सोचने लगता हूं कि शायद इसके भीतर भी सोना छिपा हो। परिणाम यह होता है कि इधर गाय देखी और उधर मैंने कवि पंत की वाणी में चिल्लाना शुरू किया:

ओ रंभाती नदियो
शुभ्र प्रेरणा धेनुओ
तुम जिस वत्स के लिए व्यालकु हो
वह मैं ही हूं ●

स्वतंत्रता की आकांक्षा के प्रतीक तीन युद्ध

• डॉ. सुरेश मिश्र

मेराथन, ग्रीस का वह स्थान है जहां आज से लगभग पच्चीस सौ वर्ष पहले फारस के अखामनी साम्राज्य की विशाल सेना को ग्रीस के वीर सैनिकों ने पराजित कर ग्रीस की स्वतंत्रता की रक्षा की थी। तब से मेराथन ग्रीस की स्वतंत्रता का प्रतीक हो गया।

तब ग्रीस राजनीतिक आदर्शों, कला और संस्कृति का केंद्र था। भूमध्यसागर और एजियन सागर से घिरा यह पहाड़ी प्रदेश तब अनेक छोटे-छोटे नगर-राज्यों में बंटा था, जिनमें स्पार्टा और एथेंस प्रमुख थे।

फारस में बीस साल के शासन के बाद जब वहां का शासक साइरस मरा तब उसका साम्राज्य एजियन सागर से कैस्पियन सागर तक और कालेसागर से अरब के मरुस्थल तक था। उसके पुत्र कैंबेसिस ने अपने आठ साल के शासन में मिस्र पर कब्जा कर लिया और उसके उत्तराधिकारी डेरियस ने बासफोरस की खाड़ी को पार कर बालकन प्रायद्वीप के थ्रेस और मेसीडोनिया को भी अपने साम्राज्य में शामिल कर लिया। केवल एक महत्त्वपूर्ण राष्ट्र उसके विशाल साम्राज्य के बाहर रह गया था— वह था ग्रीस।

डेरियस को ग्रीस पर आक्रमण करने का बहाना मिल गया। एथेंस के निष्कासित तानाशाह हिप्पियास ने डेरियस से सहायता मांगी। दूसरे, एशिया माइनर के आयोनियन नगरों के ग्रीकों ने फारस के शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। प्रमुख विद्रोही नगर मिलेटस ने एथेंस की सहायता से फारस की सेनाओं से डटकर लोहा लिया, किंतु मिलेटस टिक न सका। फारस की सेनाओं ने वहां के निवासियों के खून से धरती लाल कर दी। एथेंस के कवि फ्रिनिकस ने जब इस विनाश-लीला को एक त्रासदी के रूप में प्रस्तुत किया तो एथेंस के लोग बिलख-बिलखकर रोने लगे। इस पर एथेंस की जनता को दुःखी करने के अपराध में एथेंस के शासन ने नाटककार पर १,००० द्रख्म का जुरमाना कर दिया।

डेरियस ने इस संदेश के साथ अपने दूत एथेंस और स्पार्टा भेजे कि वे फारस की अधीनता स्वीकार कर लें, पर ग्रीस के इन नगर राज्यों ने उस समय के प्रचलित नियमों के विरुद्ध दोनों दूतों को मार डाला। तब डेरियस ने (४९१ ई. पू.

६०० जहाजों में लगभग एक लाख सैनिक एथेंस पर चढ़ाई के लिए रवाना कर दिये। यह बेड़ा एशिया माइनर से एजियन सागर को सीधे पार कर ग्रीस पहुंचा और फारसी सैनिकों ने एथेंस से २२ मील उ. पू. में स्थित मेराथन के मैदान में अपने शिविर गाड़ दिये। स्पार्टा की राह देखे बिना ही वीर मिलिटिएड्स के नेतृत्व में एथेंस की बीस हजार सेना ने आक्रां-

थर्मापली की रणभूमि

ताओं से टक्कर ली। समुद्र और पहाड़ियों से घिरे मेराथन के मैदान में स्थित फारसी सेना पर एथस की सेना ने एक सकरे रास्ते से आगे बढ़कर स्वय आक्रमण किया। जल्द ही फारस के सैनिकों को पराजित हो अपने जहाजों की शरण लेनी पड़ी।

ग्रीक इतिहासकार हेरोडोटस कहता है कि फारस के ६,४०० सैनिक मारे गये, किंतु एथेंस की सेना के सिर्फ १९२ सैनिक मरे। मेराथन में शहीद हुए ग्रीक सैनिकों की स्मृति में एक विशाल टीला आज भी विद्यमान है। मिलिटिएड्स ने विजय की सूचना एथेंस भेजने के लिए फिलिप्पाइड्स नामक दौड़ाक को रवाना किया। फिलिप्पाइड्स ने २२ मील की दूरी बिना रुके दौड़कर तय कर डाली और आतंकित एथेंसवासियों को विजय का समाचार

मेराथान की रणभूमि

देकर वह निढाल हो भूमि पर गिर पड़ा और मर गया। राबर्ट ब्राउनिंग ने अपनी एक कविता में इस घटना का चित्रण बड़े मार्मिक ढग से किया है।

मेराथन एथेंस के गौरव का प्रतीक बन गया। इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि महान ग्रीक नाटककार एस्किलस की समाधि पर जो लेख है उसमें उसके नाटककार होने का उल्लेख नहीं

है, बल्कि यह अंकित है कि वह मेराथन में लड़ चुका था।

मेराथन की विजय से मिलिटिएड्स को जो प्रशंसा मिली उसने उसे उद्दंड बना दिया। फलस्वरूप एथेंस ने उसे अपदस्थ कर उसके स्थान पर एरिस्टाइड्स को चुना। एरिस्टाइड्स के भी शत्रु कम नहीं थे और उसका एक प्रतिद्वंद्वी थेमिस्टोक्लीज मेराथान का वीर भी था। स्टेसिलास नामक सुंदर बाला के प्रेम की प्रतिद्वंद्विता ने उनके बीच खाई और चौड़ी कर दी। अंत में एरिस्टाइड्स को हटाकर थेमिस्टोक्लीज सत्तारूढ़ हुआ। वह जानता था कि फारस अपनी पराजय का कलंक धोने के लिए दूसरा आक्रमण करेगा। अत: उसने तेजी से सुरक्षा की तैयारियां प्रारंभ कर दीं।

जरक्सीज का आक्रमण

उधर फारस में डेरियस की मौत के बाद (४८५ ई. पू.) जरक्सीज प्रथम सिंहासनासीन हुआ। वह ग्रीस पर आक्रमण करने के लिए कृतसंकल्प था। जरक्सीज की तैयारियों से स्पार्टा बड़ा आतंकित हुआ। अब उसे पश्चाताप हुआ कि उसने फारस के दूतों की हत्या कराके अंतर्राष्ट्रीय परंपरा का उल्लंघन किया था। उसने स्पार्टा के दो नागरिकों को जरक्सीज के दरबार में इसलिए भेजा कि जरक्सीज उनकी हत्या करके अपने दूतों की हत्या का बदला ले ले। इतिहासकार हेरोडोटस लिखता है कि जरक्सीज ने इस अवसर पर अपनी महानता के अनुकूल उत्तर दिया। उसने कहा कि वह दूतों को मारकर स्पार्टा और एथेंस के समान अंतर्राष्ट्रीय नियम का उल्लंघन नहीं करेगा।

चार वर्ष जरक्सीज ग्रीस पर आक्रमण की तैयारी करता रहा। फिर वह इतनी विशाल सेना लेकर चल पड़ा जितनी संभवत: प्रथम महायुद्ध के पहले संसार के किसी भी देश में एकत्र नहीं हुई थी। साम्राज्य के हर हिस्से से सैनिक एकत्र किये गये— ईरानी, मीड, बेबीलोनियन, अफगान, बैक्ट्रियन, असीरियन, आरमीनियन, आयोनियन, लीडियन, फिनीशियन, सीरियन, अरब, मिस्री, ईथोपियन आदि हेरीडोस के अनुसार उस सेना में २६ लाख ४१ हजार सैनिक थे और बड़ी संख्या में इंजीनियर, दास और व्यापारी थे। १२०७ जहाजों का एक बेड़ा साथ में चला। हेरीडोटस ने जो संख्या दी है वह अविश्वसनीय लगती है। शायद पांच लाख सैनिक रहे होंगे। कुछ विद्वान यह संख्या १ लाख ८० हजार बताते हैं।

इतनी विशाल सेना का व्यय भी असाधारण था। थासोस नामक एक नगर ने जरक्सीज की सेना के एक दिन के खर्च के लिए लगभग ४० लाख रुपयों के बराबर धन खर्च किया। यह विशाल सेना हेलेस्पांट की खाड़ी पहुंची। इस संकरी समुद्री पट्टी को पार करने के लिए मिस्र और फिनीशिया के इंजीनियरों ने नौकाओं का पुल बनाया , लेकिन एक तेज तूफान

ने पुल के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। दोबारा पुल बनाने का आदेश दिया गया। दो पुल बनाये गये, जिनमें ३१४ और ३६० नौकाएं लगीं। नौकाओं को थोड़ी-थोड़ी दूर रखकर लंगर डालकर स्थिर कर दिया गया और उन्हें परस्पर मोटी रस्सियों से जकड़कर बांध दिया गया। झाड़ काट-कर उन्हें नौकाओं पर तथा दो नौकाओं के बीच बंधी रस्सियों पर रखकर बांध दिया गया। पुल पार करने में सेना को सात दिन और सात रातें लगीं।

हेलेस्पांट को पार करने के बाद जर-क्सीज थ्रेस और मेसीडोनिया को पार कर थेसली पहुंचा। सेना के साथ-साथ समुद्रतट से लगकर जहाजी बेड़ा भी चल रहा था। फारसी सेना के आगमन का समाचार सुन सारे ग्रीस में तहलका मच गया। फारस की सेना से जूझने के लिए पहली बार एथेंस और स्पार्टा संयुक्त हुए। अन्य ग्रीक नगरों ने भी यथाशक्ति सहायता दी। एथेंस ने फारसी जहाजी बेड़े का मुकाबला करने के लिए प्रयाण किया और स्पार्टा का शासक लियोनिडास थलसेना लेकर युद्ध करने चला। ग्रीक जलसेना का नेता थेमिस्टोक्लीज था। दोनों बेड़ों में मुठभेड़ हुई, किंतु निर्णय न हो सका।

उधर फारसी सेना थलमार्ग से थर्मा-पली नामक स्थान पर पहुंची। आज थर्मा-पली कम से कम तीन मील चौड़ा मैदान है, जो पास की एक नदी के द्वारा छोड़ी गई मिट्टी से बना है। लेकिन, तब वह पहाड़ियों और समुद्र के मध्य केवल फुट चौड़ी भूमि की पट्टी मात्र

थर्मापली : सभी ३०० स्पार्टन

थर्मापली में लियोनिडास अपने छह ह सैनिकों के साथ डटा हुआ था। चार तक जरक्सीज आक्रमण की घात में र अंत में युद्ध शुरू हुआ। विशाल संख्या बावजूद फारसी सैनिक आगे नहीं सके, लेकिन तभी एक ग्रीक देशद्रोही फारसियों को वह गुप्त रास्ता बता जिसके द्वारा फारसी सेना ग्रीक सेना एकदम पीछे आ गयी। इस संकट में लियोनिडास ने धीरज न खोया। अपनी सेना का एक बड़ा हिस्सा फा सेना से लड़ने के लिए पीछे भेज दिया सिर्फ तीन सौ स्पार्टन सैनिकों के संकरे रास्ते की रक्षा करने के लिए रहा। ये तीन सौ सैनिक प्रौढ़ थे। लियो डास ने युवकों के बदले उनके पिताओं इसलिए चुना था कि उनके बेटे अपने को सुरक्षित रख सकें। ये तीन सौ स्पार्टन सैनिक बीस हजार फारसी सैनि से भिड़ पड़े और युद्ध में असाधारण वी प्रदर्शित कर उन्होंने इतिहास में अमिट छाप छोड़ी। थर्मापली पर सियों का अधिकार हो गया। तीन स्पार्टन सैनिकों के मकबरे पर प्रसिद्ध उक्ति अंकित की गयी—"ऐ पथि जाओ और स्पार्टा तथा एथेंस के को बताना कि हम उनके कानून के में यहां पड़े हुए हैं।"

थर्मापली की पराजय के उपरांत एथेंस की स्थिति संकट में पड़ गयी। एथेंसवासियों को आदेश दिया गया कि वे जिस प्रकार हो सके अपने परिवार की रक्षा करें। ऐसे संकट के समय भी एथेंस की जनता में धीरज और शौर्य की कमी नहीं थी। एथेंसवासी माल-असबाब लेकर नौकाओं और जहाजों में बैठकर एथेंस छोड़ कर चले गये। जब जरक्सीज एथेंस पहुंचा तब एथेंस खाली था। उसने एथेंस को लूटने का आदेश देकर क्रोध शांत किया।

सालमीस : ग्रीक जलसेना की विजय

थर्मापली की विजय के उपरांत फारस का जहाजी बेड़ा एथेंस के पश्चिम में सालमीस के पास एकत्र हुआ। १२०७ फारसी जहाजों का मुकाबला करने के लिए तीन सौ ग्रीक जहाज खड़े थे। युद्ध प्रारंभ हुआ, किंतु अधिक संख्या में होने के कारण फारसी जहाजों की व्यवस्था भंग हो गयी। संकरे समुद्र में सरलता से इधर-उधर न जा सकने के कारण वे आपस में ही टकराने लगे और प्रभावहीन हो गये। उधर अपेक्षाकृत छोटे जहाजों के बहादुर ग्रीक नाविकों ने फारस के कितने ही जहाजों को क्षत-विक्षत कर फारसी बेड़े को पराजित कर दिया। आक्रांताओं के दो सौ जहाज और ग्रीस के मात्र चालीस जहाज नष्ट हुए। फारसी बेड़े की पराजय ने उनकी थर्मापली की विजय को निरर्थक कर दिया, क्योंकि जलसेना नष्ट हो जाने के कारण थलसेना को बनाये रखना असंभव हो गया।

इसके बाद की कहानी बड़ी संक्षिप्त है। जरक्सीज तो लौट गया, पर एक विशाल फारसी सेना मारडोनियस के अंतर्गत ग्रीस में छोड़ गया। जलसेना के बिना इस विशाल सेना का अस्तित्व खतरे में पड़ गया। सालमीस के युद्ध के एक साल बाद एथेंस के उत्तर-पश्चिम में प्लाटिया नामक स्थान में ग्रीस की सेना ने मारडोनियस को करारी मात दी, जिसमें मारडोनियस मारा गया। उधर जरक्सीज के नाविक बेड़े का पीछा करते हुए ग्रीस का बेड़ा एशिया माइनर जा पहुंचा था। वहां माइकेल के बंदरगाह पर फारस के बेड़े को उसने अंतिम रूप से पराजित किया। फारसी बेड़ा पूर्णतः नष्ट कर दिया गया और बासफोरस तथा हेलेस्पांट को ग्रीस ने उसी प्रकार जीत लिया जैसे सात सौ साल पहले उन्होंने ट्राय से उन्हें जीता था।

फारस की पराजय से यूरोप अपनी स्वतंत्र आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था विकसित कर सका। ग्रीस भी भावी यूरोप के लिए स्वतंत्र विचारों और प्रजातांत्रिक राजनीतिक संगठनों के आदर्श विकसित कर सका।

वस्तुतः मेराथन, थर्मापली और सालमीस के युद्ध मानवमात्र की स्वतंत्रता की उद्दाम आकांक्षा के प्रतीक बन गये हैं।

—सहायक प्राध्यापक,
इतिहास विभाग, शासकीय महाविद्यालय,
मंडला (म. प्र.)
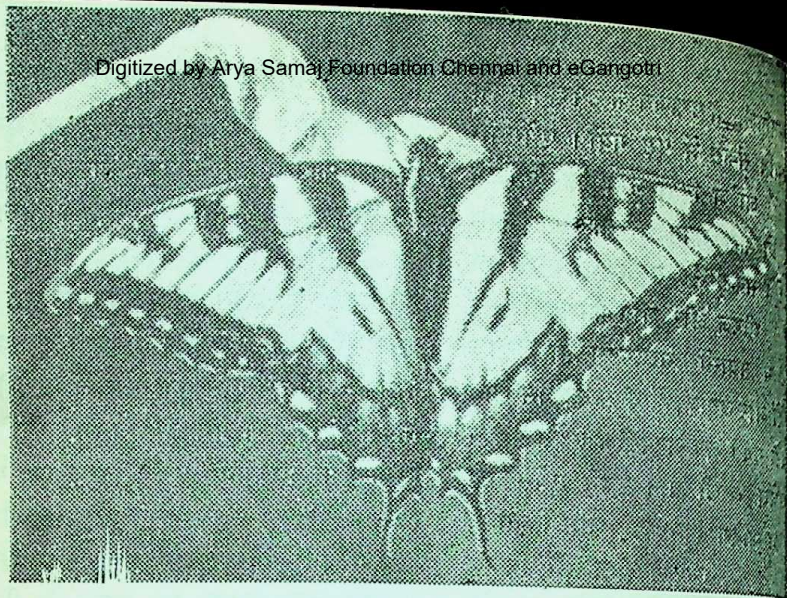
प्राणियों के प्रणय में गंध

• मनोहरलाल वर्मा

गंध से मनुष्य ही नहीं, छोटे-छोटे जीव तक प्रभावित होते हैं। सच तो यह है कि मनुष्य की अपेक्षा अनेक जीव-जंतु, जैसे चींटी, मधुमक्खी, कुत्ता आदि इससे अधिक प्रभावित होते हैं। कुत्ते तो गंध से ही जासूसी का कार्य करते हैं और चोर तथा हत्यारे को पकड़ने में सहायक होते हैं। मादा-पतिंगा अपनी गंध से नर-पतिंगों को वासना-पीड़ित कर देती है।

जरमन वैज्ञानिक हेनरी फेब्रे की प्रयोगशाला में एक मादा-पतिंगा प्रयोग के लिए रखी गयी थी। फेब्रे का बेटा संध्या समय दौड़ता हुआ आया और बोला, "पापा, कमरे के बाहर पतिंगों की बाढ़-सी आ गयी है।"

हेनरी फेब्रे सोचने लगे कि ये पतिं[illegible] प्रयोगशाला में जाने के लिए इतने आतु[illegible] क्यों हैं? बाद में वे इस निर्णय पर पहुं[illegible] कि गंध ही इसका कारण है, जो माद[illegible] पतिंगे के शरीर से निकलती है।

कई प्रयोगों के पश्चात यह पता च[illegible] कि नर-पतिंगों में पंख की भांति ऐंटे[illegible] होते हैं, जिनके द्वारा उन्हें गंध का अनु[illegible] होता है और वे मादा-पतिंगों की तला[illegible] में चल पड़ते हैं। जिन नर-पतिंगों [illegible] ऐंटेना काट दिये गये वे मादा-पतिंगों [illegible]

नहीं पहुंच सके।

फेब्रे ने प्रयोगशाला में सलफर डाई-आक्साइड तथा अन्य तीव्र गंधवाले पदार्थ रखे ताकि हलकी गंध दब जाए, परंतु इसके बावजूद नर-पतिंगे शीशे के बरतन में रखी हुई मादा के पास पहुंचकर फड़-फड़ाने लगे। इससे यह निष्कर्ष निकला कि मादा-पतिंगे की गंध-तरंगें दूर-दूर तक पहुंच जाती हैं।

स्विस वैज्ञानिक आगस्ट फारेल के अनुसार मादा-पतिंगे की गंध मीलों दूर के नर-पतिंगों को आकर्षित कर लेती है। एक प्रयोग में देखा गया कि एक नर-पतिंगा छह मिनट में एक मील उड़कर मादा के पास पहुंच गया।

अनेक जीवों में गंध कामोद्दीपक होती है। मादा अपनी गंध से नर को मोहित करती है तो नर-पतिंगा भी अपने शरीर से कामोत्तेजक गंध का स्राव करता है।

अनेक तितलियों एवं पतिंगों के शरीर में गंध-ग्रंथियां होती हैं जो मादा के निक

मादा पतिंगों की गंध त

...गर'
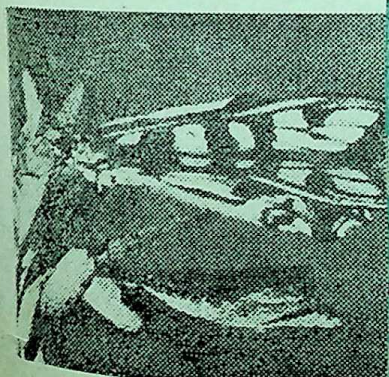
आने पर स्वयं बाहर निकल आती हैं। मनुष्य को इन गंधों की पहचान नहीं होती, क्योंकि हमारी सूंघने की शक्ति इतनी तीव्र नहीं है कि उन गंधों को पकड़ सके।

प्रकाश द्वारा प्रणय-संदेश

मानव-जाति में प्रणय संदेश का आदान-प्रदान हावभाव, भ्रू-भंगिमा एवं कटाक्ष आदि द्वारा होता है। प्रकृति ने कुछ कीटों में अपने भावों को व्यक्त करने के लिए प्रकाश दे रखा है। प्रकाश द्वारा ही वे अपना प्रणय-संदेश भेजते हैं।

जुगनू अपना प्रणय-साथी खोजने के लिए गंध और प्रकाश दोनों की सहायता लेता है। एक मादा-जुगनू को कार्डबोर्ड के डिब्बे में बंद कर दिया गया ताकि प्रकाश बाहर न दिखायी दे। दूसरे प्रयोग में मादा

बर्फ का एक बुत
जब
वह पिघलता है
हम रोते हैं

—आलोक कश्यप

वापसी

मैंने एक रचना भेजी थी
लघु पत्रिका के संपादक के नाम
लौटती डाक से उत्तर आया
'आपकी रचना अच्छी है
पसंद है
हमारी पत्रिका आर्थिक अभाव में बंद
कृपया चंदा भिजवाएं'

—प्रेम जनमेज

ट्यूब में रखकर प्रयोग किया गया, जिससे प्रकाश तो हो परंतु गंध न फैले। इस प्रयोग में भी नर-जुगनू मादा के पास पहुंच गये। इससे यह सिद्ध हो गया कि जुगनू के लिए गंध तथा प्रकाश दोनों का महत्व है।

जुगनू की कुछ ऐसी किस्में भी हैं जिनकी मादा बिना पंखवाली होती है। उनकी प्रकाश-ग्रंथि नीचे की ओर पेट में होती है। रात में नर-जुगनू उड़ते हैं तब पंखहीन मादा उलटकर कुछ-कुछ हरा प्रकाश करके नर-जुगनुओं को आमंत्रित करती है।

समुद्रतल में पाये जानेवाले एक-कोशीय जीव स्क्विड मछली आदि से कई रंगीन प्रकाश निकलते हैं। गहरे समुद्र में पाये जानेवाले समुद्री केकड़े से भी ... निकलता है। यह केकड़ा भी अपने ... की उसी प्रकार खोज करता है ... प्रकार जुगनू।

संगीत-नृत्य का ...

प्रणय में जहां गंध तथा प्रकाश का ... है वहां संगीत और नृत्य का भी ... स्थान है। मादा को रिझाने तथा ... उत्तेजित करने के लिए नर उसके ... नृत्य करता है।

झींगुर झंकार से एवं टिड्डी ... से अपनी काम-वासना का ... करती है। झींगुर के कान उसके ... पैरों में होते हैं और टिड्डी के कान ... उदर में होते हैं।

एक प्रयोग में यह देखा गया कि ... नर के संगीत को माइक्रोफोन द्वारा ... ऐसे कमरे में जिसमें केवल मादाएं ... बजाया जाए तो वे यंत्र के चारों ओर इकट्ठी हो जाती हैं।

झींगुर के स्वर को टेपरिकार्डर पर बजाने पर मादा अपने छिपे स्थान से ... आती है। ऐसे परीक्षणों से ज्ञात हुआ कि झींगुर अपनी ध्वनि से लगभग ३० मीटर दूर तक की मादाओं को आकर्षित कर लेता है। नर झींगुर मादा को रिझाने के लिए कई प्रकार के गीत भी गाता है।

टिड्डे अपने पंख को झनझनाकर स्वर ... करते हैं। कुछ टिड्डे एक पंख से दूसरे को रगड़कर स्वर पैदा करते हैं और कुछ अपने जबड़े एक-दूसरे पर घिसते हैं। ●

गंध से मनुष्य ही नहीं, छोटे-छोटे जीव तक प्रभावित होते हैं। सच तो यह है कि मनुष्य की अपेक्षा अनेक जीव-जंतु, जैसे चींटी, मधुमक्खी, कुत्ता आदि इससे अधिक प्रभावित होते हैं। कुत्ते तो गंध से ही जासूसी का कार्य करते हैं और चोर तथा हत्यारे को पकड़ने में सहायक होते हैं। मादा-पतिंगा अपनी गंध से नर-पतिंगों को वासना-पीड़ित कर देती है।

जरमन वैज्ञानिक हेनरी फेब्रे की प्रयोगशाला में एक मादा-पतिंगा प्रयोग के लिए रखी गयी थी। फेब्रे का बेटा संध्या समय दौड़ता हुआ आया और बोला, "पापा, कमरे के बाहर पतिंगों की बाढ़-

क्षणिकाएं

नाते

मंडल के मंत्रिगण
आपस के रिश्ते म
लगते हैं
साढ़ू
क्योंकि इनकी कुरसियां
पारस्परिक संबंध में
होती हैं बहनें

—संतकुमार टंडन 'रसिक'

सिर

बेवजह नहीं सिर
शरीर के अवयवों से ऊपर बना
यह झुकता है
दर्द होता है
जैसे बन गया हो घुटना

—श्रीकांत जोशी

स्वावलंबी

हम स्वावलंबी हो रहे हैं
(राशन की लाइनों में)
अपने पैरों पर खड़े हो रहे हैं

संवेदनाएं

संवेदनाएं
खुद-ब-खुद मर जाती हैं
जब
प्रेम-पत्रों का स्थान
प्रार्थना-पत्र ले लेते हैं

—सूरज प्रकाश 'सागर'

गति

गाड़ी में बैठते ही उसने देखा
युगों से शांत
स्थिर पड़े हुए
खेत-खलिहान, शिवालय, मंदिर
गाड़ी चलते ही
(उसी की तरह)
सहसा भाग खड़े हुए

—स. प्री.

आशा

अपने ही हाथों निर्मित
बर्फ का एक बुत
जब
वह पिघलता है
हम रोते हैं

—आलोक कश्यप

वापसी

मैंने एक रचना भेजी थी
लघु पत्रिका के संपादक के नाम
लौटती डाक से उत्तर आया
'आपकी रचना अच्छी है
पसंद है
हमारी पत्रिका आर्थिक अभाव में बंद
कृपया चंदा भिजवाएं'

—प्रेम जनमेज

वेदव्यास का कृष्णगंगा आश्रम

● रामनारायण अग्रवाल

वेदव्यास को किसी स्थान विशेष की परिधि में नहीं बांधा जा सकता। वे भारतीय संस्कृति के निर्माता, उद्‌गाता और दिव्यदृष्टि से संपन्न त्रिकालदर्शी साहित्य-सृष्टा थे। वेदों के स्वरूप को स्थिर करके उसका चार भागों में विभाजन करना तथा विशाल पुराण-साहित्य का प्रणयन और संपादन करके उसे व्यवस्थित करना उन्हीं–जैसे महान मनीषी के वश की बात थी। महाभारत–जैसे महाकाव्य की रचना करके उन्होंने अपने युग के लोगों और समाज को जो अमरत्व प्रदान किया है वह भारतीय वांगमय की अद्वितीय थाती है। महाभारत भारतीय-साहित्य ही नहीं वरन विश्व-साहित्य की एक अपूर्व निधि है। गीता, जो भारतीय धर्म, दर्शन तथा इस देश की सांस्कृतिक गरिमा की पावन धरोहर है, महाभारत का ही एक अंग है। गीता के ही माध्यम से संसार में योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण का जीवन-दर्शन सुरक्षित रह सका है।

दुर्भाग्य का विषय है कि ऐसे समर्थ साहित्य-सृष्टा ऋषि और उनकी साहित्य-साधना के स्थलों की हमने उपेक्षा ही नहीं की, वरन उन्हें भूल भी गये। मथुरा नगर में यमुना-तट पर कृष्णगंगा घाट भी एक ऐसा ही स्थान है। यद्यपि इस देश में कई स्थानों पर व्यासजी के आश्रम हैं क्योंकि समग्र भारत और उसकी संस्कृति का अध्येता और उद्‌गाता केवल एक ही स्थान

कृष्ण गंगाघाट का वर्तमान रूप। पास ही व्यास चबूतरे के खंडहर हैं।

व्यासजी की उपास्या अठारह भुजी जगदम्बा की वर्तमान मूर्ति।
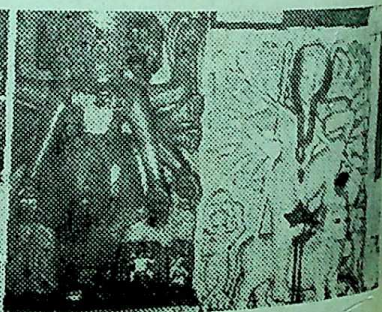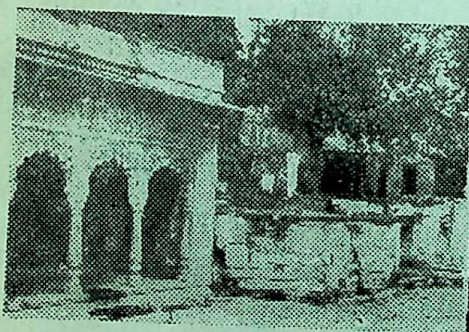
या आश्रम में रहकर अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर सकता था, फिर भी व्यासजी के कृष्णगंगा आश्रम का महत्त्व सर्वाधिक है। दुःख है कि जितनी दयनीय दशा इस स्थल की है उतनी शायद किसी भी अन्य आश्रम की नहीं होगी। आज मथुरा नगर के निवासी भी इस स्थल से परिचित नहीं हैं और अब यहां व्यासजी के नाम पर एक ध्वस्त चबूतरा ही बचा है जिसे कुछ लोग ही 'व्यास चबूतरा' के नाम से जानते हैं।

जो भूमि कभी व्यासजी और उनके शिष्यों के तुमुल वेद-पाठ से निनादित थी और जहां कभी यमुना और कालिंदी का संगम था, वही पावन भूमि आज नगर की गंदगी बहाकर ले जानेवाले नाले की दुर्गंध से भरी रहती है। कृष्णगंगा की यह पुराण-प्रसिद्ध भूमि, जहां व्यासजी की साधना-स्थली थी, आज पूरी तरह उजड़ चुकी है। यहां तक कि वह यमुना की धारा भी सूख गयी जो यहां कालिंदी से मिलती थी, जिसके कारण इस स्थल का नाम कृष्णगंगा था। 'कृष्णगंगा' नाम सुनकर कुछ लोगों ने यह कल्पना कर डाली कि कृष्णगंगा नामक कोई नदी यहां बहती थी, जो अब नहीं रही, किंतु यह धारणा भ्रमपूर्ण है।

कृष्ण-गंगा नदी

पुराणों में यह उल्लेख मिल जाता है कि बहुत प्राचीनकाल में (द्वापर युग में) ब्रज-मंडल में यमुना नदी की दो धाराएं बहती थीं। वल्लभ संप्रदाय के ग्रंथ 'चौरासी-वैष्णवन की वार्ता' में कुंभनदास जी के गांव 'जमुनवर्त' होकर यमुना के बहने का उल्लेख मिलता है। गोवर्धन के साथ यमुना के प्रवाह का स्पष्ट उल्लेख 'भागवत पुराण' में भी उपलब्ध है। गोवर्धन की ओर से बहनेवाली यमुना की यह धारा ही श्रीकृष्ण-जन्मभूमि के निकट होती हुई कृष्णगंगा घाट पर कालिंदी से मिलती थी। भगवान कृष्ण के जन्मस्थान कटरा केशवदेव से होकर

बायें: कालिजर महादेवके मंदिर का अग्रभाग। दायें: कृष्णगंगा घाट पर स्थित गंगा-मंदिर, बीच में भगवान कृष्ण—उनके एक ओर कालिंदी और दूसरी ओर यमुना की मूर्ति है।
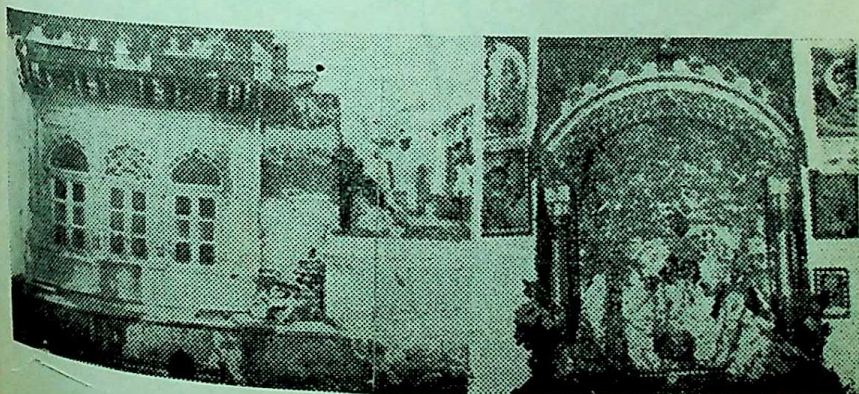
यमुना प्रवाहित होती थी।

उस युग में जब यमुना की ये दोनों धाराएं ब्रज में प्रवाहित थीं, तब गोवर्धन से जन्मस्थान होकर आनेवाली धारा को यमुना तथा चीरघाट होकर वृन्दावन के तट को छूकर आनेवाली वर्तमान धारा को 'कालिंदी गंगा' कहा जाता था। वास्तव में यमुना की मुख्यधारा कालिंदी ही थी और इस कालिंदीगंगा का पुराणों में यत्र-तत्र उल्लेख है। 'वाराहपुराण' के १७५वें अध्याय में—

"ध्यात्त्वा मनसि गंगा तां, कालिन्दी पाप हारिणीम्।
नित्त कालं च कुरुते, तत्र तीर्थं जलाप्लुतः॥"

जैसे उल्लेख इस मत की पुष्टि करते हैं। वास्तव में कृष्णगंगा कोई नदी नहीं, वरन एक घाट था जहां यमुना तथा कालिंदी-गंगा का संगम होता था। आज गंगा की वह धारा, जो कृष्णगंगा पर कालिंदीगंगा से संगम करती थी, सूख गयी, परंतु फिर भी कृष्णगंगा घाट अभी भी उसी कालिंदी-गंगा के तट पर विद्यमान है जो अब पुरानी धारा के सूख जाने के बाद स्वयं यमुना

कल्पना नहीं कर सकता कि वे अमुक वर्ण साल के एक युवक ही हैं। बतलाने पर भी कोई इस पर विश्वास नहीं करेगा फिर भी वे डॉक्टर हैं और आयु से ग्रन हैं। नियमित रूप से वे प्रतिदिन सा...ण ग्यारह और सायंकाल चार से आठ ...गा तक दवाखाने में कुरसी पर बैठने के ...के सामने की मेज पर पैर फैला लेते ...गा-

णिकता की पुष्टि कर रहा है। कृष्णगंगा का भूगोल तथा व्यासजी के इस आश्रम की स्थिति, दोनों ही वाराहपुराण के निम्न श्लोक से स्पष्ट हो जाती हैं—

सोम बैकुंठयोर्मध्ये, कृष्णगंगेति कथ्यते
यत्रातप्यतपो व्यासो, मथुरायां स्थितोऽमलः

इस श्लोक में कृष्णगंगा को महात्मा व्यासजी की तपस्थली कहा गया है। इस तपस्थली के एक ओर बैकुंठतीर्थ और दूसरी ओर सोमतीर्थ है। वर्तमान में इस बैकुंठतीर्थ (लोक में चक्रतीर्थ) तथा सोमतीर्थ, जहां आज भी गौघाट पर सोमेश्वर महादेव का प्राचीन मंदिर है, की दूरी लगभग ४ फर्लांग है। ऐसी दशा में कृष्णगंगा नाम की कोई नदी केवल चार फर्लांग लंबी नहीं हो सकती। वास्तव में कृष्णगंगा वह घाट था जहां यमुना और कालिंदीगंगा के संगम पर महामुनि कृष्ण द्वैपायन व्यास विराजते थे।

कृष्णगंगा आश्रम का महत्त्व

पुराणों के उद्धरणों से यह स्पष्ट होता है कि कृष्णगंगा का आश्रम व्यासजी के सभी आश्रमों में प्राचीनतम है क्योंकि यह उनकी तपस्थली कहा गया है। इसी स्थल पर तप करके वे त्रिकालदर्शी महामुनि हुए थे। यहां उन्होंने ईशान रुद्र की आराधना करके उन्हें प्रसन्न किया था, जैसा कि कूर्म-पुराण के निम्न उद्धरण से सिद्ध होता है—

"पाराशर्य महायोगी कृष्णद्वैपायनो हरिः।
आराध्यदेवमीशान, दृष्ट्वा स्तुत्त्वा त्रिलोचनम्।"

तत्त्प्रसादादसौ व्यासो वेदानामकरोत्प्रभुः
भैदैरस्ता दशैव्यासः, पुराणं कृतवान प्रभु :
--कूर्म पुराण ५२-२१

इस आश्रम में व्यासजी को शंकरजी का दर्शन हुआ और उनकी कृपा से ही वे वेदों का व्यास तथा पुराणों की रचना करने में समर्थ हुए। यह ईशान रुद्र, व्यासजी ने जिनकी आराधना की थी, आज भी कालिंजर महादेव के रूप में कृष्णगंगा पर विराजमान हैं। वाराहपुराण में कूर्म-पुराण के उक्त श्लोकों की पुष्टि करने-वाले श्लोक मिलते हैं, जिन्हें पंडित बाल मुकुंद चतुर्वेदी ने खोजकर उद्धृत किया है। इन श्लोकों में कालिंजर नाथ महादेव का स्पष्ट उल्लेख है। व्यासजी के कृष्णगंगा आश्रम की चर्चा 'वाराह पुराण' में विस्तार से हुई है—

"श्रृणु चन्यद्वरारो हे कृष्णगंगा समुद्भवम्
यमुना स्त्रोतसि स्नात्त्वा, कृष्णद्वैपायनो मुनिः
तत्राश्रम पदं रम्यं, मुनि प्रवर सेवितम्।
आगच्छन्ति सदा तत्र, चातुर्मासस्सुपासितुम्
संदेप्ते यस्य कस्यास्ति वेद स्मार्त क्रियासु च
पुराणोपनिषत्स्वादि यस्य यस्य यदीप्सितम्
तस्य तस्य च योगीशः, संदेह नाशयेत्प्रभुः
कालिंजरो महादेवस्तस्य तीर्थं पतिश्शिवः
तत्र स्थितो द्वादशाद्वः व्रतं संग विर्वाजतः।
पक्षाहारी च फलभुक्, दशैवै पौर्णमासिके
--वाराहपुराण, अध्याय १७५

इस विवरण में व्यासजी के आश्रम का पूरा भूगोल देकर इसे व्यासजी की साधना-स्थली कहा गया है। इसमें व्यासजी का इस आश्रम से सर्वाधिक लगाव इसकी पुष्टि में आग्रहपूर्वक यह कहा है कि वे वर्ष में ८ मास चाहे कहीं रहें परंतु वर्षा-ऋतु के चतुर्मास वे प्राकृ सुषमा से परिपूर्ण इसी आश्रम में करते थे।

व्यासजी ने १८ पुराणों की र १८ भुजाओंवाली दुर्गा की प्रेरणा पर थी और यह दुर्गा भी अभी तक कृष्ण घाट पर विद्यमान है।

इस भांति कृष्णगंगा व्यासजी तपस्थली, साधना-स्थली और साहि रचना की सिद्ध भूमि है। डॉ. सुनीतिकु चाटुर्ज्या ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'शौरसे भाषा की प्राचीन परंपरा' में बड़े स रूप से लिखा है कि 'इसी मथुरा में मह वेदव्यास ने ब्राह्मणों के मुख से सुने चारों वेदों, पुराणों, संहिता आदि का सं किया था।'

अतः व्यासजी के इस आश्रम सर्वाधिक महत्त्व सांस्कृतिक है और इस उसी रूप में विकास होना चाहिए।

—गली रावलिया, लाल दरवाजा, म

कहानी

दिन का सपना

• रावी

डॉक्टर हीरालाल समतले का दवा-खाना सूरत में कई वर्षों से चल रहा है। दवाखाना निश्चित समय पर खुलता है और निश्चित समय पर ही बंद होता है, लेकिन ऐसे भी दिन आते रहते हैं, जब एक भी रोगी नहीं आता। डॉक्टर समतले को इसकी कोई परवाह नहीं है क्योंकि पिता की छोड़ी संपत्ति उनके जीवन-भर के लिए काफी है। रोगियों के आने-जाने की भी चिंता नहीं है क्योंकि उन्हें एकांत ही अधिक प्रिय है। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि वे स्वयं एक रोगी-से दीखते हैं। दुबले, पतले ढांचे पर मढ़ी हुई पीली, चमकती चमड़ी, और बैठे हुए कपोलों को देखकर कोई भी अपरिचित उन्हें डॉक्टर नहीं कह सकता। धंसी हुई आंखें और साठ प्रतिशत सफेद बालों को देखकर भी कोई यह कल्पना नहीं कर सकता कि वे अभी बत्तीस साल के एक युवक ही हैं। बतलाने पर भी कोई इस पर विश्वास नहीं करेगा। फिर भी वे डॉक्टर हैं और आयु से युवा हैं। नियमित रूप से वे प्रतिदिन सात से ग्यारह और सायंकाल चार से आठ बजे तक दवाखाने में कुरसी पर बैठने के बाद सामने की मेज पर पैर फैला लेते हैं। आंखें उनकी अकसर बंद रहतीं हैं। सामने की बेंच पर जब किसी मरीज के बैठने की आहट उन्हें मिलती है, तब वे मेज से पैर समेटकर कुरसी के सहारे ही बैठ जाते हैं और रोगी से हाल पूछकर नुस्खा लिख देते हैं। रोगी के कंपाउंडर साहब की खिड़की की ओर बढ़ते ही वे फिर अपने सुखासन पर आसीन हो जाते हैं। डॉक्टर समतले के पड़ोसियों को आश्चर्य है कि वे अपना दवाखाना तोड़ क्यों नहीं देते, और तोड़ते नहीं; तो कम-से-कम आठ घंटे की नियमित हाजिरी में ही थोड़ी अनियमितता क्यों नहीं बरतते! डॉक्टर की यह अखंड नियमितता सचमुच

एक विचित्र पहेली है।

डॉक्टर में प्रकटतया कोई दुर्गुण या दुर्व्यसन नहीं है। मांस, मदिरा और उद्दीपक मनोरंजनों से वे बिलकुल दूर रहते हैं। सिगरेट भी वे बहुत अधिक नहीं पीते और पान तो खाते ही नहीं। उन्हें कोई ऐसा रोग भी कभी नहीं हुआ, जिसने उन्हें कुछ दिनों तक बिस्तर पर लिटाया हो। जब तेरह वर्ष की एक स्वस्थ कन्या के साथ उनका विवाह हुआ, तब उनकी आयु केवल सत्रह वर्ष की थी। डॉक्टर के उस समय के चित्र को देखकर अब कोई नहीं कह सकता कि यह उन्हीं का चित्र है।

उस दिन मरीज की आहट पाते ही डॉक्टर ने कुछ हड़बड़ाहट के साथ मेज से पैर समेटकर ज्यों ही नुस्खोंवाले पैड की ओर हाथ बढ़ाया, आगंतुक ने लपककर उनका हाथ थाम लिया।

"मैं मरीज नहीं हूं, डॉक्टर!" सामने खड़े एक अत्यंत सुंदर और हृष्ट-पुष्ट युवक ने डॉक्टर की आंखों में अपनी पैनी नजर चुभाते हुए कहा, "मेरे साथ जरा बाहर आइए।"

डॉक्टर इनकार न कर सके। आगंतुक के साथ एक सुंदर बाग के बीच बने घर के सामने पहुंचकर उन्होंने देखा कि बरामदे में बिछे पलंग पर एक युवती कराह रही है और उसकी दो बड़ी बहनें सेवा-उपचार में संलग्न हैं। दोनों बहनें अनिंद्य सुंदरी युवतियां हैं, लेकिन शय्याशायनी का रूप तो अदम्य आकर्षण का पाश ही है।

"सरोजिनी!" युवक ने पलंग के पास पड़ी एक कुरसी पर स्वयं बैठते और दूसरी पर डॉक्टर को धंसाते हुए पुकारा।

रुग्णा की पीड़ाभरी आंखें युवक की आंखों से मिलीं। उनसे एक करुण याचना बरस रही थी। अन्य दोनों ने अभिवादनपूर्वक डॉक्टर और युवक के लिए स्थान कर दिया था।

"तुम्हारे भाई ने मुझे तुम्हारे रोग की बात आज बतायी। मुझे अब यह देखना है कि मेरी बांसुरी के आगे तुम्हारा उदरशूल कितनी देर ठहर सकता है।" यह कहकर युवक ने कुरते से एक बांसुरी निकाली और मध्यम स्वर में एक राग छेड़ दिया। उसकी आंखें सामने की दीवार के एक विंदु पर जम गयीं। तीनों तरुणियों की छहों भावुक आंखें युवक के मुखमंडल पर मंडराने लगीं। रोगिणी की पलकें झुकीं और कुछ देर तक झपी रह गयीं।

"दर्द कैसा है?" युवक ने सहसा बांसुरी हटायी और रुग्णा के कुछ समीप मुंह ले जाकर पूछा।

सरोजिनी ने आंखें खोल दीं। "नहीं है"—उसकी आंखों के साथ होंठ भी मुसकरा उठे। आंखों में मुसकान ही नहीं, मुग्धता भी आ गयी थी। वह बरबस अपने चिकित्सक को टकटकी बांधे देख रही थी।

डॉक्टर की आंखें स्पष्ट देख रही थीं कि अन्य दोनों भी लालसा से युवक की ओर रह-रहकर देख लेतीं थीं। युवक ने

बांसुरी को कृतज्ञ भाव से एक बार चूमा और डॉक्टर का हाथ पकड़कर चलने के लिए उड़ खड़ा हुआ।

"भाई साहब आते ही होंगे। आप उनसे मिले बिना चले जाएंगे?" रोग-मुक्ता ने आंखों में आग्रह भरकर युवक को रोकना चाहा।

"इस समय तो जरूरी काम से जल्दी

ऐसे ही नीले रंग की, और इसी तरह के चांदी के मुखवाली बांसुरी बचपन में मेरे पास भी थी। शायद अब भी मेरे किसी संदूक में पड़ी होगी।"

"यह कहीं वही बांसुरी तो नही है!" युवक ने मुसकराते हुए कहा, "इस पर कोई पहचान का निशान देख सकते हैं?"

डॉक्टर की नजर बांसुरी के रजतमुख
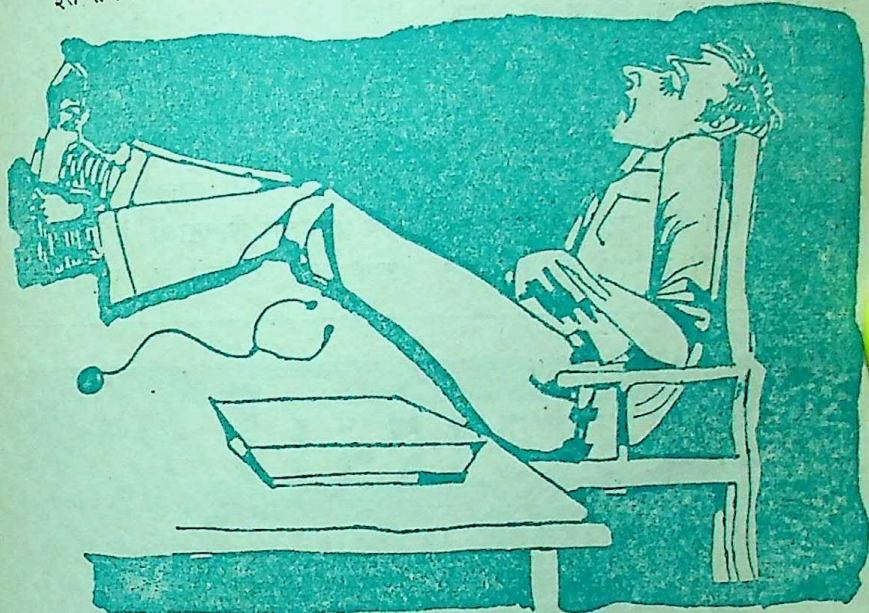
जाना है, फिर आऊंगा," कहकर युवक फाटक की ओर बढ़ गया।

"इस बांसुरी को पहचानते हैं?" सड़क पर डॉक्टर की ओर बांसुरी बढ़ाते हुए युवक ने पूछा।

"मैंने पहले इसे कभी नहीं देखा," डॉक्टर ने कुछ सोचते हुए कहा, "लेकिन

पर खुदे अक्षर 'एच' पर पड़ी, जो उनके नाम का ही प्रथम अक्षर था। उन्होंने पहचाना, "यह तो मेरी बांसुरी है!"

"निस्संदेह यह आपकी बांसुरी है और यह सुंदरी युवती सरोजिनी . . . इस हरकरे परिवार की लड़कियों की क्या आपको बिलकुल याद नहीं?"

डॉक्टर के मस्तिष्क में तेजी से स्मृतियां उभरने लगीं।

सरोजिनी हरकरे—ये तीनों बहनें —हां, उन्हें इनकी याद है। हरकरे-परिवार कुछ दिनों तक उनके पड़ोस में रहा था। यह उनके विवाह के एक वर्ष पहले की बात है। उन दिनों वे कितने स्वस्थ और सुंदर थे। 'प्रत्येक सुंदर लड़की एक बार उनकी ओर अवश्य आकृष्ट हो जाए,' यह उनकी एक महत्त्वाकांक्षा थी। उनकी यह आकांक्षा पूर्ति की ओर तेजी से बढ़ भी रही थी। जो दृष्टि एक बार उनकी ओर पड़ी, वह दोबारा उन्हें देखे बिना नहीं रह सकती थी। हरकरे-परिवार की इन विशेष सुंदरी युवतियों की नजरों में नवयुवक समतले न अपने रूप की प्रशंसा विशेष रूप से जगाने की कामना की थी। संगीत की प्रतिभा समतले में जन्मजात थी। १२-१३ वर्ष की आयु में उन्होंने अपनी बांसुरी से जादू बरसाना आरंभ कर दिया था। उनकी बांसुरी की तान श्रोताओं के मानसिक संताप को ही नहीं, कभी-कभी युवकों के शिर-शूल और युवतियों की कटि-पीड़ा को भी सुला देती थी। एक बार उन्होंने एक वृद्धा के दांत के दर्द को पल-भर में दूर कर उसे कुछ देर के लिए सुख की नीद सुला दिया था। पीड़ा दूर करना समतले की स्वाभाविक एवं प्रबलतम कामनाओं में से एक था। राग द्वारा रोगियों के उपचार की एक

सफल प्रणाली खोज निकालने की उनकी बड़ी अभिलाषा थी। अंत में एक बार एक ऐसे रोगाचार्य से उनकी भेंट भी हुई थी, जो राग द्वारा सभी रोगों की चिकित्सा कर सकता था।

"आपको याद आ रही है और निस्सं-देह यह रोग-हारी राग भी आपका ही एक प्रिय राग है।" युवक ने डॉक्टर की विचार-तंद्रा भंग की।

बात करते-करते दोनों एक सभा-भवन में आ पहुंचे। उपस्थित जन-समुदाय ने सहर्ष करतल-ध्वनि से युवक का स्वागत किया। पुष्पमालाओं से लादकर युवक को सभा-मंच पर ले जाया गया। डॉक्टर का हाथ बराबर युवक के हाथ में था।

"समतले का राग . . . समतले की बांसुरी . . . समतले . . . समतले!" असंख्य कंठों से भीड़ पुकारने लगी।

डॉक्टर ने विस्फरित नेत्रों से देखा, कोई भी उनकी ओर नहीं देख रहा था, यद्यपि सभी उनका नाम लेकर पुकार रहे थे। सबकी आंखें उनके साथी उस युवक पर जमी हुई थीं।

युवक ने बांसुरी संभाली और सारी सभा को अपनी संगीत-धारा में बहा दिया। स्वयं डॉक्टर उतनी देर, न जाने कितनी देर कुछ भी न सोच सके। संगीत समाप्त हुआ। श्रोता मानो सोते से जागे। दो क्षण बाद फिर उसी गगन-भेदी करतल-ध्वनि के बीच युवक का सारा शरीर फूलों से ढक दिया गया। सभा की समाप्ति पर उस विचित्र युवक ने फिर डॉक्टर का हाथ पकड़ा।

"प्रसिद्ध स्वरकार समतले—डॉक्टर समतले—का यह लोक-पूजित सम्मान आपके लिए अपरिचित तो नहीं है?" राह में उस युवक ने बात छेड़ी।

"यह सम्मान!" डॉक्टर ने उभरती हुई स्मृतियों को संभालते हुए कहा, "आपका जो सम्मान मैं देख रहा हूं, वैसे ही सम्मान की कल्पना कभी मैंने अपने लिए भी की थी। शायद सपनों में भी अपना सम्मान होते देखा था। मुझे याद . . ."

"आपने सोचने में सीमा से बाहर अति की है। दीर्घसूत्रियों में आपके बरा-बर कम ही व्यक्ति संसार में निकलेंगे। और, दूसरी ओर अपने विचारों की पूर्ति के लिए कुछ भी न करने में भी आपने सीमा से बाहर अति की है। दीर्घसूत्रता और दीर्घ आलस्य, इन दोनों के विशेष सम्मिलन ने आपकी स्मृति पर अति घातक प्रभाव डाला है। आपकी अतिशीघ्र विवा-हिता पत्नी की अति-आज्ञाकारिता का भी इस स्मृति में यथेष्ट हाथ है। आपको अपने स्वस्थ और सुंदर रूप की याद तक नहीं है! सीमा से आगे बढ़ी दो अतियों ने आपकी स्मृति को ढक लिया है।" युवक के यह कहने पर डॉक्टर ने प्रश्नभरी दृष्टि से उसकी ओर देखा।

डॉक्टर सोचने लगे—उनकी स्मृति तो बिलकुल ठीक है। निस्संदेह वे कभी इतने सुंदर, स्वस्थ और प्रतिभाशाली नहीं

थे। ऐसा होने की उनकी महत्वाकांक्षाएं अवश्य थीं, और उनकी पूर्ति के लक्षण भी उनके समीप थे। बाल-विवाह, समय-हीन वैवाहिक जीवन, बहुमूत्रता और नितांत अकर्मण्यता निस्संदेह उनके जीवन में बड़ी-बड़ी बाधाएं बनकर आ खड़ी हुई थीं। स्वस्थ, सुंदर रूप में लोकपूजित संगीतकार और पीड़ाहर बनने की उनकी स्वप्न-कल्पना थी। लेकिन यह सब वे थे कभी नहीं। धीरे-धीरे असाध्य बनता हुआ उनका मस्तिष्क और शरीर कभी भी उनकी इच्छा का काम नहीं कर पाया था। लेकिन यह एकदम अपरिचित और साथ ही आत्मीय-सा व्यक्ति कौन है ?

"लेकिन आपने अपना परिचय नहीं दिया! इतना तो मैं समझ गया हूं कि आप भी समतले वंश के ही कोई..."

"मैं ?" युवक की आंखें चमक उठीं, "मुझे आपने पहचाना नहीं?" दोनों डॉक्टर के दवाखाने में आ पहुंचे थे। दवाखाने में खड़े आदमकद आइने के सामने युवक डॉक्टर का हाथ पकड़े हुए जा खड़ा हुआ, और बोला, "शीशे के भीतर की दोनों तसवीरों की टोढ़ी के बीचोंबीच काले तिल का निशान, दायीं आंख के पास नाक पर चोट के घाव का निशान और बायें कान के छेद के पास की दीवार पर असाधारण उभरी एक कलगी को आप देख रहे हैं ?"

डॉक्टर ने ध्यानपूर्वक देखा, उनकी और आगंतुक की आकृतियों में मांसलता के अतिरिक्त और कोई अंतर नहीं था।

"मेरा परिचय आप अच्छी तरह जानते हैं डॉक्टर समतले! मैं वही आदमी हूं, जो आप हुए होते!"

ये शब्द कान में पड़ते ही डॉक्टर ने देखा कि वे अपनी मेज पर टांगें फैलाये कुरसी पर लेटे हैं और उनके पास कोई दूसरा व्यक्ति नहीं है। डॉक्टर ने शायद विचित्र दिवा-स्वप्न देखा था।

डॉक्टर समतले का वह दिवा-स्वप्न व्यर्थ नहीं गया। पचासी वर्ष की अवस्था में उनकी आत्मकथा प्रकाशित हुई। उसमें यथास्थान इस स्वप्न की चर्चा करते हुए उन्होंने बताया था कि किस प्रकार सोलह से लेकर बत्तीस वर्ष की आयु तक के सोलह वर्ष एक गहरी तामसिक नींद में व्यर्थ ही बरबाद हुए थे और आयु के तैंतीसवें वर्ष में एक दिन उनकी अंतरात्मा ने प्रकट होकर उन्हें सचेत किया था। उसी चेतावनी का पूरा लाभ उठाकर वे फिर एक स्वस्थ, सफल संगीत-चिकित्सक के मार्ग पर बढ़ सके थे।

--पो. कैलाश, आगरा

चुनाव के उम्मीदवार ने श्रोताओं को एक-एक जूता बांटकर कहा, "दूसरा जूता तब मिलेगा, जब तुम मुझे वोट दे दोगे।"

परिणाम घोषित होने पर यह पता चला कि उसने अपने प्रतिद्वंदी को भारी बहुमत से हराया था।

स्टेच्यू ऑव लिबर्टी

• अशोककुमार कपूर

सन १८५१, २ दिसंबर की रात। १७ वर्षीय बारथोल्डी पेरिस की गलियों में घूम रहा था। नेपोलियन के नेतृत्व में फ्रांस के नागरिकों को राजा लुई के हाथों से फ्रांस का शासन छीने कुछ ही घंटे बीते थे, पर नागरिकों और राजा लुई के कुछ समर्थकों के बीच युद्ध अभी जारी था।

पेरिस की सड़कों पर अभी बर्फ गिर रही थी। नागरिकों ने एक गली में अपने बचाव के लिए एक दीवार-सी बना रखी थी। इतने में एक हाथ में मशाल लिये एक अनजान लड़की ने उस दीवार पर चढ़कर राजभक्त सैनिकों को आवाज दी, 'आगे बढ़ो'। अगले क्षण नागरिकों की राइफलों से निकली गोलियों से उस मासूम का शरीर छलनी हो गया। बारथोल्डी यह दृश्य देख रहा था। हाथ में मशाल लिये वह लड़की बारथोल्डी के लिए स्वतंत्रता का प्रतीक बन गयी। आगे चलकर इसी प्रतीक को बारथोल्डी ने न्यूयार्क बंदरगाह से बाहर लगी, 'स्टेच्यू ऑव लिबर्टी' के रूप में निर्मित किया।

अमरीका का राष्ट्रीय स्मारक
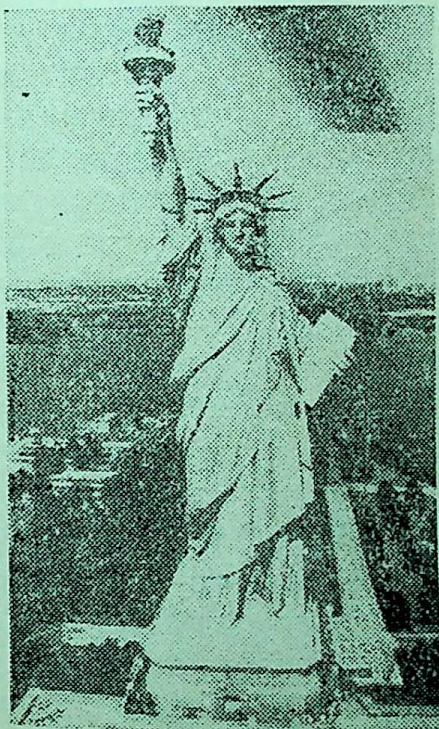
इस मूर्ति को यद्यपि 'स्टेच्यू ऑव लिबर्टी' के नाम से जाना जाता है, पर इसका सही नाम 'लिबर्टी लाइटनिंग द वर्ल्ड' है। इस मूर्ति का निर्माण फ्रांस में हुआ था। कला और साहित्य के केंद्र पेरिस में बनी यह विशाल कलाकृति फ्रांस सरकार ने अमरीका को, जिसे उस समय एक आदर्श जनतंत्र माना जाता था,

उसकी स्वतंत्रता की शताब्दी (सन १८८६) पर उपहार स्वरूप भेंट की थी। आश्चर्य की बात है, इतनी महान और विशाल मूर्ति के निर्माता के बारे में कम ही लोग जानते हैं!

'स्टेच्यू ऑव लिबर्टी' का निर्माता फ्रेडरिक आगस्ट बारथोल्डी फ्रांस के कोल्मक शहर में २ अप्रैल, १८३४ को पैदा हुआ था। जब वह तीन वर्ष का था तभी उसके पिता का देहांत हो गया। इसके बाद अपनी मां के साथ वह पेरिस चला गया, जहां उसके अंदर छिपे कलाकार को उभरने का मौका मिला। उसने चित्रकला से प्रारंभ किया, किंतु अंत में शिल्पकला में प्रवीणता प्राप्त की। एटेक्स, शेफर आदि महान शिल्पियों के संपर्क में आकर उसकी प्रतिभा का विकास हुआ।

फ्रांस में तीसरे जनतंत्र की स्थापना के समय वह २१ वर्ष का था। इस समय वह एडवर्ड डि लाबुलाय नामक एक सम्मानित फ्रांसीसी नागरिक के संपर्क में आया। कानून का शिक्षक, पत्रकार और राजनीतिज्ञ लाबुलाय अमरीका को उसकी स्वतंत्रता की शताब्दी पर फ्रांस की ओर से ऐसा उपहार भेंट करना चाहता था जिसके कण-कण से स्वतंत्रता का आभास हो।

बारथोल्डी एक उत्सव में जेन डि साइसेक्स नामक एक अत्यंत सुंदर लड़की से मिला। पहले जेन, बारथोल्डी की इस कलाकृति के लिए माडल बनी और बाद में बारथोल्डी की जीवनसंगिनी। यह भी कहते हैं, इस मूर्ति का चेहरा बारथोल्डी की मां के चेहरे से काफी मिलता था। एम्मा लाजारस नामक अमरीकी कवयित्री की कविता 'द न्यू कोलोसस' के प्रकाशन के बाद उसका नाम भी इस मूर्ति के साथ जोड़ा जाने लगा। एम्मा की मृत्यु के पश्चात उसकी यह कविता इतनी लोकप्रिय हुई कि उसे ताम्रपत्र खोदकर मूर्ति पर लगा दिया गया।

लाबुलाय से अनेक परिचय-पत्र लेकर बारथोल्डी अमरीका चला गया। न्यूयार्क बंदरगाह में प्रवेश करते ही उसकी निगाह बेडलोज टापू पर पड़ी। बारथोल्डी को मूर्ति-स्थापना के लिए यही जगह पसंद आयी।

तीन महीने बाद बारथोल्डी फ्रांस लौटा। लाबुलाय की अध्यक्षता में फ्रांस-अमरीकी संघ की स्थापना की गयी। बारथोल्डी ने मूर्ति का ९ फुट ऊंचा माडल बनाया। इसी के आधार पर १५२ फुट ऊंची मूर्ति बनना शुरू हुई।

गुस्ताव एफिल नामक एक सिविल इंजीनियर ने, जिसने बाद में विख्यात 'एफिल टावर' का निर्माण किया, लोहे की छड़ों से एक ढांचा बनाया।

पहले प्लास्टर का एक बड़ा माडल बनाया गया। फिर इसे लकड़ी पर उतारा गया—यानी जहां मूर्ति की नाक थी, वहां लकड़ी में गड्ढा था और जहां मुंह था, वहां लकड़ी में उभार था। इस लकड़ी के सांचे में तांबे की मोटी चादरों को पीट-पीट-

कर मूर्ति को कई छोटे-छोटे भागों में बनाया गया।

इस काम के लिए फ्रांस में कुछ रकम इकट्ठी हो चुकी थी, जो अपर्याप्त थी। बारथोल्डी फिर अमरीका गया। वह मूर्ति का मशालवाला हाथ भी साथ ले गया था, जिसे पहली बार फिलाडेल्फिया में प्रदर्शित किया गया। इसे देखकर लोग चकित रह गये। उसके बाद इस 'हाथ' को न्यूयार्क ले जाया गया। यहां भी इसे देखकर अमरीकी अचंभे में पड़ गये और बारथोल्डी रातोंरात लोकप्रिय हो गया। १० फरवरी, १८७६ को अमरीकी कांग्रेस ने औपचारिक रूप से राष्ट्रपति को सलाह दी कि मूर्ति को फ्रांस की ओर से भेंट के रूप में स्वीकार कर लिया जाए। पंद्रह दिन बाद बेडलोज टापू पर मूर्ति-स्थापना के निश्चय की घोषणा कर दी गयी।

वापस फ्रांस जाकर बारथोल्डी ने देखा कि एफिल का वह ढांचा स्टूडियो से काफी ऊपर निकल चुका है। दूर से आते-जाते लोग मूर्ति को देख दांतों तले अंगुली दबा लेते थे।

क्या तुम माचिस खरीद सकते हो?

मूर्ति के आधार-स्तंभ को बनाने के लिए २५० हजार डालर चाहिए था। अमरीकी संघ ने केवल १०० हजार डालर इकट्ठा करने का जिम्मा लिया था। इस पर एक अखबार में तो एक कार्टून भी निकल गया, जिसमें 'लिबर्टी' अपनी बुझी हुई मशाल अमरीका की ओर किये

यस्य स्म विषये राज्ञः स्नातकः सीदति क्षुधा।
अवृद्धिमेति तद्राष्ट्रं विन्दते सहराजकम्॥

जिस शासक के देश में स्नातक भूख से कष्ट पाता है, उस राष्ट्र का पतन हो जाता है और वहां अराजकता फैल जाती है।

उदीरितोऽर्थः पशुनापि गृह्यते,
हयाश्च नागाश्च वहन्ति देशिताः।
अनुक्तमप्यूहति पण्डितो जनः
परेंगित ज्ञानफला हि बुद्धयः॥

जताये हुए अभिप्राय को पशु भी समझ लेता है। हांकने पर घोड़े और हाथी बोझा ढोते हैं। परंतु बुद्धिमान कहे बिना ही मन की बात जान लेता है। पराये चित्त का भेद जान लेना ही बुद्धि का फल है।

आकारैरिंगितैर्गत्या चेष्टया भाषणेन च।
नेत्रवक्त्रविकारेण लक्ष्यतेऽन्तर्गतं मनः॥

आकार, इशारों, चाल, काम, बोलने से, नेत्र और मुख की मुद्रा से दूसरों के मन की बात जान ली जाती है।

विवेकः सहसम्पत्त्या विनयो विद्यया सह।
प्रभुत्वं प्रश्रयोपेतं चिह्नमेतन्महात्मनाम्॥

सम्पत्ति के साथ विवेक, विद्या के साथ विनय और प्रभुत्व के साथ प्रेम महात्माओं का लक्षण है।

—प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त शर्मा

खड़ी थी। नीचे लिखा था—'क्या तुम मेरे लिए माचिस खरीद सकते हो ?'

पर हवा का रुख बदला। जोसेफ पुलिट्जर नामक एक अमरीकी ने अपने अखबार 'वर्ल्ड' की ओर से १,००० डालर दिये। चंदा देनेवालों की भीड़ लग गयी। आधार-स्तंभ का निर्माण १८८३ में प्रारंभ हुआ और इसे पूरा होने में दो साल लगे। जब मूर्ति पूरी बन चुकी तब बारथोल्डी उसे अमरीका ले जाने का इंतजाम करने लगा। लोहे और तांबे की २०० टन भारी मूर्ति को खोलकर पेरिस से रॉवें बंदरगाह तक ले जाया गया। वहां इसे 'इजेर' नामक युद्धपोत पर लादा गया। यह ७२ मीटर लंबा पोत अमरीका और फ्रांस के झंडे फहराता हुआ १७ जून, १८८५ को अमरीका के न्यूयार्क बंदरगाह में दाखिल हुआ। तोपों की सलामी के साथ 'इजेर' का स्वागत किया गया।

मूर्ति को बोडलोज द्वीप पर खड़ा किया गया। २८ अक्तूबर, १८८६ को अमरीकी राष्ट्रपति ने इसका उद्घाटन किया। पर लाबुलाय, जिन्होंने इस महान कार्य को प्रारंभ किया था, पहले ही स्वर्गवासी हो चुके थे। उनकी जगह लेसेप (स्वेज नहर के निर्माता) ने राष्ट्रपति को फ्रांस-अमरीकी संघ की ओर से धन्यवाद दिया। पर बारथोल्डी का कहीं पता ही नहीं था। भाषण समाप्त होते ही उसने मूर्ति के सिर के अंदर बैठे-बैठे एक रस्सी खींची और मूर्ति का चेहरा सबके सामने पहली बार आया।

१९२४ में इसे अमरीका का राष्ट्री स्मारक घोषित कर दिया गया। 'लि की एक छोटी नकल अमरीकियों ने को भेंट की; जिसे पेरिस के बीच बह वाली सेन नदी के ऊपर बने एक पु पेंटडि-ग्रेनेल पर लगा दिया गया।

बारथोल्डी को न्यूयार्क का सम्मानि नागरिक बना लिया गया। फ्रांस में उ देश का उच्चतम पुरस्कार, 'लीजन ऑ ऑनर' प्रदान किया गया। ५ अक्तूबर १९०५ को पेरिस में उसकी मृत्यु हो गयी

मूर्ति के बारे में कुछ तथ्य

मूर्ति के बारे में कुछ तथ्य ये हैं—मशाल से पैर तक इसकी ऊंचाई १५१ फुट, आधार-स्तंभ की जलस्तर से ऊंचाई ८ फुट और ६० फुट समुद्र के अंदर—इस प्रकार कुल मिलाकर यह ३९० फुट है। ३० आदमी इसके सिर पर और १ मशाल में खड़े हो सकते हैं। इसके बायें हाथ में एक किताब है, जिसमें ४ जुलाई १७७६ लिखा हुआ है। मशाल में लगातार आग जलती रहती थी। १९१६ से वहां आधुनिक प्रकाश-व्यवस्था कर दी गयी है।

पुरानी मूर्तियों की तुलना में यह मूर्ति 'कोलोसस ऑव रोइस' से, जिसकी ऊंचाई १०० फुट है, कहीं ऊंची है। 'जुपिटर' की महान मूर्ति, जिसे फिडा ने बनाया और जो सात आश्चर्यों में एक गिनी जाती है, केवल ६० फुट ऊंची है।

—२०१ खुशहाल पर्वत, इलाहाबाद

ये बिजली

• ब्रजेश कुलश्रेष्ठ

आपने आकाश से बिजली गिरने के फल-स्वरूप हुए विनाश के बारे में सुना होगा। एक बार यह बिजली एक मकान की चिमनी पर गिरी। चिमनी पर 'लाइट-निंग कंडक्टर' न होने के कारण बिजली का सारा प्रहार धरती को झेलना पड़ा। मकान के आगे छोटे-से हरे-भरे लॉन में १५५ फुट लंबी, ३ फुट चौड़ी और २ फुट गहरी खाई खुद गयी। इसकी रफ्तार बंदूक की गोली की रफ्तार से तीस हजार गुनी अधिक होती है।

यह बिजली बनती एवं गिरती कैसे है? बरसात में नम तथा गरम हवा निरंतर ऊपर उठती रहती है। काफी ऊंचाई पर जाकर यह हवा ठंडी हो जाती है और इसमें से नन्ही-नन्ही फुहारें छूटने लगती हैं। धीरे-धीरे इन फुहारों की धुंध बादलों का रूप धारण कर लेती है, नम हवा के इस प्रवाह को हम 'चिमनी-प्रवाह' कहेंगे। ऊपर जाकर नम हवा का पानी बर्फ के डेलों में बदल जाता है। ये डेले नीचे नहीं गिरते वरन 'चिमनी-प्रवाह' के सहारे उछलते-कूदते तब तक ऊंचे उठते रहते हैं जब तक कि बादलों की चोटी नहीं आ जाती। यहां तक आते-आते हवा की गति धीमी हो जाती है। ये डेले जब नीचे की ओर आते हैं तो साथ में ठंडी हवा भी लाते हैं। इस ठंडी हवा को 'चिमनी-प्रवाह' खींच लेता है। यहां फिर

आकाश में भड़कती बिजली जो प्राणदायिनी भी है।
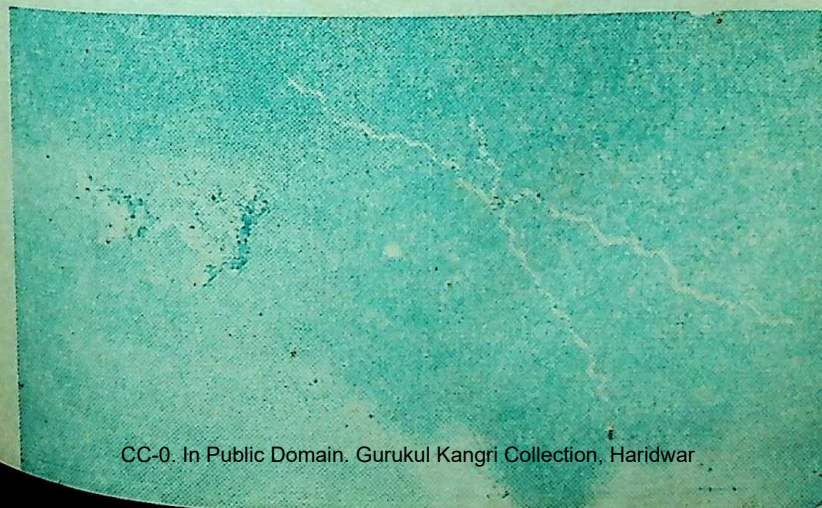
बर्फ के डेले बनते हैं और ऊपर उठते हैं और यह क्रम लगातार चलता रहता है। इस क्रिया में जो बिजली बनती है वह दो भागों में बंट जाती है। चोटी के कणों में 'पाजिटिव' और नीचे के भाग में व्याप्त पानी की बूंदों में 'निगेटिव' विद्युत रहती है।

अब आप तनिक नीचे धरती पर उतर आइए। यहां ऊपर तैरते बादलों के ठीक नीचे 'पॉजिटिव' विद्युत का निर्माण होता है। 'पॉजिटिव चार्ज' पहाड़ों की चोटियों, ऊंची इमारतों आदि पर चढ़कर बादलों तक पहुंचने की कोशिश करते हैं। इनको पकड़ने के लिए एक पतला-सा हाथ बादलों में से निकल पड़ता है, जिसकी लंबाई ५० फुट तक हो सकती है। आकाश में यह हाथ एक प्रकार से गैसीय पथ है। इस गैसीय पथ में आकाशीय बिजली वैसा ही कार्य करती है जैसा कि ट्यूब लाइट में बिजली करती है। यह गैसीय पथ एक क्षण को ठहरता है। इतनी-सी देर में ही बादल में छाये 'ऐलेक्ट्रान' इस पथ पर ऐसे टूट-कर गिरते हैं जैसे शमा परवाने पर। तब यह पथ चौड़ा एवं चमकीला हो जाता है।

धरती के 'पाजिटिव' चार्ज के 'सर्प' ५० फुट ऊपर तक उठ जाते हैं। वैज्ञानिकों ने इनके चित्र तक लिये हैं। वैज्ञानिक भाषा में ये सर्प 'सेंट एल्मो की ज्वाला' के नाम से जाने जाते हैं। ये सर्प आकाश में लटके गैसीय पथ से मिलने का प्रयत्न करते रहते हैं। जैसे ही यह सर्प ऊपरवाले पथ से मिल जाता है वैसे ही धरती और आकाश के बीच एक रास्ते का निर्माण हो जाता। जिस स्थान पर ये दोनों मिलते हैं वहां बिजली चमक उठती है और गैसीय से ऊपर की ओर उठने लगती है। तब ऐसा महसूस होता है जैसे आकाश बिजली नीचे की ओर आ रही हो। लेकिन ऐसा होता नहीं है। गैसीय पथ में इतनी गरमी पैदा हो जाती है कि आस-पास हवा रास्ता छोड़ देती है। हवा के हटने ध्वनि की कगार टूट जाती है।

अगर बिजली तड़तड़ाना बंद हो तो संसार की सारी हरियाली ही नष्ट जाए। पेड़-पौधे की मुख्य खुराक नाइट्रोजन है। हमारे वायुमंडल में प्रचुर मात्रा में नाइट्रोजन विद्यमान है—लेकिन यह नाइट्रोजन घुलनशील न होने से बेकार है। पेड़-पौधों के भोजन योग्य बनने के लिए इसे प्रकार की प्रक्रियाओं से होकर गुजरना पड़ता है। मुख्य प्रक्रिया आकाश की बिजली द्वारा ही संपन्न होती है। बिजली की गरमी के कारण हवा में व्याप्त कणों का तापमान तीस हजार डिग्री सेंटीग्रेड तक पहुंच जाता है। इस भीषण ताप के कारण वायुमंडल में व्याप्त नाइट्रोजन एवं आक्सीजन मिलकर नाइट्रोजन आक्साइड गैस बन जाती है। धरती पर आते-आते यह नाइट्रिक एसिड के रूप में और मिट्टी में व्याप्त खनिज तत्वों के संपर्क से नाइट्रेट के रूप में बदल जाती है। यही नाइट्रेट पेड़-पौधों को हरा भरा रखता है।

—एफ १७४, गांधीनगर, जयपुर

पिछले अंक में आपने प्रख्यात हस्तरेखाविद प्रो. पी. टी. सुंदरम से मस्तिष्क रेखा के बारे में जानकारी प्राप्त की। अब यहां प्रस्तुत है मस्तिष्क रेखा की शेष जानकारी तथा हृदय रेखा का परिचय
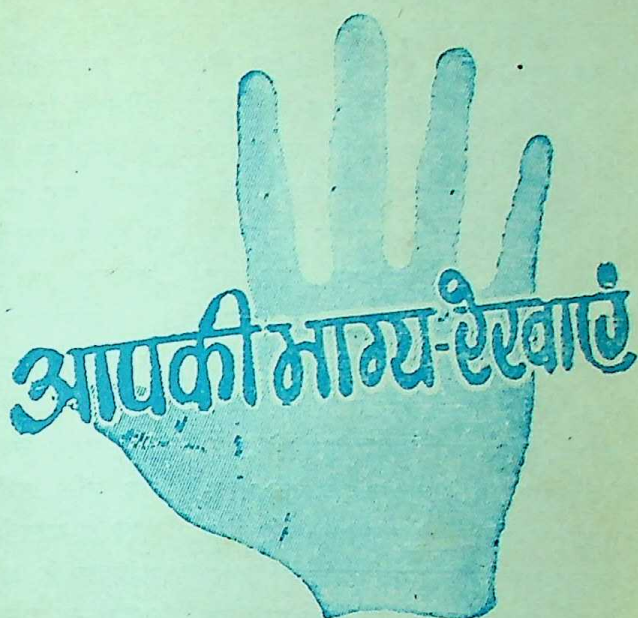
● पी. टी. सुन्दरम

मानव-मन की परिचायक : हृदय रेखा

हृदय रेखा की चर्चा करने से पहले मैं मस्तिष्क रेखा के बारे में कुछ और बातें बताऊंगा। कोणीय हाथ में चंद्र पर्वत की ओर झुकी मस्तिष्क रेखावाला व्यक्ति भावुक, प्रणयी एवं आदर्शवादी होता है। ऐसे व्यक्ति कलात्मक वस्तुओं के प्रशंसक होते हैं, उनके बारे में समझ भी रखते हैं, किंतु वे स्वयं अपने विचारों को व्यक्त नहीं कर पाते हैं। चूंकि ऐसे व्यक्ति जन-रुचि के जानकार होते हैं, वे अपनी कलात्मक प्रतिमा का व्यावसायिक लाभ उठा सकते हैं। संवेदनशील हाथों में तो मस्तिष्क रेखा चंद्र पर्वत की ओर झुकी रहती ही है। ऐसे हाथों में सीधी मस्तिष्क रेखा बहुत कम नजर आती है। संवेदनशील हाथ में सीधी मस्तिष्क रेखा परिस्थितियों-वश हुए स्वभाव-परिवर्तन को दर्शाती है। ऐसा स्वभाव-परिवर्तन उसे व्यावहारिक बना देता है। ऐसी रेखावाले व्यक्ति औरों के प्रोत्साहन से ही अपनी प्रतिभा का व्यावहारिक उपयोग कर सकते हैं।

किसी-किसी बच्चे के हाथ में मस्तिष्क रेखा चंद्र पर्वत पर असाधारण रूप से झुकी होती है। ऐसे बच्चे बड़े होने पर काफी

समझदार व स्पष्ट विचारधारावाले हो सकते हैं, किंतु जरा-सा आघात उन्हें असंतुलित बना देता है और वे विक्षिप्त हो जाते हैं। ऊंचे शनि पर्वत के साथ विकसित मस्तिष्क रेखा से व्यक्ति की निराश, हताश तथा विषादपूर्ण मनःस्थिति का पता चलता है। ऐसी रेखावाला व्यक्ति अकारण उदास रहता है। कभी-कभी तो यह उदासी इतनी बढ़ जाती है कि वह संतुलन खोकर विक्षिप्त हो जाता है। यदि मस्तिष्क रेखा हथेली के मध्य में न स्थित होकर ऊपर की ओर अर्थात हृदय रेखा की तरफ स्थित होती है तो व्यक्ति पाशविक भावनाओं का शिकार हो सकता है। ऐसे लोग अक्सर अपराधी-जीवन बिताते हैं। हृदय रेखा के स्थान पर मस्तिष्क रेखा का होना एक अशुभ चिन्ह है। ऐसी रेखावाले व्यक्तियों की मनोवृत्ति अपराधियों-जैसी होती है तथा जरा-सी उत्तेजना पर वे अपराध कर बैठते हैं। इस संबंध में पहले से काल-निर्णय भी किया जा सकता है। यदि हृदय तथा मस्तिष्क रेखा शनि पर्वत के नीचे मिलती हैं तो २५ वर्ष के पूर्व, शनि और सूर्य पर्वत के नीचे मिलती हैं तो ३५ वर्ष के पूर्व तथा यदि सूर्य पर्वत के नीचे मिलती हैं तो ४५ वर्ष के पूर्व व्यक्ति अपराध करता है।

किसी बच्चे के हाथ में इन रेखाओं को देखकर उसकी मानसिक प्रवृत्तियों का पता लगाया जा सकता है और उसे आवश्यकता के अनुसार शिक्षित किया जा सकता है ताकि वयस्क होने पर वह बुराइयों से बच सके।

प्रारंभ में जीवन रेखा से काफी ... मस्तिष्क रेखा यदि अंत में तीन शाखाओं में विभाजित होती हो, साथ ही विभि... स्थलों पर प्रभावक रेखाएं हृदय ... मस्तिष्क रेखाओं को काटती हों तो व्यक्ति विक्षिप्त तथा उग्र स्वभाव का होता है।

मस्तिष्क रेखा के बारे में जान... के बाद अब हम हृदय रेखा का अध्ययन करेंगे।

हृदय रेखा हाथ के ऊपरी हिस्से ... गुरु, शनि, सूर्य तथा बुध पर्वतों के मूल ... नीचे से गुजरती है। एक अच्छी हृदय रेखा कनिष्ठा के ७।८ इंच नीचे होती है ... हलका-सा घुमाव लेकर गुरु पर्वत अथवा गुरु एवं सूर्य पर्वत के मध्य तक पहुंचती है। यदि रेखा कटी न हो, उसमें द्वीप अथवा बिंदु न हों तो व्यक्ति स्नेहशील ... आदर्शवादी होता है। ऐसा व्यक्ति ... भी रहता है। ऐसी रेखाएं पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के हाथों में अधिक मिलती हैं। सामान्यतः हृदय रेखा इन तीन स्थानों ... निकलती है— गुरु पर्वत के मध्य ... तर्जनी एवं मध्यमा के मध्य से, या ... पर्वत के मध्य से।

गुरु पर्वत के मध्य से निकलनेवाली हृदय रेखा (**चित्र-१**) से उच्च ... की प्रेम-भावनाओं का पता चलता है। ऐसी रेखावाला व्यक्ति शक्तिशाली, ... बोलनेवाला तथा स्नेही होता है। ...

व्यक्ति अपने समान 'स्टेटस' की लड़की से विवाह करता है। उसके प्रणय-संबंध भी नहीं होते।

गुरु पर्वत से निकलनेवाली हृदय रेखा उत्साहातिरेक की द्योतक होती है। ऐसी रेखावाला व्यक्ति जिस स्त्री को चाहता है, उसकी गलतियों और दोषों की परवाह नहीं करता। वह उसकी पूजा-

है, वे स्वार्थी होते हैं और प्रणय-संबंधों में गहरी रुचि रखते हैं।

यदि हृदय रेखा काफी बड़ी है, अर्थात हथेली के एक सिरे से दूसरे सिरे तक पहुंचती है तो ऐसी रेखावाले व्यक्ति काफी स्नेहशील होते हैं। यदि हृदय रेखा हथेली के बाहर से निकलकर तर्जनी के मूल के पास समाप्त होती है तो उससे व्यक्ति के
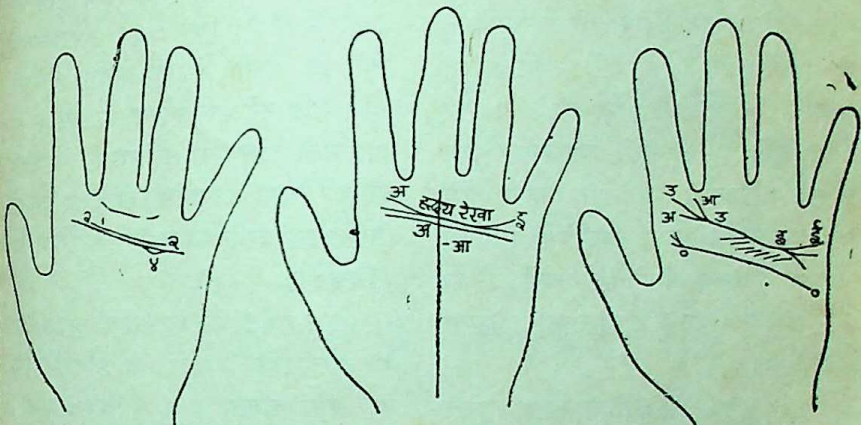
चित्र - ३ चित्र - २ चित्र - १

सी करता है। पर ऐसी रेखावाले व्यक्तियों को जिंदगी में आगे काफी कष्ट उठाना पड़ता है। वे जरा-सा भी धक्का बर्दाश्त नहीं कर सकते।

जब हृदय रेखा तर्जनी और मध्यमा के बीच से निकलती है (**चित्र : १–आ**) तो ऐसी रेखावाले व्यक्ति अत्यंत शांत होते हैं। उनका प्रेम भी गहरा होता है। ऐसे व्यक्ति गुरु से आदर्शवाद एवं शनि से व्यग्र स्वभाव पाते हैं। जिन व्यक्तियों के हाथों में हृदय रेखा शनि पर्वत से निकलती

ईर्ष्यालु होने का पता चलता है।

हृदय रेखा के नीचे से निकलनेवाली रेखाएं चंचलता और दिखावटी प्रेम की सूचक होती है। शनि पर्वत के नीचे से शुरू होने वाली जंजीर–जैसी हृदय रेखा स्त्रियों के प्रति तिरस्कार की भावना की द्योतक होती है। (**चित्र : १**)

गुरु के पर्वत से द्वि-शाखा के साथ शुरू होनेवाली हृदय रेखा से व्यक्ति के एक-निष्ठ स्वभाव का पता लगता है। ऐसी रेखावाले व्यक्ति प्रणय-संबंधों में बड़े ही

उत्साही होते हैं। (चित्र : २-अ-अ)

हृदय एवं मस्तिष्क रेखाओं का मिलना एक अशुभ-चिह्न है। ऐसी रेखावाला व्यक्ति किसी एक बात पर नहीं टिकता। हृदय रेखा का सर्वथा अभाव व्यक्ति के स्नेह-शून्य होने का द्योतक होता है। पर यदि ऐसे व्यक्ति की हथेली नरम है तो वह संवेदनशील होगा। (चित्र : २)

हृदय रेखा एवं मस्तिष्क रेखा के मध्य अधिक अंतर मानसिक रूप से विरक्त होने का द्योतक होता है। ऐसी रेखावाले व्यक्ति अच्छे पति नहीं होते और यदि यह अंतर बहुत होता है तो ऐसी रेखावाले पुरुष स्त्री के प्रति कोई प्रेम नहीं रखते तथा उसे लकड़ी का टुकड़ा समझते हैं। दोनों रेखाओं के मध्य संकरे अंतर की अपेक्षा ऐसा अधिक अंतर कुछ ठीक माना जाता है। (चित्र : २)

यदि हृदय रेखा की एक शाखा तर्जनी की ओर तथा दूसरी शाखा मध्यमा और तर्जनी के बीच जाती हो तो उससे व्यक्ति के शांतिपूर्ण जीवन, सौभाग्य तथा सफलता का पता चलता है। (चित्र : १) गुरु पर्वत पर हृदय रेखा का तीन शाखाओं में बंटना सम्मान और समृद्धि का सूचक है। (चित्र : १-०-०)

मस्तिष्क रेखा से बड़ी हृदय रेखावाले लोग भावुक होकर कार्य करते हैं। यदि ऐसे व्यक्तियों के हाथ में शुक्र पर्वत काफी विकसित हो एवं उसके साथ शुक्र वलय भी हो तो उनके अनेक प्रणय-संबंध होते हैं और कभी-कभी उनका अंत दु... में होता है।

बुध पर्वत की ओर मुड़ी हृदय रेखा से धन के बारे में बेहद चिंता का पता चलता है। (चित्र : १-ई) यदि यह रेखा चंद्र पर्वत की ओर मुड़ जाए तो व्यक्ति की भावनाएं विकृत होती हैं।

हृदय रेखा का बीच में टूटना है संबंधित व्यक्ति के भग्न-हृदय होने की सूचना देता है (चित्र : ३)। पर जरूरी नहीं कि ऐसी स्थिति हमेशा ही बनी रहे। यदि टूटे हुए स्थान पर वर्ग है, या कोई नयी रेखा पुरानी रेखा से निकलकर टूटे हुए स्थान को जोड़ रही है तो संबंधित व्यक्ति इस धक्के को बर्दाश्त कर लेता है। (चित्र : ३-२-२)

बुध पर्वत को घेरनेवाली हृदय रेखा से रहस्यमयी विद्याओं के प्रति जिज्ञासा का पता लगता है। (चित्र : २-ई) बिलकुल सीधी हृदय रेखावाला व्यक्ति काम-संबंधों में नारी-सुलभ प्रकृति रखता है। अनेक स्थानों पर टूटा शुक्रवलय भी असामान्य संवेदनशील स्वभाव का द्योतक होता है (चित्र : ३)। ऐसा व्यक्ति समलैंगिक होता है। ऐसे व्यक्ति की काम-पिपासा भी काफी बड़ी उम्र तक कम ही होती है।

सीधी हृदय रेखावाली स्त्रियां अपने से अधिक वयवाले लोगों का ध्यान आकर्षित करती हैं। स्वयं उन्हें भी उनका साथ पसंद होता है।

(क्रमशः)

गली आगे मुड़ती है : परिवेशों का संघर्ष

गली आगे मुड़ती है एक वृहद्काय उपन्यास है, जिसे चाहें तो महाकाव्यात्मक उपन्यास की संज्ञा दी जा सकती है। छह वर्ष पूर्व काशी में हुए हिंदी आंदोलन की पृष्ठभूमि पर रचित यह उपन्यास काशी की चतुर्दिक स्थितियों का अवलोकन कराता है। वहां की बोली, रहन-सहन, तीज-त्योहार सब मिलाकर एक ऐसा सांस्कृतिक परिवेश तैयार करते हैं जो इसे आंचलिक उपन्यास के बहुत समीप ले आता है।

उपन्यास में मोड़ एक अनिश्चित स्थिति का द्योतक है, जो छात्र-जीवन में समाया हुआ है। वे सही और अनिश्चित दिशा के लिए भटक रहे हैं। तथाकथित समाज के ठेकेदार उस भटकाव का फायदा उठा रहे हैं। रामानन्द तिवारी इस उपन्यास का केंद्र है, जिसके द्वारा लेखक पूरे उपन्यास में उपस्थित रहता है। यह एक विद्यार्थी है जो समय-समय पर विश्वविद्यालयीय राजनीति का शिकार होता है। इस घृणित दलबंदी में भट्टाचार्य–जैसे मुट्ठीभर शिक्षक जरूर हैं जो रामानन्द–जैसे विद्यार्थियों के प्रेरक बनते हैं, किंतु उनकी आवाज नक्कारखाने में तूती से ज्यादा नहीं। इसके साथ नन्दू, हरिमंगल, हौसला प्रसाद, देबू, रमेंद्र आदि कुछ और छात्र नेता भी हैं जो नये जोश-खरोश और आक्रोश को लेकर बढ़ते हैं, किंतु अंततः बुर्जुआ राजनीति के समक्ष मोहरे बनकर रह जाते हैं। उनके पास बल और कुछ कर गुजरने की लगन है, पर एक निश्चित योजना के अभाव में वे तूफान का एक बहाव मात्र रह जाते हैं। यही कारण है कि रज्जो की इज्जत का बदला लेने में असफल रहते हैं और टुन्नू गुरु-जैसे अजगर इसका फायदा उठाते हैं।

प्रतिपाद्य की दृष्टि से यह उपन्यास काशी में आ रही आधुनिक दृष्टि का संकेत देता है। हरिजनों के प्रति सौहार्द और सहानुभूतिपूर्ण रुख—जाति-पांत के अवरोधों का सफाया—सामाजिक बैनर का बहिष्कार कर प्रेम का प्रसार काशी के नवीनीकरण के सोपान अवश्य हैं, पर उसकी पुरानी जड़ें अभी काफी गहरी हैं, जिसका संकेत रज्जो की विक्षिप्त मनः-स्थिति, आरती का भविष्य, किरण का दूसरी जगह विवाह देते हैं। वास्तव में यह

सब छात्रों की एकता और संगठन के अभाव का द्योतक है।

उपन्यास में कथाफलक विस्तृत है। पात्रों की संख्या इतनी है कि प्रत्येक पात्र अपने साथ एक कथा लेकर चलता है। ये कथाएं कहीं-कहीं पाठकों को उलझा देती हैं। लेखक उपन्यास में इस कोने से उस कोने तक काफी दौड़ता रहा है। यही कारण है कि उपन्यास का केंद्र छात्र-राजनीति और विश्वविद्यालीय परिवेश बहुत साफ तौर से उभरकर नहीं आ पाये हैं। छात्र-राजनीति की बात करते-करते लेखक पंडों और साधुओं को सामने ले आता है। हो सकता है कि काशी के विभिन्न सांस्कृतिक पक्षों को उभारना भी लेखक का उद्देश्य रहा हो, किंतु उससे उपन्यास की तार-तम्यता को क्षति पहुंचती है। यदि लेखक कथा-विस्तार का मोह त्यागकर कुछ मसलों तक ही अपने को सीमित रख लेता तो एक नयी भावभूमि पर रचित यह उपन्यास अपना विशिष्ट स्थान रख सकता था। वैसे उपन्यास सहजता और स्वाभाविकता में जीता है। पढ़ते हुए लगता है, पाठक काशी की संकरी गलियों तथा गंगा के घाटों पर विचर रहा है। कुल मिलाकर संस्कारों और आधुनिकता का टकराव तथा परिवेशों का संघर्ष है।

गली आगे मुड़ती है :
लेखक : शिवप्रसाद सिंह, प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृष्ठ : ४९२, मूल्य : २५ रु.

एक संदर्भ-ग्रंथ

हिंदी संदर्भ में हिंदी की विभि[illegible] पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों, संपादकी[illegible] टिप्पणियों एवं पत्रादि की विषयानु[illegible] सूची दी गयी है। यह संदर्भ ग्रंथ राजस्था[illegible] विश्वविद्यालय पुस्तकालय की एक प्रायो[illegible]गिक योजना के अंतर्गत प्रकाशित कि[illegible] गया है। शोध करनेवाले व्यक्तियों के लि[illegible] यह एक उपयोगी प्रकाशन सिद्ध होगा

हिंदी संदर्भ
संपादक : उमेशचंद्र टंडन, प्रकाशक : राजस्थान विश्वविद्यालय पुस्तकालय, ज[illegible]पुर, पृष्ठ : ४२४, मूल्य: ४५ रुपये।

खड़ी बोली की प्रथम रामाय[illegible]

अरुण रामायण में तुलसीदास [illegible] रामचरितमानस को आधार बनाकर [illegible] युग-संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। रा[illegible] और भरत को लेखक ने लोकतंत्र [illegible] उन्नायक और मानवता के आध्यात्मि[illegible] उन्मेषक रूप में चित्रित किया है। [illegible] शंकासुर–जैसे अनेक नये चरित्रों [illegible] उद्भावना तथा अहिल्या–जैसे चरित्रों [illegible] पुनर्मूल्यांकन किया गया है। कथा-नियोज[illegible] में प्रसंग-चयन के प्रति कवि अधिक संवे[illegible] प्रतीत नहीं होता। परवर्ती जैन और बौद्धों के रामकाव्यों के प्रक्षिप्त अंशों [illegible] भी उसने ग्रहण किया है, जिसके परिणा[illegible] स्वरूप कहीं-कहीं उसके चरितनायक और नायिका की धारणा को ठेस पहुंचती है

अरुण रामायण
लेखक : पोद्दार रामावतार, प्रकाशक : किरणकुंज प्रकाशन, समस्तीपुर (बिहार), पृष्ठ ६५०, मूल्य : २० रुपये

व्यंग्य-रचनाओं का संकलन

शहर बंद क्यों है ? में आज की विभिन्न राजनीतिक-सामाजिक स्थितियों पर तीखा व्यंग्य किया गया है। यह सुथरा व्यंग्य है। स्थितियों का चित्रण करते-करते लेखक जबरदस्त प्रहार कर जाता है। आज की व्यवस्था के लिए जिम्मेदार स्थितियों और वर्गों को लेखक ने विशेष रूप से उठाया है। भाषा सीधी-सरल है। प्रायः रचनाएं लघु और रोचक हैं।

शहर बंद क्यों है ?
लेखक : **सुबोधकुमार श्रीवास्तव, प्रकाशक: नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली--पृष्ठ १२५, मूल्य ६ रुपये**

कहानी-समीक्षा

कहानी और कहानी-समीक्षा का मूल्यांकन--इसमें पैंसठोत्तरी कुछ युवा लेखकों की कहानियों की समीक्षाएं प्रस्तुत की गयी हैं। पैंसठ-पूर्व कहानियों से इनका भेद परिवेश-बोध और सम्वेदना के आधार पर किया गया है। समीक्षकों ने लेखक-विशेष पर अपनी दृष्टि विशेष को ही उसका आधार बनाया है। इनमें से अधिकांश समीक्षक स्वयं कहानीकार भी हैं। इसीलिए यह पुस्तक एक मंच बन गयी है, जिस पर आलोचक और कहानीकार उठापटकी करते हुए अपनी-अपनी विजय के डंके बजाते हैं। इस धरपटक का शिकार कभी नामवर सिंह हुए हैं तो कभी मोहन राकेश, कभी रमेश बक्षी तो कभी निर्मल वर्मा। अपने-अपने मोर्चे संभाले हुए ये समीक्षाएं पाठकों को कोई सुलझी दृष्टि प्रदान न करके 'कन्फ्यूजन' पैदा करती हैं। साहित्यिक धुरंधरों को अवश्य इसमें दिलचस्पी हो सकती है।

कहानी और कहानी समीक्षा का मूल्यांकन संपादक : इन्द्रनाथ मदान, राकेश वत्स, प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृष्ठ : २८०, मूल्य : २५ रुपये।

शोध-प्रबंध

आधुनिक हिन्दी साहित्य को अहिन्दी लेखकों का योगदान--यह एक शोधप्रबंध है, जिसमें अहिंदी लेखकों की हिंदी रचनाएं और उनका हिंदी साहित्य में योगदान तथा महत्त्व आंका गया है। इनमें से मनहर चौहान, प्रभाकर माचवे, रांगेय राघव--जैसे लेखक तो हिंदी के ही होकर रह गये हैं। संभवतः बहुत कम पाठकों को इनके अहिंदी होने का भान होगा। विभिन्न भाषाओं के चुने हुए लेखकों की चुनी हुई रचनाओं, उनकी भाषा और प्रतिपाद्य पर विचार किया गया है। लेखक ने विषय को भारतेंदु, द्विवेदी, छायावाद और छायावादोत्तर श्रेणी में बांटा है, जिससे उसे विवेचन हेतु अपेक्षा-

कृत कम लेखक मिले हैं। हिंदी के लेखन और उसकी परिस्थितियों में अहिंदी लेखन कैसा था इसकी एक अच्छी झलक प्रस्तुत शोध में मिल जाती है। यह साहित्यिक जिज्ञासुओं के लिए उपयोगी सिद्ध ...।

—डॉ. शशि ...

आधुनिक हिन्दी साहित्य को अहिन्दी लेखकों का योगदान

लेखक : डॉ. विलास गुप्ते, प्रकाशक : हिन्दी प्रचारक संस्थान, पिशाचमोचन, वाराणसी, पृष्ठ ३५८, मूल्य : ३० रुपये।

दो कविता-संकलन

मृत शिशुओं के लिए प्रार्थना प्रणव-कुमार वंद्योपाध्याय की 'काल पुरुष का जन्म,' 'समुद्र मन', और 'सूर्य-यातना का काव्य' तीन भागों में विभक्त पैंतीस कविताओं का संकलन है। कविताओं में मुख्यतः स्मृति की भीत पर धब्बेनुमा उगी मानव-आकृतियों को सुव्याप्त अंधकार से मुक्त करने की आंतरिक आकांक्षा है, तड़प है। यह तड़प ही प्रार्थना के स्वर में मुखरित हुई है। कवि-दृष्टि के हर फलक पर जब-जब जीवन और समाज के ऐतिहासिक या तात्कालिक वैषम्य के क्रूरतम दृश्य उभरे हैं, तब-तब करुणाहत कवि के अव्यक्त मौन को प्रार्थनाओं के स्वर में मुखरित करती कविताओं का जन्म हुआ है। कवि की तड़प निजी नहीं, सर्वजन की तड़प है। हालांकि भाषायिक संरचना और शब्द-व्यवहार की क्लिष्टता इस धरती से दूर उसके आत्मनिष्ठ, ...जीवी होने का भ्रम पैदा कर देती है ...युद्ध चाहे ध्वनिहीन ही क्यों न हो, ...ार से लड़ते हुए मानव-युक्ति की ...पटाहट का युद्ध, युद्ध ही है। यही ... है कि 'कल्याणी मां के मुख' के ... एक खुला निवेदन सारी आंतरिक ... बाह्य कठिनाईयों को स्पष्ट करता, ... आशीर्वाद को लेकर अनवरत युद्ध के लि... तत्पर दिखायी देता है।

मृत शिशुओं के लिए प्रार्थना
लेखक : प्रणव कुमार वंद्योपाध्याय
प्रकाशक : पांडुलिपि प्रकाशन, ई—११... कृष्ण नगर, दिल्ली—५१, पृष्ठ: १२... मूल्य : ८ रुपये

ओ छूटे हुए रास्तो ! जीवन प्रकाश जोशी की छह लंबी कविताओं का संकलन है। कविताओं में युग-बोध एक भुतहा प्रेरणा से आक्रांत आंतरिक ऐंठन के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। शायद इसीलिए 'रात भर नींद नहीं आने' से एक ही कविता में संदर्भ जगह-जगह टूटे हुए हैं, हालांकि आधुनिक बोध के आयामों से चोट खायी सम्वेदनाओं का दर्द आक्रोश और मुखर तड़प के स्वर में उभरा है।

—मीना सिंह

ओ छूटे हुए रास्तो !
लेखक : जीवन प्रकाश जोशी, प्रकाशक : सन्मार्ग प्रकाशन, बंगलो रोड, दिल्ली—६, पृष्ठ : ४०, मूल्य : ५ रुपये

मुझे १९५६ में लोकसेवा-आयोग के समक्ष विभाग के एक पद के चयन-हेतु एक साक्षात्कार में जाना पड़ा। मेरे निदेशक भी इंटरव्यू बोर्ड में थे। पद की अर्हताएं कुछ ऐसी थीं कि एक ही व्यक्ति आ सकता था। इंटरव्यू हो चुका तो मैंने भी आयोग से एक प्रश्न पूछने की अनुमति मांगी। मैंने पूछा कि जब अर्हताओं में हेरा-फेरी करके पात्रता का क्षेत्र इतना सीमित रखा गया हो कि उसके अंतर्गत एक ही व्यक्ति आता हो तब पद को उन अर्हताओं के आधार पर विज्ञापित करना क्या न्याय-संगत है? आयोग को जब मेरी बात पर विश्वास हो गया तब उन्होंने मेरा चयन तो कर लिया, और निदेशक को यह बता भी दिया कि इस मामले में कुछ अनुचित कार्यवाही का भी आभास होता है; निदेशक ने पहले तो मेरी नियुक्ति पर ही आपत्ति उठायी। जब उनकी इस बात के विरुद्ध शासन ने व्यवस्था दे दी तब उन्होंने मेरे उस पद पर कुछ समय कार्य कर लेने के बाद वह पद ही समाप्त करवा दिया!

—बृजवल्लभ रैन्दड़, लखनऊ

मेरे दफ्तर में वर्क-चार्ज कर्मचारियों का वेतन बनाया जाता है। उन कर्मचारियों की नियुक्ति भी उसी कार्यालय में की जाती है। नियुक्ति हो जाने पर प्रत्येक को एक 'एटैस्टेशन फार्म' भरना पड़ता है। एक बार मेरे पास एक बेलदार फार्म भरवाने आया। बाद में उसने एक-एक रुपये के चार नोट मेरी मेज पर रख दिये। फिर हाथ जोड़कर बोला, "बाबूजी, एक रुपया कम है।" मैंने कहा, "भाई तुमसे पैसे मांगे किसने?"

"बाबूजी, मेरे एक साथी ने इन सामने

वाले बाबूजी को फार्म भरने के पांच रुपये दिये थे," उसने एक क्लर्क की ओर इशारा करते हुए कहा। मुझे बहुत क्रोध आया। और मैं उस क्लर्क से उलझ पड़ा। यह विवाद हमारे अधिकारी के कान में भी पड़ा। उन्होंने मुझे बुलाकर लड़ाई का कारण पूछा। अगले ही दिन उस क्लर्क का तबादला कर दिया गया।

—भगवानदास 'व्यथित', मंडी (हि. प्र.)

एम. बी. बी.एस. की उपाधि प्राप्त करने के बाद मेरी नियुक्ति जिला स्वास्थ्य-अधिकारी के पद पर हुई, जो मात्र एक

लाख कोशिशों के बावजूद, आप अपने शौचालय की पूरी सफ़ाई नहीं कर सकते—
रात को थोड़ा सा सॅनिफ्रेश छिड़किए, बस!
दाग-धब्बे मिट जायेंगे
बिना किसी मेहनत के, आपका शौचालय चमक उठेगा
PERFUMED
Sani Fresh
LAVATORY CLEANSER
CLEANS! DEODORISES! DISINFECTS!
आपके परिवार की तंदुरुस्ती बनी रहेगी
बलसारा
—सुखी जीवन के लिए आधुनिक साधन
BALSARA बलसारा एण्ड कं. (प्रा.) लि.
४१, नगिनदास मास्तर रोड, बंबई ४०० ००१
CHAITRA-BLS 8 HIN

प्रशासनिक पद है। रोगी की परिचर्या के स्थान पर मिली एक दफ्तर की घुटनभरी जिंदगी। ऑपरेशन-थियेटर के औजारों की खनक के स्थान पर टाइपराइटरों की 'टक्-टक्' हथौड़े की चोट-सी महसूस होती थी। बड़े बाबू से आये-दिन चक-चक होती थी। गुस्सा तब और भी आता जब उनके कहने पर प्रत्येक कागज पर हस्ताक्षर करने को बाध्य होना पड़ता। यदि किसी विषय पर विपरीत राय देता, तो राजस्थान-सेवा-नियमों का हवाला देकर डरा देते। तंग आकर, नेत्र-रोगों में पी. जी. करने चला गया। अब संतोष अनुभव कर रहा हूं।

—डॉ. हरिन्द्रसिंह नागपाल, बासनी (नागौर)

आज से ग्यारह वर्ष पूर्व, ठेकेदार पचास हजार रुपयों का चेक लेकर दस रुपये मुझे देने लगा। गुस्सा तो बहुत आया किंतु मैं केवल इतना ही कह सका था—'इसे रख लीजिए। मेरे काम का वेतन मुझे मिल जाता है।' उत्तर सुनकर उन बूढ़ी आंखों की गहराई से मेरे प्रति विश्वास की एक लहर उमड़ आयी।

कल एक फटेहाल आदमी दो सौ रुपये का ऋण लेने दफ्तर में आया था। कह रहा था—'चलिए साहब, चाय-वाय पी आते हैं।' जब उसने देखा कि मुझे यह बात पसंद नहीं आयी तब दस रुपयों का मुड़ा-तुड़ा नोट मेरी ओर सरकाते हुए कहने लगा—'साहब, बीबी बीमार है, लोन जरा जल्दी चाहिए . . .।'

मन में तो आया कि कहूं निकल जा यहां से। लेकिन काम कर दिया मैंने; हालांकि उसे विश्वास नहीं हो पाया कि बिना घूस के भी कोई काम हो सकता है।

—भगवान वैद्य 'प्रखर', भिलाई

मैं सांख्यिकी विषय से संबद्ध राजपत्रित अधिकारी हूं। मुझे योजना के हित में दो महीने में ही एक 'विशेष कार्यक्रम' आरंभ करना था। इस हेतु आवश्यक सभी कार्यक्रम से संबंधित प्रारंभिक तैयारियां समय रहते ही पूर्ण करनी थीं। संबंधित आवश्यक सांख्यिकीय पुस्तकें भी क्रय की जानी थीं। पुस्तकों के प्रकाशकों एवं विक्रेताओं के नाम ज्ञात न होने के कारण एक टीप पत्र लिखकर मैंने अपने कंट्रोलिंग ऑफिसर को प्रस्ताव भेजा कि भोपाल मुख्यालय से इन पुस्तकों के प्रकाशकों एवं विक्रेताओं के पते मंगा लिये जाएं ताकि उनसे 'कोटेशन' मंगाकर पुस्तकें खरीद ली जाएं।

मेरे उस टीप पत्र पर यह रिमार्क लिखकर भेजा गया 'नॉट नाउ' (अभी नहीं)! मैं समझ नहीं पाया कि केवल प्रकाशकों के नाम, पते मंगवाये जाने से कौन-सी असुविधा महसूस की गयी होगी!

—अनुज शर्मा, रायपुर

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत हों पर वे १५० शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिए —संपादक

कालेज के कम्पाउंड से

पूर्वार्द्ध एम.एस-सी. (गणित) में 'लैप-लास-ट्रांसफॉर्म का' पीरियड हो रहा था। शिक्षक आये और हाजिरी लेने लगे। कक्षा में पहली बेंच लड़कियों के लिए रिजर्व रहती है। एक लड़की अपनी स्वप्निल दुनिया में मस्त थी। उसका नाम भी पुकारा गया, दो-तीन बार तक। मैंने भी इशारा किया, लेकिन वो तो न जाने कहां खोयी थी! जब शिक्षक ने रजिस्टर बंदकर चाक हाथ में उठाया तब वह चौंककर खड़ी हो गयी और बड़ी नाटकीयता से बोली, "सर, फिफ्टी वन!" शिक्षक ने हाजिरी तो बना दी, लेकिन उनके मुंह से निकल पड़ा—"नियरेस्ट फ्राम द चर्च, फारदेस्ट फ्राम द गॉड!"

——रावेल पुष्प,
गणित विभाग, पटना विश्वविद्यालय

यह स्तम्भ युवा-वर्ग के लिए है। कालेज के छात्र-छात्राएं इसके लिए रोचक एनकडोट्स भेज सकते हैं। रचना के साथ अपना चित्र और कालेज का पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना आवश्यक है, अन्यथा रचना पर विचार नहीं किया जाएगा।
——संपादक

अर्थशास्त्र की परीक्षा हो रही थी। प्रश्न-पत्र तनिक अग्राह्य था। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि एक नव-विवाहिता, जो मेरी बायीं ओर बैठी थी, बड़ी तत्परता से कलम चला रही थी। एकाएक उसकी कलम रुक गयी। एक निरीक्षक ने उसे नकल करते हुए पकड़ लिया था। लेकिन नकलवाले कागज को वह तुरंत निगल गयी। मुझसे न रहा गया। खड़ा होकर तुरंत बोला, "अरे! अब तो आपके धिया-पुता (बेटी-बेटा) भी नकल करेंगे।" युवती बहुत लज्जित हुई।

——सुरेन्द्र 'सुमन'
द भवानीपुर एजूकेशन सोसायटी कालेज,
कलकत्ता

बी. ए. (तृतीय वर्ष) की छात्रा हूं। हमारे कॉलेज में विदाई-समारोह था। हम छात्राओं को विचित्र वेशभूषा में आमंत्रित किया गया था। मैं पठान बनी और छुरा दिखाकर उपस्थितों से गहने, घड़ियां, पेन आदि छीन लिये। कॉलेज में राजनीति-शास्त्र की एक नयी, सुंदर अध्यापिका अनुराधा दीदी हैं। मैंने प्रधानाचार्या से कहा कि मेरी इनसे शादी करवा दीजिए। फिर उन्हें प्रियतमा बनाकर शर सुनाये और जयमाला भी पहनायी।

आज भी मुझे सब खां साहब कहकर बात करते हैं, और पूछते हैं, "हसीना कहां है?"

——जयश्री आशर,
वसंत महिला महाविद्यालय, वाराणसी

हमारे रसायन-शास्त्र के शिक्षक लगन के बड़े पक्के थे। छमाही परीक्षा समीप ही थी। एक दिन कक्षा में आते ही वे ब्लैक-बोर्ड की ओर पढ़ाने के लिए मुड़े ही थे कि सीटी की आवाज आयी। शिक्षक बहुत शिष्ट और सरल थे। उन्होंने बार-बार कहा, "जिससे गलती हो गयी है स्वीकार कर ले। हम अपने बच्चों को दंड नहीं देंगे।" चार दिन बीत गये, पर छात्र अपनी गलती मानने को तैयार नहीं हुए। शिक्षक भी चुपचाप आकर बैठे रहते। पांचवें दिन एक लड़के ने अपनी गलती स्वीकार कर ली। लेकिन बाद में पता-चला कि गलती की स्वीकारोक्ति उसने केवल पढ़ाई का नुकसान न होने के लिए की थी। उसने न तो सीटी बजायी थी और न ही उसे यह पता था कि यह सीटी किसने बजायी।

—सुनील श्रीवास्तव,
९५/३ सर्वोदय नगर, इलाहाबाद

मैंने एन.ई.एस. विज्ञान महाविद्यालय में द्वितीय वर्ष में प्रवेश लिया। पहले ही दिन लाल कमीज पहने एक छात्र ने अपने व्यवहार से मुझे प्रभावित कर लिया।

दूसरे दिन वैसी ही कमीज पहने जाते हुए एक व्यक्ति को मैंने आवाज दी—"ए लाल शर्ट, जरा रुकना!" पास पहुंचा, तो मुझे भूल का पता लगा, क्षमा मांगकर कक्षा में पहुंचा, तो देखा कि वे ही सज्जन हाजिरी ले रहे हैं! उन्होंने मुझे देखते ही शब्द-बाणों की बौछार शुरू कर दी। फिर पूछा "किस कालेज से आये हो?" "गवर्नमेंट साइंस-कालेज से।" वे बिफरकर बोले, "एक साल में अपने आपको क्या समझने लगे हो? मैं भी उस कालेज में छह साल रह चुका हूं और 'ये सब' करके छोड़ चुका हूं।"

मैं बोला, "सर, जब आप 'ये सब' वर्षों तक कर चुके हैं तब मेरा तो यह दूसरा ही वर्ष है!"—अनिल खम्परिया,
टीचर्स कालोनी, चेरीताल, जबलपुर

बायें से: अनिल खम्परिया, रावेल पुष्प, सुनील श्रीवास्तव, जयश्री आशर, सुरेन्द्र 'सुमन'

"सामाजिक विभीषिकाओं से साहित्यिक चेतना आक्रांत है। उसी की अभिव्यक्ति आज साहित्यकार का धर्म है। इसी विश्वास की कलम से कविता लिखता हूं। ५०० गीत लिख चुका हूं। प्रकाशन का शौक पहले नहीं चर्राया, पर अब जरूरी लगता है, नहीं तो सामाजिक दशा का ज्ञान मेरी कविता को कैसे हो सकेगा! मेरठ विश्वविद्यालय से संबद्ध एम. एम. एच. कॉलेज, गाजियाबाद में एम. ए. हिंदी-साहित्य का छात्र हूं। कामना है, लेखन से प्रतिबद्धता तब तक साथ रहे जब तक सांस शरीर के साथ रहने को प्रतिबद्ध है!"

कहां जाएं हम लो

भरी हुई है गली धुएं से
घर में घुप्प अंधेरा
थके-थके-से पांव प्राण के
कोई नहीं बसेरा
कहां जाएं हम
भारी एक उमस भीतर है
बाहर घने अभाव
मरहम वही पुराना, बासी
ताजे-ताजे घाव
हंसती हुई आंख के घर में
लगा अश्रु का डेरा
कहां जाएं हम
उलझी-उलझी भाषाओं में
टूटे हुए वचन
सिहरी हुई आस ने खोये
सब अनमोल रतन
अभी रात का बीहड़ जंगल
है दूरस्थ सवेरा
कहां जाएं हम

—प्रेम कपूर

१४९, श्रीकृष्ण भवन, तुराबन
गाजियाबा

• मनोज दीक्षित

लहसुन : एक रसायन

प्रकृति ने हमें ऐसी बहुत-सी वस्तुएं प्रदान की हैं, जिनके नियमपूर्वक उपयोग से प्रचुर लाभ मिल सकते हैं। लहसुन भी इन्हीं में है। वनस्पति शास्त्र में इसे एलियम सेटीवम कहते हैं। हमारे धर्मग्रंथों में इसके गुणों का वर्णन तो है, पर अधिक नहीं। इसके गरम स्वभाव के कारण भारत–जैसे गरम देश में आचार्यों ने इसे अनुपयुक्त समझा है।

प्रथम महायुद्ध में डॉक्टरों ने लहसुन के पानी से घायल सिपाहियों के बदबूदार घावों तक को एकदम साफ कर दिया था। इसी तथ्य को लेकर यूरोप तथा अमरीका के डॉक्टरों ने इसे कीटाणुनाशक माना है। वास्तविकता यह है कि लहसुन वास्तव में 'महान परोपकारी' है। इन्हीं गुणों के कारण आयुर्वेदज्ञों ने इसे रसायन (यौवन-प्रदाता) की उपाधि प्रदान की है।

वर्तमान वैज्ञानिक विश्लेषण के अनुसार लहसुन में ६२.८ प्र.श. पानी, ६.३ प्र.श. प्रोटीन, ०.७ प्र.श. वसा, २९.० प्र.श. कार्बोहाइड्रेट, १.० प्र.श. खनिज लवण, ३.०३ प्र.श. कैल्शियम, ०.३१प्र.श. फास्फोरस, १.३ मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम लोहा तथा १३ मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम विटामिन 'सी' है।

चूंकि लहसुन में विटामिन 'सी' भी पाया जाता है इसलिए यह दौर्बल्य को नष्ट करता है। इसके साथ-साथ क्षय रोग, खांसी, सर्दी-जुकाम और निमोनिया में आशातीत लाभ पहुंचाता है। निमोनिया पर इसके प्रभाव से उत्तेजित होकर डॉ. क्रासमैन ने लिखा —"निमोनिया-जैसी भयंकर बीमारी में लहसुन की उचित मात्रा देने से रोग का समूल नाश हो जाता है।"

शरीर-संवर्धन के लिए इसके तेल से मालिश भी की जाती है। नियमित रूप से मालिश करते रहने से लहसुन कुछ ही दिनों में अपने गुणों की धाक छोड़ देता है।

खांसी में, जबकि फेफड़ा 'कफ' से बुरी तरह जकड़ा होता है, यह कफ को पतला कर बाहर लाने में मदद करता है, जिससे खांसी दूर होकर गला साफ हो जाता है। आवाज में भी मधुरता आ जाती है। इसका प्रयोग शीत ऋतु में करना अधिक लाभप्रद है। गरमी में भी उपयोग कर सकते हैं, पर उचित मात्रा में।

जब रुधिर में 'कोलेस्ट्रोल' की मात्रा

वचन-वीथी

प्रसन्नताएं उतनी उजली नहीं होतीं जितनी हम आशा करते हैं और न दुख उतने गहन होते हैं जैसी हम कल्पना करते हैं।
—चार्ल्स रीड

जो क्षण भर के गुस्से को पी जाता है, वह दिन भर के दुख से बच जाता है।
—ट्रिआन एडवर्ड्स

उस मित्र से अलग हो जाना ही बुद्धिमानी है जो शत्रुओं से सहयोग करता है। —सादी

सच्चा आनंद बुद्धि की सक्रियता और शरीर का परिश्रम दोनों के होने पर उत्पन्न होता है। —हमबोल्ट

एक पक्ष की बात सुनने पर आदमी अंधेरे में रहता है और दोनों पक्षों की सुनने पर सब कुछ स्पष्ट हो जाता है।
—हेलीबर्टन

एक अपराध करने पर हजारों भय और दुश्चिताएं जन्म लेती हैं। —वर्ड्सवर्थ

मानवता गुणों की जननी, जड़, दाई और नींव है। —क्रिसोस्टम

बढ़ जाती है तब शरीर मोटा पड़ जाता है। लहसुन कोलेस्ट्रोल की मात्रा कम करके चर्बी और प्रोटीन को घुलनशील बनाता है।

लहसुन रक्त की धमनियों को अवरुद्ध होने से रोकता है। 'हाई-ब्लड-प्रेशर' में भी यह लाभदायक सिद्ध होता है। लहसुन में नींद लाने का भी गुण है।

सुप्रसिद्ध ब्रिटिश डॉक्टर साइरल स्कॉट ने लिखा है—'चूंकि लहसुन में आयोडीन होती है, अतः यह एक 'एंटी-टॉक्सिन' का कार्य भी करती है क्योंकि आयोडीन से ग्रंथियों में उत्तेजना होती है और उत्तेजना के दौरान विष बाहर निकल जाते हैं।

आयोडीन की वजह से लहसुन घेंघा (गंडमाला) में भी लाभ पहुंचाता है। अफारा या पेट के फूलने, मिरगी या अपस्मार, लकवा, हिस्टीरिया, स्नायु-रोग, दमा, जोड़ों के दर्द, रक्त की धमनियों के सुस्त होने आदि अनेक बीमारियों में भी लहसुन का प्रयोग लाभदायक है।

तीखा होने से हरेक इसका उपयोग नहीं कर सकता। इसे घी में भूनकर खाना चाहिए जिससे हृदय की कमजोरी तथा शारीरिक दुर्बलता भी सदा के लिए नष्ट हो जाए। लहसुन को पानी में उबालकर उसके पानी का भी उपयोग किया जा सकता है। सब्जियों में डालने से सब्जियों में पाये जानेवाले विष भी नष्ट हो जाते हैं तथा स्वाद भी अच्छा हो जाता है।

—१०एफ/७३, नवराजनगर, गाजियाबाद

कैंसर वार्ड

• सोल्जेनित्सिन

डॉक्टर ने पावेल निकोलाईविश रुसानोफ के प्रवेश-कार्ड पर विग-नंबर १३ लिखा तो उसका हृदय डूब गया। विग नंबर १३ में कैंसर के रोगी रखे जाते थे। पावेल की गरदन में रसोली निकल आयी थी तथा उसके दर्द के कारण वह बेहद परेशान था।

"क्या यह कैंसर है डॉक्टर? नहीं! नहीं! मुझे कैंसर नहीं है न?" पावेल ने आशा भरे स्वर में डॉक्टर से पूछा। डॉक्टर

'कैंसर वार्ड' नोबल पुरस्कार विजेता, प्रसिद्ध रूसी लेखक अलेक्जांडर सोल्जेनित्सिन का बहुचर्चित उपन्यास है, जिसके लिए उन्हें विदेशों में प्रशंसा किंतु स्वदेश में सत्ता और उसके समर्थकों की निंदा का पात्र बनना पड़ा। इस उपन्यास में एक वार्ड में मौजूद पात्रों के माध्यम से लेखक ने सोवियत व्यवस्था के दोषों पर करारी चोट की है। स्वयं सोल्जेनित्सिन सन १९५० में इस कैंसर वार्ड में रह चुके थे। रूस में इस उपन्यास पर प्रतिबंध है। प्रस्तुत है इसी विश्वप्रसिद्ध कृति का सार-संक्षेप। प्रस्तोता हैं— सुरजीत

डोनसवा ने उसे सांत्वना दी, किंतु पावेल की व्यग्रता कम न हुई। वह इस बात पर भी परेशान था कि क्लीनिक में उसे एक सामान्य रोगी के रूप में प्रवेश मिला था। पावेल ने अपने प्रभावशाली मित्रों के माध्यम से विशिष्ट व्यक्तियों के लिए सुरक्षित कक्ष पाने की कोशिश की थी, पर उसे निराश होना पड़ा था। क्लीनिक रोगियों से खचाखच भरा हुआ था। सारे गणतंत्र में यही एक क्लीनिक था। फिर भी पावेल का सौभाग्य था कि ऊंची सिफारिश से उसे वार्ड में स्थान मिल गया था, अन्यथा नये रोगियों को तो गलियारे में या सीढ़ियों पर लेटना पड़ता था।

क्लीनिक के प्रमुख डॉक्टर से पहले ही तय हो गया था कि मैट्रन दोपहर दो बजे सीढ़ियों के पास मिलेगी। पर जब पावेल अपने बेटे यूरी और पत्नी कापेटोलीना के साथ सीढ़ियों पर पहुंचा तो वह मौजूद न थी। क्लीनिक के आतंकपूर्ण वातावरण तथा मरीजों की दर्दनाक चीखें सुनकर पावेल का दिल डूबने लगा। उसने अपनी पत्नी के कान में कहा, "का... मैं तो यहां मर जाऊंगा। चलो घर चलें।"

"किंतु घर जाकर क्या करेंगे?" उसकी पत्नी ने पूछा।

पावेल का विचार था, मास्को में कोई प्रबंध कर लेंगे, पर कापेटोलीना अधिक यथार्थवादी थी। उसने कहा, "पहले तो मास्को पहुंचना कठिन है। पहुंच भी गए तो दो सप्ताह और लग जाएंगे। इस रसोली है कि हर दिन बढ़ती ही जा रही है।"

पावेल निराश हो गया। घर

इलाज कराना उसके बूते के बाहर था।

कोई आध घंटे के बाद मैट्रन आयी। उसने आते ही क्षमा मांगी। कहा, "दवाएं आयी थीं। हस्ताक्षर कर उन्हें लेना था, अतः देर हो गयी।" फिर उसने अपने आफिस का दरवाजा खोला, बिजली जलायी और पावेल से कहा, "आप यहां कपड़े बदल लें।"

पावेल अंदर चला गया। मैट्रन द्वार बंदकर फिर कहीं जाने को हुई कि कापेटोलीना ने उसे रोक लिया। बोली—"बहन, मेरे पति एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हैं। स्वयं सरकार उनका बड़ा ख्याल रखती है। आप भी उनका खयाल रखिएगा। उनका नाम पावेल निकोलाईविश है। क्या कोई अलग से नर्स नहीं मिल सकतीं जो इनकी देखभाल करती रहे?"

मैट्रन का उत्तर निराशाजनक था। आपरेशन-थियेटर की नर्सों के अतिरिक्त पूरे क्लीनिक में केवल पांच नर्सें थीं, जिन्हें साठ रोगियों की सेवा-सुश्रुषा और देखभाल करनी पड़ती थी। तीन नर्सें दिन के समय और दो नर्सें रात को ड्यूटी देती थीं। इस पर कापेटोलीना ने कहा, "तो फिर हम मां-बेटी बारी-बारी बैठी रहेंगी।" उसने एक नर्स का वेतन देने का प्रस्ताव भी किया, पर मैट्रन ने दोनों बातों से इनकार कर दिया।

पावेल कपड़े बदलकर बाहर निकला तो कापेटोलीना सामान उठाकर सीढ़ियों की ओर बढ़ी ताकि उसे वार्ड में पहुंचा आये पर मैट्रन ने कहा, "सुनिए, आप इन घरेलू कपड़ों में वार्ड के भीतर नहीं जा सकतीं।"

कापेटोलीना ठिठक गयी। पावेल ने सामान उठाना चाहा किंतु पीड़ा से उसका बुरा हाल था। कापेटोलीना से न रहा गया। वह मैट्रन से बोली, "आप देख रही हैं कि ये खड़े तक नहीं हो सकते। क्या आप इतना भी नहीं कर सकतीं कि इनका थैला उठाकर इन्हें बिस्तर तक छोड़ आयें?"

मैट्रन ने नाक-भौंह चढ़ायी, पर सिफारिस खासी ऊंची थी। उसने पावेल का थैला उठा लिया। घरवाले पावेल को अनाथों की तरह गरदन झुकाये उसके
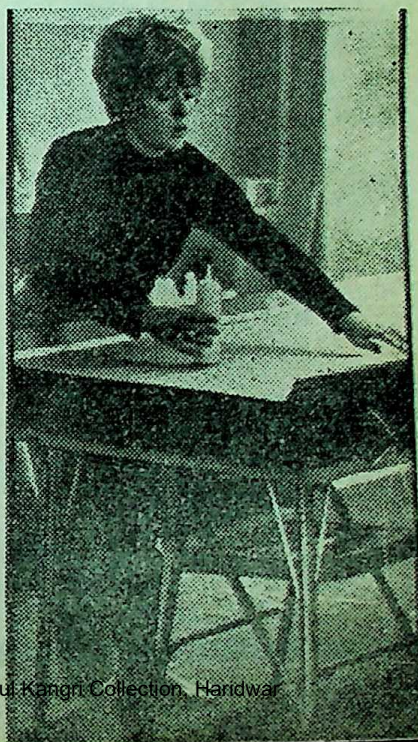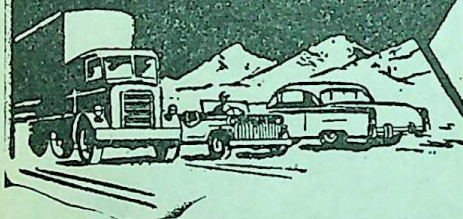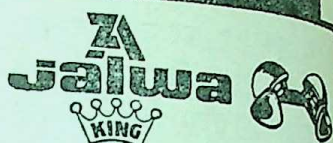
पीछे हांफते-लड़खड़ाते जाते हुए विवश से देखते रहे।

वार्ड में पहुंचकर मैट्रन ने पावेल को उसका बिस्तर दिखाया। फिर थैला रख-कर गायब हो गयी।

पावेल अपने बिस्तर की ओर बढ़ा। रास्ते में एक मोटा-सा व्यक्ति गुलाबी कपड़े पहने खड़ा था। पावेल को देखते ही वह पूरी शक्ति से चीखा, "खूब! एक छोटा-सा कैंसर और आ पहुंचा!"

"मुझे कैंसर नहीं है।" पावेल ने तिलमिलाकर कहा और अपने बिस्तर में धंस गया।

कुछ घंटे के भीतर-भीतर पावेल को भय और आतंक ने आ दबोचा। उसे यों महसूस हुआ, जैसे घर के दरवाजे सदा के लिए बंद हो गये हों। उसे मिलाकर वार्ड में नौ रोगी थे। उसने अपने साथियों का निरीक्षण किया। अस्पताल के कपड़ों में वे अजीब मसखरे लग रहे थे। कोई कपड़ा भी तो ठीक नाप का न था। इनमें सबसे तेज यफर्म नामक व्यक्ति था। वह पूरे वार्ड में गश्त लगाता। उसने पावेल से कहा, "प्रोफेसर, तुम्हें कैंसर है कैंसर! अब तुम अपने घर कभी वापस नहीं जाओगे, समझे!"

पावेल खून के घूंट पीकर रह गया। उसमें यफर्म का प्रतिरोध करने का साहस तक नहीं बचा था। वास्तव में पूरे वार्ड में कोई व्यक्ति ऐसा न था जो यफर्म को रोक सकता। पूरे वार्ड में केवल एक व्यक्ति जिंदादिल था और वह था नवयुवक उजबक अहमद जान!

इसी बीच मरीजों के लिए खाना आया। उसे देखकर पावेल को घिन-सी आ गयी। एक बार फिर उसे उस कटु अनुभूति ने दबा लिया कि वह कहां आ गया। पावेल ने अपने हिस्से का भोजन एक नवयुवक रोगी प्रोशेका को दे दिया।

रात हो चुकी थी। पर अभी तक किसी डॉक्टर ने पावेल की खबर न ली थी। रसोली कुछ घंटों में और बड़ी हो गयी थी। डॉक्टर डोनसवा ने क्लीनिक में प्रवेश करते समय उसे सांत्वना दी थी कि इलाज तत्काल शुरू हो जाएगा। पर उसे अब पता चला कि वह केवल मौखिक सांत्वना थी। उसे यों अनुभव हुआ, जैसे पिंजरे में बंद हो गया है। वह गहरे सोच में डूब गया।

"उठो, तुम्हारा टेंप्रेचर ले लें," एक गूंजदार किंतु सुखद आवाज आयी।

पावेल ने चेहरे से तौलिया हटाकर देखा। एक नर्स, जिसका नाम जोया था, दीवार के साथवाले रोगी से कह रही थी। जोया ने बारी-बारी सबका टेंप्रेचर लिया। वह पावेल के पास पहुंची तो उसने पूछा, "क्या मेरे लिए कोई दवा तजवीज नहीं की गयी?"

"अभी नहीं।" क्षमायाचना की मुद्रा में जोया मुसकरायी।

"पर क्यों नहीं! डॉक्टर कहां हैं?"

"वे काम खत्म कर जा चुके हैं।"

पावेल को कामरेड आस्टापिको का खयाल आ गया। उसने उसे फोन करना चाहा तो पता लगा कि क्लीनिक में केवल एक टेलीफोन है और वह भी रजिस्ट्रार के आफिस में। पर वह वहां नहीं जा सकता था। अजीब-सी विवशता थी!

मर्दाने वार्ड से निपटकर जोया जनाने वार्ड में पहुंची। उस समय नलिया नामक सेविका फर्श साफ कर रही थी। नलिया बातूनी थी, हर बात में टांग अड़ाया करती थी।

जोया ने जल्दी-जल्दी काम खत्म किया। इतने में नलिया भी काम से निपट गयी। उन्होंने बत्तियां बुझायीं और वार्ड से निकल गयीं।

ग्यारह बज रहे थे। जोया अपने दफ्तर में बैठी थी कि सहसा उसे नलिया की तेज आवाज सुनायी दी। वह सवगतोफ तातार से उलझ रही थी। सवगतोफ क्लीनिक का सबसे पुराना रोगी था और सभी कर्मचारी उसे जानते थे। वह रोगी से अधिक स्थायी कर्मचारी लगता था। जोया ने जाकर देखा तो पता चला कि नलिया, सवगतोफ का पॉट उठाने से इनकार कर रही थी। उसने किसी तरह बीच-बचाव कराया और अपने दफ्तर में लौट आयी।

जोया अभी बैठी ही थी कि एक रोगी ओलेग कोस्टोगलोटोफ आ धमका। वह रसोलियों और कैंसर के बारे में जानकारी प्राप्त करना चाहता था। उसने इस विषय पर जोया के पास एक पुस्तक देखी

"तुम्हें विद्या का ऐसा ही शौक तो इलाज करवाने से पहले क्यों न लाश बन चुके तो आये हो!" जोया कहा।

"आता कैसे? यातायात का साधन ही नहीं था!"

"तुम कैसी जगह रहते हो? वायुयानों के बेड़े के बेड़े उड़ते फिरते क्या वहां वायुयान नहीं है? फिर रोग बिगड़ जाने की प्रतीक्षा क्यों करते रहे? किसी डॉक्टर से इलाज करवा लेते। वहां डॉक्टर नहीं हैं?" जोया ने पूछा।

"डॉक्टर?" ओलेग के ओठों पर हलकी-सी व्यंग्यात्मक मुसकराहट आ —"वहां केवल स्त्री रोगों की विशेषज्ञा है"

जोया को ओलेग से सहानुभूति आयी। उसने उसे पुस्तक दे दी।

निचली मंजिल में चूंकि जगह थी, इसलिए आपरेशन के रोगियों को ऊ मंजिल में भेज दिया गया था। वहां रेडि थेरेपी या रासायनिक औषधियों से इलाज वाले रोगी रखे जाते थे। आपरेशन सा न्यतः शुक्रवार को किये जाते थे।

पावेल ने बड़ी कठिनाई से रात काटी। सुबह होते ही उसने पत्नी को फोन कि कि वह जैसे-तैसे उसे मास्को भिजवाने यत्न करे। अस्पताल में अपनी उपेक्षा वह बेहद घबरा गया था। इसीलिए डॉक्टरों का दल वार्ड में पहुंचा तो पा को लगा, जैसे हत्यारों का समूह कमरे

घुस आया है। डॉक्टरों के दल में डॉक्टर लुडमेला अफानासेवना, डॉक्टर डोनसवा और डॉक्टर गंगर्ट थीं। उनके साथ एक सफेद बालोंवाली नर्स भी थी। खासी प्रतीक्षा करवाने के बाद डॉक्टरों का दल पावेल के पलंग के पास पहुंचा। वह पहले से ही बिस्तर पर बैठा हुआ था। उसने ऐनक लगायी। एक नजर उन पर डाली और बोला, "कामरेड डोनसवा, इस क्लीनिक में जिस प्रकार काम हो रहा है उसकी मैं स्वास्थ्य मंत्रालय को सूचना देने जा रहा हूं। मैं कामरेड ओस्टापिंको को भी फोन करूंगा।"

डॉक्टर डोनसवा न तो घबरायी और न उसका रंग ही पीला पड़ा। उसने प्रतिक्रिया स्वरूप केवल कंधे हिलाये और शांत स्वर में बोली, "यदि आपके स्वास्थ्य-मंत्रालय के साथ इतने अच्छे संबंध हैं और आप कामरेड ओस्टापिंको को फोन करने की स्थिति में हैं तो फिर और बातों की भी शिकायत कीजिए।"

पावेल झल्लाकर बोला, "मुझे और शिकायत की जरूरत नहीं है। मैं क्लीनिक छोड़कर जा रहा हूं।"

"आप जब चाहें क्लीनिक छोड़कर जा सकते हैं, पर यह बात याद रखिए कि लोग केवल कैंसर से ही नहीं मरते।" डॉक्टर डोनसवा ने स्नेह से कहा। फिर उसने पावेल की रसोली का निरीक्षण किया। उसने कहा, "यह कैंसर नहीं लिमफोफा है। इंजेक्शन लगेंगे सप्ताह में तीन बार। पहला इंजेक्शन आज ही ग्यारह बजे लगेगा।"

पावेल कुछ और पूछना चाहता था, पर डॉक्टर डोनसवा अपने साथियों सहित आगे बढ़ गयी।

डॉक्टर गंगर्ट, डॉक्टर डोनसवा के साथ मर्दाने और जनाने वार्डों का चक्कर काटकर सीढ़ियों से उतर रही थी तो खासी परेशानी थी। यह परेशानी डॉक्टर डोनसवा के बारे में थी। डोनसवा को सब 'मां' कहते थे। पावेल ने 'मां' से जिस ढंग से बातचीत की, वह बेहद चिंताजनक था। 'यह व्यक्ति 'मां' के लिए मुसीबत बन सकता है।' गंगर्ट ने सोचा। वह जानती थी कि यदि कोई उन्मादी रोगी 'डॉक्टर मुरदाबाद' या 'इंजीनियर मुरदाबाद' का नारा लगाता है तो पहाड़ टूट पड़ता है।

गंगट की चिंता का एक कारण रोगियों का रूखा व्यवहार भी था।

स्वयं डोनसवा भी अपना राउंड खत्म करने के बाद कुछ कम उदास न थी।

तभी उसके पास ओलेग आ पहुंचा। डोनसवा ने उससे पूछा, "क्या पहले भी तुम्हारी जांच की गयी थी?"

"हां"

"फिर डॉक्टरों ने क्या बताया?"

"एक डॉक्टर मेरा आपरेशन करने वाला था। आपरेशन की पूरी तैयारी हो चुकी थी। पर एक रात पहले बंदियों की गाड़ी आयी और उस डॉक्टर को लेकर चली गयी।"

डोनसवा के ललाट पर बल आ गये। उसने सोचा, निश्चय ही यह व्यक्ति काफी अनाप-शनाप हांक रहा है।

वह ओलेग को किसी तरह विदाकर उठी ही थी कि एक नर्स ने तार लाकर दिया। तार नोपनोचरकास्क से आया था और अन्ना जटसरको ने भेजा था। अन्ना, डोनसवा की पुरानी और प्यारी सहेली थी। तार में लिखा था कि अन्ना का सबसे बड़ा लड़का वादिम डाक्टरी जांच के लिए क्लीनिक आ रहा है।

तार पाकर डोनसवा परेशान-सी हो गयी। वह तत्काल मैट्रन के पास गयी ताकि शाम से पहले-पहले वह एक बिस्तर का प्रबंध कर रखे। मैट्रन ने बिस्तर का प्रबंध करने का वचन तो दे दिया पर साथ ही एक उलझन भी पेश कर दी। शहर में ट्रेड-यूनियन के खजांचियों का दस दिन का सेमीनार हो रहा था और पार्टी की जिला कमेटी ने रेडियो थेरेपी विभाग की एक नर्स ओलम्पियादा की सेवाएं मांगी थीं। समस्या यह थी कि ओलम्पियादा की जगह कौन लेगा? डोनसवा ने पार्टी की जिला कमेटी को फोन किया कि ओलम्पियादा को अस्पताल में ही रहने दिया जाए। जिला कमेटी ने यूनियन-कमेटी से बात करने को कहा। यूनियन-कमेटी ने डॉक्टर को झाड़ दिया, "तुम्हारा रवैया राजनीतिक अनुत्तरदायित्व का द्योतक है। ट्रेड-यूनियन के लोगों को यूं ही कैसे छोड़ा जा सकता है?"

डोनसवा ने निराश होकर रेडियो-लॉजिकल सोसाइटी को फोन किया।

सीनियर डॉक्टर भी बेहद व्यस्त थे, अतः डोनसवा ने निश्चय किया कि अगले दिन वह उससे भेंट करेगी।

डोनसवा की टेबल पर एक फाइल रखी थी। शीर्षक था 'रेडियोथेरेपी के बाद के प्रभाव'। इसमें रेडियोथेरेपी के दुष्प्रभावों की चर्चा की गयी थी। डॉक्टर वैकल्पिक इलाज खोजने में असमर्थ थे। यदि वे ऐसा कोई प्रयत्न भी करते तो उन्हें 'रूढ़िवादी' और 'जनता के स्वास्थ्य का दुश्मन' करार दिया जाता। डोनसवा को उन अनेक मरीजों की याद आ गयी, जिनका ऐसे इलाज के कारण जीवन दूभर हो गया था। उसका हृदय कचोटने लगा।

*

यफगेनिया अस्तेनोफना, क्लीनिक की सीनियर सर्जन थी, पर वह एक साधारण-सी स्त्री नजर आती थी। उसका सारा जीवन चीरफाड़ में बीत गया था और वह इस जीवन से उकता चुकी थी। उसने इतने आपरेशन किये थे कि स्वयं कहा करती, "इन आपरेशनों से कटनेवाले मांस के टुकड़े यदि एक दूसरे के ऊपर रख दिये जायें तो छोटी-सी पहाड़ी बन जाए।"

डॉक्टर, रोगियों के वार्ड में ग्रुप के रूप में जाते थे। चीफ-सर्जन मास्को गया हुआ था। इसलिए यफगेनिया अकेली ही ऊपर वार्ड में चली गयी। न तो ड्यूटी पर नियुक्त डॉक्टर साथ था, न कोई नर्स। रोगियों से कुशलक्षेम पूछती वह यफर्म के पास जा पहुंची। उसने उससे कहा, "कहो यफर्म, क्या हालचाल हैं?"

"मैं आये दिन की इस चीरफाड़ से तंग आ चुका हूं!" यफर्म ने उत्तर दिया।

यफर्म ठीक ही कहता था। वह एक स्वच्छंद सैलानी इंसान था, जिसे न बीवी-बच्चे बांधकर रख सकते थे, न शहर, न देश! जब भी पैसे जेब में होते, निकल पड़ता। आज यहां है, कल वहां! एक दिन अचानक उसकी जीभ में एक दाना निकल आया। यहीं कैंसर की शुरुआत थी। यफगेनिया जानती थी कि यफर्म का कैंसर असाध्य हो चुका है। उसने सोचा, इस गरीब को यातना क्यों दी जाए। बोली, "अच्छा यफर्म! हम सोमवार को तुम्हारी पट्टी खोल देंगे।"

यफगेनिया चली गयी तो वार्ड में बातें छिड़ गयीं। तभी ओलेग की आवाज ने सबका ध्यान आकर्षित कर लिया। वह कह रहा था, "दार्शनिक डेस्कार्टिस ने कहा है, कि हर वस्तु को संदेह की दृष्टि से देखो।"

"पर इसका हमारे जीवन-ढंग से क्या संबंध?" पावेल ने हस्तक्षेप किया।

ओलेग इस आपत्ति पर कुछ विस्मित-सा हो गया। बोला, "मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि हमें खरगोशों-जैसा व्यवहार अपनाकर डॉक्टरों पर पूर्ण विश्वास नहीं करना चाहिए। मैं एक पुस्तक पढ़ रहा हूं। —पेथालॉजिकल एनाटॉमी! यह पुस्तक मेडिकल स्कूलों में पढ़ायी जाती है। इसमें लिखा है, 'ऐसा भी होता है कि रोगी बिना इलाज के अपने-आप ठीक हो जाते हैं'।"

वार्ड में सनसनी-सी फैल गयी। यफर्म ने कहा, "मेरे खयाल में इसके लिए आदमी का अंतःकरण साफ होना जरूरी है।"

पावेल ने झल्लाकर कहा, "यह क्या बेहूदगी है? अंतःकरण का रसोलियों से क्या संबंध? कामरेड यफर्म, तुम्हें अपनी इस बात पर लज्जा आनी चाहिए।"

"शाबाश यफर्म! तुम्हारा अनुमान बिलकुल ठीक है।" ओलेग ने कहा, "यह बात संभव है। मैंने एक पत्रिका, संभवतः 'जावजवा', में एक बड़ी दिलचस्प बात पढ़ी थी। उसमें लिखा था, 'ऐसा लगता है, इनसान के खून और दिमाग के बीच खोपड़ी के निचले भाग में एक बाधा-सी मौजूद है। जब तक वह द्रव्य या को… जो इनसान को मार डालते हैं, उस… को तोड़कर दिमाग में प्रवेश नहीं… लोग जिंदा रहते हैं। यह बाधा पोटे… यम और सोडियम साल्ट्स के… अनुपात पर निर्भर है। जब तक इन न… में से कोई एक नमक, उदाहरणार्थ… यम, अधिक मात्रा में मौजूद रहता… कोई हानिकार वस्तु उस बाधा में से… गुजर सकती। फलतः आदमी मरने… पाता। इसके प्रतिकूल यदि पोटाशि… साल्ट्स आवश्यकता से अधिक मात्रा… जमा हो जाते हैं तो यह बाधा बेकार… जाती है और इनसान मर जाता है…

पोटाशियम और सोडियम साल्ट्स का आपसी अनुपात इनसान के मानसिक रवैये पर निर्भर होता है। मतलब यह है कि इनसान यदि प्रसन्न रहता है और जीवन में सच्चा और दृढ़ है तो इस बाधा में सोडियम अधिक मात्रा में मौजूद रहेगा और कोई बीमारी उसे मौत के घाट नहीं उतार सकती, पर जब इनसान दिल छोड़ देता है तो पोटाशियम बढ़ने लगता है। ऐसी दशा में उसी व्यक्ति को अपने कफन-दफन का प्रबंध कर लेना चाहिए।"

क्षण भर रुककर ओलेग ने आगे कहा, "क्या पता, अगले सौ डेढ़ सौ वर्ष में यह भेद ज्ञात हो जाए कि जब हमारा अंतः-करण बिलकुल पवित्र-साफ होता है तो शरीर से एक प्रकार का कैलशियम साल्ट खारिज होता रहता है। पर जब अंतः-करण पर कोई बोझ पड़ता है, तो उस मलिन द्रव्य का निकास रुक जाता है। यही कैलशियम साल्ट है जिसके कारण मानवीय शरीर के स्नायु रसोली के रूप में बढ़ते और घटते रहते हैं। यदि ऐसा भेद खुला तो मुझे तनिक भी विस्मय न होगा।"

यफर्म ने ठंडी सांस भरी और बैठी हुई आवाज में कहा, "मैंने अपने जीवन में बीसियों स्त्रियों को खराब किया है और उनकी गोद में बच्चे छोड़े हैं। मेरी रसोली कभी नहीं खत्म होगी।"

पावेल सहसा आपे से बाहर हो गया, "यह क्या बकवास है। सारी कल्पना केवल धार्मिक मिथ्या तथ्यों पर आधारित है। तुम अर्थहीन पुस्तकें पढ़ते रहते हो। तुम्हारी जीभ पर मूर्खतापूर्ण नैतिक सिद्धांतों का हर समय जिक्र रहता है।"

"क्यों, नैतिक सिद्धांतों में कौन-सा वहशीपन है?" ओलेग फूट पड़ा, "नैतिक सिद्धांतों के जिक्र से तुम्हारे पेट में मरोड़ क्यों उठ रहे हैं? नैतिकता का जिक्र किसी व्यक्ति के लिए हानिकारक नहीं हो सकता, जब तक वह स्वयं अमानवीय चरित्र का न हो।"

"तुम.. तुम होश से काम लो! क्या कह रहे हो तुम?" पावेल गरजा, "कुछ समस्याएं ऐसी हैं कि जिनके बारे में अंतिम मत दिया जा चुका है। अब उन पर वाद-विवाद नहीं किया जा सकता। नैतिकता के बारे में लेनिन, कामरेड स्तालिन और गोर्की सदा के लिए अंतिम और सही मत दे चुके हैं। अब उस पर बहस नहीं की जा सकती।"

"गुस्ताखी माफ! इस धरती पर कोई व्यक्ति ऐसा नहीं जो किसी बात के बारे में सदा-सदा के लिए कोई अंतिम और सही मत दे सके। यदि ऐसा हो तो जीवन जड़ और निश्चल होकर रह जाए और आनेवाली पीढ़ियों के पास कुछ कहने को न रहे।" ओलेग ने उत्तर दिया।

पावेल स्तंभित रह गया। ओलेग ने फिर कहा, "कोई व्यक्ति सोचना क्यों छोड़ दे? क्यों किसी आदमी का मुंह बंद करने का प्रयत्न किया जाए?

यफर्म जीवन और मौत की सीमा पर खड़ा है। यदि वह जीवन के सत्य पर विचार करना चाहता है, तो तुम लाल-पीले क्यों होते हो? तुम्हारा जीवन-दर्शन आखिर किस काम का? आहा! जीवन कितना सुखदायक है...जीवन! मुझे तुमसे प्रेम है...जीवन प्रसन्नता व प्रफुल्लता का नाम है। कितनी गहरी भावनाएं हैं यह! ऐसी भावनाओं की अभिव्यक्ति एक जानवर भी कर सकता है।—एक मुर्गी बिल्ली या कुत्ता—हम लोगों की सहायता के विना!"

"देखिए महाशय! अपने नागरिक कर्तव्य का खयाल रखिए। हमें यहां मौत के बारे में कोई बात नहीं करनी चाहिए।" पावेल ने चेतावनी के अंदाज में कहा।

"यदि हम यहां मौत का नाम नहीं ले सकते तो फिर इस धरती पर और किस जगह ले सकते हैं? क्या हम अनादिकाल तक जीवित रहेंगे?" ओलेग ने पूछा।

"क्या तुम चाहते हो हम हर समय मौत के बारे में ही सोचते रहें ताकि पोटाशियम साल्ट्स, सोडियम साल्ट्स पर विजयी हो जाएं?"

"नहीं! हर समय नहीं। केवल कभी-कभार। मौत को कभी-कभार याद करना लाभकारी है। हर समय जीवन का जिक्र कर हम मौत से छुटकारा नहीं पा सकते। वह आएगी, और धीरे-धीरे सबको ले जाएगी। समाजवाद का दर्शन और उस पर कायम होनेवाले संस्थान अपने सदस्यों को उसकी जकड़ में [illegible] नहीं सकते।"

सहसा पावेल ने विवाद में दिलचस्पी लेनी छोड़ दी। उसकी रसोली में [illegible] पीड़ा शुरू हो गयी थी। उधर ओलेग [illegible] ऐसी जड़ी का जिक्र करने लगा, जो कैंसर के इलाज के काम आती थी। उसे 'चागा' कहते थे। रोगी उसके बारे में नोट करने लगे। ओलेग ने यह भी बताया कि कुछ व्यापारी १५ रूबल प्रति किलो की दर से उसे बेचते भी हैं।

यह सुनते ही पावेल फिर चीख उठा, "इन लोगों को ऐसा करने का क्या अधिकार है? क्या उन्हें अंतःकरण विक्कारता नहीं? जो चीज प्रकृति ने मुफ्त उपलब्ध की है, उसके बदले में वे लोगों की खाल उतार रहे हैं।"

"चीखो मत," यफर्म तेज स्वर में बोला, "क्या जंगल में जाकर उसे जमा करना आसान काम है? बड़ा श्रम करना पड़ता है। तब कहीं वह हाथ आती है।"

"पर यह भी तो देखो, एक किलोग्राम के पंद्रह रूबल! कमीने, चोरबाजारी!" पावेल ने कहा।

वास्तव में पावेल का खयाल था कि हमारी सब भूलें, लापरवाहियां, त्रुटियां और खामियां सट्टे का परिणाम हैं। हर जगह सट्टा चल रहा है। दूध, अंडे, फल, टमाटर, ऊनी जुराबों और सूखी मछली से लेकर सरकारी स्टोरों तक में यही सिद्धांत कार्यशील है। यदि इस सिद्धांत
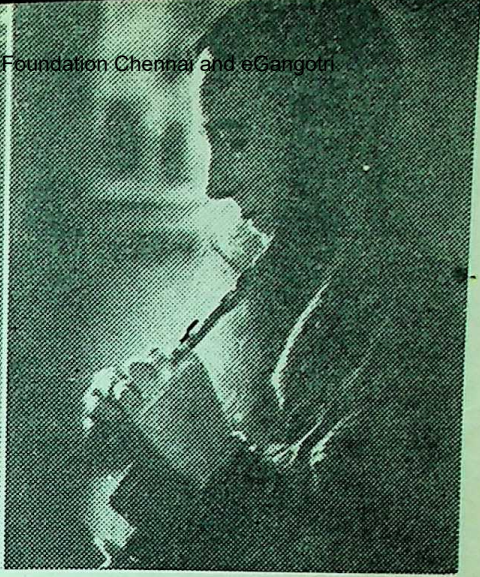
के टुकड़े-टुकड़े कर दिये जाएं तो देश की सारी खराबियां खत्म हो जाएं।

"अच्छा ? तो फिर बकवास बंद करो। जाओ और स्वयं सप्लाई का प्रबंध कर लो।" यफर्म ने तीखे स्वर में कहा।

*

रविवार को वार्ड में जोया की ड्यूटी थी। वह मेडिकल स्कूल में पढ़ती थी। स्कूल से निबटकर क्लीनिक आ जाती।

जोया तेईस वर्ष की हो चुकी थी। उसके जीवन में कई नवयुवक एक-दो रात के लिए आकर सदा के लिए विदा हो चुके थे। एक युवक से उसने शादी भी कर ली थी, पर वह उसे छोड़कर भाग गया था।

क्लीनिक पहुंचते ही जोया काम में व्यस्त हो गयी। काम का दबाव कम हुआ तो उसने लंच लिया। फिर वह कांफ्रेंस-रूम में चली गयी। उसी समय ओलेग भी पुस्तक वापस करने आ गया। उसने उसे अपने पीछे आने का संकेत किया। जोया, ओलेग के बारे में कुछ बातें जानती थी, जैसे उसका पूरा नाम ओलेग फ्लेमोनोविश था। वह १९२० में पैदा हुआ था। ३४ वर्ष का होने के बावजूद वह अभी तक अविवाहित था। जीवन के कई वर्ष उसने यूंही बिताये थे। उसका कोई संबंधी न था। व्यवसाय की दृष्टि से वह नक्शासाज था, पर वह और भी बहुत कुछ चाहती थी। उसने उससे पूछा, "ओलेग, तुमने परसों रात कहा था कि उस स्त्री से शादी करोगे जो तुम्हारे साथ फिनलैंड में जाकर रहे ? ऐसा क्यों ?"

ओलेग जोर से हंसा, "इसलिए कि गृह-मंत्रालय का आदेश है।"

"कितने समय के लिए !"

"स्थायी रूप से।"

"यानी तुम्हें आयु भर के लिए देश-निर्वासन का दंड मिला है!"

ओलेग ने मुसकराते हुए कहा, "जोया, चूंकि हम सब एक गिरोह के रूप में संघर्ष कर रहे थे, इसलिए जब दंड पूरा हुआ तो हमें पैराग्राफ ग्यारह के अधीन विभिन्न प्रदेशों में सदा के लिए निर्वासित कर दिया गया ताकि हम लोग फिर एक दूसरे के साथ मिलकर न बैठ सकें।"

"तुम एक 'जत्थे' के सदस्य थे?" जोया ने प्रश्न किया।

ओलेग ने जोरदार कहकहा लगाया, "तुम भी उस पुलिस अफसर की तरह हो जिसने मुझसे पूछताछ की थी। 'ग्रुप' भी तो कह सकती थीं। हां! हमारा 'जत्था' था। विद्यार्थियों का 'जत्था' जिसमें लड़के भी थे और लड़कियां भी।"

जोया का चेहरा भय से सफेद पड़ गया, पर जल्दी ही वह संभल गयी और बोली, "तुम्हारी उस लड़की का क्या हुआ .... क्या वह भी उनमें शामिल थी?"

"हां!" उसने रुक-रुककर कहा। "पर अब तुम उससे मिलने की कोशिश क्यों नहीं करते?"

"जोया, लेबर-कैंप में किसी लड़की के साथ जो सुलूक होता है तुम उसकी कल्पना भी नहीं कर सकतीं, पहले तो अपराधियों की टोली रास्ते ही में उसका स्त्रीत्व लूट लेती है। नहीं तो–लेबर-कैंप में पहुंचने के तुरंत बाद पहली शाम उसे निरावरण कर गुसलखाने में ले जाया जाता है। यही कुछ इस लड़की के [illegible] हुआ।" कहते हुए ओलेग ने आंखें बंद [illegible] लीं, "वह मरी नहीं, जीवित रही [illegible] पूरी सजा भुगतकर रिहा हुई। मैं [illegible] दोषी नहीं समझता। पर अब वह माम[illegible] खत्म हो चुका।"

ओलेग के चेहरे पर दुख की घ[illegible] छा गयीं। फिर बातों की दिशा मुड़ ग[illegible] और यह बैठक फिल्मों के जिक्र पर आ[illegible] खत्म हुई, "क्या तुमने 'ट्रेंप' देखी है?" जोया ने पूछा।

"हां! देखी है।"

"आश्चर्यजनक फिल्म है। मैं दो बा[illegible] देख चुकी हूं। 'ट्रेंप' की जिंदगी हू-ब-हू तुम्हारी जिंदगी की तरह है।"

"बिलकुल नहीं।" ओलेग के मा[illegible] पर बल पड़ गये।

"मेरा मतलब है, वह भी तुम्हा[illegible] तरह कैद से रिहा होकर आया है।"

"मैंने उन लोगों को बंदीगृह [illegible] देखा है। ये लोग वहां जिस राजनीति [illegible] काम लेते हैं, उससे भी अवगत हूं। दू[illegible] पर अत्याचार कर वे कैंप के स्वामि[illegible] के हाथ में खेलकर रियायतें प्राप्त करते हैं। मुझे उन लोगों से घृणा है। तीस साल [illegible] रहे हैं। हमारे दिल-दिमाग में ठूंसा जा र[illegible] कि ये लोग सुधारने योग्य हैं। सामाजि[illegible] पद में हमारे बराबर आ चुके हैं, हालांकि वे हिटलर के शिष्य हैं और उसी के सिद्धां[illegible] पर कार्य करते हैं—वह यह कि 'यदि तु[illegible] पीटा नहीं जा रहा हो तो चुप बैठे र[illegible]

और अपनी बारी की प्रतीक्षा करो ।
यदि तुम्हारे पड़ोसी के कपड़े-लत्ते उतारे जा रहे हैं, तो दम न मारो, और अपनी बारी की प्रतीक्षा करो ।' वह राजनीतिज्ञ अपने आपको 'सम्मानित' घोषित करते हैं, भिखारियों की कोई चीज नहीं चुराते, न बंदियों के राशन में से कुछ लेते हैं पर इसके सिवा प्रत्येक वस्तु ऐंठ लेते हैं ।"

*

रविवार के दिन पावेल को अरदली ने आकर बताया कि उसकी पत्नी मिलने आयी है। गरदन पर रूमाल लपेटकर वह तत्काल उठ खड़ा हुआ । वह कापा के आने की बड़ी तीव्रता से प्रतीक्षा कर रहा था। रसोली ज्यों की त्यों थी। इंजेक्शन लगने के बावजूद रसोली में कोई फर्क नहीं पड़ा था। पत्नी से मिलते ही उसने परेशानियों और शिकायतों का दफ्तर खोल दिया। क्लीनिक का वातावरण सबसे अधिक कष्टदायक था। सहसा पावेल को 'चागा' का खयाल आ गया। कापा का भाई मिनाई उत्तरी रूस के एक नगर में रहता था। स्वयं पावेल भी महायुद्ध से पहले इसी नगर में रहता था । पावेल ने उस चमत्कारिक जड़ी का जिक्र करते हुए कहा कि वह उसे मिनाई से मंगवा ले । मिनाई का नाम पावेल की जीभ पर आते ही जैसे कापा की कठिनाई आसान हो गयी । वह बहुत देर से सोच रही थी कि मिनाई के कल शाम मिले पत्र का जिक्र किस प्रकार करे। वह पत्र एक बहुत ही चिंताजनक समाचार लाया था । अब जो पावेल ने जिक्र किया तो बोली, "मिनाई का पत्र आया है । लिखा है, उसने रोडेचीफ को पिछले दिनों नगर में देखा है । शायद वह बहाल हो गया है ।"

यह सुनते ही पावेल का रंग सफेद हो गया। यों महसूस हुआ, जैसे वह निश्चल होकर गिर पड़ेगा । कापा ने उसे तुरंत पकड़ लिया और सांत्वना दी । पावेल की दशा धीरे-धीरे संभलने लगी, पर जब पति-पत्नी विदा हुए तो दोनों के चेहरे पर उदासी की परछाइयां मंडरा रही थीं ।

पावेल का खयाल था, कापा आएगी तो उसे तसल्ली और सांत्वना देगी, पर वह आयी, तो ऐसा समाचार लेकर कि उसे बुखार आ गया ।

रोडेचीफ कभी उसका बड़ा गहरा मित्र था। दोनों एक ही कम्युनिस्ट-सेल के सदस्य थे। फैक्टरी की ओर से दोनों को एक फ्लैट मिला था । बाद में रोडेचीफ पहले वर्कर्ज हाईस्कूल और फिर कालेज में चला गया । पावेल ने ट्रेड-यूनियन में नौकरी कर ली और फिर व्यक्तिगत रेकार्ड रखनेवाले विभाग में उच्चाधिकारी लग गया । पिछले वर्ष उसकी बदली बोर्ड ऑव इंडस्ट्री के विशेष विभाग में हुई थी । पहले उनकी बीवियों में मतभेद पैदा हुआ, जिसने बढ़ते-बढ़ते पुरुषों को अपनी लपेट में ले लिया। यहां तक कि उनके लिए एक-दूसरे के पास-पास रहना असहनीय हो गया । पावेल ने रोडेचीफ को फ्लैट से

निकालने और सजा देने की योजना बनायी। उसने सुरक्षा-पुलिस को रोडेचीफ की झूठी शिकायत कर दी। फलतः रोडेचीफ को गिरफ्तार कर लिया गया।

रोडेचीफ गिरफ्तार हुआ तो उसकी बीवी कटका तुरंत समझ गयी कि यह शरारत उनके पड़ोसियों ने की है। गिरफ्तारी के तत्काल बाद पावेल ने कटका और उसके बच्चों को फ्लैट से निकालने के आदेश जारी करवा दिये। पुलिस उन्हें निकालने के लिए आयी तो कटका ने कहा कि वह गर्भवती है और प्रमाण में सर्टिफिकेट पेश कर दिया। कानून के अनुसार किसी गर्भवती स्त्री को बच्चे के जन्म और प्रसव के अंत तक मकान से निकाला नहीं जा सकता था, अतः शरद ऋतु बीत जाने तक वह उसी फ्लैट में रही, पर पावेल और उसकी बीवी ने उन गरीबों को कमरे से निकाल कर रसोईघर और बालकनी में ढकेल दिया। पावेल के हाथों और भी बीसियों आदमी अत्याचार का निशाना बने थे।

*

ओलेग और जोया दूसरी ही मुलाकात में आपस में काफी खुल गये थे। उनकी मित्रता और गहरी हो चुकी थी। यद्यपि जोया ने मुख से नहीं कहा था, फिर भी उसके व्यवहार से स्पष्ट था कि वह उसके साथ गृहस्थ जीवन बिताने को तैयार थी। पर एक घटना ने सारी स्थिति बदल दी।

एक दिन जोया ने रहस्योद्घाटन किया कि रसोलियों का जो इलाज [illegible] में किया जा रहा है वह 'हारमोन-[illegible] कहलाता है। इस इलाज से रसोलियों [illegible] खत्म होना निश्चित है या नहीं, [illegible] डॉक्टर भी अभी तक कोई दो-टूक बात [illegible] में असमर्थ हैं, पर उसके प्रभाव बड़ी [illegible] तक विध्वंसकारी हैं। उससे मानव-[illegible] को जीवित रखनेवाली शक्ति [illegible] समाप्त हो जाती है। यदि अधिक [illegible] खा ली जाए तो स्त्रियों के दाढ़ी [illegible] आती है और पुरुषों की छातियां। [illegible] रहस्योद्घाटन से ओलेग भौंचक्का [illegible] रह गया।

★

तीसरे इंजेक्शन के बाद पावेल [illegible] कमजोर हो गया। अब वह बिस्तर से [illegible] कम बाहर निकलता। उसके आस-[illegible] का जीवन धुंधलाता जा रहा था। [illegible] बेटी इवेटा मिलने आयी तो उसमें [illegible] की शक्ति उभरकर आयी। वह देर [illegible] उससे बातें करती रही। इवेटा [illegible] थी कि इलाज ठीक हो रहा है। वह [illegible] बाप को सांत्वना देती रही। [illegible] उसे बताया कि लोग सचमुच [illegible] होकर श्रम-शिविरों से आ रहे हैं। [illegible] परेशान होने की कोई बात नहीं। झूठी [illegible] देनेवालों को आम माफी दे दी जाए[illegible] यों भी रोडेचीफ उफ तक नहीं कर सके[illegible] पावेल को लगा, जैसे उसको रसौली [illegible] पीड़ा से छुटकारा मिल गया हो।

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

महानगर को देखती हुई आंखें

Ah! here's at last...
NEW

BONNE®
SUPER-TOP

मुझे-केवल रीटा ही पसन्द है

RITA

Rita

adEnvoys-R-741

रीटा की माँग भारत के साथ साथ दुनिया के बहुत से देशों में तेजी से बढ़ रही है।

- ★ सीधी एक समान सिलाई करने वाली
- ★ अत्याधुनिक टेकअप सिस्टम सहित
- ★ सेन्ट्रल बाबिन से युक्त
- ★ हर तरह की सिलाई के सर्वथा योग्य
- ★ हाथ से, पैर से अथवा बिजली की मोटर सभी तरह से चलाई जा सकने वाली
- ★ जीवनभर चिन्तामुक्त सेवा के लिए

रीटा मेकेनिकल वर्क्स
लुधियाना

न्यारा-न्यारा नया फ़ैशन, प्यारे-प्यारे गहरे शेड्स

लॅक्मे लिपस्टिक्स और नेल इनैमल

आज, गहरे, चमकते
शेड्स की लिपस्टिक्स का
बोलबाला है।
भाँत-भाँत की नये फ़ैशन
की लॅक्मे अल्ट्रा-क्रीम,
अल्ट्रा-फ्रॉस्ट और
अल्ट्रा-ग्लो लिपस्टिक्स रेड,
स्कारलेट और ब्राउन रंगों में
सब का जी लुभाती हैं।
और जितनी रंगीली
लिपस्टिक्स उतना ही छबीला
लॅक्मे नेल इनैमल।
यानी सोने में सुहागा।

स्पेनिश पोर्ट

यह सुहाना, मदमाता लिपस्टिक शेड लगाइए और
स्पेनिश पोर्ट नेल इनैमल के संग रूप का रंग उभारिए।

बरगन्डी रेड

इस लाल लिपस्टिक मे नये फ़ैशन की धूम मचाइए और
बरगन्डी रेड नेल इनैमल के मेल से सबकी आँखों पर छा जाइए।

कोन्याक ब्राउन

इस गहरे और झलमलाते शेड से होंठों की रंगीनी निखारिए
और नखों का सिंगार संवारिए।

क्लैरेट रेड

लिपस्टिक और नेल इनैमल के इस रंगीले शेड से जीवन में
जवान उमंगें जगाइए, सुन्दरता को चार चांद लगाइए।

लॅक्मे लिपस्टिक्स युरोप, अमेरिका और दूसरे कई देशों को भेजी जाती हैं।

भाषा विभाग हरियाणा

अखिल भारतीय हिन्दी साहित्यिक प्रतियोगिता

वर्ष १९७४-७५

प्रतियोगिता निःशुल्क होगी और निम्नलिखित वर्गों में होगी : (क) कहानी (ख) एकांकी (ग) निबन्ध (साहित्यक एवं सांस्कृतिक)

* प्रत्येक वर्ग में निम्न तीन-तीन पुरस्कार होंगे।

— प्रथम पुरस्कार	२५० रुपए
— द्वितीय पुरस्कार	१५० रुपए
— तृतीय पुरस्कार	१०० रुपए

१. निर्णयानुसार पुरस्कारों को विभाजित भी किया जा सकता है।

२. पुरस्कृत तथा अच्छी रचनाएं विभागीय पत्रिकाओं में प्रकाशित भी की जा सकेंगी।

३. लेखक द्वारा रचना के मौलिक, अप्रकाशित और किसी पूर्व प्रतियोगिता में न भेजने का प्रमाणपत्र संलग्न होना चाहिए।

४. लेखक का नाम, पता केवल अग्रेषण-पत्र पर होना चाहिए, रचना की किसी प्रति पर **नहीं**।

५. कृपया पत्र व्यवहार करते समय रचना का रजिस्टर नम्बर तथा तिथि अवश्यमेव लिखें।

६. **एक वर्ग में लेखक की एक रचना ही स्वीकार्य होगी। रचना की टाइप की हुई अथवा सुवाच्य तीन प्रतियां ३१ अक्तूबर १९७४ तक निम्न पते पर अधोहस्ताक्षरी को प्राप्त हो जानी चाहिए। बाद में प्राप्त रचनाएं स्वीकार्य नहीं होंगी।**

निदेशक,
भाषा विभाग, हरियाणा,
कोठी नं. १५८०, सेक्टर १८-डी,
चंडीगढ़

डी पी आर-हरियाणा (डी-११६-७४)
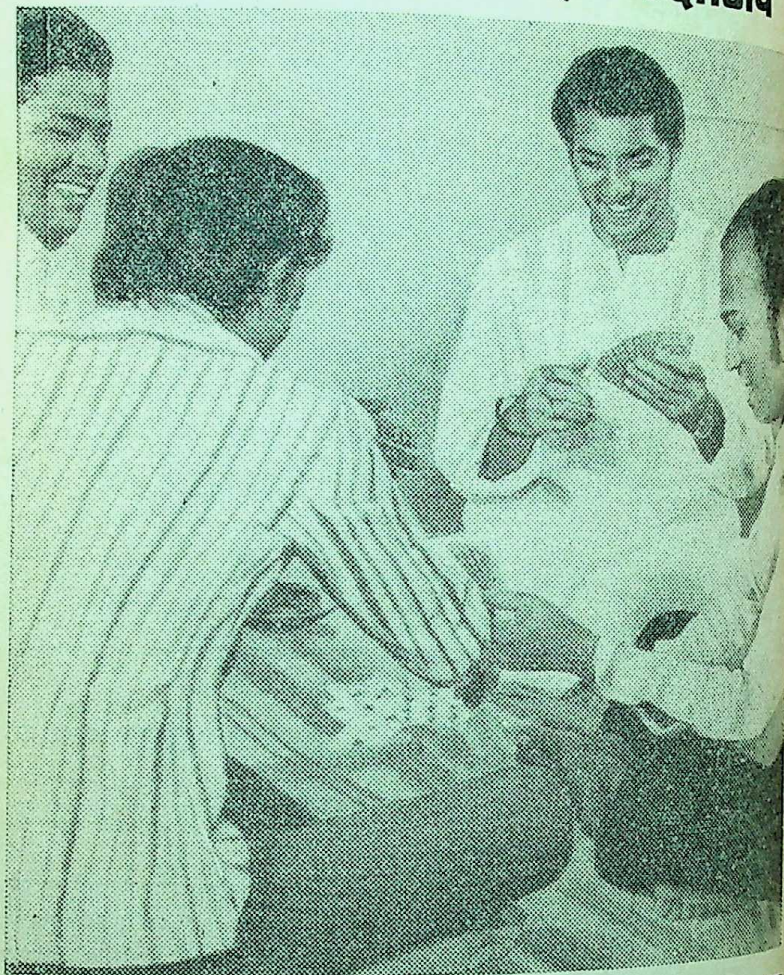
२ ऐस्प्रो लीजिये
माइक्रोफ़ाइन्ड ऐस्प्रो दर्द को जल्दी खींच निकालता है

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइए

१. **तादात्म्य**--क. किसी के साथ एकात्म हो जाना, ख. मिलन, ग. समाहार, घ. सादृश्य।

२. **अनवासना**--क. कुवासना, ख. नयी वस्तु का प्रथम बार उपयोग करना, ग. भोजन कराना, घ. सफाई करना।

३. **हठधर्मी**--क. दृढ़ता, ख. कट्टरता, ग. दुराग्रह, घ. विवाद।

४. **भुगतान**--क. भोगना, ख. निबटना, ग. कष्ट सहना, घ. देनदारी चुकाना।

५. **प्रशस्त**--क. विशाल, ख. विस्तृत, ग. प्रसन्न, घ. परिपूर्ण।

६. **कटिबद्ध**--क. उद्यत, ख. कमरपट्टा, ग. कमर, घ. तुला हुआ।

७. **विपरीत**--क. विमुख, ख. विरोधी, ग. प्रतिकूल, घ. विपक्षी।

८. **चुलबुला**--क. अशांत, ख. अस्थिर, ग. नटखट, घ. चंचल।

९. **दुर्लक्ष्य**--क. उपेक्षा, ख. कठिनाई से दीखनेवाला, ग. दुर्बोध्य, घ. दुर्गम।

१०. **चौकन्ना**--क. चतुर, ख. जागरुक, ग. पतंग, घ. सावधान।

११. **खानापूरी**--क. रस्म अदा करने का काम, ख. चौक पूरना, ग. कमी पूरी करना, घ. हर्जाना भरना।

१२. **खुलासा**--क. स्पष्टीकरण, ख. विस्तार, ग. खोलकर स्पष्ट करना, घ. खोलना।

१३. **गंधर्वनगर**--क. आकाश, ख. देवनगर, ग. मिथ्या आभास, घ. संगीतज्ञों की बस्ती।

c विशालाक्ष

१४. **सकपकाना**--क. सन्नाटे में आ जाना, ख. डर जाना, ग. संकुचित होना, घ. लजाना।

१५. **जीवट**--क. पराक्रम, ख. साहस, ग. निडरता, घ. हठ।

१६. **नामांकित**--क. विशिष्ट, ख. नामक, ग. जाना-माना, घ. नाम-पट।

१७. **तत्काल**--क. तुरंत, ख. चटपट, ग. अविलंब, घ. उसी समय।

१८. **तन्मय**--क. एकाग्र, ख. लिप्त, ग. तल्लीन, घ. लगा हुआ।

१९. **चित्रविचित्र**--क. रंग-विरंगे बेल-बूटेदार, ख. सचित्र, ग. विचित्र, घ. सुंदर।

२०. **झिलमिलाना**--क. जगमगाना, ख. टिमटिमाना, ग. दमकना, घ. रह-रह कर चमकना।

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. क. किसी के साथ एकात्म हो जाना। कवि के साथ तादात्म्य साधकर उसका काव्य समझो। तत्., सं., पुं.। **एकीभाव, आंतरिक एकता।**

२. ख. नयी वस्तु, कपड़े, बरतन आदि का पहली बार उपयोग करना। कुरता **अनवास** दो। लो. भा, क्रि.।

३. ग. दुराग्रह, अनुचित जिद। उसकी **हठधर्मी** से वार्ता विफल हो गयी। तत्., सं., स्त्री.। **अड़ना, कट्टरता, जिद।**

४. घ. देनदारी चुकाना। कर, ऋण, शुल्क का **भुगतान**। संस्कृत–भुक्ति, हि. भुगतना। तद्, सं, पुं.। **चुकाना, अदा करना, भरना।**

५. ख. विस्तृत, लंबा-चौड़ा, मुक्त। सत्याग्रह से स्वाधीनता-प्राप्ति का मार्ग **प्रशस्त** हुआ। **प्रशस्त** गृह। तत्, वि., पुं.।

६. क. उद्यत। वह सेवा के लिए सदा **कटिबद्ध** रहता है। तत्., वि., पुं.। **तैयार, तत्पर, मुस्तैद।**

७. ग. प्रतिकूल। **विपरीत** बुद्धि, मत; यथार्थता के **विपरीत**। तत्., वि., उ. लि.। **उलटा, विरुद्ध, मुखालिफ।**

८. घ. चंचल। **चुलबुला** बालक; तुम तो बच्चों से भी अधिक **चुलबुले** हो। लो. भा., वि, पुं.। **चपल, नटखट, शोख।**

९. ख. कठिनाई से दीखनेवाला। इस कविता में काव्य-गुण **दुर्लक्ष्य** है। तत्., वि., पुं.। **लगभग अदृश्य, अलक्ष्य।**

१०. घ. सावधान। आहट सुनते ही टामी **चौकन्ना** हो गया। लो. भा.—चौ = चारों : कन्ना = कान। वि., पुं.। **सतर्क, होशियार, सचेत।**

११. क. रस्म अदा करने का काम। अर्जी देकर नियम की **खानापूरी** तो करनी ही होगी। लो. भा., सं., स्त्री.।

१२. ग. खोलकर स्पष्ट करना। अपनी बात का **खुलासा** करो। लो. भा., सं., पुं.। **विस्तार, स्पष्टीकरण।**

१३. ग. मिथ्या आभास। आप तो ऐसी बातें करते हैं मानो **गंधर्वनगर** में रहते हों। तत्., सं., पुं.। **भ्रम, अ-यथार्थ कल्पना-लोक।**

१४. क. सन्नाटे में आ जाना। तुम्हें देखकर वह **सकपका** गया। लो. क्रि., अ.। **सहम जाना, चौंक संकुचित होना या ठिठकना।**

१५. ख. साहस। कैसे **जीवट** का आ है, तूफानी समुद्र में छोटी-सी नौका जा रहा है! लो. भा., सं., पुं.। हिम्म

१६. क. विशिष्ट। **नामांकित** विद्वान, संपादक। तत्., वि., पुं.। **प्रसि ख्यातनामा।**

१७. घ. उसी समय। **तत्काल** गया, उत्तर दे दिया, उठ बैठा। क्रि. वि.। **तुरंत, फौरन, अविलंब।**

१८. ग. तल्लीन। ध्यान, अध्ययन में **तन्मय**। तत्., वि., पुं.। **एका चित्त, डूबा हुआ, मग्न, दत्तचित्त, लवलीन**

१९. क. रंग-विरंगे बेल-बूटेदार। ने कागज को **चित्रविचित्र** कर दिया। वि., पुं.। **बहुरंगा, विलक्षण;** (व्यंग्य में) भद्दा

२०. घ. रह-रह कर चमकना। **झिलमिला** रहे थे; डोलते पत्तों पर किरणें **झिलमिला** रही हैं। लो. भा, क्रि

संकेत-चिह्न

तत्.—तत्सम। तद्.—तद्भव। लो. —लोकभाषा। सं.—संज्ञा। वि.— विशेषण। क्रि.—क्रिया। क्रि. वि.— —क्रिया-विशेषण। पु.—पुंलिंग। स्त्री.— स्त्रीलिंग। उ. लि.—उभयलिंग।

अगस्त अंक में 'लहसुन : एक रसायन' लेख पढ़कर लहसुन के बारे में उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण जानकारी मिली। 'कादम्बिनी' दिन-प्रतिदिन निखरती जा रही है।

—राकेशचन्द्र तिवारी, कानपुर

मुखपृष्ठ से संबंधित 'भीगती बरसात' कविता वास्तव में रसभीनी थी। इस बार मुखपृष्ठ सार्थक हो गया।

—निर्मला, दिल्ली

'अनजानी राह का पथिक: राबर्ट फ्रॉस्ट' परिचयात्मक दृष्टि से तो अच्छा रहा, लेकिन कवि के काव्य-सौंदर्य पर यथोचित प्रकाश नहीं डाल सका। कविताओं के अनुवाद में मूल का सौंदर्य नहीं रहा। फ्रॉस्ट की कविता की जो पंक्तियां नेहरूजी की मेज पर लिखी रखी थीं, उनका अनुवाद (जंगल है प्रिय, घने और गहन . . .) बहुत शुष्क था। मैंने कहीं इसका बड़ा सुंदर अनुवाद पढ़ा था। इस समय मुझे उसकी केवल दो पंक्तियां स्मरण हैं—

वन-प्रांतर हैं प्रिय और घनेरे
किंतु मुझे करने हैं वादे पूरे

—महेन्द्रकुमार, दुर्ग

'क्यों और क्यों नहीं' के अंतर्गत कृष्णा सोबती के उत्तर बहुत पसंद आये। उनकी साफगोई, प्रश्नों से संबंधित ही उत्तर और विनोद का पुट लिये शैली ने बहुत प्रभावित किया।—**डॉ. कैलाशनारायण, लखनऊ**

'मेरे संस्मरण' लेखमाला नीरस होती जा रही है। अगस्त अंक में लेखक ने इसके अंतर्गत स्व. उदयशंकर भट्ट की व्यर्थ ही चर्चा की है। उनके बारे में जितना भी लिखा है, वह संस्मरण तो हर्गिज नहीं है। यदि लेखक का किसी स्थान पर किसी व्यक्ति से औपचारिक परिचय हो जाए, तो इतने भर से लेखक उस व्यक्ति के बारे में संस्मरण लिखने के कैसे हकदार हो गये? **—नरेन्द्र शर्मा, रुड़की**

'समय के हस्ताक्षर' में आपने कागजी संकट को लेकर जो प्रश्न उठाया है, महत्त्वपूर्ण है। कागज की कमी के दिनों में भी सस्ते स्तर के पेपरबैक धड़ल्ले से छप रहे हैं। छद्मनामों को लेकर प्रकाशक मनमाना व्यापार करते हैं। मनगढ़ंत घटनाएं और हलकी रोमानियत से भरपूर ये उपन्यास आज के कागजी संकट में एक प्रश्नचिह्न छोड़ जाते हैं। पुस्तक-प्रकाशक भी किसी किराने की दूकानवालों की तरह व्यवहार कर रहे हैं। इन पुस्तकों से राष्ट्रीय नैतिक पतन भी होता है और सही साहित्य सामने आने से रह जाता है। उत्तरप्रदेश में पाठ्य-

आपके बच्चे को बढ़ने के लिए
तिगुनी शक्ति चाहिए !
कुरकुरे, स्वादिष्ट प्रोपॅक बिस्किट
आपका बच्चा हर समय पसन्द करेगा !
अपने बच्चे को प्रोपॅक बिस्किट दूध के
साथ या भोजन की तरह खाने दीजिए।
कुछ स्कूल भी ले जाने दीजिए।
आपको देखकर प्रसन्नता होगी कि वह
कितनी तेज़ी से बढ़ता है और पढ़ाई-लिखाई
और खेलकूद दोनों में सबसे आगे रहता है।
प्रोपॅक
स्वीटीज़
PROPAC
PROPAC
SWEETIES
हल्के आसानी से हज़म हो
जाने वाले प्रोपॅक बिस्किट
स्फूर्तिदायक प्रोटीन, विटामिन,
कैल्शियम और आयरन से भरपूर है
PROPAC
आपकी प्रिय
प्रोपॅक
साल्टीज़
अब नए
किफ़ायती डिब्बों
में मिलती हैं

पुस्तकें तक नहीं मिल रहीं। जनता को ऐसे प्रकाशकों का विरोध करना चाहिए।

—डॉ. लक्ष्मीशंकर, लखनऊ

आपने 'कागजी संकट' के दिनों में एक सही दिशा की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है। छद्मनाम से पुस्तकें छापनेवाले प्रकाशकों से पाठकों को पूछना चाहिए—कर्नल रंजीत कौन है ? समीर और रानू कहां से पैदा हो गये ? साधना प्रतापी किस देश की उपज है। गुलशन नंदा के नाम से कितना कुछ भ्रष्ट छप रहा है (गुलशन नंदा स्वयं ऐसे ही लेखक हैं) ? नून-तेल के व्यापारियों की तरह हिंदी के प्रकाशक भी ऐसा व्यवहार यदि कर रहे हैं तो उनके प्रति पाठकों की सद्भावनाएं कैसे हो सकती हैं ? **—डॉ. कृपाशंकर, मुरादाबाद**

'यह दोराहा हमसे सबसे पहली मांग भूख और घर की करता है'—आपने 'काल चिंतन' में एक गहरी चोट की है। हमारे सत्ताधारी इन शब्दों के अर्थ कब समझेंगे।

—डॉ. सुधा सक्सेना, पटना

'समृद्ध और ऊबे हुए समाज में आत्महत्याएं' शीर्षक लेख चौंका देनेवाला है। यदि इस लेख में यह उल्लेख भी होता कि वहां की समृद्धि भारत से कितनी अधिक है और वहां की जनता भारत की अपेक्षा कितनी पीड़ित है, तो स्पष्ट हो जाता कि आज की वैज्ञानिक दुनिया में भी भारत की आदि संस्कृति सारे संसार को मार्ग दिखा सकती है।

—रमण सोंधी, काठमांडू

हमारा मुखपृष्ठ

आंखों में महानगर

आंखों में महानगर उगता है
पथराये स्वप्नजाल-सा
जब तट का पोर-पोर
छूकर वापस जाती
सागर की प्यासी जलधार
धूप में तड़पती है
मछली जल से बाहर
मिलता है नहीं मगर प्यार
इस तरह अकेलापन उगता है
अनजाने महाकाल-सा
जाने कब आंखों में
आंसू भर आते हैं
बह जाते काजल के गीत
माथे पर एक सुर्ख
बिंदी रह जाती है
सूरज का जलता संगीत
बिजली के तारों में फंसा पवन
झुक आये नाव-पाल सा
वे दिन, वे रातें
वे बातें, वह सोंधापन
खुशनुमा सितंबर की धूप
महानगर में आकर
सब कुछ खो गया कहां
उम्र का गुलाबी प्रतिरूप ?
रोज-रोज समय कहीं उड़ जाता
घबराये सित मराल-सा

—कंचना

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

कादम्बिनी

वर्ष १४ : अंक ११
सितम्बर, १९७४

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

कविताएं

स्थायी स्तंभ

मुखपृष्ठ छायाकार : सूर्यकांत दुधेडिया (बोरीबंदर) प्रेमकपूर (आंखें)

सह-संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक। चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

बहसें, बहसें और बहसें

समकालीन स्थिति को लेकर होने वाली चर्चाओं को किसी क्रम में नहीं बांधा जा सकता। अंधेरे कमरों से लेकर खुले मैदानों तक जहां भी दो-चार लोग मिल जाते हैं, इस तरह बहस होने लगती है, मानो दुनिया भर का दर्द उन्हीं पर उतर आया है।

एक दिन राजधानी की एक आर्ट गैलरी में संसाराम के चित्र देखते हुए इसी तरह बहस छिड़ गयी। उनमें कुछ चित्रकार थे, कुछ लेखक और कवि और कुछ रंगमंच के कलाकार। जीवन के संघर्षों और उसके बीच से गुजरते हुए आज के चेतनशील बुद्धिजीवी की मानसिकता का पूरा परिचय उस बहस से मिल रहा था। बढ़ती हुई कीमतें, महंगाई, भ्रष्टाचार, नागालैंड का पृथकतावादी आंदोलन, बिहार में जयप्रकाश बाबू की भूमिका, कश्मीर में शेख अब्दुल्ला के साथ चल रही वार्त्ताएं, साइप्रस में युद्ध और अमरीका के राजनीतिक रंगमंच पर सहसा दृश्य-परिवर्तन---ऐसा कुछ भी शेष नहीं था जो उस चर्चा में बहस का मुद्दा न बना हो।

इसी बीच एक बात उभरकर आयी कि आखिर इस पूरे माहौल में हम सब (यानी बुद्धिजीवी, कलाकार और लेखक) क्या करें? कुछ उदाहरण सामने आये और रूस, फ्रांस तथा जर्मनी की बात उठी। एक सज्जन का कहना था 'हम कुछ कर ही नहीं सकते।' दूसरे तेवर में थे, 'हम नहीं तो कौन करेगा, हम स[...] भी बदल सकते हैं।' तीसरा दृष्टिकोण था, 'सत्ता को वोट गरीब-तबके से मिलते हैं और चुनाव के लिए पैसा धनिक-वर्ग देता है, हम यानी मध्यवर्ग के लोग कहां हैं? हम क्या करते हैं? हमारी क्या भूमिका है? फिर हम यह अपेक्षा क्यों करते हैं कि हमारी बात ही सुनी जाए?'

इस मुद्दे से बहस और बढ़ गयी। कुछ लोगों में युद्ध-सा उल्लास आया तो कुछ ठंडे पड़ गये। दो-चार आवाजें उठीं, 'इनमें कौन है जो अपनी कुरसी छोड़ने को तैयार है!' जिनके पास कुरसियां नहीं थीं, वे अपनी कुरसियां छोड़कर उठ बैठे। कुरसीवाले दीवार पर लगे कोलाज चित्रों को देखने लगे, जहां सब-कुछ उलझा हुआ था। एक ने अधिक स्पष्ट होकर कहा, 'कुरसी हम भी छोड़ सकते हैं, रोजी-

रोटी कौन देगा ?' दूसरे ने कहा, 'भाई यह तो आर्ट गैलरी ही है न, लो मैं तो अपनी कुरसी छोड़ने को तैयार हूं।' कुरसी से उठते हुए उन्होंने कहा, 'दोस्त, तुम्हारा आदमी कैसा है ? अब तक शराब लेकर नहीं आया !'

ठहाका ! और ठहाका ! सारी बहस अब तक शराब न आने पर होने लगी। थोड़ी देर में शराब भी आ गयी और पहला जाम ढालते हुए एक स्वर प्रमुखता से उभरा—'त्रिशंकु का न कोई संघर्ष होता और न कोई सौंदर्यशास्त्र। वह संघर्ष और सौंदर्य की स्थिति से गुजरकर आधे रास्ते में उसी तरह लटका होता है जैसे मक्का के खेतों में औंधा लटका हुआ घड़ा। वह हर जंगली जानवर को तभी तक भयभीत करता है, जब तक वह उसके पास नहीं पहुंच जाता !'

हिंदुस्तान में क्या नहीं हो रहा ! लेकिन ... नहीं ! शायद कुछ भी नहीं हो रहा ! लेखक और कलाकार को यदि छोड़ भी दीजिए तो संसद में क्या हो रहा है ? राजनीतिक दल, चाहे वे सत्ता में हैं या सत्ता के लिए संघर्षरत हैं, उनकी मौलिक चेतना क्या है ? भ्रष्ट व्यापारी या भ्रष्ट अफसर, और ईमानदार व्यापारी या ईमानदार अफसर में क्या अंतर है !

सब ड्राइंगरूम में बैठकर बहसें करने में अभ्यस्त हैं। वहीं कागजी योजनाएं बनती हैं। प्रदर्शन और आंदोलन होते हैं और एक प्रदर्शन के विरोध में दूसरा प्रदर्शन होता है। भ्रष्ट व्यक्ति नैतिकता पर अच्छे-से-अच्छा भाषण देकर जब स्टेज से उतरता है तो अपने आसपास बैठे लोगों से पूछता है, 'कहिए, मेरा भाषण कैसा रहा ?'

—'बहुत अच्छा, आपने एकदम नयी बातें कही हैं।'

और फिर ही ! ही ! ही !

आर्ट गैलरी की शाम सचमुच हमें अभी भी याद है। उसी शाम हमारे देश में ही नहीं दिल्ली में ही कहीं दुर्घटना हो रही होगी, कहीं अगली सुबह के आंदोलन की भूमिका बन रही होगी, कहीं जश्न और कहीं इसी तरह की दिमागी अय्याशी ! इन सबसे गुजरते हुए इस देश के मध्यवर्ग की सुप्त चेतना में जब तक तीली नहीं छुलायी जाती, सब उसी तरह होता, और न होता रहेगा। आज के चिंतनशील व्यक्ति का अपने ही परिवेश से इतना अधिक उदासीन हो जाना चिंता का विषय है। इस तरह दूर रहकर वह प्रतिबद्ध रहने का ढोंग नहीं रच सकता ! उसे भी सामान्य जनता के दुःख-दर्द का भागी बनकर सामने आना होगा। राशन की दूकान में लगी कतार को वह मनोरंजन की दृष्टि से देखे, समय के साथ धोखा है।

इसके बावजूद हम मजे में कह सकते हैं—हिंदुस्तान में सचमुच कुछ नहीं हो रहा . . . नहीं जी, यहां सब कुछ हो रहा है ! पाठकों को यह अस्वीकार हो तो बहस हो सकती है, कहिए आप तैयार हैं ?

काल चिंतन

एक पत्र

"आदरणीय अवस्थीजी।

अंतर में जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि जानूं विज्ञान और तकनीकी के सघन वातावरण में रहते हुए इस देश के प्रत्येक प्रबुद्ध व्यक्तित्व पर ईश्वर की क्या धारणा है . . . आपकी दृष्टि में ईश्वर क्या है?"

—अशोक मुनि

—कालावधि से भी पहले की एक कथा है : अंधेरी काल-रात्रि में एकाकी जाते हुए उसे पहरेदार ने रोककर पूछा, 'तुम चोर तो नहीं हो?'

—'हां, मैं चोर हूं' : उसने जवाब दिया, 'मैं ईश्वर को खोज रहा हूं और वह मिल गया तो उसे चुरा कर ले जाऊंगा।'

—पहरेदार ने उसे पागल समझकर अट्टहास किया। अपनी लाठी उसके हाथ दे दी और कहा, 'तुम्हारा संकल्प पूरा हो। जब वह पूरा हो जाए, इस लाठी को समंदर में फेंक देना।'

—तब से निरंतर आदमी ईश्वर की खोज में व्यस्त है!

—ईसा, राम, कृष्ण, बुद्ध और महावीर सबके हाथ वह लाठी थी, कोई उसे समंदर में नहीं फेंक सका!

●●

—नीत्शे ने उद्घोष किया था: 'ई[illegible] मर गया है!'

—अरस्तू का कहना था, 'ईश्वर [illegible] शहर का एक आवारा लड़का [illegible] उसे पकड़ा नहीं जा सकता।'

—हिटलर ने पिस्तौल निकालकर चुनौ[illegible] दी थी, 'कौन है, जिसे ईश्वर का [illegible] चाहिए?'

—आइंस्टीन ने प्रश्न आसान कि[illegible] 'ईश्वर बहुत सूक्ष्म बुद्धिवाला [illegible] किंतु विद्वेषी नहीं है।'

—ईसा के पास एक आशावाद था, [illegible] उस पर आस्था रखता है और जि[illegible] विश्वास है, वह संसार से उत्त[illegible] हो जाएगा। जो अनास्था और अवि[illegible]श्वास में डूबा है, उसकी दुर्गति होगी।

—गीता में भी उद्घोष है: 'संशया[illegible] विनश्यति'।

—धर्मग्रंथ ईश्वर की ओर नहीं ले जा[illegible] सकते। . . . —तब?

—प्रश्न जटिल है: युगारंभ के कि[illegible] क्षण में वह उपजा था और आज त[illegible] स्वयं भटक रहा है!

—वास्तव में ईश्वर न अस्तित्ववाली श्रेणी में है और न अनस्तित्ववाली।
—नास्तिक का बार-बार किसी चीज को नकारना भी उसे स्वीकारना है।
—पूजा करने, न करने में भेद नहीं है!
—मानने और न मानने में कोई भटक नहीं जाता! —मानना न पुण्य है और न मानना, न पाप है!
—सच पूछिए तो मनुष्य अभी भी अपूर्ण है और एक रचना-प्रक्रिया में व्यस्त है!

—सुख की प्राप्ति मानव-जीवन का संकल्प नहीं है, क्योंकि जीवन भर का सुख मात्र-ऊब का एक कारण है!
—इस विश्व में हम सुखी होने के लिए नहीं, विकसित होने के लिए आये हैं।
—विकास की गति में सुख नहीं होता, वहां संघर्ष और पीड़ा होती है।
—विकास के लिए किये गये काल के चिंतन और संवेगों से अधिक चेतनशील धर्म दूसरा नहीं है!
—इसलिए मित्र, सूत्र का सिरा कहीं चेतना के साथ जुड़ा है—ठीक वैसे ही जैसे प्रकाश में विश्वास करने की बात निरर्थक है, उसे आंख खोलकर ही देखा जा सकता है!
—खुली हुई आंखोंवाला विवेक ही मनुष्य को एक सत्य तक ले जाता है!
—हमारी विचार-चेतना के परे कोई और असीम चेतन-शक्ति अवश्य है।
—लेकिन वह पवित्रता का बोधि-वृक्ष नहीं है कि उसकी परिक्रमा की जा सके!
—वह संपूर्ण जीवन की समंजसता और अंर्तविरोधों का एक प्रतिबिंब है!
—घास की गंध की तरह वह कहीं हमारे भीतर अंतर्वेष्टित है!
—इसलिए उसकी तलाश तांबे के पूर्व और लोहे के पश्चिम के साथ व्यर्थ है।
—वास्तव में इस तलाश के पीछे जो कर्मशील चैतन्यसत्ता कार्य करती है, वही ईश्वर है।
—उसे ईंटों, पत्थरों, पर्वतों, पहाड़ों और हवाओं में मत खोजिए, क्योंकि:
मैं जानता हूं
मेरे बिना ईश्वर—
एक क्षण के लिए भी जीवित नहीं रह सकता,
अगर मैं मर जाऊं—
तो फिर वह जी नहीं सकता!
—मित्र, सारा प्रश्न सिमटकर आदमी के भीतर के आदमी की तलाश में आकर रुक जाता है। शायद इसीलिए अभी तक कोई उस लाठी को समंदर में नहीं फेंक सका!

भारतीय मुद्रास्फीति के संदर्भ में

कैंसरग्रस्त अर्थव्यवस्था

इन दिनों देश बढ़ती हुई कीमतों और मुद्रास्फीति के दौर से गुजर रहा है। ऐसे अवसर पर इस लेख में सुविख्यात उद्योगपति और भारतीय उद्योग एवं वाणिज्य महासंघ के अध्यक्ष श्री कृष्णकुमार बिरला ने कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये हैं।

● कृष्णकुमार बिरला

देश इस समय मुद्रास्फीति के भयंकर दौर से गुजर रहा है। इसके लिए सरकार और जनता दोनों चिंतित और परेशान हैं। मुद्रास्फीति का वर्तमान सिलसिला वास्तव में दो वर्ष पहले शुरू हुआ था। अब उसकी स्थिति और भी बिगड़ गयी है। मुद्रास्फीति अचानक किसी भी देश में उथल-पुथल का कारण बन सकती है। इसलिए इस विषय पर सार्वजनिक तौर से अनेक बहसें और चर्चाएं होती रही हैं।

पिछले वर्ष पांच अर्थशास्त्रियों ने पूरी गंभीरता के साथ इस समस्या की छानबीन की थी। इस दल के अध्यक्ष थे श्री वी. के. आर. वी. राव। उसके बाद हाल में ही देश के १४० प्रमुख अर्थशास्त्रियों ने सरकार के सामने एक विशेष योजना रखी है। मुद्रास्फीति के संकट से निबटनेवाली इस योजना को 'सेमीवोम्बला' के नाम से जाना जाता है। इस पूरी योजना के सूत्रधार प्रसिद्ध अर्थवेत्ता श्री सी. एन. वकील हैं।

१७ जून को योजना आयोग ने भी अपनी बैठक में काफी विचार-विमर्श के बाद दो समितियों का गठन किया है। इनका उद्देश्य है कि ऐसे उपाय ढूंढ़े जाएं जिनसे सरकारी खर्चों में कमी हो सके। सरकारी खर्चों के कारण मुद्राप्रसार तेजी से होता है। अगर सही तरीके खोज लिये गये तो न केवल सरकार पर पड़नेवाला मुद्रास्फीति का बुरा प्रभाव कम होगा, बल्कि मुद्रा के प्रसार में भी कमी आ जाएगी।

इन गोष्ठियों, बहसों और चर्चाओं से यह बात साफ़ हो जाती है कि मुद्रास्फीति की स्थिति चिंतनीय है।

विकास दैनिक जरूरतों के अनुकूल

हमारी अर्थ-व्यवस्था के दो पहलू हैं-- एक तो मुद्रास्फीति और दूसरा, विकास। इन दोनों के बीच निर्णायक संबंध है। हो सकता है, अतीत में इस संबंध को अनदेखा किये जाने के कारण ही मुद्राप्रसार इतना तेज हुआ है, जबकि विकास की गति बहुत धीमी हो गयी है। विकास के सभी पहलुओं को ध्यान में रखकर ही मुद्रास्फीति का कोई हल ढूंढ़ना चाहिए। विकास की गति में तेजी लाना तो जरूरी है ही, साथ ही यह भी आवश्यक है कि उसे समाज की दैनिक जरूरतों के अनुकूल बनाया जाए।

अन्न-संकट और सरकार

सन १९७२ में खेती की पैदावार में भारी कमी आयी थी, क्योंकि उस साल पानी बहुत कम बरसा था। उत्पादन की कमी के कारण जून से मुद्रास्फीति में उभार आया। सन १९७०-७१ में १० करोड़ ८० लाख टन अनाज पैदा हुआ था, जबकि १९७२-७३ में साढ़े नौ करोड़ टन ही अन्न उत्पन्न हुआ। सरकार ने खाद्यान्न का जो सुरक्षित भंडार बना रखा था, उसमें भी कमी आ गयी। अनाज की कमी से जो संकट आनेवाला था उसका मुकाबला करने के लिए कोई ठीक तैयारी नहीं हुई। चूंकि बकाया भुगतान के मामले में देश की स्थिति ठीक नहीं थी, विदेशों से अन्न मंगाना भी बहुत मुश्किल था। इन परिस्थितियों में कटौती की गयी, पहले प्रति व्यक्ति को प्रतिदिन ४६९ ग्राम खाद्यान्न मिलता था, उसके बाद घटकर ४१९ ग्राम ही मिलने लगा।

खाद्यान्नों और चीनी, तेल, सूती कपड़ा-जैसी रोजमर्रा के इस्तेमाल की चीजों के मूल्य हमारी अर्थ-व्यवस्था में निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। इन
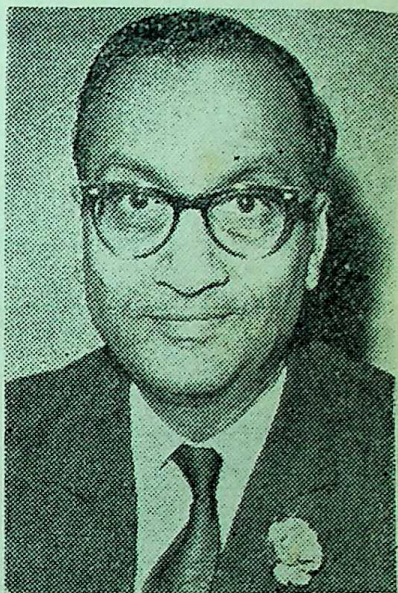
लेखक

वस्तुओं की कीमतों का आर्थिक संतुलन पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। देश में चीजों की कीमतों का समूचा सिलसिला उपर्युक्त बुनियादी मूल्यों के सहारे चलता है। इसलिए अनाज और दूसरी जरूरी चीजों के मूल्य में अगर वृद्धि होती है तो वेतन अपने-आप बढ़ाने पड़ते हैं। परिणाम यह होता है कि उद्योग-धंधों की लागतें भी

बढ़ जाती हैं।

कर्मचारियों का महंगाई-भत्ता बढ़ा

इसे देखते हुए आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि सन १९७३-७४ में केंद्रीय कर्मचारियों के महंगाई-भत्ते में पांच बार बढ़ोतरी की गयी और अब पहली अप्रैल १९७४ से छठी बार महंगाई-भत्ता बढ़ाने की बात तय हुई है। सरकार के अलावा दूसरे क्षेत्रों में भी वेतन और भत्तों में इसी प्रकार की बढ़ोतरी की गयी है।

वेतन बढ़ा देने से उद्योगों में लागतें तो बढ़ती ही हैं, साथ ही सरकारी खर्चे भी बढ़ जाते हैं। इसका नतीजा यह निकलता है कि सरकार को घाटे की अर्थ-व्यवस्था बनानी पड़ती है और मुद्रा प्रसार बढ़ाने के लिए विवश होना प है। खेती की लागतों में भी वृद्धि हो ज है, जिसके कारण खाद्यान्न की कीमतें ऊंचे चढ़ जाती हैं।
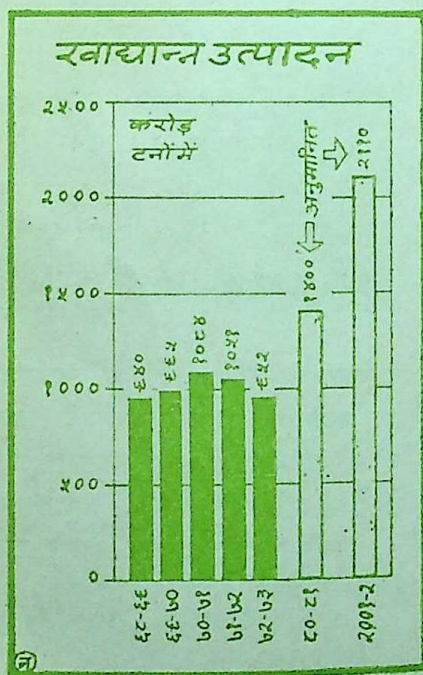
खाद्यान्न उत्पादन

करोड़ टनों में

2500
2000
1500
1000
500
0

अनुमानित

1800

2110

इस प्रकार खेती की पैदावार कमी के कारण उत्पन्न मुद्रास्फीति अर्थ-व्यवस्था में घुन की तरह लग है और उसे बुरी तरह प्रभावित करती मुद्रा का यह फैलाव तब तक तेजी से होता रहता है जब तक उत्पादन कर उसकी रोकथाम न कर ली ज इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हम अर्थ-व्यवस्था को चौपट करनेवाली मु स्फीति का असली चेहरा कैसा है। इ यह भी संकेत मिलता है कि मुद्रास्फी की रोकथाम कैसे की जा सकती

त्रुटिपूर्ण योजना

पिछले २३ वर्षों से हम योजना विकास में लगे हुए हैं, लेकिन अनेक क्षे में सराहनीय प्रगति के बावजूद हर आद को रोजमर्रा की जरूरी चीजें मिलने कोई विशेष प्रगति नहीं हुई। हमने तक विकास के लिए जितनी भी कोशि कीं, उनमें इन जरूरी चीजों के लिए पहले प्रयास करना चाहिए था, लेकि अफसोस, ऐसा नहीं किया गया!

इसमें कोई संदेह नहीं है कि हम अपनी अर्थ-व्यवस्था में सीमित सा से काम चलाया है। फिर भी उत्पा की गति को देखते हुए, दैनिक जरूरतों

चीजें तैयार करने के लिए अधिक पूंजी लगानी चाहिए थी। इससे हमारी अर्थ-व्यवस्था मुद्रास्फीति के संकट से बची रहती।

पिछले १७ वर्षों में, विशेषकर १९५५-५६ से, हर आदमी को खाद्यान्न, कपड़ा, चीनी और वनस्पति तेल-जैसी जरूरी वस्तुएं मिलने की मात्रा ३ प्रतिशत घट गयी है। पहले एक व्यक्ति को ४३१ ग्राम खाद्यान्न मिलता था, अब केवल ४१८ ग्राम मिलता है, वनस्पति तेल ढाई किलो से घटकर दो किलो और सूती कपड़ा १४.४ मीटर से घटकर १३.२ मीटर रह गया है। यह सही है कि चीनी पहले से थोड़ी अधिक मात्रा में मिलने लगी है। पहले वह प्रति व्यक्ति ५ किलो मिलती थी, अब वह ६.१ किलो मिलने लगी है।

एक विशेष बात और है। इस बीच प्रति व्यक्ति की वार्षिक आय में भी काफी वृद्धि हुई है। पहले जहां एक व्यक्ति की औसत वार्षिक आमदनी २५५ रुपये थी, अब वह बढ़कर ६८१ रुपये हो गयी है। आम-दनी बढ़ने से कीमतों में भी भारी मात्रा में वृद्धि हुई है। यही स्थिति यहां की जनसंख्या की है। पहले यहां की आबादी ३९ करोड़ ७० लाख थी, अब वह बढ़कर ५७ करोड़ ४० लाख हो गयी है।

एक पूरे कार्यक्रम पर विचार

इन सबसे यह निष्कर्ष निकलता है कि आम आदमी की जरूरतों की चीजों

चीनी और खाद्य तेलों की मांग के अनुमान
(करोड़ टनों में)
चीनी तथा गुड़
खाद्य तेल
२० १६० ४० ३२०
१९८०-८१ २००१-२
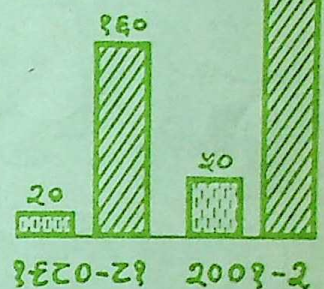
और अनाज के उत्पादन में तीव्रता से विकास लाया जा सके, इसके लिए सब कुछ किया जाना आवश्यक है। लेकिन यह भी सही है कि कृषि का विकास अकेले नहीं हो सकता। वह उन दूसरी बातों पर निर्भर करता है जो खेती की पैदावार बढ़ाने के लिए आवश्यक हैं। इसके लिए जितना अधिक रासायनिक खादों, कीटनाशक दवाओं, खेती के काम आने-वाली मशीनों तथा औजारों और सिंचाई के लिए पानी की सुविधाओं का उपयोग किया जाएगा, उतना ही अधिक अनाज पैदा होगा। इसलिए इनका विकास पूरी सतर्कता के साथ करना होगा।

दुनिया की पहली
डिटर्जेंण्ट
धुलाई की बार
सुपर
७७७

पैसा बचाओ, सफ़ेदी बढ़ाओ

बिल्कुल नयी!
SUPER
777
detergent
washing bar
सुपर ७७७ धुलाई की दुनिया में एक चमत्कार है.
यह एक नया फ़ॉरमूला है. सुपर ७७७ डिटर्जेंण्ट धुलाई की
बार में कपड़े सफ़ेद बनाने, धुलाई और सफ़ाई की अनंत
शक्ति है– पानी मीठा हो या खारा. और क़ीमत!
साधारण बार साबुनों के मुकाबले कम!
आज से ही इस्तेमाल कीजिये अपने कपड़ों के लिये एक नये प्रकार की धुलाई की बार— सुपर ७७७ डिटर्जेंण्ट धुलाई की बार!
shilpi dm 3A/74 HIN

कृषि-विकास में चहुंमुखी प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि व्यापक पैमाने पर 'एक पूरे कार्यक्रम' पर विचार किया जाए। इस समस्या की गंभीरता को देखते हुए ही प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में पांच सदस्यों की एक उच्च-स्तरीय समिति गठित की गयी है। यह समिति हमारे देश में खाद्यान्न और कृषि के समूचे विकास कार्यक्रम का सर्वेक्षण करेगी।

हमारे राष्ट्रीय साधनों के उपयोग के लिए कृषि-विकास को प्राथमिकता मिलनी चाहिए, ताकि कीमतों में स्थिरता बनी रहे। इससे उत्पादन के सभी क्षेत्रों में तेजी से बराबर विकास होता रहेगा। यह ध्यान देने की बात है कि खेती की पैदावार में कमी के कारण ही सन १९६७-६८ और सन १९७३-७४ में औद्योगिक विकास एकदम ठप पड़ गया था।

योजना का वर्तमान ढांचा भले ही बना रहे, लेकिन इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि इस शताब्दी के अंत तक स्थितियां क्या होंगी, यानी हमारे साधन कैसे होंगे और हमारी आवश्यकताएं क्या होंगी। प्रश्न इस बात का नहीं है कि हम नये और आधुनिक ढंग से भविष्य की कल्पना करते जा रहे हैं। हमें तो उन संभावनाओं को भी खोजना है कि आवश्यक जरूरतों को किस प्रकार पूरा किया जा सकता है।

देश की बढ़ती हुई जनसंख्या और बढ़ती हुई आमदनी पर आवश्यक वस्तुओं की मांग निर्भर करती है। परिवार-नियोजन के कार्यक्रम में चाहे जितनी सफलता मिली हो, लेकिन जनसंख्या तो और बढ़ेगी ही। हमारी आशावादिता इस अनुमान में निहित है कि १९८०-८५ तक जनसंख्या में वृद्धि की दर धीरे-धीरे घटकर एक प्रतिशत रह जाएगी, उसके बाद वह वहीं रुक जाएगी, लेकिन तब तक राष्ट्रीय आय में वृद्धि का सही अनुमान लगाना मुश्किल है। सुविधा के लिए यह माना जा सकता है कि वह ५ प्रतिशत प्रतिवर्ष के हिसाब से बढ़ेगी। इस आधार पर अनाज का उत्पादन १९८०-८१ में लगभग १४ करोड़ टन और सन २००१ में करीब २१ करोड़ १० लाख टन हो जाएगा।

इसी तरह उक्त वर्षों में गुड़ समेत चीनी की मांग क्रमशः १ करोड़ ६० लाख टन और ३ करोड़ २० लाख टन तक बढ़ जाने की संभावना है। वनस्पति-तेलों की मांग क्रमशः २० लाख टन तथा ५० लाख टन तक होने का अनुमान है। इस तरह २५ वर्षों से भी कम समय में खेती की पैदावार को दुगुने से भी ज्यादा बढ़ाना पड़ेगा। ऐसी हालत में, जीवन-स्तर में मामूली सुधार करने के लिए भी हर क्षेत्र में भारी उत्पादन की कोशिश करनी होगी। इसलिए खेती से संबंधित सभी क्षेत्रों में विकास का समान प्रयास होना चाहिए। साथ ही अधिक उत्पादन करने के लिए अभी से एक समन्वित योजना पर अमल शुरू हो जाना चाहिए।

प्रभावकारी वितरण-प्रणाली

अगर एक बार जीवन के लिए जरूरी वस्तुओं के उत्पादन को बढ़ाने का काम सबसे पहले करने की प्रवृत्ति बन जाए तो लोगों की मांग को पूरा करने के लिए प्रभावक वितरण-प्रणाली के बारे में सोचा जा सकता है। यह बात समझ लेना चाहिए कि चीजों की कमी होने से आदर्श वितरण-प्रणाली भी अमल में नहीं लायी जा सकती।

खेती की पैदावार में तनिक-सी भी कमी हो जाने पर बाजार में उपलब्ध वस्तुओं में एकदम भारी कमी हो जाती है। लेकिन अगर मांग से अधिक उत्पादन होने लगे तो अनाज और खेती की दूसरी चीजों के मूल्यों में होनेवाला उतार-चढ़ाव रोका जा सकता है।

पिछले वर्षों में, देश में अनाज की लगातार कमी के कारण खाद्यान्न का सुरक्षित भंडार रखा जाना संभव नहीं हो सका। १९५६ से १९७३ के बीच विदेशों से औसतन ४६ लाख टन अनाज प्रतिवर्ष मंगाना पड़ा है। सुरक्षित भंडार की योजना तभी सफल हो सकती है जब उत्पादन हमारी आम मांग से ज्यादा होने लगे। इसके लिए अन्न का कम से कम १५ फीसदी सुरक्षित भंडार रखना जरूरी है।

सरकार ने आर्थिक और मुद्रा-संबंधी जो कदम उठाये हैं वे मुद्रास्फीति के आकस्मिक कारण नहीं हैं। वर्तमान मुद्रा-स्फीति के चिह्न जून १९७२ से दिखायी देने शुरू हुए। इससे भी पहले करीब पांच साल तक मुद्रा-प्रसार की दर हर वर्ष ८-९ प्रतिशत बढ़ती रही। साथ ही कीमतें भी हर साल लगभग ४-५ प्रतिशत के हिसाब से बढ़ी हैं।

सेमीबोम्बला योजना से हानि

कीमतों और वेतनों में वृद्धि के कारण सरकार के खर्चे बढ़ जाते हैं। इसलिए घाटे की अर्थ-व्यवस्था पर अमल करने के अलावा सरकार के सामने और कोई चारा नहीं रहता। इस तरह मुद्रा-प्रसार में वृद्धि कीमतों के बढ़ने का कारण नहीं है, बल्कि उसका परिणाम है। इसलिए 'सेमीबोम्बला' योजना ने जो प्रस्ताव रखे हैं उन पर संदेह होना स्वाभाविक है।

इस योजना के सबसे बड़े दुष्परिणाम यह होंगे कि यदि मुद्रा का एक भाग निष्क्रिय हो जाए या उसका प्रचलन रुक जाए तो एक ओर तो वित्त की कमी हो जाएगी और दूसरी ओर औद्योगिक माल की मांग कम हो जाएगी। नतीजा यह होगा कि बेरोजगारी और बढ़ जाएगी।

इस योजना के प्रस्तावों पर अमल करने से उद्योगों के क्षेत्र में अराजकता की स्थिति पैदा हो जाएगी। यही नहीं, उससे देश की बैंकिंग-प्रणाली में जनता का, विशेषकर गांववालों का विश्वास, खत्म हो जाएगा। कीमतें कम करने के लिए इस तरह का हल अपनाना कतई उचित नहीं है। अगर इसे महंगाई का इलाज समझा जाए, तो इस तरह का इलाज रोग से भी बुरा साबित होगा।

विगत ९ जुलाई को सरकार ने मुद्रा-स्फीति रोकने के लिए दो अध्यादेश जारी किये हैं। वर्तमान दशा में वे अध्यादेश किसी न किसी रूप में शायद बहुत जरूरी थे, खास तौर से तब जबकि उत्पादन एकाएक नहीं बढ़ सकता। फिर भी, उत्पादन और रोजगार में भारी वृद्धि करके ही जीवन-स्तर को सुधारा जा सकता है।

कंपनियों के लाभांश के बारे में जारी अध्यादेश का उद्देश्य लाभांश को जहां का तहां बनाये रखना उतना नहीं है, जितना कि लाभांश को घटाकर १२ प्रतिशत तक पहुंचा देना है, जो कि इस समय बैंक द्वारा ली जाने वाली दर से भी ३ प्रतिशत कम है। इससे पूंजी-बाजार पर पहले ही उल्टा असर पड़ा है और लोग शेयरों में पूंजी लगाने में हिचकिचाएंगे। इससे पूंजी लगाने पर प्रतिकूल असर पड़ेगा। अगर कंपनियां लाभों को रोक भी लें तो भी नुकसान को उसी स्थिति में कम किया जा सकेगा, जबकि कंपनियों को विकसित होने दिया जाए और वे रोज के कामों में इस राशि का उपयोग करने के लिए मजबूर न हों।

उत्पादन में गिरावट

वास्तव में भारत सरकार ने जो कदम उठाये हैं उनमें से कुछ का असर यह पड़ा है कि मुद्रास्फीति घटने के बजाय बढ़ गयी है। जैसे, पिछले वर्ष मई में रिजर्व बैंक ने ऋण देने के संबंध में पाबंदियां लगायी थीं और बाद में नवंबर के महीने में दूसरे कड़े कदम उठाये थे। यह अच्छा ही हुआ कि इन पाबंदियों को कुछ नर्मी के साथ लागू किया गया। इसीलिए हालत बहुत बुरी तरह बिगड़ने से बच गयी। फिर भी बैंक-ऋण की कमी अभी काफी विकट बनी हुई है और चिंता की बात यह है कि इससे उद्योग-धंधों में उत्पादन में रुकावट पैदा हो गयी है।

इस सिलसिले में एक सर्वेक्षण से पता चला है कि ऋण की कमी के कारण उत्पादन बहुत कम हो गया है। साथ ही उद्योगों की क्षमता का उपयोग होने में भी गिरावट आयी है। जरूरत इस बात की है कि ऋण-संबंधी नीति के बारे में जो परंपरागत धारणा चली आ रही है उसे बुनियादी तौर पर बदल दिया जाए।

राजकोष और वित्त के मामलों में सरकार बेसुध नहीं रही। उसने इन क्षेत्रों में खर्च कम करने और खर्च तथा आमदनी के बीच अंतर को दूर करने के लिए काफी-कुछ तत्परता दिखायी गयी है। पक्के तौर पर, इसमें यह बात निहित है कि व्यय का पुनर्निर्धारण किया जाए जिससे अनुत्पादक मदों पर कम से कम खर्च हो। व्यय को फिर से तय करना न सिर्फ सरकारी क्षेत्र, बल्कि व्यापारिक क्षेत्र के साथ ही सभी तबकों के लिए जरूरी है। आशा है, इससे कंपनियों की और व्यक्तिगत तौर पर भी बचत अधिक हो सकेगी। उसके बाद मांग पर मुद्रास्फीति का असर काफी कम हो जाएगा और विकास करनेवाली ताकतें भी मजबूत होंगी। ●

चीन में सत्ता-विद्रोह की भूमिका

● यिंग-माओ काउ, पियरे एम. पेरोल

यिंग-माओ काउ ब्राउन विश्वविद्यालय में राजनीति-शास्त्र के एसोसियेट प्रोफेसर हैं और 'चाइनीज लॉ ऐंड गवर्नमेंट' के संपादक भी हैं। इस लेख में उनके सहयोगी पियरे एम. पेरोल मेसाच्यूसेट्स विश्वविद्यालय से संबद्ध वीटन-कॉलेज में इंस्ट्रक्टर के पद पर कार्य कर रहे हैं। दोनों चीनी मामलों के विशेषज्ञ हैं।

चीन की समकालीन राजनीतिक घटनाओं की नाटकीय विलक्षणता के प्रति चीनी राजनीति के पश्चिमी अध्येताओं एवं पर्यवेक्षकों में उत्सुकता जाग उठी है। चीन की सातवें दशक की आंतरिक राजनीति में जन-मुक्ति-सेना (पी. एल. ए.) की विशेष भूमिका रही है और विशेष रूप से सांस्कृतिक क्रांति के दौरान उसे सैनिक संगठनों की राजनीतिक भूमिका के सैद्धांतिक प्रश्नों के संदर्भ में संगत ठहराया गया है।

माओ-त्से-तुंग के नामांकित उत्तराधिकारी और रक्षामंत्री लिन पियाओ द्वारा सत्ता उलटने के लिए माओ के विरुद्ध किये गये तथाकथित सैनिक विद्रोह के प्रयत्न और १३ सितंबर, १९७१ को लिन पियाओ की रहस्यमय मृत्यु ने चीन में नागरिक-सैनिक संबंधों पर हमारी धारणा के सामने चुनौती प्रस्तुत की है।

चीन में कम्युनिस्ट क्रांति के प्रणेता : माओ-त्से-तुंग

लिन पियाओ

उत्थान-पतन की कहानी

लूशान में २ से १६ अगस्त, १९५९ को आयोजित आठवीं केंद्रीय समिति के आठवें अधिवेशन के तत्काल बाद से ही लिन पियाओ का आश्चर्यजनक उत्थान शुरू हो गया था। उस समय पेंग तेह-हुआई को माओ के 'लंबी छलांग' (ग्रेट लीप फॉरवर्ड) नामक साम्यवादी आंदोलन और सैनिक-गठन के विरुद्ध आवाज उठाने पर पदच्युत कर दिया गया था। पेंग के स्थान पर लिन ने प्रतिरक्षा-मंत्री का पद संभाला। १९६३ तक लिन पियाओ ने माओ के विचारों का प्रचार करते हुए काफी रचनात्मक कार्य किये।

इसी दौरान जन-मुक्ति-सेना का भी काफी प्रभाव बढ़ता जा रहा था। १९६४ में सारे देश के लोगों को 'जन-मुक्ति-सेना से सीखो' नामक आंदोलन में भाग लेने के लिए प्रेरित किया जा रहा था। १९६७ में लाल रक्षकों (रेड गार्ड) और क्रांतिकारी विद्रोहियों के बीच उभरे तनाव को दबाने में जन-मुक्ति-सेना ने महत्त्वपूर्ण काम किया।

सांस्कृतिक क्रांति के समय तो लिन पियाओ की राजनीतिक ख्याति अपनी चरमसीमा पर पहुंच गयी थी। अगस्त १९६६ तक लिन को माओ का दाहिना हाथ समझा जाने लगा और उसे पार्टी का एकमात्र उपाध्यक्ष बना दिया गया। १ से २४ अप्रैल, १९६९ को संपन्न नवीं पार्टी कांग्रेस द्वारा स्वीकृत नये पार्टी संविधान में लिन पियाओ को सरकारी तौर पर माओ का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया गया।

फिर भी, राजनीतिक मंच पर लिन के ऊंचा उठ जाने और राजनीति के क्षेत्र में उनकी सेना का प्रभाव बढ़ने के साथ ही, नागरिक एवं सैनिक नेतृत्व के बीच संघर्ष की खाई चौड़ी होती गयी। इस संदर्भ में अचानक एक मोड़ २३ अगस्त से ६ सितंबर, १९७० को लूशान में होने-वाली नवीं केंद्रीय समिति के दूसरे अधि-वेशन में खुलकर सामने आया। सभा के दौरान माओ और लिन के बीच कुछ विशेष मतभेद उठ खड़े हुए। २३ से २५ अगस्त के बीच, संभवतः लिन के निर्देशानुसार कार्य करनेवाले चेन पो-टा और ७ अन्य उच्च सैनिक पदाधिकारियों के इस अप्र-त्याशित और आकस्मिक विरोध से माओ को काफी सदमा पहुंचा। माओ ने निर्दे

दिया था कि नये राज्य-संविधान में 'राज्य अध्यक्ष पद' की स्थापना न की जाए। इस निर्देश को पूरी तरह अस्वीकार करना ही इस आकस्मिक विरोध का लक्ष्य था। इस घटना ने माओ को लिन की वफादारी की जांच करने और उसके प्रति अपनी नीति में परिवर्तन करने के लिए विवश कर दिया।

लूशान-घटना के बाद शुरू हुए इस सत्ता-संघर्ष को विशेष रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहली अवस्था में सितंबर, १९७० से जनवरी, १९७१ के बीच, माओ ने केंद्रीय समिति, सैनिक मामलों के आयोग (एम. ए. सी.) और पेकिंग सैनिक-क्षेत्र (पी. एम. आर.) में लिन के सत्ता-केंद्रों को ध्वस्त करने के लिए तीन उपाय किये—(१) चेन पो-टा और लिन के दूसरे सहयोगियों के विरुद्ध आलोचना का अभियान शुरू करना, (२) सैनिक मामलों के आयोग में अपने पक्ष के व्यक्तियों को मिलाना, (३) पेकिंग सैनिक-क्षेत्र के नेतृत्व को फिर से संगठित करना।

माओ की हत्या का षड्यंत्र

संघर्ष की दूसरी अवस्था में, लिन ने जनवरी, १९७१ से अपनी मृत्यु (१३ सितंबर, १९७१) तक राजनीति में जीवित रहने के लिए अनेक असफल प्रयत्न किये। लिन ने अपने पुत्र लिन की-कुओ, जो वायु-सेना में सैन्य-परिचालन का उप-निदेशक था, को माओ के विरुद्ध सत्ता उलटने के षड्यंत्र की योजना बनाने का काम सौंप

चीन की जन-मुक्ति-सेना : विद्रोह के मोहरे
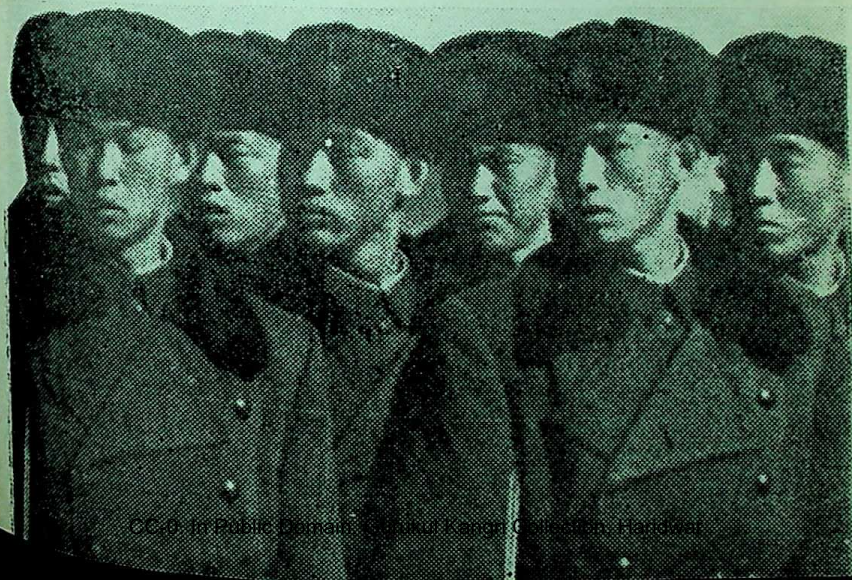
दिया। प्रारंभ में ऐसा लगता था कि बड़ी संख्या में उच्च सैनिक अधिकारी षड्यंत्र की इस योजना से संबंधित थे, विशेष रूप से हुआंग युंग-शेंग, वू फा-सिएन, ली त्सो-पेंग और चिउ हुइ-त्सो। २२ से २४ मार्च तक, शंघाई में 'प्रोजेक्ट ५७१' नाम से सैनिक विद्रोह की रूपरेखा बनायी गयी। पहले तो वायुसेना को शंघाई नानकिंग क्षेत्र में और समाचार-प्रसारण-यंत्रों के ठिकानों पर हमले के लिए तैयार किया गया। इसके साथ ही, १२ सितंबर को माओ त्से-तुंग जिस रेलगाड़ी से शंघाई क्षेत्र की निरीक्षण-यात्रा कर रहे थे उस पर बम गिराकर माओ को मार डालने की योजना बनायी गयी। लेकिन लिन की पुत्री लिन ताऊ-ताऊ ने चाऊ-एन-लाई को इस षड्यंत्र की सूचना दे दी।

अपने सैनिक विद्रोह को विफल होता देखकर लिन पियाओ ने अपनी पत्नी येह चून और पुत्र लिन ली-कुओ के साथ पेइताइहो में एक जेट विमान पर रूस भाग जाने का प्रयत्न किया, लेकिन मंगोलिया में १३ सितंबर को रात में वायुयान दुर्घटनाग्रस्त हो गया और उस पर सवार सभी व्यक्ति मर गये।

षड्यंत्र में सम्मिलित लिन के सहायक चेन पो-टा, हुआंग युंग-शेंग, वू फा-सियेन, ली त्सो-पेंग और चिउ हुइ-त्सो को तुरंत बंदी बना लिया गया और इन सभी को सेवा से अलग कर दिया गया। इस घटना के बाद षड्यंत्र और लिन-चेन गुट की अन्य गतिविधियों की जांच करने के लिए केंद्रीय समिति की एक उप-समिति बनायी गयी।

राजनीति में सैनिक हस्तक्षेप, सरकार की नीतियों से सैनिकों के असंतोष पर आधारित होता है। उस समय सभी सैनिक वर्ग राष्ट्रीय हित के लिए सामान्य राजनीति में बिखरी हुई अनियमितताओं और कमियों को दूर करने के लिए नीति-संबंधी मामलों और राजनीतिक शक्ति को अपने हाथों में लेने की कोशिश करते हैं। लेकिन लिन और माओ के संघर्ष का वास्तविक कारण तो व्यक्तिगत, दो व्यक्तियों के बीच का सत्ता-संघर्ष था। फिर भी नीति में भेद को भी सैनिक क्रांति होने में महत्त्वपूर्ण तत्त्व माना जाना चाहिए, भले ही क्रांति का वास्तविक आधार अन्य कारण क्यों न हों।

आर्थिक नीति से लिन के असंतोष का दूसरा प्रमाण इस बात से मिलता है कि लिन ने नवीं केंद्रीय समिति के दूसरे सत्र-तर अधिवेशन के तीन कार्यक्रमों को पलटने की कोशिश की।

लिन पियाओ का मामला सितंबर १९७१ में उसकी मृत्यु के साथ ही नहीं समाप्त हो जाता। तब से चीन में राज-नीतिक आंदोलन बराबर जारी हैं। इन आंदोलनों का उद्देश्य है लिन को पूरी तरह असम्मानित करना और सत्ता-विद्रोह की समस्या से उत्पन्न विभिन्न मसलों का समा-धान ढूंढ़ना।

क्या मृत्यु वास्तव में निश्चित है?

• डॉ. रोजर लेविन

यह कहा जाता है कि इस जीवन में केवल मृत्यु निश्चित है, किंतु आयु का बढ़ना या मृत्यु बड़े चिरंतन सत्य क्यों हैं? क्या मृत्यु वास्तव में निश्चित है? वैसे यदि कैंसर के कोशों (सेल्स) को अवसर मिले तो वह अनंत काल तक जीवित रह सकते हैं। जंगलों में अनेक पशु अपने ऊतकों (टिशू) के वृद्ध होने से पूर्व ही मर जाते हैं। शरीर के भीतर छोटे-छोटे अणुओं (मॉलीक्यूल्स) के बनाव की जानकारी प्राप्त करनेवाले उन वैज्ञानिकों का एक नया वर्ग उत्पन्न हो गया है जो आयु-विज्ञान के क्षेत्र में काम करते हैं। इस समय सबसे प्रचलित धारणा यह है कि बुढ़ापा या मृत्यु पित्रैकों (जीन्स) की गड़बड़ी के कारण होती हैं।

विकासवाद के कुछ अध्येताओं का कथन है कि एक वर्ग के पशुओं का मरना अनिवार्य है, यदि किसी प्रकार का चयन होना है। जितनी जल्दी वे मरेंगे उतनी ही शीघ्रता से चयन होगा और विकास होगा। किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि इस तर्क में कहीं कुछ कमी है क्योंकि यह देखा गया है कि पशु अपनी आयु पूरी होने से पहले ही किसी न किसी दुर्घटना में मर गये हैं और वृद्धावस्था के कष्ट से बच जाते हैं। इसलिए यह कहना मुश्किल लगता है कि वृद्ध होना किस प्रकार चुनी गयी अवस्थाओं में से एक है। वास्तव में जीवित

क्या बुढ़ापा जीवन का अनिवार्य सत्य है? हम शीघ्र-अति शीघ्र उच्च शारीरिक क्षमता प्राप्त करना चाहते हैं, क्या इसी का परिणाम मृत्यु है? क्या जीवन निश्चित समय तक उत्पन्न होनेवाले जीवकोशों पर ही निर्भर है? शारीरिक विकास और बुढ़ापे से संबंधित जीव वैज्ञानिक शोधों के रोचक निष्कर्ष

लोगों में अपना वंश चलाने की बड़ी गहरी प्रवृत्ति होती है, इसलिए वे अधिक से अधिक संतानोत्पत्ति करना चाहते हैं। इस तर्क से तो यह लगता है कि विकास अधिक लंबे समय तक प्रजनन करनेवाली आयु के पक्ष में है, जबकि सत्य यह नहीं है।

अधिक मान्य तर्क तो यह होगा कि जो पशु जीवन के प्रथम काल में जितने अधिक सफल सिद्ध होते हैं, वे उतनी ही जल्दी मरते भी हैं। बच्चा पैदा करने की शक्ति उनमें जल्दी ही उत्पन्न हो जाती है ताकि उनकी प्रजननशीलता पर अकाल मृत्यु का कोई प्रभाव न पड़े। उतना ही महत्त्वपूर्ण यह भी है कि उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) का प्रकट होना भी कम उम्र में ही प्रजननशीलता में सहयोग देता है। उत्परिवर्तन वृद्धावस्था के आगमन में सहायक हो सकता है किंतु इस उत्परिवर्तन से कैंसर के कोश छुटकारा पा सकते हैं और 'विशुद्ध' कोशों को जन्म दे सकते हैं।

आयु-वैज्ञानिक वृद्ध मनुष्य पर ही ध्यान रखकर इस बात की जानकारी नहीं पा सकते कि वृद्धावस्था या अधिक उम्र प्राप्त करना क्या होता है क्योंकि एक वृद्ध मनुष्य में वयस्कता के कई प्रकार के लक्षण एकसाथ व्यक्त हो सकते हैं और उन लक्षणों में से कोई एक उसकी मृत्यु का कारण बन सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि आयु-वैज्ञानिक को यह अंतर स्पष्ट रूप से जानना होगा कि कोश-वयस्कता और शरीर की मृत्यु केवल अर्थ है।

वह यह सब कोशों को 'कल्चर' (विशेष क्रिया से उत्पन्न कर) तथा परिपक्व होते देखकर पता लगा सकता

अमरीका में स्टेनफोर्ड विश्वविद्या के लियोनार्ड हेफ्लिक ने कोश-वयस्कता प्रयोगशाला में टेस्ट-ट्यूब द्वारा सिद्ध दिखाया था। उन्होंने मानवीय कोशों 'कल्चर' करके यह बताया कि एक कितनी बार अपने-जैसे कोशों को जन्म है। उनके अनुसार एक कोश ५० या बार अपने-जैसे कोशों को जन्म देता है। प्रकार उन्होंने 'हेफ्लिक सीमा' को दिया। इस प्रकार की जीवन-अवधि समय काफी लंबा होता है जितना कि को अपनी पृष्ठभूमि से हटाने के बाद नहीं होता। इसका यह अर्थ हुआ कि टेस्ट ट्यूब में कोश अपनी पूर्णता को प्राप्त है और उसमें यह भी ज्ञात हो जाता है कोश केवल एक सीमा तक अपने विभाजित कर सकता है, या प्रजनित सकता है।

हेफ्लिक के निष्कर्षों की बड़ी आलोचनात्मक प्रतिक्रिया हुई जिन अधिकांश ने यह कहा कि कोश-प्रजनन की प्रक्रिया का बंद होना, विशेष रूप अपने 'कल्चर' रूप में, वास्तविक वयस्कता से भिन्न है। १९७३ के लगभग हेफ्लिक ने इस प्रकार के संदेहों का अंत कर दिया उन्होंने कई बड़े विचित्र तथा बुद्धिमत्ता प्रयोगों से यह सिद्ध कर दिया कि (क्लोन) वयस्कता का सिद्धांत सही है

जैसे, इंगलैंड में एलेन विलियमसन और इटा अस्कोनास ने एक प्रयोग से सिद्ध किया कि बी-लसिका कणिका (ऐसे कोश जिनसे प्रतिपिंड का जन्म होता है) की प्रजनन-शीलता जीवित जानवरों में सीमित होती है। उन्होंने लसिका कणिका के एक कृंतक को कई जानवरों में प्रविष्ट किया और उनको प्रतिजन चुनौती के सम्मुख अपने को विभाजित करने के लिए उत्तेजित किया। ६० या ७० बार अपने को विभाजित करने के बाद (जो हेफ्लिक सीमा के करीब है) कृंतक लगभग समाप्त हो गया और कोश मर गया ।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के चार्ल्स डेनियल ने चूहे की स्तनीय कोशिकाओं में एक और समान स्थिति उत्पन्न की। एक जानवर के कोश दूसरे में प्रविष्ट किये और कोश-विभाजन के लिए उन्हें उत्तेजित किया और यह उत्तेजना तब तक दी जब तक कि कोश अपनी प्रजननशीलता समाप्त न कर बैठे। उन्होंने दिखाया कि कालावधि नहीं, वरन कोश-विभाजन की क्रिया वृद्धा... रह होंगे। ... और को...

लड़ाई के मैदान

प्रतिशत आदर्श नहीं हो सकते और भूल हो जाना स्वाभाविक ही है। लगभग १० वर्ष पूर्व लेसली ऑरगेल ने साक संस्थान, कैलीफोर्निया में यह प्रतिपादित किया था कि पहले भूलें धीरे-धीरे बनती

जीव-कोशों की शरीर-यात्रा

हैं, फिर एकसाथ उनमें तेजी प्रकट होती है, फलस्वरूप 'भूल विपत्ति'-सी आ जाती हैं और कोश की मृत्यु हो जाती है। दूसरे

शब्दों में, यदि किसी भी शरीर में एक भूल हो जाए तो वह भूल अपने को अनेक में बढ़ा लेती है। इस प्रकार प्रोटीन में इतनी खराबी आ जाती है कि कोश उसका मुकाबला नहीं कर पाता। यह तो केवल सिद्धांत था। अब डॉ. रॉबिन होली डे ने अपने सहयोगियों की मदद से यह सिद्ध किया है कि ज्यों-ज्यों 'कल्चर' की आयु बढ़ती है उसमें प्रोटीन की खराबी भी बढ़ जाती है, और उन्होंने ५-फ्लूरोसिल (जो एक प्रकार का रसायन है) द्वारा प्रोटीन-संश्लेषण में एक भूल उत्पन्न कर दी जिसके कारण समय से पूर्व ही कोश वृद्ध हो गये और प्रोटीन में खराबी आ गयी। होली डे ने अपने साथियों सहित 'वर्नर बीमारी' से पीड़ित रोगियों को भी देखा। इस बीमारी में रोगी समय से पहले ही वृद्ध होने लगता है। 'भूल सिद्धांत' इसमें एकदम खरा उतरता है। परंतु भूल होती कैसे है? शुरू में लगता है कि शरीर में कोई आंतरिक कमी होती है। परंतु यह संभव है कि भूल की बढ़ने की दर उत्परिवर्तन के कारण बढ़ जाती हो। उत्परिवर्तन शरीर के आंतरिक कारणों या बाहरी कारणों दोनों से हो सकता है। नवीन कोश यह चयन कर सकते हैं कि किन कोशों के कारण गंभीर उत्परिवर्तन हो रहा है और कौन से वृद्ध तंतु या ऊतक (टिशू) वृद्ध होने के कारण मात्र धीरे-धीरे बढ़ रहे हैं। स्पष्ट है कि उत्परिवर्तन की भूल और प्रोटीन-संश्लेषण में कोई न कोई आंतरिक संबंध अवश्य है।

एक और संभावना है कि वयस्क... आनुवंशिक रूपरेखा का भाग ही हो... कोश-विभाजन की निश्चित सीमा... बाद इस प्रक्रिया को स्वतः ही बंद कर... हो। यदि ऐसा है तो यह बताना आ... है कि कैंसर के कोश क्यों निरंतर ब... रहते हैं।

यदि 'भूल सिद्धांत' सही है तो कैं... कोश को अमर होने के लिए कुछ अ... सूक्ष्म होना पड़ेगा, कोश की संख्या... भूलों के विपत्ति स्तर से कुछ नीचे... रखना होगा। यह सब केवल इसी प्र... संभव है कि 'कलचर' तेज दर से बढ़े... भूलवाले कोशों का चयन कर लें... अन्य भूल-रहित कोश अपना प्र... करते रहें। वास्तविकता कुछ भी हो... किंतु रहस्य की चाबी तो कैंसर कोश... निहित है जो बताएगी कि वृद्धाव... के पीछे क्या सिद्धांत छिपा है।

—अनु. आर. पी. ...

...निष्कर्षों की बड़ी... आलोचनात्मक प्रतिक्रिया हुई जि... अधिकांश ने यह कहा कि कोश-प्र... की प्रक्रिया का बंद होना, विशेष रू... अपने 'कल्चर' रूप में, वास्तविक वयस्... से भिन्न है। १९७३ के लगभग हे... ने इस प्रकार के संदेहों का अंत कर दि... उन्होंने कई बड़े विचित्र तथा बुद्धिमत्ता... प्रयोगों से यह सिद्ध कर दिया कि ... (क्लोन) वयस्कता का सिद्धांत सही है...

● अमृत पंड्या

हमारे प्राचीन ग्रंथों—वेद, पुराण, रामायण, महाभारत आदि—में आर्यों (देव) के अतिरिक्त नाग, दैत्य, दानव, असुर, राक्षस, पिशाच, यक्ष, गंधर्व, किन्नर, विद्याधर, खस आदि अनेक जातियों का वर्णन है। इनमें यक्ष, गंधर्व, किन्नर और विद्याधर हिमालय की घाटी तथा उसके उत्तर स्थित देशों के निवासी थे। वरुण पश्चिमी समुद्र (अरब सागर) का अधिपति और पश्चिम दिशा का दिक्पाल था (विष्णु-पुराण)। सुमेरु पर्वत (पामीर) के पश्चिम में मानसोत्तर नाम की प्रशाखा के सिरे पर समुद्र के निकट 'सुषा' इसकी राजधानी थी (मत्स्य-पुराण) वरुण इस देश में 'नाग' लोगों का राजा था (महाभारत, सभापर्व)। सुषा (सुसा) नगर इराक और ईरान की सीमा के निकट विद्यमान है। इस आधार पर नाग लोग पश्चिम एशिया, खासकर इराक (प्राचीन सुमेर, बेबीलोनिया और असीरिया) के निवासी रहे होंगे।

पुराणों के अनुसार एक-दूसरे से समुद्र द्वारा अलग होने से अनेक रसातल बने। इनमें से सातवें का नाम 'पाताल' है (वायु-पुराण)। पाताल में बलि राजा का नगर है। पाताल में देव, असुर, नाग और राक्षसों का आवास है। उससे आगे ऐसे स्थान हैं जहां कोई भी नहीं जा सकता (वायु-पुराण)।

असुर और देव भाई-भाई

इन प्रमाणों के अनुसार नागों के साथ असुर भी पश्चिम एशिया में रहते थे। उपर्युक्त विदेशी जातियों में से देवों का सबसे अधिक संपर्क असुरों के साथ रहा।

लड़ाई के मैदान में ऊंट की पीठ पर

पुराणों आदि में वर्णित बारह देवासुर संग्रामों-जैसी कितनी ही घटनाओं से ऐसा मालूम होता है। 'ताण्ड्य-ब्राह्मण' के अनुसार असुर बड़े भाई और देव छोटे थे। 'शतपथ-ब्राह्मण' में भी इसका उल्लेख है। 'काठक संहिता' के अनुसार देव जब बड़े हुए तो उन्होंने असुरों, दैत्यों और दानवों से राज्य करने के लिए कुछ भूमि मांगी। अस्वीकार किये जाने पर तीन सौ वर्षों में बारह देवासुर-संग्राम हुए।

हमारे प्राचीन साहित्य के अनुसार ब्रह्मा से दक्ष प्रजापति उत्पन्न हुए। उनकी तेरह कन्याओं का कश्यप के साथ विवाह हुआ। कश्यप से देव, दैत्य (असुर), दानव, नाग आदि प्रजाओं का जन्म हुआ।

युद्धबंदी : बच्चा और बुजुर्ग भी

कश्यप-पत्नी दिति से जन्मे दैत्य और असुर एक ही थे। इनका वंश-क्रम महाभारत आदि के अनुसार इस प्रकार आगे बढ़ा—कश्यप-दिति, हिरण्यकशिपु, प्रह्लाद, विरोचन, वलि और बाण (असुरबाण, बाणासुर)। बाण की राजधानी शोणितपुर या रुधिरपुर थी। पुराणों में वर्णित उषा-अनिरुद्ध के आख्यान से यह बात ज्ञात होती है।

कथा 'उषा-अनिरुद्ध'

'उषा-अनिरुद्ध' की कथा वैसे तो अनेक ग्रंथों में मिलती हैं, किंतु 'हरिवंश-पुराण' में इसका विस्तृत वर्णन है। 'हरिवंश' महाभारत का परिशिष्ट माना जाता है। महाभारत में कृष्ण-चरित्र तथा उनके कौरव-पांडवों के संपर्क में आने का वर्णन ही है, शेष वर्णन 'हरिवंश' में है। पाणिनि (ई. पू. ६००) के पूर्व 'हरिवंश-पुराण' का अस्तित्व था।

'उषा-अनिरुद्ध' की कथा इस प्रकार है—शोणितपुर के राजा असुरबाण की उषा नामक एक कन्या थी। उनके मंत्री कौभांड की पुत्री चित्रलेखा उसकी सहेली थी। एक दिन उषा ने स्वप्न में एक राजकुमार देखा, जिस पर वह आसक्त हो गयी। उषा ने चित्रलेखा से इस संबंध में बातचीत की। चित्रलेखा ने देश-देशांतरों के अनेक राजकुमारों के चित्र उषा को बना-बनाकर दिखलाये। उनमें से एक को उषा ने अपने स्वप्न में देखे राजकुमार के रूप में पहचान लिया। यह श्रीकृष्ण का पौत्र (प्रद्युम्न
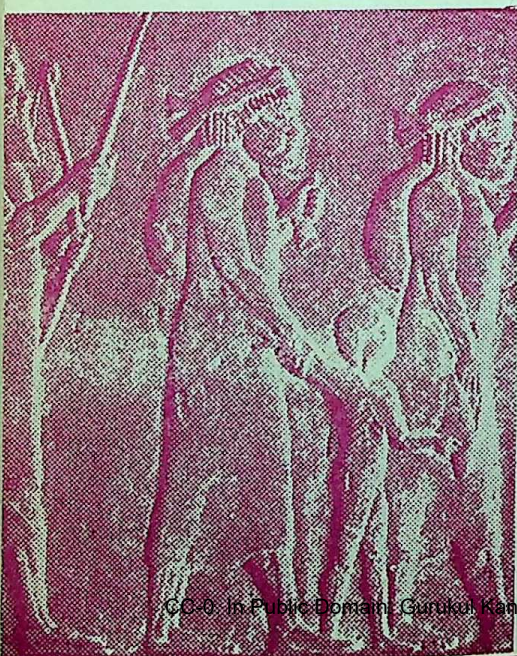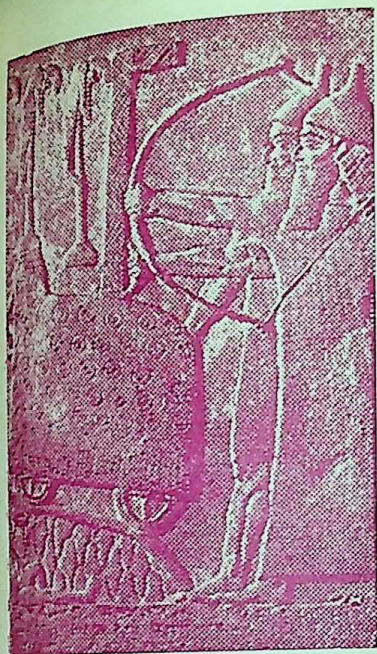
एक नगर घेरे में––सूलियों पर लाशें लटकी हैं

का पुत्र) अनिरुद्ध था। अनिरुद्ध को किसी भी प्रकार ले आने के लिए उषा ने चित्रलेखा से कहा। चित्रलेखा गुप्त रूप से द्वारावती (द्वारका) गयी और सोते हुए अनिरुद्ध का हरण कर उसे शोणितपुर ले आयी। उषा ने उसे अपने पास राजमहल में रखा। उधर द्वारका में अनिरुद्ध के सहसा गायब हो जाने से हाहाकार मच गया।

नारद ने इस रहस्य का उद्घाटन करते हुए बताया कि अनिरुद्ध का हरण हुआ है और वह शोणितपुर के राजा बाणासुर के यहां राजप्रासाद में कैद है। उन्होंने बताया कि शोणितपुर द्वारावती से ग्यारह हजार योजन दूर है।

कृष्ण ने शोणितपुर पर आक्रमण की तैयारी की। वे बलराम, प्रद्युम्न आदि को लेकर सेना समेत शोणितपुर के निकट आ पहुंचे। उन्होंने देखा कि तपन, दहन आदि अनेक प्रकार की अग्नियां प्रज्वलित होकर चारों ओर से शोणितपुर की रक्षा कर रही हैं। इन अग्नियों को जलास्त्र आदि आयुधों से समाप्त कर कृष्ण ने शोणितपुर में प्रवेश किया। बाणासुर के साथ तुमुल युद्ध हुआ। अंत में कृष्ण की विजय हुई। अनिरुद्ध को मुक्त किया गया, फिर उषा के साथ उसका धूमधाम से विवाह हुआ।

पराजित बाणासुर के मंत्री कौभांड ने कृष्ण से कहा कि शोणितपुर और द्वारावती के मार्ग में वरुणदेव की राजधानी पड़ती है, वरुण के पास असंख्य उत्तम गायें हैं, लौटते हुए वरुण से प्राप्त कर गायों को द्वारावती लेते जाएं। कृष्ण पौत्र-वधू उषा को लेकर द्वारावती रवाना हो गये। मार्ग में कृष्ण ने वरुण से गायें मांगीं। वरुण ने उनकी मांग ठुकरा दी। फलस्वरूप युद्ध हुआ। कृष्ण ने वरुण को पराजित कर दिया और उत्तम गायें अपने साथ ले लीं। द्वारावती लौटने पर धूमधाम से विजयोत्सव मनाया गया। उषा के साथ जो असुर कन्याएं शोणितपुर से आयी थीं, उनके विवाह भी योग्य यादव कुमारों के साथ कर दिये गये।

वरुण की राजधानी

उपर्युक्त कथा की दो घटनाएं विशेष रूप

से विचारणीय हैं। प्रथम यह कि द्वारावती और शोणितपुर के मार्ग में वरुण की राजधानी थी। दूसरी यह कि शोणितपुर के चारों ओर अग्नि की ज्वालाएं प्रज्वलित होती थीं। वरुण पश्चिम का दिक्पाल था। अतः शोणितपुर की स्थिति द्वारावती के पश्चिम में होना चाहिए। ऐसी स्थिति में कृष्ण अपनी सेना द्वारावती से जहाजों द्वारा पश्चिमी (अरबी) समुद्र में कहीं ले गये होंगे। वरुण की राजधानी मत्स्य, विष्णु आदि पुराणों के अनुसार ईरान और इराक की सीमा पर ईरान की खाड़ी के निकट सुसा नगरी थी, अर्थात कृष्ण और उनकी सेना शोणितपुर जाते हुए सुसा के सामने से गुजरी होगी और शोणितपुर सुसा से कहीं आगे रहा होगा। वह स्थान जहां भूगर्भ में खनिज तेल की मौजूदगी के कारण प्राकृतिक गैस की ज्वालाएं निकलती रही हैं, उत्तर इराक में किर्कुक क्षेत्र है। प्राचीन काल में यहीं असीरियाई लोग (ई. पू. १९००-६०६) बसे हुए थे। ये लोग अपने शिलालेखों और साहित्य में अपनी जाति का नाम 'अस्सुर' लिख गये हैं। 'असीरियाई' शब्द 'अस्सुर' का ग्रीक रूपांतर है। इस प्रकार प्राचीन भारतीय साहित्य के असुर लोग उत्तर इराक के 'अस्सुर' अथवा असीरियाई लोग थे। इतिहास में उन्हें प्राचीन विश्व की सबसे कठोर और अत्याचारी जाति बताया गया है। उनके हाथ सदैव खून से रंगे रहते थे।

शोणितपुर प्राचीन उत्तर इराक या असीरिया के किर्कुक क्षेत्र में कहीं रहा होगा। इस क्षेत्र में असीरियाइयों ने एक के बाद एक तीन राजधानियां बसायी थीं— अस्सुर, निमरूद और निनेवा (निनुआ)। असीरियाइयों के युद्धदेव 'अस्सुर' थे। उनके अनुयायी होने के कारण ये लोग 'अस्सुर' कहलाये। इसी नाम पर असीरियाई लोगों ने अपनी पहली राजधानी 'असुर' का निर्माण किया। उनके एक देव का नाम 'निमरूद' था। अतः उन्होंने दूसरी राजधानी का नाम भी यही रखा। असुरों की राष्ट्रीय मातृदेवी का नाम 'नीना' था। अतः तीसरी राजधानी इस देवी के नाम पर 'निनुआ' बसायी गयी थी। प्राचीन साहित्य में शोणितपुर के एक से अधिक नाम मिलने के कारण यह नाम किसी अन्य भाषा का संस्कृत रूपांतर प्रतीत होता है, किंतु असीरिया की तीन राजधानियों के नामों में ऐसा कोई अर्थ प्रतिध्वनित नहीं होता, क्योंकि ये नाम असीरियाई देव-देवियों के नाम पर हैं।

यहूदियों पर असीरियाइयों द्वारा भारी अत्याचार किये जाने से उन्होंने असीरियाइयों को खूनी लोग और उनकी राजधानी को 'खूनी नगरी' बतलाया है। इस प्रकार बाणासुर की राजधानी का भेद खुला। निनेवा आज भी मौजूद है। वह किर्कुक के निकट है।

देवासुर-संग्राम कहां हुए?

इन तथ्यों से ऐसा प्रकट होता है कि बाद देवासुर-संग्राम भारतीय आर्यों और असी

रियाइयों के बीच हुए थे । प्रश्न उठता है कि ये भारतभूमि पर हुए थे या कहीं और ? इस विषय में पुराणों की कितनी ही घटनाएं संदिग्ध हैं । कितने ही युद्ध भारत में भी होने के प्रमाण हैं । इसका अर्थ यह हुआ कि असीरियाइयों ने भारत पर आक्रमण किया था । नाग लोगों की सीमा में असीरियाई आ जाते थे । हमारे प्राचीन साहित्य में पश्चिम एशिया और मिस्र के प्राचीन लोगों के लिए नाग नाम सामान्यत: व्यवहृत किया गया मालूम होता है । पुराणों के लेखानुसार भारत के भिन्न-भिन्न भागों पर नाग लोगों ने अनेक आक्रमण किये और यहां रहकर उन्होंने अनेक प्रदेशों में राज्य भी किया था । हरिवंश-पुराण के अनुसार सबसे पहले कार्तवीर्य अर्जुन नाग लोगों को नर्मदा घाटी स्थित माहिष्मती में बसाने के लिए लाया था । परीक्षित वध नाग लोगों के आक्रमण में हुआ था ।

अब प्रश्न यह उठता है कि जिस प्रकार हमारे प्राचीन साहित्य में प्राचीन पश्चिम एशिया के लोगों के बारे में तथ्य मिलते हैं, क्या उसी प्रकार वहां के प्राचीन साहित्य और शिलालेखों में भी भारतीयों से संबंधित तथ्य मिलते हैं ? इस दृष्टि से प्राचीन भारतीय तथा प्राचीन प. एशियाई इतिहास का अध्ययन अभी आरंभ नहीं किया गया है । बेबीलोनिया, मिस्र, असीरिया के साहित्यों, शिलालेखों में भारत का क्या नाम आया है, इसका पता नहीं चला है । इस विषय का अध्ययन अनुसंधान आवश्यक है ।

इस अंधेरे में

इस अंधेरे से बहुत उकता गया हूं
और कोई रोशनी की बांह दो मुझको

अजनबी-छाया घिरी जाती तृषा-सी
तुम कहो कितने मुखौटे नोच डालूं
आंसुओं का व्याकरण बदला हुआ है
किस तरह टूटे हुए को मैं संभालूं
हर कहीं अभिव्यक्ति जैसे बिक गयी है
और कोई भावना की राह दो मुझको

इस उदासी में यही अहसास होता
आदमी का दर्द जैसे नदी का बहना
बात बुलबुल से हुई तो कान में बोली
हारकर भी मित्र तुम सागर बने रहना
प्रश्न के लंबे सफर में खो गया हूं
और कोई प्रेरणा की छांह दो मुझको !

एक पुल ऐसा नजर आता नहीं है
भार जो संघर्ष का हंसकर उठा जाए
घाटियों के पार छिपते बादलों-जैसे
शब्द के ये सिलसिले मिटने नहीं पाए
यह जलन लगती बिकाऊ, क्या विवशता है
और कोई पारदर्शी दाह दो मुझको

—देवप्रकाश
—ए-३६४, डिफेंस कालोनी
नयी दिल्ली-२४

देवदासियां किसके लिए?

• लक्ष्मीकांत 'सरस'

ऐतिहासिक परिवर्तनों के कारण जब भारत के उत्तरापथ में नृत्य की प्रथा समाप्त होने लगी तब दक्षिण के कथक ने उसमें एक नया रूप पाया और गणिकाओं तथा नगरवधुओं के नृत्य को धार्मिकता का जामा पहनाकर मंदिरों में स्थापित किया। सुरक्षा और विकास की दृष्टि से नृत्य के लिए दक्षिण में स्थिति अनुकूल थी। धर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिए दक्षिण में मंदिरों को इस प्रकार के सभी साधनों से युक्त करने की प्रतिस्पर्धा थी। इन्हीं कारणों से कल्याण-मंडपम् (विवाह-मंडप), नृत्य-मंडपम् एवं क्रीड़ा-सरोवर का निर्माण कराया गया।

नृत्य का देवदासियों से चोली-दामन का संबंध था। दक्षिण ने उत्तर के जिस नृत्य को आत्मसात कर देवदासियों और गणिकाओं के माध्यम से शास्त्रोक्त चरित्र की गरिमा प्रदान की थी वह माधवी और मल्लविका कला से भिन्न था। इस परिवर्तन से दक्षिण में शैव और वैष्णव धर्म को यथोचित स्थान प्राप्त हुआ। जब देवदासियां अपने आराध्य के समक्ष गायन और नृत्य प्रस्तुत करती थीं तब भक्तों की भीड़ उमड़ पड़ती थी।

देवदासियों में गणिका-वृत्ति

केरल, मैसूर और आंध्र के मध्यकालीन साहित्य में देवदासियों के धार्मिक व्यभि-चार का बहुत कम प्रमाण मिलता है। तत्कालीन मलयालम साहित्य (१३-१५ वीं सदी) में देवदासियों की सुंदरता, प्रणय, शृंगार आदि का वर्णन है। केरल के नंपूतिरी ब्राह्मणों के कारण तत्कालीन भाषा में संस्कृत घुलमिल गयी। संस्कृत भाषा का वहां की संस्कृति और समाज पर इतना व्यापक प्रभाव पड़ा कि चौदहवीं सदी से लेकर सोलहवीं सदी तक संस्कृत में साहित्य-सृजन बहुत लोकप्रिय रहा। आठवीं-नवीं सदी के केरलीय मंदिरों में पूजा, नृत्य, गायन, व्यवस्था आदि के संबंध में नंपूतिरियों का ही एकाधिकार रहा। मंदिरों में देवताओं की मूर्तियों की सेवा के लिए पर्याप्त देवदासियां नियुक्त थीं। आठवीं सदी में देवदासियों के प्रति लोगों में पवित्र भावना थी। बाद में कुछ विलासी नंपूतिरियों एवं सामंतों के कारण देव-

दासियों में गणिका-वृत्ति पैदा हुई।

देवदासियों पर श्रृंगारप्रिय कवियों की लेखनी उठी और तत्कालीन मलयालम साहित्य श्रृंगारमय हो गया। आठवीं सदी के कवियों की रचनाओं में यौवन की मादकता, श्रृंगार-सौष्ठव, प्रणय की उड़ान और चांद-चांदनी की आभा जनता का मन मोहने लगीं। लीलातिलकम्, वैशिक तंत्रम अचीचरितंगल उणिया-टिचरिम आदि ग्रंथ देवदासियों, गणिकाओं के सौंदर्य-वर्णनों से भरे हैं।

राजा कृष्णदेवराय के शासनकाल में विजयनगर राज्य का चहुंमुखी विकास हुआ था। उसने मंदिरों का जीर्णोद्धार ही नहीं बल्कि कई विशाल मंदिरों का निर्माण भी कराकर उनमें देवदासियों को नियुक्त किया था।

आदिशक्ति रेणुका के रूप में

चीनी यात्री ह्वेनसांग (सातवीं सदी) ने अपने यात्रा-वर्णन में लिखा था कि मुलतान में भी देवनर्तकियों की संस्था पूर्ण रूप से स्थापित हो चुकी थी। मुलतान के सूर्य मंदिर में उसने अनेक देवनर्तकियां देखी थीं। मैसूर की पौराणिक कथाओं में देव-दासियों से संबंधित कई कथाएं प्रचलित हैं। एक कथा के अनुसार आदिशक्ति ने पृथ्वी पर जमदग्नि की पत्नी रेणुका के रूप में जन्म लिया था। इन्हीं के पांचवें पुत्र परशुराम थे। आदिशक्ति रेणुका, जिसे कन्नड़ में 'एलम्मा' कहा जाता है, पराशक्ति के रूप में महाराष्ट्र और आंध्र में पूजी जाने लगी। फलस्वरूप एलम्मा के अनेक मंदिरों का निर्माण हुआ, जिनमें अविवाहित प्रसन्नवदना देवदासियों को नियुक्त किया गया। इस प्रकार आंध्र और महाराष्ट्र में देवदासी-प्रथा का सूत्रपात हुआ।

'सम्यक सम्बुद्ध' बनने के बाद

मध्यकाल में जब दक्षिण में जैन और बौद्धधर्म का तेजी से विस्तार हो रहा था तब इन दोनों धर्मों की कई शाखाओं का

नृत्य-मुद्रा में

आपका बच्चा

गर्भ में आने से लेकर उसके जीवन के पहले पांच वर्षों तक आप उसे जो पौष्टिक आहार देंगी, वही उसे ज़िन्दगी भर अच्छा स्वास्थ्य प्रदान कर सकता है।

संतुलित आहार क्या है?

संतुलित आहार के लिए अच्छे पोषण के ५ मूल तत्वों का उचित मात्रा में होना आवश्यक है। वे तत्व हैं :

प्रोटीन—
शरीर और मस्तिष्क के विकास के लिए। ये दाल, दूध से बनी चीज़ों, डबलरोटी, खिचड़ी, मांस, अंडों तथा मछली में पाये जाते हैं।

कार्बोहाईड्रेट्स—
शरीर में शक्ति बनाने के लिए। ये चावल, गेहूँ, आलू, शक्कर 'जैगरी' तथा केलों में पाये जाते हैं।

चर्बी—
अर्थात शरीर की संचित शक्ति और 'इंधन'। ये घी, मक्खन, असली दूध, मूँगफली, अखरोट, मांस की चरबी और वनस्पति तेलों में पायी जाती है।

विटामिन—
शरीर की अत्यंत महत्वपूर्ण कार्यप्रणालियों को नियंत्रित करते हैं और बिमारियों का मुकाबिला करने के लिए शरीर की प्रतिरोध शक्ति बढ़ाते हैं। ये अनाज, हरी सब्ज़ियों, मूंगफली, अखरोट, काजू, सरसों व तिल के बीज, फलों, मछली, चर्बी और दूध से बनी चीज़ों में पाये जाते हैं।

खनिज तत्व—
शरीर के विकास और वृद्धि में सहायक होते हैं। ये दूध से बनी चीज़ों, मछली, मेवा, किशमिश आदि, हरी सब्ज़ियों, अनाज तथा सरसों व तिल के बीज में पाये जाते हैं।

क्या संतुलित आहार मंहगा होता है?
जी नहीं। इसके लिए तो आप को कुछ सूझ-बूझ और थोड़े से 'आहार नियोजन' की ज़रूरत है। क्योंकि ये पाचों पौष्टिक तत्व आपके दैनिक भोजन में मिल जाते हैं।

समय बरबाद मत कीजिए। अपने बच्चे का भविष्य सुखी बनाने के लिए उचित कदम अभी से उठाईये! संतुलित आहार संबंधी मुफ्त पुस्तिका मंगाने के लिये हमें आज ही लिखिये।

माडर्न बेकरीज़ (इंडिया) लि॰
(भारत सरकार का एक उपक्रम)
लारेन्स रोड, इन्डस्ट्रियल ऐरिया, रिंग रोड, नई दिल्ली-११००३५

mcm/mb/1023

भारत सरकार की ओर से जनता के हित में, पौष्टिक और स्वादिष्ट माडर्न ब्रेड के निर्माता माडर्न बेकरीज़ की ओर से प्रकाशित।

अलग-अलग रूप और विधान बन गया था। एलम्मा के मंदिरों में पंचमकारों की पूजा तंत्रमंत्र के गुह्य विधानों के आधार पर प्रारंभ हुई थी। भैरवी तथा कापालिक क्रियाएं आदि काम और यौन को केंद्र-विंदु मानकर उभरीं। भैरवी-चक्र का जन्म गुह्य नियमों से ही हुआ। बौद्धधर्म में 'सम्यक सम्बुद्ध' बनने के लिए वैपुल्यवादी एकाभिप्रायेण स्त्रीगमन कर सकते थे। वास्तविकता यह थी कि लाखों युवक-युवतियां पीत वसन पहनकर कच्ची उम्र में भिक्षु-

क्रियाएं की जाती थीं। उनमें देवदासियां भी रहती थीं। देवदासियों के भ्रष्ट होने का यह भी एक मूल कारण था।

दक्षिण की सामाजिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं में मंदिर-निर्माण का इतिहास मंदिरों की दीवारों पर खोदकर लिखा जाता था। देवदासी के प्रकारों में रुद्र-गणिका या गोपिका का, जो नियमित वेतन पर मंदिरों में नाचती थी, वर्णन तंजौर के तथा अन्य कुछ मंदिरों में—जैसे मदुरई के मीनाक्षी तथा चिदम्बरम के शिव-मंदिरों में—पाया जाता है।
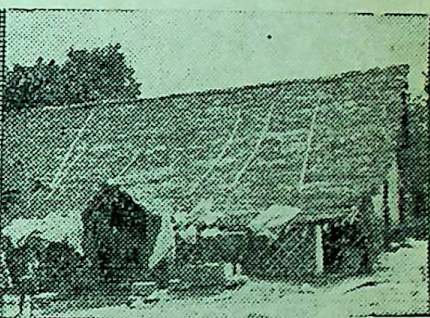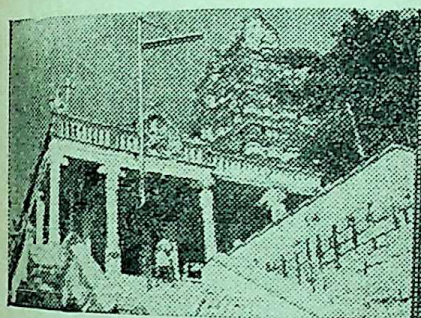
विरालि मलाई की ऊंची पहाड़ी पर स्थित श्री मुरगन का मंदिर

तिरकोलरनम् की मुख्य सड़क पर स्थित देवदासी सुंदरम्माल का घर

भिक्षुणी हो जाते थे, उनमें कामवासना बनी रहती थी, जो ज्ञान और उपदेशों द्वारा नहीं दबती थी। एकाभिप्राय की आड़ में रहस्यपूर्ण शब्दजाल द्वारा 'सम्यक सम्बुद्ध' बनने के लिए वज्रगुरु की सहमति से स्त्री-रमण किया जा सकता था। उसे साधना में सहायक माना जाता था। भैरवीचक्र के शैव-मंदिरों में भी ऐसी ही

तंजौर के बृहदेश्वर मंदिर की उत्तरी और पश्चिमी दीवारों पर देवदासियों से संबंधित एक अभिलेख अंकित है, जो इस प्रकार है—"भगवान श्री राजराजेश्वर (प्रजापालक राजा) के सामने 'तिरूपादियम' का गान करने के लिए मंदिर में ४८ संगीतज्ञ थे। इनमें से एक छोटा ड्रम बजाता था तो दूसरा बड़ा ड्रम

(कोट्टइमाट्टलम्)। नगाड़ा बजानेवाले दो व्यक्ति ४८ संगीतज्ञों के अतिरिक्त थे। इन पचास व्यक्तियों को नगर के खजाने से प्रतिदिन निर्धारित भत्ता (निबंधा) तीन कुरुनी (एक तौल) धान मिलता

विरालिमलाई जाति की एक जीवित देवदासी : ए. पी. सेकल

था, जो 'मरक्काल' या 'ड़ेवालान' द्वारा वितरित किया जाता था। यदि संगीतज्ञों में से कोई मर जाता था तो उसके निकट संबंधी को, अगर वह 'तिरूपादियम्' बजाने में दक्ष होता था, नियुक्त कर भत्ता चालू रखा जाता था, अन्यथा किसी दूसरे व्यक्ति की नियुक्ति की जाती थी। ... पचास संगीतज्ञों के नाम दीवार पर ... अभिलेख में हैं।

छह सौ कोठ...

छह सौ देवदासियों के रहने के ... मंदिर की बाहरी दीवार से सटी हुई ... सौ से अधिक कोठरियां बनी हुई ... जिनमें हमेशा संगीत की स्वरलहरी ... करती थी। मंदिर की दूसरी दीवार ... क्रमवार छह सौ देवदासियों के नाम ... सेवाओं के संक्षिप्त विवरण सहित ... हुए हैं, जैसे—सिकंडी, मत्ताई गांव ... रहनेवाली थी, और जो पहले तेंतई ... की देवदासी थी, ४९ नंबरवाली कोठ... में रहती थी। वीरासूरी, खास तं... की रहनेवाली, पहले तंजामम्म-निक्को... की देवदासी थी। उसे यहां ५१ नंबर ... कोठरी मिली हुई थी। नित्तासुंदरी, ... तंजौर की ही रहनेवाली थी, ३७८ नं... वाली कोठरी में रहती थी। इस देवदा... से संबंधित कई दंतकथाएं आज भी तं... के बुजुर्गों के मुख से सुनने को मिलती हैं। मंदिर के इस अभिलेख को मेरे मित्र ... सिहम् पढ़-पढ़कर सुना रहे थे। ... व्यक्ति आकर न जाने कब से हमारे ... खड़ा हो गया था। नित्तासुंदरी का ना... सुनते ही वह चहक उठा, "नित्ता ... कथा मैंने अपने पिता के मुख से सुनी ... मेरे पिता ने अपने पिता से और मेरे पि... के पिता ने अपने पिता से . . . नि... ... का नाम अरिजयी था। ...

सांवे पार करते ही उसके अंग-अंग से सुंदरता टपकने लगी थी। उसका मामा लालची था। उसने उसे नृत्य और गायन की शिक्षा दिलाकर मंदिर में देवदासी बनवा दिया। राज्य के 'दिविरापत्ति', दंडनायक आदि कई धनी चेट्टियार नित्ता पर मोहित थे। नित्ता के संस्कार धार्मिक थे अतएव वह काम और वासना से उ लिप्त थी। जब नित्ता को राजराजेश्वर के समक्ष पेश किया गया तो वे उसे निर्निमेष देखते रह गये। उसकी धार्मिक भावना का ठेस न पहुंचे, इसलिए उन्होंने तत्काल उसे देवदासियों की कोठरी में भेज दिया। लेकिन वे अपने मन की भावना को दबा न सके और उसे 'क्षेत्र सुंदरी' या 'नित्ता सुंदरी' नाम दे डाला। बाद में यह देवदासी अपने पूर्ण यौवनकाल में पुजारियों की वासना की शिकार बनी।"

तंजौर तथा मीनाक्षी के मंदिरों में मंदिर के चारों तरफ देवदासियों की जैसी कोठरियां बनी हुई थीं, उसी प्रकार की सिकंदरिया में अफ्रोडाइटी-एरटार्टी के मंदिर के चारों तरफ बनी हुई थीं। इस मंदिर का निर्माण तंजौर मंदिर के निर्माण-काल से पहले का है। उन दिनों चोल-राजाओं का व्यापार विदेशों तक फैला हुआ था। संभव है, इस तरह की कोठरियों के निर्माण की प्रेरणा वहीं से मिली हो।

सिकंदरिया का मंदिर और देवदासी

अफ्रोडाइटी एस्टार्टी मंदिर का निर्माण टालेमी ने कराया था। वहां मंदिर की दीवार से घिरे अहाते में देवदासियों का एक पूरा नगर बसा हुआ था। देवदासियों के लिए १४ सौ कोठरियां बनी हुई थीं। 'पवित्र आवासगृहों' का निर्माण योजनाबद्ध तरीके से किया गया था। प्रत्येक आवासगृह के प्रवेशद्वार पर एक घंटा और उसे बजाने के लिए एक हथौड़ा टंगा रहता था। प्रत्येक कोठरी या कमरे में कम-से-कम एक और ज्यादा-से-ज्यादा तीन देवदासियां रहती थीं। हर कमरे के दाहिने किनारेवाली दीवार में एक झरोखा होता था, जिसमें से सज-संवरकर देवदासियां आगंतुक की प्रतीक्षा में झांकती रहती थीं। प्रतिवर्ष मित्र-देशों से तथा कर देनेवाले देशों से उपहार लानेवाले जहाज जब सिकंदरिया आते थे तब कपड़े और शराब के साथ-साथ एक हजार देवदासियां प्रतिवर्ष मंदिर के लिए लाते थे। हर कुंवारी नवागंतुक कन्या अपने साथ अपने देश की किसी देवी या देवता की मूर्ति भी लाती थी, जैसे—लक्ष्मी, अश्वरथ, वीनस, इस्तर आदि। देवदासियों का चुनाव मंदिर का प्रधान पुरोहित करता था। किसी भी देवदासी का, जब तक वह बूढ़ी नहीं हो जाती थी, मंदिर के बाहर कदम रखना अपराध समझा जाता था। संयोग से किसी देवदासी को कोई संतान पैदा होती थी तो उसका लालन-पालन मंदिर की ओर से किया जाता था। संतान अगर लड़की होती थी तो युवा होते ही उसका विवाह

शराब के देवता 'डायोनिसस' से कर दिया जाता था। हर साल देवदासियों की एक सौंदर्य-प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता था। १२ चुनी हुई देवदासियों को मंदिर के अंतिम रहस्यमय विहार में भेज दिया जाता था। रहस्यमय विहार में देवी 'कोटीटो' का मंदिर बना हुआ था, जिसके नाम पर भयानक अनुष्ठान किये जाते थे। महीने में एक बार पूर्णिमा की रात को इस विहार की ३६ देवदासियां सजधज कर मदिरा का पान कर उन्मत्त हो नाचती थीं। इन देवदासियों में से जो अधिक उम्र की होती थी उसे प्राणांतक घूंट पीना पड़ता था। उसे पीकर, तेजी से मृत्यु को अपनी ओर आने का अहसास कर वह ऐसी-ऐसी क्रीड़ाएं करती थी जिसे अन्य नग्न देवदासियां करने में लज्जा का अनुभव करती थीं।

पूरे भारत में देवदासी-प्रथा

देवदासी-प्रथा का प्रचलन सदियों पहले से दक्षिण में ही नहीं, पूरे भारत में था। पुर्तगालियों का उपनिवेश गोआ भी देवदासी-प्रथा से अछूता नहीं था। पहले वहां भी मंदिरों का जाल-सा बिछा था। गोआ के रामनाथी मंदिर में आज भी एक देवदासी है। गोआ के मंगेश मंदिर समेत दक्षिण के कई ऐसे मंदिर हैं जिनमें लड़कियों को नृत्य-शिक्षा दी जाती है। मंगेश मंदिर, पोंडा और पंजिम के बीच है।

तमिलनाडु में तंजौर, कांचीपुरम,

चिदंबरम, मदुरै मीनाक्षी आदि सैकड़ों भव्य मंदिरों में देवदासी-प्रथा ने प्रश्रय पाया। दक्षिण के केरल, आंध्र, मैसूर के मंदिरों में देवदासी-प्रथा ने कर्म और धर्म का विशेष नृत्य किया। दक्षिण में ही नहीं, पूरे देश में और एशिया के कुछ अन्य देशों में भी देवदासी-प्रथा की स्थापना धर्म को विस्तार देने तथा उसकी लोकप्रियता को बढ़ाने के लिए की गयी। विदेशों में तो देवदासियां बहुत पहले से ही भोग-विलास का साधन बनी थीं। भारत की देवदासी-प्रथा पर धार्मिकता का आवरण होने से प्रारंभ में इसमें किसी प्रकार की अनैतिकता को प्रवेश नहीं मिल सका। बाद में पुजारियों, सामंतों और राजाओं ने इस प्रथा में व्यभिचार का बीज बोया और आज 'देवदासी' वेश्या शब्द का पर्याय बन गया है।

अंतिम संस्कार भी निराले

देवदासियों के अंतिम संस्कार की क्रियाएं भी निराली थीं। शव को पहले मंदिर के पवित्र जल से स्नान कराया जाता था। तदुपरांत मंदिर के देवता को पहनाये गये कपड़े में से एक टुकड़ा फाड़कर तथा कुछ फूल और मंदिर के चंदन-पात्र में चंदन भरकर मंदिर के प्रतिनिधि देवदासी के निवास पर ले आते थे।

देवदासी को दुलहन की तरह सजाया जाता था। उसके शरीर पर चंदन का लेप किया जाता था। देवता के कपड़े को उसके शरीर पर डाला जाता था। फिर शव श्मशान ले जाया जाता था। पहले कहीं-कहीं देवदासियों को जमीन में गाड़ने की प्रथा थी, लेकिन बाद में शव को जलाने की प्रथा प्रचलित हुई। श्मशान में कुछ लोग पहले ही चले जाते थे। वहां वे उपलों और छोटी-छोटी लकड़ियों से चिता की चिनाई कुम्हार के आवें की तरह करते थे। उस पर शव को लिटाकर ऊपर से उपले और लकड़ियां चिनकर आग लगा दी जाती थी। चिता धीरे-धीरे दो दिनों तक जलती थी। जैसे कुम्हार के आवें में मिट्टी के बरतन धीरे-धीरे पकते हैं उसी तरह द्रविड़ शैली की इस चिता में मृतक का शरीर पककर राख हो जाता है। अगर एहतियात से राख हटायी जाए तो राख हुए शरीर के ढांचे को देखा जा सकता है। दूसरे दिन श्मशान में एक आदमी जाता है और हाथ से मसलकर शव को राख में परिणत कर देता है। तमिल में इस चिता को विरट्टी कहते हैं।

—१७ अन्नापिले स्ट्रीट, थर्डलेन, मद्रास-१

में तीली छुआ रहे थे, तब ? अपने ही देश के लोग अपने ही भाइयों और बहनों-बेटियों का गला घोंट रहे थे। आखिर दोस्त, इतिहास किसी को नहीं छोड़ता, वह निरंतर अपने को दोहराता रहता है।'

काफी हाउस में वह एक खासे हंगामे की शाम थी!

—अश्वमेध
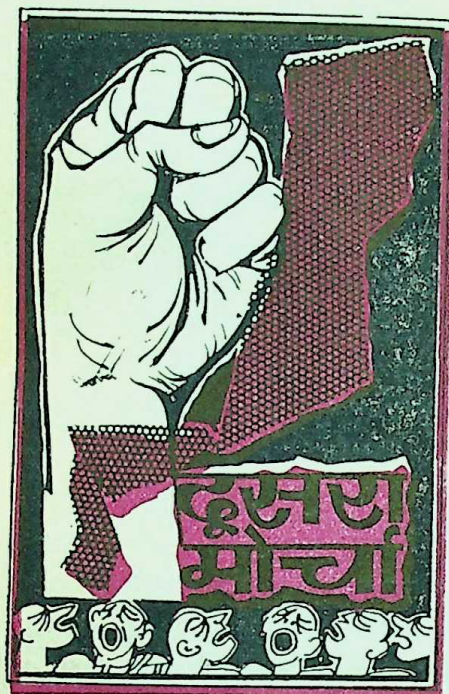
पत्नी-वियोग और जलसा

हिंदी के 'लेखकीय आकाश' में इन दिनों एक गहरी खामोशी छायी है। दिल्ली से लेकर बंबई, इलाहाबाद और बनारस तथा चंडीगढ़ तक कहीं कहीं

गयी हैं। आखिर कॉफी हाउस की बातें हैं—एक युवा-तुर्क लेखक ने बताया कि कुछ दिन पहले 'पत्नी-पीड़ित' लेखक ने अपने घर खासी पार्टी दी थी। वहां उन्होंने अपनी गलती स्वीकार की। कुछ दिन पहले ही बेहद नशे में लोटपोट उनकी 'धर्म-पत्नी' उन्हें सड़क से उठाने की कोशिश कर रही थीं और वे भाषण की मुद्रा में सड़क पर लेटे थे। हिंदी के लेखकों को कतई तमीज नहीं है वरना वे आज के शीर्षस्थ उपन्यासकार माने जाते!

कोई श्रीमती गांधी तक पहुंचा दे

उसी शाम कॉफी हाउस में एक किस्सा जार के प्रधान-मंत्री काउंट विट्टी का सुनने को मिला। एक दिन काउंट ने अपने सेक्रेटरी से कहा, 'ऐसे लेखकों की सूची पेश करो जिन्होंने मेरे विरुद्ध लिखा है।'

थोड़े दिनों के बाद सेक्रेटरी ने सूची तैयार करके दे दी। उसमें कई दर्जन लेखकों के नाम थे। विट्टी ने कहा, 'इनमें से उन लेखकों के नाम चुनो जिन्होंने मेरी सबसे कठोर आलोचना की है।' सेक्रेटरी ने वह सूची भी पेश कर दी और पूछा, सर, इन्हें क्या सजा दी जाएगी?'

विट्टी ने कहा, 'मैं इनमें से सबसे कठोर आलोचक को चुनूंगा और उसे अपने समाचारपत्र का प्रधान-संपादक बनाऊंगा। अनुभव ने मुझे सिखाया है कि हमारा सबसे कठोर आलोचक हमारा सबसे सच्चा हितैषी होता है।'

यह किस्सा सुनकर कई लेखक एक दूसरे की ओर देखने लगे। तभी उनमें से एक नये नाटककार लेखक ने जोर से पेश-कश की, 'आप लोग इसे मजाक मत समझिए, श्रीमती गांधी भी ऐसे ही लेखकों की तलाश में हैं, इसीलिए . . .।' उसके बाद उन्होंने अपने नये नाटक में सत्ता के भ्रष्टाचार का जो पर्दाफाश किया है, उसकी चर्चा करते हुए कहा, 'बस कोई श्रीमती गांधी तक यह बात पहुंचा दे।'

नक्सलवादी और नारी-विलाप

हिंदी के लेखकों में एक नया वर्ग आक्रोश-ग्रसित ऐसे लेखकों का उभरा है, जो लेखन से अधिक दलीय प्रतिबद्धता पर आस्था रखते हैं। दिल्ली के मोहनसिंह प्लेस काफी हाउस में एक शाम बड़ी गरम बहस हो रही थी। बहस का मुद्दा कलकत्ता की एक घटना है। ३ मई को वहां पुलिस ने कुछ नक्सलवादी महिलाओं को गिर-फ्तार किया और पूछताछ के सिलसिले में उन्हें कई तरह से परेशान किया गया। बताया गया कि उन्हें कलकत्ता पुलिस के मुख्यालय लाल बाजार में ले जाया गया। वहां 'अंडर ग्राउंड' सेल में उनसे 'पुलिस-तहकीकात' की गयी और जब उन्होंने अपने नाम, पते और अपने किये कार्यों को स्वीकार नहीं किया तब उन्हें टेबलों पर नग्न सीधे लिटाया गया। फिर जलती सिगरेटें उनकी गरदन, स्तन और पेट पर छुआयी गयीं। इसके बाद भी जब उन लड़कियों ने कुछ भी नहीं बताया तब उनके गुप्तांगों में लोहे की सलाखें डाली गयीं।

पता लगा, कलकत्ता की पुलिस नये, उभरते नक्सलवादी तत्त्वों से निबटने के लिए इसी तरह के कार्य कर रही है। हमारी पूरी हमदर्दी उन वीरांगनाओं के साथ है और हम पुलिस की इस ज्यादती के विरोधी भी हैं, परंतु दलीय लेखक जब इसे 'प्रजातंत्र में स्वतंत्र-अभिव्यक्ति' के नाम पर अपने नाम को ऊपर रखने के लिए एक नारे के रूप पूरे प्रकरण का उपयोग करते हैं तो बात बदल जाती है।

उस दिन हुआ भी यही लेखकों में कहा-सुनी हो गयी और जब बहसें बढ़ती हैं तो रूप बदल जाता है। कई लेखकों ने इस घटना के पीछे मूल-प्रश्न प्रस्तुत किया, 'मित्र, जिन दिनों नक्सलवादी भोले-भाले निहत्थे लोगों की हत्या करते थे, कलकत्ता की सड़कों से लड़कियों को उठाकर ले जाते थे, बाजार करते परि-वारों को लूटते थे और क्रांति के नाम पर माओ की सत्ता स्थापित कर प्रजातंत्र में तीली छुआ रहे थे, तब? अपने ही देश के लोग अपने ही भाइयों और बहनों-बेटियों का गला घोंट रहे थे। आखिर दोस्त, इतिहास किसी को नहीं छोड़ता, वह निरंतर अपने को दोहराता रहता है।'

काफी हाउस में वह एक खासे हंगामे की शाम थी!

—अश्वमेध

● राधाकृष्ण

ईश्वर गुप्त मर गये। सभी लोग रो उठे। मरने से पहले उनका सारा शरीर ऐंठता रहा, वे कातर छटपटाते रहे, फिर थक गये। शरीर निढाल हो गया और सांस ऊपर चलने लगी। दो पल भी नहीं लगे कि एक हिचकी के साथ ईश्वर गुप्त ने अपने शरीर से नाता तोड़ लिया।

वैसे कई दिनों से उनकी हालत खराब चली आ रही थी। दूसरों की बात तो दूर रही, उन्होंने स्वयं भी समझ लिया था कि अब यह शरीर टिकनेवाला नहीं है। फिर भी न जाने क्या था कि वे स्पष्ट रूप से इसे व्यक्त नहीं कर रहे थे। उन्हें लगता था कि जैसे ही मेरे मुंह से मृत्यु की बात निकलेगी, प्राण भी निकल जाएंगे। ... का एक कमजोर सूत्र था—प्रभु की ... और वे उसी के बल पर टिके हुए ... डाक्टरों की दवाइयां और तेज ... डालनेवाली सुइयां भी बेकार चली ... थीं। इसलिए डाक्टरों ने भी हताश हो ... गंगाजल का नुस्खा बता दिया था। ... दी कि महामृत्युंजय का जप कराइए और गीता का पाठ सुनिए। मगर उसका ... कोई असर नहीं हुआ।

ईश्वर गुप्त की लाश पड़ी हुई ... और उनके दोनों बेटे जरूरी कागजों की खोज कर रहे हैं। अलमारियों को खोल ... हैं, तिजोरी देखते हैं, कागजों पर उड़ती हुई निगाह डालते हैं। इस विपत्ति के समय धीरज रखकर ही काम करना है। पिताजी को जाना था सो चले गये। अब तो ... देखना है कि पार्टनरशिप के दस्तावेज कहां रखे हुए हैं, शेयर-सर्टिफिकेट क... हैं, जीवन-बीमा की पालिसी का क्या हुआ। कैसा था पिताजी का स्वभाव! यह जरूर है कि आदमी जरूरी कागजों की हिफाजत करता है, लेकिन ऐसा क्या कि उन कागजों के बारे में किसी को पता नहीं। अगर मरने से पहले बतला ही जाते तो क्या हो जाता? हम लोग उनकी सेवा तो न बंद कर देते!

अनुपम गुप्त और परिमल गुप्त—दोनों भाइयों में इस समय अपार प्रेम और तन्मयता दिखलायी दे रही थी, मगर दोनों सोच रहे थे कि कागज कहीं दूसरे ...

भाई को न मिल जाएं और वह उनका फायदा उठा ले। दोनों के मन में शंका का एक दीप झिलमिला रहा था कि कहीं वे कोई ऐसा वसीयतनामा तो नहीं छोड़ गये हैं जिसमें एक भाई को अधिक और दूसरे भाई को कम दिया गया हो।

अनुपम गुप्त ने कहा, "परिमल, उसका फायदा ये अकेले उठा लेंगे। बोला, "भइया, आप ही जाकर देख आइए। आपकी बात सभी मानते हैं। मैं तो कानपुर से अभी आया हूं।"

और दोनों में से कोई भी नहीं गया। दोनों तन्मयता के साथ इस तरह कागजों की छानबीन कर रहे थे मानो पिता की

जाकर देख तो आओ कि कफन आदि जरूरी चीजें खरीदने के लिए कोई गया है या नहीं। अखबारवालों को भी तुरंत खबर मिल जानी चाहिए। किसी से 'प्रेस ट्रस्ट' और 'यूनाइटेड प्रेस' में फोन करवा दो। स्थानीय दैनिक में भी खबर हो जानी चाहिए।"

मगर परिमल गुप्त ऐसा बुद्धू नहीं है कि चला जाए। मैं उधर गया और इधर इन्हें कोई जरूरी कागज मिल गया तो

मृत्यु से दुखी होने की अपेक्षा कागजों को ढूंढ़ना अधिक जरूरी है।

ईश्वर गुप्त मर चुके थे और उनकी लाश पड़ी हुई थी।

लाश पर चादर डाल दी गयी थी। पास ही कई अगरबत्तियां जल रही थीं और वातावरण में सुगंध व्याप्त थी।

नीलिमा और मोहिनी, उनकी दोनों पतोहुएं, रो रही थीं। दोनों की आंखों से आंसू बह रहे थे। लग रहा था, जैसे दोनों

अपनी वेदना को प्रदर्शित करने का कंप-टीशन कर रही हों।

नीलिमा सोच रही थी कि मरते दम तक तो मैंने सेवा की और अब हिस्सा बटाने के लिए यह कानपुर से चली आयी। मुझे क्या मिला ? ऐसा तो हुआ नहीं कि ससुरजी दुलार से मुझे कुछ अधिक दे देते। हमेशा कहते रहे कि नीलिमा मेरी बड़ी सेवा करती है। मगर वह सारी सेवा अकारथ चली गयी।

मोहिनी शंकालु थी और उसे इस बात का दर्द था कि कहीं नीलिमा दीदी को पिताजी ने चुपके से कुछ दे न दिया हो। खैर, अगर दिया भी हो तो बात छिपी नहीं रह सकती। मैं एक-एक चीज निकलवाकर रहूंगी। कानपुर में थी तो इससे क्या हुआ ? यहां की राई-रत्ती मुझे सारी बातें मालूम हैं। गंगा महरिन को मुझसे पचास रुपये हर माह अलग से मिलते हैं। वह सारी खबर मुझे भेजती रहती थी।

दोनों भाइयों के पास खबर पहुंची कि रायबहादुर श्यामलाल और पद्म-भूषण गजाधर शर्मा आये हुए हैं। वे मिलना चाहते हैं।

तो लोगों का आना भी आरंभ हो गया। अब कागजों की खोजबीन बंद करनी होगी। परिमल गुप्त ने कहा, "भइया, अब लोग आ रहे हैं। लोहे की इन अलमारियों को बंद कीजिए और चलिए।"

अनुपम गुप्त ने सिर उठाकर अपने छोटे भाई की ओर देखा। उस दृष्टि में था कि अगर तुम जाकर लोगों से मिल लो तो क्या बुरा है ! जाकर मिल लो। मिलना और बातें करना तो औपचारिक बात है।

परिमल गुप्त ने भाई की इस दृष्टि को पढ़ा। मगर वह ऐसी कच्ची गोटी नहीं खेलता। बोला, "जल्दी कीजिए भइया, वैसे मैं भी जाकर लोगों से मिल लेता, मगर बाहर-बाहर रहने के कारण लोगों से 'टच' छूट गया है।"

तब दोनों भाइयों ने अलमारियां बंद कीं। कमरे में भी ताला डाल दिया। अपना चेहरा मासूम और उदास बना लिया और हताश की तरह लोगों के पास पहुंचे।

"भाई, क्या करोगे, दुखी मत हो ! विधाता के विधान में करना क्या है ? कौन जानता था कि वे अभी ही चले जाएंगे। उसी दिन तो उनसे मुलाकात हुई थी। बड़े अच्छे आदमी थे बिचारे . . . !" ऊपर-ऊपर तो वे लोग सहानुभूति दिखला रहे थे और भीतर-भीतर कह रहे थे कि अच्छा हुआ जो बुड्ढा मर गया। एक खुर्राट था। पैसे-पैसे को दांत से पकड़ता था। अब क्या है, अब तो सारी जमा-पूंजी यहीं पड़ी है।

पद्मश्री राजवल्लभ शर्मा उपनिषदों का उद्धरण दे रहे थे, आत्मा की अमरता और शरीर की नश्वरता के बारे में बतला
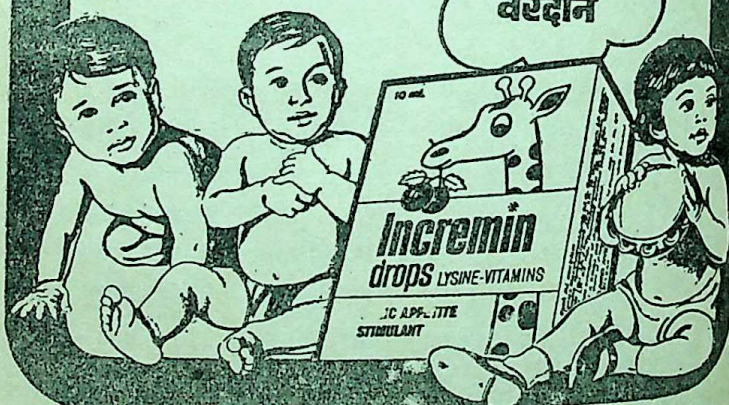
रहे थे और मन ही मन कह रहे थे एक ही पिशाच था वह ईश्वर गुप्त! एक दिन के लिए भी हत्थे नहीं चढ़ा। कभी भी यज्ञ या हवन के लिए खर्च नहीं किया। अब मर गया तो क्या ले गया? पर ऊपरी तौर पर वे कह रहे थे कि आत्मा ईश्वर का अंश है। यह मरती नहीं, इसे जरा-व्याधि नहीं सताती, वह सदा है और सदा रहेगी। इस आत्मा के लिए सोच क्या!

और ईश्वर गुप्त की आत्मा अपने खेतों की हरियाली में मंडरा रही थी। अब उसे दुःख नहीं था, शोक नहीं था, रोग का कष्ट नहीं था, वह हलका और पारदर्शी था, आकारविहीन था और उड़ रहा था। उसने खेतों की हरियाली देखी और प्रसन्न हुआ। उसने कहना चाहा कि ये सारे खेत हमारे हैं। मगर वह ऐसा नहीं कह सका। हमारा क्या? हमारा कैसे? यह जमीन तो समस्त पृथ्वी का एक अंश है। हमने इस पर खेती भी नहीं की है। हमारे नौकरों और बटाईदारों ने इस पर खेती की है और वे भी इस खेत को अपना नहीं कहते थे। इन्हें मेरा फार्म बतलाया जाता था। मगर मेरा कैसे है? अगर मेरा होता तो मेरे साथ रहता। यह पृथ्वी का अंश है, पृथ्वी के साथ है, मेरा नहीं है।

वह उड़ रहा था और उसे बहुत ह ी अच्छा मालूम होता था। वह अदृश्य था और स्वयं अपने आपको नहीं देख सकता था। वह जानता नहीं था कि उसका चेहरा कैसा है। वह अपने आपको शक्तिशाली अनुभव कर रहा था और उसे लगता था की वह अपनी जवानी में भी इतना हलका महसूस नहीं करता था और उस समय उसे ऐसा भी नहीं लगता था कि मैं जहां चाहूं वहां जा सकता हूं और जो चाहूं वह कर सकता हूं। उसने अपनी लाश को मरघट की ओर जाते हुए देखा और उसे हंसने की इच्छा हुई। इसी रोग से भरे नश्वर के भीतर वह इतने दिनों तक आबद्ध था? यह मेरा शरीर कैसे था? उसे लगा कि वह हंसता रहे, हंसता रहे और कहे कि लोग नाशवान शरीर को भी अपना कैसे कहते हैं; जैसे यह कभी नष्ट नहीं होगा!

वह पानी के ऊपर भी चल सकता था और दीवारों को भी पार कर जाता था। कोई शक्ति थी जो उसे लहरा रही थी। वह नहीं जानता था कि वह कौन-सी शक्ति है, मगर वही शक्ति है। उसकी इच्छा हुई कि वह अपने वन को देखे जिसे वह छोड़ आया है। ईश्वर गुप्त ने एकाएक अपने को अपने खजाने में खड़ा पाया। यद्यपि सारी तिजोरियां बंद थी तथापि उसे सब कुछ दिखलायी दे रहा था। उसने हीरों के हार की ओर देखा। यह हीरा है, उसने कहना चाहा, लेकिन कह नहीं सका, क्योंकि वे साफ-साफ पत्थर थे और पत्थर की तरह दिखलायी दे रहे थे। यह सच है कि हीरे पत्थर हैं, मगर ये बहुमूल्य कैसे हैं? इन्हें पाकर कोई धन-

बात और महत्त्वपूर्ण कैसे हो जाता है ? उसे हंसी आने लगी कि जो मनुष्य पत्थरों को जमा करता है वह धनवान शक्तिवान समझ लिया जाता है। मैं कैसा मूर्ख था ? लोग कैसे मूर्ख हैं ? वह हंसते-हंसते लोट जाना चाहता था, मगर उसे हंसना भी व्यर्थ मालूम हो रहा था।

उसने अपना सोना देखा। स्पष्ट था कि वे धातु के टुकड़े थे और उन्हें सुनारों ने तरह-तरह का रूप दिया था। यह सोना क्यों महत्त्वपूर्ण है ? उसने सोचा और इसका कोई उत्तर नहीं प्राप्त कर सका। उसने रुपयों की ओर देखा। वे धातु के टुकड़े थे। उसने नोट की गड्डियों की ओर नजर डाली। वे कागज थे। कागज के सिवा वे कुछ भी नहीं थे। उसने बैंक की पासबुक देखी। क्या है यह ? इसका महत्त्व इतना क्यों है ? मगर वह सोच नहीं सका कि इसका कोई महत्त्व होना भी चाहिए।

सहसा उसने कमरे का दरवाजा खुलते हुए देखा और पाया कि उसके दोनों बेटे वहीं सामने खड़े थे। परिमल कह रहा था कि बीमा की पालिसी का भी पता नहीं। अनुपम ने कहा, 'पिताजी किसी एक भी चीज के बारे में बतलाकर गये होते !"

ईश्वर गुप्त ने कहना चाहा कि मैं हर चीज के बारे में बतलाने के लिए तैयार हूं बेटे ! गोदरेज की आलमारी के तीसरे खाने में एक बटन है। उसे दबाकर देख लो। सारे कागज-पत्र उसी में सुरक्षित हैं। बीमा की पालिसी है, शेयर के कागज हैं, पार्टनरशिप के दस्तावेज हैं, जमीन-जायदाद के कागज हैं। वहीं तो सब कुछ है।

उसने बोलना चाहा, लेकिन वह बोला नहीं। उसे सब कुछ व्यर्थ मालूम

हो रहा था।

ईश्वर गुप्त की इच्छा हंसने की हो रही थी !

जल ...

वहीं इसका ११०० ग्राम। खुले में छोड़ दिये जाने पर यह धीरे-धीरे वातावरण से पानी सोखता रहता है, जिसके फल-स्वरूप इसका अंश घटता चला जाता है।

वैज्ञानिक विश्लेषण करने पर ही भारी जल और सामान्य जल में ये भौतिक अंतर स्पष्ट हुए। यद्यपि जल की दोनों

जल के भीतर एक और जल

• डॉ. देवकीनंदन

कवि रहीम ने कहा है—'बिन पानी सब सून'। यही बात वैज्ञानिक भी कहते रहे हैं। सीधे-सरल से दिखायी देनेवाले इस द्रव ने सागर की लहरों, कल-कल करते झरनों और सावन की घटाओं के माध्यम से जहां कवि-हृदय को सदा से उद्वेलित किया है, वहीं आज के वैज्ञानिक को भारी असमंजस से भर दिया है। वैज्ञानिक रदरफोर्ड का कहना है, "हम दैनिक जीवन में पानी का इतने बड़े पैमा[ने] पर उपयोग न कर रहे होते तो शायद इसे अत्यंत आश्चर्य के साथ देखते।... हाइड्रोजन और आक्सीजन तत्वों से निर्मित इस अति-विशिष्ट प्राकृतिक यौगिक तथा अद्वितीय भौतिक और रासायनिक आचरणवाले द्रव ने मानो सारी धरती को अपनी भुजाओं में समेट रखा है।...जल की ऊष्मा-धारण की असाधारण क्षमता ने

सायरस थियेटर का विहंगम दृश्य जहां मंदक के रूप में भारी जल का प्रयोग हो रहा है।

कारण महासागर सौर-ऊर्जा के विशाल भंडार बने और इनमें जीवन-कोष पनपे। जल से जीवन की उत्पत्ति नहीं हुई, परंतु जीवन-तत्त्वों का संग्रहण इसी के माध्यम से हुआ।"

सन १९३१ में इस आश्चर्य के भीतर से एक और आश्चर्य ने जन्म लिया। वैज्ञानिक यूरे ने इस सामान्य जल में उपस्थित 'भारी जल' को ढूंढ़ निकाला। तब किसे पता था कि साढ़े छह हजार किलोग्राम पानी में एक किलोग्राम के अनुपात में उपस्थित यह भारी जल एक दशाब्दी बाद सहसा इतनी महत्ता प्राप्त कर लेगा। सन १९३९ में संयोग से ही तो जरमन प्रोफेसर आटो हान द्वारा यूरेनियम का परमाणु विखंडित हो गया जिसने नोबल पुरस्कार दिलाकर प्रोफेसर को प्रसिद्धि के शिखर तक पहुंचा दिया। तब से प्रारंभ हुई रिऐक्टर तकनीक में भारी जल ने 'मंदक' और 'शीतक' के रूप में अपना काम सफलता के साथ किया है।

आश्चर्य क्या?

आखिर भारी जल-रूपी यह आश्चर्य है क्या? इसकी उत्पत्ति किस कारण से हुई? इन प्रश्नों के उत्तर बहुत रोचक हैं। सामान्य जल १०० डिग्री सेंटीग्रेड पर उबलता है और शून्य सेंटीग्रेड पर बर्फ बन जाता है। सेंटीग्रेड थर्मामीटर भी पानी के बर्फ और भाप में बदलने के इन्हीं तापक्रमों पर आधारित हैं। पर भारी जल को साधारण जल से अलग करने पर पता चला कि यह ३.८ डिग्री सेंटीग्रेड पर ही बर्फ बन जाता है और १०१.४ डिग्री सेंटीग्रेड पर उबलता है। वैसे यह देखने में जल से अलग नहीं है और न स्वाद में ही अलग है, फिर भी इसका घनत्व
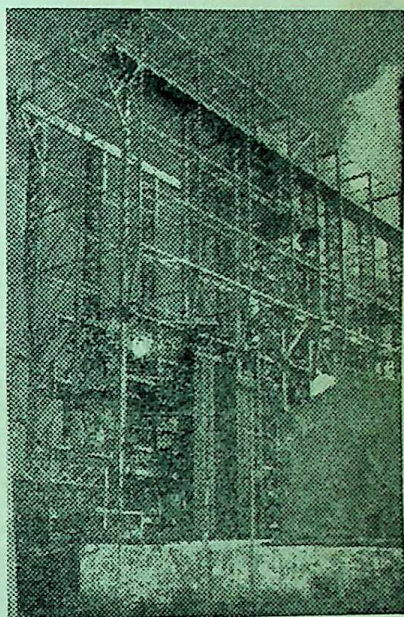
बड़ौदा का भारी जल-संयंत्र

अधिक होता है। जहां एक लिटर सामान्य जल का वजन एक किलोग्राम होता है, वहीं इसका ११०० ग्राम। खुले में छोड़ दिये जाने पर यह धीरे-धीरे वातावरण से पानी सोखता रहता है, जिसके फल-स्वरूप इसका अंश घटता चला जाता है।

वैज्ञानिक विश्लेषण करने पर ही भारी जल और सामान्य जल में ये भौतिक अंतर स्पष्ट हुए। यद्यपि जल की दोनों

किस्मों के अणु, हाइड्रोजन के दो परमाणुओं और आक्सीजन के एक परमाणु से ही मिलकर बने हैं, किंतु भारी जल के अणुओं का हाइड्रोजन सामान्य जल के हाइड्रोजन से अधिक भारी होता है। कारण यह है कि भारी हाइड्रोजन के न्यूक्लियस में सामान्य हाइड्रोजन की तरह केवल एक प्रोटॉन ही नहीं, बल्कि एक अतिरिक्त न्यूट्रॉन भी होता है। इस प्रकार यह भारी हाइड्रोजन, जिसे ड्यूटेरियम कहा गया, भारी जल की रचना करता है और यह उन सभी पदार्थों में मौजूद है जो हाइड्रोजन के यौगिक हैं, अर्थात जो हाइड्रोजन के परमाणुओं से मिलकर बने हैं। इनमें मीथेन, जल, अमोनिया तथा स्वयं हाइड्रोजन गैस विशेष उल्लेखनीय हैं क्योंकि रासायनिक प्रक्रियाओं के माध्यम से भारी जल के उत्पादन हेतु ये पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। भारी जल के उत्पादन में हाइड्रोजन के अन्य यौगिकों, जैसे फास्फीन, यूरेनियम हाइड्राइड, मेथिल एसिटिलीन आदि का भी उपयोग हो सकता है, पर संप्रति इन पर विस्तृत अनुसंधान की आवश्यकता है।

आशा है कि निकट भविष्य में किसी ऐसी रासायनिक प्रक्रिया की खोज हो जाएगी जिससे भारी जल का उत्पादन काफी सस्ता हो जाएगा। रिऐक्टर में पर्याप्त भारी जल की आवश्यकता के कारण रिऐक्टर की कीमत निर्धारित करने में इसका बड़ा हाथ है। भारत में भारी जल की कीमत ३०० रुपये प्रति किलोग्राम है। कोटा (राजस्थान) स्थित रिऐक्टर की २०० मेगावाट विद्युत की पहली यूनिट में लगभग १८० मीट्रिक टन भारी जल का उपयोग हो रहा है जिसका मूल्य लगभग साढ़े पांच करोड़ रुपये है। भारी जल उत्पादन के बड़े प्लांट अमरीका, कनाडा, फ्रांस, भारत और नार्वे में हैं। कुछ अन्य देशों में भी छोटे-मोटे प्लांट काम कर रहे हैं। भारतीय प्लांट नांगल, कोटा, बड़ौदा और तूतीकोरन में स्थापित किये गये हैं।

भारी जल का उत्पादन क्यों?

जैसा ऊपर बताया जा चुका है, किन्हीं विशिष्ट प्रकार के रिऐक्टरों में मंदक के रूप में भारी जल का उपयोग होता है। रिऐक्टर में छड़ों के रूप में प्रयुक्त यूरेनियम–२३५ पर न्यूट्रॉनों के प्रहार द्वारा विखंडन प्रेरित किया जाता है। प्राकृतिक यूरेनियम में मुख्यत: दो प्रकार के परमाणु होते हैं—यूरेनियम-२३५ तथा यूरेनियम-२३८ और यह अंतर परमाणु में न्युट्रॉनों की संख्या के कारण है, उसी प्रकार जैसे जल के हाइड्रोजन और ड्यूटेरियम में देखा गया है। परंतु इनमें यूरेनियम–२३५ ही टूटता है, जिसके फलस्वरूप 'परमाणु ऊर्जा' उन्मुक्त होती है। साथ ही २–३ न्यूट्रॉन भी निकलते हैं जो आगे और यूरेनियम को विखंडित करते हैं। इस प्रकार यह विखंडन-प्रक्रिया अधिकाधिक न्यूट्रॉनों

की श्रृंखला के साथ विकसित होती है। श्रृंखला-प्रक्रिया को अनवरत बनाये रखने के लिए तीव्र गति वाले न्यूट्रॉनों की गति को कम करके एक विशेष स्तर तक लाना होता है। इस कार्य के लिए मंदक (माडरेटर) का प्रयोग किया जाता है। मंदक की एक विशिष्टता यह भी है कि वह न्यूट्रॉनों की गति कम करने के अतिरिक्त किसी अन्य क्रिया द्वारा न्यूट्रॉनों का अवशोषण नहीं करता। यहीं भारी जल बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। न्यूट्रॉनों का अवशोषण न होने के कारण रिऐक्टर को ठंडा करने का काम भी भारी जल द्वारा सफलतापूर्वक होता है।

भारत में जहां प्राकृतिक यूरेनियम तो पर्याप्त है, परंतु केवल ०.७ प्रतिशत अंश में उपस्थित विखंडनीय यूरेनियम–२३५ को अलग करने की तकनीक का पर्याप्त विकास नहीं हुआ है, भारी जल विशेष महत्त्व ग्रहण कर लेता है, क्योंकि प्राकृतिक यूरेनियम ईंधनवाले रिऐक्टरों में भारी जल मंदक के रूप में आवश्यक हो जाता है। सामान्य जल अथवा दूसरे मंदक न्यूट्रॉनों को आवश्यकता से अधिक अवशोषित कर लेते हैं, जिससे विखंडन क्षमतापूर्वक नहीं हो पाता। बंबई स्थित भाभा परमाणु केंद्र ट्रांबे के अनुसंधान रिऐक्टर 'साइरस' और 'जर्लीना' भी भारी जल का उपयोग कर रहे हैं। उन अनुसंधान रिऐक्टरों के लिए तो भारी जल और भी उपयोगी हो जाता है जिनमें अधिक न्यूट्रॉन घनत्व की आवश्यकता होती है।

भारी जल में उपस्थित ड्यूटेरियम का एक अन्य महत्त्वपूर्ण उपयोग है—संगलन (फ्यूजन) ऊर्जा का उत्पादन। बहुत ऊंचे ताप पर भारी हाइड्रोजन और लिथियम–६ के परमाणुओं को परस्पर संगलित करने पर अत्यधिक ऊर्जा मिलती है। इस दिशा में विस्तृत अनुसंधान किये जा रहे हैं और आशा है कि इस शताब्दी के अंत तक संगलन रिऐक्टर तैयार हो जाएगा। इस प्रकार वर्तमान और भविष्य में सृष्टि की ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति में भारी जल का महत्त्वपूर्ण योगदान है। संसार भर में इस सरल द्रव पर व्यापक अनुसंधान हो रहा है और कोई आश्चर्य नहीं कि निकट भविष्य में भारी जल अपने कुछ नये करतब दिखाये।

—हिंदी-विज्ञान साहित्य परिषद,
सेंट्रल काम्प्लेक्स, सूचना प्रभाग,
भा. प. अ. केंद्र, बंबई-८५

ओलंपिक हॉकी का टाइटिल जीता है?

१७. **रामनाथन** कृष्णन कितनी बार विंबल्डन में पुरुषों की एकल प्रतियोगिता के सेमीफाइनल में पहुंच चुके हैं?

१८. **ऐसे** छह देशों के नाम बताइए जो संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य नहीं हैं?

१९. **निम्नलिखित** में से कौन-सी लहरें आंखों के लिए हानिकर हैं—

(क) इंफ्रा-रेड, (ख) अल्ट्रा-सॉनिक (ग) रेडियो (घ) अल्ट्रा-वॉयलेट।

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और नीचे दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सभी प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प।

१. **कौन** से देश के सिक्कों पर यह लिखा होता है, 'हम ईश्वर में विश्वास रखते हैं' (इन गॉड वी ट्रस्ट)?

२. **मैंने** अपने मित्र को एक देश के छह फ्रांक दिये। उनकी कीमत के बदले में उसने मुझे दूसरे देशों के बारह फ्रांक दिये। मेरे फ्रांक किस देश के थे तथा मेरे मित्र ने मुझे किस-किस देश के कितने-कितने फ्रांक दिये, जबकि एक बेल्जियन फ्रांक—२१ पैसे; १ फ्रेंच फ्रांक—१ रु. ६५ पैसे; १ स्विस फ्रांक—२ रु. ६७ पैसे।

३. **कैलेंडर** छापनेवाली एक कंपनी ने किसी एक वर्ष के इतने अधिक कैलेंडर छाप डाले कि सारे नहीं बिके। कागज की कमी तथा तेजी को ध्यान में रखकर उसने कैलेंडर के उचित तथा कम-से-कम हिस्सों को रंगकर १९७५ के लिए फिर से प्रिंट कर दिया। कैलेंडर के कौन-से अंक या अक्षर फिर से छापे गये?

४. **मैंने** अपने नौकर को सभी आवश्यक पर कम-से-कम मुद्रा-नोट देकर तरकारीवाले का हिसाब करने के लिए भेजा। हिसाब साठ रुपये के अंदर ही रहा

बुद्धि-विलास

है तथा पैसे छोड़कर रुपयों में ही लगाया जाता है। नौकर कोई भी नोट भुनाये बिना तरकारीवाले का हिसाब आसानी से कर सकता है। क्या आप बता सकते हैं कि मैंने नौकर को कौन-कौन से और कितने नोट दिये थे?

५. **भारत** का पहला राकेट-अड्डा केरल के थुम्बा नामक स्थान में है। बताइए, दूसरा राकेट-अड्डा किस प्रदेश के किस स्थान में स्थापित किया जा रहा है?

६. **बाबू** श्यामनंदन की अवस्था इस समय अपने पुत्र रामनंदन से छह गुना अधिक है, पर चार वर्ष बाद वह चार गुना अधिक ही रहेगी। बताइए, बाबू श्यामनंदन की इस समय क्या अवस्था है—(अ) २४ वर्ष (ब) ३० वर्ष (स) ३६ वर्ष?

७. **संसार** का सबसे बड़ा स्टेडियम कहां है? इसमें कितने दर्शक एकसाथ बैठ सकते हैं?

८. **अरब**-इसरायली विसैन्यीकरण समझौते (हाल के) में इसरायल किस बात पर सहमत हुआ है?

९. **जून** के माह में २८ तारीख को भारत ने किस देश से ऐसा समझौता किया है जिसे कुछ भारतीयों ने चुनौती दी है?

१०. **भूटान** की राजधानी क्या है? उसके नये शासक का नाम भी बताइए।

११. **यदि** अविनाश गणेश की अपेक्षा कम तेज दौड़ता है और गणेश उतना ही तेज दौड़ता है, पर रमेश की अपेक्षा कम तेज; तो बताइए रमेश अविनाश की अपेक्षा कम तेज दौड़ता है या अधिक तेज?

१२. **साहित्य** अकादमी ने १९७३ के लिए हिंदी की किस पुस्तक को पुरस्कृत किया है? लेखक का नाम भी बताएं।

१३. **'नेहरू-पुरस्कार'** १९७३ वर्ष के लिए किसे दिया गया है?

१४. **हमारे** संविधान में किया गया बहुचर्चित तेंतीसवां संशोधन क्या है?

१५. **एक** एकड़ में कितने वर्गफुट होते हैं? गैलन में कितने लिटर होते हैं?

१६. **कितने** गैर-एशियायी देशों ने ओलंपिक हॉकी का टाइटिल जीता है?

१७. **रामनाथन** कृष्णन कितनी बार विंबल्डन में पुरुषों की एकल प्रतियोगिता के सेमीफाइनल में पहुंच चुके हैं?

१८. **ऐसे** छह देशों के नाम बताइए जो संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य नहीं हैं?

१९. **निम्नलिखित** में से कौन-सी लहरें आंखों के लिए हानिकर हैं—

(क) इंफ्रा-रेड, (ख) अल्ट्रा-सॉनिक (ग) रेडियो (घ) अल्ट्रा-वॉयलेट।

मैं

बहुत दिन हुए
एक हुआ था इकारस (यूनानी चरित्र)
किंतु मोमलगा पंख मैं
आज भी उड़ने की
कोशिश कर रहा हूं (अकारथ ?)
लाखों प्रकाश-वर्षों गहरे
अंधियारे समुद्र में
जिजीविषा की मोटरबोट ले
किनारा खोज रहा था
डेकोरेशन लैंपों से झिलमिलाते तारों को
आकाशदीप मानूं या न मानूं
इस दुविधा में
मोटरबोट दौड़ में
भाग ले बैठा हूं मैं

दौड़ की गति में
इकारस के
उड़ने-सा आनंद
खत्म होने पर दौड़ के
पंख कटा
फिर कंद में
अपने को
पाता हूं मैं !!

—विश्वमोहन तिवारी

—३३१ धौलाकुआं,
नयी दिल्ली-११००१०

ओ निर्वसना

तेरे सतरंगे केशों में
रात गूंथने लगी अंधेरा
ओ निर्वसना सांझ शिशिर की
पीड़ा के विक्लांत क्षणों में
रोगी अमलतास की चुप्पी
सह लेती है धूप विदेशी
कागज की अनगिनत किश्तियां
शब्दों के मस्तूल बांधकर
आंखों के पानी में भटकीं
देखा किये अजाने-से हम
उखड़ा संदर्भों का डेरा
ओ निर्वसना . . .

लहरों के रूमाल हिलाकर
विदा कर रहा बोझिल स्वर से
ये नीला सागर उद्वेलित
भयाक्रांत हो गयीं दिशाएं
मुंह लटकाये सोच रहा है
एकाकी आकाश उपेक्षित
अलगावों के उस मौसम में
स्वीकारो अभिनंदन मेरा
ओ निर्वसना . . .

—कुमार शिव

... कोटा-६ (राजस्थान)

छायाः मुरलीधर जालान

क्यों और क्यों नहीं?

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, 'रेणु', महादेवी, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', इलाचन्द्र जोशी, राजेन्द्र यादव, लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी, निर्मल वर्मा एवं कृष्णा सोबती पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं भवानीप्रसाद मिश्र।

चंद्रप्रकाश रुद्र, शिकोहाबाद : (१) क्या आप स्वयं को 'प्रयोगवादी कविता' या 'नयी कविता' से संबद्ध पाते हैं ? क्या इस कविता की उच्छृंखलता, अनुशासनहीनता एवं बनावटीपन ने हिंदी-साहित्य के विकास में एक लज्जास्पद गत्यवरोध या ह्रास नहीं जोड़ा ?

(२) मुझे याद आता है कि आपने तुलसीदास बनने की मनोकामना प्रकट की थी। क्या आप स्वयं में ही नहीं, अपने समकालीन किसी भी कवि में अनुभूति की वह सांद्रता देख पाते हैं, जो कवि को तुलसीदास-जैसा महान बनाती है ?

मैं और खुशबू के शिलालेख

भवानीप्रसाद मिश्र

(१) लोग मुझे इन दोनों ही प्रकार की कविता से जुड़ा हुआ मानते हैं और मैं इनकार यों नहीं करता कि मेरी कविता में प्रारंभ से ही ऐसा कुछ आता चला गया जो तब तक की कविता में नहीं था। भाव, भाषा और विचार तीनों की दृष्टि से मैं, जिसे छायावाद कहते हैं, लोगों को उससे अलग लगा और द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मक शैली के कवियों से भी। मेरे लिखने में छंद जो था वह बोलचाल का स्वाभाविक और सरल-सा छंद था। उसमें छंद भरपूर था और फिर भी छंद का छल नहीं था। यही बाद में 'नयी कविता' का, रूप की हद तक, स्वभाव बनने लगा। ठीक उतरा नहीं, यह अलग बात है, और उच्छृंखलता, अनुशासनहीनता, बनावटीपन अगर एक सिरे से गलत चीजें हैं तो उन्हें हम दूसरे सिरे से मुक्ति-भाव व्यक्तिमत्ता और सोचे-समझे शिल्प से भी जोड़ सकते हैं। अनेक नये कवियों में ये गुण हैं। कविता में नया-पुराना कोई भेद है नहीं। सब समय ये गुण-अवगुण देखे जा सकते

हैं। इसके सिवा 'सायर सिंघ सपूत' लीक छोड़कर चलते हैं, यह तो प्रसिद्ध ही है। यह अनुशासनहीनता श्लाघ्य है।

(२) तुलसीदास बनने की मेरी मनोकामना का अर्थ इतना तो है कि मैं पंडित और निरक्षर दोनों को आनंद दूं। एक हद तक मेरा काव्य, पाठ्य से भी अधिक श्रव्य होने के कारण इस संभावना को अपने में धारण तो किए है। अनुभूति की सांद्रता तो सबमें होती है। कुछ लोग यत्नपूर्वक उसे रोज-रोज अधिक ठीक व्यक्त करने में सफल हो जाते हैं और कुछ उसे छुपाना चाहते हैं। यह कवि भी करता है, राजनीतिज्ञ भी और साधारण नागरिक भी। अनुभूति की सांद्रता से भी अधिक आवश्यक है अनुभूति की व्यापकता, जो आदमी को जड़-चेतन सबसे एकता महसूस करने की शक्ति दे। तुलसीदास बनने की महत्त्वाकांक्षा मैंने एक प्रवाह में प्रकट की थी। बन नहीं सकता। तुलसीदास बनूं न बनूं, अपनी संभावनाएं तो पूरी करूं।

शिवनारायण शिवहरे, सोहागपुर : (१) आपकी रुचि क्या-क्या है? साहित्य सृजन क्या एकांत में होता है?

(२) आपके जीवन की कोई अविस्मरणीय घटना हो तो बताइए। कर्म और भाग्य में आप किसे प्रमुखता देते हैं?

(१) रुचियां अनंत हैं, ब्राह्ममुहूर्त में उठकर कविता लिखने से दिनचर्या ८-९ बजे

तक सोते रहना भी मुझे ठीक ही नहीं लगता, आनंद देता है। कभी एकांत के लिए मरता हूं, कभी संग-साथ के लिए। एकांत मिले और चाहे जितना मिले, ऊबता नहीं हूं। चाहे जितना संग-साथ एकांत की इच्छा जगा देता है, शायद इसलिए कि उस संग-साथ को एकांत में घोलकर और संपन्न बनाऊं। लिखना अकेले में भी कर लेता हूं और दस के बीच में भी। वे मुझसे कुछ कहें तो उसका जवाब देकर फिर लिखना प्रारंभ रख पाता हूं।

(२) जीवन की अविस्मरणीय घटना मेरी सबसे छोटी संतान की मृत्यु है। अविस्मरणीय वह इसलिए हो गयी कि डाक्टर ने आश्वस्त रहने को कहा, और मैं आश्वस्त बना रहा, जबकि और सावधान रहता तो वह न जाती। यह मेरे मन का ऐसा दर्द और जीवन की ऐसी त्रुटि है जिसको सोचना-कहना मैं ही नहीं मेरा सारा परिवार बचाता है। उसके जाने ने मेरे जीवन के छंद को जैसा तोड़ा है, मैं जानता हूं। और इसी घटना के कारण मैं कभी भाग्य और कभी कर्म की बात सोचने लगता हूं। नहीं तो कर्म को ही मैं प्रधान मानता हूं—पहले असंदिग्ध था। अब उतना असंदिग्ध नहीं हूं।

रामनरेश सिंह 'पयोद', धनबाद :
आज की इस टूटती परंपरा के मध्य गांधीवादी सिद्धांतों को पुनर्स्थापित करने का अचूक उपाय क्या है ?

परंपराओं को तोड़ना ही अचूक उपाय है। सड़ी-गली परंपराएं अपने आप भी टूट रही हैं, यहां तक तो ठीक है ही। वैसे भी गांधी के बराबर मूर्ति-भंजक कहां मिलेगा ? अस्पृश्यता सांप्रदायिकता, स्त्री की अवगणना, गरीब-अमीर का भेद, रंग के भेद, राष्ट्र के भेद—सब पर उन्होंने चोट की। आज भी ठीक देखें तो जवान इन्हीं पर चोट कर रहा है। गांधीवाद कहें, गांधी-विचार कहें, उसकी मशाल संसार-भर के तरुण ही जाने-अनजाने थामे हैं। कुछ तफसीलें हमें उनकी विरोधी लग सकती हैं—मगर सजमुआ आज के विचार और कर्म का नैतिक है। संसार के अर्थशास्त्री उदाहरण के लिए शूमाखर या इवान इलिच विकेंद्रीकृत अर्थ-व्यवस्था के बारे में कितने मुखर हैं और टायनबी-जैसे इतिहासकार समाज-व्यवस्था के बारे में गांधी-विचार को लगभग अंतिम कह रहे हैं। हमें अपने आसपास जो टूटता और चरमराता दिख रहा है, वह कोई शाश्वत तत्त्व है भी नहीं। और ध्यान रखना चाहिए कि जब जोर की आंधी आती है तो उसमें धूल-कचरा, कूड़ा-करकट ही नहीं, मंदिरों के कलश भी टूटकर गिरते हैं। इसमें चिंतनीय कुछ नहीं है।

वासुदेव मिश्र महोप, सुलतानपुर :
(१) 'गीत फरोश' की कतिपय पंक्तियों का अध्ययन करते समय ऐसा लगा कि आप स्वयं अपने गीतों में कारुणिक तथ्यों को

समेटकर आगे बढ़ने का प्रयास कर रहे हैं। क्या यह सही है ?

(२) आज का साहित्यकार समाज का सही मार्ग-दर्शन करने में अपने को असमर्थ पा रहा है। इसका प्रमुख कारण व्यक्तिगत स्वार्थ है, क्या इसे आप स्वीकार करते हैं ?

(१) करुणा कहिए, दुख कहिए हमारा मूलधन है। इसी पर हमारा उठना-गिरना आधारित है। यह आदमी की ही खूबी है कि वह वनस्पति या अन्य जीव-जंतुओं की तरह अपनेपन को अनायास प्रकृतिदत्त कारणों से ही नहीं पा सकता। उसे आदमीयत तक पहुंचने के लिए कितनी बाधाओं से लड़ना पड़ता है। औद्योगिक-समाज में सारी बाधाओं ने सिमटकर बाजार का रूप ले लिया है। इसलिए आदमी बनने के लिए हमें अब जितना अधिक बाजार से लड़ना है, उतना अधिक शायद किसी से नहीं। आज धर्म, ईमान, ज्ञान, चरित्र, वीरता सब खरीदे और बेचे जा सकते हैं। इस भयानक कारुणिक स्थिति से जब आंखें चार हुईं तो मैंने वह लंबा गीत लिखा। मेरी यह कविता एक विचित्र परिस्थिति में बनी थी—उस परिस्थिति को मैंने ऐन जवानी में भोगकर समझ लिया और उस समझ ने मुझे कई जगह कई तरह से बचाया, आगे बढ़ाया।

(२) आज का कुछ भी दो-चार-सौ साल पहले-जैसा नहीं है। न समाज, न साहित्यकार, न सही मार्ग की कल्पना। आज सारा संसार एक हो गया है और एक देश या भाषा का साहित्य उसी देश या भाषा का साहित्य नहीं है। आज हिमालय की किसी तराई में आश्रम बनाकर बैठा हुआ योगी भी दिल्ली या न्यूयार्क या लंदन की गली में खड़ा है, ऐसा समझिए। हवाई-जहाज उसके सिर पर से उड़ता है; ट्रांजिस्टर बजाता, गीत या खबरें सुनाता कोई उसके पास से गुजर रहा होता है, या दस, बीस कदम दूर के किसी पेड़ के नीचे बैठा होता है। इसलिए आज संवाद इतना सरल और विविध हो गया है कि कौन समर्थ है और कौन असमर्थ, कैसे तय हो। यों मेरी मान्यता है कि धर्म और विज्ञान जैसे फेल हुए हैं साहित्य वैसा फेल नहीं हुआ है और आगे भी आशा हम इसी से कर सकते हैं। बचपन में मैंने भी एक सयाने से यही कहा था और पूछा था, हालत कैसे सुधरेगी ? वह सयाना व्यक्ति कवि नहीं था—मगर उसने छूटते ही कहा था, "छंद की मार से।" अब, छंद या कविता अंतोगत्वा प्रेम है। कविता को स्वार्थ से ऊपर तो उठना ही होता है, नहीं तो वह कविता ही नहीं होगी। कविता संसार के सिमटकर एक हो जाने को, भेद-भाव मिटाकर वरदान सिद्ध कर सकती है।

संतोषकुमार, विदिशा : 'हिमालय के खड़े होने का ढंग ही उसका मन है' से आपका क्या अभिप्राय है ?

आपने जो उद्धरण दिया है, वह मेरे ग्रह 'खुशबू के शिलालेख' की पहली कविता की एक पंक्ति है। पंक्ति जैसी आपने लिखी है, उससे जरा अलग है—ठीक पंक्ति यों है—'हिमालय के खड़े रहने का ढंग उसका मन जाहिर करता है' याने वह उसके भीतरी रूप की झलक है। मैंने उस कविता में कहा है कि 'यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि चीजें दिखती कैसी हैं।' यदि हम किसी भी चीज के बाहरी रूप को समूचा और सही देख पायें तो उसके भीतर तक हमारे पैठने की संभावना बन जाती है। बाहरी रूप और भीतरी प्रकृति, संस्कृति या विकृति का एक-दूसरे से गाढ़ा नाता है। यह एक ऐसी बात है जिसे मैंने कविता में कहने लायक माना और उसे कुछ उदाहरण दे-देकर कहा। इतना तो ठीक ही है कि उदाहरण, मिसाल, उपमा, ठीक सीमित अर्थ में ही सच होते हैं। ठीक को आप अभिप्रेत क्षेत्र के बाहर ले जाकर देखेंगे तो उसका रूप और अर्थ और अभिप्राय सभी बदल जाएगा। इसके बाद आप चाहें तो पूरी कविता एक बार फिर पढ़ लें—शायद मेरी उपर्युक्त पंक्ति असंगत न लगे।

मृणालिनी श्रीवास्तव, दिल्ली :
(१) आपकी सर्वप्रथम रचना कौन-सी और उसके पीछे कौन-सी भावना निहित ?

(२) 'व्यक्तिगत' में आप स्वयं को किस सीमा तक व्यक्तिगत रूप से रख पाने में सफल हैं ?

(१) सबसे पहली रचना तो मैं 'गीत-फरोश' नाम के संग्रह में अपनी 'अपराध' नाम की कविता को मानता हूं। यह कविता मैंने जून, सन १९३४ में लिखी थी। उन दिनों छायावाद का जोर था। किसी अदृश्य के प्रति लिखना एक आम बात थी। मैंने भी किसी अदृश्य आकर्षण को संबोधित करके इसे लिखा और चूंकि अदृश्य के प्रति आकर्षण का फल केवल बेचैनी है, यह किसी उपलब्धि की कविता नहीं है। फिर भी इस कविता ने मुझे अभावों का, बहुविध अभावों का अहसास कराया

"तिजोरी को मारो गोली, आज तो बहुमूल्य माल हाथ लग गया है।"
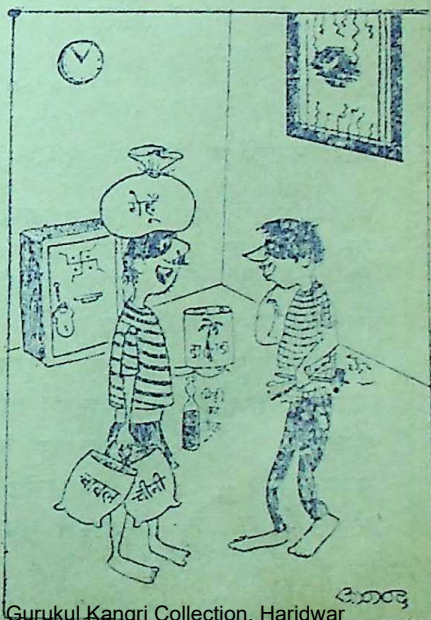
प्रकाशन विभाग के मुख्य प्रकाशन

गांधी साहित्य	रु. पैं.
महात्मा गांधी (चित्रावली)	१२.५०
बापू के आशीर्वाद	६.००
गांधी शतदल	५.००
मोहनदास कर्मचंद गांधी :	
एक जीवनी	४.२५
गांधी कथा (चित्रों में)	२.५०
जीवनियां	
श्री अरविन्दायन	४.००
भुलाभाई देसाई (आधुनिक	
भारत के निर्माता पुस्तकमाला)	५.००
बदरुद्दीन तैयबजी ,, ,,	५.००
रोमेश चन्द्र दत्त ,, ,,	३.००
गोपाल कृष्ण गोखले ,, ,,	३.००
लोकमान्य बाल गंगाधर	
तिलक ,, ,,	३.००
कला और साहित्य	
रसिकप्रिया	१५.००
अक्षर कथा	१०.००
रेडियो नाटक एक संकलन	१०.००

आधुनिक भारत की आर्थिक कहानी
श्रेष्ठ हिन्दी कहानियां
महकते फूल
चतुर्दशी
गालिब - के पत्र
गालिब - कवि और मानव

इतिहास और सन्दर्भ

१९७१ का युद्ध चित्रों में
१९२१ के असहयोग आंदोलन की झांकियां
भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास
खण्ड-एक (साधारण)
खण्ड-दो (साधारण)
भारत में अंग्रेजी राज - खण्ड एक व दो (सजिल्द) १२.५०
लाल किले के प्राचीर से भाग-१ (स्वातंत्र्य दिवस भाषण १९४...
भारत-१९७३

वार्षिक सन्दर्भ ग्रंथ : (तथा अन्य कई भाषाओं में रोचक व उप... पुस्तकें) डाक खर्च मुफ्त। तीन रुपए से अधिक मूल्य की पुस्तकें वी. पी. से भी भेजी जा सकती हैं। वृहद सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं।

निदेशक, प्रकाशन विभाग,
सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

नई दिल्ली-१ : पटियाला हाउस
बम्बई-१ : बोटावाला चैम्बर्स, सर फिरोजशाह मेहता ...
कलकत्ता-१ : ८, एस्प्लेनेड ईस्ट
मद्रास : शास्त्री भवन, ३५ हैडोज रोड

डी ए वी पी ७४/...

और अभावग्रस्तों की ओर से लिखने की प्रवृत्ति भी जगायी। यों इसके पहले मैं काफी कविताएं लिख चुका था—मगर उन्हें मैं अब पद्यबद्ध विचार-भर मानता हूं।

(२) 'व्यक्तिगत' की कविताएं केवल मुहाविरे में व्यक्तिगत हैं। मैं जब तक अपनी व्यक्तिमत्ता को चेतन तो चेतन, जड़ तक में कम ज्यादा ही क्यों न हो, संचरित नहीं पाता, अपने को चेतन महसूस नहीं करता। इन कविताओं में 'मैं' का उच्चारण उस कंकरी के समान है जिसे कोई बच्चा तालाब में फेंके और सारा जल अलक्ष्य या लक्ष्य गति से, मगर कांपे। मैंने 'अहम्' को 'हम' में फेंका है।

मीना भारती, मुजफ्फरपुर: (१) आपकी रचनाएं अधिकांशतः लोक-जीवन की गंध और ऊष्मा से संग्रथित हैं, यथा 'गीतफरोश', 'सतपुड़ा के घने जंगल', 'मंगल वर्षा' और 'अंधेरी कविताएं' की कुछ रचनाएं। कारण क्या है? (२) 'कादम्बिनी' के मई '७४ अंक में 'समय के हस्ताक्षर' स्तंभ के अंतर्गत श्री राजेन्द्र अवस्थी ने लिखा है कि 'आज का लेखक दोहरे खतरों के बीच जी रहा है। फलतः साहित्य धीरे-धीरे व्यक्ति का एकांत संगीत बनता जा रहा है।' आप इस कथन से कहां तक सहमत हैं और क्यों?

(१) लोक-जीवन के साथ संपर्क दीर्घकाल तक और घना रहा। जन्म तो एक गांव में हुआ, जिसकी आबादी तब कोई पांच सौ रही होगी। तरुणाई आ जाने तक शहर से लगभग संपर्क नहीं आया। अगर ५–७–१० हजार तक के शहरों को छोड़ दें तो जीवन में पहला नगर जेल के माध्यम से आया। जेल उत्साह में गया था इसलिए बाद में नगर के जीवन से मैं घबराया नहीं। नगरों में भी गांव चाहे जब जी लेता हूं। 'खुशबू के शिलालेख' नाम के अपने संग्रह की इसी शीर्षक की कविता मेरे इस स्वभाव को व्यक्त करती है। जिसे 'नगर-बोध' कहा जाता है, वह मेरे लेखे परेशानी का नहीं, मजा लेने, यानी उसकी मूर्खताओं का मजा लेने का, व्यंग्य का विषय है; और जो 'नगर-बोध' से दंशित कराह रहे होते हैं, उनके साथ सहानुभूति का कारण है। मैंने ठीक 'नगर की कविता' कभी नहीं लिखी। उससे दुखी साधारण नागरिक की जरूर लिखीं। नगर ने मुझे कसा है, छुआ नहीं है। गांवों के जीवन ने मुझे छुआ है और कसा नहीं है। छुअन महसूस करता रहता हूं।

—राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली-१

शिलान्यास

शहीद चंद्रशेखर आजाद के एक अभिन्न और वयोवृद्ध साथी ने 'आजाद मार्केट' का शिलान्यास किया। परतंत्र भारत में उन्हें बागी कहा जाता था और आज स्वतंत्र देश का सिपाही कहकर उनकी प्रशंसा की गयी। खुशी-खुशी घर पहुंचे तो सबसे पहले पत्नी से साक्षात्कार हुआ जो अपने पौत्र को गले से चिपकाये बैठी थी।

"क्या हुआ ?" देखते ही उन्होंने पूछा। लेकिन पत्नी स्थिर रही, फिर सहसा रो पड़ी। पोते को गोद में लेते ही वह विकल हो उठे। बात ही कुछ ऐसी थी। हड़ताल के कारण दूध नहीं मिल रहा था।

वह तुरंत लौट पड़े। उनके हाथ में कुदाल थी।

पूरा शरीर पसीने से नहा उठा तो उन्होंने पाया कि चारों ओर भीड़ एकत्र हो गयी है और वह शिलान्यास का आधा पत्थर तोड़ चुके हैं। इतने में आवाज आयी —"मारो, मारो, बागी है।"

... और फिर ईंटें बरसने लगीं। भीड़

छटने के बाद जीवित बचने का ... जागा तो वयोवृद्ध बुदबुदा रहे थे, शिलाऽऽन्यासऽऽस ... नहीं ... ई... करनाऽऽ है। बाग़ी ... ई ... है!

—सुशील ...

ईंटों का दुःख

एक ही भट्ठे से दो कारीगर ... जैसी ईंटें खरीदकर ले गये। ... किसी नदी का पुल बनाने के लिए ... की आवश्यकता थी और दूसरे को ... के आपसी झगड़े के परिणामस्वरूप ... वाले, एक बड़े भवन के बंट... लिए आंगन में ऊंची दीवार खड़ी ... के लिए।

उधर पुल तैयार हो गया और ... दीवार। पुल तैयार होते ही हजारों ... खुशी से झूम उठे। दीवार जब से ... तब से ईंटों को बड़े दुःख सहने पड़े। ... कोई उस घर में आता तब आंगन में ... दीवार को घृणा से देखता। छोटे ... बालकों का आंगन छोटा हो गया ... घर में अब पूरी तौर से घुटन महसूस ... लगी थी।

युग बीत गये, किंतु आज भी वह ... और वह दीवार मौजूद है। पुल की ... पर लिखा है—'प्रेम' और दीवार ... ईंटों पर—'सांप्रदायिकता'।

उर्दू की आधुनिक हास्य-कविताएं

• अर्श मलसियानी

उर्दू भाषा कोई इतनी पुरानी नहीं कि हम कह सकें कि उसका हास्य भी पुराना है। जब से उर्दू कविता चली है हास्य उसकी परंपरा-सी बन गया है, परंतु शुरू में यह एक-दूसरे की पगड़ी उछालने और बुरा-भला कहने तक ही सीमित था। मीर ने प्राय: 'अपने घर का हाल' लिखकर व्यंग्य का एक बहुत अच्छा नमूना दिखाया था। सच पूछिए तो अकबर इलाहाबादी उर्दू के सबसे पहले कवि थे जिन्होंने हास्य और व्यंग्य को काव्य का एक अंग बनाया। वास्तव में वे पुराने ढंग के आदमी थे। विदेशी सभ्यता और शिक्षा का जोर उनके सामने ऐसा हुआ कि उन्होंने उसका विरोध करने के लिए कविता का प्रयोग किया। उनके कुछ शेर देखिए :

पानी पीना पड़ा है पाइप का
हरफ पढ़ना पड़ा है टाइप का

ऐ खुदा कर दे मुझको साहब लोग
दूर हो मुझसे इस जनम का रोग

बाप मां से शेख से अल्लाह से क्या इनको काम
डाक्टर जनवा गये, तालीम दी सरकार ने

शेखजी के दोनों बेटे बाहुनर पैदा हुए
एक हैं खुफिया पुलिस में एक फांसी पा गये

हुए इस कदर मुहज्जब कभी घर का मुंह
न देखा
कटी उमर होटलों में मरे अस्पताल जाकर

आजकल के जमाने में कवियों ने समाज की कमजोरियों को अपने व्यंग्य का निशाना बनाया है और बड़ी सुंदर कविताएं रची हैं। इसमें पाकिस्तान और भारत का कोई भेद नहीं, क्योंकि स्वतं-

अकबर इलाहाबादी

त्रता मिलने के पश्चात दोनों देशों की सामाजिक दशा और समस्याएं कुछ ऐसी थीं कि सीमा के इस पार या सीमा के उस पार कवियों के कटाक्षों में कोई अंतर नजर नहीं आता। मजीद लाहौरी, सैयद मुहम्मद जाफरी और ज़मीर जाफरी पाकिस्तान में धड़ल्ले से लीडरों, शासकों और बड़े-बड़े सरकारी कर्मचारियों का मजाक उड़ाते रहे हैं। यही काम दिलावर फिगार ने भी किया जो पांच-छह साल हुए भारत से पाकिस्तान सिधार गये। हमारे यहां रजा नकवी वाही, राजा मेंहदी अली खां, हिलाल रामपुरी, फुरकत काकोरवी और कितने ही कवि हैं जो इस पंक्ति में आते हैं, परंतु शाद आरिफी का जवाब कोई नहीं।

मजीद लाहौरी का खानदानी [illegible] अब्दुल मजीद चौहान था, परंतु वे [illegible] लाहौरी के नाम से पत्रों में लिखा [illegible] थे। अपने देश के बदलते हुए हाला[illegible] व्यंग्य के भरपूर वार करते हुए उन्होंने [illegible] कुछ लिखा है। इसमें इलेक्शन, लीडर[illegible] को खूब लताड़ा है। कुछ उदाहरण दी[illegible]

मुझको दाता दिला
होगा तेरा भला
मुझको दाता दिला
ऐ प्लाटों के मालिक तेरी खैर हो
ऐ अलाटों के मालिक तेरी खैर हो
कोई कोठी दिला कोई बंगला दि[illegible]
छापाखाना दिला कारखाना दिला
पंप पेट्रोल का या सिनेमा दिला
बस नहीं कोई तो बस का अड्डा दि[illegible]

कौम के नाम पर मुझको दाता दिला
होगा तेरा भला
तुझको शाद और आबाद रक्खे खुदा
खूब चश्मा हो जारी तेरे फैज का
कोई परमिट मिले कोई ठेका मिले
कोई इंपोर्ट-लाइसेंस अच्छा मिले

नजीर अकबराबादी बड़ा चुलबुला और फक्कड़ शायर है। उसने एक व्यंग्य की अद्भुत कविता लिखी है, जिसका शीर्षक है 'आदमीनामा'। लिखता है :

दुनिया में बादशाह है सो वह भी है आदमी
और मुफलसो गदा है सो वह भी है आदमी
जरदारो बेनवा है सो वह भी है आदमी
नेमत जो खा रहा है सो वह भी है आदमी
टुकड़े चबा रहा है सो वह भी है आदमी
मस्जिद भी आदमी ने बनायी है यां मियां
बनते हैं आदमी ही इमाम और खुतबाखां
पढ़ते हैं आदमी ही कुरान और नमाज यां
और आदमी ही इनकी चुराते हैं जूतियां
जो इनको ताड़ता है सो वह भी है आदमी

मजीद कहां चुप रहने वाले थे! उन्होंने नजीर की कविता के जवाब में या यों कहिए कि नजीर की नज्म की 'पैरोडी' लिखी—'माडर्न आदमीनामा', परंतु उसमें अपने जमाने की समस्याओं पर व्यंग्य के तीर चलाये हैं—

टुकड़े चबा रहा है सो वह भी है आदमी
और लंच उड़ा रहा है सो वह भी है आदमी
वो भी है आदमी जिसे कोठी हुई अलाट
वो भी है आदमी मिला जिसे घर न घाट
वो भी है आदमी जो बैठा है बन के लाट
वो भी है आदमी जो उठाये है सर पै खाट
मोटर में जा रहा है सो वह भी है आदमी
रिक्शा चला रहा है सो वह भी है आदमी

इस कविता में मजीद ने वर्तमान सभ्यता के बहुत ही रंग दिखाये हैं। एक बंद यों शुरू होता है—

रिश्वत के नोट जिसने लिये वह भी है आदमी
दो रोज फाके जिसने किये वह भी है आदमी

लीडरों के तो वह पंजे झाड़कर पीछे पड़ा हुआ है और लीडर क्या-क्या करते हैं, इन सबका वर्णन बड़ी निडरता से उसने किया है—

मिल और जमीन अलाट कराती है लीडरी
और कोठियों पै कब्जा जमाती है लीडरी
लंच और डिनर मजे से उड़ाती है लीडरी
गम साथ-साथ कौम का खाती है लीडरी
फुरसत मिले तो टूर पै जाती है लीडरी

प्रजातंत्र की तसवीर और उसके सारे चरित्र उसने बताये हैं—

अपना जत्था बना के वजारत बनाती है
जो कुछ भी इसको मिलता है वो बांट खाती है
महरूम जब रहे अपोजीशन में आती है
तरकश में जितने तीर हैं सब आजमाती है
नाकाम होकर शोर मचाती है लीडरी

सैयद मुहम्मद जाफरी बहुत दिन दिल्ली में ही रहे। उनकी प्रसिद्ध कविताएं हैं— नुमाइश, क्लर्क, आजाद शायरी, भंगियों की हड़ताल और यू.एन.ओ.। कोई चीज उनकी मार से बाहर नहीं।

भारत में जब अंगरेजों का एक

EXOTICA
Lakmé Luxury Talc
EXOTICA
Lakmé Luxury Talc

कमीशन आया तो जाफरी ने एक नदी के बहाव की नकल उतारते हुए अकबर के रंग में एक कविता लिखी—

मिशन ने दिया अलगरज ये बयां
बहें जैसे बरसात में नद्दियां
गल्प और मरकज बनाता हुआ
वो शीरे में मक्खी फंसाता हुआ
मचाता हुआ फिरकावाराना जंग
उफक को बनाता हुआ लालारंग
ये रो-रो के कहते थे शेड्यूल्ड कास्ट
कि धोबी के कुत्ते का घर है न घाट
गया अलगरज वो जवारी गया
तमाशा दिखाकर मदारी गया

वाही बिहार के रहनेवाले हैं। नाम रजा नकवी है। इनकी कविता में घन गरज नहीं, गाली-गलौज नहीं, व्यंग्य के तीखे तीर नहीं, परंतु यह धीमी आंच से दिलों को पिघला देते हैं और रोनेवाले के चेहरे पर एक हलकी-सी मुसकराहट आ जाती है। जोश मलीहाबादी की एक कविता है 'प्रोग्राम'। वाही ने न जाने कितनों का प्रोग्राम लिख डाला। उसमें वाही, अफसर, शायर, मुल्ला, एडीटर, वकील, लीडर, प्रोफेसर, समालोचक आदि हैं। एक कविता आपने 'करप्शन' और एक 'लीडरी' पर भी लिखी है। मुशायरे में सुरताल से लैस होकर गानेवाले कवियों पर व्यंग्य किया है। दो-चार शेर देखिए—

इनसे मिलिए आप हैं वो शायरे रंगीं नवा
जिनसे बज्मे शेर की मरतूब रहती है हवा
भैरवी की धुन में जिस दम दादरा गाते हैं आप
बनके सावन की घटा महफल पै छा जाते हैं आप
आप पढ़ते हैं गजल, जब ले के हलकी गिटकरी
आप पै कुरबान हो जाती है रूहे शायरी
फर्क यह है आपमें और पेशेवर कव्वाल में
फीस का तालिब है वो खुश आप हैं हर हाल में

मजीद लाहौरी

लुत्फ आ जाए जो साजिंदे भी हों कुछ साथ-साथ
इस तरफ पैरों में जुंबिश उस तरफ तबले पै हाथ
फैल जाए चार जानिब फिर तो शोरा आपका
और हर तकरीबे शादी में हो मुजरा आपका

सैयद जमीर जाफरी ने 'औरतों की असेंबली' के नाम से बड़ी अच्छी कविता लिखी है—

सुन्दर
जीवन का
रहस्य
मोदीकौटन
ख़ूबसूरत ज़िन्दगी के लिए ख़ूबसूरत वस्त्र

बुआ को तो देखो न गहना न पाता
फकत इक गरारा फकत एक छाता
नहीं कुछ भी नामेखुदा आता जाता
बजट हाथ में जैसे धोबिन का खाता
इधर मेंबरी भिड़ गयी मेंबरी से
उधर बच्चे रोने लगे गैलरी से
सीचों में गोटे किनारी की बातें
बहू की किफायतशियारी की बातें
पड़ोसन की परहेजगारी की बातें
गरज हर बयाही क्वांरी की बातें
ब्लेड और टाई पै कट हो रही है
इधर इतरो-रेशम की रट हो रही है

राजा मेहदी अली खां ने समाज की बुराइयों को आड़े हाथों लिया है और हास्य रस के दरिया बहा दिये हैं। एक कविता है 'बीवी की सहेलियां'। पहले दो शेर देखिए—

आयी जो एक और भी आती चली गयीं
छोटे-से एक घर में समाती चली गयीं
बच्चों की फौज लेके हुईं घर पै हमलाजन
हम 'दुश्मनों' के होश उड़ाती चली गयीं

दूसरी कविता है 'मियां के दोस्त'। उसका भी नमूना देख लीजिए—

आये मियां के दोस्त तो आते चले गये
छोटे-से एक घर में समाते चले गये
नौकर ने आज चाय के दरिया बहा दिये
दरिया समंदरों में समाते चले गये
शेरों की तरह टूट पड़े आके मेज पर
जो चीज भी मिली वह चबाते चले गये

दिलावर फिगार ने चार-चार पंक्तियों में बड़ी मजे की बातें की हैं—

शायरों ने रात भर बस्ती में वावैला किया
दाद की आवाज से सारा महल्ला डर गया
एक बुढ़िया अपने लड़के से यह बोली अगले रोज
रात कैसा शोर था क्या कोई शायर मर गया

वो चीजें कहें जिनको यू पी का तोहफा
यही चार चीजें है कम-याबो नादिर
संदीले के लड्डू, अलीगढ़ के ताले
बरेली का सुरमा, बदायं के शायर

नजीर अकबराबादी

आप शायर नहीं फिर भी आपके शेर कितने नाइस हैं
कूक भर दी गयी तो बज निकले—आप हिज मास्टर्स वायस

शाद आरिफी १९६४ में परलोक सिधारे। इनके यहां घटिया तरह का हास्य और व्यंग्य नहीं। बात ऊंची कहते हैं, परंतु उसमें छिपा हुआ व्यंग्य अवश्य

होता है—

सुन के आहट जो हटा दी थी उठा ला
साकी

शेख साहब हैं? मैं समझा था मुसलमां
है कोई

सच और खरी बात छुपायी नहीं जाती
हां, हम से गलत बात पै 'जी हां' नहीं होता

जागीरदारी बंद हुई तो जागीरदारों का क्या हाल हुआ, उस दुर्दशा को सुनिए—

बुलबुले फिरदौस के साले हैं ये
बात इतनी है जरा काले हैं ये

छिन चुकी जागीर आमद बंद है
अब फकत अफयून का आनंद है

फल-फलारी बेचते हैं आजकल
भोगता है आदमी करनी के फल

हैं परेशां-हाल दीवाने हैं आप
क्या इन्हें भी आज पहचाने हैं आप

सिर्फ अपनों के तकर्रुर का इरादा होगा
और अखबार में एलाने जरूरत देंगे

इमसे इस किस्म की उम्मीद न रक्खे
दुनिया

हम किसी शख्स की तारीफ तो करते ही
नहीं

—एफ ४/११ माडल टाउन,
दिल्ली-११०००९

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. अमरीका; २. मेरे फ्रांस के थे। बदले में मेरे मित्र ने मुझे तीन फ्रांक स्विट्जरलैंड के तथा नौ फ्रांक बेल्जियम के दिये; ३. १९७४ के स्थान पर १९७५ तथा दिनों में रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि के स्थान पर क्रमशः सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, रवि; ४. **एक** रुपये का एक नोट, २ रु. के २ नोट, ५ रु. का एक नोट, १० रु. का १ नोट तथा २० रु. के २ नोट दिये, अर्थात ६० रु. की कीमत के बराबर ७ नोट दिये इनमें से आप ६० रु. के अंदर बिना भुनाये कितने रु. भी अदा कर सकते हैं; ५. **आंध्र**-प्रदेश के सिहारी कोटा नामक स्थान में, ६. **छत्तीस** वर्ष; ७. **चेकोस्लोवाकिया**, ढाई लाख; ८. **अक्तूबर** १९७३ के युद्ध में जीती भूमि लौटाने के अलावा १९६७ के युद्ध में जीती भूमि भी लौटाएगा; ९. **श्रीलंका** को कच्चा-तीवू देने के बारे में समझौता; १०. **थिम्पू,** जिग्मे सिंगे वांगचुक; ११. **अधिक** तेज; १२. **'आलोक** पर्व', हजारीप्रसाद द्विवेदी; १३. **तंजानिया** के राष्ट्रपति जूले न्येरेरे को; १४. **कि** लोकसभा या राज्यसभा के अध्यक्ष की राय में यदि किसी विधायक ने स्वेच्छा से त्यागपत्र नहीं दिया है तो वह त्यागपत्र स्वीकार नहीं किया जाएगा; १५. ४८४०. ४.५५; १६. **ग्रेट** ब्रिटेन, पश्चिमी जरमनी; १७. **दो** बार; १८. **स्विटजरलैंड** उत्तरी कोरिया, दक्षिणी कोरिया, उत्तरी वियतनाम, दक्षिणी वियतनाम, वेटिकन; १९. **अल्ट्रा-वॉयलेट** ।

कहानी

● कृष्णा

अब तक शायद हजारों लड़कियां इस संस्था से पढ़कर निकल चुकी होंगी। न उनकी सूरत याद रहती है, और न नाम। उनमें से बहुतेरी तो माता क्या, नानी और दादी की भी श्रेणी में अब आ चुकी हैं और अकसर बाजार-हाट, गली सड़क पर भेंट होने पर जब बच्चों से प्रणाम करवाते समय उनके चेहरे पर

एक कमजोर लड़की पागल-सी

एक प्रौढ़, परिपक्व भाव की झलक देखता हूं तो लगता है कि मेरी अपनी अवस्था, आयु में चाहे कितनी ही बढ़ी हो किंतु जीवन के ग्राह्य मूल्यों में अब भी विद्यार्थी ही हूं।

इसीलिए तो अंजना का एडमिशन जब कर लिया गया और मेरे सामने वह आयी तो सूरत, शक्ल और व्यक्तित्व से निहायत 'बोगस' या 'मोस्ट अनइंप्रेसिव' लगी थी मुझे वह, हद से ज्यादा संकोची और शरमीला स्वभाव ! झुकी-झुकी पलकें सिर्फ क्लास में लेक्चर के समय ही उठतीं क्या, मानों चेहरे पर ... हिपनोटाइज कर लेती थीं। कभी-कभी सोचता, आखिर इतनी शरमीली लड़की क्लास में बैठकर जॉन-स्टुअर्ट मिल, ... या वर्ड्सवर्थ, शेली अथवा कीट्स ... किस प्रकार 'बोल्डली डिस्कस' कर ... है ! क्योंकि क्लास से बाहर निकलने ... यदि कभी गैलरी में मिलती तो नर्वसनेस ... कई बार किताबें हाथ से छूट जातीं...

इम्तहान समाप्त हो चुका था ... रिजल्ट अभी नहीं आया था। पास ... उसे हो ही जाना था लेकिन मेरी ... उससे उस दिन हुई, जब वह अपने मा... के पास से मां के पास वापस जा रही ... उसका सांवला चेहरा मुरझाया और ... उदास था और वे भरी-भरी आंखें... जब मेरी पत्नी ने सिर पर हाथ फेर... आशीर्वाद दिया तो सचमुच बेटी की विदा... जैसा ही कारुणिक दृश्य उपस्थित ... गया था ।

अकसर पत्नी से चर्चा होती, ... भी कहो, लड़की है जीनियस! क्या ... एक्सप्रेशन है, टैगोर हो या नायडू, वर्ड्स... वर्थ, कॉलरिज हो अथवा शेली या कीट्स...

'इट इज ए प्रिविलेज टू रीड हर आंसर बुक'..., यही हाल हिंदी में भी है।'

लेकिन देखो, ईश्वर उसकी प्रतिभा बरकरार रखे तब है! पत्नी उसमें एक संदेह जोड़ देती।

और काफी अंतराल के बाद एक दिन एक रंगीन निमंत्रण से ही सूचना मिली थी कि अंजना के नाम के आगे 'श्रीमती' का विशेषण जुड़नेवाला है। निमंत्रण के के लिए उससे लिखित अनुमति के लिए जोर-जबर कर रहा है। बेहद गुस्सा आया। सोचा, अंजू से कह दूं, 'उस नालायक को कुछ भी लिखकर न देना,' लेकिन इसी बीच मालूम हुआ कि उसने लिखकर दे दिया और मां के पास वापस चली आयी है। निश्चय ही मां ने सिर पीट लिया होगा। चाचा, ताऊ के ऊपर निर्भर रहनेवाली मां की विपत्ति का अंदाज सहज
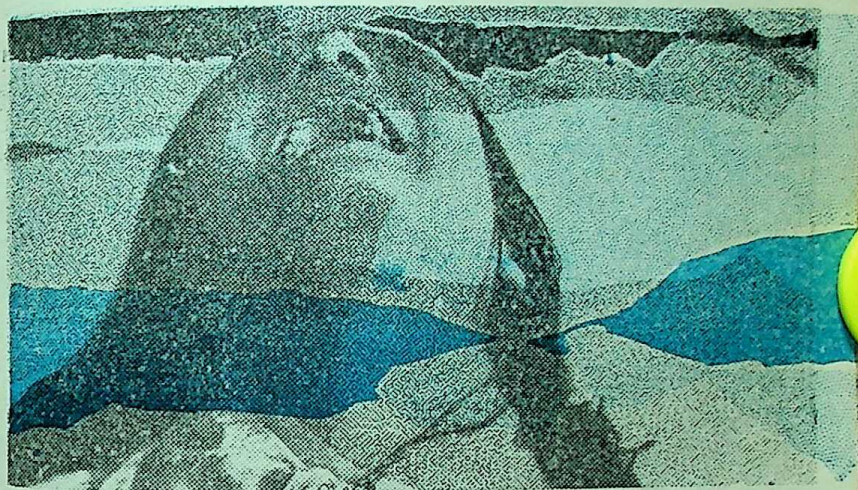
किनारे ही नन्ही-मुन्नी लिखावट में था—"आशीर्वाद की इच्छुक... अंजू।"

शादी के बाद की भेंट में वह काफी मुखर और साहसी हो गयी थी। किंतु पत्नी ने बताया था, 'वे लोग' कुछ अजीब किस्म के लोग हैं, कुछ लेनी-देनी, सूरत-शक्ल को लेकर वे अंजना से असंतुष्ट हैं, और तो और उसका वह बौड़म-सा मियां तक दूसरी शादी के ख्वाब को पूरा करने ही लगाया जा सकता है। जवान लड़की और उमर-कैद की यह सजा...!

लेकिन जब मैं उससे मिला तब वह पहले से भी और ज्यादा खुश और आनंदित नजर आयी। गांधी, नेहरू, मार्क्स, लेनिन अथवा टैगोर, बंकिम, शरद, प्रेमचंद या यशपाल; गर्ज यह कि खुद की बात छोड़कर हर विषय पर धुंआधार बहस करने को तैयार। यदि स्पष्ट रूप से कहूं तो उससे

मिलने के बाद न जाने क्यों, कहीं कुछ अंदर तक बुरी तरह बेध गया।

अकसर सेमिनार का सिलसिला दूसरे तीसरे महीने लगता ही रहता, साथ ही उसका साग्रह मौन निमंत्रण भी। और, उसके शहर जाकर उससे बगैर मिले मैं स्वयं भी कहां रह पाता था! एक बार जब पत्नी भी साथ थी और उसने यों ही पूछ लिया था, "अंजू, वह नामाकूल तुम्हें कुछ मुआवजा वगैरह भी देता है या . . ." बात पूरी होने से पहले ही हंस पड़ी थी वह, "दीदी, नामाकूल का पैसा उससे बढ़कर नामाकूल होता है," और झट से चरणों की धूल सिर पर लेकर सिर झुका लिया, "सिर्फ जूझते रहने की शक्ति का आशीर्वाद दीजिए।"

बाद में पत्नी ने बताया कि दोनों मां-बेटी को घरवालों ने हद से ज्यादा सता रखा है, और अंजू की अपनी आमदनी में दोनों के अलग रह सकने की गुंजाइश भी नहीं है। मां बेचारी आठ-आठ आंसू रोती रहती है। चिट्ठियां अकसर पत्नी के पास आती रहती थीं। चिट्ठी से ही पता चला था कि उसे एक प्राइवेट स्कूल में सवा सौ की नौकरी मिल गयी है।

किसी विचार-गोष्ठी के सिलसिले से ही वहां गया था। सोचा, लगे हाथ अंजू से भी मिल लूं। घर गया तो अवाक! दरवाजा खोलते ही मुझसे लिपटकर जो उसने बिलखना शुरू किया तो मुझे यह समझने में देर नहीं लगी कि सांसारिक स्नेह का उसका आखिरी सूत्र भी समाप्त हो चुका है। पास ही बैठी उसकी सहेली ने उसके अंदर जाने पर बताया, "चाचा-ताऊ ने तो मां के मरते ही यानी सूतक के समय ही एक दिन, रात को इसे घर से निकालकर दरवाजा बंद कर लिया था। बहुत रोयी-धोयी तो किसी तरह तेरहीं तक रखने को तैयार हुए। आपको बड़ा याद कर रही थी और पिछले तीन दिन से तो द्रौपदी की तरह आपको टेर रही थी। ताज्जुब है, आप सचमुच आ गये, इसी को इंट्यूशन कहते हैं।" अंजना वापस आयी तो एक फटे कपड़े की पुटलिया में थोड़े से फूल थे, "सर, आप तो काशी लौटेंगे ही, इन्हें गंगा में प्रवाहित कर दीजिएगा। मुझ अभागिन ने आजीवन उन्हें जलाया, शायद इससे उन्हें तो नहीं, हां मुझे जरूर शांति मिलेगी।"

"अब क्या करोगी? मेरे साथ चलो, वहां तुम्हारी दीदी और बच्चे होंगे, नौकरी-चाकरी का जुगाड़ भी वहीं सोच लिया जाएगा!"

"नहीं सर, आपका और दीदी का वैसे ही मुझ पर स्नेह-भार है। सुख तो हंस-खेलकर शेयर किया जा सकता है किंतु स्थायित्व का यह रोजमर्रा का संघर्ष! इसके लिए तो खुद ही जूझना होगा। बस, आप दोनों का आशीर्वाद चाहिए।"

संभवतः शिक्षा बोर्ड की बैठक थी। वहां से उठकर बस-स्टैंड पर खड़ा अंजना के घर जाने का ही विचार कर रहा था।

तभी देखा, बायें हाथ में साड़ी की सामने-वाली प्लेट, दाहिने कंधे पर एक झोला-नुमा बैग लटकाये, चिलचिलाती धूप में, चप्पलें फटर-फटर करती अंजना! जोर से आवाज लगायी, "अंजना"। वह रुकी और सड़क पार करने लगी लेकिन थोड़ा लंगड़ा रही थी। पूछने पर बताया, स्कूल जाते समय बस पकड़ने की जल्दी

में सड़क पर गिर गयी थी।

मैं साथ ही चलते-चलते उसके उस होस्टल की ओर आ गया था। सारे रास्ते देश, दुनिया, जहान की बातें होती रहीं। जब भी कुछ पूछता, वह बात का रुख फौरन मोड़ देती। आखिर मैंने स्पष्ट रूप से पूछा, "इस तरह अकेले जूझने से तो अच्छा है . . तुम शादी क्यों नहीं कर लेतीं?"

"सर, जीवन फिल्म के विपरीत एक वास्तविकता है। इसको सुखी और संतुष्ट बना सकने की मान्यताएं इतनी महंगी हैं कि उनकी कीमत जुटा सकना, सब के लिए, खासतौर पर मुझ–जैसे के लिए, नितांत मुश्किल है। अम्मां ने उधार व्यवहार करके जो जुआ खेला उसमें हम हार गये।" फिर हंसी, "तब तो दोनों टांगें दुरुस्त थीं, अब कोई जिम्मेदारी लेने की हैसियत भी कहां है?"

होस्टल का कमरा क्या था, कोठरियां थीं। कोने में एक चौकीनुमा तख्त सोफासेट और पलंग दोनों का काम कर रहा था। छोटी-सी रोशनदाननुमा खिड़की पर एक नन्हा-सा स्टोव और दो शीशे

के सस्ते किस्म के गिलास धरे थे। उसने फटाफट स्टोव जलाया और चाय का पानी चढ़ा दिया।

सिर झुकाये कहती रही, "सर! आप मुझे देखकर क्यों दुखी होते हैं? अपने स्टाफ में साथ काम करनेवाली सहयोगिनों को देखती हूं, जो जीवन वे जी रही हैं, उसमें कुंठा, असंतोष, विद्रोह, यातना और ताड़ना के साथ-साथ एक लिजलिजी किस्म की कायरता है, जो मैं बहुत पीछे छोड़ आयी हूं। और सर, जो कुछ भी मैं सह रही हूं वह मेरा इच्छित कदम है।" एक पल को ऊपर देखा और फक से हंस पड़ी, "सर, विद्रोह की कुरबानी हमेशा मरकर ही नहीं, जीते-जी हंसकर भी दी जाती है।"

महिला सम्मेलन का कोई जलसा था। पत्नी भी डेलीगेट थी। अंजना से मिलने का मौका भी था, साथ ही मेरी भी मीटिंग थी। बस सारा मामला फिट। मीटिंग के बाद ही हम उसके डेरे की ओर चल पड़े। होस्टल के बाहर ही वह मिल गयी। साथ लचकती टांग...हमें देखते ही लिपट गयी। पत्नी तो रो ही पड़ी। मैं भी एकदम गंभीर हो गया था।

चाय पीते-पीते आखिर पत्नी पूछ ही बैठी, "अंजू, इस मुसीबत में भी आखिर तुम इतना खुश कैसे रहती हो?"

"वाह दीदी," चटककर बोल उठी वह, "यदि बड़ी, छोटी दो लाइनें बराबरी में खिंची हों जो बड़ी को अपनी मजबूती या चढ़ाई का अहसास तो होगा ही। मेरा मतलब है, दोनों टांगों से रहित के सामने लंगड़ा भाग्यशाली है न। जीने के लिए कुछ सच्चे और कुछ झूठे जालों का फंसाव जरूरी है, ठीक है न!" और एक छत-फोड़ ठहाका जो उसने लगाया, तो लगा घुटनभरी ये दीवारें तक ढह जाएंगी।

सड़क पर आते ही पत्नी की रुआंसी बोली फूटी, "तुम कुछ भी कहो, मुझे अंजना, नार्मल नहीं जान पड़ती। ऐसी जीनियस और..." बस उसके आंसू की धार, नाक पोंछना ही मैं जान पाया।

मेरा मन हमेशा की भांति गहरे क्षोभ और निराशा में डूबकर नितांत बोझिल हो गया था। सामान समेट अपने अपने विचारों में खोये किसी तरह स्टेशन पहुंचे।

गाड़ी चल पड़ी। उदास पत्नी की टो[illegible] लेते हुए पूछा, "क्या सोच रही हो?"

"क्या बताऊं, वही अंजना की बात [illegible] पता है, जब मैंने उससे पूछा, 'इस घुटी हु[illegible] जगह में तुम्हें सफोकेशन नहीं होता,' त[illegible] उसने क्या जवाब दिया? पहले तो हंसी [illegible] 'दीदी! यह मेरी खून-पसीने की मेहन[illegible] की कमाई का शीशमहल, आनंद-भव[illegible] या राजमहल है,' फिर एकदम उदास [illegible] गयी। कहने लगी, 'कभी-कभी सोचती [illegible] काश, निरंतर यातना का शिकार होव[illegible] सुलगती मां को मैं यहां लाकर रखने [illegible] समर्थ हो पाती। कभी आधी रात य[illegible] आंख खुल जाती तो दोबारा नींद गा[illegible]

हो जाती। मारे डर के करवट तक नहीं बदलती कि कहीं अम्मा जग न जाएं और अम्मा, सब जानते हुए भी चुप्प मारे पड़ी रहतीं कि करवट लेने में चारपाई चरमराएगी और सुबह उठकर स्कूल जाने वाली बिटिया की नींद खराब होगी। कम से कम यह हमारा, एकदम अपना घर होता, लेकिन दीदी! मैं यह सुख भी नहीं दे पायी...?' पुअर गर्ल!" कहकर पत्नी चुप हो गयी। रेल के हिचकोले आंखों में नींद भर रहे थे।

इसी बीच सेमिनारों में एक लंबा अंतराल पड़ गया और जब इस बार अंजना से मुलाकात हुई तो न जाने क्यों मुझे उसकी बीमार मां की याद ताजा हो आयी। उसके सांवले चेहरे पर भी अब वैसी ही घुमावदार झुर्रियां पड़नी शुरू हो गयी थीं। डॉक्टर ने शायद आस्टियो आर्थ-राइटीस का निदान किया था। स्कूल के बाद उसने टाइप सीखना शुरू कर दिया था। पूछने पर उसने बताया, "ताऊजी का दो सौ रुपया बाकी रह गया है, इस ऊपरी आमदनी से वह चुकेगा। स्कूल में अब प्राइवेट ट्यूशन की मनाही हो गयी है।" मैंने कहा, "मुझसे रुपये ले लो, जब हो, चुका देना; न भी चुका पाओ तो आखिर मेरा भी तुम पर कुछ हक है..."

"सर, इतना कहनेवाला भी मेरे लिए इस दुनिया में कौन है? लेकिन यह तो रोज-रोज की लड़ाई है, रोज कुआं खोदो और पानी पियो, आप कहां तक देंगे?" फिर थोड़ा रुककर सकुचाते हुए बोली, "हां, काका की कुछ दर्शनशास्त्र पर समीक्षात्मक पांडुलिपियां हैं, पैसा होता तो छपा डालती, न भी पुस्तक बिकती तो भी मुझे तसल्ली होती। आखिर लोग श्राद्ध क्यों करते हैं, मैं समझ लेती मैं अपना श्राद्ध कर रही हूं लेकिन यहां तो होस्टल, पेट और ताऊ के बाद 'रामभजन' ही शेष बचता है।" कहकर फिर हंस पड़ी और लगातार कुछ देर तक हंसती रही। सिर पर आशीर्वाद देते समय जाने क्यों मन बहुत गहरे डूब गया।

मार्च का महीना था, इम्तहानों का मौसम। दम मारने का भी अवकाश कहां! नहाकर निकला ही था कि पत्नी ने बताया, "अंजना की प्रिंसिपल का फोन था, अंजना अस्पताल में भरती है, हालत काफी सीरियस है, शायद ब्रेन कैंसर..." मैं पूरी बात हजम नहीं कर पाया। ऐसा लगा, ब्रेन कैंसर उसे नहीं मुझे ही हो रहा है। पत्नी ने धीरज से कहा, "देखो यहां का मैं सब संभाल लूंगी, तुम चले जाओ। इस संसार में उस बेचारी का है ही कौन, न जाने कितना कष्ट होगा उसे!" और उसका गला भर आया। चलते वक्त पत्नी ने कुछ रुपये दिये, पता नहीं क्या जरूरत लग जाए। लेकिन मुझे लग रहा था, ये रुपये सही सलामत वापस आ जाएंगे। शायद मेरे पहुंचने से पहले ही वह दमतोड़ चुकी होगी। क्या-क्या सोचा होगा मरते वक्त...गाड़ी

स्लिम वैज्ञानिकों की देन

स्थान बना हुआ है और जिसने भौतिक-शास्त्रीय ज्ञान के भंडार में वास्तव में कुछ अपना योगदान किया है। वह व्यक्ति था अल-हसन (९६५ ई.–१०३८ ई.) जिसे अन्य अनेक मुसलिम विद्वानों की तरह बाद की पीढ़ियों ने उनकी रचनाओं के पहले लातीनी और फिर अन्य यूरोपीय भाषाओं में किये गये अनुवादों के माध्यम से 'अलहैजेन' के नाम से जाना-पहचाना है।

वह अपने वैज्ञानिक कार्यों में लगा रहा। उसने गणित और भौतिकी के प्राचीन ग्रंथ का अरबी में अनुवाद ही नहीं किया, बल्कि इन दोनों विषयों पर कुछ मौलिक रचनाएं भी तैयार कर डालीं। भौतिकी में भी उसका मुख्य कार्य प्रकाशिकी (ऑप्टिक्स) के संपूर्ण विषय में था, जिसमें सामान्य भौतिक अथवा प्राकृतिक प्रकाश और नेत्रों का प्रकाश अर्थात दृष्टि, दोनों ही शामिल थे। वैज्ञानिक इतिहास में आज भी इसी क्षेत्र में किये गये योगदान के लिए उसका महत्त्वपूर्ण स्थान बना हुआ है।

'किबुल मनाजिर' में अल-हसन ने यूक्लिड और टॉलमी--जैसे शीर्षस्थ यूनानी विद्वानों के इस सामान्यतः सर्व-मान्य एवं प्रचलित दृष्टि-संबंधी मत का खंडन किया है कि प्रकाश-किरणें अथवा दृष्टि की किरणें आंखों से निकलकर किसी दिखनेवाली वस्तु अर्थात दृष्टि-लक्ष्य पर पड़ती हैं और तभी वे आंखें उस वस्तु को देखती हैं।

पुराने सिद्धांत को इस वैज्ञानिक ढंग से काट चुकने के बाद उसने अपना यह सिद्धांत अथवा मत प्रतिपादित किया कि जिसे दृष्टि या देखना कहते हैं, वह किसी दृश्य, दृष्टिगोचर अर्थात दिखने-वाली वस्तु से निकलकर आंख तक जाती है। अर्थात, प्रकाश-किरणों या दृष्टि-किरणों का उद्गम या स्रोत आंखें न होकर स्वयं वे दृश्य या दिखनेवाली वस्तुएं होती हैं। इब्न सिना और अलबेरुनी-जैसे विद्वानों ने उसी के मत का समर्थन किया, यद्यपि यह समर्थन न होकर वास्तव में उनके स्वतंत्र चिंतन-अध्ययन का परिणाम था।

यहां यह ज्ञातव्य है कि अलहसन का यह मत आज भी सैद्धांतिक रूप में सही माना जाता है और आधुनिक प्रका-शिकी में 'अलहैजेन्स प्राब्लेम' (अलहसन की समस्या) के रूप में आज भी उसका नाम जीवित है। वह समस्या यह थी: "गोलाकार अवतल (कॉन्केव) लेंस

या गोल घेरे के भीतर एक बेलनाकार (सिलिंड्रिकल) या शंक्वाकार दर्पण में (पर) उस बिंदु का पता लगाना जहां से किसी निश्चित स्थिति की कोई वस्तु किसी निश्चित स्थिति की आंख पर परार्वातत या प्रतिबिंबित हो ।" इसमें अतिशयोक्ति नहीं कि बाद में जो तरह-तरह की खुर्दबीनें, दूरबीनें और कैमरे आदि बने उनकी सैद्धांतिक आधारशिला रखने का श्रेय अलहसन को ही था।

दृष्टि-संबंधी पक्ष के अलावा, अल-हसन ने भौतिक अथवा प्राकृतिक प्रकाशिकी के व्यापक विषय का भी अध्ययन किया और सामान्य प्रकाश, सांध्य-प्रकाश, इंद्र-धनुष, प्रभामंडल, छायाओं, ग्रहणों, आतशी शीशों तथा गोलीय एवं परवलयिक दर्पणों पर भी उसने पुस्तकें लिखीं।

उसके अनुसार सामान्य प्रकाश एक प्रकार की आग है जो वायुमंडल की गोलाकार सीमा अर्थात क्षितिज पर परार्वातत या प्रतिबिंबित होती है। आतशी शीशों के बारे में उसके अध्ययन काफी मौलिक और महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि इसी क्षेत्र में किये गये अपने अध्ययन-प्रयोगों के फल-स्वरूप उसने लेंसों की वर्तन-क्षमता को मापने की एक विधि की खोज की जिसकी माप-इकाई को डायोप्टरीय और विधि को डायोप्टरीय विधि कहा जाता है।

ग्रहणों पर किये गये उसके अध्ययन से पता चलता है कि सूर्यग्रहण के दौरान जब सूर्य की अर्ध-चंद्र अवस्था होती है तब के उसके आकार एवं रूप के प्रे[illegible] लिए उसने अपने घर की एक [illegible] की किवाड़ी में छोटा-सा बारीक [illegible] बनाया था जिससे होकर सूर्य का प्र[illegible] उसके सामने की दीवार पर पड़ता [illegible] जिसे हम आज 'कैमरा ऑब्सक्यूरा' [illegible] 'तमोकक्ष कैमरा' कहते हैं, उसके [illegible]ष्कार का यह सर्वप्रथम प्रयास था [illegible] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आधु[illegible] तमोकक्ष कैमरे का आदि-आविष्का[illegible] अल-हसन ही था।

विज्ञान के अन्य विषयों की [illegible] भौतिकी के मामले में अरबों में कोई [illegible] दूसरा वैज्ञानिक नहीं हुआ जो अल-ह[illegible] के काम को और आगे बढ़ाता। हां, [illegible] लंबे काल के बाद १३ वीं सदी के [illegible] और १४ वीं के आरंभ में हमें फा[illegible] के कमालुद्दीन के संबंध में अवश्य [illegible] चलता है जिसे किसी हद तक उ[illegible] अनुयायी या उत्तराधिकारी कहा [illegible] सकता है। कमालुद्दीन ने तमोकक्ष कैम[illegible] से संबंधित अल-हसन के प्रयोगों [illegible] केवल दुहरा-दुहरा कर परीक्षा ही [illegible] की बल्कि उनमें कुछ सुधार भी किये। [illegible] नहीं, इसने वर्षा-बिंदुओं के भीतर [illegible] प्रकाश अर्थात सूर्य-किरणों की वर्त[illegible] क्रिया का विस्तार से अध्ययन भी कि[illegible] और इसके परिणामस्वरूप वह प्राथमि[illegible] तथा द्वितीयक इंद्रधनुषों की उत्पत्ति [illegible] व्याख्या करने में भी सफल हो सका।

—सी-८६१, महानगर, लखनऊ-२२६०[illegible]

छोटा-सा आकाश

• सुरेन्द्र अरोड़ा

सारी बात तय हो गयी थी। वह बहुत खुश था। दिल्ली-जैसे शहर में अपना कन्वेयन्स तो होना ही चाहिए। बस की अंतहीन लाइनों में खड़े रहने-वाला कोई जिंदगी है यह! अब अगले महीने तक उसके पास अपना स्कूटर होगा। कितनी खुशी की बात है। आज वह दफ्तर जाकर सबसे पहला काम यह करेगा कि अपने अफसर को बताएगा कि उसका स्कूटर आ गया है, बस की लंबी क्यू में खड़े-खड़े उसने सोचा। घड़ी देखी, 'सवा नौ हो गये? क्या मजाक है, अभी तक बस ही नहीं आयी? दफ्तर की स्पेशल का यह हाल है तो और बसों का क्या हाल होगा' क्यों साहब?" उसने अपने आगे खड़े गंजे व्यक्ति से कहा। गंजे व्यक्ति ने उसकी ओर देखा पर कोई उत्तर नहीं दिया। 'अजीब आदमी है!' उसने सोचा और फिर सड़क की ओर देखने लगा। दूर तक बसें नजर आ रही थीं, पर उसकी बस कहीं नहीं थी। 'चलो एक डेढ़ महीने की ही तो बात है, छुटकारा मिल जाएगा इन बसों से।' उसने सोचा और एक लंबी सांस खींची। 'पर ये स्कूटर की कंपनीवाले भी अजीब आदमी हैं, पांच साल बाद नंबर आया तो कहते हैं कि एक महीने बाद स्कूटर

देंगे। अरे, कोई मुफ्त तो ले नहीं रहे हैं। आ गया है तो देते क्यों नहीं, तरसाते क्यों हैं, भला कोई बात हुई !' उसने आगे सोचा, फिर कल्पना करने लगा, स्कूटर पर चलता हुआ वह कैसा लगेगा। उसे लगा, वह स्कूटर पर सवार है। चला जा रहा है। एक्सिलेटर दबा दिया है, ऐ! ये पचास, ऐ! ये साठ, अस्सी...

"अरे साहब, बढ़िए ना, देखते नहीं बस आ गयी है।" उसके पीछे खड़े व्यक्ति ने उसे कुहनी मारी। "आं!" वह चौंका और आगे बढ़ने लगा। बस में काफी भीड़ थी। लोग उसके ऊपर लदे आ रहे थे। धक्के लग रहे थे और वह बार-बार अपने कपड़ों की क्रीज ठीक कर रहा था। आखिर उससे रहा नहीं गया तो उसने कहा, "अरे साहब! ठीक से खड़े होइए न, ऊपर क्यों चढ़े आ रहे हैं?" "ठीक से तो खड़े हैं, बस का धक्का लगता है तो क्या..." साथवाले व्यक्ति का वाक्य अभी पूरा भी नहीं हुआ था कि पीछे से आवाज आयी, "भीड़ से इतनी ही चिढ़ है तो टैक्सी में सफर किया करो।" और एक साथ तीन-चार व्यक्ति जोर से हंस पड़े। उसने क्रोध से पीछे की ओर घूरकर देखा और उसका जी हुआ कि वह कहे, "टैक्सी में नहीं, अपने स्कूटर पे जाया करेंगे प्यारे! तुम्हारी इस खटारा बस की बगल से फर्र-से स्कूटर निकाल ले जाया करूंगा। तुम देखते ही रह जाओगे।"

"चलिए आगे बढ़िए ना, क्या सोच रहे हैं?" पीछेवाले ने उसे कुहनी मारी।

"आं!" वह चौंक पड़ा और उसने पीछे खड़े व्यक्ति की ओर ऐसे घूरा, जैसे उसे कच्चा ही खा जाएगा। "जाने क्या समझते हैं अपने को..." और वह बड़बुदाता हुआ आगे बढ़ गया।

अचानक बस को एक धक्का लगा और बस रुक गयी। उसने खिड़की से झांककर देखा, सामने चौराहे पर लाल बत्ती हो गयी थी। बस के आगे कारों के साथ-साथ कई स्कूटर खड़े थे। उसने स्कूटरों का मुआयना किया, क्रीम कलर, हरा, नीला, गहरा आसमानी, हलका आसमानी... वह हलका आसमानी ले लेगा। हरा, क्रीम, नीला—सब वाहियात रंग हैं। उसने निश्चय किया, वह आज ही अपने पिता को चिट्ठी लिखेगा कि हलके आसमानी रंग के अलावा कोई और रंग न लें। इसी बीच बस चल पड़ी थी। उसने फिर खिड़की से झांककर देखा, उसके दफ्तर का स्टॉप आ गया था। बस से उतरकर वह दफ्तर की ओर बढ़ रहा था। सड़क पर जाते हुए स्कूटरों को देखकर उसे लग रहा था कि वह भी स्कूटर पर सवार है, उड़ रहा है। उसकी आंखों में खुशी झलक रही थी। वह बढ़ता जा रहा था। अचानक पीछे से किसी ने हाथ दिया, उसने देखा, दफ्तर का शर्मा था।

"ओ हलो, शर्मा।"

"आओ भई, दफ्तर जा रहे हो ना?" शर्मा ने कहा।

"नहीं भाई, तुम चलो, सामने ही तो दफ्तर है, मैं पैदल ही चला जाऊंगा।" उसने कहा। दरअसल स्कूटर के पीछे बैठने का उसका मन नहीं हो रहा था।

"अरे आओ ना यार। आज क्या हो गया है ?"

शर्मा के स्कूटर की पिछली सीट पर बैठा हुआ वह स्वयं को बड़ा तुच्छ-सा महसूस कर रहा था।

दफ्तर का स्कूटर-स्टैंड आ गया था। उसकी आंखें शर्मा के प्रत्येक हाव-भाव को देख रही थीं। शर्मा का गागल्स उतारना, स्कूटर को स्टैंड पर रखना, सब उसे बड़ा प्यारा लग रहा था। एक दिन उसका स्कूटर यहीं खड़ा होगा, शर्मा के स्कूटर के ठीक साथ, उसने सोचा और मुसकरा उठा। दोनों धीरे-धीरे चल रहे थे। शर्मा के एक हाथ में धूप का चश्मा था और दूसरे हाथ में चाभियों का छल्ला, जिसे वह घुमाता जा रहा था।

"तुमने यह चश्मा कितने में लिया ?" उसने शर्मा से पूछा।

"अठारह रुपये में।"

"अच्छा है। मुझे भी लेना है। मेरा स्कूटर आ रहा है न !" उसने कहा।

"अच्छा ! मुबारक हो। कौन-सा है ?"

"वैस्पा है। फादर तो लैम्ब्रेटा के लिए कह रहे थे, मैंने ही कहा कि वैस्पा अच्छा होता है। तुम्हारा भी तो वैस्पा है ना ?"

"तो फिर मिठाई हो जाए।"

"जरूर।"

"अच्छा भाई चलें, अब कुछ काम करें।"

आत्मकथ्य

वर्तमान व्यवस्था ने लेखकीय स्वतंत्रता पर प्रश्नचिह्न लगा दिया है। बहुत छोटा था तो समस्त रचना-विधान के प्रति मन में 'क्यों' और 'कैसे' की भावना पलती रही। और विशेष रूप से इस 'क्यों' और 'कैसे' का जब कहीं से कोई तर्कसंगत उत्तर नहीं मिला तब मन में एक कुरेदन-सी पैदा हुई, जिसके प्रेरणास्वरूप मन में साहित्य के प्रति अदम्य रुचि जाग्रत हुई। जीवन में व्याप्त एक बिखराव, टेंशन और यांत्रिकता की प्रत्येक अनुभूति अपने आप में एक कहानी होती है। इन विसंगतियों को मैंने भरसक अपनी कहानियों में उतारने की कोशिश की है। रही परिचय की बात तो १९४० में जन्म, लखनऊ विश्वविद्यालय से एम.ए. (हिंदी), फिर पांच वर्ष तक केंद्रीय हिंदी निदेशालय से संबद्ध। आजकल केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो से संबद्ध हूं। एक प्रतिनिधि हिंदी कहानियों के संकलन 'अकहानी' का संपादन किया और 'आग का जंगल' और 'आबनूस' दो कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं।

"अच्छा।"

अपने सैक्शन में आकर सबसे पहले वह अपने अफसर के पास गया और उसे अपने स्कूटर के आने का समाचार दिया "सर, मेरा स्कूटर आ रहा है।"

"बधाई हो! कब तक आ रहा है?" अफसर ने अंगरेजी में पूछा।

"जल्दी ही। कंपनी से चिट्ठी तो आ गयी है। एक महीने बाद डिलीवरी देंगे।"

"पर आपकी तो 'पे' इतनी नहीं है! आपको स्कूटर एलाट कैसे हो सकता है?" अफसर ने इस अंदाज में पूछा, जैसे उन्हें विश्वास न आ रहा हो।

"जी नहीं। मेरा नहीं, मेरे फादर का स्कूटर आ रहा है। वह अब इस एज में स्कूटर क्या चलाएंगे? उन्होंने कह दिया है कि स्कूटर मुझे दे देंगे।" उसकी आंखों में खुशी छलक रही थी।

"तो क्या पेट्रोल का खर्चा भी आपके फादर देंगे! इट इज सो कॉस्टली!" अफसर के स्वर में व्यंग्य था।

उसका मन हो रहा था कि वह अफसर से पूछे कि स्कूटर का रंग हल्का आसमानी ठीक रहेगा कि नहीं, पर वह निरुत्तर हो गया था और उसकी आंखें बुझ गयी थीं। वह कुरसी से उठकर खड़ा ही हुआ था कि अफसर ने पूछा, "आपने बजट के स्टेटमेंट्स बना लिये? इट इज अर्जेंट।"

"जी आज तैयार हो जाएंगे," उसने कहा और मन ही मन बुदबुदाया, 'इस सा

को हर वक्त काम की ही सूझती है।'

"तो जाइए! काम पर लग जाइए।"

"जी!" और वह अपनी सीट पर आकर बैठ गया और सोचने लगा, 'हूं! कहता है, इट इज कास्टली। अबे होगा तेरे लिए, जिसके पीछे पूरी पलटन की पलटन है खिलाने के लिए। मेरे पीछे कौन है। खानेवाला भी मैं, खिलानेवाला भी मैं, और फिर जहां इतना झेल रहे हैं, ये भी झेलेंगे। जब सिर पर पड़ेगी देखी जाएगी। अभी स्कूटर तो आये। पर तू अपनी पलटन को खिलाएगा या स्कूटर को! देखता हूं, साइकिल पर न आ गया तो मेरा नाम बदल देना।'

दिन भर वह दफ्तर के प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्कूटर के बारे में बताता रहा। दिन में आज चाय पर उसके चार रुपये तीस पैसे खर्च हो गये थे। बजट के स्टेटमेंट तैयार न कर पाने पर शाम को अफसर ने उसे बहुत डांटा था। उसका मन हुआ था कि कहे, 'साले, आज तू अफसर हो गया तो रोब छांट रहा है, देख लूंगा तुझे भी। तेरे स्कूटर के साथ ही अपना स्कूटर खड़ा किया करूंगा।"

शाम को वह देर से घर पहुंचा और मकान-मालिक, अड़ोसी-पड़ोसियों सबको स्कूटर के आने की सूचना दी।

बड़ी उत्सुकता से पिता के पत्र की प्रतीक्षा कर रहा था। आज उसे पिता को पत्र लिखे हुए एक हफ्ता हो चला था। 'स्कूटर की डिलीवरी मिलने में बीस दिन बाकी हैं,' उसने सोचा। उसे ये बीस दिन बीस साल के बराबर लगे। आज दस हो गयी है। पहली तक पिताजी स्कूटर का पैसा जमा कराएंगे। दो या तीन को डिलीवरी मिलेगी। ठीक है, वह पहली से एक महीने की छुट्टी ले लेगा, पंद्रह बीस दिन तो स्कूटर सीखने में भी लग जाएंगे, फिर इलाहाबाद से स्कूटर दिल्ली ले आएगा, दिल्ली में चार-पांच दिन चलाने का अभ्यास कर लेगा, दिल्ली की भीड़ में स्कूटर चलाना कोई मजाक है क्या!
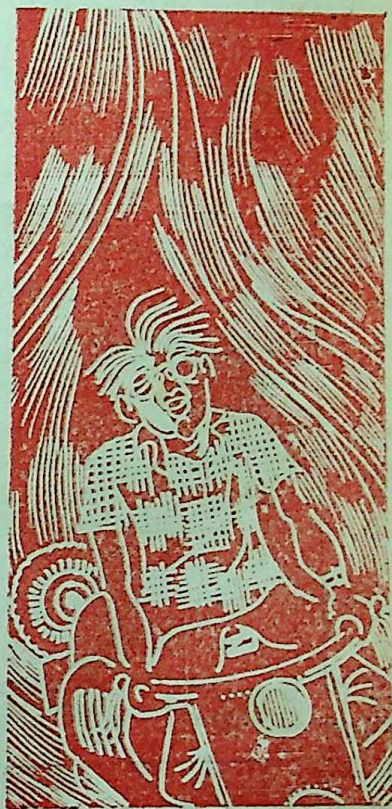
५०,००० रुपये के
इनाम जीतिए

पूरी जानकारी के लिये
बजाज विक्रेता से संपर्क करे

अंतिम तिथि ३१ अक्तूबर १९७४

बजाज — १९३८ से रोशनी की दुनियाका सरताज

heros'-BE-190 HIN

सब निश्चित हो गया था। छुट्टी भी स्वीकृत हो गयी थी। पर पिता का पत्र अभी तक नहीं आया था, आज चौदह तारीख हो गयी है . . .। पिताजी भी अजीब आदमी हैं, ऐसे मामलों में लापर-वाही करनी क्या ठीक होती है! दो-दो खतों में से जवाब एक का भी नहीं, कोई बात हुई। डाकिये को अपने घर की ओर बढ़ता हुआ देख उसकी आंखों में चमक आ गयी थी।

"आपका तार है साहब।"

'फादर सीरियसली इल। रीच सून।' पढ़कर तार उसके हाथों से छूट गया, 'क्या हो गया पिताजी को . . . पंद्रह दिन शेष रह गये हैं, पिताजी को भी अभी ही बीमार होना था। या मेरे ईश्वर!' उसने झुंझलाकर तार फेंक दिया और आंखें बंदकर चारपाई पर लेट गया। उसे अपना छोटा-सा आकाश बिखरता-सा लगा। उसकी बंद आंखों में बीमार पिता की आकृति घूमने लगी। लेटे हुए पिता की। उसे लगा, पिता का सिर स्कूटर की हैड-लाइट है, बांहें हैंडल हैं, कांपती हुई टांगें पहियों में बदल गयी हैं और उसकी पस-लियां और देह स्कूटर की पूरी बॉडी है, पिता का पूर्ण अस्तित्व जैसे स्कूटर में परि-वर्तित हो गया है। उसकी आंखों में पिता नहीं, लेटा हुआ स्कूटर घूम रहा था। हलके आसमानी रंग का . . .

—ई. जी. ४०, इंद्रपुरी,
नयी दिल्ली-११००१२

तू स्वयं मंदिर

प्यास गहरी हो स्वयं में तृप्ति है
तृप्ति बाहर से कहीं आती नहीं

प्रश्न का उत्तर मिलेगा तब कि जब तुम
पूछने में प्रश्न खुद बन जाओगे
और वह संगीत जन्मेगा तभी
गीत बनकर गीत जब तुम गाओगे
साधना तो सिद्धि का पर्याय ही है
सिद्धि बाहर से कहीं आती नहीं।

आत्म-दर्शन-द्वार पूरा खोल दे,
प्राप्ति की प्रेयसि उसी से आएगी
छोड़ दे ओढ़े अहं के आवरण को
मुक्ति तेरी अंकिनी हो जाएगी
तू स्वयं मंदिर, स्वयं ही वंदना है
मूर्त्ति बाहर से कहीं आती नहीं

पूर्ण एवं शून्य में अंतर नहीं कुछ
एक ही स्थिति के प्रकट दो रूप हैं
एक ही सागर समाया है अतल में
दूर से देखो, तभी दो कूप हैं
दृश्य-दृष्टा में नहीं मध्यस्थ कोई
दृष्टि बाहर से कहीं आती नहीं

—'तन्मय' बुखारिया
ललितपुर (झांसी) उ. प्र.

दही खाइए : दिल बचाइए

विज्ञान
नयी उपलब्धियां

दही खाइए और दिल के दौरे को दूर भगाइए। 'न्यूयार्क टाइम्स' में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार दही में एक ऐसा पदार्थ होता है, जो रक्त में कोलेस्ट्राल को कम कर दिल के दौरे रोकता है। कोलेस्ट्राल एक चर्बीयुक्त पदार्थ है जो हृदय की ओर जानेवाली रक्त-शिराओं को रुद्ध कर देता है, फलतः हृद-रोग हो जाता है। इस संबंध में शोध करनेवाले अमरीका के प्रोफेसर जॉर्ज वी. मान का कहना है कि ताजे दूध की भांति दही में भी कोलेस्ट्राल होता है पर उपयोग के बाद यह दही ही शरीर में कोलेस्ट्राल की रचना में गिरावट लाता है।

प्रोफेसर मान का अनुमान है कि दही का बैक्टीरिया एक ऐसे पदार्थ की रचना करता है, जो लिवर में कोलेस्ट्राल का बनना रोक देता है।

दही के इस विलक्षण गुण का पता अमरीका की किसी प्रयोगशाला में नहीं बल्कि अफ्रीका के जंगलों में रहनेवा[ले] मसाई जाति के एक समूह की जांच [से] लगा। हालांकि मसाई लोगों का भो[जन] मुख्यतः पशुओं का मांस होता है [पर] उसमें कोलेस्ट्राल की मात्रा भी बहुत अधि[क] होती है, पर मसाई-भोजन के साथ दही [का] भी भरपूर उपयोग करते हैं अतः वे दिल [के] दौरे के शिकार नहीं हो पाते।

संधिवात के रोगियों के लि[ए]

संधिवात और जोड़ों में सूजन [की] बीमारी आम तौर पर सभी अवस्था [के] लोगों में पायी जाती है। इस बीमारी [में] शुरू-शुरू में थकान, अकड़न और पी[ड़ा] अनुभव होती है और फिर एकाएक अंग[ों] के जोड़ों में तेज दर्द के साथ सूजन [और] ललाई आ जाती है। यदि समय [पर] इलाज न किया गया तो इस रोग [का] फेफड़ों, त्वचा, रक्त-शिराओं, मां[स]पेशियों, प्लीहा, हृदय तथा आंखों पर [भी] बुरा प्रभाव पड़ सकता है। कभी-कभी [तो] रोगी अपंग, अशक्त हो जाता है। संधिवा[त] और जोड़ों की सूजन के लिए अभी तक [कोई] एक रामबाण औषधि का आविष्का[र] नहीं हुआ है फिर भी पश्चिमी देशों [में] सर्जरी के माध्यम से ऐसे हजारों रोगि[यों] को, जो इस रोग के कारण अपंग हो [चुके] थे, ठीक किया जा रहा है।

सर्जरी की सहायता से कंधों, एड़ि[यों] आदि के रोगग्रस्त जोड़ों के स्थान [पर]

सिलास्टिक नामक पदार्थ के बने नकली जोड़ लगा दिये जाते हैं। इसी तरह लंदन के इंपीरियल कालेज ने एड़ियों के संधिवात-ग्रस्त जोड़ों के लिए नये जोड़ तैयार किये हैं।

हलका-फुलका एयर कंप्रेशर

अमरीका की एक फर्म ने ऐसा हल्का-फुलका एयर कंप्रेशर बनाया है, जिसे आसानी से कहीं भी ले जाया जा सकता है। इस एयर कंप्रेशर के कई फायदे हैं। कारवालों के लिए यह बेहद उपयोगी है। इसकी सहायता से वे मिनटों में अपनी कार के पहियों में हवा भर सकते हैं। इसके निर्माता हैं — वेब्स्टर मैन्यूफैक्चरिंग कंपनी, १०२८ सेंट्रल एवेन्यू विल मेटे, इलिनॉयस ६००९१ (यू. एस. ए.)

मूक होइ वाचाल

जापान के मेजी विश्वविद्यालय ने एक ऐसा यंत्र बनाया है, जिसकी सहायता से अब गूंगे व्यक्ति भी 'बोल' सकते हैं। इस इलेक्ट्रानिक यंत्र में एक कुंजी-पटल होता है। गूंगे व्यक्ति को जो शब्द बोलना होता है, वह उसे कुंजी-पटल की कुंजियां दबाकर टाइप-जैसा करता है और यह अद्भुत यंत्र उस शब्द का 'उच्चारण' कर देता है।

नया थर्मामीटर

यह कोई टेप-रिकार्डर नहीं, वरन एक नये प्रकार का थर्मामीटर है, जिसकी सहायता से किसी भी रोगी का तापमान सेकंडों में मालूम किया जा सकता है। इस थर्मामीटर में एक जांच-नली होती है। उसे रोगी के मुंह में रखते ही एक ध्वनि अधिकतम तापमान का संकेत करती है। इसके साथ ही तापमान परदे पर अंकित भी हो जाता है।

एयर कंप्रेशर : कार में हवा भरते हुए — नया थर्मामीटर

सौर ऊर्जा से बिजली

इक्कीसवीं शती में सौर ऊर्जा से संसार के लिए आवश्यक बिजली प्राप्त की जा सकेगी। मेसाच्यूट्स इंस्टीट्यूट ऑव टेक्नालॉजी की लिंकन प्रयोगशाला

के सह-निर्देशक वाल्टर ई. मॉरो, जूनियर के अनुसार यदि अमरीका सड़कों के लिए उपयोग में लायी गयी भूमि का दो प्रतिशत हिस्सा सौर ऊर्जा-संग्रहकों के लिए प्रयोग में लाये तो वह बिजली की अपनी मौजूदा आवश्यकताओं को आसानी से पूरा कर सकता है।

सूचिवेध

एक्यूपंक्चर अथवा सूचिवेध तरह-तरह के दर्द दूर करने का एक पुराना तरीका है। चीन में इस तरीके से, जिसमें शरीर में सुइयां चुभोयी जाती हैं, सिरदर्द, ऐंठन और आलस्य लानेवाली बीमारियां दूर की जाती हैं। अब सोवियत संघ में इस तरह की शल्य-चिकित्सा में सुइयों के स्थान पर लेसर-किरणों का प्रयोग किया जा रहा है। लेसर पंक्चर को हानि-रहित बताया गया। इसमें रोगी को दर्द का भी अनुभव नहीं होता है। लेसर-पंक्चर की उपयोगिता के संबंध में शोध किया जा रहा है।

ठंडे पेय पदार्थों का नया यंत्र

अमरीका में ठंडे पेय पदार्थ सुलभ करनेवाला एक ऐसा नया स्वचालित यंत्र विकसित किया गया है, जिससे ग्राहकों को चार प्रकार के शीतल पेय तथा सोडा आसानी से मिल सकेगा। इस यंत्र के विकास से कारबोनेटर पंपों की उपयोगिता समाप्त हो गयी है। शीतल पेय सुलभ करने वाले इस स्वचालित यंत्र का नाम 'मेवरिक-के-२' है और यह ६० डिग्री फारेनहाइट तापमान में एक घंटे में ३५० शीतल पेय सुलभ कर सकता है। स्कूलों, थियटरों और कैफटेरियों के लिए यह यंत्र बहुत उपयुक्त है। चार प्रकार के शीतल पेय सुलभ करने वाले इस यंत्र का मूल्य लगभग १,००० डालर है और इसका निर्माण टैक्सास की एक फर्म 'ब्रूथ इनकार्पोरेटेड' ने किया है।

परास्वनिक ध्वनि

लंदन के इंस्टीट्यूट ऑव कैंसर और सटन (सरे) स्थित रॉयल मार्सडेन अस्पताल में यकृत (लिवर) में उत्पन्न हो जानेवाली ग्रंथि (ट्यूमर) का पता लगाने के लिए परास्वनिक ध्वनि (अल्ट्रासॉनिक साउंड) का प्रयोग किया जा रहा है। यकृत की ग्रंथि का शुरू-शुरू में पता लगाना काफी कठिन होता है, पर परास्वनिक ध्वनि की सहायता से इस ग्रंथि का बिलकुल प्रारंभिक अवस्था में पता लगाया जा सकता है। इस अवस्था में ग्रंथि का पता लगाने पर उसका औषधियों से ही इलाज किया जा सकता है। इस नयी जांच-पद्धति में परास्वनिक ध्वनि की धारा शरीर के संबंधित हिस्सों पर फेंकी जाती है जिससे उस हिस्से के तंतुओं की रचना के बारे में अत्यंत विस्तृत जानकारी मिल जाती है। कैंसर का पता लगाने में इस जानकारी का विशेष महत्त्व है।

प्रवेश

"लेखन संवेदनशील हृदय की विवशता समझता हूं। संघर्ष-मय जीवन के कतिपय क्षण ही प्रेरक हैं। अधिक दुःख, अधिक सुख दोनों ही बोझ हैं, जिन्हें पंक्तिबद्ध कर संतोष अनुभव करता हूं। भावाभि-व्यक्ति के मेरे प्रिय माध्यम कविता और कहानी हैं। अनु-भूति एवं तज्जन्य उपलब्धियों को 'कादम्बिनी' द्वारा सार्व-जनिक बनाने का प्रयास।"

कल्पना के अधर

कल्पना! तुम्हारे अधर छली

हंसती हुई लहर पर मैंने
कल्पना-नाव को तैराया
भ्रम में नाविक हार गया पर
कूल न छूने पाया
जान न पाया प्रात-पथिक
कब जीवन की सांझ ढली

मन-मराल ने सोचा, चुग लूं
हरी घास पर बिखरे मोती
सिसक पड़ा विश्वास मगर
प्रच्छन्न हुए निखरे मोती
ठगी बुद्धि गंतव्य ढूंढ़ने
सपनों के ही गांव चली

सोचा, हर पल मुखरित कर
जीवन का हार पिरो लूं
तन-साधन से जीवन-रज में
उपलब्धि-बीज कुछ बो लूं
टूट गयी सांसों की डोरी
माला पूरी बिखर चली

बिना कफन के सब इच्छाएं
जीवन कब्रस्तान हुआ
गम न चुका, आंसू पर सूखे
मन भी रेगिस्तान हुआ
मुसकाने की चाह लिये
जाने कैसे यह पीर पली

—शीतलाप्रसाद पाण्डेय

—पूरे बाबू पट्टी, प्रतापगढ़ (उ.प.)

मेरे संस्मरण : ८

एक-एक झलक

● वियोगी हरि

छपाई बहुत बढ़िया हो, यह उनका बड़े-से-बड़ा शौक और सपना था । सौंदर्य का दर्शन वे मुद्रण-कला में पाते थे । साहित्य-रसिक तो थे ही । उनको मैं 'प्रेम का पुजारी' कहा करता था । वस्तुतः वे प्रेमी जीव थे। इलाहाबाद में उनसे मेरी १९२० में पहली भेंट हुई थी। 'प्रेम-पथिक' नाम की 'शिखरिणी छंद' में एक रूपकात्मक पुस्तक मैंने लिखी थी। तलाश में था किसी ऐसे प्रकाशक की जो उसे किसी अच्छे प्रेस में छपा दे। मेरे एक मित्र ने उनसे कहा और वे तैयार हो गये। 'प्रेम-पथिक' प्रकाशित हो गयी। बढ़िया कागज था और कलापूर्ण मुद्रण। मेरे हर्ष की सीमा न रही इसलिए भी कि वह पहली रचना थी। प्रेम-विषयक मेरी एक या दो रचनाएं और भी उन्होंने प्रकाशित की थीं, जिनके नाम भी आज याद नहीं आ रहे। 'प्रेम-पथिक' तो कभी का अप्राप्य है । बंधुवर गुलाबरायजी की 'फिर निराशा क्यों?' पुस्तक उन्होंने ही प्रकाशित की थी।

वे थे मेरे मित्र आरा-निवासी देवेन्द्रकुमार जैन।

● छतरपुर में हाईस्कूल से निकलने

के बाद मैं उनसे प्रायः रोज मिला करता था। विवेकानंद और रामतीर्थ के ग्रंथ पढ़ता और उनके साथ वेदांत पर चर्चा किया करता था। आयु में वे मुझसे कोई ७ वर्ष बड़े थे। दर्शन-शास्त्र के ऊंचे विद्वान थे वे। पौर्वात्य एवं पाश्चात्य दोनों दर्शनों में उनकी खासी पैठ थी। रूप और पहनावा भी फिलॉसफर के ही अनुरूप था। दर्शनों को अध्ययन एवं लेखन के साथ-साथ ललित साहित्य के भी वे रसिक तथा लेखक थे। नम्रता उनमें इतनी अधिक थी कि जब अपना एक लेख 'सरस्वती' में प्रकाशनार्थ भेजा तो आचार्य द्विवेदीजी ने यह लिखकर उसे लौटा दिया कि 'अभी कुछ

बाबू गुलाबराय
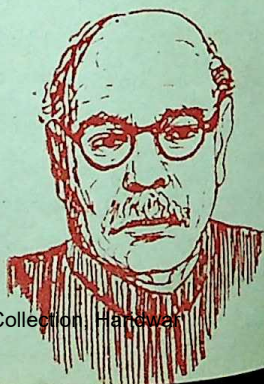
दिन और कलम मांजिए,' तब इन पंक्तियों से भी उनको निराशा नहीं हुई, किंतु प्रोत्साहन ही मिला। फिर तो वे आचार्य-पद तक पहुंच गये। कितनों का ही उन्होंने मार्ग-दर्शन किया और मिट्टी को भी सोने में बदल दिया।

दिल्ली में जब भी आते बिना मिले नहीं रहते थे। बहुत पुरानी बातों पर रस-पूर्वक चर्चा करते थे। उनके निधन से आगरा के साहित्यिक क्षेत्र में जो रिक्तता आ गयी उसका भरा जाना संभव नहीं दीख रहा।

वे थे मेरे आदरणीय बंधु बाबू गुलाबराय।

● बंबई में पहली ही बार मैं गया था और उनके निवास-स्थान पर पांच-सात दिन ठहरा था। उनके साथ आत्मीयता तुरंत हो गयी। मूल-निवासी वे सागर जिले के थे। घर में और मेरे साथ बात करते थे बुंदेलखंडी में। वेश-भूषा और रहन-सहन इतना सादा कि देखकर पता नहीं चलता था कि यह आदमी, स्कूली शिक्षा मिडिल तक पाकर इतना बड़ा विद्वान कैसे हो सकता है! द्विजेंद्रलाल राय को और प्रेमचंद्र को हिंदी-जगत में प्रकाश में लाने का श्रेय उन्हें ही मिला था। न जाने कितने रत्नों को उन्होंने खोजा और चमका दिया। जैन वाङ्गमय के अनेक ग्रंथों की शोध की और संपादन और सुंदर प्रकाशन भी। ग्रंथों का द्वितीय रत्नाकर उनके प्रयास से देखते-देखते बंबई नगरी

नाथूराम प्रेमी

में लहरा उठा। पर मेरा ध्यान तो उनके सहज व्यक्तित्व और साधु-चरित पर ही सदा केंद्रित रहा है।

वे थे मेरे मित्र नाथूराम प्रेमी।

● छतरपुर के हाईस्कूल में मैंने पांचवें क्लास में कोई पंद्रह-बीस दिन उनसे अंगरेजी पढ़ी थी। स्कूल में वे सेकंड मास्टर थे। फिर वे बनारस चले गये, और वहां के साहित्यिक क्षेत्र में देखते-देखते उनकी ख्याति चारों ओर फैल गयी। छतरपुर में तो वे अनगढ़ हीरा थे। बनारस में सान पर चढ़ते ही अनमोल बन गये। कुछ-कुछ याद आता है, जब वे छतरपुर के जन्मजात कवि गंगाधर व्यास के चरणों में बैठकर अलंकार-शास्त्र पढ़ा करते थे। व्यास और ईश्वरी ये दोनों बुंदेलखंड के लोकप्रिय कवि माने जाते हैं। यह सुनकर

कि उनका एक शिष्य बनारस में बड़ा प्रसिद्ध हो गया है व्यासजी फूले न समाये और आश्चर्य प्रकट किया।

वे सुकवि थे, सुलेखक थे और प्राचीन काव्यों के ऊंचे मर्मज्ञ और भाष्यकार थे। अनेक शिष्यों को उन्होंने रत्नों में परिणत कर दिया था। छतरपुर तो उनको बहुत करके भूल गया है, पर काशी में वे अपनी बहुमूल्य साहित्य-सेवाओं के कारण चिर-स्मरणीय बन गये हैं।

वे थे मेरे श्रद्धेय लाला भगवानदीन।

● चित्त कैसा ही खिन्न हो, उनके सामने आते ही प्रफुल्लित हो जाता था। उनकी बैठक में हास्य के फव्वारे सदा छूटते रहते थे। नयी-नयी व्यंग्यात्मक सूक्तियों और चुटकुलों से जहां भी वे होते वहां का वातावरण खिल उठता था। साहित्य की बारीकियों के वे अच्छे मर्मज्ञ थे। इलाहाबाद में जब भी उनसे मिलता, कुछ-न-कुछ साहित्य-रस लेकर ही आता था। मैंने जब अपने चंद साहित्यिक निबंधों का संकलन किया और उनको वह दिखाया तो खूब दाद दी, और कहा कि 'इस पुस्तक की भूमिका मैं तुम्हारे बिना कहे ही लिख देता हूं।' मुझे इससे बड़ा प्रोत्साहन मिला और मैं उनका स्नेहपात्र बन गया।
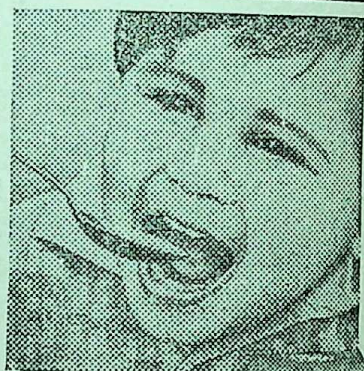
कलकत्ते में वे दलाली करते थे। पर मन तो साहित्य में ही रमा रहता था। अपने पेशे के महत्त्व की तारीफ यों किया करते थे :

"दो झूठों को सच्चा करना, खाना नमक-
हलाली का,
कहे कबीर, सुनो भाई साधो, पेशा भला
दलाली का!"

हास्य-रसावतार की उपाधि से अलंकृत यह थे पं. जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी।

● श्रद्धेय टंडनजी ने मुझे काशी भेजा था कि हिंदी-विद्यापीठ का उद्‌घाटन करने के लिए उनकी ओर से ऋषि-कल्प डॉ. भगवानदास से निवेदन करूं। मुझे मेरे जिन बंधूत्तम ने डॉ. भगवानदास से मिलाया, उनका मैं आज भी उसी रूप में स्मरण कर रहा हूं। उच्चकोटि के विद्वान थे वे। विज्ञान उनका प्रिय विषय था। साथ ही, दर्शन-शास्त्र के भी वे रसज्ञ थे। संस्कृत, फारसी और अंगरेजी के ऊंचे पंडित थे। किंतु मेरे ऊपर तो उनकी एक दूसरी ही छाप पड़ी थी। वह उनके निश्छल व्यक्तित्व की थी। बहुधा देखने में आता है कि एक वैज्ञानिक या तकनीकी या दार्शनिक पांडित्य के अभिमान में चूर होकर भगवद्-भक्ति की प्रायः उपेक्षा करने लगता है। मगर वे ऐसे नहीं थे। अनन्य राम-भक्त थे वे। घर में भगवान राम की प्रतिष्ठा कर नित्य दोनों समय पूजा-आरती किया करते थे। गांधीजी को भी एक बार घर पर दर्शन कराने वे ले गये थे। किंतु आश्चर्य होता है कि आखिरी दिनों में मृतात्माओं को बुलाने की ओर उनका ध्यान कैसे जाने लगा था! पूर्वजन्म पर उनका अडिग विश्वास था। मेरे सामने यह पहेली ही रही कि विज्ञान हस्तामलक का लेखक, वैज्ञानिक अद्वैतवाद का समर्थक और राम बादशाह के

लाला भगवानदीन

छह हुक्मनामों में रस लेनेवाला तथा हिंदुत्व का मनोयोगपूर्वक अद्‌भुत मंथन करनेवाला व्यक्ति आखिर कैसे उस ओर खिंच गया!

उनके जीवन के अंतिम दिन आर्थिक कष्ट में बीते। हिंदी-संसार की ओर से की जानेवाली उपेक्षा और अकृतज्ञता सुन और देखकर मन में वेदना होती है।

वे थे मेरे आदरणीय बंधु प्रो. रामदास गौड़। ●

समाधि लेख

कोई नहीं है तुम्हारे लिए
कोई नहीं है किसी के लिए
दुनिया निरी खुदगरज है

मरण पर हमारे कोई विकल बन
करुण गीत गाये व आंसू बहाये
मधुर याद में जिंदगी भर
सजल प्राण-दीपक जलाये
यह सोचना एक खाली मरज है
दुनिया बड़ी खुदगरज है

स्वयं को न दें व्यर्थ
इतनी महत्ता
समझ लें उचित
भ्रम--रहित हो
स्व-अस्तित्व की अर्थवत्ता
इसमें नहीं कुछ हरज है
जबकि
दुनिया निपट खुदगरज है

--महेन्द्र भटनागर
बालागंज, मंदसौर

कोहरे के वनों में

नींद को इस तरह बंद कमरे में कैदकर
कब तक जागते रहिएगा

हवा अगर नाराज है आपसे
तो मौसम को दोष किस तरह दीजिएगा

धूप से तो आप खुद भागते रहे
और कोहरे के वनों में जा खो गये
चांदनी से बहस खुद आपने की
और तिमिर के आगे सिर झुकाते गये

दूसरों से कहा आपने
बताओ तो जानें ध्रुव कहां खिला है
खुद खड़े रहे वहीं ज़हां थे
उसे टकटकी लगा निहारने के सिवा
और कुछ न बना आपसे

जो बढ़ गये आगे दिशा खोजते हुए
वे बादलों के संग खेले जी भर
इधर आप गाफिल कुछ ऐसे रहे
उषा आपसे मुंह फुलाकर चली गयी

--ललित सुरजन
६२५, गांधी मार्ग, जबलपुर-

जीवन ईश्वर की देन नहीं है ?

● जैकब ब्रोनोव्सकी

मनुष्य के विकास में जितना हाथ संस्कृति का है उससे कम प्रौद्योगिकी (टेक्नालॉजी) का नहीं है। मनुष्य का विकास सदा ही संस्कृति-संचालित रहा है और संचालन-घटक प्रौद्योगिकी रहा है। बेंजामिन फ्रैंकलिन के अनुसार मनुष्य औजार बनानेवाला जीव है। मनुष्य ने अपने अनुकूल परिवेश को आधुनिक बनाने और इंद्रियों की कार्य-कुशलता को अद्‌भुत रूप से विकसित करने के लगातार प्रयत्न किये हैं। अपनी छोटी-सी कालजयी रचना 'संसार, मांस और शैतान' में डेस्मांड बर्नाल ने भविष्यवाणी की है कि देर-सवेर शरीर के सामान्य विकास के साथ-साथ और अधिक बारीक यंत्र बनाये जाएंगे और शरीर के अंदर जीवन भर के लिए स्थापित कर दिये जाएंगे। हमने पहले तो आंखों पर चश्मा लगाना शुरू किया और अब 'कांटैक्ट लैंस' का प्रयोग भी करने लगे हैं। भविष्य में मानव-यंत्रों से भरा हुआ एक थैला-सा हो जाएगा। उसमें कुछ हिस्सा मांस होगा और बाकी हिस्से में यंत्र होंगे और सब कुछ केंद्रीय स्नायु-मंडल द्वारा संचालित होगा।

जीवन की विशेषताएं ईश्वर की देन नहीं हैं। मानव ने अपने विकास के साथ-साथ अपना मनचाहा जीवन पाया है। जीवन का उन्नयन स्वयं मनुष्य के ही प्रयास से हुआ है। निस्संदेह यदि मनुष्य अपने पूर्वजों से विरासत में मिली शक्ति और संतुष्टियों की ओर से आंखें मूंद ले तो वह निर्धन ही कहलाएगा। अन्य जीवों की अपेक्षा वह और भी लाचारगी की हालत में पहुंच जाएगा, अगर अपने उन्नत भविष्य के लिए संतुष्टियों का अनुसंधान न करे।

लगता है कि लोगों को यह कहा जाना पसंद है कि वे पशुओं की सार्वभौमिक पाशविकता के भागीदार हैं, शायद इसलिए कि ऐसा कहा जाना उन्हें अपने को मानवीय महसूस किये जाने की जिम्मेदारी से मुक्त कर देता है।

पिछले पचास वर्षों में अफ्रीका में जो जीवाश्म (फासिल) पाये गये हैं, वे एक तरह से उन बातों के दस्तावेज हैं जिन्होंने हमें आदमी बनाया है। उनमें आधुनिक मानव की जीव वैज्ञानिक और सांस्कृतिक विशिष्टताओं को ढूंढ़ा जा सकता है। जिन नितांत प्रारंभिक औजारों का प्रयोग
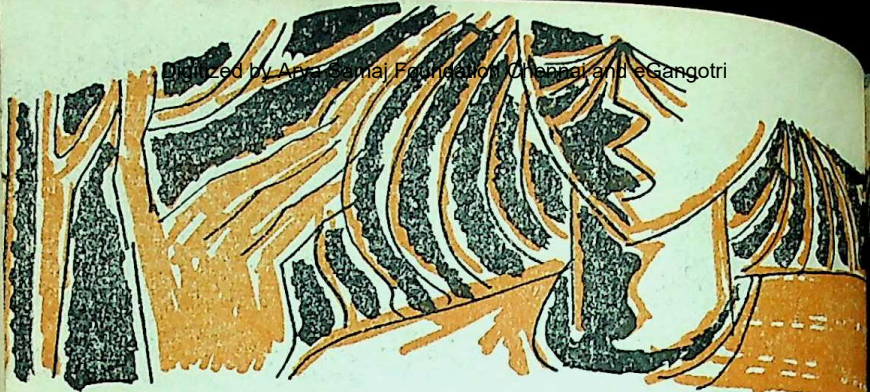
चिम्पैंजी करते हैं, उनके प्रयोग से ही प्रारंभिक मानव (होमीनिड्स) ने आगे बढ़ना शुरू किया था। यह १९ या शायद २० लाख वर्ष से भी पहले की बात है।

उस खोज ने मानव के विकास को वह तेजी प्रदान की जो पृथ्वी पर जीव के तीन अरब वर्षों के इतिहास में बेमिसाल है। प्रारंभिक मानव ने अपनी पीढ़ी से आगे वालों को जो कुछ दिया वह था उन्नत हस्तकौशल और मस्तिष्क को उत्तेजित करने वाली अधिक दूरदर्शी योजना। इस प्रकार मानव के विकास की गति का श्रेय प्रौद्योगिकी को है जिसके द्वारा हमने परिवेश को अपने अनुकूल ढालने का प्रयास किया है।

इसलिए इतिहास के इस विराट पैमाने पर प्रौद्योगिकी से झगड़ना मानव-प्रकृति से झगड़ने के समान है, मानो हम उसकी प्रतीकात्मक कल्पना, उसकी भाषण-क्षमता अथवा उसके असाधारण यौन-रवैये और भूख से लड़ते हों। बेशक, कुछ लोग प्रौद्योगिकी को चाहे तो नापसंद कर सकते हैं। आज जबकि उसने प्रकारांतर से मनुष्य के मस्तिष्क की चिम्पैंजियों के मस्तिष्क की अपेक्षा दुगुनी-तिगुनी वृद्धि करने में सहायता की है, तो वे निश्चय ही चिम्पैंजियों के जीवन या उनके मानस को भी पसंद करने के लिए स्वतंत्र हैं। लेकिन वे इस दावे को अपना आधार नहीं बना सकते कि वे प्रकृति की ओर, अर्थात मानव-प्रकृति की ओर लौट जाना चाहते हैं, क्योंकि मानव-प्रकृति प्रत्येक संस्कृति में समान सार्वभौमिक तत्त्वों में अभिव्यक्त होती है। इनमें से एक प्रौद्योगिकी है।

इसी तर्क के अनुसार यह दावा करना इतिहास को सीधा नकारना होगा कि उन संस्कृतियों ने जिनमें प्रौद्योगिकी पनपी है, मानव-प्रकृति की अधिक निजी और संवेदनशील अभिव्यक्तियों का गला घोंट दिया है। उलटे, उच्च संस्कृति की जिन कृतियों की हम सराहना करते हैं वे अपने समय के अधिकतम विकसित प्रौद्योगिकीय समाजों की देन हैं। जब हम मानवीय कल्पना की महान अभिव्यक्ति करनेवाले साहित्य और कलाओं को देखते हैं तो हमारी समझ में यह बात आ जाती है कि

जब-जब प्रौद्योगिकीय बारीकियों का विकास होता है तब-तब उसी के साथ साहित्य और कला का भी विकास होता है। हमारे धर्म भी प्रौद्योगिकीय दृष्टि से पिछड़ी हुई सभ्यताओं की देन नहीं हैं। बुद्ध, कनफ्यूशियस, ईसा और मोहम्मद पिछड़ी जातियों के मसीहा नहीं थे, बल्कि महान बौद्धिक सभ्यताओं में पैदा हुए थे।

आजकल प्रति-संस्कृति (काउंटर-कल्चर) की बड़ी चर्चा है। इस प्रति-संस्कृति में जिस बात का प्रतिषेध किया जा रहा है वह सामाजिक संस्कृति के रूप में केवल प्रौद्योगिकी ही है। यही बात कुछ पुस्तकों में कही गयी है—प्रौद्योगिकी आत्मविहीन है, उससे मुक्ति प्राप्त करो और अपनी आत्मा को खुलकर सांस लेने दो। लेकिन विज्ञान की महान धारणाओं, तर्कशील बुद्धि की उपलब्धियों या इस शताब्दी में विश्व की एक ऐसी कल्पनाशील संस्कृति के बारे में कुछ नहीं कहा जाता जो अत्यंत समृद्ध और समन्वयपूर्ण है। इस संदर्भ में इससे विपरीत की आशा भी नहीं की जा सकती, क्योंकि प्रति-संस्कृति विज्ञान-विरोधी है। किंतु, उस संगीत, चित्रकला और साहित्य के बारे में जो हमारी संस्कृति की स्थायी और जीवंत अभिव्यक्ति हैं, बोझिल मौन समझ में न आने वाली बात है। इन्हीं के द्वारा तो हमारी संस्कृति मूल्यवान बनी है। प्रति-संस्कृति में वैयक्तिक अनुभव को छोड़कर सभी बातों के प्रति एक छिपी हुई घृणा है। वास्तव में प्रति-संस्कृति संस्कृति-विरोधी भी है।

प्रति-संस्कृति के प्रवक्ताओं का यह दावा कि प्रौद्योगिकी मानव-प्रकृति को विकृत करती है, जीवविज्ञान और इतिहास के रूप में न केवल झूठ है, बल्कि जानबूझकर किया जानेवाला शरारतपूर्ण प्रचार भी है। यह दावा बुद्धि-विरोधी, तर्क-विरोधी और अनुदार पूर्वाग्रहों का आधुनिक रूप में प्रस्तुतीकरण है।

वर्षों से कुछ सनकी लोग अखबारों में लिखकर लोगों को पीने के पानी में फ्लोराइड मिलाने के खतरे और अपवित्रता के बारे में आगाह करते रहे हैं। अब उनका

जवानी के साथ-साथ दर्द और तकलीफ़ की परेशानी भी आती है

तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन आपके आड़े समय काम आती है

आप अपने कॉलेज का कोई भी उत्सव छोड़ना नहीं चाहतीं। परन्तु आज जबकि कॉलेज में एक शानदार फ़िल्म-शो होने वाला है, आप कमर के दर्द, बेचैनी और बेआरामी के कारण मुरझाई हुई-सी हैं। तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन ऐसे ही नाज़ुक अवसरों पर काम आती है।

एनासिन बहुत गुणकारी है, क्योंकि यह केवल दर्द से आराम नहीं दिलाती बल्कि दर्द के साथ होने वाली उदासीनता को भी दूर करती है। एनासिन आपको जल्दी आराम और चैन दिलाती है और आपके चेहरे पर फिर वही मुस्कान आ जाती है।
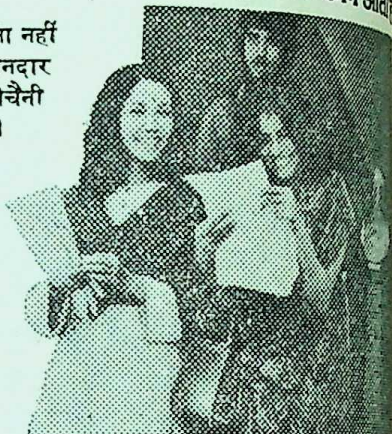
अपने नाज़ुक दिनों में दर्द की बेचैनी और बेआरामी से पड़े रहना पुराने ज़माने की बात है। आज ज़माना बहुत आगे बढ़ चुका है। तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन आपको जल्दी आराम दिलाती है। और आप अपना रोज़ का काम-काज आराम से कर सकती हैं।

लड़की होना भी कभी-कभी एक मुसीबत मालूम होती है। परन्तु आप ऐसे समय एनासिन से काम लेकर उलझन दूर कर सकती हैं, और का पूरा आनन्द ले सकती हैं। के समय के लिए अपने पर्स में एनासिन रखिए— यह बहुत बड़ी सुविधा है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा

Regd. User of T.M.: Geoffrey Manners & Co. Ltd.

कार्यभार कुछ युवा नागरिक अपने ऊपर ले रहे हैं और रासायनिक खाद के प्रयोग के खतरे से लोगों को आगाह कर रहे हैं, मानो गोबर की खाद के प्रयोग के लिए किसी अलौकिक शक्ति ने निर्देश दिया हो और, प्रौद्योगिकी और कुछ न होकर कोई जादू हो।

वे बड़ी गंभीरता से कहते हैं कि घर की पकी रोटी सुपर बाजार में मिलने वाली रोटी से बेहतर होती है—और वह बेशक होती है। लेकिन वे यह तर्क नहीं पेश करते कि वह अच्छी इसलिए होती है कि उसके बनाने में निजी परवाह होती है, बल्कि उनका तर्क यह होता है कि घर के चूल्हे को आदम ने ईजाद किया था और फैक्टरी के चूल्हे को विज्ञान ने।

मेरे दादा इसी तरह की बातें किया करते थे और हमेशा सादगी के सुनहले युग की याद किया करते थे। उनकी बातों में हमेशा तब की बात होती थी जब वे बीस साल के थे, लेकिन मेरे दादा की तरह बात करनेवाले आज के किशोरों के लिए वह समय कब रहा?

इस छद्म-प्रकृतिवाद में खतरनाक बात यह है कि वह समाज की असली बुराइयों से युवकों की दृष्टि हटाकर कम महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों की ओर संकेत करती है।

उदाहरण के लिए यह देखकर आश्चर्य होता है कि कारखानों की चिमनियों से निकलने वाले धुएं और कारखानों से निकलने वाले तैल-कचरे के खिलाफ आवाज बुलंद करने में कितने आराम के साथ सभी पार्टियां एक हो जाती हैं।

कभी समय था, और यह बहुत साल पहले की बात नहीं है, जब परिस्थिति-विज्ञानी (इकॉलोजिस्ट) गर्वपूर्वक अपने काम को 'ध्वंसात्मक विज्ञान' कहते थे और जब पौधों और फूलों को हानि पहुंचाने के विरुद्ध विरोध प्रकट किया जाता था, लेकिन वे सारी बातें राजनीतिक वक्तृत्व-कला की सामान्य बातें बनकर रह गयीं।

चालीस साल पहले की अपेक्षा आज वायु-प्रदूषण क्यों इतना चर्चित और खतरनाक बन गया है? निश्चित रूप से इस कारण नहीं कि प्रौद्योगिकी अपने प्रभावों पर नियंत्रण करने में कम समर्थ है। वायु-प्रदूषण स्वयं प्रौद्योगिकी का परिणाम नहीं है, न वह प्रौद्योगिकी के दुरुपयोग का परिणाम है। वह प्रौद्योगिकी में उस मोड़ का नतीजा है जिसके द्वारा वह चंद लोगों का विशेषाधिकार न रहकर सबका अधिकार बन गयी है।

दरअसल, हमने जो कुछ किया है और जिसको स्वीकारने में हमें गर्व होना चाहिए, वह यह है कि स्वास्थ्य के उच्च स्तर, सुविधा, सूचना आदि के अर्थ में प्रौद्योगिकी के लाभों को जीवन और स्वतंत्रता की तरह ही एक मानवीय अधिकार बना दिया है। सौ वर्षों के भीतर ही हमने मजदूरों और मध्यवर्गीयों के जीवन को पूर्णतः रूपांतरित कर दिया है, जिससे

कि उन्हें सहज ही वे सारी चीजें उपलब्ध हैं जो कभी उच्च वर्गों के विलास-साधन होते थे, जैसे कि घर में सदबहता हुआ और गरम पानी, फ्लश से चलनेवाले शौचालय, स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएं और दवाएं, गैस द्वारा घर को गरम रखने की सुविधा, बिजली की रोशनी, टेलीफोन आदि सामान्य सुविधाएं।

नित्य प्रति के उपयोग की वस्तु बन जाने से प्रौद्योगिकी भौतिक नहीं बल्कि नैतिक मांग बन गयी है, सामाजिक न्याय के आंदोलन की मूर्त अभिव्यक्ति बन गयी है। यह परिवर्तन एक मानव के प्रति दूसरे की सम्मान-भावना में परिवर्तन के रूप में हुआ है। इस प्रकार प्रौद्योगिकी अब सामाजिक उच्चता का विशेषाधिकार नहीं रह गयी है। वह राष्ट्रीय, वाणिज्यिक या सामाजिक प्रतिद्वंद्विता का हथियार भी नहीं है।

हर सभ्यता का आधार प्रौद्योगिकी रही है। आज की प्रौद्योगिकी को जो चीज अभूतपूर्व बनाती है, वह यह विश्वास है कि हर मनुष्य उसके लाभों का अधिकारी है। यह बात उसके दुरुपयोग, उदाहरणतः युद्ध में होने वाले दुरुपयोग के प्रति विरोध को एक विशेष नैतिक शक्ति प्रदान करती है। लेकिन तार्किक और नैतिक दोनों दृष्टियों से ऐसा सोचना गलत है कि प्रौद्योगिकी के लाभों में सबकी समानता को केवल इतने वैज्ञानिक प्रशिक्षित करके स्थायी बनाया जा सकता है जो शेष आबादी को जीवन की न्यूनतम सुविधाएं उपलब्ध कराते रहें। ऐसे परोपजीवी हलों का प्रेरणा-स्रोत अकाल की वे आचार-संबंधी धारणाएं हैं जो अतीत से उद्भूत हैं कि अभाव मनुष्यों को बराबर बना देता है।

अतीत की इस धारणा में अब कोई तथ्य नहीं रह गया है कि सारी सुविधाएं व्यक्ति को भ्रष्ट कर देती हैं, सारे उद्योग विनाशकारी हैं और बंबे का पानी तथा बिजली से गरम होने वाले कंबल अनिवार्यतः अपने साथ आणविक अस्त्र-शस्त्र लाते हैं। अभाव द्वारा मनुष्यों में समानता होने के अंधविश्वास को इतिहास स्पष्ट ही नकारता है। उन पारंपरिक संहिताओं से प्रचुरता की आचार-संहिता भिन्न है जो प्राकृतिक साधनों के उपयोग में मितव्ययिता और अकाल के लिए परिश्रमपूर्वक संचयन की आवश्यकता से अनुप्रेरित हैं।

विज्ञान के सभी मूल्य मानवीय प्रकृति का महत्त्वपूर्ण अंग हैं। अगर हम भविष्य पर किसी प्रकार का नियंत्रण चाहते हैं तो इन मूल्यों का सामाजिक महत्त्व सर्वोपरि है, क्योंकि अब तक उपलब्ध एकमात्र साधन विज्ञान ही है। ●

मार्क ट्वेन के जन्मदिन पर एक पाठक ने उन्हें अभिनंदन का एक पत्र लिखते हुए पते की जगह लिखा—'श्रीयुत मार्क ट्वेन, पता नहीं मालूम! ईश्वर करे यह पत्र उन्हें मिल जाए।'

कुछ दिनों बाद उसके पास मार्क ट्वेन का पत्र आया—'ईश्वर ने कृपा की।'

अमरीका में उन दिनों दास-प्रथा प्रचलित थी। वहां बेंकर नाम का एक दास था, जो बड़ा ही स्वामिभक्त था। अपने इस गुण के कारण वह अपने स्वामी का विश्वासपात्र बन गया था। एक दिन वह अपने स्वामी के साथ बाजार गया, जहां दास बिक रहे थे। उसने एक दीन-हीन और बूढ़े दास को देखकर अपने स्वामी से उसे खरीद लेने का आग्रह किया।

स्वामी ने बेंकर को खुश करने के लिए उस बूढ़े दास को खरीद लिया। घर पहुंचकर उसने बेंकर से पूछा, "इस बूढ़े और कमजोर दास का क्या करोगे?"

बेंकर ने कहा, "मैं इससे ज्यादा-से-ज्यादा काम लूंगा।"

वस्तुत: बेंकर उस बूढ़े दास के प्रति बहुत दयालु रहता था। जब वह बीमार होता तो वह उसकी सेवा-सुश्रूषा करता। बूढ़े दास के प्रति उसका इतना अपनत्व देखकर मालिक ने पूछा, "शायद यह बूढ़ा तुम्हारा कोई संबंधी या मित्र है!"

"नहीं, यह मेरा पुराना शत्रु है," बेंकर का उत्तर था, "इसने ही मुझे गांव से चुराकर दास के रूप में बेचा था। बाद में वह स्वयं पकड़ा गया और उस दिन बाजार में बिकने के लिए आया था। संतों ने कहा है कि अगर शत्रु भूखा हो तो उसे भोजन और प्यासा हो तो उसे शीतल जल देना चाहिए। इसीलिए मैं इसकी इतनी चिंता करता हूं। मेरा शत्रु होते हुए भी यह दया का पात्र है।" --कमला

गांधीजी और श्री ठक्कर बापा उड़ीसा में एक छोटे-से स्टेशन पर गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहे थे कि एक वृद्ध आदिवासी आया और घुटने टेककर बापू के चरण छूने लगा।

बापू उसे देखने लगे। उसने सिर्फ लंगोटी पहन रखी थी, नंगी देह की पसलियां झलक रही थीं। कमर से उसने एक पैसा निकाला और बापू के पैरों के पास रख दिया।

बापू की आंखें चमक उठीं। "यह पैसा क्यों रखा?" उन्होंने प्रश्न किया।

"देव-दर्शन को जाते हैं तो कुछ भेंट चढ़ाने ले जाते हैं," वह बोला।

"क्या करूं मैं इस पैसे का ?"

"किसी गरीब को दे देना ।"

"ठीक ।" कहकर बापू ने पैसा ले लिया और पास बैठे हुए उड़ीसा के निःस्वार्थ सेवक गोपबंधुदास से बोले, "यही भारतवर्ष की आत्मा है। यहां फटेहाल कंगाल भी अपने से गरीब की मदद करना अपना धर्म समझता है। इसका शरीर तो दुर्बल है, पर आत्मा बलवती है ।"

फिनिक्स आश्रम की पाकशाला बा और बापू की देखरेख में चलती थी । मिर्च और मसाले का भोजन में उपयोग नहीं होता था । सभी प्रकार की साग-सब्जी केवल पानी में उबाल दी जाती थी। इस विधि से उबाली हुई साग-भाजी में भी 'अलोना' और 'सलोना' का भेद होता था। कुछ लोग बिना नमक खाते थे और कुछ लोग नमक सहित ।

एक बार विलक्षण घटना हुई । अलोना दलवाले कुछ आश्रमवासी इस स्वादहीन भोजन से ऊब गये। बापू को प्रसन्न करने के लिए वे प्रतिज्ञा तो कर बैठे थे कि बिना नमक खाएंगे, पर उनकी रसना विरोध कर उठी । उन लोगों ने घी की पूरी-कचौड़ियां, मसालेदार तरकारियां और रसदार मिठाइयां पेट भरकर खायीं। बापू से यह बात छिपाने के लिए सभी प्रतिज्ञाबद्ध थे, पर देवदास गांधी अपने संकल्प पर दृढ़ न रह सके। उन्होंने बापू के सामने अपना अपराध स्वीकार करते हुए सारा भंडाफोड़ कर दिया ।

शाम को प्रार्थना के पश्चात बापू ने हर एक से पूछा, पर किसी ने भी देवदासजी के कथन को सत्य स्वीकार नहीं किया । सत्य की अवहेलना होते देखकर बापू का अंतःकरण हिल उठा । अत्यंत दुःखी होकर उन्होंने कहा, "इसमें तुम लोगों का कोई दोष नहीं, मुझमें ही सत्य का अभाव है। अभी मैं अपने जीवन को सत्यमय नहीं बना पाया हूं, इसी से मेरे सामने सत्य प्रकट करने में तुम लोगों को संकोच हो रहा है।"

...और बापू ने अपने ही गालों पर दो थप्पड़ लगा लिये। लज्जित और व्यथित होकर सभी लोग अपना-अपना अपराध स्वीकार कर बापू से क्षमा-याचना करने लगे !

—गोपालदास नागर

ब्रिटिश सेनापति नेलसन के समय की बात है। नील नदी की भयानक जंग छिड़नेवाली थी। ब्रिटिश जंगी बेड़े के अनेक सेनाधिकारियों की आंखों में आशंका और निराशा छायी थी, लेकिन नेलसन की आंखें अद्भुत आत्मविश्वास और साहस से चमक रही थीं। सहसा कप्तान ने कहा, "अगर हमारी जीत हो गयी तो दुनिया दंग रह जाएगी!"

नेलसन ने एक तीखी नजर कप्तान पर डाली और पूछा, " 'अगर' से तुम्हारा क्या मतलब है?"

कप्तान सकपकाया। उसे तुरंत कोई उत्तर नहीं सूझा, फिर भी उसने साहस बटोरकर कहा, "मेरा मतलब है कि दुश्मन हमसे कहीं ज्यादा ताकतवर है। उसके पास अधिक सेना है। हथियार भी हमसे अच्छे और आधुनिक हैं। ऐसे में हमारी जीत भाग्य पर ही निर्भर है!"

नेलसन ने गंभीर और दृढ़ स्वर में कहा, "कप्तान! हमारी जीत का भाग्य से कोई संबंध नहीं है। हम जीतेंगे और अवश्य जीतेंगे। हम भाग्य के सहारे नहीं, बल्कि अपनी बहादुरी, साहस और निष्ठा के बल पर जीतेंगे।"

सेनापति के इन विश्वास-भरे शब्दों ने प्रत्येक सैनिक के हृदय में मानो एक मंत्र-सा फूंक दिया। वे विश्वास और साहस के साथ लड़े और सचमुच उस युद्ध में संसार उनकी विजय को देखकर चकित रह गया!

—रेणु

ज्ञान-गंगा

राजा कृतयुगस्रष्टा त्रेताया द्वापरस्य च।
युगस्य चतुर्थस्य राजा भवति कारणम्।।

सतयुग, त्रेतायुग, द्वापर युग और कलियुग को प्रवृत्त करनेवाला राजा एकमात्र कारण है।

कालो वा कारणं राज्ञो राजा वा कालकारणम्
इति ते संशयो मा भूत् राजा कालस्य कारणम्।।

राजा को बनानेवाला काल है या राजा काल को बनाता है। इसमें जरा भी संदेह न करना चाहिए कि राजा ही काल को बनानेवाला है।

वार्यमाणोऽपि पापेभ्यः पापात्मा पापमिच्छति।
चोद्यमानोऽपि पापेन शुभात्मा शुभमिच्छति।।

पापात्मा को पाप करने से कितना ही रोका जाए तब भी वह पापप्रवृत्त रहता है। पर पुण्यात्मा को पापी लोग कितना ही उत्तेजित-उत्साहित करें, वह उनकी न मानकर शुभ पुण्य कर्म ही करता रहता है।

संतोषो वै श्रियं हान्ति तथानुक्रोश एव च।

निश्चय ही संतोष और कुपात्र पर दयालुता लक्ष्मी का नाश कर डालती है।

—प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त शर्मा

जीवन का आविष्कार

यादगार के लिए 'क्लिक' कर लीजिये

हमेशा विश्वसनीय तथा सुविधाजनक आगफ़ा क्लिक III अपने साथ रखिए और जीवन के बहुमूल्य स्मरणीय क्षणों को चित्रों में ढालकर सदा के लिए हू-बहू सुरक्षित कर लीजिए! आगफ़ा क्लिक III 'चट निशाना-पट तस्वीर' कैमरा है! उपयोग मे सरल। हू-बहू तस्वीर! कम खर्चीला। अत्यंत किफ़ायती।

- प्रत्येक १२० रोल फ़िल्म पर आप १२ बड़ी तस्वीर (६×६ सें.मी.) खींच सकते है।
- थोड़े से, अतिरिक्त खर्चे में आप एक विशेष 'एवर-रेडी' लेदर केस, पोर्ट्रेट लेंस और फ्लैशगन भी प्राप्त कर सकते हैं।

साफ़ चमकदार प्रिंट्स और ऐंलार्जमेंट्स के लिए आगफ़ा-गेवर्ट फ़ोटो पेपर के लिए ही आग्रह कीजिये। आगफ़ा-गेवर्ट के सभी अधिकृत विक्रेताओं के यहां उपलब्ध। आगफ़ा-गेवर्ट ए. जी. लीवरकुसेन के सहयोग से भारत में निर्माता : दि न्यु इंडिया इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड

SIMOES/AG/328 HIN

एकमात्र वितरक :
आगफ़ा-गेवर्ट इंडिया लिमिटेड,
बम्बई • नई दिल्ली • कलकत्ता • मद्रास
® फ़ोटोग्राफी संबंधी उत्पादनों के निर्माता आगफ़ा-गेवर्ट, ऐंटवर्प/लीवरकुसेन का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क।

• विद्याव्रत

जीवन में कुछ बातें ऐसी होती हैं जो सहज बोधगम्य नहीं होतीं। वे या तो उच्च मानसिक स्तर की चीज होती हैं या फिर हार्दिक गहराइयों की अनुभूति। उन्हें देखकर सुखद प्रतीति अवश्य होती है। मेरे आलोक-छायांकन में प्रायः यही रहा है। कुछेक छायाचित्रों में मैंने छायांकन के सामान्य नियमों का अनायास उल्लंघन किया, किंतु उसी से उनका एक असामान्य प्रभाव पैदा हो गया।

लंबे समय से फोटोग्राफी करते हुए यदा-कदा मैं सोचता था कि आलोक-छायांकन के क्षेत्र में क्या कुछ ऐसा नयापन नहीं लाया जा सकता जिसे अमूर्त कला कहते हैं और इस नये माध्यम द्वारा जीवन की गहन अनुभूतियों तथा तथ्यों को प्रकट किया जा सके। यदि छायाकार कलाकार है तो अवश्य ही उसकी कृति कला होगी।

फोटोग्राफी में शुरू-शुरू के मेरे अनुभव बड़े ही दिलचस्प रहे हैं। १९४० से मैं श्रीअरविंदाश्रम, पांडिचेरी का क्रियाशील सदस्य रहा हूं। १९४५ में हमने वहां 'आगामी' नाम से एक हस्तलिखित त्रैमासिक हिंदी पत्रिका निकालनी शुरू की थी। मैं उसका संपादन-लेखन करता था। उसके अंतिम पृष्ठों पर कुछ छायाचित्र देने के विचार से तब तीस वर्ष पूर्व मैंने सर्वप्रथम कोडक बाक्स कैमरा हाथ में लिया था। पास में ही एक फोटोग्राफर की दूकान थी। उससे बात की तो उसने कहा कि यदि रील में आठों चित्र ठीक आये तो आगे की रील एवं उसके आठों प्रिंट्स वह उपहारस्वरूप देगा, और यदि एक भी निगेटिव ठीक नहीं हुआ तो शर्त समाप्त। इस चुनौती को स्वीकार करते हुए कई महीनों तक मैंने 'आगामी' के लिए अनेक रीलें खींचीं जो अच्छी निकलीं, और वह भी सहर्ष व्यय करता गया।

एक दिन आश्रम की अध्यक्षा श्रीमां ने कहा, "मैं तुम्हारी फोटोग्राफी में कुछ विशेषता देखती हूं। अब तुम पूर्णरूप से फोटोग्राफी में लग जाओ। आश्रम में फोटोग्राफी-विभाग की आवश्यकता भी है।" १९४८ में मैंने एक कैमरा 'मामिया सिक्स' और एक एनलार्जर 'ल्यूमिमैक्स एम' ले लिया। फिर तो मेरी फोटोग्राफी

शिकाकाई, आमला, ब्राह्मी
सुन्दर बालों का सदियों पुराना रहस्य,
हेलीन कर्टिस के
टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू में
TIARA
SHIKAKAI
HERB
SHAMPOO
इस में शुद्ध शिकाकाई की मृदु स्वच्छतादायक सफ़ाई और आमला ब्राह्मी आदि जड़ी-बूटियों की स्वास्थ्यप्रद केशवर्धक क्षमता का सुंदर संगम होने के कारण यह आपके बालों को मुलायम, सुगंधित और सुशोभित रखता है और उनमें स्वाभाविक निखार ला देता है।
टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू इस्तेमाल कीजिए और प्यार से अपने बालों की देखभाल कीजिए।
यह केवल शैम्पू ही नहीं है, एक संपूर्ण सौंदर्य प्रसाधन है।
दो साइज़ों में मिलता है
१५० मि.ली. तथा ७० मि.ली.
न टूटने वाले साफ़
प्लास्टिक की बोतल में
जे. के. हेलीन कर्टिस लि., बम्बई-४०० ००१ का एक उत्कृष्ट उत्पादन
ARMS-HC-13-708-HIN

में तेजी से प्रगति होने लगी। तत्पश्चात चार और भी आश्रमवासी इस क्षेत्र में आ गये और हम पांच ने 'आश्रम फोटोग्राफी' नाम से एक क्लब की स्थापना की। फोटो एनलार्ज करने की तकनीक देखने एक दिन श्रीमां हमारे डार्करूम में पधारीं तो उन्होंने कहा था—'फोटोग्राफी प्रकाश द्वारा पेंटिंग है।' उन्होंने मुझे इस कला की मार्मिकता समझायी और निरंतर बढ़ावा दिया।

सर्वप्रथम १९५० में 'धर्मयुग' ने मेरा एक सचित्र लेख प्रकाशित किया था, फिर 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' ने। उसके बाद से अब तक अनेकानेक चित्र भारतीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। अमरीका की 'हॉलीडे मैगजीन' से पांच सौ डालर का प्रथम पुरस्कार भी मिल चुका है। भारतीय एवं अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों में भी मेरे छायाचित्र पुरस्कृत हुए हैं। लंदन की 'अमेचर फोटोग्राफी' पत्रिका ने मेरे छायाचित्रों की प्रशंसा में सचित्र लेख निकाला और छह बार 'फोटोग्राफी इयरबुक' में चुनाव हुआ। 'इयरबुक' में संसार भर के श्रेष्ठतम छायाचित्रों का चुनाव होता है। उसने संसार के श्रेष्ठ छायाकारों की सूची में मेरा नाम छापा।

इस सबके पीछे अथक परिश्रम, लगन और कुछ नया कर दिखाने का उत्साह रहा है, हालांकि गलतियां भी हुई हैं और उनसे मैंने बहुत कुछ सीखा है। उदाहरणतः ओरथोमेटिक फिल्म पर

१. कल्पना-लोक
२. पिघलती हुई आकृति
३. मेडोना
४. प्रकृति और संगीत
छाया० विपाश्व
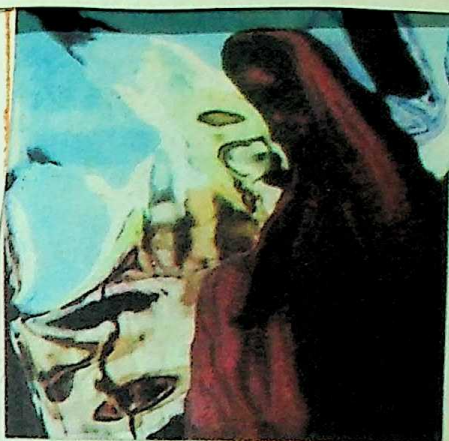
लाल फिल्टर का प्रयोग प्रायः नहीं होता, पर मैं भूल कर बैठा और वह भूल वरदान सिद्ध हुई। मैं एक नदी का दृश्य छायांकित करने पंद्रह मील साइकिल पर गया। वहां जाकर लगा कि सवेरे का समय इसके लिए उपयुक्त नहीं है, शाम को ठीक रहेगा। अतः आश्रम लौट आया। दोपहर बाद फिर चला और साढ़े चार बजे पहुंचा। वहां पेड़ पर चढ़कर अपेक्षित

जब भी मैं कैमरे से 'क्लिक' करता हूं तो यही दृष्टि में रखता हूं कि उस कागज पर अंतिम रूप क्या होगा, न कि वह जो सामने दिखायी दे रहा है। मेरी तन्मयता विषय की गहराई के साथ एक रूप हो जाती है और वहीं मेरी अंगुलियां बटन दबाती हैं। उस दिन जब मैं अपने साथियों के साथ झील के पार के खेतों में जा रहा था तो एकाएक मेरे पैर रुक गये और ढेंकली द्वारा पानी देते हुए लोगों का मैंने ऐसा सजीव और मार्मिक चित्र लिया कि फ्रांस के सर्वोत्तम वार्षिक संकलन 'फोटोग्राम' ने भी उसे प्रकाशित किया। एक और भी चित्र है जिसमें एक बूढ़ा कश्मीरी कुल्हाड़ा हाथ में लिये हुए है— मानो समय को उसने अपनी सबल बांहों की शक्ति से रोक रखा है। यह 'लकड़हारा' चित्र भी मेरा एक प्रशंसित छायाचित्र है। यदि कोई कलाकार कैनवास पर चित्र बनाता तो वैसा ही चित्र होता। श्रीमां ने ठीक ही कहा है—"यदि फोटोग्राफर कलाकार है तो फोटोग्राफी एक कला ही है।"

लेना था, इसे बड़ा करके तो देखा! रात को सोते-सोते उठकर मैंने उसे धोकर तार पर टांग दिया था। सच ही जब मैंने उसे बड़ा किया तो उसे अद्भुत पाया। सभी उसे एकटक देखते, खरीदते और मुक्तकंठ से उसकी प्रशंसा करते। इस 'रजतधारा' छायाचित्र पर अनेक पुरस्कार मिल चुके हैं और आज भी नेपाल-नरेश ने इसे अपने व्यक्तिगत पुस्तकालय में मेरे और दो चित्रों के साथ लगा रखा है।

मेरे अंदर धीरे-धीरे एक और ही विचार, एक और कलाकार जन्म ले रहा था। सोचा—क्या कुछ ऐसा नहीं किया जा सकता कि कैमरे द्वारा ही पेंटिंग-प्रभाव पैदा किया जा सके? मुझे वह ढंग मिल गया है और परिणामस्वरूप आज मैं आलोक-छायांकन के अमूर्त क्षेत्र में सफलता-पूर्वक अकेला खड़ा हूं।

—अरविंद आश्रम, पांडिचेरी
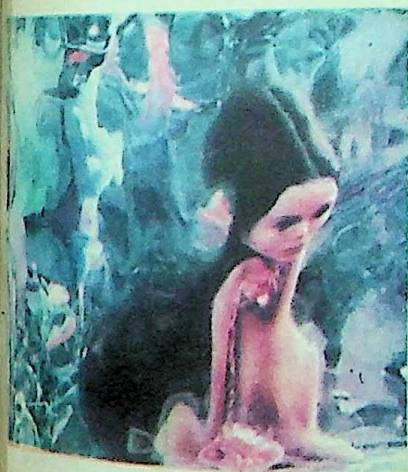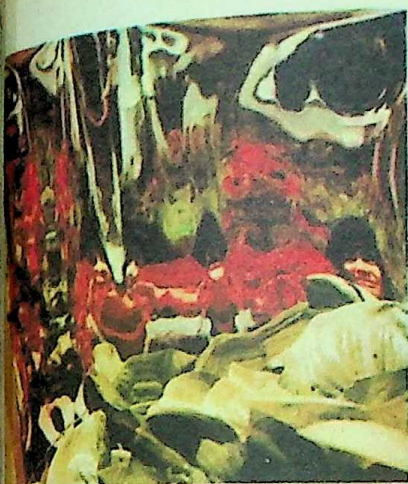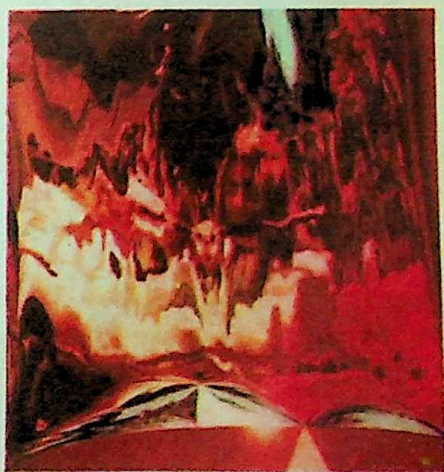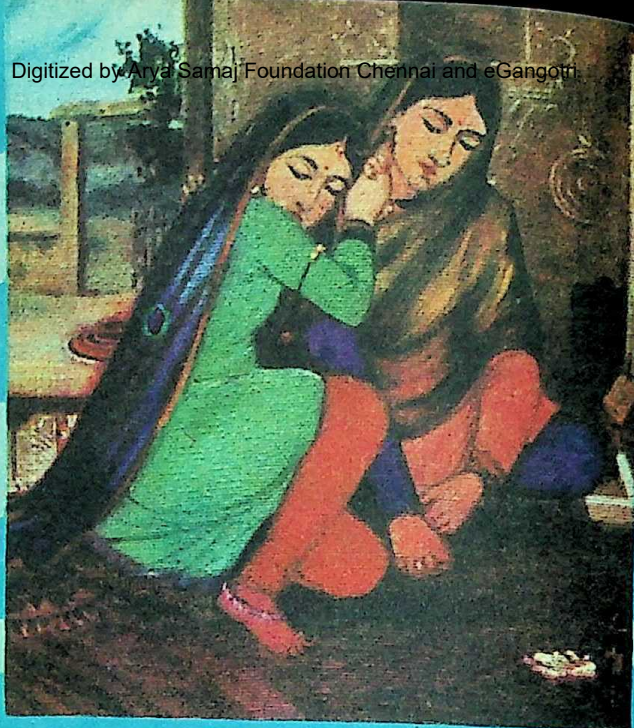
वात्रक नदी के किनारे

गोधूलि वेला थी। नीलाकाश रक्ताभ हो चला था। वात्रक नदी का शांत जल आकाश की परछाईं पड़ने से लाल दिख रहा था। नदी के दायें किनारे के टीले पर स्थित एकाकी मकान की खपरैल सुनहरी दिखायी दे रही थी।

पशुओं का रंभाना और बकरियों की 'में-में', केवल ये ही ध्वनियां इस एकाकी मकान की शांति भंग कर रही थीं। शीघ्र ही ये ध्वनियां भी शांत हो गयीं। अट्ठाइस वर्षीया एक युवती पशुओं और बकरियों को उनके बाड़े में बंदकर ज्यों ही पीछे की तरफ मुड़ी, त्यों ही चने के खेतों के पार नदी किनारे कुछ देखकर ठिठक गयी।

अग्नि की धीमी-धीमी लपटें अपनी आभा चारों ओर फैला रही थीं। उसके प्रकाश में युवती ने देखा कि काली मूंछ-दाढ़ीवाले दो साधु गेरुआ वस्त्र धारण किये वहां बैठे थे। उनमे से एक नदी किनारे से एक बड़े कमंडल में पानी भरकर लंगड़ाता हुआ आ रहा था और दूसरा ईंधन डालकर तथा चिमटे से कुरेदकर आग को जला रहा था।

"क्या देख रही है नवल? यह गाय रंभा रही है क्या?" चाची ने नवल की दृष्टि

गुजराती कहानी

• पन्नालाल पटेल

का अनुकरण करते हुए पूछा।

"नहीं, चाची ! मैं तो केवल इस बात पर आश्चर्य कर रही हूं कि इन मुओं को यहां आग जलाने की कैसे सूझी ?" नवल ने यह बात यथासंभव निरपेक्ष भाव से कही थी तथापि उसकी नीली आंखें और सुंदर मुख प्रतिक्षण गंभीर होता जा रहा था।

चाची ने उपेक्षा से कहा, "हमें क्या पड़ी है ? हम क्यों चिंता करें ? क्या इन दोनों को इतना भी पता नहीं है, पुलिस इस मकान पर नजर रखे हुए है।"

पुत्र की हत्या करके फरार हो चुका है। किंतु उसका ध्यान तो उन दोनों साधुओं पर ही केंद्रित था।

चाची कहे चली जा रही थी, "वह बच निकला, यह तो ठीक है, किंतु इस प्रकार और लोगों को परेशानी में डालने से तो यही अच्छा है कि वह पुलिस के सामने हाजिर हो जाता, और यह बेचारी नवल उसकी कब तक राह देखेगी ?"

यदि नवल अपनी चाची की बातें सुन रही होती तो अवश्य पूछ लेती कि इन परदेसियों को भला कैसे मालूम हो सकता है कि तीन वर्ष पूर्व इस घर का एकमात्र युवा पुरुष गांव के मुखिया के

नवल कहना चाहती थी कि चाची, देखो ! ऐसा लगता है जैसे ये दोनों साधु हमारे विषय में ही बातें कर रहे हैं। चिलम में दम लगाते समय भी उनकी नजर इस घर की ओर ही गड़ी हुई है, किंतु चाची

से यह सब कहने की उसकी हिम्मत न हुई। फिर कहने से लाभ ही क्या होता ?

तभी नवल के चाचा बैलों की जोड़ी के साथ खेत से लौटे। आते ही नवल बोली, "चाचा ! सामने कोई साधु ठहरे हैं।"

लेकिन चाचा ने उसकी बात को महत्त्व नहीं दिया। बोले, "उनका मन, ठहरें या जाएं। हमारा क्या लेते हैं!" और वे घर के अंदर चले गये।

नवल स्वयं अपने विचारों पर आश्चर्य कर रही थी, 'मुझे क्या हो गया है ? मैं उसकी याद में मरी जा रही हूं। उस बात को अब तो तीन वर्ष बीत चुके हैं। अकेले उसी की नहीं, मुझे अपने पहले पति की याद भी सताती है, जो आठ वर्ष हुए घर से भाग गया था। पहले तो कभी ऐसा नहीं हुआ था। लेकिन, उन दोनों साधुओं को देखकर मुझे अपने दोनों पतियों की याद क्यों आ गयी ?'

. . . एकाएक उसे ऐसा लगा कि जो व्यक्ति स्वस्थ दिख रहा है वह उसका पहला तथा जो व्यक्ति लंगड़ाता है वह उसका दूसरा पति है, जिसने हत्या की थी। बढ़ते हुए अंधकार में उसने दोनों को अपने मकान की ओर आते हुए देखा।

नवल के चाचा ओर चाची यों तो उसके अभिभावक थे, लेकिन वास्तव में दोनों उसके आश्रित होकर वहां रह रहे थे। वे तो यहां तक कहते थे कि नवल को अब तीसरा विवाह कर लेना चाहिए।

चाची ने कहा, "नवल ! वहां अंधेरे में क्या कर रही है तू ? काम में क... दीपक तो जला ले!"

नवल ने दीपक जलाकर ... के एक कोने में रख दिया। चूल्हे ... मद्धिम रोशनी में चावल फटकने ...

आंगन के उबड़-खाबड़ फर्श ... मोटी-मोटी लाठियों की पड़ती आ... से नवल चौंक पड़ी। उसने उस आ... को तुरंत पहचान लिया। उन्हीं साधु... की आवाज थी वह। पहलेवाला कह र... है, "जय सीताराम, काका!"

नवल के अंदर से तभी कोई अजा... बोल उठा, 'हां, निस्संदेह यह आ... मेरे पहले पति की ही है।'

द्वार से कुछ हटकर चाचा ने ... दोनों के लिए एक चारपाई डाल दी... दोनों उस पर बैठ गये।

नवल चूल्हे में लकड़ी लगा रही ... लेकिन उसके कान बाहर हो रही बात... पर ही लगे हुए थे। पहला व्यक्ति चा... से प्रश्न पर प्रश्न कर रहा था, "तु... कितने पुत्र हैं ? . . . कोई भी ... तुम्हें पास रखने को तैयार नहीं है ?... क्या इस घर की मालकिन तुम्हारी भ... है ? क्या वह अकेली है ? . . ."

चौखट पर खड़ी चाची बड़े ध्यान ... इस प्रश्न को सुन रही थी। बड़ी ... से पूछ बैठी, "बाबाजी, तुम्हें इन सब ... से क्या लेना-देना है ?"

"मां, हमें इन बातों से कुछ ले... देना नहीं है, लेकिन तुम गृहस्थ लोगों ...

हम और क्या बातें करें ?" साधु ने वाणी में मिश्री घोलकर कहा।

चाची का गुस्सा तेज था, लेकिन साधु की बात ने उसे शांत रहने दिया और वह वहीं बैठ गयी।

"बाबा जी ! कैसा खराब जमाना आ गया है। लगता है, सारी सृष्टि का क्रम बदल गया है। हमारी नवल की ही बात लो !"

नवल अब अंधेरे का लाभ उठाकर द्वार के समीप आकर बैठ गयी थी। चाची कह रही थी, "छह व्यक्तियों के परिवार में से अकेली नवल बची है। पांच भाई थे, पांचों को भगवान ने उठा लिया। मां भी इस लड़की को छोटी-सी छोड़कर चल बसी थी और बाप, ईश्वर उसे सद्गति दे। गांव में वह सबसे लड़ाई मोल लेता फिरता था, इस कारण हमें इस लड़की के ब्याह के लिए दूसरे गांव में वर ढूंढ़ना पड़ा। फिर क्या कोई वर ऐसा है जो ससुराल में आकर रहना पसंद करे ? हां, एक शर्त पर हो सकता है कि वह निरा कमीना हो और हुआ भी यही। इस नवल का पहला पति निरा निखट्टू था।"

"निखट्टू ?" साधु ने पूछा।

"हां, उसके बाप के यहां कोई नहीं बचा था। एक दिन मेले में उसने हमारी नवल को देखा और निर्लज्ज की भांति अपना गांव छोड़कर यहां दामाद बनकर रहने लगा। उसे काम से अधिक बातें प्रिय थीं। फिर इस निखट्टू दामाद को एक रुपये रोज की तो अफीम ही चाहिए थी। इस तरह का खर्च मेरे जेठ भला कैसे सहन कर सकते थे ? तो एक दिन दोनों में जमकर लड़ाई हो ही गयी। उस रात को वह गायब हो गया। उसकी बहुत खोज की, परंतु उसका कोई सुराग नहीं लगा।"

लेखक

पहला साधु चुपचाप सुन रहा था, लेकिन लंगड़े ने तीखेपन से कहा, "निस्संदेह इन सब कष्टों की जड़ वही है।"

चाची ने आगे कहना शुरू किया, "इतना होने पर भी हमारी नवल ने उस पाजी का चार वर्ष तक इंतजार किया फिर अंत में निराश होकर उसने दूसरा विवाह कर लिया। वह भी उसी के जैसा निकला। वह पहले पति का दूर का रिश्तेदार था। एक दिन वह अपने घरवालों से लड़-झगड़कर इस गांव में आया और यहीं बस गया। पर हमारी नवल पर तो जैसे शनि की दृष्टि थी, इसलिए वह सुख से कैसे बैठती !" चाची सुबकने लगी थी।

उधर चाचा की आंख भी भर आयी थी और नवल तो अंधेरे कोने में बैठी कब से अपना आंचल भिगो रही थी।

लंगड़े साधु की आंखों में आंसू छलछला आये थे। दूसरा साधु भी परेशान दिखता था। वह बोला, "तुम्हारी बात पूरी नहीं हुई ?"

"बात के पूरी होने, न होने से क्या बनता-बिगड़ता है ! इस गांव के मुखिया और मेरे जेठ दोनों एक दूसरे की जान के ग्राहक थे। तीन वर्ष पहले मुखिया के बेटे ने मेले में नवल से छेड़छाड़ की। नवल के बूढ़े बाप के हाथ-पांव में अब शक्ति नहीं रही थी। वह केवल गालियां बकते रहे। लोगों का कहना है कि उस रात उनकी चीख-पुकार एक मरते हुए भेड़िये की चीख-पुकार–जैसी लग रही थी और जवान बेटी की पीड़ा अवश्य ही असह्य हो गयी होगी, अन्यथा उस अंधेरी तूफानी रात में नवल का पति सीधा मुखिया के घर जाकर उसके पुत्र की इस प्रकार हत्या क्यों कर देता, मानो वह किसी पागल कुत्ते को मार रहा हो ! घर लौटकर विजयोल्लास से उसने अपने ससुरजी को बताया कि उनके अपमान का पूरा-पूरा बदला ले लिया गया है। वह जब अपने पराक्रम की बातें सुना रहा था तभी नवल ने उसे यहां से भाग जाने की सलाह दी। उसने भी परिस्थिति की गंभीरता को समझा और वह फरार हो गया। अब तो उस घटना को पूरे तीन वर्ष हो चुके हैं। न तो उसका पता चला और न नवल दूसरा विवाह करने को राजी हुई।"

और तभी व्यथा के भार से दबी-सी नवल की आवाज अंधेरे को चीरती हुई सुनायी पड़ी, "चाची, आधी रात हो गयी, आज रोटी नहीं खानी है क्या ? साधुओं को कुछ देना हो तो भात रखा है, ले जाकर दे आओ।"

लेकिन साधु तो ऐसे जमकर बैठे थे कि भात मिल जाने पर भी उन्होंने हिलने का नाम नहीं लिया।

अब नवल से न रहा गया। वह आकर बोली, "मेरी समझ में नहीं आता कि तुम यहां मौत के ठीक मुंह में क्यों बैठे हो ?"

"मुझे तुमसे कुछ कहना है, थोड़ी बातें करनी हैं।" पहले ने कहा। उसकी वाणी में यद्यपि चिंता थी तथापि उसे इस बात का संतोष था कि अपेक्षित अवसर मिल गया था। लंगड़ा केवल नवल की ओर देखता रहा। वह पूछना चाहता था कि नवल, तू इतनी दुबली क्यों हो गयी है ? लेकिन पूछ बैठा, "पहले यह बता, तूने पहचाना भी या ... ?"

नवल ने क्षणभर को इस सीधे-सच्चे व्यक्ति की ओर प्यार से देखा, लेकिन शीघ्र ही वह प्रेम करुणा में बदल गया। वह बोली, "वह तो ठीक है, लेकिन यह तो बताओ तुम्हारे पैर को क्या हो गया ?"

"ओह ! वह मनहूस रात, जब मैं यहां से भागा था। लेकिन तुमने मेरी बात का जवाब नहीं दिया ?" वह बोला।

लेकिन नवल बात को दूसरी दिशा में मोड़ती हुई बोली, "वह सब जाने दो और अब नदी किनारे वापस न जाकर

रात रहते ही कहीं दूर चले जाओ।" और वह उठकर घर में जाने लगी।

लेकिन पहले साधु ने तभी खड़े होकर उसका मार्ग रोक लिया, "देख नवल, हम तो यहां गिरफ्तार होने के लिए ही आये हैं। लेकिन पकड़े जाने से पहले हम यह पूछना चाहते हैं कि क्या . . . ."

नवल ने बीच ही में टोककर तेजी से कहा, "हाय राम! तुम दोनों को कुछ भी समझ है या नहीं? मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूं। यहां से तुरंत चले जाओ।"

"क्या मुसीबत है? मैं जो कुछ कह रहा हूं तुम पहले उसे क्यों नहीं सुनतीं? बात यह है कि मैं पुलिस के सामने जाकर अपने को गिरफ्तार करा दूंगा। तब कौन . . .?" लंगड़े ने कहा।

लेकिन, तभी वह दूसरा बोल उठा, "यह ठीक न होगा। यह लंगड़ा है, मैं पुलिस में जाकर अपराध स्वीकार कर लेता हूं।"

नवल पहले ही बहुत परेशान थी। अब इन दोनों के बीच इस अनोखे और अस्वाभाविक झगड़े ने उसकी रही-सही शक्ति भी छीन ली। वह रो पड़ी और बोली, "तुम्हारे जी में जो आये वही करो।"

दोनों साधुओं में वापस नदी पर पहुंचते-पहुंचते फिर यह बहस छिड़ गयी कि पुलिस को आत्मसमर्पण कौन करे? परंतु बहस में लंगड़ा दूसरे व्यक्ति से कमजोर था, इसलिए उसने लंगड़े से यह बात मनवा ली कि वह (लंगड़ा) ही नवल के पास रहकर उसे सुखी बना सकता है।

परंतु उसी रात को पुलिस ने छापा मारकर दोनों को गिरफ्तार कर लिया। नवल अपने बरामदे में खड़ी यह सब देख रही थी। वह एक गहरे पसोपेश में पड़ गयी थी। यदि बाबक नदी के लिए यह कठिन था कि वह दोनों किनारों में से किसी एक को चुन ले तो नवल के लिए वह महाकठिन था कि उन दोनों में से किसको चुने और किसको छोड़े। यही कारण था कि अदालत में उसने दोनों में से किसी को भी पहचानने से इनकार कर दिया।

अदालत में पहले साधु ने वास्तविक हत्यारे (लंगड़े) की बात दबा दी और

यह साबित कर दिया कि वह ही मुखिया के बेटे का हत्यारा है। उसे आजीवन कारावास का दंड मिला। लंगड़े को केवल छह मास की सजा हुई।

छह महीने बीतने पर लंगड़ा नवल के पास लौट आया। उसे देखते ही नवल के मन का भेद खुल गया। उसे लगा कि वह बराबर उस दूसरे को प्यार करती रही है और इस अल्पभाषी सीधे-सादे व्यक्ति को कभी भी प्यार न कर सकेगी। नवल को अपने पहले पति का रसपूर्ण बातें करने का चातुर्य अच्छा लगता था। घड़ा उठाकर वह नदी से जल भरने के लिए चल पड़ी। वहां जाकर उसने अपने मन की पीड़ा निकाली और खूब जी भरकर रोयी। सुबकियों के बीच वह अपने आपको बार-बार धिक्कार रही थी, "अरी मूर्खा! आठ बरस बाद वह तेरे द्वार पर आया और तुझसे यह भी न हुआ कि उससे खाने को तो पूछ लेती। तूने तो सुख की दो बातें भी उससे न पूछीं।"

वह अभागा लंगड़ा! उसे क्या मालूम था कि नवल वात्रक नदी के तट पर इस बुरी तरह रो रही है, अन्यथा वह उसके पीछे-पीछे वहां जाता ही नहीं, वह केवल उसे बताना चाहता था, 'भरसक प्रयत्न किया कि अपराध को अपने सिर ओढ़ लूं लेकिन उन्होंने अपने वाक्चातुर्य से अदालत से यह मनवा लिया कि अपराध मेरा नहीं, उनका था।' वह यह भी कहना चाहता था कि उसने जीवन में कभी कोई बुरा काम नहीं किया और वह यह हत्या भी न करता यदि . .।

लेकिन न तो नवल इस मनःस्थिति में थी कि इन सब बातों को समझ-बूझ सकती और न बेचारे लंगड़े में प्रतीक्षा करने का धैर्य था। और फिर वह प्रतीक्षा भी किस आशा पर करता? प्रायः चार वर्ष हुए उस रात को जब नवल के कथन ने उसे उत्तेजित करके हत्या करने पर विवश कर दिया था और आज उसके करुण विलाप ने उसके शरीर और मन को कुचल डाला था। वह एक झटके से ठहर गया, मानो उसका दूसरा पैर भी टूट गया हो। उसे लग रहा था, मानो उसने अनजाने में किसी कोमल अरक्षित बालक के सिर पर घातक चोट की हो। उसका मन उसे कचोट रहा था—"हाय राम! यह मैंने क्या कर डाला? कितना बड़ा मूर्ख हूं मैं। मैं अपना दोष भी अदालत में प्रमाणित नहीं कर पाया? हाय, यह मुझसे क्या हो गया? और अब यह बेचारी नवल . . इसका क्या होगा?"

और फिर मानो अपने महान अपराध का प्रायश्चित करने के लिए असीम प्यार, गहरी वेदना और जीवन में असफलता की लज्जा लिये हुए वह लंगड़ा अपने सभी परिचितों . . यहां तक कि पेड़-पत्थरों को भी अंतिम नमस्कार करके इस अभेद्य अंधकार में विलीन हो गया।

—अनु. गोपालदास नागर

आर्य-द्रविड़ भाषाओं की मूलभूत एकता

● भगवान सिंह

सामान्यतः भाषा मानव की जीवित सत्ता मानी जाती है, किंतु उसमें इतनी विभिन्नता है कि कभी-कभी मानव की मूलभूत सत्ता के प्रति अनेक शंकाएं उभर आती हैं। इन शंकाओं के समाधान हेतु एक शास्त्र का जन्म हुआ जिसे 'भाषा-विज्ञान' कहते हैं। वस्तुतः इसका कार्य किसी भाषा की उत्पत्ति, स्वरूप और उसमें हो रहे परिवर्तनों के प्रमाण प्रस्तुत करके उन्हें तार्किक आधार प्रदान करना है। आज उस विज्ञान के द्वारा ही दो या अधिक भाषाओं की लंबी दूरियों के बावजूद उनमें समानता दिखायी जाती है। यद्यपि सामान्य जन की दृष्टि में संस्कृत और ग्रीक, जरमन, अंगरेजी आदि परस्पर भिन्न भाषाएं हैं तथापि इस विज्ञान ने उन्हें एक परिवार की भाषा घोषित किया है, जिसे भारोपीय (भारत और यूरोप की भाषाएं) कहा जाता है। इसका आधार उनके स्वरूप और शब्दसमूह की समानता है।

आर्य जन भारोपीय भाषाभाषी-अर्ध-यायावर जनों के ही अंग थे, जिन्होंने कम-से-कम ईसा से ३,००० वर्ष पूर्व अपनी विशिष्ट संस्कृति का निर्माण कर लिया था। किन्हीं कारणों से मूल भारोपीय-भाषी जनों का विविध वैभाषिक समुदायों (डाइलेक्ट ग्रुप्स) में विघटन हो गया और वे नये आवास की तलाश में अपने पैतृक देश को छोड़कर पश्चिम, दक्षिण और पूर्व की ओर चल पड़े। ऐसा प्रतीत होता है कि जब आदिम भारोपीय जन कमोबेश एक ही जन थे और एक ही भाषा बोलते थे, वे टूटकर कुछ कबीलों में बंट गये, जिन्होंने अपनी विशिष्ट बोलियों का विकास किया। २,००० ई. पू. के लगभग कतिपय प्रधान वैभाषिक भेद अस्तित्व में आ चुके थे।

भारत में आर्य अर्ध-यायावर जनों के रूप में आये थे। आर्यों को इस दीर्घ यात्रा में, २,२०० ई. पू. से १,५०० ई. पू. तक लगभग ७०० वर्ष लगे।

भारोपीय कुल के अतिरिक्त दक्षिण में बोली जानेवाली भाषाओं का एक और कुल है, जिसे द्रविड़ कुल या परिवार कहते हैं।

उत्तर भारत की बोलियों की दक्षिण भारत की बोलियों से भिन्नता की ओर पहले भी विद्वानों का ध्यान गया था, पर रेवरेंड काडवेल पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने इस बात को बहुत ओजस्वी ढंग से स्थापित किया कि दक्षिण भारत
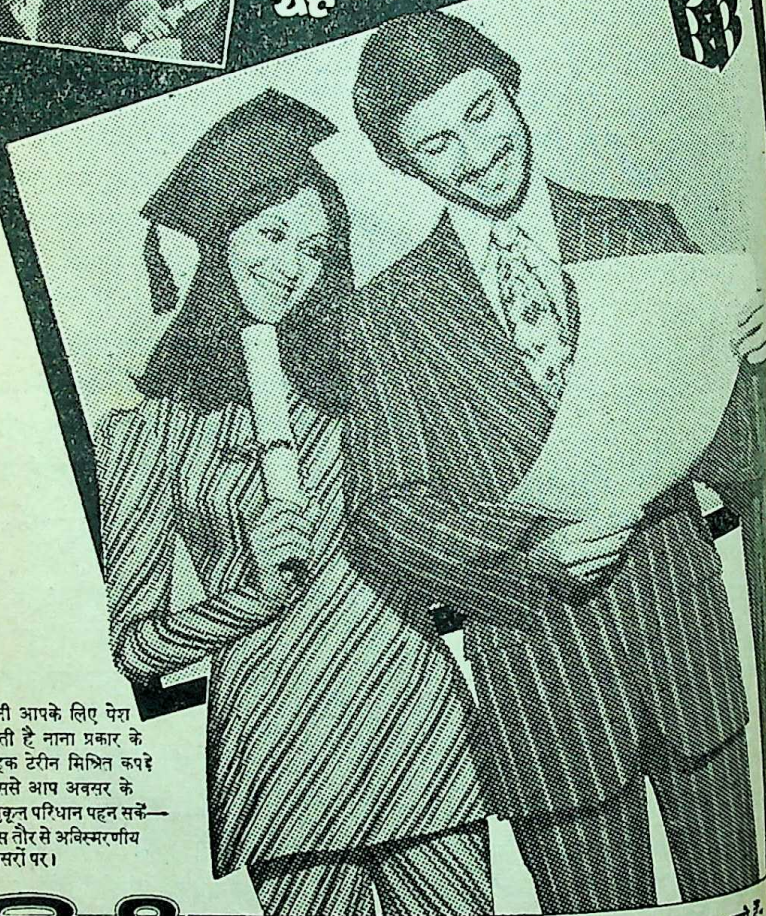
की बोलियां संस्कृत से नहीं निकली हैं, अपितु वे एक सर्वथा भिन्न भाषा-परिवार की बोलियां हैं जिसका संस्कृत या भारतीय भाषाओं से सीधा संपर्क नहीं है। आधुनिक शोधों के आधार पर यह अवधारणा निर्मूल सिद्ध होती जा रही है। अब इन दो पृथक कुल की भाषाओं, उनके शब्दसमूह में साम्य ढूंढ़ने के सफल प्रयत्न हो रहे हैं।

भारोपीय भाषाओं में बहुत से शब्द हैं जिनको द्रविड़ स्रोत का माना जा सकता है और इस तरह के कुछ शब्द हिब्रू आदि में भी पहुंचे हैं। इस आधार पर वे यह अनुमान लगाते रहे कि मूल द्रविड़ जन भी संभवतः उसी अंचल से और लगभग कुछ ही अंतर से भारत में आये हो सकते हैं जहां से आर्य जन आये थे। इतना तो निश्चित ही है कि ये दोनों जन अपने मूल निवास में एक-दूसरे के पड़ोसी थे। इसे जब-तब अधिक तर्कसंगत बनाने का प्रयत्न भी किया गया है और द्रविड़ जनों को एशिया माइनर और निकटवर्ती क्षेत्रों की कतिपय जातियों से जोड़ने का प्रयत्न किया गया है। ब्लाख इन दोनों के सान्निध्य पर अपना मत प्रकट करते हुए लिखते हैं : "द्रविड़ जन उसी क्षेत्र से और लगभग उसी समय में आये जिस क्षेत्र से आर्य जन आये थे। द्रविड़ आर्यों से पहले आये, जैसे कुषाणों से पूर्व शक आये थे या जैसे हूणों से पूर्व कुषाण आये थे। अंतर केवल इतना ही है कि द्रविड़ों और आर्यों ने अपनी भाषाएं भारत पर आरोपित कीं।"

भारतीय भाषिक उप-स्तर की खोज करते हुए हम जिन भाषिक तथ्यों का सामना करते हैं वे आधुनिक भाषाविदों के दावों को ध्वस्त करके हमें नये और विस्मयजनक निष्कर्षों की ओर ले जाते हैं, जिन्हें संक्षेप में निम्न प्रकार रखा जा सकता है :

- भारोपीय और द्रविड़ भाषाओं में तात्त्विक विभेद नहीं है। इन भाषाओं का विकास भारतीय परिवेश में हुआ था।
- एक निश्चित विकास के बाद, अर्थात आहार-अन्वेषण और आदिम कृषि तथा पशुचारण की अवस्था को पार करने के बाद आर्य और द्रविड़ दोनों ही जनों की गतिशीलता बाधित हो गयी और विंध्य से उत्तर और दक्षिण दो पृथक भाषाओं व संस्कृतियों का विकास होने लगा।
- भारोपीय अथवा आर्य जनों का विकास लगभग उन्हीं जन-जातियों के समन्वय से हुआ था जिनसे द्रविड़ जनों का। आरंभ से ही इस जनसमाज में कोई एक नृवंशीय तत्त्व नहीं था, अपितु इसमें अनेक जनों का रक्त मिला हुआ था।

सागरीय व्यापार के बाद भारत के पश्चिमी अंचल से कुछ जनों का बहिर्गमन हुआ जिनकी शाखाएं भारोपीय ही नहीं सामी अंचल में भी फैलीं। विस्थापित जनों ने अपनी आबादी के प्रभावकारी होने पर एक स्वतंत्र और विशिष्ट संस्कृति का निर्माण किया और अपनी भाषा तथा जातीय गुणों को अधिक बनाये रह सके। जहां
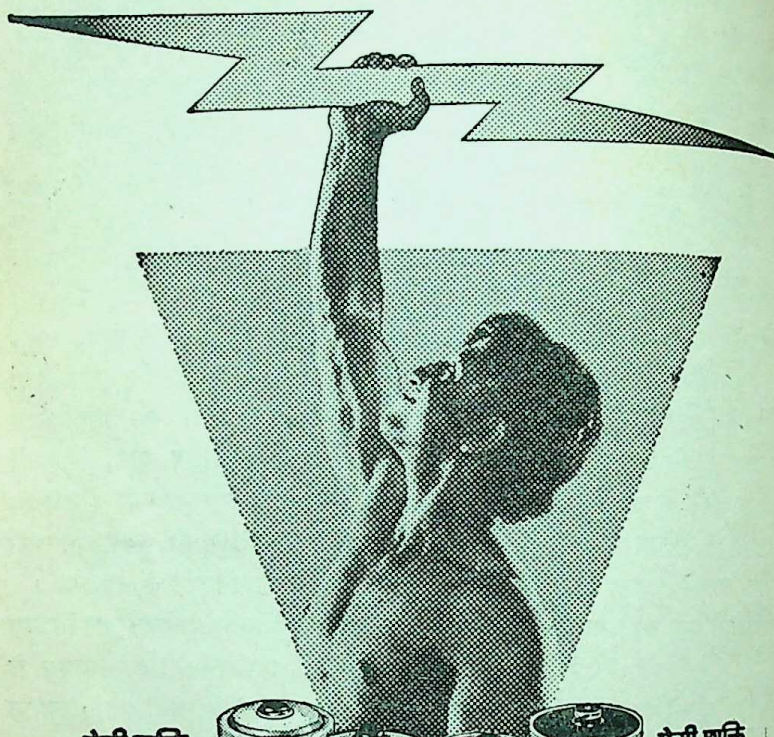
ऐसी शक्ति
जिसकी
आवाज़
आपके
कानों में
गूँज रही है
ESTRELA
ऐसी शक्ति
जिसकी
रोशनी
आप खुद
देख
सकते हैं

इनकी आबादी इतनी प्रधान नहीं थी वहां ये स्थानीय जनों और भाषाओं से अपनी पृथकता नहीं बनाये रह सके और स्थानीय रंग में रंग कर एक हो गये।

● दक्षिण भारत के साथ उनके छिट-पुट संपर्क इन दोनों अवस्थाओं के मध्य भी बने रहे, पर इतने प्रभावकारी नहीं थे कि इन्हें स्पष्ट लक्ष्य किया जा सके। दूसरी बार उनका संपर्क साम्राज्यों की स्थापना के क्रम में शुरू हुआ, जिसे आकस्मिक न मानकर छोटे राज्यों और गण-राज्यों के समय से ही राजकीय स्तर पर स्थापित जन-संपर्क की अगली कड़ी माना जा सकता है।

द्रविड़ में **काय** पूरे शाक वर्ग के साथ जुड़ा हुआ है। काय, को, का, मूलतः उसी रूप का प्रतिनिधित्व करता है जिससे संस्कृत का **खाद** और संभवतः **गुद**, 'रस लेना, मजा लेना' आदि व्युत्पन्न हैं। इनमें गोधूम को कोदो के साथ मिलाकर देखने पर लगेगा कि मूल शब्द कोदुम् ही था जिससे गोधूम बना है। फारसी में गंदुम शब्द की उपस्थिति इस बात का सूचक है कि इसका निर्गमन भारत से हुआ है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि जिस परि-वेश में ये जन अपनी आदिम अवस्था में रहते थे वह भारत में ही था।

आदिम कृषि और आहार-अन्वेषण के बाद इन जनों में जो अलगाव आया उसे इस बात से समझा जा सकता है कि प्राथमिक स्तर के खाद्य पदार्थों, उपकरणों और भाषा के उपादानों में इन भाषाओं में बहुत प्रभावशाली साम्य देखने में आता है, पर मध्यावस्था में प्रयुक्त वाहनों, उपकरणों और खाद्य पदार्थों के नामों में तथा भाषा के दूसरे उपादानों में पृथकता दिखायी देती है और यहां आकर ही भारोपीय कुल की भाषाएं परस्पर अधिक निकट दिखायी देती हैं जब कि उनकी तुलना में द्रविड़ भाषाएं स्वयं भारतीय आर्य-भाषाओं से भी दूर चली जाती हैं। पुनः बिलकुल ऊपरी स्तर पर नये सिरे से शब्दावली का हस्तांतरण होता है, जिसमें शब्द संस्कृत से द्रविड़ भाषाओं में पहुंचते हैं।

इस समानता का अन्य रूप हम दोनों

"मैं तो उसको सफल राजनीतिज्ञ मानता हूं जो पांच वर्षों तक निरंतर कुरसी पर विराजमान रहे।"
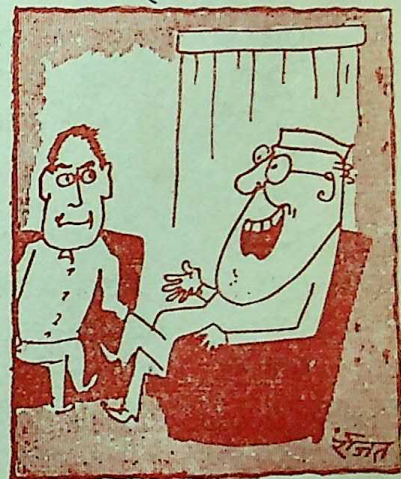
भाषाओं के शब्दों पर एक सरसरी दृष्टि डालकर देख सकते हैं।

तमिल	संस्कृत	तमिल	संस्कृत
कुंण्डु	खण्ड	अरजन	राजन्
चंडम्	चण्ड	----	----
चगटै	चक्र	उरुत्तल	रुद्र
चमु	चमू	अलंगम्	रंगम्
कच्चन	कच्छप	इलंकै	लंका
पू	पुष्प	चेल्ल्लल	चल

एक अन्य शब्द लिया जा सकता है जिसका महत्त्व इसलिए भी है कि स्वयं 'आर्य' शब्द भी इसी का विकास है।

अर् अर् (क) पानी या हवा के बहने से उत्पन्न आवाज। (ख) किसी चीज के सरकने, रगड़ खाने, फटने की आवाज। (ग) मंद आवाज, आहट।

भोजपुरी, हिंदी, संस्कृत (आर्य)	तमिल (द्रविड़)
अर्--अरराकर या हरहराकर बहना	अरवु--पानी का धीरे-धीरे बहना
अरि--हवा, ध्वनि	अरि--हवा
हलर--हलराना, हिलोर, लहर	अरल्--लहर, पानी
हर--हरि--नदी	अरुमै--नदी
अर्णव--सागर	अरुणवम्-समुद्र
हरदी, हरिद्रा	अरिचनम्--हल्दी
हरित--पीला रंग, रंग, हरा रंग	अरितम्--पीला, लालिमा, सफेदी
अरवा--कच्चा चावल	अरिचि, चावल
रक्त--लक्त--आलक्त	अरत्तम्--खून

यहां एक प्रश्न और उपस्थित हो है कि संबद्ध भाषाओं का अलगाव होने पूर्व दोनों के संख्यावाचकों का वि किस स्तर तक हो चुका था। आज अनेक आदिम जन ऐसे हैं जिनकी भाषा तीन की संख्या से ऊपर की संख्या के लि शब्द ही नहीं हैं। इसके अतिरिक्त यह संभव है कि बहुत प्राचीन-काल में ि बोलियों के समन्वय से किसी भाषा का निर्माण हुआ हो उनके प्रभाव से अथ अन्यथा किसी कारण से उन्हीं संख्याओं के लिए एकाधिक शब्दों का प्रयोग हो रहा हो जिसकी कुछ झलक संस्कृत की संख्याओं और उनके क्रमवाचकों —ए प्रथम; द्वय, उभय, उभ—में मिल है।

अतः संख्यावाचकों की सीधी तुल से अधिक तर्कसंगत उस मूल संकल को पकड़ना लगता है जिनके आधार पर कम-से-कम एक से तीन तक की संख्याओं का विकास हुआ है। एक की संख्या के लिए जिन शब्दों का प्रयोग हुआ है उनका रूढ़ अर्थ अग्रिम, पूर्ण या ऊंचा है और इसलिए जब-तब इनका प्रयोग व्यं ईश्वर के लिए भी हुआ है। इस दृष्टि से द्र. ओन्रु, सं. ओम् तथा प्राचीन लाति ओइनस, लातिन उनुस, अं. वन की तुलना खासी रोचक है।

(इसी शीर्षक से यह महत्त्वपूर्ण पुस्तक लि प्रकाशन ई–१०/४ कृष्णनगर, दिल्ली से प्रकाशित हुई है)

क्षणिकाएं

आश्वासन

विद्या
चोर ले गये
प्रतिष्ठा
डाकू
जीने के लिए
भूख के बदले, अब हमें
क्या दिला रहे हो बापू

—पचानन रथ

घर-खर्च

कागज के मूल्य में
वृद्धि हुई—सुनकर
बरस पड़ीं
कविवर की पत्नी यों उन पर—
आज नहीं मानूंगी
और बेच डालूंगी
सारी तुम्हारी
कविताओं का गट्ठर

खतरा

दूल्हा, कितना है नादान
जो समझ नहीं पाता
कि पहने आयी है जो
लाल-परिधान
यही तो है
खतरे का निशान

—सूर्यकुमार पाण्डेय

शरीफ

मेरी आंखों ने
अनिश्चित काल के लिए
देखना बंद कर दिया है
क्योंकि झूठ भी अब
स्वदेशी वस्त्र पहनकर
शरीफ हो गया है

फैशन

हाथों के बढ़े हुए नाखून
तंग मोहरी की पतलून
और हिप्पीकट बालों का फैशन
लगता है
हमारी सरकार का
'गरीबी हटाओ' विज्ञापन

—सुखवीर विश्वकर्मा

परिभाषा

नागरिक
जो गांव छोड़कर
नगर में रहे और कहे—
गांव में गंवार बसते हैं

व्यस्तता

कुछ लोग
व्यस्त नजर आते हैं
खासतौर से जब
कोई मिलने आता है

—बलवीर त्यागी

● योगराज थानी

विश्व हैवीवेट चैम्पियन

मुक्केबाजी की दुनिया में विश्व-विजेता का मुकुट प्राप्त करना शायद उतना मुश्किल नहीं है जितना कि उस मुकुट को संभाल कर रखना। पिछले तीन वर्षों से जो भी मुक्केबाज विश्वविजेता के सिहासन पर बैठा है उसे जल्दी ही सिंहासन खाली भी करना पड़ा है। यह ठीक है कि आज २४ वर्षीय जार्ज फोरमैन विश्व हैवीवेट-चैम्पियन है, लेकिन अभी वह लोकप्रियता और प्रतिष्ठा के उस शिखर पर नहीं पहुंच पाया है जहां पर मोहम्मद अली (कैसियस क्ले) पहुंचा था। इतना ही नहीं मोहम्मद अली आज भी लोगों के दिलो-दिमाग पर इतना छाया है कि लोग मन ही मन उसे ही विश्व-विजेता मानते हैं।

मोहम्मद अली ने २५ फरवरी, १९६४ को मियामी-बीच में हुए मुकाबले में सनी लिस्टन को हराकर विश्वविजेता का पद (मुकुट) प्राप्त किया था और उसे ८ मार्च, १९७१ तक अपने पास सुरक्षित रखा। इन सात वर्षों में उसने एक के बाद एक दुनिया के कई मुक्केबाजों की चुनौ-तियां स्वीकार कीं और सब को परा[illegible] करके ठिकाने लगाता गया। सनी लि[illegible] को एक मिनट से भी कम समय में हरा[illegible] के बाद उसने भूतपूर्व विश्व-चैम्पि[illegible] फ्लायड पैटर्सन (२२ नवम्बर, १९६[illegible]) कैनाडा के चैम्पियन जार्ज चुवालो ([illegible] मार्च, १९६६), इंगलैंड के हैवीवेट चैम्पि-यन हेनरी कूपर (२१ मई, १९६[illegible]) ब्रायन लंदन (६ अगस्त, १९६[illegible]) जरमनी के हैवीवेट चैम्पियन कार्ल मिल्डे[illegible] बर्गर (१० सितंबर, १९६६), क्ले[illegible] लैंड विलियम (१४ नवम्बर, १९६[illegible]) एरनी टेरेल (६ फरवरी, १९६[illegible]) जोरा फोली (२२ मार्च, १९६७) और दुनिया के चोटी के मुक्केबाजों को हरा[illegible] ६ वर्ष ५ महीनों में उसने विभिन्न मुक्के-बाजों की २९ चुनौतियां स्वीकार की और अंत तक अविजित रहा। दुनि[illegible] का कोई भी मुक्केबाज कैसियस क्ले (मोहम्मद अली) को हराने में सफल नहीं हो सका, लेकिन वह अमरीकी सर-कार के कानूनी दांवपेंच में ऐसा फंस [illegible] कि उससे विश्वविजेता का पद ही छीन लिया गया। उससे अमरीकी सेना में भरती होने को कहा गया, लेकिन उसने मना कर दिया। इसी बीच उसने अ[illegible]

धर्म-परिवर्तन कर लिया और कैसियस क्ले से मोहम्मद अली बन गया। लेकिन इसके बावजूद उस पर मुकदमा चला और २२ मार्च, १९६७ को उससे विश्वविजेता का पद जबरदस्ती छीन लिया गया।

इसी बीच अमरीका के ही एक मुक्केबाज जो फ्रेजियर ने मोहम्मद अली को चुनौती दी। ८ मार्च, १९७१ को न्यूयार्क के मैडिसन स्क्वायर गार्डन में दोनों में मुकाबला हुआ, जो बड़ा रोमांचकारी था। इसमें प्रत्येक मुक्केबाज को २,५००,-००० डालर (१.८७५ करोड़ रुपया) की धनराशि प्राप्त हुई थी। मुकाबला १५ राउंड चला और इसमें अंकों के आधार पर जो फ्रेजियर को विजयी घोषित किया गया था। मोहम्मद अली ने कहा कि निर्णायकों ने उसके साथ ज्यादती की और जो फ्रेजियर को जिताने का षड्यंत्र रचा गया। खैर, इस हार के बाद भी मोहम्मद अली ने हिम्मत नहीं हारी और एक के बाद एक करके दुनिया के मुक्केबाजों को चुनौतियां देता रहा।

जो फ्रेजियर विश्वविजेता पद को ज्यादा देर तक संभालकर नहीं रख सका और २३ जनवरी, १९७३ को किंग्स्टन (जमैका) में जब फ्रेजियर और जार्ज फोरमैन के बीच मुकाबला हुआ तो फ्रेजियर अपने प्रतिद्वंद्वी के सामने खड़ा नहीं रह सका और दो राउंड में ही छह बार लुढ़कता हुआ गिरा। फ्रेजियर का चेहरा लहूलुहान हो गया था। रेफरी ने मुकाबला रोक दिया और २४ वर्षीय फोरमैन को

जार्ज फोरमैन : वर्तमान विश्व चैम्पियन

केन नार्टन : जिसने मोहम्मद अली को हराया।

विश्व-चैम्पियन घोषित कर दिया।
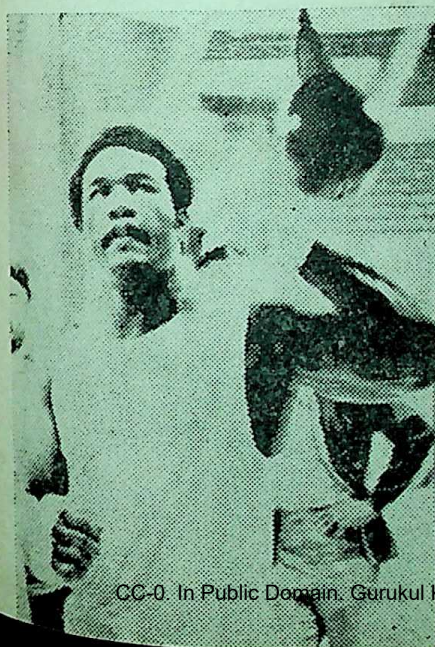
फोरमैन ने तो जो फ्रेजियर को हरा दिया, लेकिन मोहम्मद अली की मन की मुराद पूरी नहीं हुई। विश्वविजेता का मुकुट छीननेवाले अपने मुख्य प्रतिद्वंद्वी से वह हार का बदला लेना चाहता था, लेकिन जो फ्रेजियर उसकी चुनौतियों को टाल जाता। इसी बीच १ अप्रैल, १९७३ को हुए एक मुकाबले में एक मामूली से मुक्केबाज केन नार्टन ने मोहम्मद अली को न-केवल हरा दिया बल्कि उसका जबड़ा भी तोड़ दिया। लेकिन ५ महीने बाद लास एंजेल्स में हुए एक मुकाबले में मोहम्मद अली ने केन नार्टन को अंकों के आधार पर हराकर अपनी हार का बदला ले लिया।

२८ जनवरी, १९७४ को मोहम्मद अली और जो फ्रेजियर का एक बार फिर मुकाबला हुआ। १२ राउंड के इस मुकाबले में अली ने अंकों के आधार पर फ्रेजियर को हराकर अपनी पुरानी हार का बदला ले लिया। यह मुकाबला जीतने के बाद मोहम्मद अली वर्तमान विश्व-चैम्पियन जार्ज फोरमैन को चुनौती देने का अधिकारी हो गया। २४ सितम्बर १९७४ को इन दोनों मुक्केबाजों के बीच एक ऐतिहासिक मुकाबला होगा और जो भी जीतेगा उसे विश्वविजेता के मुकुट के साथ ५० लाख डालर की धनराशि प्राप्त होगी। हारनेवाले को भी उतनी ही राशि प्राप्त होगी।

२७ मार्च, १९७४ को एक मुकाबले में जार्ज फोरमैन ने जब केन नार्टन को केवल पांच मिनट में ही हरा दिया तो

मोहम्मद अली, र्फासयसक्ले और जो फ्रेजियर
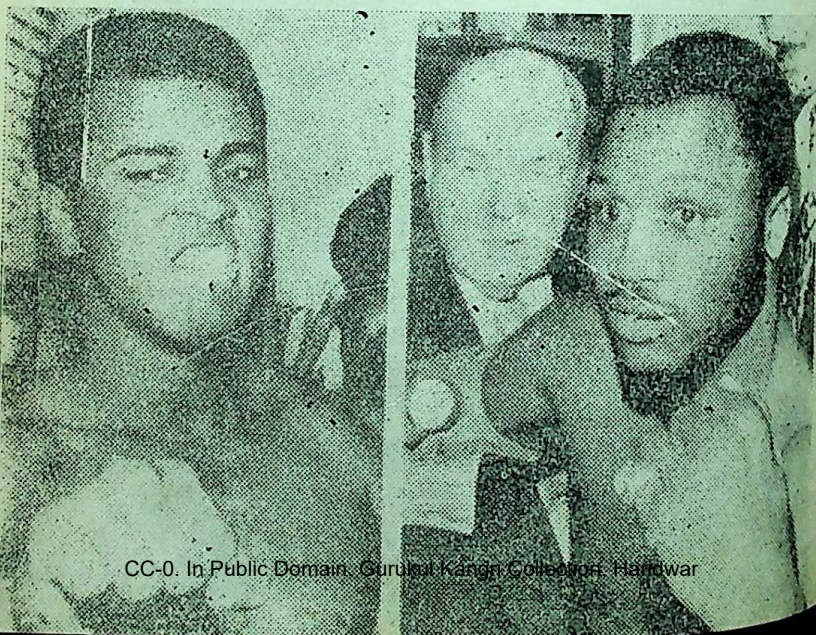
जानकार लोगों ने यह स्वीकार किया कि फोरमैन इस युग का सर्वश्रेष्ठ मुक्केबाज है और वह मोहम्मद अली को भी हराने की क्षमता रखता है।

'श्रेष्ठ तो हूं सर्वश्रेष्ठ नहीं'

मोहम्मद अली जहां अपने को दुनिया का महानतम मुक्केबाज घोषित करता है वहां फोरमैन इतना ही कहता है 'मैं श्रेष्ठ मुक्केबाज तो हूं, लेकिन सर्वश्रेष्ठ नहीं।'

फोरमैन का जन्म ह्युस्टन (टैक्सास) में एक गरीब नीग्रो परिवार में हुआ। अपने १८ वें जन्मदिन पर उसने एक शौकिया मुक्केबाजी की प्रतियोगिता जीती। १९ साल की उम्र में वह हैवीवेट वर्ग का सर्वश्रेष्ठ शौकिया मुक्केबाज हो गया और उसने १९६८ में मेक्सिको में हुए ओलम्पिक खेलों में स्वर्ण पदक प्राप्त किया। उस से पहले १९६४ में जो फ्रेजियर ने ओलम्पिक खेलों में स्वर्ण पदक प्राप्त किया था और १९६० में मोहम्मद अली ने। अन्य मुक्केबाजों की तरह फोरमैन भी ओलम्पिक का स्वर्ण पदक जीतने के बाद पेशेवर मुक्केबाज बन गया और २९ महीनों में ३२ मुकाबलों में विजय प्राप्त की।

भूतपूर्व विश्व हैवीवेट चैम्पियन

१८८९-९२—जान एल. सिलवन, १८९२-९७—जेम्स जे. कारबेट, १८९७-९९—राबर्ट एल. फिज्सीम्मंस, १८९९-१९०४—जेम्स जे. जेफरीज, १९०६-८—टामी बर्न्स, १९०८-१५—जैक जानसन, १९१५-१९—जैस विलर्ड, १९१९-२६—जैक डेम्पसी, १९२६-२८—जेने टनी, १९३०-३२—मैक्स श्मैलिंग, १९३२-३३—जैक शार्के, १९३३-३४—प्रिमो कारनेरा, १९३४-३५—मैक्स बेअर, १९३५-३७—जेम्स जे. ब्रेडोक, १९३७-४९—जो लुई, १९४९-५१—एजर्ड चार्ल्स, १९५१-५२—जर्सी जो वालकट, १९५२-५३—एडी सैंडर्स, १९५३—राकी मार्शिआनो, १९५७—फ्लायड पैटर्सन, १९५९—इन्गामर जानसन, १९६१—फ्लायड पैटर्सन, १९६२-१९६३—सोनी लिस्टन, १९६४-६७—कैसियस क्ले (मोहम्मद अली), १९७२-१९७३—जो फ्रेजियर, १९७३ से अब तक—जार्ज फोरमैन। ●

मुक्केबाजी के इतिहास में सबसे लंबी अवधि तक हैवीवेट विश्व चैम्पियन का मुकुट संभालकर रखनेवाले मुक्केबाज का नाम है जो लुई। वह ११ साल ८ महीने और ९ दिन तक विश्वविजेता बना रहा। २२ जून, १९३७ को उसने जेम्स जे. ब्रेडोक को हराकर विश्वविजेता का पद प्राप्त किया था और १ मार्च, १९४९ को मुक्केबाजी से संन्यास ले लिया था। इस अवधि में उसने २५ मुक्केबाजों की चुनौतियों को स्वीकार किया।

सबसे कम समय तक विश्वविजेता रहा, इटली का प्रिमो कारनेरा। वह केवल ३५० दिन (२९ जून, १९३३ से १४ जून, १९३४) इस सिंहासन पर बैठा।

व्यंग्य

साहित्य में दूध-पानी

• बलवंत मनराल

किसी जमाने में हमारे देश में दूध की नदियां बहती थीं। पीने की कौन कहे, लोग दूध से नहाते-धोते और खेत सींचते थे!

उस समय जंगल बहुत थे। जंगलों में आश्रम, आश्रमों में गुरु थे। गुरुओं के पास गौएं थीं, गौओं की सेवा के लिए शिष्य थे। जो शिष्य जितनी गौओं को जंगल में चराता, उनकी सेवा-सुश्रूषा करता, उसे उतनी ही बड़ी उपाधि, जैसे—गोसेवक, गोदास, गोभक्त, गोप्रेमी, गोपुत्र, गोवर्धन, गोपाल—आदि मिलती थी। गोसेवक का दर्जा आजकल के ग्राम-सेवक जैसा होता था। 'गोपाल' सर्वोच्च उपाधि थी, जो आज के 'भारतरत्न' के समकक्ष थी। श्रीकृष्ण इसी प्रथानुसार गोपाल नाम से विख्यात हुए थे।

अभिप्राय यह कि उन दिनों गायों की संख्या इतनी अधिक थी कि थोड़ा-बहुत दूध इस्तेमाल में आता, शेष सारा दूध नालों-परनालों में बहता हुआ, मिल-जुलकर नदी का विशाल रूप धारण कर लेता था। सागर भी दूध के ही थे। क्षीर-सागर उनमें सबसे प्रसिद्ध सागर था। परवर्त्ती काल में दूध की कमी होने पर दुग्ध-स्नान के स्थान पर गंगाजल-स्नान की प्रथा चली। केवल सुंदरियां ही दुग्ध-स्नान कर पाती थीं। अब देवताओं को दुग्ध-स्नान कराने की रस्म पूरी करने के लिए लोटे भर पानी में दूध की दो बूंद डालकर काम चला लिया जाता है।

उस काल में, असीमित मात्रा में होने के कारण दूध का कोई महत्त्व नहीं था। इसीलिए तत्कालीन साहित्य में दूध को विशेष स्थान नहीं मिल सका, देवी-देवता, राजा-महाराजा ही काव्य के नायक बने।

जल उन दिनों अत्यंत दुर्लभ व आश्चर्य की वस्तु था। यह सिर्फ देखने

की वस्तु था, इस्तेमाल की नहीं, अन्य दुर्लभ-आश्चर्यजनक वस्तुओं की भांति जल भी देवता के रूप में पूजा गया। जल का माहात्म्य ऋषि-मुनियों के सुमधुर कंठ से श्लोकों के रूप में फूटता रहा। वेदों में जलदेव का पर्याप्त वर्णन मिलता है। उपनिषदों का ब्रह्म, जल का ही एक रूप था। अनेक रूप-रंगों को धारण करने में समर्थ होता हुआ भी, जल का अपना कोई रंग नहीं होता। उसकी चंचल गति (माया) का कोई पार नहीं पा सकता। यह जल-ब्रह्म उस समय अमूर्त रूप धारण किये, गुण व रूप से हीन था। इसी से उसे 'नेति-नेति' कहा गया। स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद की इन पंक्तियों में उपनिषदों का प्रभाव स्पष्ट है--

"नीचे जल था ऊपर हिम,
एक तरल था एक सघन।
एक तत्व की ही प्रधानता,
कहो उसे जड़ या चेतन॥"

पुराणों के युग में दूध कुछ कम होने लगा तो उसका महत्त्व लोगों की समझ में आने लगा। फलतः गोपुराण की रचना हुई। एक और भी, 'जल-पुराण' अब अप्राप्य है, किंतु उसकी कथाएं अब तक प्रचलित हैं। जल-परी, जल-दानव आदि से संबंधित कथाएं इसी पुराण से निकली हुई हैं। इस प्रकार पुराणों में दूध व पानी दोनों को ही महत्त्व मिला।

जनसंख्या-वृद्धि के साथ-साथ जंगल कटने लगे। गोधनी ऋषि-मुनि जंगल छोड़ राजमहलों की तरफ भागने लगे। नगरों में गो-पालन की इतनी सुविधा न थी, फलतः दूध की मात्रा में कमी होने से, दूध का इतना महत्त्व बढ़ा कि वह खरीदने-बेचने की वस्तु हो गयी। एक महाकवि ने यहां तक कह दिया—"ऋणं कृत्वा दुग्धं पिवेत", (घृतं-पाठ अशुद्ध है। यदि शुद्ध मान भी लिया जाए तो बिना दूध के घी की सत्ता कहां?) उस समय दूध पर बहुत साहित्य लिखा गया। राजा-महाराजाओं ने दुग्ध-साहित्य को बहुत प्रोत्साहन दिया। दूध पर दस श्लोक लिखनेवाले को एक गाय पुरस्कारस्वरूप दी जाती थी। किसी राजा ने एक विद्वान को एक हजार गउएं दान में दी थीं, यानी उस विद्वान ने दस हजार श्लोक दूध पर लिखे होंगे। उन एक हजार गायों में से एक गाय कानी थी, अतः उस विद्वान ब्राह्मण ने राजा को श्राप दे दिया। देता भी क्यों नहीं? पूरे दस हजार श्लोक उसने शुद्ध दूध पर लिखे थे, तब उस राजा ने अशुद्ध गऊ देने का अनैतिक कार्य क्यों किया? दुःख का विषय है कि दूध पर लिखा गया हमारा इतना अमूल्य साहित्य अब बहुत कम उपलब्ध है। अनुसंधान-कर्ताओं को सजग होकर दुग्ध-साहित्य की खोज करनी चाहिए। केवल कालिदास कृत 'रघुवंश' के द्वितीय अंक में वर्णित गऊ-महिमा का ही बार-बार पाठ कर संतुष्ट नहीं हो जाना चाहिए।

रामायण-काल में दूध का महत्त्व

पुनः कम होने लगा। इसका मुख्य कारण थी वशिष्ठ मुनि की नंदिनी नाम की गाय, जिसके चार थनों से चार सागरों के बराबर दूध प्राप्त होता था। इसी गाय के दूध ने ब्रह्मर्षि वशिष्ठ के ६ हजार शिष्यों और राजर्षि विश्वामित्र की साठ हजार सेना को एक साथ तृप्त किया था। यही गाय वशिष्ठ-विश्वामित्र-संघर्ष का मूल कारण बनी। जल का महत्त्व इस समय बढ़ा। उस पर बहुत साहित्य लिखा गया। 'जलाचमन रोगनाशकः' तथा 'जलेन पद-प्रक्षालन विधिः'—जैसे अमूल्य ग्रंथ

इसी समय लिखे गये थे। उस समय लोग पांव धोने से प्राप्त गंदे जल को भी सिर पर धार बाल धोते और पी भी लेते थे, जैसे कि केवट ने किया था। इससे जल का घमंड इतना बढ़ा कि वह ईश्वरावतार राम को भी रास्ता देने से इनकार करने का दुःसाहस कर सका।

गो-दुग्ध का रहा-सहा स्थान भी भैंस के दूध ने लेना शुरू कर दिया। गो-दुग्ध के अपदस्थ होने और भैंस-दुग्ध के उच्चस्थ होने के पीछे भी एक कहानी है। यह कहानी अप्राप्य ग्रंथ 'दुग्धायन' की है, जो लोकश्रुति के रूप में अब तक विद्यमान है। यमराज व उनके भैंसे के सेवक भैंसादास को श्रापवश दानव-योनि में आकर रावण के राज्य में रहना पड़ा। यमराज को रावण के राज्य में कोतवाल का पद मिला और भैंसादास को उनके भैंसे की देख-भाल का काम सौंपा गया। यमलोक में भैंस का ही महत्त्व था। मृत्यु-लोक में गौओं के महत्त्व और भैंसों की उपेक्षा पर भैंसादास को बहुत दुःख हुआ। उसने 'भैंस-भास्कर' नामक एक महाकाव्य लिखा। यह अमूल्य ग्रंथ लंका-दहन के समय दुर्भाग्यवश जल गया। हवा से उड़कर उसका एक अधजला पन्ना किसी तरह बच गया था, जिसे लंका-यात्रा के दौरान महापंडित राहुल सांकृत्यायन (स्वर्गीय आत्मा से क्षमा!) बहुत खोजकर पाने में समर्थ हुए थे। उस पन्ने पर लिखे

श्लोक का भावानुवाद प्रस्तुत है—

गो का दूध—दूध !
भैंस का दूध—क्या पानी है ?
यह कैसा अन्याय ? भूलभरी कैसी नादानी है ?
गो दो मात्राओंवाली
भैंस तीन मात्राओंवाली,
गउएं कई रंगों की
भैंस धारे रंगराज—रावण-सी काली,
गो सीधी-सादी, भैंस मोटी-ताजी,
बुद्धिमानी सारी धरी रह जाये—
यदि सामने खड़ा हो जाय यम का भैंसा !

उक्त उदाहरण में महाकवि भैंसादास की क्रांति-भावना स्पष्ट है। रा... संहार के बाद यमराज तो वापस यम... पहुंचे ही, भैंसादास भी राम-रावण ... में वीरगति प्राप्त कर यमलोक पहुंच ... यम के भैंसे की सेवा में लग गये। उस ... लोग गाय की जगह, भैंस तो पालने ... पर भैंस के दूध को उन्होंने इतना मह... नहीं दिया कि उस पर काव्य लिखा जा... यह दुग्ध-साहित्य का अंधकार-युग है।

क्रांति के विचार क्या मिटाये मि... सके हैं ? जर्मनी के कार्लमार्क्स का मार्क्स... वाद रूस में रंग लाया। रावण की ... के भैंसादास की क्रांति-भावना कलियु...

में फली-फूली। भैंसों को उचित महत्त्व मिला। गो-दुग्ध की सत्ता उखड़ी, भैंस के दूध की सत्ता जमी। भैंस व भैंस के दूध पर साहित्य भी रचा गया। (उदाहरणस्वरूप पढ़िए काका हाथरसी की 'भैंस भवानी' कविता तथा इन पंक्तियों के लेखक का विवेचनात्मक ग्रंथ—'अक्ल से बड़ी भैंस।')

महाभारतकाल में एक बार फिर गो का महत्त्व पुनर्स्थापित हुआ। गोपाल कृष्ण के भारत में पूज्य हो जाने से गायों को राज्य-संरक्षण के साथ-साथ भक्तों का प्रेम भी मिला। फलस्वरूप 'गोचारण'; 'गोदोहन'; 'गोपालन' तथा 'दधि-माखन चोरण' आदि विषयों पर बहुत साहित्य लिखा गया।

उपरोक्त विषयों पर संस्कृत के अनुकरण पर हिंदी की ब्रज-भाषा में पर्याप्त छिट-पुट पद—कृष्ण-पदों के अंतर्गत लिखे गये। खड़ी बोली में दुग्ध-साहित्य का सर्वप्रथम कवि होने का श्रेय अमीर खुसरो को ही है। उदाहरणस्वरूप उनकी एक पहेली देखिए—

"घर से इक मटकी लावै,
गंगा-रेती बैठ द्वि मटकी बनावै,
पैसे घने कमावै।"

"क्यों सखि, कुम्हार?"
"ना सखि, ग्वाला!"

अब तक जो दूध-पानी साहित्य लिखा गया था वह एकांगी था यानी या तो केवल दूध पर था या केवल पानी पर। दूध-पानी दोनों पर मिली-जुली 'दूध-पानी-कविता' सर्वप्रथम अमीर खुसरो ने ही की थी।

हिन्दी साहित्य के चार कालों के हिसाब से देखें तो हम पाएंगे कि आधुनिक काल में दूध-पानी साहित्य का जितना विकास हुआ उतना कभी नहीं। आदिकाल में वीरों के गुणगान से ही कवियों को फुरसत नहीं मिली। अतः दूध-पानी साहित्य नहीं के बराबर लिखा गया। भविष्यकाल में, केवल कृष्णभक्ति-शाखा के अंतर्गत गो और गो-दुग्ध पर काव्य-रचना हुई। रीतिकाल में नायिकाओं के दुग्ध-स्नान; दुग्ध-प्रसूत-पदार्थ—मुंह की कांति के लिए मलाई चुपड़ने, शरीर की पुष्टता के लिए घी पीने—के रूप में ही दुग्ध-साहित्य अप्रत्यक्ष रूप से लिखा गया।

आधुनिक काल में ही सर्वप्रथम दूध-पानी-साहित्य स्वतंत्र विषय के रूप में साहित्य में स्थान पा सका; दूध-पानी-संबंध पर बौद्धिक दृष्टि से भी विचार किया गया। दोनों के बीच का भेद मिटाकर दोनों को एकरूप कर दिया गया। लेकिन अब भी कुछ लोग दोनों में भेद बनाये रखना चाहते हैं। ये दूध-पानी में भेद करनेवाले लोग प्रतिक्रियावादी हैं। उपनिवेशवादी अंगरेज भी दूध को श्वेत और पानी को अश्वेत समझकर दोनों में अंतर बनाये रहे। परंपरावादी सेर भर दूध में स्वार्थवश (उबाल लाने के लिए) दो-चार चम्मच पानी मिलाते थे। संशो-

लियोनोरा लैम्पशेड्स

ज़माने से बेहिसाब आगे

रोशनी की दुनिया में
फ़िलिप्स बेपनाह
खूबसूरती पेश करते हैं—
लियोनोरा शृंखला में
तरह-तरह के काँच शेड्स.
डिज़ाइन, खूबसूरती
और निर्माणकौशल
में इतना आगे जो
कल्पना को भी पीछे
छोड़ जाए. काँच, रंग
और कल्पना का अपूर्व
इन्द्रधनुषी मेल. रोशनी
और रंग-रूप में एक
अभिनव अनुभव.

PHILIPS

फ़िलिप्स

फ़िलिप्स इंडिया लिमिटेड

धनवादी दोनों की मात्रा बराबर-बराबर रखकर प्रगतिशीलता का ढोंग रचते हैं। हम उग्रवादी महाप्रगतिशील हैं। अब दूध में पानी नहीं, दूध को पानी में मिलना होगा।

हमारे साहित्य में, दूध-पानी के संदर्भ में, इस राजनीतिक-सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव स्पष्ट दिखायी पड़ता है। द्विवेदीकालीन कवि दूध पर इस तरह की कविता करते थे—

"तीन सेर की कलसी, चार सेर ताजा दूध भरा किये। (अतिशयोक्ति) भर-भर कलसी पीवें हम, दूध पिलाती दादी जुग-जुग जिये।"

एक छायावादी कवि ने अपने दुग्ध-धवल भाव इस तरह प्रकट किये—

भाव-सरिस सघन-तरल, श्वेत परिधान।
जग पोषक, गुणागार वह बल-निधान।
लुटिया सवा सेर की अरी दुग्ध-तन!
युग-शिशु कर दुग्ध-आहार रुक थम-थम।

विचारों में क्रांति आयी। 'दूध-पानी' पर प्रगतिशील कवि का नजरिया देखिए—

दूध सेर भर?
पानी छटांक बस!
देखो, यह उबाल आ रहा;
दूध-गिरा, पानी शेष रहा।
दूध मिटाओ! पानी बचाओ!
दहाड़कर जागो किसानो,
दूध-पानी तुम एक-सा मानो।

प्रयोगवादी के प्रयोगों में अंतर्धान हुए दूध की खिल्ली यों उड़ायी गयी—

वा री नानी!
सुना रही दूध-पानी की कहानी?
तू भोली-अनजानी,
अधसेरी कटोरा गगन टंगा,
बरसा, केवल पानी! (हां! हा!)
दूध बिचारा कहां गया? (च् च्)
बता री नानी? (क्या बताएगी!)

अकवि सबसे अभी बढ़कर कहता है—

दूध-पानी! यह कैसी नादानी?
अदूधे जियो, अदूधे फलो-फूलो!
अपानी रहो, अपानी सावन झूलो!
दूध हुआ भूमिगत—कब्र खोदे रहें,
पानी नल का नदारत—टोंटी खोले रहें,
अतः क्यों न अदूध-अपानी कहें?

आधुनिक युग में दूध-पानी पर ही नहीं, तत्सम्बन्धी विषयों जैसे—दुग्ध-मापी यंत्रों, दूध की बोतलों, दुग्ध-डिपो व वहां खड़ी कतारों पर भी काफी साहित्य लिखा जा रहा है।

कोई कुछ भी करे, हमने तय कर लिया है कि चाहे हमें अपने लिए दूध या पानी की एक बूंद भी नसीब न हो, हम फिर भी दूध-पानी पर ही लिखेंगे। हमारी रचनाएं सधन्यवाद वापस करनेवाले संपादकों को पानी-पानी कर देंगे, अपने चमचों को हम दूध पिला-पिलाकर मोटा-ताजा करेंगे ताकि वे हमारे आलोचकों को दूध-पीता बच्चा बनाकर छोड़ें। गऊ माता की शपथ लेकर हमने कार्य आरंभ किया है, अतः हम निश्चय ही माता के दूध को नहीं लजाएंगे।

—नसिंहबाड़ी, अलमोड़ा (उ. प्र.)

'यात्रीगण कृपया ध्यान दें। अप जयंती-जनता एक्सप्रेस निश्चित समय पर प्लेटफार्म नं. ७ पर आ रही है ...।' पूर्वोत्तर रेलवे के एक जंकशन पर कुरसी में धंसा आठ घंटे ऐसे ही यंत्रवत कुछ-न-कुछ फूंका करता हूं। न कोई कैटेगरी, न कोई 'चैनल ऑव प्रोमोशन।' एक मेज, एक कुरसी, एक माइक—इन घंटों के बस यही साथी!

कालेज छोड़ा तो मलेरिया-निरीक्षक बना, सहकारी निरीक्षक बना। फिर केंद्रीय राजकीय सेवा के लालच में रेल की छक-छक के साथ सांसें भरने अप्रैल, १९५९ में यहां चला आया।

पिछली बार घर गया तो रामनाथ काका ने कहा, "बेटा, अब तो ऊपरी आमदनी मिल-मिलाकर हजार मिलते ही होंगे ... अब घरबार बनवाओ।" बड़े भैया ने हामी भरी। मैं हक्का-बक्का दोनों की भाव-भंगिमाओं की तराजू पर अपनी कुरसी और १५ वर्षों की जड़वत जिंदगी को तौल रहा था। दूर के ढोल सुहावने! ११०-२०० के स्केल में कुल भत्तों समेत ३५० रुपल्ली पर बकलमखुद। कराहती जिंदगी!

विभागीय प्रोन्नति के नाम पर तो जैसे दरवाजे सदा के लिए बंद। छलांगें मारते हैं साथ के अनुसूचित, परिगणित जाति के सहकर्मी। नियुक्ति तक तो कोटे की बात समझ में आती है, परंतु नियुक्ति के बाद का कोटा किस दक्षता को जन्म देता है? अच्छे नंबरों से एम. ए. किया, बी. एल. किया। बड़ी-बड़ी कल्पनाएं संजोयीं। परंतु रेल का सिगनल लाल का लाल ही है! किसी मंत्री, प्रभावकारी संसद-सदस्य या रेल के उच्चाधिकारी का सोर्स है नहीं कि छलांग भर सकूं। हाल में एक पत्र में लेख पढ़ा—"रेल के सफाईवाले को भी साढ़े तीन सौ से अधिक मिलते हैं ..." लेखक महोदय के सीमित ज्ञान पर तरस आता है कि उन्होंने जीवन-बीमा, बैंक, तेलशोधक आदि विभागों की

बात क्यों न की! रेल-विभाग के विषय में लिखते हुए मुझ-जैसे गरीब क्लर्क या भत्तू स्वीपर से मिलते!

—लालसा लाल 'तरंग'
२३७ ख, गढ़हरा, बेगूसराय

एक बार एक अधिकारी के खिलाफ संपादक के नाम पत्र लिखने पर मुझे दंडस्वरूप सुदूर ग्रामीण अंचल में भेज दिया गया। नौकरी तो करना ही थी, इसलिए

मुझे बरसात के दिनों में ही भाऊगढ़, जो राजमार्ग से २१ कि. मी. दूर है, जाना पड़ा।

जब बरसात समाप्त हो गयी और कच्चे रास्ते की बसें चलना शुरू हो गयीं तो वही अधिकारी उधर दौरे पर आये। निरीक्षण के पश्चात वे मार्ग की कठिनाइयों का जिक्र करने लगे, "बड़ा पिछड़ा इलाका है। आजादी के बाद 'पच्चीस वर्ष' तक ये लोग सड़क नहीं बना पाये हैं!"

कुछ देर तक मैं चुपचाप सुनता रहा, फिर हिम्मत करके पूछ लिया, "क्यों साहब, आप केवल एक-दो दिन के दौरे पर आते हैं तो इतना कष्ट अनुभव करते हैं, पर क्या आप यह महसूस नहीं करते कि यहां का कर्मचारी सरदी, गरमी और बरसात में कितना कष्ट उठाता होगा?"

एकबारगी उन्होंने मुझे गौर से देखा और मेरे निकट खड़े मेरे ऊपर के कर्मचारी से पूछ लिया, "कौन हैं ये?"

अपना प्रभाव जमाने की गरज से उसने कह दिया, "ये सहायक हैं और गत वर्ष अखबार में भेजी गयी शिकायत के फलस्वरूप यहां भेजे गये हैं।"

अब अधिकारी मेरी ओर मुड़कर बोला, "क्यों जी, तुम विभाग के खिलाफ ऐसा लिखते हो?"

मैंने उसी सहज भाव से उत्तर दिया, "साहब, जैसा होता है वैसा ही लिखता हूं।"

सुनकर अधिकारी निरुत्तर जरूर हो गया, पर मेरा फिर ट्रांसफर...

—बाबूलाल 'श्रीमयंक' जीरन, मंदसौर म.प्र.

सोचा था कि पढ़ाई समाप्त करके अच्छी नौकरी मिलने पर दफ्तर के बाद घूमने-फिरने तथा पार्क, क्लब, सिनेमा आदि जाने का आनंद उठाएंगे। सौभाग्य से नौकरी तो मिल गयी, पर मिली ऐसी जगह जहां न घूमने-फिरने लायक कोई स्थल था और न पार्क, क्लब, या सिनेमा आदि ही था। समय न कटने के कारण दफ्तर सुबह १० बजे के बजाय ९ बजे ही पहुंच जाता हूं और संध्या को यह प्रयत्न रहता है कि दफ्तर से जल्दी जाने के बजाय जितनी देर हो सके वहां टिका जाए। ओवरटाइम का दिन मेरे लिए 'रेडलेटर डे' (चिर-स्मरणीय दिन) है—इसलिए नहीं कि अर्थलाभ होगा बल्कि इसलिए कि समय मजे में कटेगा। एक कुंवारे युवक के लिए समय काटना कितना कठिन है, यह केवल छोटे कस्बों में जाने पर ही पता चलता है। परंतु एक अच्छे भविष्य की कल्पना और शिक्षित बेरोजगारों की संख्या मुझे इस छोटे-से कस्बे में रहने पर विवश कर रही है।

—वीरेन्द्रकुमार जैन, कनारा बैंक, खैरागढ़, जि. आगरा

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत हों पर वे १५० शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिए।

—संपादक

सिसली के दस्यु

• हरिश्चंद्र पंत

सुदूर योरप में स्थित सिसली का मनोरम द्वीप भी चंबल घाटी की भांति ही दस्यु-समस्या से पीड़ित है। सिसली के दस्यु केवल अपहरण अथवा डकैती से ही नहीं संतुष्ट होते। वे अनेक देशों में गैर-कानूनी ढंग से जुआघर और वेश्यालय चलाते हैं, मादक द्रव्यों की अंतर्राष्ट्रीय तस्करी करते हैं और धन लेकर राजनीतिक हत्याएं भी। चुनाव के अवसरों पर राजनीतिक नेताओं पर धन खर्च करना और फिर उनसे मनमाने काम करवाना उनके लिए सहज है। अमरीका की बड़ी-बड़ी कंपनियों में उनकी साझेदारी है।

रक्तबीज और माफिया

सिसली के इन दस्युओं के गिरोह का कुख्यात नाम 'माफिया' है। इसके सामने राष्ट्रीय सीमाएं गौण हैं क्योंकि यह अंतर्राष्ट्रीय गिरोह है। इसके सदस्य इतने चालाक हैं कि योरप एवं अमरीका की सम्मिलित पुलिस भी उनके चक्रव्यूह को नहीं तोड़ सकी। रक्तबीज की भांति ही 'माफिया' को समाप्त करना यदि असंभव नहीं, तो आसान भी नहीं है।

सन १९२७ में पहली बार मुसोलिनी की फासिस्ट सरकार ने इस समस्या पर ध्यान दिया था और तब माफिया के सदस्यों की जबर्दस्त धर-पकड़ हुई थी, उन पर मुकदमे चलाये गये और उनको लंबी सजाएं दी गयीं। इन मुकदमों से सरकार की प्रतिष्ठा बढ़नी चाहिए थी, पर ऐसा नहीं हुआ, क्योंकि मुसोलिनी की सरकार ने अपने कुछ राजनीतिक विरोधियों को जो निर्दोष थे, माफिया का सदस्य होने का अभियोग लगाकर लंबी सजाएं दे दीं। इससे सरकार जनता की सहानुभूति प्राप्त नहीं कर सकी।

माफिया के सदस्य गिरगिट की तरह रंग बदलते रहते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय माफिया ने मुसोलिनी के विरुद्ध 'मित्र राष्ट्रों' के लिए जासूसी की, जब अमरीकी सेना ने अपने पांव सिसली की धरती पर रखे, उस समय उसके पथ-प्रदर्शक माफिया के सदस्य थे जो इस द्वीप के चप्पे-चप्पे से परिचित थे। माफिया ने अमरीकी सैनिकों की सहायता की और बदले में अमरीकियों ने भी उन्हें पुरस्कृत किया।

अब बदली हुई परिस्थितियों में माफिया ने एक नया मुखौटा पहन लिया था, उसके सदस्य दस्युओं के स्थान पर

Forhan's
Forhan's
FOR THE

राजनीतिक कार्यकर्ता बन गये थे । वे चर्च को बड़े-बड़े दान देते और बदले में उसके अधिकारियों से वाहवाही प्राप्त करते थे, पर मुखौटा पहन लेने से ही कोई अपनी वृत्ति नहीं बदलता। उन्होंने परदे के पीछे अपने सभी समाज-विरोधी काम जारी रखे। सिसली की जनता माफिया के दोनों रूपों को पहचानती थी, पर भयवश कुछ कह नहीं पाती थी। पानी में रहकर भला मगर से वैर कौन ठानता ?

सिसली के गांधी

दानिलो दोल्ची, जिनको लोग सिसली का गांधी भी कहते हैं, पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने माफिया के विरोध में अपनी आवाज बुलंद की है । वे मूलतः उत्तरी इटली के निवासी हैं। जब उन्होंने सन १९५२ में सिसली की धरती पर पांव रखे थे, तब उन्हें कोई नहीं जानता था पर केवल छह वर्षों की अवधि में अर्थात सन १९५८ के अंत तक वे अंतर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त व्यक्ति बन गये । प्रख्यात लेखक आल्डस हक्सले ने उनको 'बीसवीं शताब्दी का अद्वितीय संत' कहा है। रूस की सरकार ने उनको 'लेनिन शांति पुरस्कार' देकर [illegible] किया है । यह ख्याति दोल्ची [illegible] ी से नहीं प्राप्त हुई है, इसके [illegible]

ईरोज

[illegible]ों पर किस गजब की भाड़ [illegible]
'हाउस फुल' का बोर्ड है, पर ब्लैक से टिकट मिलने की आशा में बेचैन खड़े हैं। निराश होकर बेचारे 'न्यू एंपायर' या 'स्टर्लिंग' की ओर टैक्सियां लेकर भागते

जिंदगी बिता सकते थे। वे इंजीनियरिंग के स्नातक हैं, जानकार क्षेत्रों में उनके द्वारा स्थापत्य कला पर लिखे गये शोध-ग्रंथ की अत्यधिक प्रशंसा हुई है, इंजीनियरिंग अथवा साहित्य की साधना से वे धन और यश, दोनों प्राप्त कर सकते थे पर उन्होंने ऐसा नहीं किया ।

दस्युओं से संघर्ष

सन १९५२ में, जबसे उन्होंने सिसली की धरती पर कदम रखे, तभी से माफिया के विरुद्ध उनका संघर्ष जारी है । उन्होंने अपना पहला दिन मछुओं के एक गांव में बिताया । मछली उद्योग सिसली का एक महत्त्वपूर्ण उद्योग है । इससे हजारों लोगों की जीविका चलती थी, पर माफिया के कारण यह उद्योग ठप्प पड़ा हुआ था । माफिया के पास मछली पकड़ने के आधुनिकतम उपकरण थे। वे रात के समय समुद्र में गैर-कानूनी ढंग से बड़े-बड़े जाल डाल देते थे, जब सब गहरी नींद में होते। उनके पास मोटर ट्रालर थे। प्रातः सिसली के सभी प्रमुख बाजारों में माफिया द्वारा पकड़ी हुई मछलियां पहुंच जातीं, मछुओं के लिए कुछ भी मछलियां शेष नहीं रहतीं ।

मछुओं की बेकारी का कारण समझ कर दोल्ची ने उन्हें संगठित करना प्रारंभ कर दिया। उन्होंने गांधीजी के ढंग पर एक नये प्रकार का आंदोलन चला दिया । उन्होंने जगह-जगह माफिया की मक्कारी एवं सरकार की उदासीनता के विरोध में सभाएं आयोजित कीं । उनका नारा
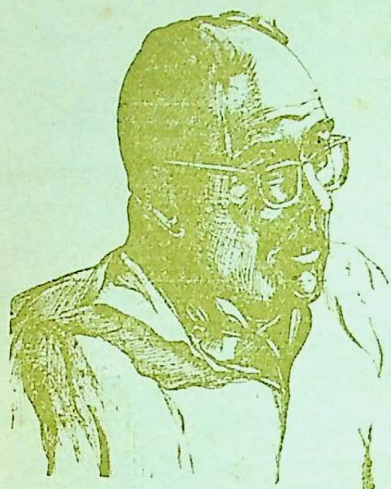
सिसली के गांधी : दानिलो दोल्ची, जिन्होंने दस्युओं का खात्मा किया

था, 'हमसे काम लो और हमें पैसा दो'। अपने नारे को चरितार्थ करने के लिए उन्होंने एक टूटी सड़क पर श्रमदान आयोजित किया। यह सड़क वर्षों से बिना मरम्मत पड़ी हुई थी। जब काम जोरों से चल रहा था, दोल्ची और उनके अनुयायियों को रोकने के लिए पुलिस आ गयी। पुलिस का कहना था कि दोल्ची और उनके अनुयायियों ने सरकारी जमीन पर अनाधिकार काम शुरू किया है। पुलिस के बार-बार कहने पर भी जब काम नहीं रुका तो धर-पकड़ होने लगी। मुकदमा चला, इसने समस्त इटली का ध्यान आकर्षित किया। इस मुकदमे के कारण, सिसली की विभिन्न समस्याओं पर पड़ा हुआ परदा खुल गया। जगह-जगह 'दोल्ची को बचाओ' समितियों का गठन हो ग[या] और अंत में सरकार को उन्हें तथा उन[के] अनुयायियों को छोड़ना पड़ा।

दानिलो दोल्ची गांधीजी के विचा[रों] से बहुत प्रभावित हैं। गांधीजी की पु[ण्य] तिथि पर वे तथा उनके अनुयायी उपवा[स] रखते हैं। उन्होंने जगह-जगह कृषि विका[स] केंद्र, गृह उद्योग प्रशिक्षण केंद्र, आवासि[य] पाठशालाएं आरंभ की हैं। इन पाठशाला[ओं] में माफिया के उन सदस्यों के बच्चे प[ढ़] रहे हैं जो जेलों में हैं या ये बच्चे उन विध[वा]ओं के हैं जिनके पति माफिया द्वा[रा] मार दिये गये थे। सिसली के अधिकारि[यों] के भ्रष्टाचार, चर्च की असहिष्णुता ए[वं] माफिया के षड्यंत्रों का भंडा फोड़ने के कारण दोल्ची के अनेक विरोधी हो गये हैं। माफिया उन पर तीन बार घातक हमले कर चुका है। सिसली के सबसे अधिक शक्तिशाली व्यक्ति आर्कबिशप रुफिनी ने अपने पत्रों में उनकी निंदा की है, पर दोल्ची ने अपनी टेक नहीं छोड़ी। वे अकेले हैं पर उनका सेवा एवं कल्याण का काम जारी है।

—जवाहरलाल नेहरू युवा केंद्र, २११ दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, स[...]

बताइए हमारी मातृभाषा क्या है ?

• इस्मत चुगताई

जयहिंद कालेज के सामने कैसी बेपनाह भीड़ जमा है ! कोई एक्सीडेंट हो गया या किसी नयी फिल्म का प्रीमियर है ? लड़कों, लड़कियों के झुंड चले आ रहे हैं। मोटरों की दोहरी कतारें खड़ी हैं। ओहो, आज एडमीशन की तारीख है। लॉ कालेज के गेट पर भी ऐसी ही भीड़ है। के. सी. कालेज के सामने भी छात्रों के ठठ-के-ठठ जमा हैं।

शिक्षा-प्राप्ति का नशा सवार है। प्रत्येक विद्यार्थी एडमीशन लेने के लिए व्याकुल है कि शिक्षा प्राप्त करके एक दिन अपने देश का भाग्य जगाएगा।

एडमीशन की हुमा-हुमी खत्म हो गयी। कालेज में कैसा सन्नाटा है! कितनी खामोशी से अध्ययन में लगे हैं ! शुरू में तो बड़ा हंगामा रहा। अब शायद जम गये हैं। पर यह अध्ययन कहां किया जा रहा है? क्लासें तो आधी खाली हैं।

ईरोज सिनेमा पर ग्यारह बजे के शो पर किस गजब की भीड़ है ! बाहर 'हाउस फुल' का बोर्ड है, पर ब्लैक से टिकट मिलने की आशा में बेचैन खड़े हैं। निराश होकर बेचारे 'न्यू एंपायर' या 'स्टर्लिंग' की ओर टैक्सियां लेकर भागते हैं! एलफिंस्टन कालेज के छात्र पहले मैदान मार चुके हैं। अब गरीब 'मेट्रो' की ओर लपकते हैं, वरना ग्रांट रोड और लेमिंगटन रोड पर तो टिकट मिल ही जाते हैं।

सिनेमा देखकर निकलते हैं तो लंच का समय हो जाता है। पैसे तो टिकट और टैक्सी में गये। भेलपूरी और भुजियों ही पर संतोष करना पड़ता है।

खुदा जाने क्लास में क्या हुआ करता

है! अधिकतर विद्यार्थी तो सड़क पर खड़ी कारों के गिर्द गप्पें मारा करते हैं। दो-चार उचककर मुंडेरों पर बैठ जाते हैं। आधुनिकतम फैशन के बाल और लिबास। एडमीशन अधिकतर उन्हें ही मिलता है जिनके पिता का रसूख है।

सड़क पर गप्पें मारते-मारते जी उकता जाता है, तो बारह बजे का शो देख लेते हैं। वह न मिला तो साढ़े तीन बजे का शो तो हाथ से नहीं जा सकता। घर पहुंचने में देर हो गयी तो कह दिया, आज ट्यूटोरिल था या कोई अन्य हंगामा था।

डैडी को अपने काम से इतनी फुर्सत हो, तब तो कुछ पूछ-ताछ हो। मम्मी लंच के बाद अपनी सहेलियों के साथ स्वयं फिल्म देखने चली जाती हैं, या रमी की बैठक होती है। मुसीबत तब आती है जब छमाही परीक्षा सिर पर आ जाती है। भागदौड़ करके फिर ट्यूटर लगाये जाते हैं। किताबें, जो इधर-उधर दोस्तों के यहां भूल से छोड़ दी थीं, ढूंढ़ी जाती हैं, या इधर-उधर से मांगकर काम चलाया जाता है। बड़े जोर-शोर से पढ़ाई शुरू हो जाती है। चाय, काफी पी-पीकर रात के बारह बजे तक पढ़ाई, फिर सुबह चार बजे का अलार्म लगाकर जुट जाते हैं। होश-हवास गुम! बड़ी पाबंदी से क्लास में हाजिर! जल्दी-जल्दी उन लोगों से नोट्स मांगे जाते हैं जो नोट्स ले सकते थे।

कुछ पल्ले नहीं पड़ता। कुंजी की मदद भी काम नहीं आती। नकल के सिवा अन्य कोई उपाय नहीं। नकल करने के बहुत से तरीके हैं। कुछ तो पास बैठे... काम आ जाते हैं, फिर कुछ पर्चों पर लिखकर भी ले जाते हैं। कुछ ऐसे सूरमा हैं जो पूरी-की-पूरी किताबें ले जाते हैं, और बहुत बेफिक्री से नकल करते हैं। पास बैठनेवालों की भी मदद करते हैं। इनविजीलेटर की अगर शामत आती है तो 'अनुचित हस्तक्षेप' करने की... में ठुक जाता है। जो समझदार है, ... कोच बैठा अखबार देखता रहता है।

स्कूल के बच्चे तो हैं नहीं, अब ... कालेज के जिम्मेदार 'स्टूडेंट' हैं। उन पर कोई सख्ती तो है नहीं। स्कूलों में बड़े प्र... बंध थे, ठुकाई भी हो जाती थी। कालेज में तो ऐश हैं। कोई घर में भी पूछताछ नहीं कर सकता। माता-पिता, जो पढ़ा-लिखा था, भूल-भाल चुके हैं। यह ... पता नहीं कि कालेज-कोर्स में क्या पढ़ाया जा रहा है?

मेरा फ्लैट जयहिंद कालेज के ठीक सामने है। मेरी बेटी के दोस्त कभी पानी पीने या सुस्ताने आ जाते हैं। बड़े जिंदा-दिल बच्चे हैं। सारा समय फिल्मी-पत्रिकाओं पर जुटे फिल्म पर बहस किया करते हैं। कई लड़के राजेश खन्ना, जितेन्द्र, और अमिताभ बच्चन के हमशक्ल हैं। वैसे ही बाल, वैसी ही भड़कदार कमीज, और लड़कियां तो सभी राखी, जया भादुड़ी हैं।

"तुम इतनी फिल्में देखते हो तो पढ़ते कब हो?" मैं पूछती हूं।

"पढ़ लेते हैं", वे बड़े तकल्लुफ से टाल देते हैं।

"तुम्हारा दिल नहीं लगता पढ़ने में ?"

"दिल लगने की क्या बात है !"

"इट इज सो बोरिंग।"

"हमसे नोट्स नहीं लिये जाते। सर न जाने क्या बताते हैं। कुछ पल्ले नहीं पड़ता।"

"और किताबें ?" मैं पूछती हूं।

"बड़ी डल हैं।"

बनना।"

"कोर्स की किताबें तो जला देने को जी चाहता है। पढ़ने के बाद पढ़ाने के खयाल से हमारे रोंगटे खड़े होते हैं।"

"हमें तो बस डिग्री चाहिए ?"

"हां, जॉब के लिए डिग्री की जरूरत पड़ती है।"

"विद्या की नहीं ?"

"नहीं ! बस डिग्री दिखाने के लिए, बाकी असली काम तो मेल-जोल और

"और परीक्षा कैसे देते हो ?" मैं कुरेदना चाहती हूं।

"हम तो रट लेते हैं।"

"नोट्स पढ़ लेते हैं।"

"की (कुंजी) में बहुत साफ समझ में आता है।"

"तुम्हें शिक्षा प्राप्त करने का शौक नहीं ?" मैं पिटा हुआ प्रश्न दोहराती हूं। वे लोग खुलासा करते हैं, "इससे क्या लाभ ?"

"ताकि दूसरों को दे सको।"

"हमें टीचर तो मरकर भी नहीं

सिफारिश से बनता है।"

"यह भी ठीक कहते हो।" मैं कायल हो जाती हूं।

"इंटरव्यू इंगलिश में होता है। हम कानवेंट के पढ़े हुए हैं, इसलिए हमें जवाब देने में क्या कठिनाई होगी ? बस फटाक-फटाक इंगलिश बोलनेवाले का रोब पड़ जाता है।"

"अगर हिंदी में इंटरव्यू होने लगे तो..."

"तो हमारी छुट्टी ! हमारी मातृभाषा हिंदी नहीं।"

"फिर ?"

"गुजराती।"

"सिंधी।"

"मराठी।"

"तमिल।"

"पंजाबी।" उन्होंने चौदह भाषाएं गिना दीं।

"पर हमें अपनी मातृभाषा भी नहीं आती।"

"क्यों ?"

"जब कानवेंट में नाम लिखवाया गया तब सिस्टर ने कहा कि बच्चे से घर पर सिर्फ इंगलिश बोली जाए। तब से मम्मी डैडी इंगलिश ही बोलते रहे।"

"पर हिंदी तो तुम्हें सीखनी चाहिए" मैंने राय दी, "वह सरकारी भाषा है।"

"और मराठी प्रांत की भाषा है, इसलिए सीखनी चाहिए।"

"तीन भाषाएं कौन सीखे ?"

"मुझे तो जर्मन भी पढ़ना पड़ती है।"

"मैंने फ्रेंच ली है।" मेरा सिर चकराने लगा। किसी देश में इतनी भाषाएं सीखना आवश्यक नहीं। अंगरेज बस अंगरेजी पढ़कर संसार की विद्या प्राप्त कर लेता है। पर हमारे यहां उद्देश्य विद्या प्राप्त करना है ही नहीं। बस डिग्री के बाद नौकरी, यही जीवनोद्देश्य है।

भाषा के बाद फिर विद्या का प्रश्न उठा। बड़ी बहस के बाद विद्यार्थियों ने कायल कर दिया कि विद्या किसी व्यवसाय में काम नहीं आती। भला दफ्तर में शेक्सपियर और मिल्टन किस काम आते हैं? जीवन में अधिकतर काम तिकड़मों के बल-बूते पर होते हैं। आजकल के बच्चे बड़े स्पष्टवादी होते हैं। बड़ी सादगी से बता देते हैं कि उनके पापा किस तरह काला धंधा बहुत ईमानदारी से करते हैं। किताबों में क्या लिखा है, ये नवयुवक क्यों जानें जब वे यह जानते हैं कि किन हथकंडों से एक के हजार बनाये जाते हैं और सरकारी कर्मचारियों को कैसे खिला-पिला कर काम बनाया जाता है। डिग्रियां तो आड़े समय में काम आती हैं, हालांकि दादा-परदादा बिना डिग्रियों के लखपति हो जाते थे।

"हमारे दादा को दस्तखत करना नहीं आता था। अंगूठा लगा देते थे।"

लड़कियां भी पढ़ाई में आंखें फोड़ना मूर्खता समझती हैं। माडलिंग अधिक दिलचस्प और फायदेमंद है। फिल्म में जाने का मौका भी मिलता है। वैसे इश्क समय काटने के लिए किया जा सकता है और करना ही पड़ता है; पर शादी बड़े सोच-विचार के बाद माता-पिता की राय से ही करना चाहिए—तगड़े असामी से। वैसे घर में दूल्हे के इंतजार में बैठने के बजाय समय काटने के लिए कालेज ही रह जाता है। जिस वक्त भी लड़का मिल जाता है, मां-बाप पढ़ाई छुड़ाकर ब्याह कर देते हैं। यह कालेज की पढ़ाई भी ढकोसला है। सिर्फ बदसूरत, गरीब और गिलगिली लड़कियां पढ़कर अध्यापिकाएं बनती हैं। अमीर लड़की ओढ़ने-पहनने

का सलीका प्राप्त करके फटाफट अंगरेजी बोलती हो, बस शादी हो जाती है।

वहीं गरीब लड़कियां; अगर उनके पास सूरत हो तो वे कहीं हाथ मार लेती हैं। जो उस दौलत से वंचित हैं, वे भी पढ़ाई से कतराती हैं। पढ़कर अध्यापिका बन गयीं या क्लर्की ही हाथ आयी, बस। इससे तो कॉल-गर्ल ज्यादा कमा लेती है। सूरत की जरूरत नहीं, अच्छा जिस्म हो तो काम बन जाता है। नये-नये होटल खुल रहे हैं। थोड़ा-सा मटकना आ जाए तो 'स्ट्रिपटीज' करना भी काफी अच्छी आय का साधन है। हेयर-ड्रेसिंग में भी बहुत लाभ है।

हर जगह डिग्री की कीमत चलती है। क्या ही अच्छा हो अगर ये कालेज सिनेमाघरों में बदल दिये जाएं, होटल बना दिये जाएं, रेस्तरां में ढाल दिये जाएं और डिग्रियों के लिए एक मिल्क-बूथ (दूध की दूकान) जैसे डब्बे लगा दिये जाएं जहां फटाफट बड़ी-बड़ी फीसें लेकर डिग्रियां दे दी जाएं, जिस तरह झूठे परमिट और लाइसेंस मिलते हैं। इसमें तो सरकार का निरा फायदा है। खर्च कम और मुनाफा ज्यादा। इतना बड़ा स्टाफ पालना, यूनीवर्सिटियों के चांसलर, और वाइसचांसलरों के खर्चे, प्रोफेसरों की मुसीबत—न इनकी कोई जरूरत, न कोई इनका आदर करता है। सब सिफारिशों और घूस से खरीदे जा सकते हैं। यदि अकड़ दिखाते हैं तो उठाकर पीट दिये जाते हैं।

मैं खामोश इन विद्यार्थियों को देखती हूं। वे बड़े बुद्धिमान हैं। शरीफ और सभ्य हैं। जीवन के मूल्य कुछ ऐसे तोड़-मोड़ कर उनके सामने पेश हुए हैं कि उनका विश्वास भी विकृत हो गया है। अभी ऐसे विद्यार्थियों की संख्या अधिक नहीं, क्योंकि ऐसा वर्ग अभी सीमित है, पर यह वह छोटा-सा वर्ग है जो आगे चलकर देश की बागडोर संभालेगा। यही अंगरेजीदां वर्ग है जो चुनाव पर काबू पाएगा और देश के स्याह-सफेद का मालिक बन जाएगा। इनमें से कोई रॉकफेलर बन जाएगा, कोई फोर्ड तो कोई निक्सन का रूप धारेगा। देश से बाहर इसका रसूख न होगा, इसलिए हिंदुस्तान को ही कोरिया और विएतनाम बनाएगा।

यह मुट्ठी भर चने भाड़ फोड़ेंगे? या कुछ हो जाएगा? या भाड़ उन्हें भून कर रख देगा? ●

आप अदृश्य रह सकते हैं और दूसरों को देख सकते हैं। कारण यह है कि अवरक्त किरणों से जो प्रकाश उत्पन्न होता है वह दृश्य प्रकाश-किरणों के मार्ग में रुकावट डाल देता है। हां, यह आप सोचिए कि अवरक्त किरणों का जाल आप अपने चारों ओर फैलायें किस तरह!

युगलकिशोर विजयवर्गीय, देवास : भोजन करते समय पानी कब पीना चाहिए? कोई कहता है, भोजन के अंत में पीना

डॉ. रामसनेही यादव, भोपाल : राजस्थान के लोकनाट्य 'रावलों के स्वांग' का कुछ परिचय दें।

रावलों के स्वांग को राजस्थान में 'रावलों की रम्मत' कहा जाता है। रावल एक याचक जाति है, लेकिन इस जाति के लोग सामान्य भिखारियों की तरह दर-दर भीख नहीं मांगते, बल्कि अपनी नाट्य-

तान भाषाएं कौन सीखे!

"मुझे तो जर्मन भी पढ़ना पड़ती है।"

"मैंने फ्रेंच ली है।" मेरा सिर चकराने लगा। किसी देश में इतनी भाषाएं सीखना आवश्यक नहीं। अंगरेज बस अंगरेजी पढ़कर संसार की विद्या प्राप्त कर लेता है। पर हमारे यहां उद्देश्य विद्या प्राप्त करना है ही नहीं। बस डिग्री के बाद नौकरी, यही जीवनोद्देश्य है।

भाषा के बाद फिर विद्या का प्रश्न उठा। बड़ी बहस के बाद विद्यार्थियों ने कायल कर दिया कि विद्या किसी व्यवसाय में काम नहीं आती। भला दफ्तर में शेक्स-

लोकनाट्य होते हैं, जिनमें गीत और के साथ किसी जाति या सामाजिक दाय पर व्यंग्य किया जाता है। इनमें पात्रों का काम भी पुरुष-पात्रों के किया जाता है, इसलिए रावल लोग 'रम्मत' में अपनी स्त्रियों को दर्शकों रूप में भी नहीं आने देते। रावलों के सारी रात चलते रहते हैं और ये वेश बदलकर विभिन्न स्वांग दिखाते रहते हैं। इनके स्वांगों में प्रमुख हैं—अर्द्धनारी सांग (अर्द्धनारीश्वर का रूपक), (मियां), बांणियौ (वनिया), (मींणा जाति), दरजी, जोगी, सूरदास, कांन-गूजरी (कृष्ण-गोपिका) आदि। रावल लोग अपने स्वांगों में अश्लील निम्न कोटि के व्यंग्य अथवा भोंडा प्रदर्शन नहीं करते, जैसा कि अन्य प्रदेशों के स्वांगों में पाया जाता है। अपने स्वांगों में साहित्यिकता का देने का प्रयत्न करते हैं। प्रत्येक रावल चारणों की तरह अपने को रचनाकार बनाने की कोशिश करता है, लेकिन साहित्यिक शिक्षा-दीक्षा के अभाव उनकी रचनाएं स्तरीय नहीं बन पातीं। साथ ही उनकी प्रस्तुति में भी कलात्मकता बहुत कम होती है। उनके स्वांगों में अभि-नय पर कम, वाचन पर अधिक जोर रहता है और गायन की धुनों में वैविध्य प्रायः अभाव रहता है।

अनिल हर्वे, जबलपुर : शार्टहैंड का आविष्कार कब और किसने किया?

हिंदी शार्टहैंड का आविष्कार हो चुका है ?

शार्टहैंड का आविष्कार पहले-पहल इंगलैंड के डाक्टर टिमोथी ब्राइट ने किया था। उन्होंने १५८८ में अंगरेजी में शार्टहैंड सीखनेवालों के लिए पहली पुस्तक लिखी थी। लेकिन टिमोथी की पद्धति में कुछ व्यावहारिक कठिनाइयां थीं, जिन्हें आगे चलकर आइजक पिटमैन ने दूर किया। पिटमैन की पद्धति बहुत लोकप्रिय हुई और बाद में अन्य अनेक पद्धतियां निकल आने के बावजूद पिटमैन की पद्धति दुनिया भर में चलती है। हिंदी में शार्टहैंड पिटमैन की पद्धति के ही आधार पर विकसित की गयी है।

सुमंगला, वर्धा : जिस समय हम निराश होते हैं, थकावट अधिक क्यों महसूस होती है? कभी-कभी ऐसा होता है कि निराशा का कोई कारण न होकर भी थकावट, और थकावट का कोई कारण न होने पर भी निराशा होती है, लेकिन फिर भी दोनों चीजें साथ ही महसूस होती हैं। इसका क्या कारण है ?

शरीर और मन एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। लेकिन जहां तक थकावट और निराशा का आपसी संबंध खोजने की बात है, थकावट निराशा के कारण होती है, थकावट के कारण निराशा नहीं। परिश्रम करनेवाले प्राय: निराश नहीं होते, यद्यपि वे शारीरिक रूप से अधिक थकते हैं, जबकि निराश रहनेवाले थोड़े ही श्रम से बहुत थक जाते हैं।

सुभाष पुंडरीक, यवतमाल : क्या कोई ऐसी वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा मनुष्य स्वयं अदृश्य रहकर दूसरों को देख सके।

जी हां, ऐसी विधि है। यदि आप अवरक्त (इन्फ्रारेड) किरणों का जाल अपने आसपास किसी तरह बुन लें तो
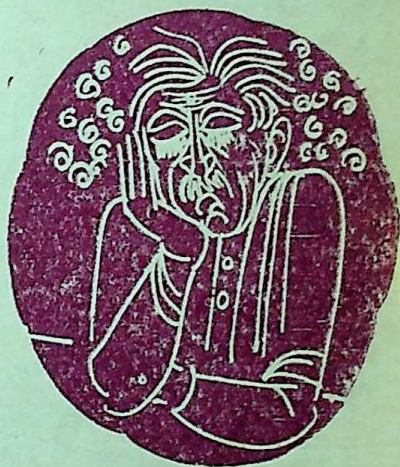
आप अदृश्य रह सकते हैं और दूसरों को देख सकते हैं। कारण यह है कि अवरक्त किरणों से जो प्रकाश उत्पन्न होता है वह दृश्य प्रकाश-किरणों के मार्ग में रुकावट डाल देता है। हां, यह आप सोचिए कि अवरक्त किरणों का जाल आप अपने चारों ओर फैलायें किस तरह !

युगलकिशोर विजयवर्गीय, देवास : भोजन करते समय पानी कब पीना चाहिए ? कोई कहता है, भोजन के अंत में पीना

चाहिए, कोई कहता है--भोजन के मध्य में। उचित क्या है?

अधिकांशतः यह माना जाता है कि भोजन करते समय पानी कम पिया जाना चाहिए। भोजन के अंत में कुछ घूंट पीकर उठ जाना चाहिए और पंद्रह-बीस मिनट बाद प्यास लगने पर पेट भर पानी पीना चाहिए। ऐसा माना जाता है कि इससे पाचन-क्रिया ठीक होती है। भोजन के मध्य में तो पानी पीने की सलाह दी जा सकती है, लेकिन भोजन से पहले ही पानी पी लेने की सलाह अनुचित है। इससे अग्निमांद्य-जैसा रोग हो जाता है।

सुरेश माथुर, जोधपुर: एक प्रतिष्ठित पत्रिका में 'संमिलित', 'असंमान', 'संमेलन', 'संमति' आदि शब्द देखने में आये। हिंदी भाषा के अनुसार क्या इन शब्दों की वर्तनी सही है? पत्रिका के संपादक ने एक पाठक के पत्र के उत्तर में इन शब्दों की वर्तनी को पाणिनि के सूत्र व संस्कृत नियमों के आधार पर सही बताया है। क्या संस्कृत व हिंदी के व्याकरण में कोई अंतर नहीं है?

हिंदी व्याकरण के अनुसार ऐसे स्थलों पर आधा पंचमाक्षर लिखने की परंपरा रही है, लेकिन टाइप और मुद्रण की सुविधा के लिए पिछले कुछ वर्षों से पंचमाक्षर के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग किया जाने लगा है। परंतु इस नयी वर्तनी में भी दो अपवाद रखे गये हैं। वे अपवाद हैं कि यदि 'न' और 'म' अलग-अलग या परस्पर संयुक्त हों तो [illegible] प्रचलित रूप में ही लिखा जाए, जैसे [illegible] उत्पन्न, विपन्न, सन्नारी, अन्नप्राश[illegible], [illegible]लित, सम्मान, सम्मेलन, सम्मति [illegible] इस प्रकार आधे पंचमाक्षर के स्थान [illegible] अनुस्वार का प्रयोग वहीं किया जा[illegible] है जहां उसका संयोग पुनः उसी [illegible]क्षर से न होता हो। इस प्रकार '[illegible]' की जगह 'गंगा', 'पञ्चम' की [illegible] 'पंचम', 'घण्टा' की जगह '[illegible]' 'सन्तोष' की जगह 'संतोष', 'प्रा[illegible]' की जगह 'प्रारंभ' आदि शब्द हिं[illegible] नयी वर्तनी के अनुसार सही हैं, [illegible] 'उत्पंन', 'विपंन', 'संनारी', '[illegible]' तथा 'संमिलित', 'ससंमान', '[illegible]' 'संमति' आदि शब्द अशुद्ध माने जा[illegible] चाहे किन्हीं भी सूत्रों के आधार पर [illegible] औचित्य सिद्ध किया जाए। 'न' [illegible] 'म' के अपवाद में यह बात ध्यान में र[illegible] चाहिए कि यदि ये दोनों आपस में [illegible] संयुक्त होंगे तब भी इनसे संबंधित [illegible] पूर्व-प्रचलित रूप में ही लिखे जाएंगे, [illegible] 'जन्म', 'उन्मेष', 'उन्मूलन', 'निम्न' आ[illegible] इन्हें 'जंम', 'उंमेष', 'उंमूलन', 'निंन' [illegible] लिखना गलत और हास्यास्पद होगा।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

औरत की 'ना' का मतलब 'हां' [illegible] क्यों माना जाये?

जी, आप ठीक कहती हैं। हर [illegible] के अपवाद होते हैं।

—बिधु[illegible]
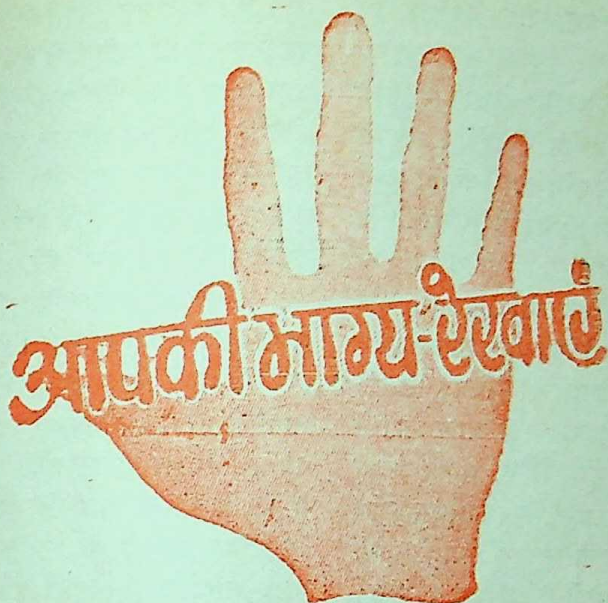
● पी. टी. सुन्दरम

सौभाग्य की प्रतीक--धन रेखा

पिछले अंक में आपने प्रख्यात हस्तरेखाविद प्रो. पी. टी. सुन्दरम से हृदय रेखा के बारे में जानकारी प्राप्त की। अब यहां प्रस्तुत है भाग्य रेखा या धन रेखा का परिचय

अब हम भाग्य रेखा की चर्चा करेंगे। भाग्य रेखा को धन रेखा भी कहते हैं। यह इसीलिए कि इस रेखा से हमें व्यक्ति-विशेष की प्रगति, अच्छी, बुरी स्थिति आदि का पता चलता है। हाथों की बनावट के संदर्भ में ही हमें भाग्य रेखा का अध्ययन करना चाहिए। अब हम यह देखें कि भाग्य रेखा कहां से शुरू होती है?

भाग्य रेखा, जीवन रेखा, कलाई, चंद्र-पर्वत, मस्तिष्क रेखा और हृदय रेखा—कहीं से भी शुरू हो सकती है। यदि भाग्य रेखा जीवन रेखा से शुरू हो तो व्यक्ति अपनी योग्यता के साथ-साथ परिवार के प्रभाव से भी सफलता प्राप्त करेगा, लाभान्वित होगा (**चित्र १, अ-अ**)। जिन व्यक्तियों के हाथों में भाग्य रेखा कलाई से शुरू होकर

जीवन रेखा के समानांतर चलती हुई उसे कहीं स्पर्श करतीं है तो यह कहा जा सकता है कि वे व्यक्ति बचपन में अपने माता-पिता के अधीन रहे होंगे। बाद में उन्होंने अपनी स्वतंत्र राह बनायी होगी **(चित्र १, आ-आ)**। कलाई से निकल शनि पर्वत तक जानेवाली सीधी भाग्य रेखा व्यक्ति के अतिशय सौभाग्यशाली होने की सूचक है। ऐसी रेखा वाला व्यक्ति अपार सफलता प्राप्त करता है। **(चित्र १, ऊ-ऊ)** चंद्र पर्वत से निकलनेवाली भाग्य रेखा से पता चलता है कि व्यक्ति का जीवन उसकी अपनी मानसिक क्षमता पर निर्भर करेगा। जनता द्वारा सम्मानित व्यक्तियों के हाथों में ऐसी रेखा होती है। **(चित्र १, इ-इ)** स्त्री के हाथ में भाग्य रेखा से चंद्र पर्वत की ओर जानेवाली रेखा सफल विवाह की द्योतक होती है। **(चित्र १, ए-ए)**

शनि पर्वत की ओर जानेवाली सीधी रेखा से यदि कोई रेखा किसी अन्य पर्वत की ओर जाती है तो उस पर्वत की विशेषताओं पर भी विचार करना चाहिए। भाग्य रेखा का मध्यमा की तीसरी पोर तक पहुंचना अपमानजनक मृत्यु अथवा अपमानजनक कैद का सूचक होता है। गुरु पर्वत के मध्य तक पहुंचनेवाली सीधी भाग्य रेखा काफी शुभ होती है। ऐसी रेखावाला व्यक्ति प्रतिष्ठित एवं शक्ति-संपन्न होता है। ऐसे व्यक्ति घोर महत्त्वाकांक्षी होते हैं तथा अपने दृढ़ निश्चय तथा प्रयत्नों द्वारा निरंतर आगे बढ़ते जाते हैं। यदि भाग्य रेखा के अंत में [illegible] का चिह्न है तो व्यक्ति को विवाह से [illegible] लाभ होता है। ऐसे व्यक्तियों की [illegible]लता के समय का अनुमान भाग्य रेखा [illegible] आनेवाले घुमाव या मोड़ को देख[illegible] लगाया जा सकता है। यदि भाग्य रे[illegible] गुरुपर्वत को भी पार कर जाती है [illegible] उस व्यक्ति को अकल्पनीय गौरव, [illegible] सम्मान की प्राप्ति होती है। यदि नेता [illegible] हाथ में भाग्य रेखा हथेली के पार [illegible] जाती है तो उसके अनुयायी उसके नेतृ[illegible] पर प्रश्न-चिह्न लगाने लगते हैं और [illegible] में वह काफी बदनाम भी होता है।

हृदय रेखा के पास अचानक रुक जा[illegible]वाली भाग्य रेखा स्नेहादि के कारण [illegible]फलता की द्योतक होती है। पर यदि [illegible] रेखा हृदय रेखा से मिलकर गुरु पर्वत [illegible] जाती है तो उस व्यक्ति को बरबाद कर[illegible] वाला प्रेम ही उसे संतोषजनक स्थि[illegible] तक भी पहुंचाता है। (चित्र २, अ-अ)

मंगल क्षेत्र में जाकर रुक जानेवा[illegible] भाग्य रेखा कष्टों की सूचक होती है। पर यदि यही रेखा मंगल-क्षेत्र से आगे ब[illegible] जाती है तो ऐसी रेखावाला व्यक्ति कठि[illegible]नाइयों और आपदाओं को पार कर जाता है। उसका परवर्ती जीवन सफल होता है।

मस्तिष्क रेखा से शुरू होनेवाली भाग्य रेखा जीवन में विलंब से सफलता प्राप्त होने की सूचक होती है। यही बात हृदय रेखा से शुरू होनेवाली भाग्य रेखा के बारे में है। (चित्र १, उ-उ, ई-ई)

यदि भाग्य रेखा की एक शाखा चंद्र पर्वत की ओर तथा दूसरी शाखा शुक्र पर्वत की ओर जाती हो तो ऐसी रेखावाले व्यक्ति का भाग्य कल्पना तथा प्रेम और वासना के मध्य झूलता रहता है। (चित्र २, आ-आ-आ)

यदि कलाई के पास भाग्य रेखा की दो

स्वरूप वह किसी और से विवाह करती है तथा सुखी भी रहती है। (चित्र ४, इ)

भाग्य रेखा का टूटना दुर्भाग्य का सूचक होता है, पर यदि रेखा के टूटने के स्थान के पूर्व कोई रेखा शुरू होती है तो उससे पता चलता है कि उसके कैरियर में उसके अपने निश्चय के कारण कोई

चित्र-1 चित्र-2 चित्र-3 चित्र-4
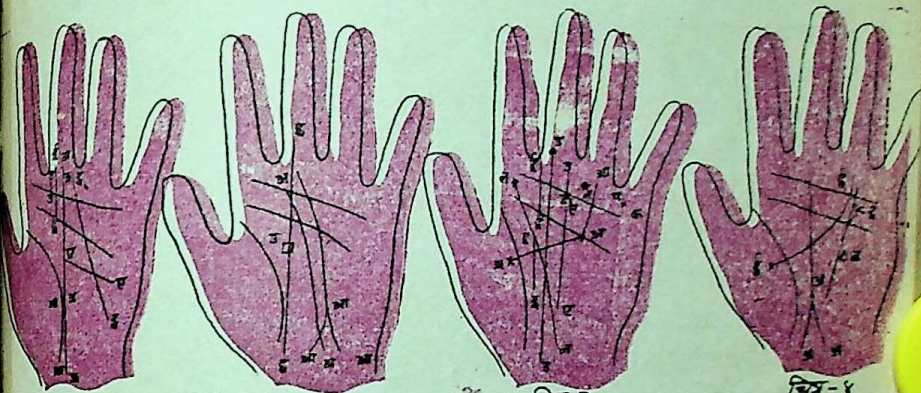
शाखाएं होती हैं तो ऐसी रेखावाला व्यक्ति एक चतुर साहित्यकार होता है तथा किसी स्कॉलरशिप का भी पात्र हो सकता है। (चित्र ४, अ-अ-अ) स्त्रियों के हाथों में ये रेखाएं और बातें भी बतलाती हैं। कभी-कभी ऐसी रेखाओंवाली लड़की की मां उस पर हावी हो जाती है तथा उसे स्कूल से निकालकर जीविकोपार्जन में लगा देती है। यदि किसी लड़की के हाथ में हृदय रेखा के पास भाग्य रेखा में लंबा द्वीप हो तो उस लड़की को तलाक के मामले में उलझना पड़ता है। वैसे इसके परिणाम-

परिवर्तन आएगा। दोहरी भाग्य रेखा एक अच्छा चिह्न मानी गयी है। ऐसी रेखा-वाले व्यक्ति के दो शानदार कैरियर होंगे।

आम तौर पर वर्ग को संकटों से रक्षा करनेवाला माना जाता है, पर यदि मंगल क्षेत्र में जीवन रेखा के पास भाग्य रेखा पर कोई वर्ग हो तो घरेलू जीवन में किसी दुर्घटना का पता चलता है, और यदि यह वर्ग चंद्र पर्वत पर हो तो यात्रा में दुर्घटना का पता चलता है।

शनि पर्वत की ओर सीधी जानेवाली रेखा अतिशय सौभाग्य-वर्द्धक होती है।

यदि वह सूर्य पर्वत की ओर जाती है तो कला, साहित्य में सफलता मिलती है और यदि वह बुध पर्वत की ओर जाए तो ऐसा व्यक्ति एक समृद्ध व्यवसायी बनता है।

हृदय रेखा से ही निकलनेवाली रेखा वृद्धावस्था में सौभाग्यसूचक मानी जाती है।

किसी-किसी व्यक्ति के हाथों में भाग्य रेखा होती ही नहीं। ऐसा व्यक्ति अच्छे स्वभाव वाला होता है तथा जीवन में कोई योजना नहीं बनाता है।

वैधव्यसूचक रेखा

यदि मस्तिष्क रेखा पर स्थित किसी तारे से निकली कोई प्रभावक रेखा जीवन रेखा को काटती हुई शुक्र पर्वत पर एक तारे में समाप्त हो तथा कलाई से निकली कोई भाग्य रेखा प्रभावक रेखा को काटने वाले स्थान पर रुक जाए तो ये सारे चिह्न वैधव्य-सूचक होते हैं। पति के गलत चुनाव के कारण ऐसी स्त्री का जीवन नष्ट हो जाता है। शुक्र पर्वत पर कोई तारा हो और इस तारे से कोई धनुषाकार प्रभावक रेखा निकलकर मस्तिष्क रेखा को काटती हुई अनामिका तक पहुंचती हो एवं इसके साथ ही यदि मस्तिष्क रेखा के पास कटाववाले स्थान पर कोई तारा होता हो तो ऐसी रेखावाला व्यक्ति पक्का जुआड़ी होता है तथा उसके पास अपना कहलाने लायक कुछ भी नहीं होता। पर ऐसा व्यक्ति अपनी ३५ या ४० वर्ष की अवस्था में किसी संबंधी की मृत्यु के कारण काफी बड़ी संपत्ति का उत्तराधिकारी बनता है। उपर्युक्त अ... के बाद उसकी जुआड़ी-वृत्ति ... जाती है (चित्र ४-ई)

एक विशाल चतुर्भुज के भीतर ... भाग्य रेखा यदि हृदय रेखा से पुनः ... हो तो ऐसी रेखावाले व्यक्ति को वि... लिंगवाले व्यक्ति के कारण अच्छा पद प्रा... होता है। यदि इसके साथ स्पष्ट सूर्य रे... भी हो तो इस तथ्य की पुष्टि होती है।

शनि पर्वत पर तारे के साथ स... होनेवाली भाग्य रेखा के साथ-साथ ... बुध पर्वत पर जाली-सी हो तो ऐसे चिह्न... वाले व्यक्ति में दोषों की भरमार हो... है। ऐसे व्यक्ति की किसी बुरे का... के कारण हिंसात्मक मृत्यु होती है (चित्र ३, ऊ-ऊ, क)। यदि किसी स्त्री के हाथ में भाग्य रेखा पर द्वीप के साथ ... पर्वत पर तारा हो तो वह अपनी हैसि... से कहीं बहुत अधिक हैसियतवाले व्यक्ति से प्रेम करेगी। यदि सूर्य पर्वत पर तारा हो तो प्रेमी कलाकार या साहित्यका... होगा और यदि बुध पर्वत पर तारा हो तो प्रेमी बहुत बड़ा व्यवसायी, वैज्ञानि... अथवा अधिकांश मामलों में डाक्टर होगा। (चित्र ३, ल-ल, न, प) यदि किसी व्यक्ति के केवल एक हाथ में चंद्र पर्वत से कोई रेखा निकलकर कुछ दूर तक भाग्य रेखा के साथ चले तो वह व्यक्ति अपने जीवन में दूसरों से प्रभावित होता है। यदि उसके दोनों हाथों में ऐसी रेखाएं हों तो उस व्यक्ति के दो कैरियर होंगे।

कालेज के कम्पाउंड से

अमरीका में मैं शिक्षण का कोर्स कर रही हूं। पिछली गरमी में मैंने शारीरिक शिक्षा का विषय चुना था। उसके प्राध्यापक थे डा० बेली। तैराकी-शिक्षा के एक दिन पूर्व उन्होंने बड़े मजाकिया अंदाज में कहा, "मैं तुम सबको 'मिनिमम बिकिनी' में देखना चाहता हूं।" उस पर एक उद्दंड छात्रा ने कुछ ऐसी बात कह दी जिसे मैं सुन न सकी, पर उसके जवाब में डॉ० बेली की आवाज आयी, "नहीं, नहीं, मैं पचास से ऊपर हो रहा हूं।"

एक बार यह बताया जा रहा था कि कमरे के अंदर कितने प्रकार के खेल खेले जा सकते हैं। एक डब्बे में अनेक छोटे-छोटे कागजों में भिन्न-भिन्न खेलों के नाम लिखे हुए थे। हर छात्र-छात्रा को एक कागज उठाना पड़ता था और पढ़ने के बाद उस खेल को दिखाना पड़ता था। सबने जिद करके डॉ० बेली को भी ला खींचा। उन्होंने कहा, "इसमें लिखा है — इस कक्षा की सभी सुंदर लड़कियों का चुंबन करो।"

मेरा भारतीय संस्कार ऐसी बातों में रस नहीं ले पाता था। गुरु और शिष्य के संबंध की परंपरा हमारे देश में कितनी पवित्र और स्निग्ध रही है। सुनती हूं, अब वहां भी बदलती जा रही है। काश, हम अपनी प्राचीन संस्कृति को न भुलाते।

—उषा सिन्हा
जर्सी सिटी स्टेट कालेज, न्यजर्सी (अमरीका)

बी. ए. की परीक्षा के कुछ ही दिन शेष थे। भूगोल की प्रयोगात्मक परीक्षा की तैयारी के लिए हम एक दिन ग्रुप में बंटे हुए सर्वेक्षण कर रहे थे। थोड़ी देर में एक लड़का हमारे पास आया और उसने हमसे रबड़ मांगी। हमारे पास रबड़ थी, फिर भी हमने कह दिया कि नहीं है। वह बिना कुछ कहे चला गया।

भूगोल की प्रयोगात्मक परीक्षा के दिन संयोग से वर्षा होने लगी। हम अपने कमरे से दूर, मैदान में कार्य कर रहे थे। वर्षा से हमें घबराहट होने लगी क्योंकि सर्वेक्षण का सामान काफी भारी था और हम पांच लड़कियां उसे एक बार में नहीं ले जा सकती थीं। अधिक देर होने से सामान के भीगने का डर था। मेरी एक सहेली ने पासवाले ग्रुप के लड़कों से मदद मांगी। संयोगवश उसमें वह लड़का भी था जिसने हमसे पहले रबड़ मांगी थी। उसने तपाक से कहा, "आपने उस दिन हमें रबड़ देने से इनकार कर दिया था, लेकिन हम आपकी सहायता जरूर करेंगे।" यह सुनकर हमारा सिर शर्म से झुक गया।

—कमलेश जैन,
चित्रगुप्त महाविद्यालय, मैनपुरी

दो वर्ष पूर्व की बात है। मैं बी. एस-सी. का छात्र था। हमारे अंगरेजी के प्राध्यापक की बुरी आदत थी कि वे हमारी हर बात का विरोध करते थे, चाहे उसके बारे में उन्हें कुछ जानकारी हो या न हो। एक दिन हमारे कॉलेज में एक फिल्म-शो हुआ। उसके पश्चात हमारी कक्षा का ही एक छात्र हमें प्रोजेक्टर के विभिन्न भागों के बारे में बताने लगा। जैसे ही उसने यह बताया कि इसके आगे लगा हुआ लेंस

बायें से : कमलेश जैन, उषा सिन्हा, सतीश पुरी, बसंतकिशोर सुन्द्रियाल

'कॉनकेव' है तो हमारे उन प्राध्यापक ने जो पीछे खड़े थे, कहा कि नहीं, यह 'कॉनवेक्स' है। थोड़ी देर में हमारे भौतिकी के प्राध्यापक भी वहीं आ पहुंचे। मैंने उनसे पूछा, क्या यह लेंस 'कॉनवेक्स' है, तो वे तुरंत बोले, "कौन बेवकूफ इसे 'कॉनवेक्स' कहता है? अरे नालायको, तुम्हें विज्ञान का छात्र होने पर भी यह नहीं मालूम कि यह 'कॉनकेव' लेंस है!"

हमने मुड़कर देखा, हमारे अंगरेजी के प्राध्यापक शर्म से पानी-पानी हुए खड़े थे। इसके बाद उन्होंने हर बात का विरोध करने की अपनी आदत सुधार ली।

—सतीश पुरी
ए ५।१४ कृष्णा नगर, दिल्ली-११००५१

फरवरी का महीना था। ठंड पड़ रही थी। हमारे गणित के शिक्षक ओसवाल साहब हमारी कक्षा ले रहे थे। बगल में ही डॉ. डबराल ने ओसवाल साहब को संबोधित करते हुए कहा—

"रंगी को नारंगी कहें, बने दूध को खोया चलती को गाड़ी कहें, देख कबीरा रोया

ओसवाल साहब, कबीरदास तो इसलिए रोते थे कि जिस वस्तु पर अच्छा खासा रंग है उसे लोग नारंगी कहते हैं। दूध से बनी सबसे स्वादिष्ट चीज को खोया अर्थात गंवाया हुआ और चलनेवाली चीज को गड़ी हुई कहते हैं। परंतु मैं इसलिए रोता हूं कि जो मास्टर साहब सवाल पढ़ाते हैं उन्हें असवाल कहते हैं।"

—बसंतकिशोर सुन्द्रियाल, राजकीय **इंटरमीडिएट कालेज, लैंसडौन** (गढ़वाल)

वृहत उपन्यासों की श्रृंखला में एक और

बृहत उपन्यासों के लेखन में उपेन्द्र नाथ अश्क की स्थिति जानी-मानी है। 'गिरती दीवारें', 'शहर में घूमता आईना' और 'एक नन्ही किन्दील' के पश्चात दो खंडों में प्रकाशित 'बांधो न नाव इस ठांव' उपन्यास लेखक की इस विशेषता को और भी उजागर कर देता है। उपन्यास नौ भागों में लिखने की योजना के अंतर्गत, लेखक के अनुसार यह उपन्यास पिछले उपन्यासों का अगला सोपान है।

उपन्यास के दोनों खंड एक ही केंद्र पर घूमते हैं और वह केंद्र है लेखक का मानस-पात्र चेतन, जो पत्रकार, संपादक, लेखक और शिक्षक के बहुरंगी मुखौटे लगाये एक अध्याय से दूसरे अध्याय तक पाठकों को साथ लिये दौड़ता रहता है, अंत में हाथ आती है केवल खीज। प्रारंभ में उपन्यास-मंच पर चेतन एक संपादक के रूप में आता है जो जरा-सी बात पर मालिक से झगडकर पत्र को छोड़ देता है। यहां लगता है कि चेतन में अपना कहने-वाला एक भारी-भरकम व्यक्तित्व है, किंतु आगे यह धारणा टूट जाती है।

गुस्से और क्षणिक आवेश में लिया गया निर्णय व्यक्ति को रोजी-रोटी की चिंता से मुक्त नहीं रख सकता। उसी चिंता में एक समय ऐसा भी आता है जब चेतन सड़क पर खड़ा आवाज लगा-लगाकर रूमाल बेचता फिरता है। यही घटना उसके अनेक हमदर्दों को सामने लाती है जिनमें एक है पंडित रत्न जो उसे अनुवाद आदि कार्य दिलाने के साथ एक ऐसी योजना भी बनाता है जो उसके लेखकीय व्यक्तित्व के अनुकूल होने के साथ-साथ उसे आर्थिक चिंता से भी मुक्ति दिला सकती है। वह 'सोसाइटी फॉर यू एंड मी' का प्रस्ताव रखता है।

चेतन को अंधेरे में उजाले की एक रेखा दीखती है और वह उस सोसाइटी के सदस्य तथा संरक्षक बनाने में रात-दिन एक कर देता है, इस प्रयत्न में उसे थोड़ी-बहुत सफलता भी मिलती है, किंतु इसी बीच उसे एक खूबसूरत लड़की की ट्यूशन का आकर्षण अपनी ओर खींचता है और

वह हमशायर दूसरे पर सोसाइटी का कार्य-भार सौंपकर शिमला चला जाता है। यहां उपन्यास का दूसरा खंड प्रारंभ होता है, जो केवल चेतन और किशोरी चन्द्रा के बीच की घटनाओं को समेटे है। मंदबुद्धि, अल्हड़ चन्द्रा को पढ़ाते हुए चेतन किन-किन परिस्थितियों और मनःस्थितियों से गुजरता है उसका सविस्तार वर्णन इसी खंड में किया गया है।

चेतन युवा पीढ़ी का वह लेखक है, जो बुनियादी आदर्शों के हाथों में अपने मंसूबों को परवान चढ़ाना चाहता है। किंतु जीवन की व्यावहारिकता बनाम आधुनिकता के संदर्भों में वह अपने आपको वहीं खड़ा पाता है जहां से वह चला था! बीच का सारा सफर रेत की मुट्ठी-सा सरकता चला जाता है। एक के बाद दूसरे, दूसरे के बाद तीसरे और फिर चौथे-पांचवें काम को हाथ में लेने और उसे अधूरा छोड़ देने की प्रवृत्ति उसके जीवन में विश्वास और शक्ति के असंतुलन को जन्म देती है। जीवन की यह कमजोरी उसे पूरे उपन्यास में भटकाती रहती है। इसके लिए बहुत हद तक उसका 'ओवर कान्फीडेंस' जिम्मेदार है। जिन आदर्शों को लेकर वह बढ़ता है वे समय-समय पर छूटते जाते हैं। उसमें अंतर्द्वंद्व है लेकिन आदर्शों के तर्कों द्वारा वह उन्हें सहलाता रहता है।

वास्तव में लेखक ने समकालीन युग को चित्रित किया है, साहित्यिक मोर्चों पर डटे धुरंधरों का पर्दाफाश किया है कि किस प्रकार बुजुआ लेखक नये लेखक का शोषण करते हैं। यद्यपि लेखक ने चेतन को उपन्यास का केंद्र बनाया है, फिर भी वह पूरे उपन्यास में एक-दो स्थानों को छोड़ कर पाठकों को प्रभावित नहीं कर पाता। प्रारंभ में उसका जो व्यक्तित्व उभरता है वह पूर्ण विकसित न होकर अपूर्ण रह जाता है। किसी भी रूप में वह पाठकों की सहानुभूति जाग्रत नहीं कर पाता। उस जैसा कमजोर व्यक्ति अनेक युवतियों से प्रेम का दंभ भरते हुए भी अपनी पत्नी को उस दृष्टि से सर्वोच्च स्थान केवल इसलिए देता कि वह उसकी सत्ता को दैहिक स्वीकारती ही नहीं, वरन् उसके प्रति मौन समर्पित भी है।

पूरे उपन्यास में लगता है कि लेखक प्रत्येक वस्तु और स्थान का 'क्लोजअप' लेता चलता है। कहीं-कहीं इससे ऊब भी होती है। अनेक प्रसंगों को इतना विस्तार दे दिया गया है कि वे उपन्यास की गति में अवरोध उत्पन्न करते हैं।

कमजोरियों के बावजूद लेखक ने लाहौर शिमला तथा ग्रामीण परिवेश और कई स्थितियों को पूरी ईमानदारी से उभारा है।

बांधो न नाव इस ठांव
(भाग १ तथा २)
लेखक : उपेन्द्रनाथ अश्क, प्रकाशक : नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ : क्रमशः ६५९, ५४५ मूल्य : ७५ रुपए।

एक बहुचर्चित उपन्यास

ढोड़ाय चरित मानस बंगला के प्रसिद्ध साहित्यकार स्वर्गीय भादुड़ी का बहुचर्चित, बहुप्रशंसित उपन्यास है, जिसका हिंदी अनुवाद सुपरिचित कथाकार मधुकर गंगाधर ने किया है। देश की आजादी के लिए महात्मा गांधी द्वारा छेड़ी गयी लड़ाई में हमारे समाज के गरीब एवं निम्न समझे जानेवाले वर्ग ने जितनी ईमानदारी और जितने निस्वार्थ भाव से भाग लिया था, उतना शायद अन्य वर्गों के लोगों ने नहीं। यह उपन्यास ऐसे ही निम्न वर्ग के लोगों द्वारा छेड़े गये संघर्ष का मर्मांतक चित्र प्रस्तुत करता है। उपन्यास का नायक ढोड़ाय ऐसे ही लोगों का प्रतीक है। ततमा वंशीय ढोड़ाय निर्धन, निरीह और निरक्षर है किंतु महात्मा गांधी का प्रभाव उसे इस्पात-सा दृढ़ बना देता है। वह उनके सत्याग्रह आंदोलन में पूरी निष्ठा से भाग लेता है। इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि गांधीजी के विभिन्न आंदोलनों की सफलता का अधिकांश श्रेय ढोड़ाय-जैसे लोगों को ही है। उपन्यासकार ने समाज के उपेक्षित एवं शोषित वर्ग का सहानुभूतिपूर्ण चित्रण करते हुए दोहरे व्यक्तित्ववाले अन्य लोगों-यथा भूपतियों, व्यवसायियों, अवसरवादी-बुद्धिजीवियों आदि के वास्तविक स्वरूप का भी उद्घाटन किया है। यों तो कहने को **ढोड़ाय चरित मानस** एक आंचलिक कृति

वचन-वीथी

जहां लोग अपने विचारों को एक-दूसरे के सामने अभिव्यक्त नहीं कर सकते वहां हर प्रकार की स्वतंत्रता असुरक्षित है।

—विलियम अर्नेस्ट

हमें मुक्त तन और मुक्त मन की आवश्यकता है; मुक्त श्रम, निर्बंध हाथों और खुले दिमाग की आवश्यकता है। मुक्त श्रम हमें संपदा देगा और मुक्त विचार—सत्य। —लेन गेम्बेटा

मेरे पास केवल एक ज्योति-प्रदीप है जो मुझे कल के लिए निर्देश देता है, और वह है अनुभव। भविष्य का मापक अतीत ही है। —पैट्रिक हेनरी

मनुष्य शासित होना सुविधाजनक समझता है, स्वयं को शासित करना उसने नहीं जाना।

—मैक्स लरनर

इच्छा से लड़ना कठिन है, पर मन जो पाना चाहता है, वह आत्मा को बेचकर पा सकता है।

इतिहास बनाना कठिन है, लेकिन सही इतिहास लिखना उससे भी कठिन है।

—आस्कर वाइल्ड

है किंतु उसमें समस्त भारतीय समाज की भावना मुखर हो उठी है। उपन्यास का अनुवाद भी सरल, सहज और प्रवाहमय हुआ है।

ढोड़ाय चरित मानस
लेखक : सतीनाथ भादुड़ी, अनुवादक : मधुकर गंगाधर, प्रकाशक : मुकुल प्रकाशन ३८/२७६ राजेंद्रनगर पटना-१६, पृष्ठ संख्या : ४६८, मूल्य : २१ रु. ५० पैसे

समकालीन कविता-संदर्भ

गद्य के आधुनिक युग में कविता के संदर्भ में अनेक प्रश्न उठाये जाते हैं। व्यवस्था के दलदल में फंसा व्यक्ति नियति के थपेड़े खाता हुआ यदि कहीं सशक्त अभिव्यक्ति पा सकता है तो वह है केवल कविता। लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक में कविता के शाश्वत संदर्भ, परिवेश, भाषा, तकनीक तथा युगीन भूमिका पर स्वतंत्र विचार प्रकट किये हैं। कविता और उसके पाठक जैसे विवादास्पद विषय को भी लेखक ने उठाया है। साहित्य-जिज्ञासुओं के लिए यह पुस्तक अत्यंत उपयोगी है।

समकालीन कविता सार्थकता और समझ
लेखक : डा. राजेन्द्र मिश्र, प्रकाशक : कमल प्रकाशन, हिन्दी-पिढ़ी, रांची—१; पृष्ठ : ७९, मूल्य : १० रुपए

एक समालोचना ग्रंथ

स्वतंत्रता के बाद लिखे गये उपन्यासों में एक मूलभूत परिवर्तन आया है। उससे पूर्व भारतीय ग्राम पिछड़ेपन का प्रतीक था, किंतु समय के प्रवाह के साथ-साथ उसकी चेतना में भी अंतर आया है। अब उसके राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिवेश तथा मान्यताएं तेजी से बदल रही हैं। इस परिवर्तित स्थिति का आलोचनात्मक अवलोकन प्रस्तुत शोध-प्रबंध में कराया गया है। छह अध्यायों में विभक्त यह ग्रंथ उपन्यासों में व्यक्त ग्रामीण चित्रण का औपन्यासिक तथा चेतनापरक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्राम चेतना, लेखक : डॉ. ज्ञानचन्द्र गुप्त, प्रकाशक : अभिनव प्रकाशन, वेस्ट सीलमपुर, दिल्ली—३१, पृष्ठ : ३०४, मूल्य : २६ रुपए

एक अन्य उपन्यास

लेखिका ने अपने इस कहानी-संग्रह में जीवन में घटते टूटे क्षणों को अभिव्यक्ति प्रदान की है। इन कहानियों में कहीं तो भीड़ में एकांत क्षणों की तलाश है और कहीं एकांत में किसी की विवश खोज। नारी-जीवन की उधड़न को संवेदना के धागे से सीते हुए लेखिका पाठकों की सहानुभूति जाग्रत करने का श्रेय प्राप्त करती है। कहानियां छोटी; सघन और रोचक हैं।

—डॉ. शशि शर्मा

सलाखों के पीछे
लेखिका : चन्द्रकान्ता, प्रकाशक : स्वाति प्रकाशन, बाला नगर, हैदराबाद, पृष्ठ : १८०, मूल्य : ६ रुपए

दूसरे महायुद्ध के समय नाजी आक्रमणों और विभीषिकाओं से अपने देशवासियों को बचाने के लिए फ्रांस के मार्शल पेतां ने हिटलर से संधि की। मार्शल का यह कृत्य देशभक्ति की भावना से परिपूर्ण था या वह देशद्रोही था? ज्यूलिस रॉय की प्रसिद्ध पुस्तक 'दि ट्रायल ऑव मार्शल पेतां' में इस ऐतिहासिक मुकदमे का रोमांचक वर्णन है। इस प्रसिद्ध कृति के प्रस्तोता हैं—सुरजीत
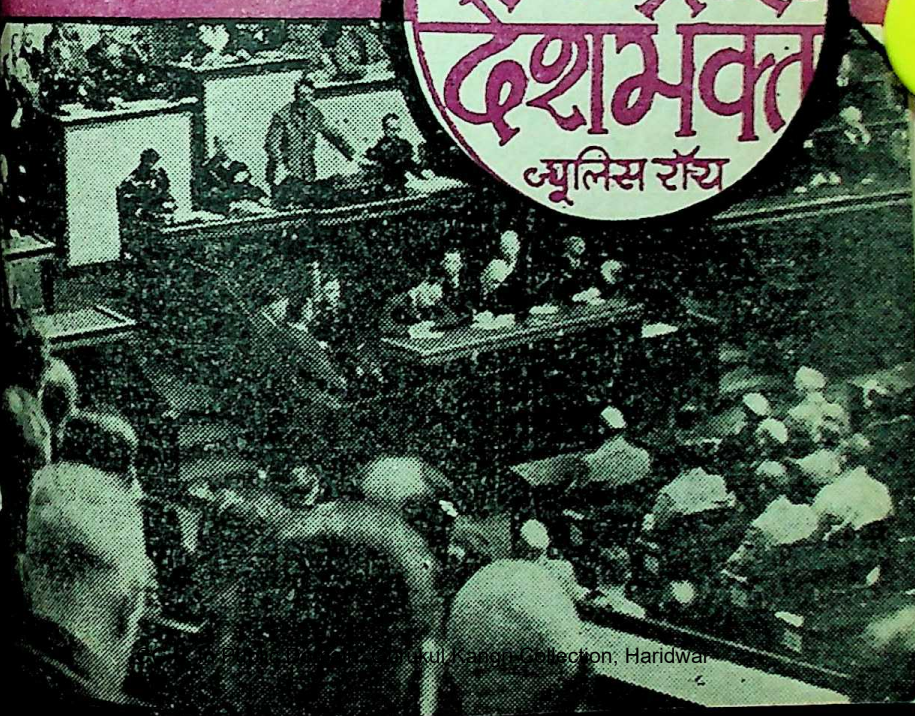
पेरिस में भीषण गरमी पड़ रही थी। दक्षिण की ओर बादलों की पहली पंक्ति आकाश पर फैल रही थी। न्यूज-एजेंटों की दूकानों पर लोगों की भीड़ बढ़ रही थी। अखबारों ने मुकदमे के आरंभ पर बोलती हुई लाल सुर्खियां लगायी थीं। एक सप्ताह से पेरिस के इर्द-गिर्द मंडलाने वाला तूफान अधिक समीप आता जा रहा था।

पैलस डी जस्टिस के सामने दीवार पर लगा पोस्टर नजरों में चुभ रहा था जिसमें फ्रांसीसियों की लाशों के अंबार पर, हिटलर के साथ मार्शल पेतां खड़ा था। अदालत के कमरे में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति अंदाज लगा रहा था कि अपराधी मार्शल की वरदी में आएगा या साधारण वेशभूषा में। ठीक एक बजे वह कटघरे में प्रविष्ट हुआ। चारों ओर निस्तब्धता छा गयी। सिर पर बर्फ-जैसे सफेद बाल और दूधिया मूछें, जो क्रमशः छोटी होती गयी थीं। मार्शल के सीने पर केवल मिलिटरी-क्रास, फ्रांस का सबसे बड़ा सम्मान जो किसी जनरल को मिल सकता था, सजा हुआ था।

दस बज कर एक मिनट पर [illegible] दरवाजे से ज्यूरी का अध्यक्ष मोनिये [illegible] बाख प्रकट हुआ। उसके पीछे [illegible] के अन्य न्यायाधीश भी थे। ज्यूरी के [illegible] ने अपनी सीट संभालते ही अदालत [illegible] कमरे पर गहरी नजर डाली और [illegible] शब्द चबा-चबाकर बोला, "आज [illegible] सामने पेश होनेवाला अपराधी [illegible] श्रद्धा का पात्र बना रहा। एक ओर [illegible] लिए जोश और प्रेम की भावनाएं थीं, [illegible] दूसरी ओर उसका व्यक्तित्व घृणा [illegible] उपेक्षा का केंद्र था . . . मुझे यह [illegible] की अनुमति दीजिए कि इस समय [illegible] अपराधी का मुकदमा सुन रहे हैं, [illegible] इतिहास एक दिन हम न्यायाधीशों [illegible] कटघरे में ला खड़ा करेगा . . ." उसकी आवाज साफ थी। फिर उसने मार्शल की ओर देखते हुए कहा, "अपराधी खड़े हो जाओ।"

मार्शल खड़ा हो गया। उसके चेहरे की गुलाबी रंगत पर पीलापन छाने [illegible] "ऐ देवताओ! तुम मुझे यहां देख [illegible]

हो, एक असहाय बूढ़े आदमी को जिसे समय ने दुख के सिवा कुछ नहीं दिया . . !"

"असली नाम, ईसाई नाम, उम्र और व्यवसाय बताओ।"

मार्शल ने प्रश्न की कटुता निगलने का प्रयास किया। मौन गहरा होता गया और पत्रकारों के कलम रुक गये।

"पेतां। फिलिप, मार्शल ऑव फ्रांस।"

सफाई-वकील तुरंत उठ खड़ा हुआ और कुछ बातें पेश करने की अनुमति मांगी जो उसे मिल गयी। इस बीच मार्शल बैठ चुका था। "अदालत मुकदमे की सुनवाई नहीं कर सकती" बातूनर ने अदालत के अधिकारों को चुनौती देते हुए कहा, "मार्शल ने सत्ता वैधानिक रूप में संभाली थी, किंतु यदि उस पर मुकदमा चलाना आवश्यक है तो केवल सीनेट ही भूतपूर्व सत्ताधारी के बारे में ऐसा कदम उठाने का अधिकार रखती है। वर्तमान अदालत सरासर अवैधानिक है। अधिकांश न्यायाधीश अपराधी से राजभक्ति की शपथ ले चुके हैं।"

अटार्नी जनरल मारंट ने जवाबी तर्क दिये, "उक्त शपथ कोई वैधानिक या नैतिक स्थिति नहीं रखती। १९४० की राष्ट्रीय असेंबली ने उसे राष्ट्रपति के अधिकार नहीं दिये थे, अपितु एक ऐसे गणतंत्र का संरक्षक बनाया था जिसके गले में फंदा डालकर वह सत्ता-अधिकारी बन बैठा।"

ज्यूरी के अध्यक्ष ने विचार-विमर्श के लिए कार्रवाई स्थगित कर दी।

थोड़ी देर बाद ज्यूरी के सदस्य पुनः अपनी सीटों पर विराजमान हुए। सफाई-वकील बातूनर की चुनौती रद्द कर दी गयी और अदालत के क्लर्क ने अभियोग पढ़कर सुनाए, "उसने देश की

सुरक्षा और अखंडता के विरुद्ध कार्य किये और व्यक्तिगत हितों के लिए देश और राष्ट्र के शत्रुओं से गठबंधन किया।"

"मान्यवर अध्यक्ष, मार्शल एक बयान देना चाहता है", बातूनर ने अनुमति मांगी।

"उसे बयान देने की अनुमति है।"

बातूनर ने मार्शल के कान में खुसुर-फुसुर की और वह तनकर खड़ा हो गया। रोबदार आवाज ने निस्तब्धता भंग की, "फ्रांसीसी जनता ने राष्ट्रीय असेम्बली में अपने प्रतिनिधियों के द्वारा मुझे अधिकार हस्तांतरित किये थे। यह १० जुलाई, १९४० का दिन था . . . आज मैं केवल फ्रांसीसी जनता के सामने उत्तरदायी हूं . . .।"

बूढ़ा आदमी सीना ताने और सिर ऊंचा उठाये खड़ा था। उसे यह नयी शक्ति कहां से मिली थी? शायद वह अपनी आवाज फ्रांस के कोने-कोने में पहुंचा देना चाहता था। उस आवाज को पहचानना कुछ कठिन न था। लोगों के मस्तिष्क में १९४० के शब्द अभी तक गूंज रहे थे, "बड़े बोझिल हृदय के साथ मैं हुक्म देता हूं कि हथियार डाल दिये जाएं। कल रात मैंने शत्रु से बात की थी।"

मार्शल का ऐतिहासिक बयान सत्य पर से परदा उठाता है। भूले-बिसरे, विस्मयकारी और कटु सत्य। उसे पढ़कर आंखों में आंसू नहीं आते, अपितु अतीत के अंधेरे झरोखे उजले हो जाते हैं।

"मैंने न कुछ चाहा था, न मांगा था। मुझसे हाथ जोड़कर कहा गया कि स्वदेश लौट आओ . . . और मैं चला आया। इस प्रकार मुझे एक ऐसा राष्ट्रीय दुखांत विरासत में मिला जिसका उत्तरदायी मैं न था और वास्तविक उत्तरदायी लोग जनता के क्रोध और आक्रोश से बचने के लिए मेरी ओट में हो गये . . . हां! युद्धसंधि ने फ्रांस को सलामत रखा, मित्र-शक्तियों की विजय के द्वार खुले रहे और रोम सागर में शत्रु को न घुसने दिया . . . मुझे सत्ता वैधानिक रूप में सौंपी गयी थी। रूस समेत अधिकांश देशों ने हमारा अस्तित्व स्वीकार किया। फ्रांसीसी जनता की सुरक्षा के लिए सत्ता केवल एक ढाल थी, किंतु मैंने व्यक्तिगत सम्मान और प्रतिष्ठा को इस बलिवेदी पर भेंट चढ़ा दिया . . . मैं एक अधिकृत देश का सत्ताधारी रहा . . . जबकि जनरल दगाल ने हमारी सीमाओं के बाहर संघर्ष जारी रखा। मैंने पूर्ण स्वतंत्रता के लिए रास्ता समतल किया और फ्रांस को जीवित रखने के लिए कार्य किये . . ."

मार्शल पेतां अदालत के कमरे पर छाया हुआ था, "याद रखो, तुम्हारे फैसले के बाद ईश्वर का फैसला होगा और आने वाली पीढ़ियां भी इस सारे घटनाचक्र को अपनी बुद्धि पर तौलेंगी। मेरे अंतःकरण और मेरे नाम को आश्वस्त करने के लिए उनका फैसला पर्याप्त होगा।"

उसने अपना बयान इस वाक्य के साथ समाप्त किया—"मैं फ्रांस पर पूर्ण विश्वास करता हूं।"

मार्शल पेतां की आवाज के उतार-चढ़ाव से श्रोताओं के हृदयों की धड़कन भी प्रभावित हो रही थी, किन्तु ज्यूरी के अध्यक्ष मोगी बाख के कर्कश स्वर से शीघ्र ही यह वातावरण समाप्त हो गया।

अदालत अगले दिन के लिए विसर्जित हो गयी।

मंगल, २४ जुलाई, १९४५

आज मोशियो पाल रेनू की गवाही थी। वह फ्रांस की पराजय के समय प्रधान-मंत्री था। उसी ने मार्शल पेतां को स्पेन से वापस बुलाया था। १८ मई, १९४० को राष्ट्र के नाम संदेश प्रसारित करते हुए रेनू ने कहा था, "आज से वह मेरा दायां हाथ है। उसने अपनी योग्यता देश व राष्ट्र के लिए समर्पित कर दी है और वह पूर्ण विजय प्राप्त होने तक मेरा साथ देगा।"

अदालत के सामने उसने तसवीर का और ही रुख पेश किया। उसका कहना था, "मार्शल उन दिनों देवता की स्थिति प्राप्त कर चुका था। जब मैंने मार्शल को मेड्रिड से बुलवाकर सरकार में शामिल किया उस समय देश तबाही के मुख पर खड़ा था। पेतां और वेगां केवल दो आदमी स्थिति बदल सकते थे, पर अब बहुत देर हो गयी थी। युद्ध हारा जा चुका था और फ्रांस के लिए युद्धसंधि के अतिरिक्त अन्य कोई रास्ता नजर न आता था, किंतु मुझे इस कांटेदार रास्ते पर कदम रखना सहन न था। पेतां और वेगां ही मेरी सभी मुसीबतों के कारण बने थे . . . मेरी नजर में पेतां नितांत देशद्रोही है, क्योंकि उसने राष्ट्रीय-असेम्बली के स्पीकर को सलाखों के पीछे बंद कर दिया था।"

रेनू ने चाहे जो कुछ कहा, किंतु सत्य केवल उन्हीं दिनों में ढूंढ़े जा सकते हैं जब तीसरा गणतंत्र विक्षिप्तता का शिकार हुआ। जब मंत्रिमंडल के सत्र में मतदान हुआ और रेनू ने पराजित होने पर त्यागपत्र दे दिया तो उस समय देश का संरक्षक कौन था? देश की बागडोर वास्तव में पाल रेनू की सुंदर प्रेमिका हैलन डी पोर्टे के हाथ में थी। फिर राज्य का व्यापार चलता भी तो कैसे? जनरल और एडमिरल, बख्तरबंद डिवीजन की घन-गरज में बढ़ते हुए शत्रु को रोकने के सिवा हर काम करने को तैयार थे। अब वह लोग युद्धसंधि का विरोध कर रहे थे जिन्होंने तबाही का अपनी आंखों से निरीक्षण नहीं किया था।

प्रश्न यह है कि त्यागपत्र देकर रेनू ने पेतां के लिए विरासत में क्या छोड़ा? असफलताओं और निराशाओं के सिवा वहां और था ही क्या? सारा देश पेतां से मांग कर रहा था कि यह भूतपूर्व प्रधान-मंत्री पाल रेनू और लेवन बलोम को गोली मार दे ताकि राष्ट्रीय दुर्घटनाओं को जन्म देने वाले अन्य लोग भी शिक्षा प्राप्त कर सकें।

जिरह के दौरान सफ़ाई-वकील और पाल रेनू की तेज-तीखी झड़प हुई। न्याया-धीश और सरकारी वकील तुरंत उसकी मदद को दौड़े और रेनू कटघरे से यों चला गया जैसे धुएं के परदे के पीछे तीव्र गतिमान विमान लुप्त हो जाता है।

ज्यूरी के अध्यक्ष ने सुनवाई स्थगित

कर दी।

२५ जुलाई, १९४५

सुनवाई शुरू हुई तो एक भूतपूर्व प्रधानमंत्री मोशियो दलादिया ने गवाही देते हुए रोमांचकारी रहस्योद्घाटन किये, "तीसरे गणतंत्र ने निरस्त्र फ्रांस जर्मनी के हवाले नहीं किया था, अपितु उस समय फ्रांसीसी सेना के पास ३,६०० टैंक, १,००० बख्तरबंद गाड़ियां, ६,००० हलकी तोपें, ७,००० भारी तोपें और ३,००० विमान मौजूद थे।"

सफाई-वकील बातूनर ने जिरह करते हुए पूछा, "क्या तुम्हारे विचार में मार्शल ने देश से गद्दारी की थी?"

मोशियो दलादिया ने धीमे स्वर में उत्तर दिया, "अपने अंतःकरण की आवाज के अनुसार मैं यह अवश्य कहूंगा कि मार्शल ने अपने उचित कर्तव्य से गद्दारी की है।"

खाने के विराम के बाद भूतपूर्व राष्ट्रपति मोशियो एल्बर्ट लबरों गवाहों के कटघरे में खड़ा था। वह उन परिस्थितियों पर प्रकाश डाल रहा था जब तोपों की गरज और जख्मियों की चीख-पुकार की पृष्ठभूमि में सरकार मंत्रिमंडल में संकट का अनुभव कर रही थी। अततः पेतां से सरकार बनाने की प्रार्थना की गयी तो उसने ब्रीफ-केस खोलकर मंत्रियों की लंबी-चौड़ी सूची लबरों के सामने रख दी। कहां यह कि मंत्रिमंडल कई-कई दिन तक बनते ही नहीं और कहां इतनी मुस्तैदी का प्रदर्शन!

ज्यूरी ने मार्शल पेतां को संबोधित करते हुए पूछा, "यह सूची कब से तैयार कर रखी थी?"

प्रत्येक व्यक्ति सांस रोके हुए था। पेतां के होंठ हिले। शायद वह उत्तर देने को तैयार हो गया था।

"क्या प्रश्न था?" उसने भरियल-सी आवाज में पूछा और अदालत का कमरा ऊंचे कहकहों से गूंज उठा।

अदालत एक मरणासन्न इंसान का मुकदमा सुन रही थी।

ज्यूरी ने मोशियो लबरों से पूछा "क्या जुलाई १९४० में राष्ट्रीय असेंबली का सत्र वैध रूप में बुलाया गया था?"

उसने आह भरते हुए कहा, "उन प्रलयंकारी क्षणों में वैधानिक या अवैधानिक के चक्कर में कौन पड़ता।"

. . . और यों आसमानी बिजली से सुरक्षित रहने के लिए प्रत्येक व्यक्ति इतिहास की मजबूत सलाखों के नीचे शरण लेने का अभिलाषी था। इतिहास के खंडहरों में सत्य को खोजा जा रहा था और यथावसर, यथासंभव उन्हीं सत्यों का चेहरा विकृत किया जा रहा था।

इस अंतराल में मोशियो पाल रेनू त्यागपत्र दे चुका था और मार्शल पेतां ने लबरों को मंत्रिमंडल के संकट से छुटकारा दिला दिया था। सत्य यह है कि मार्शल आनेवाले संकटों के बीच में छाती ठोंककर खड़ा हो गया था।

ब्रानास ने उन्हीं दिनों अपनी
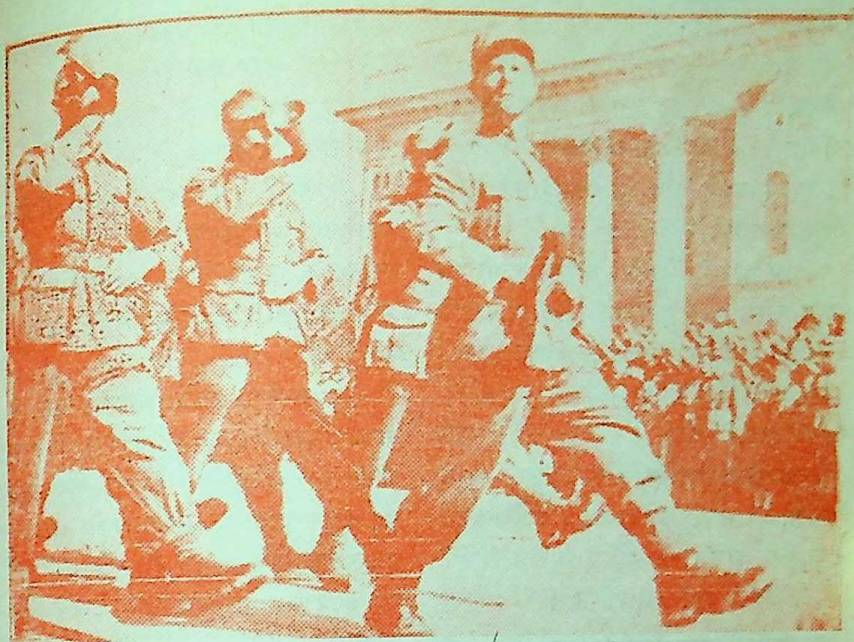
डायरी में लिखा था, "आज पेतां के अतिरिक्त कोई व्यक्ति जिम्मेदारी अपने सिर लेने को तैयार नहीं, किंतु जब सब कुछ ठीक हो जाएगा तो राजनीतिज्ञ . . देशद्रोही-देशद्रोही का वावैला मचाते हुए अपने-अपने शरणस्थानों से निकल आएंगे।"

२६ जुलाई, १९४५

सीनेट का भूतपूर्व अध्यक्ष मोशियो जीनैनी शपथपूर्वक बयान दे रहा था। उसने राष्ट्रीय-असेंबली के अधिवेशन की अध्यक्षता की थी जिसमें मार्शल पेतां को सत्ता सौंपी गयी थी।

"क्या सत्ता का हस्तांतरण वैधानिक रूप में हुआ था?" ज्यूरी ने पूछा था।

"मेरा उत्तर स्वीकृति में है, किंतु साथ ही अदालत को यह याद दिलाना चाहता हूं कि जब युद्धसंधि के बाद जर्मनी ने फ्रांसीसी बंदियों को गोली का निशाना बनाया तो मैंने मार्शल के नाम एक प्रतिरोध-पत्र लिखा कि तुम्हारे व्यक्तित्व पर जो विश्वास किया है, उस पर पूरे उतरो और वध बंद कराओ, किंतु पेतां की ओर से पूर्ण मौन धारण किया गया।"

सफाई-वकील झट अपनी सीट पर खड़ा हो गया, "यह सरासर गलत-बयानी है। मार्शल ने हिटलर को चेतावनी दी थी कि यदि यह सिलसिला जारी रहा तो वह युद्धसंधि की रेखा पर पहुंचकर स्वयं को जमानत के तौर पर पेश कर देगा।'

मोशियो जीनैनी ने जिस मौन के साथ

अदालत में प्रवेश किया था, उसी प्रकार दबे पांव बाहर निकल गया। गवाहों के कटघरे में उसका स्थान लुईस मारिन (१९४० में उप-प्रधानमंत्री) ने ले लिया। उसने आते ही ताबड़तोड़ हमले शुरू कर दिये।

कहते हैं, लुईस मारिन ने इतना तेज-तीखा स्वर इसलिए अपनाया क्योंकि मार्शल पेतां ने उसे अपनी सरकार में कोई पद नहीं दिया था।

सफाई-वकील ने स्थिति का स्पष्टीकरण करने के लिए मोशियो पाल रेनू से पूछा, "तुम्हारे मंत्रिमंडल का बहुमत युद्धसंधि के पक्ष में था या विरोध में ?"

"यह प्रश्न असंबंधित है," अटार्नी जनरल सहसा रेनू के पक्ष में खड़ा हो गया। "हमें यह पता करना है कि युद्धसंधि के इच्छुक कौन लोग थे और किन लोगों ने उसे स्वीकार किया ?"

"नहीं ! हमें पाल रेनू की पोजीशन भी स्पष्ट करना चाहिए," ज्यूरी के एक सदस्य ने कहा, "सुना है, विरोध में मत पड़े थे और बारह मंत्री उसके पक्ष में थे।"

पाल रेनू बगल झांकने लगा, वह स्वयं अपराधी सिद्ध हो रहा था। वास्तव में उसके व्यक्तित्व के इर्द-गिर्द रहस्य का गहरा दायरा घिरा हुआ था और उसे और रहस्यपूर्ण बनाने में हैलन डी पोर्ते का हाथ था जो हर समय उस के दिल

दिमाग पर छायी रहती थी और अपनी इच्छा के फैसले करवाती थी।

२७ जुलाई, १९४५

सोशलिस्ट राजनीतिक ल्यून ब्लोम जो फ्रांस की पराजय से बहुत पहले प्रधान-मंत्री रह चुका था, अपने विचार इन शब्दों में व्यक्त कर रहा था—"जुलाई, १९४० ! फ्रांस के लोग किसी अज्ञात भय से कांप रहे थे। किंतु उन्हें बताया जाता — 'तुम गलती पर हो। युद्धसंधि, जिसने तुम्हें अपमानित कर दिया है, और शत्रु के हाथों में डाल दिया है, कोई लज्जाजनक कार्य नहीं, बल्कि देश के सर्वोत्तम हित में है।' यह बातें करनेवाला वह व्यक्ति था जो अपने विजयपूर्ण अतीत का वास्ता देता था। मेरी दृष्टि में राष्ट्र के साथ विश्वासघात करनेवाला व्यक्ति देशद्रोह का अपराधी है।"

"क्या सम्मानित गवाह १९४० तक मार्शल का प्रशंसक न था?" सफाई-वकील ने उसके दुर्बल पक्ष से लाभ उठाया।

"हां ! मैं स्वीकार करता हूं। अन्य लोगों की तरह गलतफहमी का शिकार हुआ, पर वह किसी भी ऐसी विशेषता का स्वामी न था कि देवता की अवस्था तक उसे पूजा का अधिकारी समझा जाता।"

३१ जुलाई, १९४५

१९४० में सशस्त्र सेनाओं के मुखिया जनरल वेगां साहस के साथ अपनी और मार्शल की सफाई पेश कर रहे थे।

बाहर वर्षा शुरू हो गयी थी, पर अदालत वेगां के तेज व तीखे शब्दों से गर्म थी, "हथियार डालना लज्जाजनक कृत्य है। मैं विस्मित हूं, जब लोग यह कहते हैं कि सुलह न की जाती चाहे हथियार डालने पड़ते या पूरा फ्रांस मौत के घाट उतर जाता... हथियार डालनेवाला देश पुनः सिर नहीं उठा सकता। हमारा सैनिक विधान युद्ध-क्षेत्र में हथियार डालनेवाले जनरल को मृत्युदंड देता है।"

जनरल वेगां ने तीखी नजरों से पाल रेनू को देखते हुए अपना बयान जारी रखा, "मुझे बताया जाये, यदि हम हथियार डाल देते तो क्या उत्तरी अफरीका हमारे हाथ में रहता? क्या जनरल दगाल विरोध की शक्ति संगठित कर सकता? क्या पूरी फ्रांसीसी सेना जरमन कैंपों में स्थानांतरित न हो जाती?"

... चारों ओर निस्तब्धता छायी हुई थी।

"अदालत के सम्मानित सदस्यो ! मैं विश्वास दिलाता हूं कि हमने जो फैसले किये, वह देश की अखंडता के सर्वोत्तम हितों के लिए थे।

"इस मुकदमे का असल उद्देश्य यह पता करना है कि युद्धसंधि और हथियार डालने में से किस चीज का चुनाव करना चाहिए था?" वेगां ने अपना बयान खत्म करते हुए कहा।

"मुकदमे का उद्देश्य यह जानना है कि देशद्रोह का दोषी कौन हुआ?" ज्यूरी के एक सदस्य ने कहा।

"बिलकुल नहीं," वेगां ने अपनी छड़ी फर्श पर बार-बार पटकते हुए उत्तर दिया, "मैं मार्शल पेतां के बारे में यह शब्द नहीं कह सकता। वह हरगिज-हरगिज देशद्रोही नहीं।"

२ अगस्त, १९४५

ठिगने कद के ल्यून नोयल ने अदालत के सामने शपथ उठायी। वह पौलैंड में फ्रांस का राजदूत रह चुका था और उस फ्रांसीसी प्रतिनिधिमंडल में शामिल था जो कम्पेन के जंगल में हिटलर से युद्धसंधि तय करने गया था। उसने बताया, "हिटलर ने संधि की शर्तें उस स्थान पर पेश करने का फैसला किया जहां ११ नवंबर, १९१८ को जर्मनी ने फ्रांस और उसके साथियों के सामने हथियार डाले थे। निश्चित समय पर हिटलर अपने साथियों—गोयरिंग रिबेन ट्राप आदि के साथ पहुंचा। वहां हिटलर की पेश की हुई कठोर शर्तों को नरम कराने का भरसक प्रयत्न किया गया, पर सफलता न मिली। प्रतिनिधिमंडल के नेता जनरल होनट जीगर ने कहा, "यह शर्तें बेहद निर्मम हैं। मेरे लिए इन पर हस्ताक्षर करना संभव नहीं।" उसने टेलिफोन पर वेगां से संबंध स्थापित किया। वहां से भी प्रतिरोध हुआ कि फ्रांसीसी दृष्टिकोण से ये शर्तें अपमानजनक हैं।

दो दिन तक मामला लटकता रहा। विलंब का एक कारण यह था कि होनट जीगर चाहता था, वेगां हस्ताक्षर करने का 'अधिकार' नहीं, हुक्म दे। उस समय फ्रांस में कोई भी हस्ताक्षर की जिम्मेदारी अपने सिर नहीं लेना चाहता था। अंततः जर्मनों ने एक घंटे का अल्टीमेटम दे दिया जिस पर फ्रांस-सरकार को घुटने टेकने पड़े।

३ अगस्त, १९४५

आज पैरी लावेल गवाही देने आया था। वह पेतां के साथ प्रधानमंत्री रह चुका था।
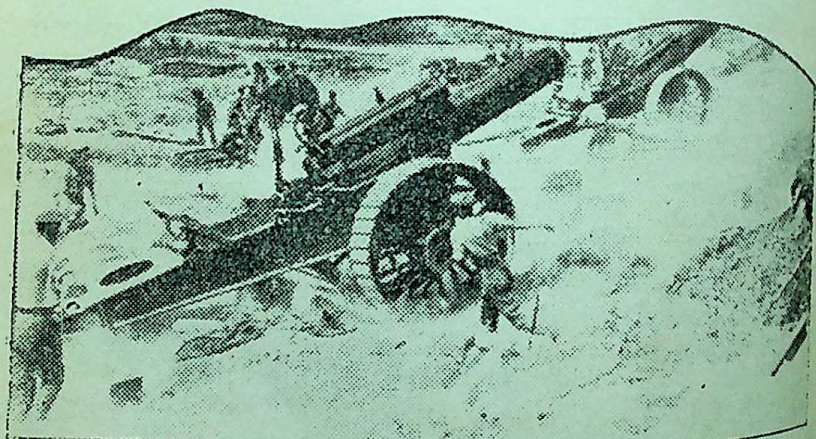
"जर्मनों के साथ संधि करने से पूर्व वातावरण को समतल करने के लिए मैंने सोचा, रेडियो पर भाषण करना चाहिए" पैरी लावेल ने अपना बयान प्रस्तुत करते हुए कहा, "मेरी पांडुलिपि में यह वाक्य भी शामिल था, 'मैं जर्मनी की विजय पर विश्वास रखता हूं।' मार्शल ने पांडुलिपि देखी तो वाक्य यों बदल दिया, 'मुझे आशा है जर्मनी विजयी होगा।'

मार्शल, जो मुकदमे की सुनवाई के दौरान गुमसुम बैठा रहता था, इस अवसर पर चौंककर खड़ा हो गया, "मैं आज भी विस्मित हूं, लावेल ने इस वाक्य का क्यों उपयोग किया। मैंने उसे रेडियो पर सुना तो ठिठककर रह गया। मैं समझता था, उसने वाक्य लोप कर दिया होगा।"

अदालत तालियों से गूंजने लगी और उसी कोलाहल में ज्यूरी के अध्यक्ष ने कार्रवाई अगले दिन तक स्थगित कर दी।

४ अगस्त, १९४५

अदालत में पैरी लावेल हिटलर-पेतां भेंट का विवरण पेश कर रहा था . . . भेंट से पूर्व ११ अक्तूबर, १९४० को पेतां ने अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के लिए यह अपील प्रसारित की—

"फ्रांस हर मामले में अपने पड़ोसियों के साथ सहयोग के लिए तैयार है। विशेषतः जर्मनी के बारे में, मैं यह कहूंगा कि फ्रांस पर अधिकार प्राप्त करने के बाद उसके सामने दो रास्ते हैं—या तो वह हिंसा और अत्याचार से हमें पराधीन बनाये रखे या सहयोग-भावना के द्वारा शांति की नयी राहें खोले।"

संसार भर ने और स्वयं पेतां की 'विशी सरकार' की छाया में बसनेवालों ने निंदा की तो उसने देशवासियों के सामने उसका कारण पेश करते हुए कहा, "मैं सम्मानजनक ढंग से संधि-सहयोग के मार्ग पर अग्रसर हूं। केवल इतिहास इस बारे में निर्णायक बन सकता है। अब तक मैं तुम्हारे पिता के रूप में संबोधित होता रहा हूं, आज नेता के रूप में कहता हूं—मेरे पदचिह्नों पर चलो।"

और फ्रांसीसी उसके पीछे हो लिये। यद्यपि उन्हें भीतरी सत्यों का कोई पता न था।

एक वर्ष बाद पेतां ने हिटलर को लिखा, "हमारे संधि-सहयोग के वह परिणाम नहीं निकले जिनकी मुझे आशा थी और तुमने भविष्यवाणी की थी। इसके प्रतिकूल लोगों की आत्मा निरंतर संकटों के नीचे तड़प रही है। हमारी जनता पर भयानक अत्याचार किये गये हैं और बंदी अभी तक वापस नहीं आये। लोग तंग आकर कुछ करने के लिए बेचैन हैं।"

नवंबर, १९४३ में जर्मन विदेश-मंत्री कैपन ट्राप ने लंबी खामोशी के बाद यह उत्तर दिया, "फ्रांसीसी सत्ताधारी होने के रूप में तुमने युद्धसंधि की नीति से बिलकुल प्रतिकूल कदम उठाये और हठधर्मी की पराकाष्ठा यह कि आरोप हम पर लगा रहे हो।"

लावेल ने जरा रुककर कहा, "हम स्वतंत्र वासी न थे। मार्शल भी स्वतंत्र न था। एक जर्मन मंत्री ने उसके दरवाजे पर दस्तक देकर कहा था, 'यह संदेश प्रसारित करो।' मार्शल ने स्थिति मेरे सामने रखी। हमने यथासंभव विरोध किया। आखिर झुकना पड़ा . . . अध्यक्ष महोदय ! इसलिए कि फ्रांसीसी जनता ने कहा था, 'आओ, हमारे साथ मुसीबतें सहो और हमारे अधिकारों की रक्षा करो।" हमने उनकी आवाज पर हर्ष प्रकट करते हुए देश के एक भाग पर राष्ट्रीय पताका फहराये रखी . . . उस समय हमसे बलिदान मांगा गया था और हमने बलिदान दिया। आज तुम बलिदान मांगते हो, हमें अपने देश से प्रेम है और तुम्हारे सामने आ खड़े हुए हैं . . . "

पैरी लावेल ने इस हृदयविदारक बिंदु पर अपना बयान समाप्त कर दिया। चारों ओर विराट नीरवता छायी हुई थी।

मुकदमा कई दिन तक जारी रहा और फैसले का दिन जितना समीप आता गया, हृदयों की धड़कन उतनी ही तेज होती गयी।

११ अगस्त, १९४५

आज अटार्नी-जनरल अपने तर्क प्रस्तुत करनेवाला था। थोड़ी देर पूर्व मार्शल ने अपने वकील से धीमे स्वर में पूछा था, "वह क्या कहनेवाला है?"

"वह सभी शिष्टाचार परे रखते हुए तुम्हारा सिर तन से अलग करने की प्रार्थना करेगा," उत्तर मिला। साथ ही अटार्नी जनरल ने बहस का आरंभ कर दिया, "श्रीमान अध्यक्ष महोदय! इस व्यक्ति ने ऐसे लज्जाजनक कारनामे किये हैं जिन्हें कोई राष्ट्र क्षमा नहीं कर सकता। उसने पराजय स्वीकार कर ली और फ्रांसीसी राष्ट्र के सम्मान और प्रतिष्ठा का जनाजा निकाल दिया।

"फ्रांस के विधान में ऐसा कोई अधिनियम नहीं जो किसी देशद्रोही को उम्र के आधार पर कोई रिआयत दे। अतः किसी घृणा या भावना का शिकार हुए बिना केवल विधान के अनुसार मैं अदालत से प्रार्थना करूंगा कि इस व्यक्ति को जिसे कभी मार्शल कहते थे, मृत्युदंड सुनाया जाए।"

१४ अगस्त, १९४५

पिछले दिन से सफाई के वकील बारी-बारी तर्क दे रहे थे। इस समय मित्रे अंत-रनी अदालत को संबोधित कर रहा था। वह जानता था मार्शल देशद्रोही नहीं और उसे बचाना उसकी जिम्मेदारी थी, पर वह दया की भिक्षा मांगने के बजाय अदालत को उसकी निर्दोषता का भरोसा दिलाना चाहता था. . . और प्रकृति ने उसे ऐसी वक्तृताशक्ति प्रदान की थी जो पहाड़ों को हिलाकर रख सकती थी।

"आदरणीय ज्यूरी के सदस्यो! आज मुझे वरोवन-युद्ध के हीरो की रक्षा करनी है। पहले महायुद्ध में इस नगर पर [illegible] ने १४५ दिन तक निरंतर

गोलाबारी की पर वरोवन को जीता न जा सका, बल्कि यह नाम फ्रांसीसी राष्ट्र की प्रतिरोध-शक्ति और दृढ़ संकल्प का प्रतीक बन गया. . . और पेतां को वरो-वन-रक्षक की उपाधि मिली।

"दूसरे महायुद्ध में फ्रांस एक बार फिर संकट में पड़ गया। देशवासियों ने अपने प्यारे नेता को पुकारा और वह घायल फ्रांस-रक्षक बन गया। यह सत्ता फूलों की सेज नहीं, कांटों का ताज थी।

"इस सत्य से इनकार असंभव है कि जर्मनी ने हम पर अधिकार प्राप्त किया था और विजेता सदा मनमानी करवाता है। पेतां को भी अपने अंतःकरण के विरुद्ध काम करने पड़े, पर वह उन पर खेद प्रकट करता रहता था। तुम जर्मन कैंपों में फ्रांसीसी बंदियों की बातें करते हो, मैं कहता हूं, उन लोगों की ओर देखो जो आज जिंदा हैं, जिन्हें कैद से रिहाई दिलायी गयी और जो स्वतंत्रता के वातावरण में सांस लेते रहे।"

मित्रे असारेनी ने सांस लेते हुए कहा, "यदि मार्शल को मृत्युदंड मिला तो मैं फांसी के तख्ते तक उसका साथ दूंगा, पर अध्यक्ष महोदय, याद रखिए, आप चाहे कहीं भी हों, उसकी मौत का दृश्य आपकी आंखों के सामने ही रहेगा। हां! आप भी वहीं मौजूद होंगे और अपनी अपराधी और भयभीत आत्मा की आंखों से देखेंगे कि मार्शल ऑव फ्रांस जिसे आप अपराधी ठहराते हैं, किस प्रकार मौत को गले लगाता है।"

"अपराधी!" ज्यूरी के अध्यक्ष ने पूछा, "क्या तुम्हें कुछ कहना है?"

"हां।" मार्शल ने उत्तर दिया और साथ ही उसके चेहरे पर निराशा की तहें स्पष्ट हो गयीं, "मुकदमे की सुनवाई के दौरान मैं जानबूझकर बहरा बना रहा। बहरहाल मैंने देशवासियों का उस समय साथ दिया जब दुख और संकटों के पहाड़ टूट रहे थे। मैंने अपने लिए देश की धरती चुनी और बार-बार की पेशकश के बावजूद उसे छोड़ना सहन न किया। यह सब कुछ भुलाया नहीं जा सकता। ज्यूरी के सदस्यो, मेरा जीवन और स्वतंत्रता तुम्हारे हाथ में है। मेरे साथ अपने अंतःकरण के अनुसार व्यवहार करो। मेरा अंतःकरण साफ है। मृत्यु की दहलीज पर खड़े होकर भी मैं कहूंगा, अपने लंबे जीवन में मातृभूमि फ्रांस की सेवा करता रहा हूं।"

ज्यूरी के अध्यक्ष ने घोषणा की, "मुकदमे की सुनवाई खत्म होती है और थोड़ी देर बाद निर्णय सुनाया जाएगा।"

१४-१५ अगस्त १९४५ की रात्रि

अदालत के एक बगली कमरे में मोम-बत्तियों के रहस्यपूर्ण और मद्धिम प्रकाश में ज्यूरी के सदस्य खाने पर जमा थे। मोशियो मोंगी बाख ने पूछा, "साथियो! क्या तुम पांच वर्ष देश-निष्कासित करने के दंड पर सहमत हो?"

सभी न्यायाधीश, मोंगी बाख के रवैये पर अति विस्मित थे, पर मोशियो पैकार्ड का मत उससे मिलता-जुलता था।

मोशियो पैरी बलाख ने तीखे स्वर में कहा, "आर्टिकल नंबर ८० के अंतर्गत उसे आजीवन कठोर कारावास का दंड दिया जा सकता है। पर सत्तर वर्ष से अधिक आयु के लोगों पर यह लागू नहीं होता। इसके प्रतिकूल आर्टिकल नंबर ७५ मृत्युदंड सुनाता है. . और बहस से पूर्व मतदान करना चाहिए।"

मतदान कराया गया, ८ के मुकाबले में १८ मत मृत्युदंड के पक्ष में थे। "महाशयगण! यह मतदान निर्णायक नहीं, अभी और सोच-विचार कर लें।" मोशियो पैरी बलाख ने कहा।

मोशियो बलातर ने यह संदेह प्रकट किया, "कौन जानता है, कल पेतां निर्दोष घोषित हो जाए और हमारे बेटों को इसलिए संकट का सामना करना पड़े कि हमने उसकी हत्या की।"

कई न्यायाधीशों ने एक स्वर से कहा, "हमें एक गद्दार का फॉसला करना है। इस बात को छोड़कर कि वह किस उमर का है? यह क्या तुक है कि उसके अधीनस्थों को मृत्युदंड मिले, पर असल जिम्मेदार व्यक्ति रिहा कर दिया जाए।"

रात के एक बजे अंतिम मतदान हुआ। तेरह के मुकाबले में पंद्रह मतों से मार्शल पेतां के लिए मृत्युदंड का फ़ै[illegible] हुआ। ढाई बजे रात फैसले की पां[illegible] तैयार कर ली गयी। ४ बजे रात [illegible] शुरू करने के लिए घंटियां बजायी [illegible]

सभी न्यायाधीश बगली कमरे [illegible] निकल अदालत के कमरे में आ [illegible] ज्यूरी के अध्यक्ष मोशियो मोंगी बा[illegible] तत्काल फैसला सुनाना शुरू कर दि[illegible] "अपराधी ने जर्मनी के साथ यु[illegible] की, जो कि फ्रांस में सत्ताधारी था। [illegible] के साथ एकता व सहयोग, गणतंत्र के हि[illegible] के प्रतिकूल कार्य है, अतः अपराधी [illegible] देशद्रोही घोषित करते हुए मृत्युदंड सु[illegible] जाता है। उसकी संपत्ति जब्त कर [illegible] जाएगी और वह राष्ट्रीय सम्मान [illegible] वंचित समझा जाएगा, पर उसकी वृ[illegible]वस्था को देखते हुए मृत्युदंड लागू न[illegible] किया जाएगा।"

संरक्षकों ने मार्शल पेतां को [illegible] गुप्त रास्ते से बाहर निकाला और हवा[illegible] अड्डे पर जनरल दगाल के व्यक्ति[illegible] डकोटा विमान पर बिठाकर या पो[illegible] के दुर्ग में पहुंचा दिया जो तीन हजा[illegible] फुट की ऊंचाई पर पहाड़ काटकर बना[illegible] गया था।

पेरिस में जब समाचार-पत्रों ने मो[illegible] सुर्खियों के साथ विशिष्ट अंक प्रकाशि[illegible] किये तो मूसलाधार वर्षा हो रही थी[illegible] शायद आकाश भी बूढ़े मार्शल के भा[illegible] पर शोकरत था।

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामानन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

महाशयजी

चित्रकार: सुकुमार चटर्जी
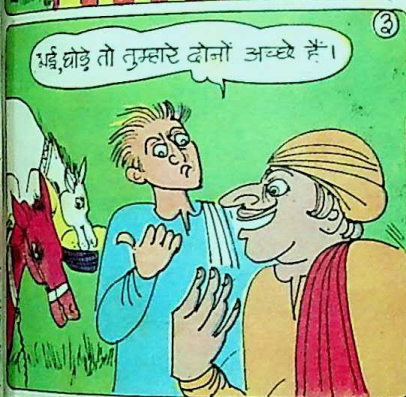
बुद्धिमान व्यक्ति हर
आवश्यकता के लिए तैयार रहते
NEW BANK OF INDIA LTD.
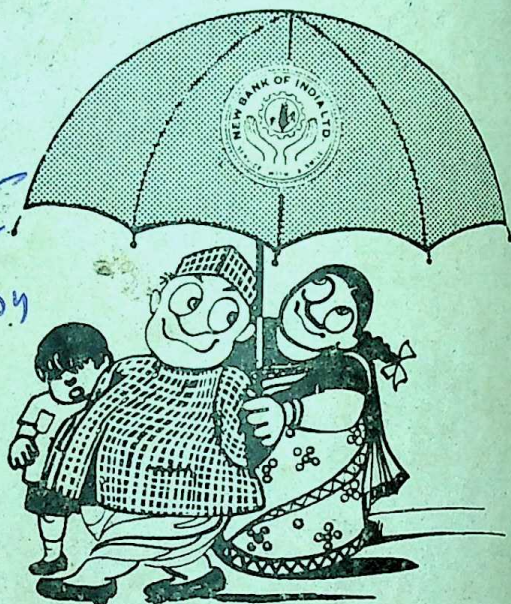
कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

नव-वर्षांक

घर-गृहस्थी सुव्यवस्थित रखने के लिये टॉर्च ख़राब होने से काम नहीं चलेगा

इसीलिये लीजिये-ड्युरोलाइट सबसे मज़बूत टॉर्च

हर समय टॉर्च पास रखना बुद्धिमानी का काम है। और वह भी अपने मनपसन्द टॉर्च—ड्युरोलाइट। हल्की, फिर भी बेहद टिकाऊ। जैसे-तैसे इस्तेमाल करने पर भी इसमें खरोंच नहीं लगती और न ही यह चोट खाकर पिचकती है। झलझलाते सुन्दर रंगों की मज़बूत बॉडी जो गरारीदार और खुरदरा है जिससे पकड़ने में आसानी होती है।

एवरेडी

UC 7935

UNION CARBIDE

हमेशा ही सबसे आगे और लाजवाब

डेट धुलाई की टिकिया
साबुनों के मुक़ाबले १½ गुनी ज़्यादा शक्तिशाली
—खारे पानी में भी
डेट धुलाई का पाउडर
सफ़ेद या नीला—कई साइज़ के पैक में
मिलता है. कपड़ों को इसके घोल मे
भिगोइये और धो लीजिये.
हाथों को मुलायम भी रखता है.
एन-डेट
दाग़-धब्बे नाशक एनज़ाइमयुक्त
धुलाई का पाउडर, सक्रिय लेकिन हानिरहित.
new!
det
detergent washing cake
NEW!
TRIPLE ACTION
det
WASHES WHITEST
enzyme
det
washes away stubborn stains
न कभी थी, न मिलेगी; ऐसी सफ़ेदी—डेट उत्तम पदार्थों से
Shilpi HPMA 5A/74 Hin

एस्ट्रेला - शक्ति
ऐसी शक्ति जिसकी आवाज़ आपके कानों में गूँज रही है
ऐसी शक्ति जिसकी रोशनी आप खुद देख सकते हैं
ESTRELA
ESTRELA
ESTRELA
ESTRELA

विटामिन और खनिज पदार्थ आपके परिवार के स्वास्थ्य के लिये बहुत ज़रूरी हैं
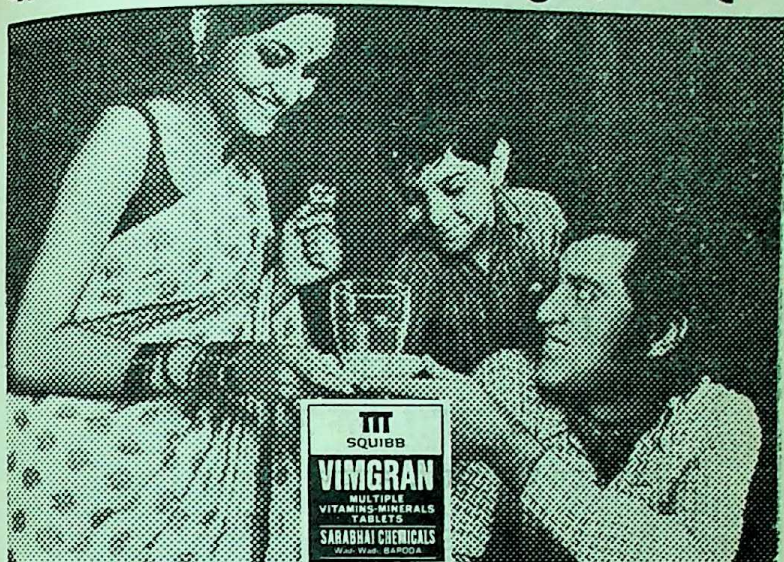
क्या उन्हें ये ज़रूरत के मुताबिक़ मिल रहे हैं?

विटामिनों और खनिज पदार्थों की कमी से आपके परिवार के लोगों का स्वास्थ्य गिर सकता है. थकान, ठंड और जुकाम, भूख की कमी, कमज़ोरी, चमड़ी तथा दाँतों के रोग अधिकतर ज़रूरी विटामिनों और खनिज पदार्थों की कमी के कारण होते हैं.

इन की कमी, भोजनों में भी रह सकती है. इस बात के विश्वास के लिये कि परिवार के सभी लोगों को ये ज़रूरी पोषकतत्व उचित मात्रा में मिलें, उन्हें रोज़ विमग्रान दीजिये.

विमग्रान में आवश्यक ११ विटामिन और ८ खनिजपदार्थ मिले हैं. लोहा – खून बढ़ाने और फुर्ती लाने के लिये, कैल्सियम– हड्डियों और दांतों को मज़बूत बनाने के लिये, विटामिन सी– ठंड और जुकाम रोकने की शक्ति बढ़ाने के लिये, विटामिन ए–चमकदार आंखों और स्वस्थ त्वचा के लिये, विटामिन बी१२–भूख बढ़ाने के लिये तथा शरीर को स्वस्थ रखने के लिये दूसरे ज़रूरी पोषक तत्व! आज से ही रोज़ लीजिये – विमग्रान!

विमग्रान®

विविध विटामिन एवं खनिजयुक्त गोलियाँ
११ विटामिन + ८ खनिज पदार्थ

SQUIBB®
SARABHAI CHEMICALS PVT LTD.

® ई. आर. स्क्विब एंड सन्स इन्को. का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है जिसके अनुज्ञप्त उपयोगकर्ता हैं–एस. सी. पी. एल.

केवल एक विमग्रान आपको दिन भर स्फूर्तियुक्त रखता है

Shilpi-HPMA 2A/74 Hin.

लियोनोरा लैम्पशेड्स
जमाने से बेहिसाब आगे

उत्तर रेलवे

समय सारिणी सूचना

उत्तर रेलवे की नई समय सारिणी १ अक्तूबर, १९७४ से लागू हो गई है जिसमें अधोलिखित महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं :

नई गाड़ियां चालू की गई

१३१ अप/१३२ डाउन जयन्ती जनता एक्सप्रेस की आवर्त्तन जो नई दिल्ली और मैंगलोर/कोचीन के मध्य चलती है, सप्ताह में दो बार से सप्ताह में तीन बार बढ़ा दी गई। अतिरिक्त यात्रा नई दिल्ली से बृहस्पतिवार व मैंगलोर से मंगलवार को आरम्भ हो गई है।

वर्तमान गाड़ियां जो रद्द की गईं

यात्रियों के कम होने के कारण निम्नलिखित गाड़ियां रद्द कर दी गईं :

गाड़ी नं.	सेक्शन जिन पर रद्द की गईं
३ बी आर आर/४ बी आर आर	रिवाड़ी—रतनगढ़
१ बी के एफ/४ बी के एफ	कोटकपुरा—फाजिल्का
५ एफ एफ/८ एफ एफ	फिरोजपुर—फाजिल्का
३ एए/४ एए/५ एए/६ एए	अमृतसर—अटारी
३ एडी/४ एडी	डेराबाबा नानक—अमृतसर
५ जे एच/८ जे एच	जालंधर सिटी—होशियारपुर
१ एन जे/२ एन जे	नवांशहर दोआबा—जालंधर सिटी
१ जे एन/२ जे एन	जालंधर सिटी—नकोदर
१ एस आर/२ एस आर	संभल हातिमसराय—राजा का सहसपुर
५ एच आर/६ एच आर	हरिद्वार—ऋषिकेश
१ ए टी/२ ए टी	अकबरपुर—टांडा
३ जे एन के/४ जे एन के	जिंद—नरवाना—कुरुक्षेत्र
१ एचएच/२ एचएच/५ एचएच/ ६ एचएच	हाथरस जंक.—हाथरस किला
३३९ अप/३४० डाउन	भटिण्डा—अबोहर

निम्नलिखित गाड़ियां यद्यपि नई समय सारिणी में नहीं दर्शाई गई हैं फिर भी अपने मौजूदा समय पर चल रही हैं :--

३४५ अप/३४६ डाउन	भटिण्डा—फिरोजपुर
७ जे एच (नया नं. ५ जे एच)	होशियारपुर—जालंधर सिटी होशियारपुर से १३.३५ बजे छूटती है

गाड़ियों का चलना समाप्त किया गया :

२ आर डी जी दिल्ली और गाजियाबाद के बीच।

२ यू के एन/२ एन के नरवाना और कैथल के बीच।

नए स्टापेज प्रदान किए गए :

६१ अप/६५ अप जनता एक्सप्रेस चन्दौक पर ।
६१ अप/६२ डाउन)
६५ अप/६६ डाउन) जनता एक्सप्रेस हरचंदपुर पर ।

स्टाप खत्म किए गए :

६१ अप/६५ अप जनता एक्सप्रेस बलावली, अंजी शाहाबाद व रहीमाबाद पर ।
८१ अप/१०३ अप व १०४ डा./८२ डा. ए. सी. एक्सप्रेस फतेहपुर पर ।
६४ डा. अवध एक्सप्रेस अजगेन व सोनिक पर ।
६३ अप अवध एक्सप्रेस अमौसी पीपरसंद, हरौनी, कुसुंभी, मगरवार व कानपुर ब्रिज बांये किनारे पर ।

गाड़ियों के समय में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन :

२१५ अप (१५ अप) चेतक एक्सप्रेस दिल्ली सराय रोहिल्ला से १२.१५ बजे के स्थान पर १२.५० बजे छूटती है व उदयपुर ८.५५ बजे के स्थान पर ८.५२ बजे पहुंचती है ।
२ बी एस ए सूरतगढ़ से ७.०० बजे के स्थान पर ५.०० बजे छूटती है व अनूपगढ़ पर १०.०५ बजे के स्थान पर ८.१० बजे पहुंचती है ।
२१६ डाउन (१६ डाउन) चेतक एक्सप्रेस उदयपुर से १८.३५ बजे के स्थान पर १८.०० बजे छूटती है व दिल्ली सराय रोहिल्ला पर १५.३० बजे के स्थान पर १३.५० बजे पहुंचती है ।
१.बी एस ए अनूपगढ़ से १०.४५ बजे के स्थान पर ९.३० बजे छूटती है व सूरतगढ़ १३.१५ बजे के स्थान पर १२.५५ बजे पहुंचती है ।
६ डाउन अमृतसर - हावड़ा मेल अमृतसर से १९.४५ बजे के स्थान पर १९.३५ बजे छूटती है ।
३५० डाउन अमृतसर - देहरादून पैसेंजर अमृतसर से १७.४५ बजे के स्थान पर १७.३५ बजे छूटती है ।
३६३ डाउन आगरा - दिल्ली पैसेंजर दिल्ली १९.२३ बजे के स्थान पर १९.०५ बजे पहुंचती है ।
३७० डाउन फिरोजपुर - दिल्ली पैसेंजर २३.५० बजे के स्थान पर २३.३० बजे दिल्ली पहुंचती है ।
२ डी जे पी १९.५० बजे के स्थान पर १९.३० बजे दिल्ली पहुंचती है ।

थ्रू कोचेज के प्रचलन में परिवर्तन :

एक द्वितीय श्रेणी का डिब्बा जोधपुर - फुलेरा के बीच २०७ अप/२०८ डाउन गाड़ी में प्रतिदिन लगाया जा रहा है ।
एक द्वितीय श्रेणी का डिब्बा जोधपुर - जयपुर के बीच २०७/डब्लू आर ७ अप—डब्लू आर ८/२०८ डाउन गाड़ियों में हफ्ते में दो दिन के स्थान पर अब प्रतिदिन लगाया जा रहा है ।
एक द्वितीय श्रेणी का डिब्बा जोधपुर व पोकरन के बीच १ जे जे जे/२ जे जे जे गाड़ियों में प्रतिदिन लगाया जा रहा है ।

शब्द सामर्थ्य बढ़ाइए

• विशालाक्ष

१. **गोलमाल**—क. हेराफेरी, ख. गबन, ग. टंटा, घ. गड़बड़।

२. **सुगम**—क. सरलता से गम्य, ख. सरलता से लभ्य, ग. सरल, घ. सरलता से बोध्य।

३. **झल्लाना**—क. क्रोधित होना, ख. झुंझलाना, ग. भड़कना, घ. झनझनाना।

४. **दिग्भ्रम**—क. किधर सही किधर गलत, यह संदेह, ख. रास्ता भूलना, ग. भटकना, घ. अनिश्चय।

५. **द्विविधा**—क. दो विधियां, ख. दोबारा, ग. असमंजस, घ. चक्कर।

६. **भद्र**—क. सभ्य, ख. संभ्रांत, ग. सज्जन, घ. संन्यासी।

७. **धौंस**—क. घुड़की, ख. गाज, ग. भभकी, घ. रोब।

८. **पधारना**—क. शुभागमन करना, ख. आना, ग. विराजना, घ. सिधारना।

९. **नगण्य**—क. असंख्य, ख. गणना के योग्य, ग. उपेक्षा के योग्य, घ. छोटा।

१०. **दुरदुराना**—क. बड़बड़ाना, ख. दलना, ग. तिरस्कारपूर्वक दूर करना, घ. काटना।

(पृष्ठ २१ पर देखिए)

दो द्वितीय श्रेणी के डिब्बे नई दिल्ली व खुर्जा के बीच चलने वाली २ एन डी एच/६ के एम—१ के एम/१ एन डी एच गाड़ियों से कम यात्री होने के कारण रद्द कर दिए गए हैं।

स्लीपर कोचेज के प्रचलन में परिवर्तन :

साधारण द्वितीय श्रेणी डिब्बे के स्थान पर ३ टायर शयन यान दिल्ली-ऋषिकेश के बीच चलने वाली ४१/३ एच आर/६ एच आर/४२ गाड़ियों में लगाया जा रहा है।

३ टायर शयन यान नई दिल्ली व समस्तीपुर के मध्य चलने वाली ८६/१ एस बी - २०/८५ गाड़ियों में लगाया जा रहा है।

२ टायर शयन यान दिल्ली व बरेली के बीच चलने वाली ३७६/३७५ पैसेंजर गाड़ियों में लगाया जा रहा है।

वातानुकूलित कोचेज के प्रचलन में परिवर्तन :

४१ अप/४२ डाउन मसूरी एक्सप्रेस में लगने वाला वातानुकूलित डिब्बा दिल्ली से १६-१०-७४ व देहरादून से १७-१०-७४ से शीत काल में बंद कर दिया गया है।

ट्रेनों के समय, थ्रू सेक्शनल केरेजेज के चालू करने/रद्द करने इत्यादि के संबंध में विस्तृत जानकारी हेतु अक्तूबर १९७४ की समय सारिणी देखनी चाहिए जो रेलवे बुकिंग/आरक्षण/पूछताछ कार्यालयों एवं प्रमुख स्टेशनों के बुक स्टालों पर बिक्री हेतु उपलब्ध है।

सम्पादक की ओर से
सभी के लिए
प्रकाश-पर्व की हार्दिक
शुभकामनाएं.

११. **वत्सल**—क. प्रेमी, ख. अनुरक्त, ग. आसक्त, घ. छोटों पर स्नेह करनेवाला।

१२.**दीक्षा**—क. गुरु द्वारा नियमपूर्वक मंत्रोपदेश, ख. शिक्षा, ग. प्रशिक्षण, घ. गुरुमंत्र।

१३. **परमार्थ**—क. दूसरे का हित, ख. यथार्थ तत्त्व, ग. पारलौकिक हित, घ. पुण्य।

१४. **मतवाला**—क. उद्दंड, ख. पागल, ग. मदोन्मत्त, घ. उद्दाम।

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. घ. गड़बड़, गड़बड़ी। धन में, चुनाव में, नियुक्तियों में **गोलमाल**। लो. भा., सं., पुं.। घपला, उलटा-सीधा करना, **घोटाला**। संस्कृत-गोलयोग।

२. ग. सरल, सरलता से गम्य, बोध्य, लभ्य। **सुगम** स्थान, पाठ, आय। तत्., वि., उ. लिं.। **सुकर, आसान, सहज**।

३. ख. झुंझलाना। सुनते ही, देखते ही **झल्ला** उठा। तद्., क्रि. अ.। **भभक** उठना। लो. भा.—झल, संस्कृत—ज्वल।

४. क. किधर सही किधर गलत, यह संदेह। चलते-चलते, व्याख्या करते-करते उसे **दिग्भ्रम** हो गया। तत्., सं., पुं.। **दिशा-भ्रांति**, एक दिशा को दूसरी समझना।

५. ग. असमंजस। जाऊं या न जाऊं, इस **द्विविधा** में पड़ा हूं। तत्., सं., स्त्री.। **दुविधा, पसोपेश**। संस्कृत—द्विविध।

६. ख. संस्कारी। भद्र जन, व्यवहार। तत्., वि., पुं.। **सभ्य, शिष्ट, शरीफ, साधु**।

७. घ. रोब। **धौंस** किसको देते, दिखाते हो? लो. भा., सं., स्त्री.। **भभकी, धाक**। संस्कृत—दंश-ध्वंसन।

८. क. शुभागमन करना, किसी के आगमन के लिए आदरपूर्ण शब्द। कब **पधारे** गुरुदेव, **पधारिए**। लो. भा., क्रि.अ.।

९. ख. गणना के अयोग्य। **नगण्य** व्यक्ति, काम, योगदान। तत्., वि., पुं.। **तुच्छ**, अति साधारण, लेखा-योग्य नहीं।

१०. ग. तिरस्कारपूर्वक दूर करना। गंदे को सभी **दुरदुराते** हैं। लो. भा., क्रि. स.। **दुतकारना**, 'दूर हो' कहना।

११. घ. छोटों पर स्नेह करनेवाला—प्रजा **वत्सल**, **वत्सल** गुरु, पिता, **वत्सला** माता। तत्., वि., पुं.। संस्कृत—वत्स, बच्चा, बछड़ा। मातृवत् स्नेह।

१२. क. गुरु द्वारा नियमपूर्वक मंत्रोपदेश। **दीक्षा** दी, ली; दीक्षांत भाषण। तत्. सं., स्त्री.। **गुरुमंत्र, व्रतोपदेश, व्रत-ग्रहण**।

१३. ख. यथार्थ तत्त्व। केवल स्वार्थ नहीं, **परमार्थ** भी साधिए। तत्., सं., पुं.। **उच्चतम हित, कल्याण, सत्य**।

१४. ग. मदोन्मत्त। **मतवाले** सैनिकों की भीड़; **मतवाला** हाथी; होली के **मतवाले**। तद्., वि., पुं.। **मत्त, उन्मत्त, मस्त, मस्ती** से पागल। संस्कृत—मत्त, हिंदी—वाला।

कादम्बिनी

वर्ष १...
नवंबर, ...

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक
राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

कविताएं

स्थायी स्तंभ

सार-संक्षेप

सह-संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक, चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

मुखपृष्ठ छाया प्रदीपचन्द्र

काल-चिंतन

— वह दीपक जला रही थी और कोई अलक्ष्य हाथ उसे बार-बार बु
जाता था।

— उसने पूछा, 'कौन हो तुम ?'

— उत्तर में एक अट्टहास प्रतिध्वनित हुआ, 'मैं शाश्वत सत्य हूं। न मु
बांधा जा सकता, न मिटाया जा सकता, न तोड़ा जा सकता और
बांटा जा सकता! मैं अंधकार हूं।'

— सतत प्रयत्न करने के बाद भी वह युवती दीपक नहीं जला सकी।

— युग-पर-युग बीत गये, अंधेरा नहीं गया, दीप चिरंतन नहीं रह सका।

— इसलिए अंधकार एक सत्य है, और जीवन की अनिवार्य नियति है।

●●

— अंधकार से विद्रोह एक निरंतर प्रक्रिया है। कवियों ने उस पर विज
के स्रोत खोजने की अपेक्षा, हमें भटकाया अधिक है।

— कहा गया है : दीपक महा ज्योति है। दीपक महा शक्ति है। वह प्राण-
वायु है और अंधकार पर शासन करता रहा है।

— सत्य क्या इनसे विपरीत नहीं है ?

— ज्योति पर निरंतर आक्रमण करते हुए पतंगे एक स्वर नहीं छोड़ते :
हम आशिक हैं अंधेरे के—
जलकर तुम उसे बुझाना चाहते हो ?
इसलिए हम—
बार-बार तुम पर आक्रमण करते हैं!

— पतंगे अंधकार-प्रिय हैं, इसीलिए वे प्रत्येक ज्योति पर टूट पड़ते हैं।

— थके हुए क्षणों के लिए अंधेरा आवश्यक है!

— अंधेरा अनिवार्य है, प्रकाश की प्रतीक्षा के लिए।

— रात अनिवार्य है, नये जीवन के लिए।

— जिन देशों में सूर्य नहीं डूबता, वे बनावटी अंधकार बनाकर कमरे
में छिपते हैं।

— सच यह है कि प्रकाश ही जीवन नहीं है। दुनिया का सारा सुख आदमी
को पागल बना देता है।

— संपत्ति और समृद्धि की प्रतीक लक्ष्मी का वाहन दीपक नहीं है ;
— दीपक प्रेम का इष्ट नहीं है, वह प्रेम में बाधक है।
— दीपक स्वयं में कोई शक्ति नहीं है। उसे शक्ति देनेवाला स्नेह जब समाप्त हो जाता है, ज्योति लड़खड़ा उठती है।
— दीपक के प्रतीक, चाहे वे प्राकृतिक हों या मशीनी, शाश्वत नहीं हैं।
— नश्वर और सामर्थ्यहीन दीपक तब दूसरों को कितना, क्या दे सकता है ?

●●

— अंधकार महाबलि है, अनंत है। वह सहस्र दीपकों के प्रकाश को भी आत्मसात कर लेता है।
— महा अंधकार के बीच जलती एक दीप-ज्योति चिता की भयावह अग्नि का आभास देती है।
— विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि अपराध अंधकार में नहीं, प्रकाश में अधिक होते हैं। (वैज्ञानिकों का कहना है कि पूर्णिमा की रात्रि अपराध का अग्रणी केंद्र है, क्योंकि महासागर की तरह मनुष्य के भीतर के जल पर भी चंद्रमा का प्रभाव पड़ता है।)
— सभी विकसित और प्रकाशित हो जाएं तो भेद की संज्ञा कहां रहेगी ?

●●

— अंधकार यदि बुराइयों का प्रतीक है तो अर्थ यह हुआ कि मनुष्य केवल अच्छाइयों से अपूर्ण है।
— उसे पूर्णता की ओर ले जानेवाली शक्ति प्रकाश है।
— उसी को पाने के लिए मनुष्य सतत संघर्षरत है।
— अपनी दौड़ में वह अंधकार पर थूकता है, और उसे गालियां देता है।
— और निरंतर संघर्ष करते हुए, अंधकार को पराजित न कर सकने की अपनी अक्षमता के सामने वह दीपक का सहारा लेता है।
— तो आओ, हम आज एक सत्य को पहचानें—अंधकार की सत्ता को स्वीकारें और उसके बीच प्रकाश की किरणें पैदा कर अपने साथ अंधेरे को भी बदलते चलें।
— अन्यथा वह दीप जलाती रहेगी और अंधकार उसे पीता रहेगा।

अंधेरे से उजाले की ओर

● कैलाश भारद्वाज

बाजार चौक में रामलीला चल रही है। चारों ओर रामचंद्रजी की जय-जयकार की धूम मची हुई है। बच्चे, वयस्क, बूढ़े सभी राम के रंग में रंगे हुए हैं। लोग राम-कथा की प्राचीनता के विषय में पूरी तरह आश्वस्त हैं। उनका दृढ़ विश्वास है कि राम-कथा करोड़ों वर्ष पुरानी चीज है। उनकी अखंड आस्था है कि चारों युग (सत, त्रेता, द्वापर और कलि) क्रम से आते हैं तथा प्रत्येक त्रेता युग में राम का अवतार होता है, सीता-हरण होता है, रावण-वध होता है और राम-राज्य की स्थापना होती है।

राम-कथा के विषय में मेरा भी यही विचार है। मैं भी इसे अति-प्राचीन कथा मानता हूं। वाल्मीकि, तुलसी आदि कवि तो इसके बाद के गायक हैं। यह कथा अपनी समग्रता में ऋग्वेद में मौजूद है, राम-कथा ऋग्वेद से भी पुरानी है।

जैसा कि हम जानते हैं, ऋग्वेद का सबसे अधिक शक्तिशाली देवता इंद्र है। उसका सबसे प्रबल शत्रु वृत्र नामक असुर है। इंद्र उषा का प्रेमी तथा सीता (हल चली हुई उर्वरा भूमि) का पति है। वृत्र बादल रूप में इंद्र के प्रेम को पृथ्वी तक नहीं पहुंचने देता, अथवा वृत्र अंधकार के रूप में आकाशी प्रकाश को संसार तक पहुंचने से रोकता है। इस प्रकार पति-पत्नी के बीच में आकर वृत्रासुर वैदिक सीता का हरण कर लेता है। इंद्र वज्र की सहायता से वृत्र का वध करता है तथा इंद्र और सीता का पुनर्मिलन हो जाता है।

इंद्र—सूर्य का प्रतीक

ऋग्वेद के भाष्यकार यास्क इंद्र-वृत्र-युद्ध को रूपक द्वारा वर्षा-वर्णन मानते हैं। ऋग्वेद में इंद्र के एक से अधिक रूप मिल जाते हैं, परंतु इंद्र वस्तुतः सूर्य है।

ऋग्वेद में प्राप्त कई प्रकार के वर्णन इंद्र को सूर्य ही सिद्ध करते हैं। हो सकता है, किसी युग में इंद्र नामक कोई अत्यंत पराक्रमी ऐतिहासिक राजा रहा हो अथवा 'इंद्र' शक्तिशाली राजाओं की उपाधि के रूप में काम आता रहा हो। परंतु ऋग्वेद में वर्णित इंद्र अधिकांश में सूर्य ही है।

इंद्र को वर्षा का देवता माना जाता है, मगर अब यह जग जाहिर बात है कि वर्षा का कारण सूर्य ही है। और वृत्र है बादल (अथवा अंधकार)। फिर 'सीता' तो पृथ्वी पर पड़ी हल की रेखा अर्थात हल-वाही भूमि है ही। इंद्र वर्षा करके

सीता को कृषि, वनस्पति आदि की जननी बनाता है। बीच में आ जाता है वृत्रासुर अर्थात बादल। वह वर्षा के पानी को रोक इंद्र और सीता को वियुक्त कर देता है तथा यों सीता-हरण कर लेता है।

इंद्र वज्र द्वारा वृत्र का वध कर देता है और न केवल वर्षा का जल भूमि तक पहुंच जाता है, बल्कि बीच का व्यवधान हट जाने के कारण इंद्र और सीता का पुर्नमिलन हो जाता है। इस प्रकार राम-राज्य स्थापित हो जाता है।

अब यदि ध्यान से देखें तो ऋग्वेद का यह कथा-सूत्र ही राम-कथा का विस्तृत विस्तार ओढ़ लेता है : इंद्र राम बन जाता है और धरती सीता। वृत्रासुर रावण का रूप ले लेता है। शेष कवि की कल्पना - बुद्धि का इतिहास-सम्मत चमत्कार है।

राम का इंद्र से संबंध

प्रश्न पूछा जा सकता है कि राम का इंद्र से क्या संबंध है? राम तो विष्णु के अवतार हैं। अब मजेदार बात यह है कि इंद्र और राम तात्विक दृष्टि से दो नहीं हैं: इंद्र का ब्रह्मरूप ऋग्वेद में ही प्राप्त है। दूसरी ओर राम भी विष्णु के ही अवतार हैं और विष्णु तथा ब्रह्म दो नहीं हैं।

इसके अतिरिक्त विष्णु भी सूर्य ही हैं। वैदिक आर्यों ने सूर्य की भिन्न-भिन्न शक्तियों से भिन्न-भिन्न देवताओं की कल्पना की थी। इंद्र सूर्य है, मित्र सूर्य है, सविता सूर्य है, आदित्य सूर्य है, भग सूर्य है, विष्णु सूर्य है। कहने का आशय यह कि प्राचीन

अंधकार का प्रतीक

समय में बारह महीनों के बारह सूर्य माने जाते थे, जिनमें से एक विष्णु था।

विष्णु सूर्य को ही कहते हैं—इस तथ्य की पुष्टि कुछ अन्य प्रमाणों से भी हो जाती है, यथा—विष्णु का एक स्थान क्षीर-सागर बतलाया गया है, जहां वे शेषनाग की शय्या पर निवास करते हैं। यह चित्र स्पष्टतः उत्तरी ध्रुव पर सूर्योदय का ही चित्र है। नीचे तो क्षीर (दूध)—

जैसी उजली बर्फ ही बर्फ है। उसके ऊपर छह महीने की लंबी रात्रि के अंधकार का काला शेषनाग है और उसके ऊपर है उदय होता हुआ सुबह का सूर्य, ज्योति-रूपिणी लक्ष्मी जिसके चरण दबा रही हैं। यही क्षीर-सागर का शेषशायी विष्णु है।

ऋग्वेद में विष्णु के वामन-रूप का भी उल्लेख है (१।१५४।३)। उस में लिखा है कि उच्च प्रदेश में रहनेवाले, अभीष्ट-वर्षी तथा सब लोकों में प्रशंसित विष्णु ने अकेले ही अति विस्तारवाले तीन लोकों को तीन पग द्वारा मापा था।

यह कार्य सूर्य नित्य ही करता है। हर सुबह अपनी किरणों के द्वारा वह द्युलोक, अंतरिक्ष और पृथ्वी को मापता है। बहुत अधिक दूर होने के कारण सूर्य बहुत छोटा (वामन) ही दिखायी पड़ता है। सूर्य प्रकाश-पुंज का विस्तार करता है तो अपने शत्रु अंधकार (बलि) को दूसरे गोलार्ध (पाताल) में धकेल देता है।

यों वामन-अवतार उदित होता हुआ सूर्य है और असुरराज बलि है रात्रि का अंधेरा। सीता पृथ्वी है सूर्यास्त बलि के चंगुल में आ जाती है

सूर्य (विष्णु) की सहधर्मिणी

राम-कथा में राम विष्णु के अ[...] होने के साथ-साथ सूर्य-वंशी भी हैं। [...] प्रकार राम मूल रूप में सूर्य (प्रका[...] ही हैं। सीता 'सीता' है और राव[...] असुरराज बलि। वृत्रासुर इंद्र की [...] रचना थी। इसी प्रकार रावण भी [...] ताओं की अपनी रचना है।

विष्णु वास्तव में सूर्य ही है। इ[...] और भी प्रमाण हैं। 'विष्णुलोक' का [...] नाम 'गो-लोक' है। साधारणत: [...] गाय को कहते हैं। कृष्ण को 'गोपाल' क[...] गया है। लेकिन 'गो-पालक' ऋग्वेद में [...] की उपाधि है। वहां 'गो' का अर्थ 'गाय' [...] होकर 'किरण' है। इस प्रकार इंद्र, वि[...] और सूर्य—तीनों मूल रूप में एक ही हैं

वास्तविकता यह है कि आलो[...] और अंधकार का यह युद्ध सनातन है— हर रोज होता आया है। प्रकाश औ[...] अंधेरे की छीना-झपटी में हमारी पृ[...] अर्थात मानव-समाज बराबर पीड़ित ए[...] है। यही युद्ध समय-समय पर इंद्र-वृ[...] वामन-बलि, राम-रावण, कृष्ण-कंस आदि के युद्धों के रूप में वर्णित होता रहा है त[...] आम आदमी ने इस पर अलौकिक[...] का आरोप करके इसे अपनी श्रद्धा का आधार बनाया है।

सोचता हूं, अंधकार और प्रका[...] का यह संघर्ष उस समय की बात है ज[...]

मनुष्य प्रकाश पैदा नहीं कर सकता था तथा चारों ओर से सुई से भेदने योग्य अंधेरे से घिरा हुआ था। ऋग्वैदिक-काल के कवियों ने प्रकाश के प्रश्न को इंद्र-वृत्र-वृत्तांत के रूप में उभारकर प्रकाश-प्राप्ति की कामना को वाणी दी थी।

और तो और, सावित्री-सत्यवान की कथा भी अपने मूल रूप में आलोक और अंधकार के सतत संघर्ष की ही गाथा है। सावित्री सूर्य की ज्योति है। सूर्य का एक नाम 'सविता' भी है। इसी कारण सावित्री सूर्य की रोशनी है। दूसरी ओर सत्यवान अर्थात सत्य इसी ठोस-यथार्थ संसार का नाम है और यमराज है अंधकार। सांझ को जब सावित्री अपने उद्‌गम-केंद्र सूर्य में सिमट जाती है तो अंधकार का यमराज इस सत्यवान अर्थात सत्तावान संसार को अपने प्रभुत्व में जकड़ लेता है। सारी रात यही स्थिति रहती है। उषा-काल में सावित्री यमराज का पीछा करती है तथा अंततः 'सत्यवान' को यमराज से वापस छीन लेती है। अंधेरे का यमराज तिरोहित हो जाता है। वह सावित्री (सूर्य-ज्योति) से हार जाता है तथा दिन के प्रकाश में यह सत्तावान संसार पुनः पहले-जैसा हो जाता है।

विचार करने पर सावित्री-सत्य-वान नामक आख्यान इंद्र-वृत्र-कथा से भिन्न नहीं निकलता। कहने का मतलब यह कि प्रागैतिहासिक युग का वह प्राणी, जिसके पास प्रकाश पैदा करने का ज्ञान
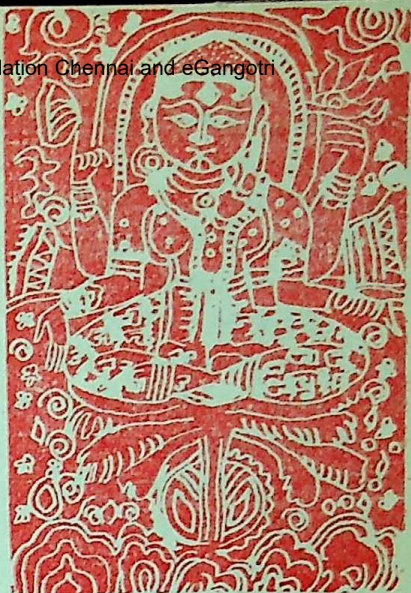
शेषशायी की ज्योति

नहीं था, अंधकार पर प्रकाश की विजय के गीत गाता था तथा कवि-रूप में उसके रूपक गढ़ता था। प्रकाश-प्राप्ति के बाद भी मनुष्य उस रूपक-परंपरा को आगे बढ़ाता रहा है तथा ऐतिहासिक, अर्ध-ऐतिहासिक व कभी-कभी काल्पनिक व्यक्तित्वों पर उजाले-अंधेरे का आरोप करके प्रकाश की विजय पर नत-मस्तक रहा है।

बल्कि मैं तो यहां तक कहूंगा कि दीपावली का पर्व भी अंधकार पर प्रकाश की विजय का ही संकेत-रूपक है, नहीं तो विद्युत ज्योति के इस युग में हम मिट्टी के चार दीवले जलाकर अंधकार की परा-जय का नाटक क्यों रचते हैं?

—भारद्वाज-आश्रम, रानी-ताल-बाग, नाहन (हि. प्र.)

हजारों वर्षों तक जलते हुए दीपों का रहस्य

● निखिलचन्द्र जोशी

सन १५५० ई. वसंत का मौसम ! इटली के निसिदा टापू में, जिसे प्राचीनकाल में नेसिस कहते थे, नागदौन (ऐस्पेरेगस) के एक खेत में काम कर रहे किसी किसान का फावड़ा एक बड़े पत्थर से जा टकराया। उसने समीप ही काम कर रहे अपने किसान भाइयों को आवाज लगायी और वे हाथ का काम छोड़ तुरंत वहां जा पहुंचे। इन स्थानों पर अकसर खजाने पाये जाते थे और यह टापू अपने प्राचीन ग्रामगृहों के लिए प्रसिद्ध था।

किसानों ने कुछ ही देर में एक मकबरा खोद निकाला, जिसके दरवाजे मसाले और सीसे की चटकनियों से बुरी तरह जकड़े हुए थे। मकबरे की छत भी बड़ी मजबूत थी।

उत्सुक किसानों ने मकबरे का दरवाजा तोड़ डाला। वे जल्दी ही खजाना पाना चाहते थे, क्योंकि नेपल्स में संग्रहकर्ता उन्हें प्राचीन मूर्तियों, आभूषणों, बरतनों आदि की खासी रकम देते थे।

लेकिन जब किसानों ने टूटे द से भीतर झांका तब वे आश्चर्य रह गये और उनके कंठों से प्रार्थनाएं निकलीं। भीतर संभावित अंधकार के उन्हें तेज रोशनी दिखायी दी, जो कि मृ की कब्र के पास रखे एक दिये से नि रही थी।

भय और संशय से घिरे किसान दिये को उठाकर बाहर लाये। उसकी ब एकदम साफ और नयी लगती थी वह शीशे के एक मर्तबान में बंद था।

किसान आपस में तर्क करने लगे कोई उसे दैवी क्रिया बताता तो किसी की राय में वह मृतक की अशांत आत्मा थी। अंततः उन्होंने मर्तबान को भूमि पर पटक दिया। वह फूट गया, दिये की लौ अविलं जाती रही।

मकबरे में दिया ? कुछ देशों के लिए यह अजीब बात हो सकती है, लेकिन इटलीवासियों के लिए यह साधारण-सी बात है। आज भी महान कैंपो संटो में, जो मिलान के समीप है, मकबरों में दि-

रात रोशनी की जाती है।

प्राचीन रोमवासियों का यह परंपरागत विश्वास था कि जब इहलोक की एक रात जीवित प्राणी के लिए भयावह और कष्टकारी हो सकती है तब परलोक की अनंतकालीन रातें मृतक के लिए कितनी आतंकप्रद होती होंगी! इसलिए ऐसा नियम था कि हर मकबरे में दिया अवश्य जलाया जाए। लेकिन ऐसा दिया जो एक हजार वर्षों तक जलता रहे, शीशे के बंद बरतन में बिना किसी तेल हवा के अखंड रूप से—वास्तव में अचंभे की बात है।

पादुआ से १७ मील दूर एस्टे नामक एक प्राचीन शहर में, मैक्सिमस के मकबरे में भी अखंड रूप से जलता हुआ एक दिया पाया गया है। इसका उल्लेख प्राचीन इतिहासकार लिसेटस की पुस्तक दि ल्यूसरनिस ऐंटीक्यूरम रिकांडाइटिस' में मिलता है।

अभिमंत्रित दीपक

लिसेटस ने ओलिबियस-मकबरे से प्राप्त दिये का विस्तृत वर्णन किया है। उसके अनुसार यह मिट्टी के आपस में जुड़े हुए दो बरतनों में बंद था। दिये को दो हौजों से, जिनमें से एक सोने का और दूसरा चांदी का था, जोड़ा गया था। उन हौजों में एक प्रकार का अज्ञात तरल पदार्थ भरा हुआ था। उन बरतनों के बाहर खुदे लेख के अनुसार दिया प्लूटो, अर्थात ग्रीक पुराण के यमदेवता को समर्पित था।

साथ ही यह भी चेतावनी खुदी थी, "सावधान! इस दिये के साथ कोई छेड़-खानी न करे और न ही छूने का दुस्साहस करे, क्योंकि इसके भीतर के सभी तत्त्वों को गुप्त रूप से अभिमंत्रित कर दिया गया है और इस दिये को युगों तक निरंतर जलते रहने की समर्थता प्रदान की गयी है।" लिसेटस इस दिये की उम्र ५०० वर्ष
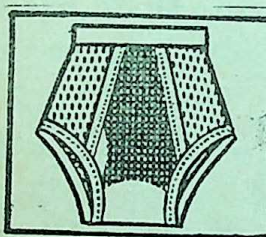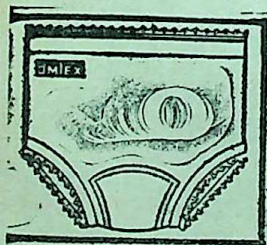
बताता है। अनुमान है कि यह दिया चौथी शताब्दी में कभी जलाया गया होगा।

तेल के स्थान पर तरल सोना

अंगरेज इतिहासकार विलियम कैमडन ने सन १५८२ में प्रकाशित अपनी बृहत पुस्तक 'ब्रितानिया' में लिखा है—"पिछले युग (१५३६–१५३९) में जब बहुत-से पुराने मठों को ध्वस्त किया जा रहा था, तब एक गुप्त मकबरे पर एक ऐसे दीपक को पाया गया जो युगों से निरंतर जलता आ रहा था। जनश्रुतियों के अनुसार उस मकबरे में सम्राट कांस्टेंटियस को दफनाया गया था।" वह आगे लिखता है, "उस दीपक में तेल के स्थान पर तरल सोना था। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन वैज्ञानिक सोने को ऐसी तरलता में परिणत करने की कला जानते थे, जिससे दीपक को युगों तक जलाया जा सके।"

संत आगस्टीन (ई. सन ३५४—ई. सन ४३०) अपने ग्रंथ 'दे सिविटेट देई' में सौंदर्य की देवी वीनस के मंदिर में निरंतर जलते रहनेवाले एक ऐसे दीपक का उल्लेख करता है जो कि खुले स्थान में रखा रहता और जोरों की वर्षा और तेज हवा से तनिक भी प्रभावित नहीं होता था।

निरंतर जलते रहनेवाले दीपक का सबसे ताजा उदाहरण सन १८४० में स्पेन के कोरदोवा स्थान में एक रोमन परिवार के सामूहिक मकबरे में हुआ है।

आधुनिक प्रयोग

हाल में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के

तानसेन बनते हो तो लो
तंबूरा और गाओ दीपक राग

वैज्ञानिक इन दियों-जैसी रोशनी का आविष्कार करने में सफल रहे हैं, लेकिन यह रोशनी कुछ ही सप्ताह तक कायम रह पायी। उन्होंने ईंधन के रूप में 'मेथिल नाइट्रेट' का प्रयोग किया था।

प्रश्न उठता है कि इन अखंड दियों के निर्माता क्या 'मेथिल नाइट्रेट' जैसे किसी अन्य रसायन से परिचित थे? इन दियों को जिस तरल पदार्थ से जलाया जाता था, कहीं वह कम्प्रेस की गयी गैस तो नहीं थी जो तरल पदार्थ में परिणत हो सकती है? क्या प्राचीन वैज्ञानिक 'शीत - प्रकाश' के सिद्धांत से तो अवगत नहीं हो गये थे? इस सिद्धांत का प्रयोगात्मक प्रदर्शन प्राग के प्रो. हांज मौलिश

ने सन १९१४ में वियेना के विज्ञान-प्रदर्शन में किया था। उन्होंने एक मुहरबंद शीशे की ट्यूब को 'साल्टपीटर' और 'जीलेटिन' के एक मिश्रण द्वारा भीतर से पोत दिया था और उस मिश्रण को किसी प्रकाशशील बैक्टीरिया से क्रियाशील बना दिया था। दो, तीन दिन के भीतर ही ट्यूब से नीली-हरी रोशनी निकलने लगी, जो २१ दिन तक स्थिर रही।

जूडो पैंसीरोलिस (१५२३-१५९९) अपने समय का सुप्रसिद्ध कानूनी विशेषज्ञ और पुरातत्त्ववेत्ता था। वह अपने इतिहास संबंधी एक ग्रंथ 'रेरुम मेमोरेबिलियम-लिबरी दुओ' में प्राचीनकाल में प्रयोग लायी जानेवाली विभिन्न वस्तुओं का उल्लेख करता है, जिसे आधुनिक युग फिर अपनाने लगा है, जैसे कभी न मिटनेवाली बैंगनी स्याही, एस्बेस्टस और सूत के कपड़े, प्रकाशधर्मी धातु और विभिन्न प्रकार के मसाले। वह दो अन्य वस्तुओं का भी उल्लेख करता है—कभी नष्ट न होनेवाली दिये की बत्तियां और जलकर भी न चुकने वाला तेल।

वह यह भी लिखता है कि रोमवासी एस्बेस्टस को खान से निकालने, उसे शुद्ध करके, कातने और फिर उससे बत्तियां बनाने की कला में प्रवीण थे।

एस्बेस्टस की बत्ती

पैंसीरोलिस की इस बात की सत्यता प्लीनी के वृहद ग्रंथ 'नेचुरल हिस्ट्री' से भी प्रमाणित होती है, वह भी अपने ग्रंथ में लिखता है कि रोमवासी एस्बेस्टस से परिचित थे। ऐसा ही कथन ग्रीक भूगोल-शास्त्री और इतिहासकार स्ट्रैबो का है। प्लीनी का यह कथन यहां प्रस्तुत करना अप्रासंगिक न होगा कि रोमन संसार विभिन्न आविष्कारों, जीव-विज्ञान, ज्योतिष, ऋतु-विज्ञान, विभिन्न वस्तुओं के निर्माण की प्रक्रिया से परिचित था।

पैंसीरोलिस अखंड दियों में एस्बेस्टस की बत्तियों के प्रयोग के समर्थन में सम्राट कांस्टेंटियस क्लोरस की एक राजाज्ञा को उद्धृत करता है कि "इस 'पत्थर' से कभी न नष्ट होनेवाला कपड़ा तैयार करवाया जाए, जो कि दियों में प्रयुक्त हो सके, विशेषकर गुसलखानों के दियों में।" पैंसीरोलिस इस 'पत्थर' को एस्बेस्टस कहता था।

पैंसीरोलिस के अनुसार कांस्टेंटियस इस प्रकार के अखंड दियों द्वारा रोम के ४,४०,००० वर्गगज क्षेत्र में फैले अजायब-घर को रात-दिन प्रकाशित रखता था।

पैंसीरोलिस ने एक जगह इस प्रकार लिखा है, "प्राचीनकाल में लोग एक ऐसा तेल बनाना जानते थे जो प्रयोग में लाये जाने के बावजूद खर्च नहीं होता था। इस प्रकार के तेल से जलता हुआ एक दिया उसी के युग में सिसरो की पुत्री तूलिया की कब्र में पाया गया है। यह दिया १,५५० साल तक अनवरत जलता रहा, लेकिन ताजी हवा में रखने पर बुझ गया।"

—८, नवाबयूसुफ रोड, सिविल लाइंस, इलाहाबाद

मिलने गया। वे दिल्ली में भंगी कॉलोनी में ठहरे हुए थे। सरदार पटेल मुझे हमेशा इस बात के लिए चिढ़ाते रहते थे कि नेहरूजी मेरे नेता हैं। पटेल ने मुझे चिढ़ाते हुए कहा, "चमनलाल, तुमने एक किताब में गिरजाशंकर वाजपेयी के अमरीका में भारत-विरोधी प्रचार का भंडा फोड़ा। लेकिन फिर भी वाजपेयी सेक्रेटरी जनरल हो गये।"

मैंने कहा, "वह भी तुम्हारे डिप्टी प्राइम मिनिस्टर होते हुए?"

उन्होंने कहा, "यह तुम्हारे नेता के कारण हुआ है, तुम्हारे नेता ने ही उन्हें सेक्रेटरी जनरल बनाया है।" गांधीजी ने बीच में हस्तक्षेप करते हुए कहा, "इसमें गलती भी क्या है! वाजपेयी को जब ब्रिटिश सरकार पैसा देती थी तब वह उसके सुर-से-सुर मिलाता था। अब वह तुम्हारे सुर में सुर मिलाएगा।" मैंने यह बात नेहरूजी को बतायी तो वे बोले, "भारत के प्रतिभाशाली व्यक्तियों ने आई. सी. एस. बनकर ब्रिटिश सरकार की सेवा की है। अब वे स्वतंत्र भारत की सेवा करेंगे।"

सन १९३१ में कराची कांग्रेस में एक रात हम नेहरूजी के कैंप में बैठे थे। कैंप में कमला नेहरू, कृष्णा नेहरू, इंडियन लैजिस्लेटिव असेंबली के बुजुर्ग सदस्य रायजादा हंसराज और मैं था। कृष्णा नेहरू ने रायजादा से शिकायत की, "चाचाजी, चमनलाल मुझे तंग करते हैं।" रायजादा ने कहा, "चिंता मत करो, मैं इन्हें जालंधर ले जा रहा हूं। मैंने इनके लिए सीट रिजर्व करा रखी है। मैं कोई दुल्हन ढूंढ़कर इनकी शादी करा दूंगा।" तभी नेहरूजी अंदर आये। उन्होंने यह बात सुन ली और मुझसे पूछा, "तुम्हें दुल्हन चाहिए या 'स्कूप'?" मैंने कहा, "पत्रकार होने के नाते मैं दुल्हन के बजाय 'स्कूप' चाहूंगा।" नेहरूजी ने रायजादा से कहा, "इनका रिजर्वेशन रद्द करा दो। ये मेरे साथ जाएंगे, मैं इन्हें 'स्कूप' दूंगा।" सभी लोग हंस पड़े। अगली सुबह मैं नेहरूजी के साथ लौट पड़ा। रेल में नेहरूजी ने पूछा, "कांग्रेस अधिवेशन की सबसे बड़ी खबर क्या है?" मैंने कहा, "आपने मुझे जो 'स्कूप' बताने का वायदा किया है, पहले आप उसे पूरा कीजिए।" नेहरूजी ने कहा, "कराची छोड़ने से पहले कांग्रेस कार्यसमिति ने निर्णय किया है कि कानफ्रेंस में गांधीजी को पूर्णरूपेण प्रतिनिधि बनाकर भेजा जाए।"

मुझे 'स्कूप' मिल गया और मैंने 'हिंदुस्तान टाइम्स' के लिए एक्सप्रेस तार बनाकर नेहरूजी को दे दिया ताकि वे उसे हैदराबाद (सिंध) से भिजवा दें। मैंने उन्हें तार के लिए रुपये भी दिये, लेकिन उन्होंने नहीं लिये। दूसरे दिन मैं दिल्ली आ गया, जहां उसी दिन मेरी शादी की बात पक्की हो गयी और दो महीने बाद शादी हो भी गयी। अठारह साल बाद हम दोनों एक-दूसरे से मैत्रीपूर्ण ढंग से अलग हो गये, क्योंकि पूर्वी तथा पश्चिमी ढंग के रहन-सहन पर हमारे बीच तीव्र मतभेद हो गये थे। तब नेहरूजी ने मुझसे

कहा था, "मुझे खेद है कि मैं तुम्हें उस दिन अपने साथ ले गया जिससे तुम गलत गाड़ी पर ही नहीं गये, गलत दुलहन भी ले आये।" मैंने कहा, "अच्छा ही हुआ, क्योंकि बौद्ध भिक्षु बनने की हार्दिक इच्छा थी।"

सन १९५५ में, सारनाथ में भगवान बुद्ध के जन्मदिवस पर मैं बौद्ध भिक्षु बना। मंदिर के प्रधान पुजारी ने मुझे बौद्ध भिक्षु के गेरुए वस्त्र दिये और कहा, "इन्हें तभी पहनना जब कि तुम्हारी लड़की की शादी हो जाए।" लड़की की शादी के अगले दिन मैंने वे वस्त्र धारण कर लिये। सारनाथ जाने से पूर्व मैं नेहरूजी से विदा लेने गया। नेहरूजी ने मुझे इन वस्त्रों में देखकर कहा कि इन वस्त्रों में बहुत सुंदर लगते हो। मैंने कहा, "मेरे पास इस तरह के वस्त्रों के दो जोड़े हैं। एक जोड़ा आप पहन लें और मेरे साथ मिलकर युद्धोन्मादी देशों में भगवान बुद्ध के शांति-संदेश के प्रचार के लिए चलें!"

नेहरूजी ने कहा, "अभी नहीं, पहले मैं अपनी पंचवर्षीय योजना पूरी कर लूं।" पांच वर्ष बाद नेहरूजी ने मुझे सात सप्ताह के लिए अपने अतिथि के रूप में आमंत्रित किया ताकि मैं दिल्ली में चरित्र-निर्माण अभियान शुरू करूं।

एक दिन सुबह लॉन में टहलते हुए मैंने उन्हें याद दिलाया, "आपने पांच साल बाद बौद्ध भिक्षु होने का वायदा किया था।" उन्होंने कहा, "तुमने मेरी बात को गलत समझा। मैंने पंचवर्षीय योजनाओं की बात कही थी न कि एक पंचवर्षीय योजना की। मैं प्रधानमंत्री के रूप में बने रहने को उत्सुक नहीं हूं, लेकिन पंचवर्षीय योजनाओं को पूरा करने के लिए उत्सुक हूं; क्योंकि इन्हीं योजनाओं से लोगों को आर्थिक स्वाधीनता और समृद्धि मिल सकती है।"

मैंने कहा, "पंडितजी, तब तो मुझे लगता है कि आप कभी भी रिटायर नहीं होंगे और आप इसी घर में ही मरेंगे। लेकिन मैं आपकी इस अदम्य इच्छा की कि आप देश को समृद्ध देखना चाहते हैं, सराहना करता हूं।"

इसके चार साल बाद नेहरूजी का उसी घर में देहावसान हो गया।

नेहरूजी ने मृत्यु से तीन महीने पूर्व एक प्रातः टहलते हुए मुझसे कहा था, "तुमने दर्जनों पुस्तकें लिखी हैं। पाठ्य-पुस्तक के रूप में भारतीय संस्कृति पर एक पुस्तक क्यों नहीं लिखते?" मैंने आधे घंटे बाद नेहरूजी को इस पुस्तक की रूप-रेखा बनाकर दी, जिसे उन्होंने पसंद किया। मैंने उन्हें बताया कि मैं इस समय दो पुस्तकों पर पिछले कई वर्ष से कार्य कर रहा हूं। यह कार्य अगले कुछ महीनों में समाप्त हो जाएगा। तब इस पुस्तक को आरंभ करूंगा। उन्होंने पूछा, "क्या इन किताबों को पूरा करने के लिए तुम शिमला जाना चाहोगे?" मैंने शिमला जाना स्वीकार कर लिया तो उन्होंने पंजाब के राज्यपाल को फोन कर 'डेन्सफॉली'

कॉटेज मुझे छह महीने के लिए देने को कह दिया। मैंने नेहरूजी को बताया कि मेरी आगामी दो पुस्तकें 'इंडिया--मदर ऑव अस आल' तथा 'टेक्स्ट बुक ऑव इंडियन कल्चर' शीर्षक से होंगी। नेहरूजी ने कहा, "पता नहीं मैं कितने दिन और जिऊं, इसलिए 'टेक्स्ट बुक आफ इंडियन कल्चर' की भूमिका अभी लिखे देता हूं।" और उसी दिन मेरे शिमला जाने से पूर्व उन्होंने भूमिका लिखकर मुझे दे दी।

मैंने उसी शाम नेहरूजी से विदा ली, जो इस जीवन में उनसे अंतिम विदाई थी। तीन महीने बाद जब मैंने पांडुलिपियां पूरी कर लीं तब २० मई को मैंने तार द्वारा नेहरूजी को इसकी सूचना दी और उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने जवाब दिया "मैं तीन दिन के लिए देहरादून जा रहा हूं अतः २६ मई को दिल्ली में सुबह नाश्ते पर मिलूंगा।" मैं दिल्ली गया और सरदार हुकमसिंह के आग्रह पर उनके यहां ठहरा। नेहरूजी के प्राइवेट सेक्रेटरी ने मुझे सूचना दी कि मैं अगले दिन नाश्ते पर नेहरूजी से मिलूं, लेकिन अगले दिन वे अचानक बीमार पड़े और इस संसार को छोड़कर चले गये। नेहरूजी की अंत्येष्टि के दूसरे दिन मैं तीन महीने के लिए ज्युरिच के दौरे पर चला गया, जहां हर रात मैं सपने में नेहरूजी को देखता था, जिसमें वे मुझसे शिकायत करते थे कि "चमनलाल, तुमने अपना वायदा पूरा नहीं किया।" आज भी कभी-कभी उन्हें सपने में देखता हूं।

कुछ आलोचक नेहरूजी को भाषा-वार राज्यों के गठन के लिए दोषी ठहराते हैं, लेकिन वे भाषाई उन्मादियों को हृदय से घृणा करते थे। एक सुबह उन्होंने मुझे बुलाया और अपने दो [illegible] को खाना खिलाते दिखाया। मैंने नेहरूजी से कहा, "आपने इन जानवरों को इस पार्क में क्यों रख लिया है? आप भाषाई उन्मादियों को घेरकर यहां उनके लिए चिड़ियाघर क्यों नहीं बना देते, जिनमें लोग कुछ खाने के लिए डाल दिया करें?"

उन्होंने जवाब दिया, "इस तरह तो मुझे सारे देश को ही भाषाई उन्मादियों का चिड़ियाघर घोषित करना पड़ेगा।"

नेहरूजी बुद्ध की भांति करुणाशील थे। वे स्वभाव से इतने कोमल थे कि वे के शत्रुओं के प्रति भी कठोर नहीं हो पाते थे। सन १९६० में, मैं कई सप्ताह तक उनका अतिथि रहा। मैं जनता में नैतिक और चारित्रिक सुधार के भाषण देता था। लोगों ने मुझसे शिकायत की थी कि मैं नेहरूजी का अतिथि हूं तो उनसे काला-बाजारी, मुनाफाखोरी और मिलावट को बंद कराने के लिए क्यों नहीं कहता, क्योंकि इनके बिना चारित्रिक सुधार की बातें बेकार हैं। एक दिन नाश्ते के बाद मैंने नेहरूजी को १२ मांगों की एक सूची पेश की। मैंने बताया कि जनता कालाबाजा-रियों और खाद्य तथा दवाओं में मिलावट करनेवालों से तंग आ चुकी है और वह

राष्ट्रपति से मांग करेगी कि उन लोगों के खिलाफ अध्यादेश निकालकर कठोर कार्यवाही की जाए और जो अपराधी पाये जाएं उनका सामान जब्त किया जाए। नेहरूजी ने कहा, "तुम तो बौद्ध भिक्षु हो, फिर ऐसे कठोर उपायों की बात कैसे कह रहे हो ?" सन १९४३ में मुझे दिये गये एक ऐतिहासिक 'इंटरव्यू' में उन्होंने कहा था कि "यदि मेरे पास शक्ति आ जाए तो मैं हरेक चोरबाजारिये को पास के खंभे से बंधवाकर गोली से उड़वा दूं।" मैंने यह बात याद दिलायी तो वे बोले, "तब मैं प्रधानमंत्री नहीं था।"

मैंने कहा, "तब आप सत्ता चाहते थे। वह अब आपको मिल गयी है तो अब आप उसका इस्तेमाल क्यों नहीं करते ?" इसके उत्तर में उन्होंने कहा कि वे कठोर रुख अपनाने में असमर्थ हैं। इस पर मैंने कहा, "पंडितजी, फिर आप अपनी कुरसी पर किसी शक्तिशाली आदमी को बैठा दीजिए।" उन्होंने कहा कि एक बौद्ध भिक्षु को ऐसे कठोर उपायों का सुझाव नहीं देना चाहिए। मैंने कहा, "आप तो भिक्षु नहीं हैं, आप तो प्रधानमंत्री हैं, जिसके पास राष्ट्र के प्रति हो रहे अपराधों को रोकने की पर्याप्त शक्ति है और यदि आप दृढ़ नहीं रह सकते तो अच्छा हो कि आप प्रधानमंत्री-पद छोड़ दें।

"आपने मुझे अमरीका से भाषण-दौरे को रद्द कराकर यहां पर चरित्र-निर्माण अभियान के लिए क्यों बुलाया था ?" इस पर उन्होंने खेद प्रकट किया तथा कहा, "तुम मुझे बदल नहीं सकते, मैं किसी के प्रति कठोर नहीं हो सकता।"

कुछ लोग नेहरूजी को कम्युनिज्म और रूस का पक्षपाती कहते हैं, लेकिन यह गलत है। सच यह है कि वे रूस के शांति-प्रयासों के कारण रूस के समर्थक थे। १९६० में नेहरूजी ने जब मुझे जिप्सियों के मूल उद्गम के खोज-कार्य के संबंध में यूरोप के लगभग आधे दर्जन देशों की यात्रा पर भेजा था तब मुझसे स्पष्टतः कह दिया था कि मैं रूसी सरकार से किसी सुविधा तथा कृपा को स्वीकार न करूं।

उन्होंने तिब्बत के मामले में चीन के प्रति जो दुर्बल प्रतिरोध किया, उसका कारण यह था कि भारत में शक्ति नहीं थी। उन्होंने मुझसे कहा था, "हम अयथार्थ की दुनिया में रह रहे हैं और उसका नतीजा भी देख रहे हैं।"

नेहरूजी भगवान बुद्ध के महान उपासक थे। मैं जापान से हाथीदांत की बनी बुद्ध की एक प्रतिमा लाया था, जो कि जापान के शाही परिवार ने बाजार में बेच दी थी। नेहरूजी ने इस प्रतिमा को बहुत ही पसंद किया था। वे प्रायः कहा करते थे कि भगवान बुद्ध की यह प्रतिमा हम दोनों के बीच मिलानेवाली एक कड़ी है। यह प्रतिमा आज भी तीनमूर्ति भवन के संग्रहालय में नेहरूजी के अध्ययन-कक्ष में सुरक्षित रखी हुई है। मैं जब भी वहां जाता हूं, तब अपनी श्रद्धा अर्पित करता हूं। ●

● पद्माशा

उस दिन सूरज अत्यंत उदास था और सुबह पीली धूप में कांपती हुई आयी थी। चैत की खुश्क हवा बेरुखी से बह रही थी। बाजार में सड़कों पर चलते हुए लोग अनमने दीखते थे। किसी आगत आशंका में लोगों के चेहरे जर्द थे। माताएं बच्चों को घर से बाहर खेलने जाने को मना कर रही थीं। कालेज, यूनीवर्सिटी के अहाते सूने थे क्योंकि तेरह मार्च को अचानक विश्वविद्यालय बंद होने की घोषणा के बाद छात्रों को छात्रावास

जयप्रकाश बाबू अब कहां हैं?

खाली कर देने का आदेश दे दिया गया था। खेल के मैदान भी खाली थे और वहां गाय-भैंसें चर रही थीं। सुबह से ही शहर खामोश था—तूफान आने के पहले की-सी खामोशी।

१८ मार्च, ७४! सुबह एक लिपी हुई चुप्पी की तरह थी और दोपहर एकबारगी सैकड़ों हथगोलों की तरह फट पड़ी थी। बिहार-आंदोलन की विभीषिका में पटना धू-धू कर जल उठा था।
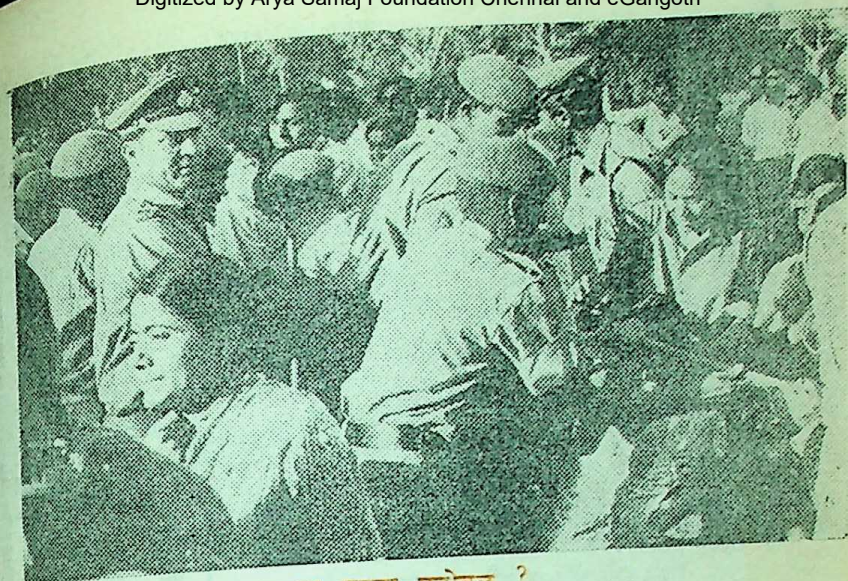
जनता का बढ़ता मनोबल ?

देखते-देखते पटना सचिवालय से शुरू होकर यह आग सारे शहर में फैल गयी। दोपहर को बिहार के हर शहर से एकत्र छात्रों का विशाल जुलूस अपनी मांगों के साथ सचिवालय की तरफ चल पड़ा था और वहां पहुंचते-पहुंचते जुलूस ने क्रोधित भीड़ का रूप धारण कर लिया। आंदोलनकारियों ने सचिवालय को घेर लिया। सचिवालय - भवन के भीतर घुसने की कोशिश में भीड़ ने चारों तरफ लगी कांटों की बाड़ तोड़ डाली। विधायकों पर हमला होने तक पुलिस हक्की-बक्की देखती रही, क्योंकि ऊपर से उसे किसी कार्रवाई का आदेश तब तक नहीं मिला था। छात्रों ने कई बसें भी अपने कब्जे में ले ली थीं। खुद छात्र ही उन्हें ड्राइव कर रहे थे और उनमें बैठे छात्र पुलिस पर पथराव कर रहे थे। छात्र और पुलिस के बीच लगभग तीन घंटे तक मुकाबला हुआ, जिसमें पुलिस को विशेष सफलता नहीं मिली। वस्तुतः सभी बड़े पुलिस अधिकारी मंत्रियों की जान बचाने में लगे हुए थे।

आगजनी के पीछे कौन ?

सचिवालय से लौटती हुई क्रोधित भीड़ ने कुछ होटलों पर धावा किया और 'सुजाता', 'राजस्थान पैलेस' आदि बड़े होटलों में आग लगा दी। इसी आगजनी का शिकार बिहार के दैनिक 'सर्चलाइट' का दफ्तर हुआ। 'सर्चलाइट' वस्तुतः छात्र-आंदोलन का समर्थक ही रहा है। प्रश्न उठता है कि इस अखबार के कार्यालय में आग लगानेवाले आंदोलनकारी छात्र थे या इसमें

कुछ अन्य तत्त्व तथा गुंडे भी शामिल थे, जो छात्रों की आड़ में अपना उल्लू सीधा करने पर तुले थे ?

ये सब कुछ अचानक नहीं हुआ। छात्र बहुत दिनों से आंदोलन की योजनाएं बना रहे थे। विहार में यह पहला ही मौका था जब छात्र-संघर्ष-समिति का गठन व्यापक आधार पर किया गया था। छात्र-संघर्ष-समिति में विद्यार्थी परिषद (जनसंघ) युवा कांग्रेस (संगठन कांग्रेस), छात्र परिषद (कांग्रेस) समाजवादी युवजन सभा (सोपा), समाजवादी युवजन सभा (संसोपा), समाजवादी युवजन सभा (किशन पटनायक गुट), क्रांतिकारी युवक संघ तथा क्रांतिकारी युवा संघ के प्रतिनिधि शामिल हुए। इसके अतिरिक्त इस समिति को राज्य के २५० महाविद्यालयों के छात्र-प्रतिनिधियों का सहयोग भी प्राप्त हुआ। प्रारंभ में एक छात्रनेता ने आंदोलन के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए कहा था कि छात्रों ने आपसी मतभेदों को भुलाकर आंदोलन को अंत तक चलाने का संकल्प लिया है। इस आंदोलन को नारा दिया गया—महंगाई, वेरोजगारी, भ्रष्टाचार तथा गलत शिक्षानीति के खिलाफ संघर्ष।

छात्रों ने आंदोलन के प्रति अपनी प्रतिवद्धता की सूचना भी सरकार को समय से भेज दी थी। इसके बावजूद आंदोलन की पहली लहर को रोकने में प्रशासन विफल ही रहा। राज्य के मुख्य सचिव मेनन ने इस कमजोरी के लिए सरकार की आलोचना भी पत्रकार-सम्मेलन में की। आंदोलन के मूल कारणों के संदर्भ में विहार की स्थिति पर गृहमंत्री ने जो वक्तव्य दिया वह वहुत कम तथ्यों पर प्रकाश डाल सका। वस्तुतः आर्थिक विकास में उत्तरोत्तर अवरोध तथा उसके भीषण परिणाम इस असंतोष की जड़ में हैं।

सचिवालय की ओर बढ़ता छात्रों का जुलूस

बिगड़ती हुई आर्थिक स्थिति

१९६१ की जनगणना के बाद विहार में जितनी तेजी से जनसंख्या बढ़ी है उतनी ही तेजी से आर्थिक उपादानों में कमी आयी है। जहां १९६१ में काश्तकारों का अनुपात ५८.८ प्रतिशत था, दस साल के अंदर घटकर ४२.३ प्रतिशत रह गया।
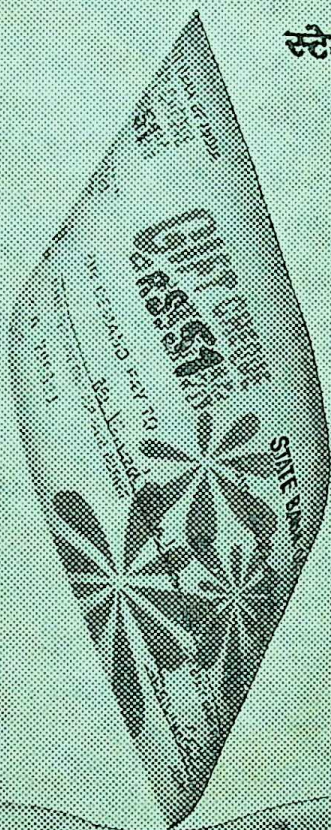
खेतिहर मजदूरों का अनुपात १९६१ के अनुसार २२. ९ प्रतिशत था, दस साल के बाद ३८.२ प्रतिशत हो गया। आज बिहार में ३८ प्रतिशत भूमिहीन लोगों के गल्ले का दैनिक प्रबंध स्थायी तौर पर अनिश्चित है। बिहार यों भी अभावग्रस्त राज्य है। अब खाद्य वस्तुओं की कीमतें आकाश छू रही हैं। हरित क्रांति के समय भी बिहार का कृषि - उत्पादन कम ही था। हदबंदी पर बिहार में नहीं के बराबर अमल हुआ। आज भी ऐसे जमींदार हैं जिनके पास सैकड़ों एकड़ जमीन है और वे 'लेवी' में उचित गल्ला नहीं देते।

इन आर्थिक विषमताओं का असर छात्रों पर भी पड़ता है। छात्र ज्यादातर मध्यवर्गीय परिवारों से आते हैं। उनके अभिभावक उनकी दैनिक तथा सामान्य मांगें—कागज, किताब, खाना, कपड़ा, फीस आदि—की आपूर्ति में दिनोंदिन अक्षम होते जाते हैं।

एक छात्र-नेता ने गुजरात-आंदोलन से बिहार-आंदोलन की तुलना करते हुए बताया कि 'यह आंदोलन महंगाई, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी और गलत शिक्षा-नीति के विरोध में अभिव्यक्त राष्ट्रव्यापी निराशा और आक्रोश के संघर्षात्मक रूप की ही एक कड़ी है। गुजरात में आंदोलन अचानक ही फैला, किंतु बिहार में योजनाबद्ध ढंग से चल रहा है।

यह पूछे जाने पर कि यह आंदोलन सरकार - विरोधी राजनीतिक दलों से प्रेरित तो नहीं है, एक छात्र-वक्ता ने स्पष्ट किया कि यों उनका यह आंदोलन राजनीतिक गुटों से संबद्ध नहीं है, किंतु यदि संघर्ष के दौरान राजनीतिक दलों की मदद मिलती है तो वह स्वीकार्य होगी।

आंदोलन की संभावनाओं पर बात करते हुए एक अनशनकारी छात्र ने कहा कि कम-से-कम यह आंदोलन इस अर्थ में सार्थक होगा कि यह हजारों वर्षों से जनता के टूटे हुए मनोबल को जगाएगा।

इस तरह प्रारंभ में छात्रों में अदम्य उत्साह, उतावला आवेश था, स्थिति को शीघ्र निबटाने की बेचैनी थी जो कि कई बार उनकी अनुभवशून्यता की द्योतक भी थी।

आंदोलन का पहला चरण तोड़फोड़ को लेकर आया तथा प्रशासन ने उसे दबाने में सफलता प्राप्त कर ली। दूसरे चरण तक आते-आते क्रांति का रूप बदल जाता है। छात्र दीर्घकालीक योजना के अंतर्गत धरना, सत्याग्रह, मौन जुलूस, शोक दिवस, श्राद्ध दिवस, सभा, भूख हड़ताल, चेतावनियां, सरकारी दफ्तरों को ठप करने की योजना आदि के द्वारा जनता एवं प्रशासन दोनों को अपने उद्देश्य की तरफ आकृष्ट करते हैं। यहीं से इस आंदोलन के चरित्र, उपलब्धियों, पार्टियों की भूमिका एवं आंदोलन की संभावनाओं पर ध्यान केंद्रित होता है।

आंदोलन के दूसरे चरण से पहले तक जयप्रकाश नारायण उससे संबंधित

नहीं थे। आंदोलन पूर्णतः छात्रों द्वारा ही परिचालित था। छात्रों ने घोषणा की थी कि जनजीवन के हित के लिए वे किसी गुट से प्रभावित हुए बिना अंतिम दम तक लड़ने को तैयार होंगे।

जयप्रकाश नारायण का प्रवेश

आंदोलन-विस्फोट के दस दिन बाद ही जयप्रकाश नारायण ने स्वयं ही अपने को इस आंदोलन के लिए सौंपा था छात्रों को सही निर्देश देने के लिए। चूंकि जयप्रकाश बाबू राजनीतिक दलबंदियों से मुक्त माने गये हैं, इसलिए छात्र-संगठन ने उनके नेतृत्व का स्वागत किया।

इसमें संदेह नहीं कि जयप्रकाश बाबू ने आंदोलन को गति दी है, लेकिन आंदोलन को विवादास्पद भी बनाया है।

वे सबसे पहले जिस पड़ाव पर पहुंचना चाहते हैं वह है विधानसभा का विघटन। गत जून में विधानसभा भंग करने के समर्थन में डेढ़ लाख व्यक्तियों के हस्ताक्षर लेकर वे गवर्नर से मिले थे और एक विशाल जुलूस का आयोजन किया था। विधानसभा भंग नहीं हुई, बल्कि मंत्रिमंडल में तनिक हेर-फेर हो गया।

विकल्प क्या है?

प्रश्न यह है कि विधानसभा भंग होने के बाद जयप्रकाश बाबू के सामने शासन का कौन-सा विकल्प है? यदि पुनर्निर्वाचन होना है तो क्या उन्हें इस बात का विश्वास है कि अगला चुनाव न्यायपूर्ण होगा? जब तक जनता पूर्ण जागरूक न हो जाए चुनाव, अर्थशक्ति एवं बल से प्रभावित होंगे ही। विधानसभा भंग होने पर अहं की तुष्टि चाहे हो जाए, समस्याओं का निदान कभी नहीं होगा।

जयप्रकाश बाबू ने अपने कार्यक्रम के अंतर्गत काम-बंद की घोषणा की तथा छात्रों से एक वर्ष तक पढ़ाई बंद करने और परीक्षाओं का बहिष्कार करने की अपील की। दूसरी तरफ सरकार ने परीक्षाएं स्थगित न करने की ठान ली।

तीन महीने के असामान्य अवकाश के बाद गत पंद्रह जुलाई को बिहार के सभी विश्वविद्यालय खोल दिये गये। पुलिस की देखरेख में सभी कालेज खोले गये, लेकिन हैरत की बात है कि कक्षा में विद्यार्थी आये ही नहीं!

तीन दिन बाद परीक्षाएं होनेवाली थीं। शुरू के दो दिनों में परीक्षार्थियों की उपस्थिति नगण्य होने के बावजूद बाद में उपस्थिति बढ़ती गयी और कहीं-कहीं छिटपुट वारदातों के अतिरिक्त अधिक केंद्रों में परीक्षाएं सफलतापूर्वक समाप्त हुईं। ये परीक्षाएं जयप्रकाश बाबू तथा सरकार के बीच कसौटी बन गयीं।

प्रशासन की ओर से कहा गया कि परीक्षा न होने से विद्यार्थियों का एक वर्ष खराब होगा। वस्तुतः यह तर्क निराधार है। एक दशाब्दी से बिहार में परीक्षाएं कभी समय से नहीं हुईं।

दूसरे, जब पहले से ही इतनी बड़ी संख्या में उत्तीर्ण होकर बैठे बेरोजगार
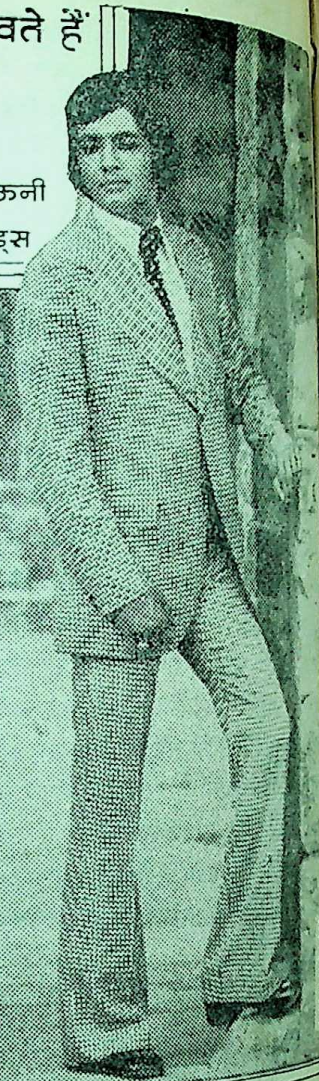
छात्रों में सरकार कोई रुचि नहीं ले सकी है तब फिर इसी वर्ष परीक्षाओं में इतनी रुचि लेने का क्या उद्देश्य समझना चाहिए। इसी तरह, जयप्रकाश नारायण की ओर से भी परीक्षाएं न होने देने की कोशिश भी सारहीन थी। इसके विपरीत यदि कालेजों में नियमित रूप से छात्र एकत्र होते तो उन्हें परस्पर वैचारिक आदान-प्रदान का मौका मिलता, जिससे उनकी एकता तथा आंदोलन को बल मिलता।

जयप्रकाश बाबू छात्र-शक्ति का पूरा उपयोग नहीं कर पा रहे हैं। इसी का परिणाम है कि सरकार - विरोधी अथवा सरकार - समर्थक राजनीतिक दल छद्मवेश में आंदोलन में घुसपैठ कररहे हैं। इस कारण आम लोग अब उदासीन हो गये हैं।

गरीबी, बच्चों के अनिश्चित भविष्य, बेरोजगारी और अनाचार से जूझने के लिए जिस आंदोलन की जरूरत है वह १८५७ या १९४२ की क्रांति से कहीं ज्यादा ठोस और बलिदानपूर्ण होना चाहिए। जयप्रकाश बाबू द्वारा निदेशित कतिपय कार्य, जैसे विधानसभा के समक्ष धरना देना, साइकिल-जुलूस निकालना, तिकोनी टोपी पहनना आदि आंदोलन के गंभीर कारणों को हास्यास्पद बनाते हैं।

जयप्रकाश बाबू ने छात्रों को कक्षा-बहिष्कार करने तथा एक वर्ष तक शिक्षा-संस्थानों को बंद रखने के लिए निदेश तो दिये, किंतु इस बीच छात्रों के लिए कोई नियमबद्ध कार्यक्रम स्पष्ट नहीं किया। यह स्वयं जयप्रकाश बाबू की दिमागी उलझनों की ओर इंगित करता है। उन्होंने विश्वविद्यालयों से इतर शिक्षा-केंद्र की स्थापना करने का इरादा जाहिर किया है। जिन साधनों पर वे केंद्रीय विश्वविद्यालय खोलने की योजना बनाते हैं उनका उपयोग ग्रामीण समाज के उत्थान में लगाते तो अच्छा होता। विधानसभा के द्वार को छोड़कर छात्रों को साथ लिये हुए वे बिहार के उन गांवों में जाएं जहां भूख, अशिक्षा, लाचारी और जड़ता है, उन लोगों की सोयी हुई बुद्धि को जगाएं और उन्हें अन्याय के खिलाफ लड़ाई के लिये प्रवृत्त करें।

अपनी कमजोरियों और आलोचनाओं के बावजूद लोगों के हृदय में आंदोलन के प्रति आस्था है।

जयप्रकाश बाबू ने आंदोलन को भ्रष्टाचार हटाने का एकमात्र उपाय बताते हुए कहा है – 'भ्रष्टाचार केवल नैतिकता का मुद्दा नहीं है, यह जन-जन की रोटी को भी प्रभावित करता है। ...मैं सिर्फ यही मांग करता हूं कि प्रशासन में सुधार हो, शिक्षा-पद्धति में आमूल परिवर्तन हो तथा भूमि-सुधार कानूनों को कड़ाई से लागू किया जाए।'

प्रशासन इस गुरिल्ला-युद्ध से अपने को बचाने की कोशिश में है और जयप्रकाश बाबू अपने प्रयोगों में व्यस्त हैं। अब वे आंदोलन के पर्याय बन गये हैं और छात्रों का नेतृत्व बहुत पीछे छूट गया है।

—एम. डी. डी. एम. कालेज, मुजफ्फरपुर

एक जिगर नकली

प्रति वर्ष यकृत (जिगर) की खराबी से मरनेवालों की संख्या हजारों में होती है। इनमें बहुत-से तो कम-उम्र होते हैं। रोग के प्रारंभिक लक्षण निश्चित रूप से समझ में नहीं आते, क्योंकि उनके विविध प्रकार होते हैं। यकृत का काम जीवन के लिए आवश्यक तत्त्वों का निर्माण तो है ही,

खतरनाक तत्त्वों का खात्मा करना भी है। वह रक्त के एक रंगद्रव्य पित्तारुण का निर्माण करता है तथा पित्तरस में उसका समावेश करता है। पित्तरस छोटी-छोटी नलिकाओं द्वारा पित्ताशय में पहुंचता है। वहां से वह एक अन्य नलिका द्वारा आंत में पहुंचकर पाचन-क्रिया में भाग लेता है। पीलिया रोग के लिए उत्तरदायी पित्तारुण को एक प्रकिण्व यकृत के अंदर जल में घुलनशील एक पदार्थ के रूप में, पित्त में उत्सर्जन के पूर्व, बदल देता है। दोषपूर्ण यकृत समुचित मात्रा में प्रकिण्वों की रचना नहीं कर पाता, इसलिए वह एक प्रकार का पीलिया उत्पन्न करता है। पित्त के उत्सर्जन में भी बाधा उत्पन्न हो जाती है। रक्त में पित्तारुण बना रहे तो इससे गुर्दे को हानि हो सकती है।

यकृत जो प्रकिण्व तैयार करता है उनमें वे संवाहक भी हैं जो रक्त में थक्के के निर्माण को नियंत्रित करते हैं। दोषपूर्ण यकृत में रक्तस्राव के समय ये थक्के नहीं होते। विषैले तत्त्वों से मानसिक विकृति उत्पन्न हो जाती है।

इसके बावजूद, यकृत में पुनरुत्थान की अद्भुत शक्ति होती है। यदि पहले इलाज शुरू कर दिया जाए तो गंभीर केसों को भी ठीक किया जा सकता है। लंदन के किंग्स कालेज हास्पिटल के यकृत शोध-केंद्र ने कई गंभीर यकृत-केसों का सफलतापूर्वक उपचार किया है।

इस अस्पताल में कृत्रिम यकृत-व्यवस्था का व्यवहार किया जा रहा है। इसे तब तक प्रयोग किया जाता है जब तक यकृत दोषमुक्त न हो जाए। रोगी के रक्त में प्रोटीन तत्त्व तथा थक्के बनानेवाले तत्त्वों का प्रवेश कराके, ताकि रक्त-स्राव न हो, यकृत के संश्लिष्ट कार्य को बहुत कुछ बढ़ाया जा सकता है। यकृत-रक्तस्राव की प्रबलता का पता करने के लिए साव-धानी से निरीक्षण की जरूरत है। यकृत के उत्सर्जन-संबंधी कार्यों का बदलाव मुश्किल होता है।

एक दूसरा उपाय सूअर के यकृत का

प्रयोग है। इसे कृत्रिम रूप से चालू रखा जाता है ताकि यह रोगी के दोषयुक्त यकृत का कुछ घंटे तक काम कर सके। हालांकि अस्थायी सुधार हो सकता है, लेकिन स्थिति फिर बिगड़ सकती है; अतः यह अंतिम प्रयोग प्रायः नहीं होता।

यकृत बदला भी जाता है। जिन रोगियों के यकृत गंभीर रूप से दोषयुक्त होते हैं, उनके लिए अंतिम चारा यही है कि उनका यकृत बदल दिया जाए, लेकिन यकृत-दानी बहुत कम मिलते हैं।

उपर्युक्त शोध-केंद्र से संबंधित कैंब्रिज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर आर. वाई. काल्ने ने पिछले पांच वर्ष में ३६ यकृत-बदलाव के केस निबटाये हैं। इनमें से तीन व्यक्ति अभी जीवित हैं।

डी. एन. ए. की जुगलबंदी

प्रोफेसर जेम्स वाटसन (हार्वर्ड विश्वविद्यालय) तथा प्रोफेसर फ्रांसिस क्रिक (कैवेंडिश लेबोरेटरी, कैंब्रिज, इंग्लैंड) ने २१ वर्ष पूर्व एक शोध-प्रबंध में सिद्ध किया था कि डी. एन. ए. के अणु जोड़ों में गुंथे रहते हैं। उनके बीच निर्माण करनेवाली चार इकाइयों के पूरक रसायन द्वारा संयुजन रखा जाता है। इन इकाइयों को रसायनशास्त्र में प्यूरिन एवं पिरीमिडिन आधार कहा जाता है। सहज सिद्धांत यह है कि डी. एन. ए. के अणु इस आधार के मध्य आकर्षण के कारण परस्पर गुंथे रहते हैं।

प्रोफेसर वाटसन ने प्रोफेसर क्रिक के अपने उपर्युक्त शोध के विषय में एक पुस्तक (The Double Helix) प्रकाशित की है। आरंभ में इनके निष्कर्षों से बहुत कम वैज्ञानिक सहमत थे। इनके अनुसार डी. एन. ए. अणुओं को यह विशिष्ट जुगलबंदी शारीरिक संरचना-सामग्री के लिए प्रतिलिपि-प्रक्रिया की संभावना व्यक्त करती है। वर्तमान आणविक जैविकी आज प्रो. वाटसन एवं प्रोफेसर क्रिक की शोध पर ही आधारित है। इसका महत्त्व डारविन के विकासवाद से कम नहीं है।

यह सिद्ध किया जा चुका है कि कोषों के विभाजन के समय डी. एन. ए. अणु, जिनसे अनेक गुणसूत्र बनते हैं, सीधा हो जाता है और प्रत्येक जोड़ीदार दूसरे अणु के संयोग के लिए आदर्श बन जाता है।

जेम्स वाटसन (बायें) तथा फ्रांसिस क्रिक। पृष्ठभूमि में डी. एन. ए. की आणविक संरचना का माडल।

महिला जिसने वाटरगेट को स्टीलगेट बना दिया

● सुरेश राम

इतिहास में यह पहली ही मिसाल है जब किसी देश में एक अखबार द्वारा एक कांड का पर्दाफाश किये जाने पर वहां के राष्ट्रपति को इस्तीफा देना पड़ा। गत ५ अगस्त तक अमरीका के राष्ट्रपति निक्सन यह कहते रहे कि वाटर-गेट कांड से उनका कोई वास्ता नहीं है, लेकिन उस दिन उन्होंने स्वीकार किया कि वे अब तक मामले को छिपाये रहे। फिर भी अपने पद से हटने को तैयार नहीं हुए। लेकिन दो दिन बाद उन्होंने एलान किया कि अलग हो रहा हूं और ९ अगस्त को उपराष्ट्रपति फोर्ड ने राष्ट्र-पति-पद की शपथ ग्रहण की।

निक्सन (रिपब्लिकन) की विरोधी डेमोक्रेटिक पार्टी का प्रधान कार्यालय वाटरगेट नामक एक भवन में था। वहां १७ जून, १९७२ को पांच सेंधमार रंगेहाथ पकड़े गये। इसकी खबर 'वाशिंगटन पोस्ट' ने छापी। इस खबर के साथ-साथ ही 'पोस्ट' के दो तरुण रिपोर्टरों की एक रिपोर्ट भी छपी। राष्ट्रपति के प्रवक्ता ने इसे 'तीसरे दरजे की निकम्मी डकैती' बताया और कहा कि सरकार का उससे कोई संबंध नहीं है। 'वाशिंगटन पोस्ट' ने एक संपादकीय में इसका [illegible] किया और निक्सन-प्रशासन की [illegible] गतिविधियों के खिलाफ 'वाशिंगटन पोस्ट' ने एक आंदोलन-सा छेड़ दिया। [illegible] प्रमुख सूत्रधार थीं 'पोस्ट' के प्रबंधक-मंडल की पिछले ग्यारह साल से अध्यक्षा और स्वामिनी श्रीमती कैथरीन ग्राहम।

कैथरीन का जन्म १६ जून, १९१७ को हुआ। उनके पिता यूजेन मेअर एक प्रति-ष्ठित साहूकार थे, जिन्होंने सन बीस और अठ्ठाईस के बीच खूब संपत्ति कमायी। महामंदी आने के पूर्व वे साहूकारी से अलग हो वाशिंगटन में बस गये। बाद में वहां के दैनिक अखबार 'वाशिंगटन पोस्ट' को उन्होंने आठ लाख डालर (लगभग साठ लाख रुपये) में खरीद लिया।

कैथरीन की प्राथमिक शिक्षा मैडीरा स्कूल में हुई। फिर वे वासर कालेज चली गयीं और अंत में शिकागो यूनीवर्सिटी से ग्रेजुएट हुईं।

पत्रकारिता से शौक होने की वजह से वे 'सैन फ्रांसिस्को न्यूज' नामक दैनिक की रिपोर्टर हो गयीं। यहां उन्होंने डेढ़ वर्ष तक काम किया। उसके बाद वे 'वाशिं-गटन पोस्ट' के संपादक-मंडल में आ गयीं।

उसी समय, १९४० में, उनकी शादी फिलिप ग्राहम नामक एक प्रतिभाशाली युवक से हुई। १९४८ में मेअर ने 'वाशिंगटन पोस्ट' दामाद के हाथों में सौंप दिया। फिलिप ने बड़े उत्साह से इस दैनिक का काम शक्तिशाली पत्र-संचालकों में होने लगी। श्रीमती कैथरीन बड़ी तत्परता से पति के काम में हाथ बंटातीं।

फिलिप की आत्महत्या

फिलिप बहुत ही साहसी, विनोदप्रिय

'वाशिंगटनपोस्ट' के संपादक बेंजामिन ब्रैडली तथा 'पोस्ट' की अध्यक्षा और स्वामिनी कैथरीन ग्राहम : विस्फोट का आनंद लेते हुए

संभाला और छह साल बाद वाशिंगटन के एक अन्य प्रतिद्वंद्वी दैनिक 'टाइम्स हेरॉल्ड' को खरीदकर 'पोस्ट' में ही मिला दिया। इसके बाद उन्होंने १९६१ में प्रख्यात साप्ताहिक 'न्यूजवीक' को भी ले लिया और उनकी गिनती अमरीका के अत्यंत और परिश्रमी थे। उन्होंने ही समाज-सुधार के बारे में राष्ट्रपति जानसन के सामने कुछ सुझाव रखे, जो आगे चलकर 'महान समाज' के नाम से विश्व भर में ख्यात हुए। लेकिन फिलिप को कभी-कभी घोर निराशा आ घेरती। धीरे-

धीरे उनके स्वभाव में असंतुलन व चंचलता आने लगी। कैथरीन ने बहुत धीरज से इस संकट का सामना किया। एक दिन फिलिप ने अचानक आत्महत्या कर ली। इस वज्रपात ने कैथरीन को आहत कर दिया।

'पोस्ट' का दायित्व संभाला

श्रीमती कैथरीन को 'पोस्ट' के संचालन के संबंध में उच्च-स्तरीय निर्णय लेने पड़े। उनकी पकड़ बढ़ती गयी और साख ऊंची उठती गयी। इस प्रकार १९६३ से श्रीमती कैथरीन ने 'पोस्ट' का सारा दायित्व अपने ऊपर ले लिया।

१९६५ में उन्होंने अपनी जिंदगी का एक बहुत हिम्मतभरा फैसला किया, प्रसिद्ध पत्रकार बेन ब्रेडली को प्रबंध-संपादक नियुक्त किया। 'पोस्ट'-जैसे एक व्यवस्थित और सौम्य दैनिक के लिए यह बड़ा पराक्रमी निर्णय था, क्योंकि श्री बेन टक्कर लेने और मोर्चाबंदी के लिए मशहूर हैं। बेन और श्रीमती ग्राहम के सहयोग से 'पोस्ट' में प्रखर आक्रमण के साथ-साथ उत्तरदायित्व का अद्भुत संगम हो गया। कुछ ही अरसे में श्रीमती कैथरीन में एक नया आत्म-विश्वास आ गया और वे निर्भीकता एवं शालीनता के साथ 'पोस्ट' का संचालन करने लगीं।

१९६८ में अपने चुनाव से पहले भू. पू. राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन को एक दिन श्रीमती कैथरीन ने दोपहर के भोजन पर बुलाया। अपनी सूझ-बूझ, योजना और पद्धति से उन्होंने संपादकों को बहुत प्रभावित किया, लेकिन कुछ समय [illegible] ही व्हाइटहाउसवाले 'पोस्ट' को [illegible] दुश्मन मानने लगे और जब उप-राष्ट्र-पति एग्न्यू का आम विरोध हुआ तब [illegible] अधिकारीगण हाथ धोकर 'पोस्ट' के पीछे पड़ गये। श्रीमती कैथरीन उन अखबार-वालों में नहीं थीं जो व्हाइटहाउस की कृपा-दृष्टि के लिए तरसते हैं। उन्होंने कोई चिंता नहीं की।

वाटरगेट और 'वाशिंगटन पोस्ट'

वाटरगेट कांड की खबर जब 'वाशिंगटन पोस्ट' में छपी, तब अमरीका में सनसनी मच गयी। उसके दो तरुण पत्रकारों बाब वुडवर्ड और कार्ल बर्नस्टाइन ने अपनी लंबी-लंबी रिपोर्टों द्वारा सारा रहस्य खोलकर रख दिया।

यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि अपनी इस खोज में 'पोस्ट' अकेला था। पहले तो 'न्यूयार्क टाइम्स' तक ने इस कांड को महत्त्व नहीं दिया।

राष्ट्रपति निक्सन के दोबारा जीत-कर आने पर व्हाइटहाउस के अधिका-रियों ने 'पोस्ट' की उपेक्षा शुरू कर दी। जनवरी, १९७३ में उन्होंने 'पोस्ट' से बदला लेने की ठानी। फ्लोरिडा राज्य में 'पोस्ट' के दो टी. वी. केंद्र चलते थे। वहां की स्थानीय समाचार-एजेंसियों ने, जिनका व्हाइटहाउस से गुप्त रूप से संबंध था, उन केंद्रों की प्रामाणिकता को चुनौती दी ताकि 'पोस्ट' को सबक मिले। उनका मामला अभी तक फेडरल कम्यु-

निकेशन कमीशन में चल रहा है।

एक अभियोगी की स्वीकारोक्ति

जनवरी में ही वाटरगेट के सात अपराधियों पर न्यायाधीश सिरिका की अदालत में मुकदमा चलाया गया। जब यह मुकदमा चल रहा था तो श्रीमती कैथरीन हांगकांग में 'न्यूजवीक' के अंतर्राष्ट्रीय संस्करण की तैयारी में लगी हुई थीं। २३ मार्च को एक अभियोगी जेम्स मैककार्ड ने न्यायाधीश को लिखित सूचना

लंदन से प्रकाशित दैनिक 'टाइम्स' ने एक लंबा संपादकीय छापकर 'वाशिंगटन पोस्ट' पर दोष लगाया कि राष्ट्रपति निक्सन के विरुद्ध वाटरगेट कांड का इतना प्रचार कर वह 'प्रचार द्वारा मुकदमा' ही करना चाहता है और 'एक न्यायपूर्ण मुकदमा चलना असंभव बनाये दे रहा है।' व्हाइटहाउस ने इस संपादकीय के करोड़ों प्रिंट छपवाकर जनता में बंटवाये।
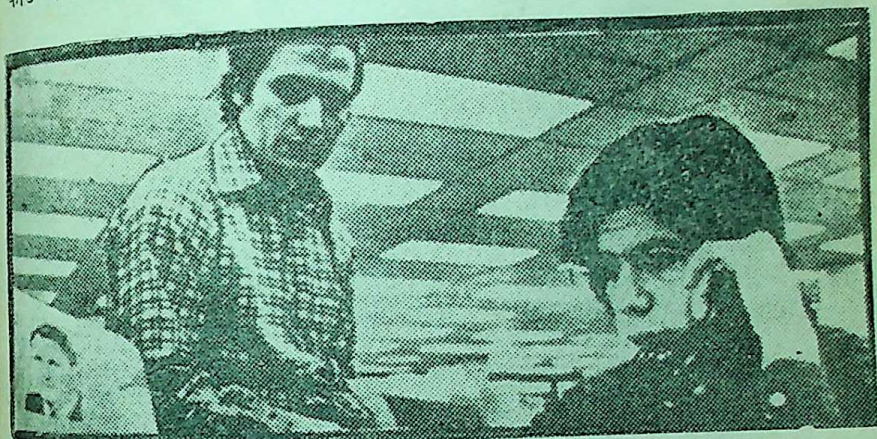
बर्नस्टीन (बायें) तथा वुडवर्ड। जिन्होंने 'वाटरगेट' का पर्दाफाश किया

दी कि उन पर मौन रहने के लिए राजनीतिक दबाव डाला जा रहा है।

'पोस्ट' की ओर से उन्हें टेलीफोन कर सारी खबर दी गयी। सारा समाचार सुनकर श्रीमती कैथरीन की जान में जान आयी और उन्हें पक्का विश्वास हो गया कि नौ महीने से जारी 'पोस्ट' का आंदोलन अवश्य सफल होगा।

इस घटना के कुछ अरसे बाद श्रीमती कैथरीन किसी कार्यक्रम में भाग लेने इंगलैंड पहुंचीं। वहां ब्रिटिश पत्रकारों ने उनसे पूछा कि 'आप क्यों निक्सन साहब के पीछे पड़ी हैं?' लंदन के 'टाइम्स' की टीका का भी हवाला दिया गया। इसके जवाब में लंदन के गिल्डहाल में श्रीमती कैथरीन ने कहा, 'अगर मेरा अखबार 'वाशि-

मेक्सिको में प्राप्त
लक्ष्मी-प्रतिमा →

म्बई के प्रसिद्ध महालक्ष्मी
ंदिर में लक्ष्मी की मूर्ति

ा-एम० एस० अग्रवाल

सत्यंषी--बीकानेर, ज्ञानबहादुर श्रेष्ठ--काठमांडो, बसंतकुमार चकोर -- मुजफ्फरपुर, शिवेश्वर तिवारी--सुपौल, भगवतस्वरूप शर्मा--ऋषिकेश, विनोदकुमार राजपूत--वाराणसी, अंचितकुमार माहेश्वरी--मेरठ, वली मोहम्मद कुरैशी--बाड़मेर : आपको लेखन-प्रेरणा कब, किस परिस्थितिवश और कहां मिली ? आपने किसकी प्रेरणा से लिखना शुरू किया ? क्या आपने लेखन के क्षेत्र में किसी को अपना गुरु माना ? इस पथ में आनेवाली सहयोगी एवं विरोधी परिस्थितियों का उल्लेख करें। आप आधुनिक लेखकों में किससे अधिक प्रभावित हैं ? लेखन को

क्यों और क्यों नहीं ?

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, 'रेणु', महादेवी वर्मा, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', इलाचंद्र जोशी, राजेन्द्र यादव, लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी, कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा, भवानीप्रसाद मिश्र एवं शिवप्रसाद सिंह पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं मन्नू भंडारी

लेखक कोई मसीहा नहीं है

— मन्नू भंडारी

आप दैवी प्रेरणा, जन्मजात कला मानती हैं या प्रयास से साध्य ?

आपका 'कब, कहां और कैसे' वाला प्रश्न पढ़कर तो मुझे लगा मानो एक पाठक नहीं वरन वकील या पुलिसमैन हत्या-संबंधी जिज्ञासा कर रहा हो। लिखना क्या सचमुच कोई ऐसी दुर्घटना है जो इन सवालों के जवाब खोल सके। प्रेरणा कोई ऐसी ठोस वस्तु तो नहीं जिसके पाने की तिथि, स्थान आदि का ब्योरा प्रस्तुत किया जा सके। जहां तक मैं समझती हूं, वह क्रमशः अपनी भीतरी और बाहरी स्थितियों के प्रति तीव्र ढंग से रिएक्ट करना है। बचपन से ही हर छोटी-बड़ी बात की तीखी प्रतिक्रिया मेरे भीतर होती है, जिसके लिए उस समय कहा जाता था कि 'मन्नू बहुत गुस्सैल है, बात-बात पर झनझना उठती है।' घर के साहित्यिक-राजनीतिक वातावरण ने इन्हीं प्रतिक्रियाओं को एक सही और सर्जनात्मक दिशा दे दी।

लेखन क्या, जिंदगी में ही कभी किसी को गुरु नहीं माना। यहां तो 'आपहि गुरु

और आपहि चेला' वाली उक्ति पर ही जीवन टिका है।

बाहरी परिस्थितियां न सहयोगी रहीं न विरोधी, अपना मन और मूड ही सहयोगी - विरोधी स्थितियों का निर्माण करते रहे।

लेखकों में किसी व्यक्ति विशेष से न मैं पहले कभी प्रभावित हुई न आज ही हूं, पर अच्छी रचनाओं ने मुझे हमेशा प्रभावित किया है, फिर वे चाहे किसी प्रतिष्ठित लेखक की हों या साधारण की, पुराने लेखक की हों या आधुनिक की। क्या करूं 'हीरो-वरशिप' वाली वृत्ति मैं अपने भीतर पनपा ही नहीं सकी।

बड़ा टेढ़ा प्रश्न है आपका! लेखन-कला का विश्लेषण करते समय 'दैवी-प्रेरणा, जन्मजात-कला या प्रयत्न-साध्य' में से न किसी एक पर अंगुली रखी जा सकती है और न ही किसी की उपेक्षा की जा सकती है। वास्तव में लेखन-कला इतनी उलझी हुई और ऐब्सट्रैक्ट है कि उसके मूल-स्रोत को यों परिभाषित कर देना संभव नहीं।

नंदिनी सहस्रबुद्धे, नागपुर: आपकी पहली कहानी कौन-सी है? क्या आपने उसका विषय अपने आसपास के परिवेश से ही चुना था? क्या प्रथम कहानी के प्रकाशन में आपने कोई कठिनाई महसूस की थी?

पहली कहानी 'मौत' शीर्षक से '... समाज' पत्रिका में छपी थी, पर उसके बाद दो-तीन साल तक न कुछ लिखा, न छपा। इसलिए सही अर्थों में पहली कहानी 'मैं हार गयी' है, जिसे श्री भैरवप्रसाद गुप्त ने 'कहानी' में छापा था। दोनों कहानियों का कथ्य आसपास के जीवन से ही चुना गया था। लिखते समय चाहे ... से जितना भी जूझी होऊं, पर छपने में तो कोई कठिनाई नहीं हुई थी।

सुधांशु शेखर त्रिवेदी, पटना: कोरी कल्पना और सुनी-सुनायी बातों के आधार पर प्रौढ़ लेखन की संभावना कहां तक है? क्या आपने ऐसी रचना कभी की है?

बिलकुल नहीं। जी नहीं, मुझसे ऐसा दुस्साहस करते कभी नहीं बना!

अरविंदकुमार, भागलपुर: (१) "कला-कार के साथ जीवन बिताने की कल्पना

मां-बेटी (टिंकू)—प्यार भरे क्षण

मधुर हो सकती है, लेकिन जीवन नहीं।" 'एक इंच मुस्कान' की इस पंक्ति के वातायन से यदि मैं आपके व्यक्तिगत जीवन को देखूं तो मेरे इस दृष्टिकोण के संबंध में आपके क्या विचार होंगे ?

(१) मेरे विचार ? वातायन से किसी के व्यक्तिगत जीवन में झांकना सभ्य समाज की नजरों में अशिष्टता है और दुर्भाग्यवश मैं सभ्य समाज की ही एक इकाई हूं।

(२) 'एक इंच मुस्कान' की पात्रा अमला अंत तक रहस्यमयी बनी रहती है। क्या आप बता सकती हैं कि अपने वैवाहिक जीवन में उसके खुश न रहने के क्या कारण थे ? एक हिंदू स्त्री के लिए यह कहना—'अपने पति से अलग रहकर मैं ज्यादा खुश हूं' कहां तक उचित है ?

(२) 'एक इंच मुस्कान' कोई जासूसी उपन्यास नहीं है, जहां शुरू से आखिर तक हर स्थिति और पात्र को रहस्यमय बनाकर रखा जाए और अंत में उन सबका उद्घाटन हो। जिंदगी में बहुत-से लोग आते हैं, जो कभी खुली पुस्तक-जैसे लगते हैं तो कभी पुरानी ऐतिहासिक इमारतों-जैसे रहस्यमय। अमला जैसी है, वैसी है। उसके व्यक्तित्व के जिस पक्ष ने मुझे प्रभावित किया उसे आंकना ही मेरा लक्ष्य था। उसकी संपूर्ण जीवनी लिखने का न मेरा आग्रह था न ही उसकी आवश्यकता थी।

हिंदू आदर्श और आज के भारतीय जीवन को दोहरी भाषा में बोलने-समझने का ढोंग आप कितने दिनों तक और चलाये रखना चाहते हैं ? प्रश्न के इस अंश पर तो पूछने का मन होता है—आप बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक में ही जी रहे हैं न ? मुझे तो संदेह हो चला है !

पूरन वाल्मीकि, छिंदवाड़ा : क्या आज

ऊपर : दो दुश्मन ? ... नहीं दोस्त भी !
नीचे : अध्ययन में मग्न

का मनुष्य ईश्वर और धर्म के रूढ़िबद्ध रूप से किनारा करके अपनी सार्थकता, मानव-मूल्यों पर अपनी दृढ़ आस्था तथा प्रकृति से स्व-आदम-संपर्क-सूत्रों की विशेषता को जिंदा रख सकता है?

नीत्शे ने अपनी सहज, दार्शनिक भाषा में तो यह कहा था कि 'ईश्वर मर गया है' और आपका प्रश्न सुनकर मुझे लगा कि उसे जिंदा रहने का कोई हक नहीं है। आप ईश्वर को नहीं, सच्चे भारतीय की तरह ईश्वर की रूढ़ि को प्यार करते हैं। ईश्वर तो एक आस्था का नाम है बंधु, और वह आस्था अपने आसपास भी हो सकती है और अपने भीतर भी। ईश्वर और धर्म के रूढ़िबद्ध रूप का पालन करके तो हम तिलक लगाकर जिंदगी भर माला ही जपते रह जाएंगे। जीवन के वृहत्तर मूल्यों के लिए और अपनी सार्थकता के लिए विवेक, मानवीय संवेदना और सह-अनुभूति की आवश्यकता होती है, ईश्वर की नहीं।

विंदेश्वरीप्रसाद, अंडाल: क्या आपके विचार में कहानी लिखने के लिए व्यक्ति, अनुभव या स्थिति इनमें से किसी एक का वास्तविक होना जरूरी नहीं है?

बिलकुल जरूरी है। वास्तविकता का दामन छोड़कर खयाली पुलाव ही पकाया जा सकता है, अच्छी कहानी नहीं लिखी जा सकती।

पवनकुमार, तिनसुकिया: आप कितनी भाषाओं की जानकार हैं? क्या आपकी कोई रचना दूसरी भाषा में अनूदित हुई है?

अपनी भाषा को छोड़कर मुझे और कोई प्रांतीय भाषा नहीं आती। हां, रचनाएं अवश्य सभी भारतीय भाषाओं और कुछ विदेशी भाषाओं में अनूदित हुई हैं।

वागीश्वरी पांडे—पटना, राकेशकुमार वर्मा—झाझा, अशोककुमार साहू—दुर्ग, कुसुमलता—दतिया, लेखराम मृदुल—बरघाट: 'आपका बंटी' में एक बच्चे के मनोभावों का बड़ा ही सुंदर चित्रण हुआ है। आपको यह लिखने की प्रेरणा कहां से मिली? इसका लेखन-कार्य कब प्रारंभ हुआ तथा पात्र बंटी एक कल्पना मात्र है या वास्तविकता? 'आपका बंटी' में आपने जि[स] लाइलाज समस्या को उठाया है उसका हलका-सा भी समाधान अपनी ओर से प्रस्तुत न करके पाठक को बंटी की ही तरह एक गहरी दुश्चिता और मानसिक बेचैनी में चौराहे पर ही छोड़ दिया है। आज सफल और प्रभावपूर्ण उपन्यास भी वे ही होते हैं जो पाठक की चेतना को झकझोरकर उसे दुविधा की स्थिति में छोड़ दें, ऐसा क्यों?

भारतीय समाज में निरंतर बदलती हुई परिस्थितियों के बीच विवाह-संबंधों को भी एक संक्रांति से गुजरना पड़ रहा है। बड़े शहरों में यह समस्या बार-बार और अधिक तीखे रूप से सामने आती है क्योंकि नारी और पुरुष के व्यक्तित्व यहां दो स्वतंत्र इकाइयों के रूप में उभरकर

आते हैं। पिछले कुछ वर्षों की अधिकांश कहानियां इन्हीं संबंधों के बदलाव को रेखांकित करती हैं। मेरे परिचय में भी ऐसे कई परिवार थे। संबंधों की इस खींचतान में मेरा ध्यान सबसे अधिक आकर्षित हुआ अचानक असुरक्षित महसूस करनेवाले इन निरीह बच्चों की ओर। बंटी का जन्म ऐसे ही दो-तीन परिवारों के बीच हुआ। मां-बाप के संबंधों में बहुत कुछ विविधता हो सकती है, लेकिन हर जगह बंटी को एक ही यातना से गुजरना है—असुरक्षा और कहीं भी न जुड़ पाने की नियति। इस यातना ने हर बंटी को अलग-अलग मनःस्थितियां और मनोविज्ञान दिये हैं—कहीं वह बहुत आक्रामक और उद्दंड है तो कहीं बहुत निरीह और बुझा हुआ। मेरा बंटी इन्हीं तीन-चार परिवारों में पलनेवाले बंटियों का मिलाजुला रूप है।

समाधानवादी उपन्यास प्रेमचंदजी ने अपने ही समय में समाप्त कर दिये थे। आज का लेखक तो केवल स्थिति की विषमता और समस्या को ही रेखांकित कर सकता है। और समाधान दे भी क्यों? क्या हमारी आज की सारी अव्यवस्था और दयनीयता का कारण हवाई समाधान और झूठे आदर्शवाद में रहना ही नहीं है? वास्तविकता जिस रूप में हमारे सामने आती है, हम अपनी पूरी संवेदना के साथ उसी रूप में पाठक तक पहुंचा देना चाहते हैं, क्योंकि अकसर समस्याओं और यथार्थ की कटुताओं के बीच रहनेवाला पाठक उनके प्रति 'इम्यून' (संवेदना-रहित) हो जाता है। उस संवेदना को जगाना और अपने आसपास के प्रति सजग करना ही आज का लेखकीय दायित्व है। इस प्रकार समस्या जब सबकी हो जाती है तो उसका समाधान भी सामूहिक रूप से ही खोजा जा सकता है। लेखक मसीहा बनकर

जिंदगी में कभी किसी को गुरु नहीं माना
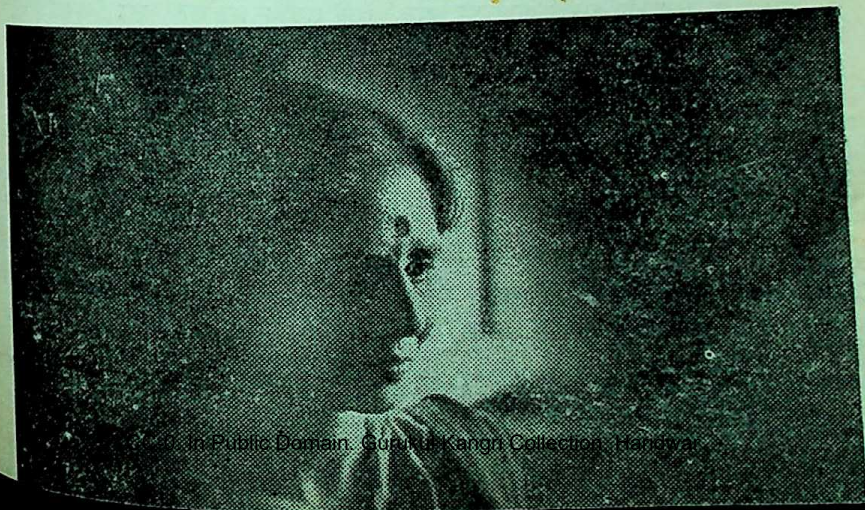
समस्याओं के समाधान देता रहे, यह स्थिति आज संभव नहीं है। कभी थी भी, इसमें भी मुझे संदेह है।

विनोदकुमार पांडेय : आप रचना स्वांतः-सुखाय करती हैं या दूसरों को सुख देने के लिए ?

लिखती अपने सुख के लिए हूं, छपवाती दूसरों के सुख के लिए।

दिलीप सुदीप---रांची, नीरा अवस्थी---लिलुआ, आनंदकुमार सिंहानिया---दतिया : 'यही सच है' कहानी आपके अपने व्यक्तिगत जीवन पर लिखी गयी है या कल्पना का सजीव रूप है? इस कहानी के माध्यम से आप कहना क्या चाहती हैं? 'यही सच है' पर जो फिल्म बन रही है उससे आपको क्या आशाएं हैं ?

मेरे अपने व्यक्तिगत-जीवन पर तो नहीं लिखी गयी है, पर इतना जरूर कहूंगी कि दूसरों का अनुभव भी रचना के स्तर तक आते-आते कहीं लेखक का अपना अनुभव हो जाता है। बात असल में यह है कि लेखकीय अनुभूति और सामाजिक अनुभूति का मिलन-विंदु कहां होता है, यह रचना-प्रक्रिया का ऐसा टेढ़ा मसला है कि इसका विश्लेषण संभव नहीं। पर

इतना निश्चित है कि दूसरों की अनुभूतियां संवेदना की आंच में एक-एककर जब इतनी अपनी हो जाती हैं कि 'स्व' और 'पर' का भेद ही मिट जाता है, सृजन तभी संभव हो पाता है; पर जिस अर्थ में आप पूछ रही हैं उस अर्थ में यह मेरे व्यक्तिगत जीवन पर आधारित नहीं है।

'यही सच है' के माध्यम से जो कहना चाहती थी उसी के लिए तो मैंने कहानी लिखी थी। अगर आप ऐसा मानते हैं कि कहानी अपना कथ्य स्पष्ट नहीं कर सकी है और इसके लिए अलग से एक टिप्पणी की अपेक्षा है तो मान लेती हूं कि यह कहानी की असफलता है।

लेखन और फिल्म दो भिन्न माध्यम हैं, इसलिए यह निश्चित है कि एक कथा-कृति जब फिल्मायी जाएगी तो उसमें रद्दोबदल और हेरफेर तो होगा ही। इस फिल्म से मुझे इतनी ही अपेक्षा है कि रद्दोबदल और सारे परिवर्तनों के बावजूद कहानी की मूल संवेदना ज्यों-की-त्यों सुरक्षित रहे। दूसरी अपेक्षा है कि मुझे मेरा पैसा मिल जाए।

अजय खत्री--हजारी बाग, प्रेमप्रकाश शुक्ल, शिवनारायण शिवहरे--सोहागपुर: मानव-मन बड़ा अद्भुत है। जिसे वह प्यार करता है उसी से कभी-कभी ईर्ष्या भी करने लगता है, विशेषकर तब जबकि वह प्रसिद्धि के क्षेत्र में उससे आगे निकल जाए! 'एक इंच मुस्कान' छपने के बाद क्या आप लोगों के जीवन में इस प्रकार का कुछ हुआ? लेखन के क्षेत्र में आप दोनों में प्रतिस्पर्धा की भावना नहीं होती है क्या? आप दोनों के साहित्यिक होने से आपके पारिवारिक जीवन में कठिनाई आयी है?

ईर्ष्या या प्रतिस्पर्द्धा की भावना तो कभी नहीं आयी! बात यह है कि मुझे न लेखक होने का मुगालता है न आगे निकल जाने का भ्रम! इस क्षेत्र में मैं कतई महत्त्वाकांक्षी नहीं हूं, न ही मुझे अपनी औकात और राजेन्द्र की सामर्थ्य को लेकर कभी कोई गलतफहमी हुई! इसलिए इस तरह का संकट हम दोनों के बीच कभी आया ही नहीं?

दोनों के साहित्यिक होने से पारिवारिक जीवन में यदि कुछ कठिनाइयां आयी हैं तो निश्चित रूप से कुछ सुविधाएं भी मिली हैं।

पुष्पा सिंह--मुरलीगंज, विजय अग्रवाल--दिल्ली, विनोदकुमार पांडेय--अंडाल: शादी से पूर्व यादवजी आपसे परिचित थे? अगर हां तो किस रूप में? आपके जीवन में साहित्य की रोशनी शादी से पूर्व आयी या पश्चात? क्या साहित्यिक अभिरुचि से ही प्रभावित हो आपने यादवजी से संबंध स्थापित किया?

जी हां थे, मित्र के रूप में। शादी से पहले ही मुझे थोड़ा-बहुत लिखने-पढ़ने का शौक था और यही रुचि आरंभ में हमारी मित्रता का आधार भी बनी।

हरिकिशन दास अग्रवाल

द्वारा विरचित

संक्षिप्त रूप में आधुनिक ढंग से आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करने वाली जीवनोपयोगी पुस्तकें

१. संसार का सार (हिन्दी में) ३.००
२. ज्ञान साधना ३.००
३. विज्ञान से ज्ञान १.००
४. वेदान्त नवनीत ३.००
५. वेदान्त का सरल बोध २.००
६. आध्यात्मिक पिक्टोरियल (हिन्दी व अंग्रेजी) ४.००
७. आध्यात्मिक चित्रावली (हिन्दी-इंग्लिश) पाकेट बुक ६.००
८. मुमुक्षु (शिक्षाप्रद-उपन्यास) ५.००
९. मन की शांति (पद्य) ५.००
१०. हमारी परम्परा २.००
११. आराम सुख शान्ति और आनन्द १.००
12. EASE PEACE HAPPINESS AND BLISS (English) 00-25
१३. अपनी ओर इशारा १.००
१४. व्यवहारिक जीवन और परमात्मा १.००
१५. श्मशान यात्रा १.००
१६. मेरे १०८ गुरु
१७. सजगता ३.००
१८. अविरोध-निरोध और स्वबोध १.००
२.००
१९. वेदान्त का वैज्ञानिक मनन २.००
२०. चिन्ता और निश्चिंतता २.००
२१. मन के पार १.००
२२. घर-घर की समस्या २.००
२३. पीस आफ माइन्ड ५.००
२४. क्वायटर मोमेण्ट्स २.००
२५. मनन योग्य बातें १.००
२६. जाग्रत-जाग्रत ०.५०
२७. जाग रे जाग ४.००
२८. उनके सान्निध्य में २.००
२९. आधुनिक वेदान्त २.००
३०. अध्यात्म नवनीत २.००
३१. आंखों देखी २.००
३२. बात बात में बात (आध्यात्मिक उपन्यास) ३.००
३३. साधना शिविर ३.००
३४. ज्ञान प्रेम १.००

ग्राहक आर्डर देने से पहले अपने शहर के पुस्तक विक्रेताओं से पता कर ले
ग्राहक एवं एजेन्ट्स, पत्र व्यवहार करें।

तुलसी-मानस-प्रकाशन

गुप्ता मिल्स इस्टेट, र रोड, बम्बई-४०००१० फोन : ३९१८३१

पद्मकांत शर्मा 'प्रभात'—बिसवां, पुष्पा भारती, ओमप्रकाश पांडे—पटना : क्या यह सच है कि आपके और राजेन्द्रजी के संबंधों में दिनोंदिन दरार बढ़ती जा रही है? क्या आप अपने पारिवारिक जीवन से संतुष्ट हैं? आपके कितनी संतान हैं?

आपके और राजेन्द्रजी के बीच साहित्य-रचना करते झगड़ा भी होता है?

प्रभातजी, देख रही हूं कि दूसरों के निहायत निजी जीवन में आपकी गहरी दिलचस्पी है। चाहती तो इस प्रश्न को छोड़ भी सकती थी, पर जवाब दूंगी। पिछले पंद्रह सालों से स्थिति यह है कि एक दिन दरार पड़ती है और दूसरे ही दिन भर जाती है, इसलिए बढ़ नहीं पाती।

अब उलटकर एक सवाल आपसे पूछ लूं? मेरे इस नकारात्मक उत्तर से आपके मन में तो कोई दरार नहीं पड़ी?

पारिवारिक जीवन से आज तक कोई संतुष्ट हुआ है भला? यह असंतोष ही तो इस जीवन का रस है। एक कन्या! वैसे निवेदन कर दूं कि इस संतोष और संतान का आपस में कोई संबंध नहीं होता।

साहित्य-रचना करते समय तो झगड़ा करना संभव ही नहीं है। हां, उस पर आलोचना-प्रत्यालोचना करते अवश्य हो जाया करता है; पर हमारी भाषा में उसे झगड़ा नहीं, मतभेद कहते हैं।

—२९/७१ जयशंकर मार्ग, शक्तिनगर, दिल्ली-११०००७

नीति की गति

एक राजकुमार बड़ा अत्याचारी था। राजा ने उस दुर्बुद्धि को सुधारने की बड़ी कोशिश की, लेकिन वह नहीं सुधरा। बुद्ध उसे सुमति देने के लिए स्वयं उसके पास गये। वे उसे नीम के एक पौधे के पास ले गये और बोले, "राजकुमार, इस पौधे का एक पत्ता चखकर तो बताओ कि कैसा है?"

राजकुमार ने पत्ता तोड़कर चखा। उसका मुंह कड़वाहट से भर उठा। उसे तुरंत थूककर उसने नीम का पौधा ही जड़ से उखाड़ फेंका।

बुद्ध ने पूछा, "राजकुमार, यह तुमने क्या किया?"

राजकुमार ने उत्तर दिया, "यह पौधा अभी से ऐसा कड़वा है, बढ़ने पर तो पूरा विष-वृक्ष ही बन जाएगा। ऐसे विषैले पेड़ को जड़ से उखाड़ फेंकना ही उचित है।"

अब बुद्ध ने गंभीर वाणी में कहा, "राजकुमार! तुम्हारे कटु व्यवहार से पीड़ित जनता भी यदि तुम्हारे प्रति ऐसी ही नीति से काम ले तो तुम्हारी क्या गति होगी? यदि तुम फलना-फूलना चाहते हो तो उदार, दयावान और लोकप्रिय बनो।"

उसी दिन से राजकुमार ने बुराई की राह छोड़ भलाई का मार्ग अपना लिया।

—श्रीकृष्ण

ह्वेनसांग भारत यात्रा से पूर्व

● श्रीधर पाठक

पृथ्वी पर ऐसे कम ही भाग्यवानों ने जन्म लिया होगा जिन पर सरस्वती और लक्ष्मी की समान कृपा हो। ह्वेनसांग इन में से एक था। चीन के सांग-तांग प्रांत के गवर्नर 'किन' के प्रपौत्र ह्वेनसांग का जन्म ६०४ ई. में चीन में हुआ था। उसके पितामह ने चीन की प्रशासैनिक सेवाओं में नीति-निर्धारक पदों पर कार्य किया था। त्सेई राजवंश-काल में वे पीकिंग के शाही महाविद्यालय के मुख्याचार्य रहे थे। ह्वेनसांग के पिता 'हुई', जो बड़े हृष्ट-पुष्ट थे, अपने शाही रहन-सहन तथा नित नये फैशन के लिए विख्यात थे। उनके वृषभ-स्कंधों पर झूलते लंबे वस्त्रों से विद्वता टपकती थी। ग्रंथों के अध्ययन के लिए समय निकालने के निमित्त उन्होंने सुई राजवंश का पतन होते ही गवर्नर और दंडाधिकारी के पदों पर होनेवाली अपनी नियुक्तियों को अस्वस्थता के बहाने अस्वीकार कर दिया। उनके चार पुत्रों में ह्वेनसांग बचपन से ही बड़ा मेधावी था। उसकी प्रत्युत्पन्न-मति के कारण 'हुई' उससे बड़ा प्रसन्न रहा करता था।

एक दिन ह्वेनसांग के पिता हुई उच्च साहित्य पढ़ रहे थे। जैसे ही ... स्थल पर आये जहां त्सांग त्सेऊ ... स्वामी की आज्ञा सुनते ही उठ खड़ा हुआ था, अचानक आठ-वर्षीय ह्वेनसांग ने अपने कपड़े संभाले और उठ खड़ा हुआ। कारण पूछने पर उसने तपाक से उत्तर दिया, "त्सांग त्सेऊ की तरह ह्वेनसांग

ह्वेनसांग : एक पुराने चित्र के आधार पर
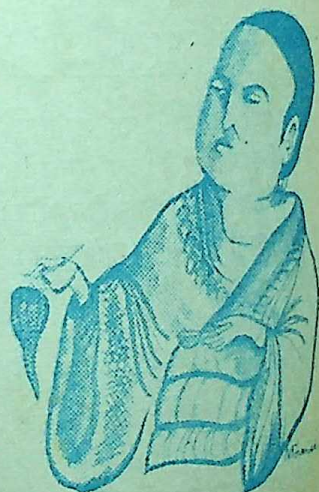
भी बैठा नहीं रह सकता जब कि वह (अपने पिता के) इतने प्रिय वचन सुन रहा हो।" प्रसन्न हो उसके पिता ने अपने परिवार के सदस्यों को बुलाया और उन्हें बधाई देते हुए कहा, "इस बालक में—महान राज-संस्कार हैं!" 'हुई' को दुःख था तो सिर्फ इतना कि वह अपने पुत्र के तेज को देखने के लिए शायद जीवित न रह सके।

बौद्ध ग्रंथों तथा वृद्ध संतों के उपदेशों का अध्ययन करनेवाला यह बालक हम-उम्र बालकों के साथ समय नहीं गंवाता था। ह्वेनसांग की अध्ययन की प्रवृत्ति को विकसित किया उसके भाई चांङत्सी ने, जो पहले ही बौद्ध हो चुका था। वह लोयांग के गुरुकुल में पढ़ रहा था। वह ह्वेनसांग को अपने साथ ले गया।

इसी समय निःशुल्क सुविधाओं सहित लोयांग में निवास करने के लिए चौदह भिक्षुओं के पद विज्ञापित किये गये। अवयस्क ह्वेनसांग निराश चयनहाल के बाहर दरवाजे पर खड़ा था। मुख्य चयन-अधिकारी ने उसे बाहर देखकर पूछा, "मित्र, क्या मैं आपका परिचय जान सकता हूं?" ह्वेनसांग द्वारा परिचय दिये जाने पर उसने पूछा, "क्या तुम भी अपना चयन चाहते हो?"

"अवश्य, लेकिन उम्र कम होने के कारण मैं प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं हो सकता," निराश ह्वेनसांग ने उत्तर दिया।

"लेकिन, भिक्षु होने से आपको क्या मिलेगा?"

"मेरा एक ही लक्ष्य है श्रीमन! —तथागत के महान धर्म का विदेशों में प्रचार," ह्वेसांग ने उत्तर दिया।

इस भावात्मक उत्तर से प्रभावित हो अधिकारी उसे लेकर चयन-मंडल के सम्मुख उपस्थित हुआ और कहा, "यदि आप इस बालक का चुनाव कर लें तो निःसंदेह यह शाक्य के महान धर्म का तेजस्वी सदस्य होगा।" चयनोपरांत ह्वेनसांग अपने भाई के साथ ही रहने लगा।

गुरुकुल में किंग नामक भिक्षु निर्वाण-सूत्रों का पाठ किया करता था। इन्हें प्राप्त कर ह्वेनसांग तब तक न सोया जब तक कि उन्हें पूरा पढ़ न लिया। महाभिक्षु येन से उसने महायानसूत्रों को सीखा। उसकी स्मरण-शक्ति इतनी तीव्र थी कि एक बार पढ़कर ही वह पुस्तक याद कर लेता था। तेरह वर्ष की उम्र में उसने भिक्षु-सम्मेलनों में मान्यता प्राप्त कर ली। इसी समय 'सुई' राजवंश के हाथों से साम्राज्य निकल गया। न्याय और दंड-व्यवस्था के ध्वस्त हो जाने से गलियां नरमुंडों से पट गयीं। ह्वेनसांग ऐसी स्थिति में अपने भाई के साथ तांग के राजकुमार के साथ रहने यंगान चला गया।

पहला साल उसने वूतेह में बिताया। देश में युद्धनाद ही सुनायी देता था। कनफ्यूशियस और बुद्ध भुला दिये गये। ६०५ ई. में 'सुई' राजवंश के द्वितीय राजा
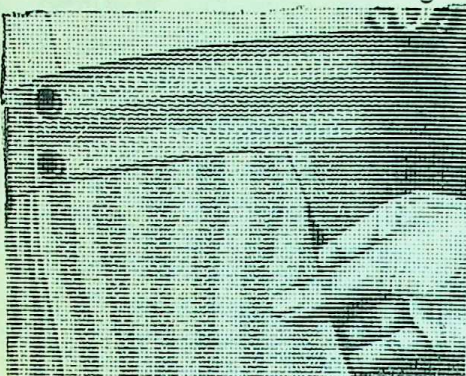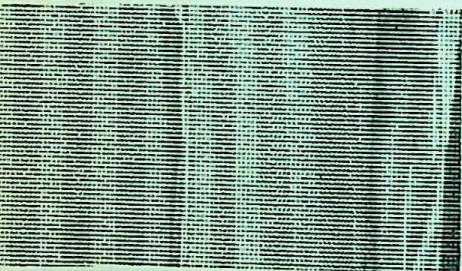
यांगती ने पूर्वी राजधानी (लोयांग) में चार मठों की स्थापना कर शांति स्थापित की, किंतु उसके अंतिम वर्षों में पुनः अव्यवस्था फैल गयी। लोग देश छोड़कर भाग चले तो ह्वेनसांग ने अपने भाई से कहा, "अब यहां कोई भी धार्मिक कृत्य संपन्न नहीं किया जा सकता। आइए, हम शुह के राज्य में दक्षिण-पश्चिम चीन चलें और अपना अध्ययन जारी रखें।"

दोनों भाई त्सेऊ वू घाटी पार कर हानचून प्रांत पहुंचे, जहां उन्हें अपने ही गुरुकुल के दो आचार्य कोंग और किंग मिल गये। इस प्रांत में धार्मिक भावना अधिक होने के कारण धर्मसभाओं का नियमित आयोजन हो सका। ह्वेनसांग ने साइत्सिन से महायान 'सम्परिग्रह शास्त्र' और 'अभिधर्मशास्त्र' का अध्ययन किया। तीन वर्षों में उन्होंने बौद्ध साहित्य की समस्त शाखाओं पर अधिकार कर लिया। इसी समय शुह के अतिरिक्त अन्य सभी प्रांतों में सूखा पड़ जाने से साम्राज्य के प्रत्येक कोने से धर्म-पुरोहित शुह प्रांत में आने लगे। वहां उपदेश-महाकक्ष में ह्वेनसांग ने अपनी विद्वता से सभी को प्रभावित किया था।

चीन में कोई ऐसा बहुश्रुत न था जो ह्वेनसांग को न जानता हो। उसका भाई भी अपनी बहुमुखी प्रतिभा के लिए संपूर्ण चीन में प्रसिद्ध था। वह इतिहास का श्रेष्ठ ज्ञाता था। शुह प्रांत के गवर्नर त्सान कुंग ने उसे सर्वोच्च

राजसम्मान-चिह्न प्रदान किया था।

बीस वर्ष की अवस्था में ह्वेनसांग ने 'विनय' का पाठ पूर्ण किया। ध्यान-सूत्रों और शास्त्रों के अध्ययन के समय उद्भूत गूढ़ प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के लिए वह राजधानी के आचार्यों से मिलना चाहता था। अध्ययन-क्रम में बाधा पड़ने की आशंका से अपने भाई का साथ छोड़कर वह चुपके से व्यापारियों के साथ हांगचाऊ प्रांत जा पहुंचा। उसने स्वयं आये हुए हानयांग के राजा की शंकाओं का समाधान किया। शास्त्रार्थ में अनेक पंडितों को पराजित कर उपहारों को ग्रहण करने से इनकार कर दिया। प्रसिद्ध पंडितों के साथ उत्तर में सियांगचाऊ के निकट जाकर आचार्य हिउ के सम्मुख अपनी समस्याएं रखीं। मार्ग में अनेक आचार्यों से ग्रंथों का अध्ययन करते हुए वह चांगान पहुंचा। वहां वह शंग और पिन नामक दो धर्मज्ञों से मिला, जिनके शिष्य बादलों की भांति चीन में फैले थे। शास्त्रार्थ में ह्वेनसांग के गंभीर प्रश्नों से प्रभावित होकर उन्होंने कहा, "हे महापुरुष! तुम शाक्य के धर्म में पूर्ण दीक्षित हो। तुमसे विद्या का सूर्य पुनः चमकेगा, किंतु खेद है कि हम आयु-जर्जर लोग उस दिन को न देख सकेंगे।"

अब ह्वेनसांग का यश चारों ओर फैल गया। वह विभिन्न आचार्यों से मिला और इस परिणाम पर पहुंचा कि सभी की मान्यताएं अलग-अलग हैं। सबके सब अंधकार में हैं। यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के लिए उसने पश्चिम दिशा की यात्रा का निश्चय किया।

बुद्ध की जन्मभूमि का दर्शन करने के लिए वह लालायित था। अपनी योजना किसी को बताये बिना वह शिष्यों और मित्रों के साथ राजदरबार में पहुंचा जहां विदेश-गमन की याचिका प्रस्तुत की। साथियों ने उसका साथ छोड़ दिया, किंतु उसने अकेले ही चलने का निश्चय किया। राजधानी के एक पवित्र मंदिर में कठिनाइयों से रक्षा के लिए उसने देवों से प्रार्थना की। ६३० ई. में उसकी मां का स्वप्न सत्य सिद्ध हुआ। स्वप्न में सफेद कपड़े पहनकर पश्चिम की ओर जाते हुए ह्वेनसांग से उसकी मां ने पूछा था, "पुत्र, तुम कहां जा रहे हो?" बिना पीछे देखे उसने उत्तर दिया था, "मैं सत्य की खोज में जा रहा हूं।"

२६ वें वसंत में यात्रारंभ की रात्रि में उसने स्वप्न देखा था कि घनघोर गर्जन के बीच समुद्र में भासित सुमेरु पर उसे लहरें स्वयं चढ़ा देती हैं। यह प्रतीक था उसकी सफलता का। यात्रा अकेले आरंभ करनेवाले ह्वेनसांग को मार्ग में तमाम साथी मिलते गये।

—द्वारा रमापति पाठक, सेंटर ऑव ऐडवांस्ड स्टडी इन फिलासफी, बनारस हिंदू यूनीवर्सिटी, वाराणसी

गजल मेरी है: अफसाना किसीक

● त्रिवेदी 'मजबूर'

अकबर इलाहाबादी का जन्म १६ नवंबर, १८४६ को इलाहाबाद जिले के बारा नामक कस्बे में हुआ था। उनके पिता सैयद तफज्जुल हुसैन बड़े विद्वान थे। आठ-नौ वर्ष की अवस्था तक अकबर घर पर ही पढ़े, फिर इलाहाबाद आ गये। यहां कुछ समय तक मौलवियों से पढ़कर १८५६ में वे जमुना मिशन स्कूल में भर्ती हो गये। दो-तीन वर्ष की पढ़ाई के बाद उनका जी ऊब गया और इधर-उधर की नौकरियों के बाद कचहरी में नकल-नवीस हो गये। इस नौकरी को भी छोड़ दिया और मुख्तारी का इम्तहान पास किया। फिर नायब तहसीलदार हो गये। लेकिन यहां भी ज्यादा दिन नहीं ठहरे और इलाहाबाद हाईकोर्ट में मिसिल-ख्वां हो गये। १८७२ में उन्होंने वकालत पास की और सात वर्ष तक वकालत की। १८८० में मुंसिफी के लिए चुन लिये गये। अपनी विशिष्ट योग्यता एवं प्रतिभा के कारण उन्हें जज बना दिया गया। वे इलाहाबाद हाईकोर्ट के जज बननेवाले ही थे कि उनके चौदह वर्षीय पुत्र हाशिम की मृत्यु हो गयी। इससे पहले अपनी तीसरी बेगम की मौत से वे दुखी थे ही। इन सदमों ने अकबर इलाहाबादी—जैसे व्यक्ति को तोड़ दिया और वे पेंशन लेकर घर बैठ गये। ९ सित
१९२१ को उनका देहावसान हुआ।

अकबर इलाहाबादी ने बहुत
उम्र में ही शायरी करना शुरू कर दि
था, लेकिन उन्होंने २१ वर्ष की अ
में अपनी पहली गजल पढ़ी थी—

समझे वही इसको जो हो दीवाना किसी का
'अकबर' ये गजल मेरी है अफसाना किसी का

उनका पहला कविता-संग्रह आ
से लेकर १९०८ तक की रचनाओं का है
जिसे स्वयं उन्होंने तीन दौरों में बांटा है
पहले दो दौर गजलों के हैं, तीसरा दौ
गजलों के साथ-साथ व्यंग्य और नैति
कविताओं का है।

अकबर के साहित्य को मुख्यतया तीन भागों में बांटा जा सकता है—(१) परंपरावादी, (२) नये युग की कविताएं जिन पर अंगरेजी काव्य का प्रभाव है (३) हास्य एवं व्यंग्यपूर्ण कविताएं।

पहले भाग की झलकियां देखिए—

हम आह भी भरते हैं तो हो जाते हैं बदनाम
वो कत्ल भी करते हैं तो चर्चा नहीं होता

जब उनको रहम कुछ आया हया ने समझाया
बिगड़-बिगड़ गयी तकदीर मेरी बन-बन के

पूछता हूं मैं जो हसरत से मआले हस्ती
रास्ता गोरे गरीबा का दिखा देती है

*

पड़ा है कहत, बशर मर रहे हैं, फाकों से
खुशी हो क्या मुझे शबरात के पड़ाकों से
बुझी हुई है तबीयत, ये रोशनी है फुजूल
उतार लीजिए साहब चिराग ताकों से

अकबर रचनाओं में ही विनोद-प्रिय नहीं थे बल्कि व्यक्तिगत जीवन में भी उनमें विनोदप्रियता का माद्दा आखिरी उम्र तक रहा।

एक बार अकबर इलाहाबादी अपने पुत्र इशरत हुसैन के यहां पहुंचे। उनकी बैठक में स्थानीय बड़े लोगों का जमाव था। अकबर बेचारे सीधे-सादे-शेरवानी पहने एक ओर जा बैठे। किसी ने उनकी ओर ध्यान न दिया। अंत में किसी ने फुसफुसा-कर कहा कि ये डिप्टीसाहब के वालिद हैं। फिर क्या था, चारों ओर से सम्मान की झड़ियां लग गयीं। थोड़ी 'हां-हूं' के बाद बोले, "मियां, और भी कुछ सुना? सुना है कि लंदन में अल्लाह मियां आये थे!" सब लोग हैरत से उनकी ओर देखने लगे तो उन्होंने बात पूरी की, "वे चारों तरफ कहते फिरे कि मैं खुदा हूं, लेकिन किसी ने उन्हें अपने यहां घुसने न दिया। आखिर जब उन्होंने कहा कि मैं ईसा मसीह का बाप हूं तो लोग चारों तरफ से दौड़े और उन्हें हाथों-हाथ ले लिया।" सुननेवालों ने शर्म से गरदन नीची कर ली और अपने व्यवहार के लिए क्षमा मांगी।

अंतिम दिनों में अकबर ने जो शेर लिखे थे, उनमें से कुछ ये हैं—

एक बार गांधीजी इलाहाबाद आये और आनंद भवन में ठहरे। सवेरे गांधीजी हाथ-मुंह धो रहे थे और जवाहरलालजी पास खड़े बातें कर रहे थे। कुल्ला करने के लिए गांधीजी ने जितना पानी लिया, वह समाप्त हो गया तो उन्हें दूसरी बार फिर पानी लेना पड़ा। गांधीजी बड़े खिन्न हुए और बातचीत का सिलसिला टूट गया। जवाहरलालजी ने कारण पूछा तो उन्होंने कहा, "मैंने पहला पानी अनावश्यक रूप में खर्च कर दिया और अब फिर पानी लेना पड़ रहा है। यह मेरा प्रमाद है।"

जवाहरलालजी हंसे और कहा, "यहां तो गंगा-यमुना दोनों बहती हैं! रेगिस्तान की तरह पानी कम थोड़े ही है। आप थोड़ा अधिक पानी खर्च कर लें तो चिंता की क्या बात है?"

गांधीजी ने कहा, "गंगा-यमुना मेरे ही लिए तो नहीं बहतीं। प्रकृति में कोई चीज कितनी ही उपलब्ध हो, मनुष्य को उसमें से उतना ही खर्च करना चाहिए जितना उसके लिए अनिवार्य हो।"

—ऋषिकुमार श्रीवास्तव

साहब में सब बुराई, लेकिन खूब चौकस
गांधी में सब भलाई, लेकिन वो महज बेबस
दुनिया तो चाहती है हंगामाए-टिरोजन
और यां है जेब खाली, जो मिल गया सो भोजन

—९, मोहन बाड़ी रानी बाजार, बीकानेर

साहित्य-चर्चा

शब्दवेध मौन

राजेन्द्र यादव

बात कागज के संकट की थी। एक मिल के लगभग सर्वेसर्वा ने बड़ी शिष्टता से कहा: "देखिए, आप बुरा मत मानिए। एक तरफ जब बच्चों को टेक्स्ट-बुक न मिल रही हों, इम्तिहान के लिए कापियां न मिल रही हों तब आपको किस्सा-कहानी-कविता के लिए कागज की जरूरत क्यों है?" उस समय सचमुच बुरा ही लगा था, लेकिन शांत मन से सोचने पर लगा, उनकी बात में व्यवस्था की पूरी मानसिकता बोल रही है। शासन और व्यवस्था की निगाह में साहित्य और संस्कृति निहायत गैरउपयोगी, फालतू और कहीं हिकारत से देखने की चीज बन गये हैं, शायद एक अच्छा मनोरंजन भी नहीं हैं। शासन ने कुछ नारे दिये थे, कुछ योजनाएं और घोषणाएं उछाली थीं और देश के साहित्यकार तथा बुद्धिजीवी को आह्वान दिया था कि राष्ट्र के पुनर्निर्माण में वह भी अपना योग दे... सुविधाओं, सुरक्षाओं और सम्मान के आश्वासन मिले थे... सब कुछ हुआ; लेकिन व्यवस्था को बुद्धिजीवी का वह मुक्त सहयोग नहीं मिला। बल्कि इन सत्ताइस वर्षों में उसका स्वर आलोचना और विरोध का ही होता चला गया। सुविधाओं पर लपकने के बावजूद उसकी आवाज में वह खुला और बेबाक समर्थन नहीं आ पाया जिसकी प्रत्याशा शासन ने की थी। वह सिर्फ तटस्थ होकर रह गया, या निहायत ही शास्त्रीय (एकेडेमिक) और व्यक्तिगत समस्याएं सुलझाने लगा। जिन्हें ये सुविधाएं नहीं मिली थीं, या जिन्हें सचमुच इनकी चाह नहीं थी उनके स्वर का डंक और तेज होता गया। स्वाभाविक ही था कि बुद्धिजीवियों के नाम पर ऐसे 'नपुंसकों और निंदकों' की जमात से ही शासन का मोह भंग हो गया और उनके प्रति एक निश्चित उदासीनता, विद्वेष या शत्रुता की भावना पैदा होने लगी। ऐसे सांपों को क्यों पाला जाए जो पहले अवसर पर ही आपकी ओर फन निकाल-कर खड़े हो जाते हैं।

हर व्यवस्था अपना समर्थन चाहती है, जो यह नहीं देता वह असामाजिक गैरजिम्मेदार और राष्ट्रद्रोही होने के लिए अभिशप्त है। उसे तो चुप करना ही होगा। कागज के संकट ने यह समस्या

बेहद खूबसूरत ढंग से हल कर दी है . . . देखें कितने लोगों की हिम्मत है जो पत्रिकाएं निकालकर, पुस्तकें छापकर देश में असंतोष और अव्यवस्था फैलाते हैं . . . ? मुद्रित शब्द का अस्तित्व ही जब संकट में है तब 'बुद्धिजीवी की स्वतंत्रता', 'अभिव्यक्ति का अधिकार', 'संप्रेषण की समस्या', 'विरोध की आवश्यकता' जैसी धारणाओं को शहद लगाइए और ड्राइंगरूमी बहसों में चाटिए . . . "जब लोगों को खाने को अन्न, उद्योगों को ईंधन या जिंदा रहने की नितांत आधारभूत चीजों के दर्शन दुर्लभ हैं तब आपका यह कागज . . ." लेखक महोदय, अपनी हाथीदांती मीनारों से नीचे आइए और देखिए कि जनता किस हालत में रह रही है, लोग भूख-बाढ़-सूखे और मिलावट से कैसे मर रहे हैं . . . 'वह बोला और वह मुस्कुरायीं' की जबान में कब तक और अपने आपको या दूसरों को बेवकूफ बनाते रहेंगे? कितना घिनौना, अश्लील और हास्यास्पद लगता है कत्लगाह में बैठकर इजारबंद के रेशे गिनना . . . या अपने होने का अहसास करने-कराने के लिए किसी दूर देश के नृशंस अत्याचार के खिलाफ वक्तव्य जारी करते रहना . . .

रोटी और शब्द

संबंधों और सिद्धांतों का ऐसा रोमानी बुखार उतर जाने के बाद हर लेखक एक बार ठहरकर सोचता है कि अब वह ऐसा क्या लिखे जो सार्थक और प्रासंगिक हो, जो रचनात्मक क्षमता की गहनतम अनुभूतियों को संपूर्ण और प्रभावशाली अभिव्यक्ति दे सके . . . लेखकीय मान्यता के बाद रचनात्मक सार्थकता की यातनाप्रद तलाश से हम सबको गुजरना होता है और इसी बिंदु पर हम सबने पाया है कि सार्थकता कहीं नहीं है।

अभी कुछ समय पहले ही एक युग आया था जब बाहरी परिवेश के संदर्भ में हमने अपने अंदर को समझना चाहा, कभी इतिहास और कभी पुराणों से समानांतर रूपक लेकर अपने 'आज' को परिभाषित करने का प्रयत्न किया, अस्तित्ववादी शब्दावली के माध्यम से अपने 'होने' की तकलीफ देती नस और नब्ज पर अंगुली रखनी चाही, हिप्पी भाषा में सब कुछ को तिरस्कृत करके मुक्त होने के प्रयास किये—और इन सारे देशी-विदेशी कोणों और आयामों से देखने के पीछे कहीं एक ईमानदार तड़प थी अपने वास्तविक व्यक्तित्व या 'इयत्ता' की तलाश—राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हर रोज इधर से उधर फेंक देनेवाली लहरों के बावजूद 'अपने आप की पहचान'—हर रोज कहीं कुछ ढह जाने, टूट जाने और मर जाने के बीच, जो भी कुछ बचा और बन रहा है उसका 'संपूर्ण' दर्शन . . . अपने होने और उसकी सार्थकता के आपसी संबंध का समाधान . . . और यह सारा प्रयत्न जितना व्यक्तिगत था उतना ही राष्ट्रीय।

(क्रमशः)

बुद्धि-विलास

१. वह कौन-सा खेल है जिसमें जीतनेवाली पार्टी पीछे हटती है ?

२. एक घर में एक वृद्धा की हत्या हो गयी। घर की खिड़की से लगी सीढ़ी को देखकर पुलिस ने अनुमान लगाया कि हत्या बाहर के किसी व्यक्ति ने की होगी।

पुलिस के आने से पूर्व सीढ़ी बारह फुट की ऊंचाई पर थी, लेकिन एक सिपाही के सीढ़ी पर चढ़ते ही सीढ़ी की ऊंचाई ग्यारह फुट, आठ इंच रह गयी। यह देखते ही पुलिस का अनुमान बदल गया। क्या आप बता सकते हैं कि पुलिस का नया अनुमान क्या था ?

३. एक तालाब के पास एक पहाड़ है, लेकिन इसके बावजूद पहाड़ की परछाईं तालाब में क्यों नहीं दिखायी देती ?

४. कुछ दिन पूर्व एक सज्जन इंगलैंड गये। वहां उन्होंने अपना एक कोट सिलवाया। लेकिन दर्जी के लिए चेक लिखते समय वे पौंड की संख्या शिलिंग में लिख गये तथा शिलिंग की संख्या पौंड में। दर्जी ने जब इस गलती की ओर ध्यान आकर्षित किया तब उन सज्जन ने देखा कि उस गलती से उन्होंने चेक की रकम दूनी कर दी है। इसके अतिरिक्त एक बात और हुई। उन्होंने चेक पर लिख दिया था—'बीस पौंड से ऊपर नहीं'। यह ठीक लिखा था। क्या आप बता सकते हैं कि चेक पर क्या धन-राशि लिखी हुई थी, और क्या लिखी होनी चाहिए थी ?

५. एक व्यक्ति ने ४,००० रुपये में चार मकान खरीदे। सबसे बड़े मकान के लिए उसने उससे छोटेवाले से १२५ रुपये अधिक दिये। दूसरे के लिए उसने उससे छोटेवाले से ५० रुपये अधिक दिये। तीसरे के लिए उसने सबसे छोटे से १२५ रुपये अधिक दिये। बताइए, उसने हर मकान के लिए क्या दिया ?

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आगे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

---

६. **मोहन** और सोहन ने आपस में सायकिल-रेस करने की ठानी। दोनों एक-दूसरे से अपने को तेज सायकिल चलाने-वाला समझ रहे थे, लेकिन उनके पास सायकिल एक थी। वे सोचने लगे कि क्या किया जाए। अंत में मोहन को एक उपाय सूझा, बोला, "पहले मील से पांचवें मील के पत्थर तक मैं सायकिल पर चढ़कर दौड़ूंगा। पांचवें मील से दसवें मील तक सायकिल तुम चलाना, दोनों का समय घड़ी में देख लिया जाएगा। जो कम समय लेगा वही जीता हुआ माना जाएगा।" इस बात में आपको कुछ गड़बड़ नजर आती है?

७. **वह** कौन-सी वस्तु है जिसमें एक और मिलाया जाए तब भी उसकी संख्या
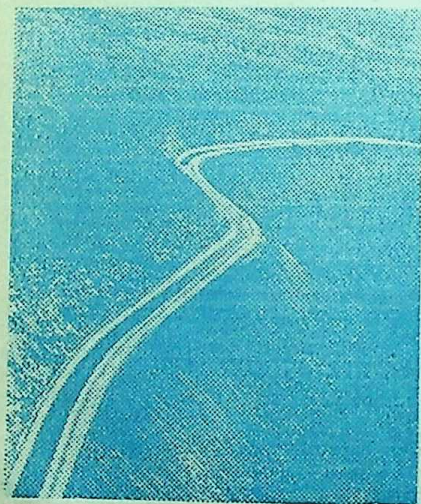
बढ़ती नहीं, बल्कि वही रहती है?

८. **गांधीवादी** विचारधारा के दो प्रमुख हिंदी कवियों के नाम बताइए।

९. **ताजमहल** से मिलती-जुलती कोई इमारत बताइए।

१०. **टेस्ट**-क्रिकेट में भारत की टीम का सबसे अधिक नेतृत्व किसने किया है और उसका क्या रिकार्ड रहा है?

११. **भारत** की क्रिकेट-टीम के पहले कप्तान का नाम और उसका रिकार्ड बताइए।

१२. **क्या** बता सकते हैं कि वह कौन लेखक है जिसकी कृतियों के सबसे अधिक भाषाओं में सर्वाधिक अनुवाद छपे हैं?

१३. **एक** धर्मार्थ औषधालय के बाहर एक लंबे-चौड़े बोर्ड पर वार्षिक दानियों की सूची लिखी थी—पं. रामप्रसाद—४८, केशव—६०, हृदयनारायण—३६, नरेन्द्रकुमार—७२, श्यामकुमार—९६ आदि।

क्या आप बता सकते हैं कि किसी नाम के सामने कोई विशेष संख्या है क्यों लिखी है? जैसे, ३६ या ७२ के स्थान पर ४० या ८० क्यों नहीं है?

१४. **पूना** से ८० किलोमीटर दूर पूना-जुन्नार मार्ग पर नारायणगांव के समीप अर्वी नामक ग्राम क्यों प्रसिद्ध है?

१५. **भारत** के दक्षिण में १,००० मील दूर हिंद महासागर में वह कौन-सा छोटा द्वीप है जो बहुत चर्चा का विषय बन गया है? अमरीकी प्रशासन उस पर तीन करोड़ डालर व्यय करनेवाला है और वह ब्रिटेन के अधीन है।

१६. **साथ** दिये हुए चित्र को ध्यान से देखिए। बताइए कि यह क्या है?

खोयी हुई कहानी-१२
खूंटे, जहर, गोलियां
र. मेश बतरा

आत्म-कथ्य

बचपन से ही कहानियां पढ़ने का चाव था। आरंभ से ही विज्ञान और तकनीकी का छात्र रहते हुए भी, क्यों और कैसे लिखना शुरू कर बैठा? कुछ लिखने का विचार बेरोजगारी के उमसभरे दिनों में आया। तब मेरे जेहन में इतनी बात उभरी थी कि इस तकलीफ से उबरने और वक्तकटी के लिए यह अच्छा शुगल रहेगा। पर जीवन को साक्षात देखने और परखने पर समझ आया कि लेखन तो सिर्फ माध्यम है, आदमी और आदमी के बीच हो रहे संघर्ष को अभिव्यक्ति देकर जीवन में स्वयं को तलाशते हुए जीवन से जुड़ने का। और यह युद्ध चूंकि हर मोरचे पर जारी है और उसमें भाग लेता हुआ मैं भी घायल होता हूं तो तकलीफ होती है और जब तकलीफ होती है तो रहा नहीं जाता।

आयु—२४ वर्ष, शिक्षा-स्नातक, संप्रति—लो. नि. वि. हरियाणा में

वह पति की सांस से परिचित थी। और आज उसकी सांस बता रही थी कि वह परेशान है.... और कुछ ऐसा सोच रहा है जो तकलीफदेह है। उसने पूछा, "जाग रहे हो?"

पति, बीस-पच्चीस घंटों के हेर-फेर में आ पड़नेवाले व्यय से निबटने के लिए बनाये जा रहे जुगाड़ों के क्रम को तोड़ना नहीं चाहता था। वह चुप ही लेटा रहा तो पत्नी ने उसका सिर थपथपाते हुए फिर पूछा, "बोलते क्यों नहीं?"

"तुम भी तो नहीं सोयीं!"

"क्या सोच रहे हो?"

"कुछ नहीं।"

"झूठ... सच-सच बताओ।"

"सोच रहा था... यदि आपरेशन हुआ तो?"

"ईश्वर भला करेगा।"

"बहुत मेहरबान है न हम पर!"

"फिर पत्थर मारने लगे भगवान को! कम-से-कम इन दिनों तो खुश रहा करो। जानते हो इन दिनों माता-पिता में हुई हर बात का प्रभाव होनेवाली संतान पर पड़ता है।"

"तुम जानो।"

"अभिमन्यु की कथा नहीं सुनी तुमने? अर्जुन ने सुभद्रा को चक्रव्यूह में युद्ध करने का ढंग बतलाया... तो अभिमन्यु ने उसे गर्भावस्था में ही सीख लिया।"

वह असहाय होकर खिसियानी-सी हंसी हंसकर रह गया। उसका मन हुआ,

वह साफ-साफ बतला दे कि डॉक्टर एक बार नहीं, कई बार ऑपरेशन होने की संभावना प्रकट कर चुकी है, जबकि उसकी गांठ एकदम खाली है। सहायता के लिए वह जहां कहीं भी गया है, हर किसी ने इतनी मुस्तैदी से कान हिला दिये हैं कि वह स्वयं को अपाहिज-सा महसूस करने लगा है... अभिमन्यु पैदा करना उसके बस का रोग नहीं !

वह सोचता रहा, सोचता रहा और सोचता ही रहा। कभी कुछ और कभी कुछ। पैसा जुटा सकने के एक ढंग को दूसरे से नकारकर वह तीसरा ढंग सोचता और फिर तीसरे को भी ठीक न समझकर कोई चौथा कारगर ढंग सोचने लगता। एक-के-बाद एक उसके सोचे हुए सभी समाधान परस्पर कटते चले गये और सोच-सोचकर निराश होने के बाद जब उसका मस्तिष्क कुंद हो गया तब अकस्मात किसी दुधारी तलवार-सा एक समाधान शैतान बनकर उसके सिर पर लटकने लगा, "चोरी ? चोरी भी तो की जा सकती है !"

मां के ट्रंक में लगे अलीगढ़-ताले की चाबी का पता-ठिकाना वह खूब जानता है। वहां तक पहुंचना भी मुश्किल नहीं। ट्रंक में हजार-डेढ़ हजार रुपया हर समय पड़ा रहता है। वह सिर्फ पांच सौ उठा लाएगा... सिर्फ पांच सौ, ताकि बाद में लौटाया भी जा सके। फिलहाल वह वहां एक चिट छोड़ आएगा। मां और बाबूजी उससे चाहे कितने भी विलग क्यों न हो गये हों, इतने दुश्मन नहीं हुए कि उसे पुलिस के हवाले कर दें... या इतनी-सी बात के लिए उसे जलील करें। यह भी हो सकता है कि पुत्र का कष्ट और पौत्र का वात्सल्य मां और बाबूजी को फिर से उनके साथ जोड़ दे।

यह रिस्क उसे ले ही लेना चाहिए।

शादी से पहले एक बार उसके सिर में एकाएक दर्द शुरू हुआ था तो मां ने उसकी मालिश करके उसे सुलाने के लिए इसी तरह उसका सिर थपथपाते हुए कहा था, "बिल्लू, लगता है मुझे बहू का मुंह देखना नसीब नहीं होगा।"

"तुम्हारे भाग्य में तो दादी-परदादी होना लिखा है, मां ! चिंता न करो।"

"कहीं कोई लड़की ताड़ तो नहीं

रखी तूने ?"

"एक है तो सही," उसने बता ही दिया था, "जब कहूंगा, उसी से शादी करवा देना ।'

"तो यह ले," मां ने दाहिने हाथ में पहनी अपनी तीन अंगूठियों में से एक उतारकर उसे थमा दी थी, "अबके मिले तो उसे मेरी तरफ से दे दीजियो और कहियो कि मैंने घर बुलाया है ।"

और आज ? आज उसी लड़की के लिए मां ने विष-बुझे लहजे में शाप दे दिया था, "जिस निगोड़ी ने मेरे घर का सुख-चैन छीन लिया ...भगवान उसे कभी सुखी न रखे !"

और बाबूजी ? शादी के लिए सब जोर देनेवाले बाबूजी ने भी आज कपड़े झाड़कर उसके मुंह पर थूक दिया था, "मर गया तेरा बाप ! किस मुंह से आया है मेरे पास ? जिस बूते पर शादी की थी... अब उसी बूते पर बच्चे भी पैदा कर !"

जिस लड़की को एक नजर देखने के लिए मां एक बार नहीं सैकड़ों बार कह चुकी थीं, उसे देखने और उससे परिचित होने के बाद मां ने कहा था, "तू, धानी तू गैर जात में ब्याह करेगा ? और बिरादरी तो हमें नक्कड़ पर बिठा देगी !"

और रात का बाबूजी के लौटने पर उसने लंबी भूमिका बांधकर अपना मंतव्य

प्रकट करते हुए कहा था, "और मैं चाहता हूं बाबूजी, कि सीधा-सादा आदर्श विवाह किया जाए। न घोड़ी, न बारात, न शोर-शराबा और न ही दहेज।"

मां कुछ कहने को हुई ही थी कि बाबूजी ने रोक दिया था और ऐनक उतारकर कुर्ते के छोर से उसका शीशा पोंछते हुए बोले थे, "बिल्लू बेटे, तूने इतनी बड़ी-बड़ी बातें तो सोच लीं, लेकिन हम... जिन्होंने तुझे इतना सोचने लायक बनाया... उनके बारे में कुछ नहीं सोचा ?

"तू चाहे तो हम समझौता कर सकते हैं...बस, यह शर्त मत रख कि बारात नहीं सजेगी और दहेज नहीं लिया जाएगा। हां, हम अपनी ओर से मांगेंगे कुछ नहीं !"

बस, इतनी-सी बात और एक आदर्श तथा एक प्रथा में टकराव के बीच सभी रिश्ते चकनाचूर होकर कांच-कांच हो गये! और वह उस दलहीज को सदा-सदा के लिए लांघ आया जो उसके घर से निकलते ही उसकी बाट जोहने लगती थी और वह किसी भी वक्त चाहे कितनी भी देर से क्यों न लौटे, स्वागत किया करती थी !

फिर उसने शादी की थी। न बारात, न घोड़ी, न शोर-शराबा, न आडंबर। और न ही दहेज। चार मित्रों की उपस्थिति में चार भांवरे और सगुन के नाम पर कन्या वालों से एक रुपया लेकर, वह उस लडकी को पत्नी रूप में अंगीकार कर लाया था।

तब पढ़ाई छोड़कर उसने नौकरी कर ली और भूल गया कि इस संबंध के लिए उसे बड़ी भारी कीमत चुकानी पड़ी थी। अपितु उसे संतोष था कि उसे मनचाही पत्नी मिल गयी है। वरना आदर्शवादियों को तो दुनिया ने खूंटे, जहर और गोलियों के अतिरिक्त कभी कुछ नहीं दिया।

लोग उससे कटते चले गये। उसने कोई परवाह नहीं की। वह हर ओर से निडर, पत्नी के साथ मस्त रहकर, अपना घर-संसार संभालने में लगा रहा।

पर एक दिन अनहोनी हुई। उसकी गृहस्थी भी उसके हाथ से फिसल गयी और ऐसी फिसली कि वह बौखला गया !

उस दिन उसकी पत्नी ने भी त्योरियां चढ़ा ली थीं, "क्या सुख देखा है मैंने तुमसे शादी करके! तीन साल हो गये हैं, कोई जेवर-गहना तो दूर, ढंग का कपड़ा तक नहीं बन सका ! मुंह से कभी इतना भी नहीं फूटा कि कुछ बनवा ही दूंगा। गरीबी सिर्फ हमारे लिए रह गयी है। दुनिया खाती है, पीती है, घूमती है, सिनेमा देखती है और क्या-क्या नहीं करती ?"

"इसमें मैं क्या कर सकता हूं ?"

"तो शादी क्या बहुत जरूरी थी ?"

"तुम अंधी थीं उस वक्त ? न करतीं शादी !" मारे अपमान के वह ताव खा गया था, "मेरे पास तो यही कुछ है। रहना है रहो . . . नहीं तो जा बैठो उसके पास जो मौज करवा सके।"

"जा बैठूंगी . . . जरूर जा बैठूंगी, और जब जाऊंगी तो तुमसे पूछूंगी नहीं।"

उस दिन वह अपने-आप से हार

बाती तुम्हें तो . . .

जला-जलाकर
दीप पंक्ति में
सारा आकाश
जलाना होगा

सर्द आग
हथेली रखकर
क्रांति-गीत भी
गाना होगा

सिरा-सिराकर
लाश आस की
अब भी और
भटकना होगा

तेल दिया पी ले
न जब तक
बाती तुम्हें तो
जलना होगा

—नरेन्द्र भारद्वाज
५०, दरियागंज,
दिल्ली—११०००६

गया था। जिन आदर्शों को वह जीवन का सुख और कर्तव्य समझता रहा, वही बोझ लगने लगे थे।

सुबह दफ्तर जाने के लिए घर से निकलकर भी वह दफ्तर नहीं पहुंच सका। दिन भर कभी किसी पार्क और कभी बाजार में घूमता शहर भर की धूल फांकता रहा। शाम उतरते-उतरते वह थका-हारा घर पहुंचा, तो रोजाना की तरह वह सीधे रसोईघर में नहीं गया। पत्नी उसे देखकर मुसकरायी भी, पर वह मुंह फुलाये सीधा कमरे में चला गया और कपड़े बदलकर बिस्तर में जा घुसा।

पत्नी उसे उखड़ा-उखड़ा पाकर उसके पास जा बैठी।

"नाराज हो?" वह रुआंसी हो आयी थी, "यहां मेरा कौन है जिसे अपना दुखड़ा सुनाऊं? मां-बाप हुए न हुए, एक बराबर हैं। एक तुम ही हो और तुम भी नहीं सुनना चाहते तो मेरा गला घोंट दो . . . जहर दे दो।" पत्नी सुबकने लगी।

पत्नी की आंखों में पलते दर्द को महसूस करके वह पिघल गया था और उसने उसे क्षमा करके आत्महत्या का इरादा भी त्याग दिया था। शरीर के किसी अंग पर घाव हो जाए तो जब तक बहुत जरूरी न हो उसे काटकर अलग नहीं किया जाता, अपितु उसका इलाज किया जाता है कि वह ठीक हो जाए और फिर से अपना काम करने लगे।

फिर भी वह संतुष्ट नहीं हो सका था।

दरअसल पत्नी से हुई झड़प के पश्चात वह शंकाग्रस्त रहने लगा था कि पत्नी द्वारा मांगी गयी क्षमा बस दिखावा मात्र थी। उसने उसे फुसलाये रखने का ढोंग रचा लिया है ताकि पूरी तैयारी के साथ भाग सके।

भय का यह भूत कई बार उसे इतना परेशान कर देता था कि समय-असमय दफ्तर से उठकर वह यह देखने घर जा पहुंचता कि उसकी अनुपस्थिति में कहीं कोई उसकी पत्नी को फुसलाने की कोशिश तो नहीं कर रहा? या वह ही इधर-उधर किसी से मिलने तो नहीं जाती?

पत्नी हर बार उसे घर में अकेली या किसी पड़ोसिन के साथ बैठी ही मिली।

इस पर भी वह संशय-मुक्त नहीं हो सका। एक दिन उसने अपनी समस्या दफ्तर के ही एक बुजुर्ग के सामने रख दी, तो उन्होंने सीधा-सादा टोटका समझाते हुए कहा, "बिल्लू बेटे, पत्नी अपने पति को छोड़ जाए . . . ऐसा तो बहुत देखा-सुना है। पर मां संतान को छोड़ दे . . . यह बहुत कम हुआ करता है। जल्दी से बाप बन जाओ। सारा दिन घर में अकेली पड़ी पत्नी का मन भी लग जाएगा और तुम घर-संसार का पूरा आनंद भी उठा सकोगे।"

उस दिन, कहना चाहिए कि उसी क्षण उसने कम-से-कम पहले पांच वर्ष निःसंतान रहने के अपने निर्णय को ताक पर रखने की ठान ली थी। वह खुश-खुश घर जा पहुंचा था। एक अरसे बाद उसे इस प्रकार मुसकराता देख पत्नी भी गद्‌गद हो गयी थी। बुजुर्ग की सलाह में उसे सब कुछ ठीक ढर्रे पर आ जाने के लक्षण दिखायी दे रहे थे। तब समय रहते पत्नी गर्भवती हुई थी और ज्यों-ज्यों दिन चढ़ते गये थे, उसे लगता रहा था कि उसके प्रति पत्नी का मोह भी बढ़ता जा रहा है। वह उसे पहले से अधिक चाहने लगी है . . . और आज वह प्रसव की निकटतम अवस्था में स्वयं अस्वस्थ होते हुए भी उसके लिए चिंतित थी। उसका सिर थपथपा रही थी . . .!

अकस्मात सिर थपथपाती हुई पत्नी का हाथ रुक गया। उसे नींद आ गयी थी। शायद न भी आयी हो? जानने के लिए वह अनायास उठकर बैठ गया। उसके सिर पर पड़ा रह गया हाथ एक ओर लुढ़क जाने पर भी वह सोयी ही रह गयी तो वह उठ खड़ा हुआ।

दूर किसी मुरगे की बेवक्त बांग सुनायी दे रही थी।

पत्नी पर चादर उढ़ाते हुए उसे कफन का खयाल आ गया। उसकी कंप-कपी छूट गयी। उसे लगा, इस तमाशे में दुनिया भर की आंख का शिकार होने से बेहतर है कि रात डूबने से पहले ही वह भाग जाए . . .! उसे बुद्ध-जयंती के उपलक्ष्य में निकाले जा रहे उस जलूस का ध्यान हो आया, जिसे उसने सुबह
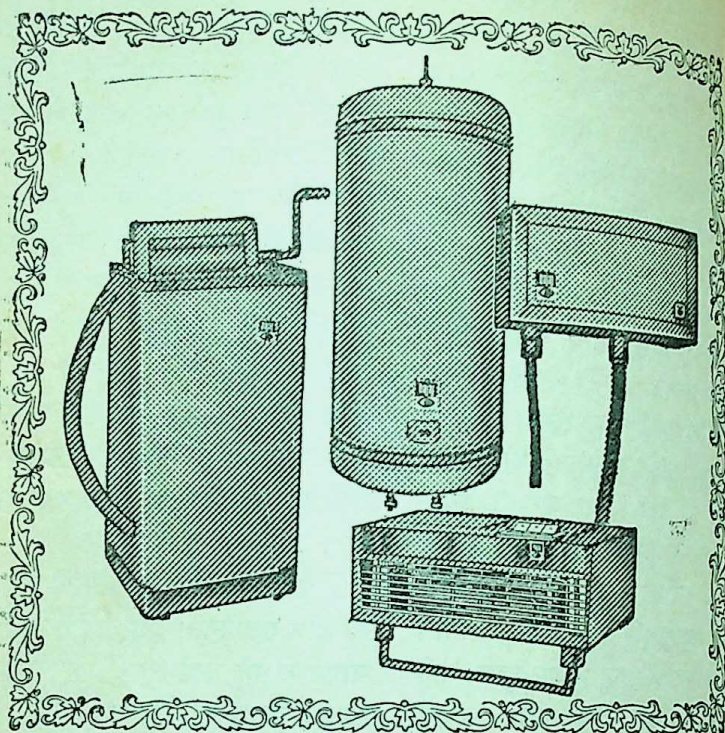
मां और बाबूजी से मिलकर लौटते हुए देखा था।

जलूस देखकर एक बार तो उसके मन में भी आ गया था कि वह भी दीक्षा ले ले लेकिन बाद में वह अपने ही सोचे हुए पर हंस दिया था। अब उसे लगा कि उसे ऐसा कर ही लेना चाहिए। पत्नी साथ रही तो उम्र भर कोई न कोई शिकायत करती रहेगी और मर गयी तो वह अपने-आपको कभी माफ नहीं कर सकेगा। सभी झंझटों से मुक्त होने का एक अच्छा उपाय है कि अर्जुन की तरह गांडीव छोड़कर भिक्षापात्र ले, सिद्धार्थ हो जाए।

कुछ क्षण खड़ा वह पत्नी को घूरता रहा। फिर उसका हाथ ठीक से रखकर द्वार की ओर बढ़ गया।

किवाड़ खोलने से पहले उसने गरदन घुमाकर पीछे देखा। पत्नी बेसुध सो रही थी। वह किवाड़ से पीठ टेककर खड़ा हो गया। अस्पताल, ऑपरेशन-थियेटर की लाल-हरी-पीली बत्तियां, दम तोड़ती हुई पत्नी और एक मरा हुआ बच्चा एक—एक करके उसके सामने से तैरते हुए गुजर गये। मोह-माया का प्रेमी मन उसे फिर से वहीं जाकर सो जाने को प्रेरित करने लगा। अनिश्चय की स्थिति थी!

एड़ियों के बल वापस घूमकर आहिस्ते से किवाड़ खोलते हुए वह फिर से ठिठक गया, 'तू बुद्ध बनेगा? महात्मा बुद्ध, और तू? किस चक्कर में है? सिद्धार्थ ने दीक्षा ली . . . वह राज-परिवार का सदस्य था। लोगों ने कहा—वह महान है। मिले-मिलाये ऐश्वर्य को ठोकर मार दी! . . वह तेरे-ऐसी खस्ता हालत में होता तो लोग कहते कि भाई ने रोटी-पानी का जरिया ढूंढ लिया है! . . . और अगर उसे तनिक भी संदेह होता कि उसके चले जाने पर उसकी पत्नी और पुत्र एड़ियां रगड़ते मर-खप जाएंगे तो वह भी कभी न जाता।'

खड़े-खड़े थकावट महसूस होने पर वह वहीं फर्श पर ही बैठ गया। वहीं रहने का निर्णय लेकर भी वह खोया नहीं। उठा और परेशान-सा दहलीज से पलंग और पलंग से दहलीज के बीच टहलता-टहलता बाहर निकल गया। और सूर्य की आंख खुलने से कुछ पहले वापस पहुंचा तो उसके चेहरे पर चढ़ते सूरज की सुर्ख लाली थी। उसकी जेब में सौ-सौ के पूरे दस नोट थे और . . . और वह मां के ट्रंक में कोई चिट भी नहीं छोड़ आया था!

—३६२५/२३-डी, चंडीगढ़-२३

राष्ट्रीय बचतों पर अब
ब्याज की अधिक
आकर्षक दरें

	प्रतिवर्ष
डाकघर बचत बैंक	५ % करमुक्त
७-वर्षीय राष्ट्रीय बचत पत्र द्वितीय और तृतीय निर्गम	६ % करमुक्त
७-वर्षीय राष्ट्रीय बचत पत्र चतुर्थ और पंचम निर्गम	
डाकघर सावधि जमा :	१०.२५ %
१-वर्षीय	८ %
२-वर्षीय	८.५ %
३-वर्षीय	९ %
५-वर्षीय	१० %
५-वर्षीय डाकघर आवर्ती जमाखाता	९.२५ %
१०-वर्षीय डाकघर बढ़ने वाला सावधि जमाखाता*	६.२५ %
१५-वर्षीय लोक भविष्य निधि खाता*	७ %

बचत संगठन

नागपुर

डीएवीपी ७४/१९४

एक विनीत व्यक्तित्व

• वियोगी हरि

क्या कारण है जो हमारे यहां, विशेषतः उत्तरी राज्यों में, राजनेता, उनमें भी मंत्री, कोई खास विद्वान देखने में नहीं आते हैं। हां, अपवाद-रूप में ये तीन नाम लिये जा सकते हैं : मेरे पिता डॉ. भगवानदास, आचार्य नरेन्द्रदेव और डॉ. सम्पूर्णानन्द— कोई अठारह वर्ष हुए होंगे जब श्रीप्रकाशजी ने राजनीतिक चर्चा के दौरान यह बात कही थी।

"आपका भी नाम इनमें जोड़ दिया जाए, तो अनुचित नहीं होगा," मैंने कहा।

"अशर्फियों के साथ आप कौड़ी रखना चाहते हैं!" श्रीप्रकाशजी ने हंसते हुए बात को काट दिया।

उच्चकोटि के विद्वान होते हुए भी वे बड़े विनीत थे। उनके जवाब से मैं कायल नहीं हुआ। विरासत के रूप में अपने ऋषिकल्प पिता से उन्होंने बहुत-कुछ सीखा और पाया था। साहित्य-चर्चा में खासा रस लेते थे वे। कितनी ही संस्कृत, हिंदी, उर्दू और अंगरेजी की सूक्तियां उन्होंने कंठस्थ की थीं। बातचीत में उनका समयानुसार वे बड़ा उपयुक्त प्रयोग करते थे।

डॉ. भगवानदास का मैं सदैव भक्त रहा हूं, और श्रीप्रकाशजी को अपना श्रद्धेय बंधु माना है। कलकत्ता में श्री लक्ष्मीनिवास बिरला द्वारा संस्थापित बंगला-हिंदी-मंडल ने जब कुछ उत्तम ग्रंथ लिखाने और उन पर पारितोषिक देने का विचार किया, तब मेरी भी उस योजना में सलाह ली गयी थी। उस योजना के अंतर्गत विद्द्वर डॉ. भरतसिंह उपाध्याय ने एक अच्छा शोधपूर्ण ग्रंथ लिखा था— 'बौद्ध-दर्शन तथा अन्य भारतीय दर्शन'। जिन विद्वानों की निर्णयात्मक सम्मतियां उस पर ली गयी थीं, उनमें श्रीप्रकाशजी भी थे। इसी सिलसिले में मैं उनसे तीन-चार बार मिला था। पूरा ग्रंथ पढ़े बिना वे अपनी सम्मति लिखने को तैयार नहीं

श्री श्रीप्रकाशजी

थे। पुरस्कृत होने के पश्चात बंगाल-हिंदी-मंडल ने बड़े आकार में दो खंडों में इसे प्रकाशित किया था। पृष्ठ-संख्या इसकी लगभग १,२०० है। उन दिनों श्रीप्रकाशजी के साथ दर्शन विषय पर जो चर्चा होती थी, उसकी छाप आज भी मेरे हृदय पर अंकित है।

जब श्रीप्रकाशजी मद्रास राज्य के राज्यपाल थे, तब वहां दो बार मैं उनसे मिला था। सौजन्य और मिलनसारी क्या कभी उनकी भूल सकती है? आत्मीयता से मिलते और हृदय खोलकर रख देते थे।

दो बार बंबई के राज-भवन में भी उनसे मिलने का अवसर मिला था, जब वे महाराष्ट्र के राज्यपाल थे। पाकिस्तान में भारत ने उन्हें अपना हाईकमिश्नर नियुक्त किया था। वे केंद्रीय मंत्री भी थे, और कई राज्यों में राज्यपाल भी; पर इन पदों ने उनको बहुत आकृष्ट नहीं किया था। उनके विचार शासन के चौखटे में 'फिट' नहीं होते थे। सरकारी नीतियों की खुलकर आलोचना नहीं कर सकते थे। अतः मुक्त हो जाने का उन्होंने निश्चय कर लिया था।

राजनीतिक क्षेत्र से अलग रहते हुए भी एक दिन मेरे मन में एक विचार आया। मैंने उनको लिखा :

स्वर्ण काटेज, एच-४/३, मॉडल टाउन, दिल्ली

दिनांक २५-१०-'६१

प्रिय बंधुवर,

सादर सप्रेम नमस्कार।

मेरे मन में कई दिनों से एक विचार आ रहा है। उसे आज मैं साहसपूर्वक लि[खर] रहा हूं। आपके शील-स्वभाव को जा[नते] हुए डर लग रहा था कि कदाचित आप [इस] प्रस्तावित विचार पर ध्यान ही न [दें] और यह समझें कि बिना सोचे-विचा[रे] ही मैंने आपको यह पत्र लिख दिया। किंतु न लिखता, तो मुझे लगता कि [एक] अच्छे विचार के प्रति मैं न्याय नहीं कर र[हा] हूं। एक-दो मित्रों के आगे यों ही मैं[ने] अपने विचार को जब रखा, तब उन्होंने उसका बड़े हर्ष और उत्साह से समर्थन कि[या] और इसलिए भी मुझे यह पत्र लिखने का साहस हुआ।

भारत ने, स्वतंत्र होते ही, अपना पहला राष्ट्रपति देश के एक ऐसे उत्तम पुरुष को बनाया, जो हरेक दृष्टि से इस पद के लिए सर्वथा उपयुक्त सिद्ध हुआ है। त्याग, तप, संस्कारिता, सूझ-बूझ, शालीनता, आत्मीयता आदि जो सद्गुण राजेंद्र बाबू ने अपने जीवन में विकसित किये हैं, उनपर प्रत्येक भारतवासी को गर्व है।

राजेन्द्र बाबू का स्वास्थ्य अब इस योग्य नहीं है कि वे अगले वर्ष भी राष्ट्रपति का दायित्व निभा सकें। इस सत्य को दुःख के साथ हमें स्वीकार करना पड़ता है।

चारों ओर दृष्टि दौड़ाने पर उनका उत्तराधिकारी कौन हो सकता है, यह बहुत गहराई से सोचने का विषय बन गया हैं। यों उपराष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन पर बहुतों की नजर जा रही है। निस्संदेह वे ऊंचे विद्वान हैं, अंतर्राष्ट्रीय ख्याति उनको

मिली है और हमारे आदरणीय हैं, किंतु वह बात कहां, जो राजेन्द्र बाबू में हम देखते हैं! उनकी-जैसी हृदय की उदारता, शालीनता और राष्ट्र के प्रति भक्तिभावना अन्यत्र शायद ही देखने को मिलेगी।

श्रद्धेय टंडनजी की ओर दृष्टि जा सकती थी, परंतु वे रोग-शय्या पर पड़े हुए हैं।

तब विचार उठा, या भगवान ने ही सुझाया, कि साहस बटोरकर आपकी ओर देखा जाए। आपकी सहज विनम्रता, मैं जानता हूं, इस प्रस्ताव पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने के लिए तैयार नहीं होगी। परंतु यह व्यक्तिगत प्रश्न नहीं है, सारे राष्ट्र का प्रश्न है, जिसके आगे व्यक्ति की विनम्रता या संकोच के लिए कोई स्थान नहीं। आपके पीछे एक लंबा इतिहास है। लोकप्रियता और सुयोग्यता आपकी पैतृक संपत्ति है। एक मित्र के नाते मैं आपकी प्रशस्ति नहीं कर रहा हूं, पर जो सत्य है उसे कैसे छिपाऊं और क्यों?

कृपया मेरे इस प्रस्ताव पर आप अवश्य ध्यान दें। संदेह नहीं कि यदि आप राष्ट्रपति-पद के लिए खड़े होंगे, तो आपको देश का पर्याप्त समर्थन मिलेगा, और राजेन्द्र बाबू का सुयोग्य उत्तराधिकारी पाकर हम सभी को हार्दिक आनंद होगा।

इतना तो आपके ध्यान में रहेगा ही कि यह पत्र एक ऐसा आदमी लिख रहा है, जिसका राजनीति से कभी कोई संबंध नहीं रहा, और जिसके स्वभाव में किसी प्रकार की चाटुकारिता नहीं है।

आपका,

वियोगी हरि

इस पत्र का उत्तर उन्होंने १२ दिसंबर, १९६१ को निम्नलिखित दिया :

राजभवन, मुंबई-६

१२ दिसंबर, १९६१

प्रियवर,

आपके २५ अक्टूबर के दोनों कृपापत्र मिले। अनेक धन्यवाद। क्षमा कीजियेगा इसके पहले आपको उत्तर न दे सका। अब बहुत बूढ़ा हो रहा हूं। शासन-संबंधी कार्य से ही थक जाता हूं। आगंतुकों और

जब हनुमान तमिल में बोले

बात तब की है जब स्वर्गीय श्रीप्रकाशजी मद्रास (अब तमिलनाडु) के राज्यपाल थे। तमिलभाषियों को अपनी भाषा एवं संस्कृति पर बहुत गर्व है। एक बार मद्रास में किसी सांस्कृतिक समारोह में श्रीप्रकाशजी भाग ले रहे थे। तमिलभाषियों के उस संगम में वे अभिभूत हो गये! श्रीप्रकाशजी सहज ही किसी से भी प्रभावित हो जाया करते थे, वे तमिल भाषा से भी प्रभावित हो उठे और रामायण के प्रसंग में एक कथा सुनाते हुए उन्होंने कहा, "श्रीलंका जाकर हनुमान ने राम की अंगूठी देते हुए सीताजी से जिस भाषा में बात की थी, वह तमिल थी।" यही प्रसंग जब नागपुर की एक सभा में उन्होंने दोहराया तो दर्शक हंस पड़े।

ब्याज की हमारी बढ़ी हुई दर के सहारे और ऊँचा उठते जाइये

अपनी बचत के पैसे ऐसे बैंक में जमा करने की आदत डालिये जो आपका शुभचिन्तक और मददगार हो — जहाँ आपकी रकम भी सुरक्षित रहे। निश्चय ही ऐसा बैंक है चार्टर्ड बैंक। आज ही यहाँ एक सेविंग्स या डिपाॅजिट एकाउन्ट खोलिये। और देखिये कि हमारी बढ़ी हुई सर्वोत्तम चालू ब्याज-दर के सहारे अपनी पूंजी के साथ आप भी कितनी ऊँचाई तक उठ जाते हैं।

...जहाँ सेवा ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण है

स्टैण्डर्ड एण्ड चार्टर्ड बैंकिंग ग्रुप का एक सदस्य

अमृतसर, बम्बई, कलकत्ता, कालीकट, कोचीन, दिल्ली, कानपुर, मद्रास, नई दिल्ली, [illegible] (गोआ)

SEKAU/2

बाहर के समारोहों से परेशान रहता हूं। खेद है कि व्यक्तिगत पत्र-व्यवहार पड़ा रह जाता है। आपके भी पत्र रह गये, इसका विशेष दुःख है।

जिस दिन आपने इस पत्र को लिखा है उस दिन इत्तिफाक से मैं काशी में था। वहां से लखनऊ, कानपुर होता हुआ २७ को दिल्ली पहुंचा। राज्यपाल-सम्मेलन के कार्यों में तीन दिन लगा रहा। फिर देहरादून, मेरठ होता हुआ वापस बंबई आ गया। मालूम पड़ता है कि आपका पत्र मेरे पीछे-पीछे घूमता रहा। इसके बाद भी बराबर दौरे पर जाना पड़ा, इस कारण पत्र मुझे बहुत देर करके मिला। तो भी इसके पहले तो लिख ही सकता था। क्षमा कीजिएगा।

आपके दूसरे पत्र को पढ़कर मैं तो बिल्कुल ही स्तब्ध हो गया। मेरा तो इस तरफ स्वप्न में भी विचार नहीं गया था। आपने क्यों और कैसे ऐसा विचार किया, यह मेरी समझ में नहीं आता। यह आपकी उदारता है कि आप मेरे संबंध में ऐसे साधु भाव रखते हैं। मैं तो इनके योग्य अपने को कभी भी नहीं समझ सकता। किन शब्दों में मैं आपका धन्यवाद दूं, यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है। मैं तो अब किसी काम के लायक नहीं रह गया। ५० वर्ष के परिश्रम करते रहने के अभ्यास के कारण ही चला जा रहा हूं, पर अब काम नहीं होता। बकाया पड़ जाता है, जो मुझे पसंद नहीं है। थक जाता हूं। झुंझलाने भी लगता हूं। वास्तव में १० दिसंबर को मेरा यहां का ५ वर्ष का कार्यकाल समाप्त हो गया। मुझे आशा थी कि छुट्टी मिल जाएगी और मैं यहां से चला जाऊंगा, पर निर्वाचन आ रहा है। इस कारण राष्ट्रपतिजी का आदेश हुआ कि 'अभी ठहरे रहो।' ऐसी अवस्था में तीन महीने और ठहर गया। इसी बात की प्रतीक्षा है कि चले जाने का दिन जल्दी आये और मुझे छुट्टी मिले।

आपकी असीम कृपा है कि आपने मुझे राष्ट्रपति-भवन में बैठाना चाहा है। ऐसा विचार आप छोड़ दें। मैं इसके योग्य नहीं हूं। इस अवस्था में कुछ कर भी नहीं सकता। अपनी आर्य-संस्कृति और परंपरा का भी मैं भक्त हूं। एक अवस्था के बाद वानप्रस्थ लेना ही चाहिए और कम उमर के लोगों को जिम्मेदारी के स्थानों पर बैठाना चाहिए। ऐसा न करने के ही कारण आज कांग्रेस की आंतरिक स्थिति इतनी गड़बड़ा गयी है और आपस के राग-द्वेष के कारण सारी संस्था ही संकट में पड़ गयी है। यदि मेरे ऐसे बूढ़े हटें और ४० से ५५ वर्ष के लोगों को उन स्थानों पर बैठाया जाए जिनको हम छेके हुए हैं, तो काम भी अच्छी तरह चले और हम बूढ़ों की तरफ किसी को मत्सर भी न हो। साथ ही परामर्श आदि के लिए और बिना शुल्क के काम करने के लिए भी हम सब जब तक जीते रहेंगे मौजूद ही रहेंगे। अस्तु, जो कुछ हो, मेरी तरफ से तो आप यह विचार पूरी तरह हटा लीजिए।

इस प्रसंग में एक बात कहनी बहुत जरूरी है। उत्तर और दक्षिण का बड़ा संघर्ष हो रहा है। राष्ट्रपति के पद के लिए ढेवड़ बांध देना चाहिए। एक बार उत्तर और एक बार दक्षिण से राष्ट्रपति को लेना चाहिए। कभी-कभी पच्छिम से अर्थात गुजरात, महाराष्ट्र से भी लेना होगा। यदि हम ऐसा नहीं करेंगे, तो देश खंड-खंड में विभक्त हो जाएगा। एकता जाती रहेगी तब स्वतंत्रता को कौन बचा सकेगा? इसमें कोई संदेह नहीं कि श्रीराजेन्द्रप्रसाद-जी के ऐसा कोई नहीं मिल सकता। वे अपने देश के सच्चे प्रतीक हैं। पूर्वकाल और वर्तमान काल का उनमें बड़ा सुंदर समन्वय है। यूरोपीय संस्कारों का भी उन्हें ज्ञान है और इनका भी उनपर प्रभाव है। ऐसा राष्ट्रपति तो नहीं मिलेगा, पर काम तो चलाना ही पड़ेगा। राजाजी को राष्ट्रपति बनाया जा सकता है। उनमें बहुत-से ऐसे गुण हैं, जो उन्हें इस उच्च पद के योग्य बनाते हैं, पर अब तो उनको कोई स्वीकार नहीं करेगा। ऐसी अवस्था में डॉक्टर राधाकृष्णन का ही वहां जाना ठीक होगा। अधिक क्या लिखूं? टंडनजी से मैं दो बार मिलने प्रयाग गया था। बड़ा दुःख है कि वे इस समय असहाय हो कर रोग-शय्या का सेवन कर रहे हैं। संभवतः उस पर से उठेंगे नहीं। अपने कष्टों का वे साहस से सामना करते हैं। भोजन, औषध आदि के संबंध में अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ हैं। मुझे तो आश्चर्य होता है कि वे कैसे चले जा रहे हैं। उनका आध्यात्मिक बल है, जो उन्हें संभाले जा रहा है। ईश्वर उनको स्वस्थ करें और उन्हें शारीरिक पीड़ा से बचायें।

आपको मैं सच्चे हृदय से बारबार धन्यवाद देता हूं कि आपने मुझे लिखा। वास्तव में आपके पत्र से मुझे आश्चर्य हुआ। यद्यपि आपके नाम और कृतियों से तो मैं बहुत दिनों से परिचित रहा, पर परस्पर का संपर्क तो कभी-कभी ही होता रहा, तथापि आपने मेरे संबंध में ऐसे भाव रखे, यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है, पर वास्तव में आपको धोखा हो रहा है। मालूम पड़ता है कि मैं बहुत ही उच्चकोटि का मक्कार हूं, क्योंकि इसी प्रकार का धोखा बहुत-से लोगों को मेरे बारे में रहा है। मैं वैसा नहीं हूं जैसा लोग समझते हैं। मैं तो एक बहुत ही साधारण-सा मनुष्य हूं, जो अपना दिन भर का कर्तव्यपालन करना जानता है और रात्रि को सो रहता है। मेरे में कोई और गुण नहीं है, और न मैं किसी कार्य के योग्य ही हूं। मुझे तो यही आश्चर्य आता रहा कि जवाहरलालजी ने मुझे क्यों बारबार पकड़ा और भिन्न-भिन्न कांग्रेस और शासन के पदों पर जबरदस्ती रखा। अब तो मैंने उनसे भी आग्रह कर दिया है कि मुझे छुट्टी मिलनी चाहिए। वे चाहे जब तक काम करते जाएं, पर मैं नहीं कर सकता। मेरी समझ में तो उन्हें भी हटना चाहिए। मैंने उनसे कई बार यह कहा भी, पर वे

प्रस्ताव स्वीकार नहीं करते। लाचारी है। ईश्वर उनको पर्याप्त शक्ति दें, जिससे वे अपने भयंकर बोझ को वहन कर सकें। वास्तव में, आपका हृदय अत्यधिक उदार है। ईश्वर आपको सदा सुखी रखे। आपके ऐसे सज्जनों को देखकर आशा होती है कि अभी संसार में साधुता और स्वच्छता है—बिलकुल गायब नहीं हो गयी है।

आशा है, आप स्वस्थ और प्रसन्न होंगे। सब मित्रों से मेरा यथोचित अभिवादन कह दीजिएगा।

सस्नेह सधन्यवाद
सदा आपका
श्रीप्रकाश

मुझे ऐसे ही उत्तर की आशा करनी चाहिए थी।

महाराष्ट्र के राज्यपाल-पद से अवकाश लेने के बाद हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के प्रथम-शासन-निकाय के अध्यक्ष के नाते उन्होंने जो एक पत्र मुझे लिखा था, उसमें यू. को. बैंक के काम की भूरि-भूरि एवं बिड़ला-बंधुओं की प्रशंसा की है :

प्रियवर नमस्कार।

आपका ५ अक्टूबर का कृपा-पत्र मिला। अनेक धन्यवाद। उसके साथ आपने यूनाइटेड कमर्शियल बैंक वालों का भी पत्र भेजा है। मैं फौरन ही श्री गोपालचन्द्र जी को लिख रहा हूं। अवश्य ही वे उचित कारवाई करेंगे। मेरा निज का भी सब पैसा-रुपया उसी बैंक में रहता है और मैं तो उनके व्यवहार और कार्यकुशलता से बहुत मुग्ध हूं। वास्तव में बिड़ला-बंधुओं के सभी कारखाने प्रशंसा के योग्य हैं। उनके कुटुंबीजनों की तो पर्याप्त प्रशंसा नहीं ही की जा सकती। वास्तव में अद्‌भुत कुल है। अपने देश में तो शायद ही ऐसा दूसरा होगा। सबके साथ ही इनके निज के सब व्यापारी कोठियों के व्यवहार बड़े अच्छे, सच्चे और सुंदर होते हैं।

सधन्यवाद, आपका
श्रीप्रकाश

मैंने श्रीघनश्यामदास बिड़ला द्वारा लिखित 'वे दिन' नामक पुस्तिका श्रीप्रकाशजी को भेजी थी। उन्होंने उसका उल्लेख करते हुए १ जनवरी, १९६३ को लिखा:

सेवाश्रम, वाराणसी-१
१-१-१९६३

प्रियवर हरिजी, नमस्कार।

आपका २६ दिसम्बर का कृपापत्रमय श्रीघनश्यामदास की पुस्तिका 'वे दिन' के घूमता-फिरता मुझे कल यहां काशी में अपने घर पर मिला। अनेक धन्यवाद। कुतूहलवश मैंने पुस्तिका को फौरन ही पढ़ना आरंभ किया और एक सांस में पढ़ गया। बहुत ही रोचक और शिक्षाप्रद पाया। मैं घनश्यामदासजी को भी लिखूंगा। आपने इसे जो मेरे पास भेजने का जो कष्ट किया एतदर्थ अनुगृहीत हूं। आशा है,१२ तारीख को प्रयाग में आपसे मुलाकात होगी। मैं यहां २४ नवंबर को ही कुछ विवादों के सिलसिले में आया। बीमार पड़ गया। इनफ्लूएंजा ने जकड़ा। हफ्तों पड़ा रहा।

शिकाकाई, आमला, ब्राह्मी
सुन्दर बालों का सदियों पुराना रहस्य,
हेलीन कर्टिस के
टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू में
इस में शुद्ध शिकाकाई की मृदु दायक सफ़ाई और आमला ब्राह्मी आदि जड़ी-बूटियों की स्वास्थ्यप्रद केशवर्धक क्षमता का सुंदर संगम होने के कारण यह आपके बालों को मुलायम, सुगंधित और सुशोभित रखता है और उनमें स्वाभाविक निखार ला देता है।
टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू इस्तेमाल कीजिए और प्यार से अपने बालों की देखभाल कीजिए।
यह केवल शैम्पू ही नहीं है, एक संपूर्ण सौंदर्य प्रसाधन है।
TIARA
SHIKAKAI
HERB
SHAMPOO
दो साईज़ों में मिलता है
१५० मि.ली. तथा ७० मि.ली.
न टूटने वाले साफ़ प्लास्टिक की बोतल में
जे. के. हेलीन कर्टिस लि., बम्बई-४०० ००१ का एक उत्कृष्ट उत्पादन
ARMS-HC-13-708-HIN

बड़ा कमजोर हो गया। इस बीच कुटुंब पर भयानक विपत्ति पड़ी। मेरे छोटे चचेरे भाई सूर्यप्रताप ४८ वर्ष की अल्पावस्था में चले गये। लकवा का प्रकोप हुआ। हम सब दुःखी हैं। नये बुरे कानूनों ने पुराने कुटुंबों को भयावह संकट में डाल दिया है। कृत्यादि से कल छुट्टी होगी। कानूनी गुत्थियों के कारण यहीं बेतरह फंस गया हूं। ईश्वर देश के नेताओं को सद्बुद्धि दें और हम सब का कल्याण करें। फरवरी में देहरादून लौटूंगा।

आप प्रसन्न होंगे।

सधन्यवाद आपका
श्रीप्रकाश

एक बार काशी में जब मैं उनके निवास-स्थान पर जाकर मिला, उन्हें खिन्न मुद्रा में देखा। अकेले बैठे थे। कहने लगे, "मेरे आगे ही मेरी सात पीढ़ियों की कमाई समाप्त हो गयी। बीते दिनों की याद आती है। इतने बड़े मकान की रखवाली कर रहा हूं एक स्वामिभक्त कुत्ते की तरह। बिजली का कनेक्शन दो दिन पहले काट दिया गया था कि हमने बिल का पैसा नहीं चुकाया। कैसा अंधेर! पैसा तो उसी दिन भिजवा दिया था, फिर भी अंधेरे में रातें काटीं दो दिन।"

अंतिम भेंट कलकत्ते में एक नवनिर्मित अस्पताल में हुई थी। प्रोस्टेट का आपरेशन कराने के लिए वे तीन दिन पहले अस्पताल में दाखिल हुए थे। मैं मिला उसके दूसरे दिन आपरेशन होना था। कितने प्रेम से मिले और घरेलू तथा देश की गिरावट के बारे में जो बड़ी व्यथा के साथ बातें की, वे आज भी याद आ रही हैं। जीवन-संध्या के दिनों में अनैतिकता एवं देश की अधोगति देखकर और सुनकर उनका देशानुरागी हृदय व्यथित रहता था। कई लेख इस विषय पर उन्होंने पत्र-पत्रिकाओं में लिखे थे। निराश थे। सबसे बड़ी व्यथा उनके मन में यह थी कि देश और समाज का कितनी तेजी से ह्रास और पतन हो रहा है और वे कुछ नहीं कर पा रहे। मैं जब मिला उससे आधा घंटा पहले प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी भी उनसे मिलने वहां गयी थीं।

कहने लगे, "वे दिन याद आ रहे हैं जब खादी के थान कंधे पर रखकर बनारस की गलियों में घूम-घूमकर मैं बेचता था। आज खादी का विस्तार- क्षेत्र तो बहुत बढ़ गया है, पर तब की वह भावना कहीं देखने में नहीं आ रही।" बाबू शिवप्रसाद गुप्त द्वारा निर्मित काशी के 'भारतमाता-मंदिर' का जिक्र किया, तो आंखों में आंसू छलक आये। काशी-विद्यापीठ के बारे में भी व्यथाभरी कई बातेंकीं। अस्वस्थ थे और बातों का तांता टूट नहीं रहा था। मैं नमस्कार करके जाने को उठ खड़ा हुआ। दोनों हाथ पकड़ लिये और बोले कि अस्पताल का पता मैं दे रहा हूं, मुझे अवश्य पत्र लिखना। घनश्यामदासजी (बिड़ला) मिलें तो उनको मेरा नमस्कार कह देना।

—एफ १३/२, माडल टाउन,
दिल्ली-११०००९

● अमरकांत

आकाश नीला और खुशनुमा है। लगभग पांच बजे हैं और धूप भाग रही है। प्रतुल एक चितकबरे खरगोश को अपने दोनों हाथों में लेकर घर से निकला। वह काला नेकर, सफेद कमीज और किरमिच के सफेद जूते पहने था। बाहर कदम रखते ही उसने अपनी प्रफुल्लित दृष्टि चारों ओर दौड़ायी। कुछ दूर आगे बढ़ने पर तो उसे खूब मजा आने लगा। उसने दो-तीन बार मुंह से सीटी की आवाजें निकालीं, खरगोश की पीठ सहला-सहला कर 'टिकू-टिकू' पुकारा और अंत में उसे नीचे जमीन पर रखकर तथा कंकड़ और ढेले बीन-बीनकर किसी काल्पनिक प्रसिद्ध क्रिकेट-खिलाड़ी के विरुद्ध जबरदस्त 'गेंदबाजी' करने लगा।

खरगोश हरी घास पर तेजी से दौड़ने लगा। उस बस्ती में दिन भर के सन्नाटे के बाद अब चहल-पहल दिखायी दे रही थी। बच्चे स्कूलों से लौटने के बाद बाहर खेल-कूद रहे थे और कुछ लोग स्कूटरों या साइकिलों पर दफ्तरों से घर भी पहुंच गये थे। गृहपत्नियां चटक, खुशनुमा साड़ियां पहन, जूड़ों को संवार तथा भरे-भरे सजीव होंठों पर लिपस्टिक पोतकर या तो बरामदों या लानों में चहलकदमी कर रही थीं अथवा अपने ही दरवाजे के सामने खड़ी होकर पड़ोसिनों से बतकूचन कर रही थीं।

प्रतुल ने कई काल्पनिक खिलाड़ियों को आउट करने के पश्चात खरगोश की तलाश में इधर-उधर देखा। खरगोश कुछ दूरी पर स्थित एक झाड़ी के पास पहुंचकर ठिठक गया था और घास को सूंघ रहा था। प्रतुल छलांगें लगाकर सीटी बजाता हुआ उधर लपका। उसने खरगोश को हाथों में उठाते हुए पुचकारती आवाज में कहा, "टिकू, बड़ा पाजी है यार तू!"

वह खरगोश को लेकर चल पड़ा। बस्ती बहुत बड़ी नहीं थी। वह उत्तर से दक्षिण लंबाई में फैली थी। वह नयी बनी थी। वहां अधिकतर शिक्षित, प्रतिष्ठित

एवं उच्च नौकरीपेशा लोग रहते थे। प्रोफेसर, अध्यापक, लेखक, पत्रकार, इंजीनियर, ऐडवोकेट, एकाउंटेंट तथा अन्य कई किस्म के उच्चाधिकारी आदि। उनमें से हर व्यक्ति को इस बात पर गर्व था कि वास्तव में देश का कर्णधार वही है, पर जितनी प्रतिष्ठा एवं सम्मान उसको मिलना चाहिए, वह उसको इस समाज में प्राप्त नहीं है। उनमें से लगभग हर व्यक्ति अच्छा खाता था, अच्छा पहनता था, आधुनिक फैशन से रहता था, बीवी के साथ सैर-सपाटे करता था, अपने बच्चों को अंगरेजी स्कूलों में पढ़ाता था और राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रबल समर्थक था। लगभग हर व्यक्ति का विश्वास था कि उसकी राजनीतिक और सामाजिक समझ बहुत मौलिक एवं दूरदर्शितापूर्ण है और हरेक के पास देशोत्थान की अपनी-अपनी मौलिक योजना भी थी। इस प्रश्न पर तो उनमें अद्‌भुत एकता थी कि सभी अपने बच्चों को शिक्षित, परम अनुशासनप्रिय, सभ्य, सुसंस्कृत, महान और कलक्टर, डॉक्टर तथा इंजीनियर बनाना चाहते थे।

प्रतुल की ख्याति उस बस्ती में अच्छी नहीं कही जा सकती। वह एक कालेज के साधारण अध्यापक का लड़का था, जिसने बड़ी कठिनाई से वहां दो कमरों का एक मामूली मकान बनवाया था, जो अनधिकार चेष्टा है, यह बहुतों का मत था। पढ़ने-लिखने में प्रतुल बुरा नहीं था, पर खेल-कूद में उसकी तबीयत जितनी लगती थी, उतनी किसी चीज में नहीं। खेल-कूद भी कैसे? विचित्र फूल और तितलियों की तलाश में डग-डग घूमना, लट्टू नचाना और गोलियां खेलना। उसको खास तौर पर पशु-पक्षियों और भिखमंगों से बहुत प्यार था। वह अपने मां-बाप का इकलौता लड़का था, पर उसके शौकों से वे बहुत परेशान थे। उसी की जिद्द पर घर में तोता-मैना पाले गये थे और शीशे के जारों में रंगीन मछलियां भी पाली जा रही थीं। पर सबसे अधिक कठिनाई उस समय होती,

लेखक
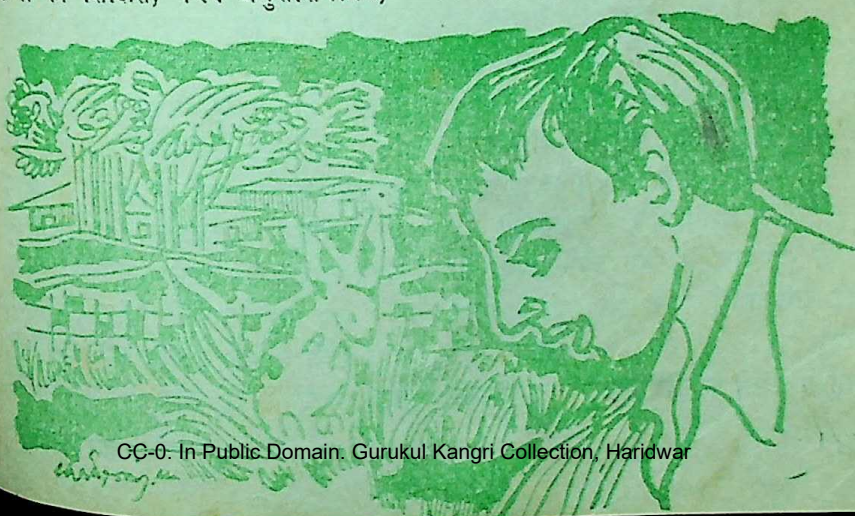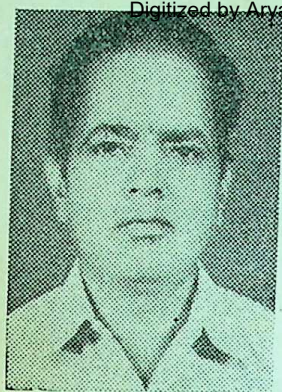
जब वह किसी आवारा पिल्ले या बिल्ली के बच्चे को उठा लाता। वह दिन-रात उन्हीं में व्यस्त रहने लगता। एक बार वह सड़क के किनारे पड़े एक भिखमंगे को, जो भूख और रोग से त्रस्त था, देखकर बड़ा दुःखी हुआ। उसकी सारी दिलचस्पियां भिखमंगे में ही केंद्रित हो गयीं। जब फुरसत होती, वह भिखमंगे के पास पहुंच जाता, घर से उसके लिए खाना ले जाता, उसको खिलाता, उसे पानी पिलाता, अपने पैसे से उसके लिए कुछ खरीद देता। उसके मां-बाप को बड़ी चिता हुई और उन्होंने चुपके से उस भिखमंगे को अस्पताल भिजवा दिया। दूसरे दिन जब प्रतुल ने भिखमंगे को वहां नहीं देखा तो वह अत्यधिक उदास हो गया और कई दिनों तक उदास रहा। यही नहीं, उसमें संग्रह-वृत्ति भी जबरदस्त थी और इस समय उसके पास बीस फाउंटेनपेन, पचास पेंसिलें, अनगिनत रबड़, लट्टू, फूल आदि थे। खरगोश भी वह अपनी ननिहाल से जिद करके लाया था और उसको प्राण से भी अधिक प्यार करता था। पर इन्हीं सब आदतों की वजह से बस्ती के लोग उससे नाराज रहते थे और अपने बच्चों को उसके साथ खेलने से मना करते थे। क्या सभ्य लड़कों के यही लक्षण हैं? न कोई अनुशासन और न कोई शिष्टाचार!

प्रतुल उस बस्ती के बायें किनारे से होकर जा रहा था। बस्ती के खत्म होने पर एक पार्क पड़ता था, जिसके सामने एक बड़ी कोठी थी। कोठी के बड़े फाटक पर एक चौकीदार खड़ा रहता था। वह कोठी शहर के एक बहुत बड़े रईस रामलाल की थी, जिनके शहर में कई मकान थे। अपार संपत्ति। कई कारें, नौकर-चाकर। वे शहर के बड़े ही प्रभावशाली व्यक्ति थे और कई राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं के अध्यक्ष तथा संरक्षक थे।

वह पार्क प्रतुल के लिए विचित्र कुतूहल एवं आकर्षण का स्थान बन गया था। पिछले दिन उसने वहां एक अत्यंत खूबसूरत और प्यारी-सी बच्ची देखी थी, जो एक चपरासी के साथ वहां टहलने आयी थी। वह लड़की बार-बार उसके खरगोश को लालच-भरी दृष्टि से देखा करती थी। प्रतुल उसको ललचाने के लिए बार-बार खरगोश को उसके पास ले गया था। प्रतुल उस लड़की को और भी ललचाना चाहता था। इससे उसको अपने प्यारे खरगोश पर बड़ा गर्व होता था।

जब प्रतुल पार्क में पहुंचा तो लड़की वहां पहले से मौजूद थी। आज लड़की के साथ कोई गोरी और अधेड़ स्त्री थी,

जो कीमती साड़ी पहने थी। यह स्त्री रईस रामलाल की पत्नी थी और छोटी - सी बच्ची उसकी पुत्री थी। स्त्री के हाथ में एक जंजीर थी, जिससे एक छोटा-सा झबरा कुत्ता बंधा था। विदेशी जाति का वह कुत्ता बड़ा प्यारा था, जिसको देखकर प्रतुल की आंखें चमकने लगीं। ऐसा प्यारा कुत्ता तो उसने देखा तक न था। कुत्ते के लिए उसका मन ललचने लगा।

प्रतुल जब उस लड़की के पास पहुंचा तब उसकी मां ने उसे अपने पास बुलाया।

"यह खरगोश कहां से मिला, लड़के ?" स्त्री ने पूछा।

"मैं अपने मामा के यहां से लाया हूं जी! वह पटने में रहते हैं।"

"खरगोश मुझे दे सकते हो?"

"क्यों ?" प्रतुल तन गया।

"यह खरगोश बहुत प्यारा है और मेरी बेबी को बहुत पसंद है। तुम जितने रुपये कहोगे, उतने दूंगी। पचास रुपये मैं तुम्हें दे सकती हूं।"

"मुझे रुपये नहीं चाहिए जी।"

"फिर तुम्हें क्या चाहिए? जो तुम कहो। भैया, यह बेबी को बहुत पसंद है।"

"मुझे यह कुत्ता दे दीजिए।" प्रतुल ने साहस करके कहा।

स्त्री गंभीर हो गयी और उसको रुखाई से देखने लगी, पर उसकी बेबी जिद करने लगी, "मम्मी, दे दो न।" कुछ देर बाद वह स्त्री मुसकराने लगी। बोली, "अच्छी बात है, यह कुत्ता विदेशी जाति का है और बड़ी मुश्किल से मिला है। इसकी कीमत भी काफी है, पर मेरी बच्ची को यह खरगोश बहुत पसंद है इसलिए यह मुझे हर कीमत पर चाहिए ही। तुम खरगोश दे दो, कल मैं कुत्ता तुम्हारे यहां पहुंचवा दूंगी। तुम मुझे अपना पता बता दो।"

कुत्ते के लालच में प्रतुल ने खरगोश दे दिया। वह बहुत खुश था। कितना

ठाकरसी के
'टेरीन' ब्लेंडेड फॅब्रिक्स
सूटिंग्स ☐ शर्टिंग्स ☐ प्रिंट्स
TF
ठाकरसी
ग्रुप ऑफ मिल्स
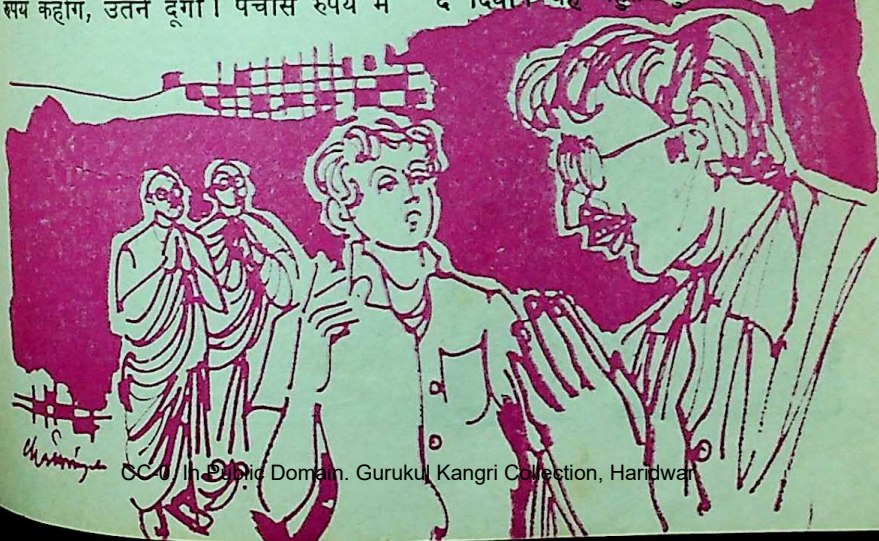
प्यारा कुत्ता है! जब वह घर चला तो उसका हृदय गेंद की तरह उछल रहा था।

दूसरे दिन शाम के धुंधलके में उस बस्ती में एक अजीब दृश्य देखने में आया। एक बढ़िया-सी फिएट कार प्रतुल के दरवाजे पर आकर रुकी। रामलाल की पत्नी कार को ड्राइव कर रही थीं। पीछे की सीट पर वह विलायती कुत्ता था। उसके साथ बहुत-सा सामान था—कुत्ते के कपड़ों का एक बक्सा, उसके खाने-पीने के बरतन, रुमाल, साबुन, पाउडर, दवाइयां आदि। उसके सामान में बिस्तरा एवं दो चार्ट भी थे, जिनमें से एक कुत्ते की वंश-परंपरा तथा दूसरा उसके उपयुक्त भोज्य-पदार्थों से संबंधित था। प्रतुल की खुशी का ठिकाना नहीं था। वह कभी बाहर जाता और कभी भीतर। प्रतुल के पिता आश्चर्यचकित थे! यह क्या बवाल है? फिर भी वे गद्गद थे कि इतने बड़े आदमी की पत्नी स्वयं उनके यहां आयी हैं। वे किसी से कहलवा सकती थीं और यहां से कोई भी जाकर ला सकता था, पर बड़े आदमियों की बात बड़ी होती है। यही नहीं, सारी बस्ती में तहलका मच गया और कुछ बच्चों और बड़े लोगों की भीड़ भी इकट्ठी हो गयी।

प्रतुल ने अपने कमरे में ही उस कुत्ते को रखा। उसकी आंखें प्रसन्नता से चमक रही थीं। उसने स्वयं कुत्ते को खाना खिलाया, पानी पिलाया, टहलाने के लिए ले गया। सोने के पहले कुत्ते की सफाई की, उसको पाउडर लगाया और उसका बिस्तर लगाकर उसे सुला दिया। वस्तुतः वह इतना उत्तेजित था कि रात भर उसे ठीक से नींद भी नहीं आयी।

लेकिन दूसरे दिन सवेरे लगभग आठ बजे से ही प्रतुल के घर में लोगों का आगमन शुरू हो गया। उसमें वे सभी सभी बड़े-बड़े अफसर थे, जो प्रतुल के पिता को देखकर मुंह फेर लेते थे या व्यंग्यपूर्वक मुसकरा पड़ते थे। वे लोग आ-आकर प्रतुल के पिताजी को बधाइयां देने लगे। पहले लोग बधाइयां देते, फिर कुत्ते की प्रशंसा करते।

"भई, ऐसा प्यारा कुत्ता तो मैंने देखा नहीं!"

"और बड़प्पन देखिए, यहां खुद पहुंचाने आयीं!"

"आपका लड़का भी होनहार है। मैं तो पहले से ही जानता था ..."

प्रतुल के पिता पागल की तरह उनको देखते और बेवकूफ की तरह सिर हिलाते।

शाम को भी यही सिलसिला शुरू हुआ और रात देर तक चलता रहा।

प्रतुल पीछेवाले कमरे में अकेले सिर लटकाकर बैठा था। चारपाई से नीचे लटके हुए उसके पैर निरर्थक ढंग से हिल रहे थे। उसकी आंखों से चमक गायब हो गयी थी। कुत्ते के प्रति उसका सारा प्यार और उत्साह भी समाप्त हो चुका था। उसे कुत्ते पर बेहद गुस्सा आ रहा था।

—२०/५ करेलाबाग कॉलोनी, इलाहाबाद

मधुमेह रोग से बचना आपके हाथ में

● डॉ. ओमप्रकाश शर्मा

मधुमेह रोग नया नहीं है। प्राचीन काल में सुश्रुत ने इस रोग की व्याख्या की थी और इसके उपचार के लिए व्यायाम की उपयोगिता बतायी थी। जब रक्त में शर्करा (ग्लूकोज) की मात्रा अधिक हो जाती है (हाइपरग्लाइसीमिया) और फलस्वरूप पेशाब में शर्करा छन-छनकर आने लगती है तो उसे मधुमेह रोग कहते हैं। हम जो भोजन करते हैं उसका अधिकांश भाग ग्लूकोज के रूप में रक्त में मिल जाता है। यह ग्लूकोज रक्त के ही माध्यम से विभिन्न अंगों में पहुंचकर उन्हें ऊर्जा प्रदान करता है। इसका कुछ भाग 'ग्लाइकोजन' के रूप में यकृत तथा मांसपेशियों में जमा हो जाता है। रक्त में ग्लूकोज की मात्रा सामान्यतः स्थिरप्राय रहती है (प्रति १०० मि. ली. रक्त में ८० मि. ग्रा. से १०० मि. ग्रा. तक)। इसे स्थिर रखने में इंसुलिन का बहुत बड़ा योगदान रहता है, जो क्लोम (पैंक्रियाज) नामक ग्रंथि में बनती है। इंसुलिन की कमी से ही रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है तथा पेशाब में भी शर्करा छन-छनकर (ग्लाइकोसूरिया) आने लगती है।

मधुमेह के कारणों में पैतृकता (हेरीडिटी) का विशेष स्थान है। यदि माता-पिता को यह रोग हो तो बच्चों को भी होने की आशंका रहती है। ऐसे बच्चों का वजन अधिक नहीं बढ़ने देना चाहिए और ३० वर्ष के बाद नियमित रूप से उनके रक्त की जांच करवाते रहना चाहिए।

वैसे तो यह रोग किसी भी उम्र में हो सकता है, किंतु अधिकांशतः ३५ से ६० वर्ष की उम्र के बीच के व्यक्ति ही इसके शिकार होते हैं। स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को यह रोग अधिक तथा तुलनात्मक रूप में कमउम्र में ही हो जाता है।

आलसी तथा शारीरिक परिश्रम कम करनेवाले लोग विशेष रूप से इसके शिकार होते हैं। मेहनत करनेवाले या मजदूर वर्ग के लोग प्रायः इससे बचे रहते हैं। ग्रामीणों के बजाय शहरी इसकी जकड़ में अधिक आते हैं।

मोटापा मधुमेह को आमंत्रित करता है। इसी प्रकार हृदय-रोग, उच्च रक्त-चाप और पित्ताशय की बीमारियां भी इसके अन्य साथी हैं।

यदि इंसुलिन शरीर की आवश्यकता से कम मात्रा में बने तो यह रोग हो जाता है। बचपन में होनेवाला मधुमेह 'जुविनाइल डायबिटीज' कहलाता है और उसका एकमात्र उपचार इंजेक्शन द्वारा जीवनपर्यंत इंसुलिन देते रहना है। वृद्धावस्था में मधुमेह होने का कारण प्रायः इंसुलिन को बनानेवाली कोशिकाओं में कमजोरी आ जाना है। इसके उपचार के लिए बाहर से इंसुलिन देना आवश्यक नहीं है। यह कुछ अन्य दवाओं से भी, जिन्हें 'ओरल हाइपोग्लाइसीमिक एजेंट' कहते हैं, ठीक हो जाती है। शरीर में इंसुलिन को नष्ट करनेवाली 'इंसुलिन ऐंटीबाडीज' भी मधुमेह का कारण बन जाती हैं।

क्लोम (पैंक्रियाज) तथा पीयूष-ग्रंथि (पिट्यूटरीग्लैंड) के रोग भी मधुमेह का कारण बन जाते हैं।

आधुनिक युग में मधुमेह के रोगियों की संख्या बढ़ने का एक कारण मानसिक तनाव भी है, किंतु इस तरह होनेवाला मधुमेह प्रायः अस्थायी होता है, जो मानसिक तनाव दूर होने पर जाता रहता है।

मधुमेह रोग के लक्षण

आजकल चिकित्सा-विज्ञान की प्रगति के कारण इस रोग का निदान लक्षणों के स्पष्ट रूप से प्रकट होने से पूर्व ही कर लेना संभव है। इस रोग में शुरू-शुरू में रोगी को अधिक प्यास लगती है। कुछ रोगियों को भूख अधिक लगती है। कुछ को रात में दो-तीन बार लघुशंका के लिए उठना पड़ता है। इसके अतिरिक्त पेशाब की मात्रा भी बढ़ जाती है। जहां पेशाब करते हैं वहां चीटियां लग जाती हैं। कभी-कभी नजर कमजोर होती जाती है। चश्मे का नंबर प्रायः हर साल बदलवाना पड़ता है। कुछ लोग हाथ-पैरों में कमजोरी या सनसनाहट की शिकायत करते हैं। रात में बार-बार शौच के लिए जाना भी इस रोग का लक्षण है। गुप्तांगों में खुजली तथा जननेंद्रिय में दरारें पड़ जाना भी इस रोग के प्रारंभिक लक्षण हैं। इस रोग के फलस्वरूप शरीर का रोगों के प्रति प्रतिरोध कम हो जाता है। फोड़े-फुंसी निकलने लगते हैं। मामूली जख्म भी देर से भरता है।

रोग का निदान

मधुमेह के निदान के लिए सबसे पहले पेशाब तथा रक्त की जांच करानी चाहिए। पेशाब की जांच करने का तरीका सरल है। इसे 'बैनेडिक टेस्ट' कहते हैं। कांच की एक परखनली में ५ मि. लीटर बैनेडिक घोल लेकर उसमें पेशाब की आठ बूंदें डाल दी जाती हैं। इस मिश्रण को गरम करके ठंडा किया जाता है। ऐसा करने पर यदि मिश्रण का रंग बदल जाए तो यह मधुमेह का द्योतक है। पेशाब में यदि शर्करा न हो तो रंग नीला ही रहता है। यदि रंग हरा हो जाए तो शर्करा .५ प्रतिशत, पीला हो तो १ प्रतिशत, मटमैला हो तो १.५ प्रतिशत और लाल हो तो २ प्रतिशत या उससे अधिक शर्करा होती है।

इस टेस्ट के द्वारा लगभग ९५ प्रतिशत सही निदान हो जाता है। शत-प्रतिशत निदान के लिए रक्त में ग्लूकोज की मात्रा का मापन करना पड़ता है। इन टेस्टों को 'ब्लड शुगर फास्टिंग' व 'पोस्ट प्रैंडियल' तथा 'जी. टी. टी.' के नाम से जानते हैं।

रोग का उपचार

मधुमेह के उपचार में सही वजन, विशेष आहार तथा व्यायाम का भी उतना ही महत्त्व है जितना दवाओं का। मध्यावस्था में मोटापे के कारण जो मधुमेह होता है उसमें वजन कम करने मात्र से अक्सर उपचार हो जाता है। जहां तक आहार का संबंध है, मधुमेह के रोगियों को चीनी का प्रयोग नहीं करना चाहिए या कम-से-कम करना चाहिए। चीनी, मीठी चाय या कॉफी, गरिष्ठ पकवान आदि से दूर रहना चाहिए। मीठे फल, जैसे आम, अंगूर आदि का भी प्रयोग कम ही करना चाहिए। तली हुई गरिष्ठ चीजें भी हानि-कारक होती हैं। प्रोटीनयुक्त पदार्थों जैसे दूध, दालें, पनीर, अंडा, मांस, मछली

वजन तालिका

(२५ वर्ष तथा उससे अधिक आयु की स्त्रियों के लिए)

कद फुट–इंच	वजन पौंड
४–११	११०–११८
५–०	११२–१२०
५–१	११४–१२२
५–२	११७–१२५
५–३	१२०–१२८
५–४	१२४–१३२
५–५	१२७–१३५
५–६	१३०–१४०
५–७	१३४–१४४
५–८	१३७–१४७
५–९	१४१–१५१
५–१०	१४५–१५५
५–११	१४८–१५८

(२५ वर्ष तथा उससे अधिक आयु के पुरुषों के लिए)

कद : फुट–इंच	वजन : पौंड
५–२	१२४–१३३
५–३	१२७–१३६
५–४	१३०–१४०
५–५	१३४–१४४
५–६	१३७–१४७
५–७	१४१–१५१
५–८	१४५–१५६
५–९	१४९–१६०
५–१०	१५३–१६४
५–११	१५७–१६८
६–०	१६१–१७३
६–१	१६६–१७८
६–२	१७१–१८४
६–३	१७६–१८९

आदि का प्रयोग लाभकारी है। हरी सब्जी तथा खट्टे फलों का प्रयोग भी उत्तम है।

दवाओं में प्रमुख है इंसुलिन। इसकी मात्रा रक्त तथा पेशाब में शर्करा की मात्रा के ऊपर निर्भर करती है। .५ प्रतिशत के लिए १० यूनिट, १ प्रतिशत के लिए २० यूनिट, १.५ प्रतिशत के लिए ३० यूनिट तथा २ प्रतिशत के लिए ४० यूनिट इंसुलिन दी जाती है। आवश्यकतानुसार इससे अधिक भी दी जा सकती है। आजकल खाने की भी कुछ दवाएं हैं जिनसे मधुमेह का उपचार किया जाता है। बाजार में ये दवाएं डायबिनीज, रेस्टीनान, डी. बी. आई., डायोनिल आदि नाम से आती हैं। इन दवाओं का प्रयोग डॉक्टर की सलाह से करना चाहिए।

जिनके माता-पिता को यह रोग हो चुका हो उन्हें अपना वजन नियंत्रित रखना चाहिए। उम्र और कद के हिसाब से कितना वजन होना चाहिए इसकी तालिकाएं आती हैं। वजन यदि बढ़ने लगे तो कुछ दिनों के लिए भोजन की मात्रा कम करके तथा व्यायाम के द्वारा वजन नियंत्रण में ले आना चाहिए। ३५ वर्ष की उम्र के बाद नियमित रूप से रक्त की जांच करवाते रहने से इस रोग से तथा इसके फलस्वरूप उत्पन्न होनेवाले उपद्रवों, जैसे आंखों पर कुप्रभाव (डायबिटिक रेटीनोपैथी) तथा गुर्दों, नाड़ियों आदि पर होनेवाले कुप्रभावों से बचा जा सकता है।

—सफ़दरजंग अस्पताल, नयी दिल्ली

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. रस्साकशी। २. किसी परिवारवाले ने हत्या की क्योंकि सीढ़ी का चार इंच धंसना बताता है कि उस पर पहले कोई नहीं चढ़ा। ३. प्रतिबिंब के लिए प्रकाश आवश्यक है जो पार्श्व से आता हो, अतः पहाड़ का प्रतिबिंब नजर नहीं आता। ४. तेरह पौंड छह शिलिंग, छह पौंड तेरह शिलिंग। ५. १,१५० रुपये, १,०२५ रुपये, ९७५ रुपये, ८५० रुपये। ६. हां, पांचवें मील तक सोहन कैसे जाएगा और दसवें मील पर सोहन का समय देखने मोहन कैसे जाएगा। फिर, मोहन को सिर्फ चार मील साइकिल चलानी है और सोहन को पांच मील! ७. बूंद। ८. सोहनलाल द्विवेदी, सियारामशरण गुप्त। ९. चांद बीबी का रोजा। १०. मंसूर अली खां पटौदी ने। ३६ टेस्ट मैचों में उन्होंने ७ जीते, १७ हारे और १२ अनिर्णीत रहे। ११. कर्नल सी. के. नायडू, चार टेस्टों का नेतृत्व इंगलैंड में। तीन मैच जीते एक अनिर्णीत। १२. लेनिन। १९६१ से १९६९ तक की अवधि में १,८७४ बार ये अनुवाद छपे। १३. ये संख्याएं मासिक चंदे की रकम हैं। ४८ का अर्थ है—चार रुपये मासिक, ६० का अर्थ है—पांच रुपये मासिक, आदि। १४. यहां भारत का प्रथम कृत्रिम उपग्रह भू-स्टेशन है। १५. दिएगो-गार्सिया। १६. इसरायल में बनी मुख्य पाइप लाइन जो जल पहुंचाती है।

वे शैतान को पूजते हैं

● शैला नाटू

शैतान, आम तौर पर, सभी धर्मों में घृणा और तिरस्कार का पात्र है और विश्वास किया जाता है कि उसे पूजने-वाले केवल किस्से-कहानियों में मिला करते हैं। यह सच नहीं है। तिगरिस नदी के किनारे, जहां तुर्की, सीरिया और ईराक की सीमाएं मिलती हैं, येज्दी नामक एक जाति रहती है, जो सदियों से ईश्वर की नहीं, शैतान की पूजा करती आ रही है।

तुर्की के मार्दिन प्रांत में हराबिया नामक एक गांव है। येज्दी वहीं रहते हैं। कद-काठी और वेशभूषा से येज्दी कुर्दों की भांति ही दिखायी देते हैं। उनकी भाषा भी कुर्दी है। चूंकि येज्दी पहले लंबी-लंबी दाढ़ी रखा करते थे, लोग उन्हें 'दाढ़ीवाले कुर्द' नाम से भी पुकारा करते थे। येज्दी कान और नाक के बाल भी बढ़ाये रहते हैं। मूलतः येज्दी परंपराप्रिय हैं और सदियों से चली आ रही परंपराओं को आज के अंत-रिक्ष युग में भी त्यागने के लिए तैयार नहीं।

एक बार एक सिपाही दो येज्दी चोरों का पीछा कर रहा था। उन दोनों की तुलना में वह कुछ कमजोर भी था, फिर भी उसने उनका पीछा करना नहीं छोड़ा। पीछा करते-करते वह एक खुले मैदान में जा पहुंचा। सिपाही को विश्वास था कि एक चोर के हाथ आते ही दूसरा आसानी से उसके हाथ आ जाएगा। सिपाही ने एक चोर के पास पहुंचकर उसके चारों ओर भूमि पर लकीर खींच दी। यह देखते ही वह येज्दी चोर घबरा उठा और ठिठककर खड़ा हो गया। लगता था, जैसे उसके चारों ओर किसी ने आग का घेरा खड़ा कर दिया है। उसे वहीं छोड़ सिपाही ने दूसरे चोर का पीछा करना शुरू किया और अंत में उसे भी उसी प्रकार पकड़ने में सफल हो गया। सिपाही की सफलता का कारण येज्दी चोरों का यह विश्वास था कि भूमि पर पड़ी लकीर को पार करना पाप है।

येज्दी भूमि को अत्यंत पवित्र मानते हैं और उस पर कभी थूकते नहीं। न वे किसी और व्यक्ति को अपने गांव की भूमि पर थूकने देते हैं। धरती के साथ-साथ वे सूर्य और चंद्र की भी पूजा करते हैं। मोटे तौर पर येज्दी धर्म संसार के अनेक धर्मों का विचित्र मिश्रण है। उसमें यहूदी, ईसाई, इसलाम, पारसी धर्मों की अनेक बातें पायी जाती हैं, जैसे येज्दी यद्यपि

इसलाम धर्म को नहीं मानते, फिर भी उनके यहां मुल्ला-मौलवियों की परंपरा है। वे मुहम्मद साहब और इब्राहम को पैगंबर मानते हैं। येज्दी ईसाइयों-जैसा बपतिस्मा भी करते हैं और ईसामसीह को मानव रूप में देवदूत मानते हैं। येज्दी धर्म में हमें ईरानी और असीरियन तत्त्व भी

उनके अनुसार मलिक तौस ही ईसा और शेख अदी के रूप में पुनः अवतरित हुए थे। येज्दी धर्म में मलिक तौस की कल्पना एक मयूर के रूप में की गयी है। इसका एक कारण शायद यह है कि उन्होंने मोर के फैले पंखों को एक चक्र माना है, जो सतत जीवन और सूर्य का भी प्रतीक है। येज्दियों का
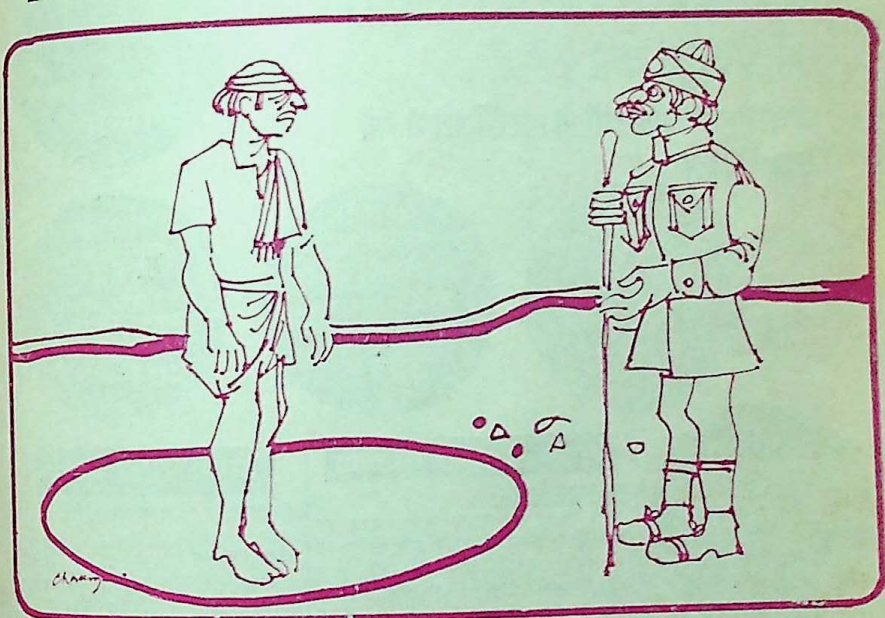
मिलते हैं। ईरान से उन्होंने अग्निपूजा ली है। येज्दी इस बात पर भी विश्वास रखते हैं कि उनकी सृष्टि मानव जाति से बिलकुल अलग की गयी है। वे आदम की औलाद नहीं हैं।

येज्दी लोग मलिक तौस नामक एक फरिश्ते को सर्व शक्तिमान मानते हैं।

विश्वास है कि मलिक तौस अपने अन्य छह साथियों के साथ संपूर्ण ब्रह्मांड पर शासन करते हैं। मलिक तौस सहित इन छह देवदूतों की मयूर के रूप में पूजा की जाती है। मयूर की ये प्रतिमाएं लोहे या कांसे की बनी होती हैं। उन्हें 'संजग' कहते हैं।

येज्दी अद्वैतवादी या द्वैतविरोधी हैं।

वे 'दुई' में विश्वास नहीं करते। येज्दियों की एक कथा के अनुसार एक बार शैतान को बेहद घमंड हो गया था कि वही सबसे अधिक शक्तिमान है। इस अभिमान के कारण शैतान को देवदूतों के प्रमुख पद से हटा दिया गया। बाद में शैतान को बहुत पश्चात्ताप हुआ। उसने ईश्वर के समक्ष अभिमान करने के अपने पाप को स्वीकार कर लिया। इस पर ईश्वर ने उसे क्षमा कर दिया और पुनः उसके पुराने पद पर आसीन कर दिया। शैतान संबंधी इसी धारणा के कारण शायद येज्दी शैतान-पूजक के रूप में बदनाम हो गये।

येज्दियों की धर्म पुस्तक का नाम है—यलवाह। उनकी एक और धर्म पुस्तक है, जिसका नाम है 'किताब अल जिलवाह' येज्दियों के अनुसार यह पुस्तक एक पर्वत के शिखर पर किसी रहस्यमय जगह में छिपाकर रखी गयी थी और उस तक कोई भी नहीं पहुंच सकता।

येज्दी लोगों में प्रचलित एक कथा के अनुसार किसी कारण से मलिक तौस को नरक का कारावास मिला। कहते हैं कि वह पतित हो गया था और इसी कारण उसे नरक में सात हजार वर्षों तक रहना पड़ा। इन वर्षों में मलिक तौस ने पश्चात्ताप का जीवन बिताया और दिन-रात आंसू बहाता रहा। वह इतना रोया कि उसके आंसुओं से नरक में रखे सात विशाल पात्र भर गये। बाद में इन्हीं आंसुओं से नरक की अग्नि सदा के लिए बुझा दी गयी। इस तरह लोगों को नरक की अग्नि से छुटकारा मिल गया। इस परोपकारपूर्ण कार्य के लिए मलिक तौस को स्वर्ग में स्थान दिया गया। जिन दिनों मलिक तौस नरक में था, उन दिनों उसकी भेंट ल्यूसिफर नामक एक अन्य दूत से हुई। ल्यूसिफर भी नरक में कारावास का जीवन बिता रहा था। चूंकि ये दोनों दूत नरक के निवासी थे अतः उन्हें शैतान का रूप मानकर उसकी पूजा शुरू कर दी।

येज्दी लोगों का कोई देव स्थान नहीं होता। मोसूल के समीप शेख अदी की कब्र को ही वे अपना धार्मिक स्थान मानते हैं। शेख अदी का काल भी अज्ञात है, पर यह समझा जाता है कि वे भी येज्दी लोगों द्वारा पूजित सात दूतों में से एक थे। अपने सत्कर्मों द्वारा ही उन्हें यह पद प्राप्त हुआ था। सत्कार्यों में विश्वास रखना और शैतान की पूजा करना, ये परस्पर-विरोधी बातें हैं, पर येज्दी इन दोनों का बड़ी सफलतापूर्वक पालन करते हैं। येज्दी प्रातः सूर्य की और संध्या को चांद की पूजा करते हैं। वे अन्य धर्मावलंबियों के आगे अपनी कोई धार्मिक विधि नहीं करते। येज्दी धर्म में अन्य लोगों को प्रवेश की अनुमति नहीं है। किसी व्यक्ति को धर्म से बहिष्कृत कर देना मृत्युदंड से भी भयंकर सजा है। एक बार किसी ने हराबिया स्थित येज्दी लोगों के धर्मगुरु से पूछा कि आपके यहां सबसे बड़ा पाप और सबसे बड़ी सजा क्या है? उन्होंने उत्तर दिया, 'धर्मत्याग का विचार और धर्म से बहिष्कार।' ●
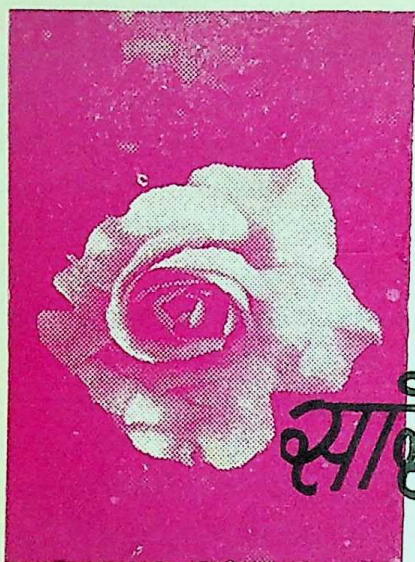
सारे साल गुलाब

• स्वदेशकुमार

ज्यादातर लोगों का खयाल है कि गुलाब एक बार लगा दीजिए और फिर कुछ करने की जरूरत नहीं है, बस माली पर छोड़ दिया कि खाद-पानी दे देगा। लेकिन यह कोई तरीका नहीं है गुलाब उगाने का। गुलाबों को आप बच्चों के समान ही समझिए। गुलाब समझ जाते हैं कि आप उन्हें प्यार करते हैं या नहीं और उसी के अनुसार वे भी व्यवहार करते हैं।

उत्तरी भारत के मैदानी इलाकों में गुलाब खिलने का मौसम दिसंबर से मार्च तक है। लेकिन इन दिनों बढ़िया फूल खिलें, इसके लिए पौधों की देखभाल सारे साल करना जरूरी है। मैं यहां पूरे साल का कैलेंडर दे रहा हूं कि कब क्या करना है। हर महीने की पहली तारीख को यह लेख फिर पढ़ लीजिए और देखिए कि उस महीने आपको क्या करना है? गुलाब का वर्ष अक्तूबर से शुरू होता है। तो पहले इसी महीने से शुरू करते हैं—

अक्तूबर : पहली से दस अक्तूबर के बीच गुलाब की क्यारियों में पानी बंद कर दीजिए। मिट्टी को छह इंच गहरा खोदकर छोड़ दीजिए। पौधों के चारों तरफ एक फुट के दायरे में तीन-चार इंच मिट्टी हटाकर जड़ों को धूप में खुला छोड़ दीजिए। मिट्टी इस होशियारी से हटाइए कि ऊपर की जड़ें न कट जाएं। दस से पच्चीस अक्तूबर के बीच थोड़े-थोड़े पौधे रोज प्रून (कटाई-छंटाई) कर दीजिए। बरसात में पौधे बहुत बढ़ जाते हैं, ऐंडी-बैंडी टहनियां निकल जाती हैं। प्रूनिंग का मतलब है कमजोर, सूखी, अंदर को बढ़ती हुई टहनियों को बिलकुल काट देना; केवल चार-पांच स्वस्थ टहनियां रहने देना और उन्हें भी ऊपर से एक-तिहाई काट देना, (बाहर की तरफवाली आंख (चश्मा) के एक-चौथाई इंच ऊपर अंदर की तरफ तिरछा), पत्ते भी सब काट देना। सही प्रूनिंग पर ही आगे फूलों की बहार बहुत-कुछ निर्भर करती है।

नीचे सफेद पाउडर जम जाता है और तेजी से फैलता है। कैराथेन मोरेस्टन या कोसान का हर हफ्ते छिड़काव करिए, जब तक बीमारी दूर न हो जाए।

जनवरी : फूलों की पहली बहार खत्म हो जाएगी। पौधों में फिर से जान डालने के लिए गोबर की खाद की एक इंच मोटी तह पूरी क्यारी में बिछाकर निलाई कर दीजिए। खाद न डालने से गरमियों और बरसात में पौधों के मर जाने का खतरा है। रासायनिक खाद और फोलियर फीडिंग चालू रखिए।

फरवरी : फूलों की दूसरी बहार आएगी। फोलियर फीडिंग पूरे महीने तक बंद रखिए।

अक्तूबर से फरवरी तक क्यारियों में बारह-पंद्रह दिन बाद भरकर पानी देना चाहिए। उसके बाद निलाई करके दो-तीन दिन जमीन को धूप-हवा लगने दीजिए और फिर रासायनिक खाद डालकर पानी भर दीजिए। इन दिनों गमलों में हर तीसरे दिन बाद पानी की जरूरत पड़ेगी, चौथे दिन निलाई, और पांचवें दिन फिर पानी।

इसी दौरान निम्नलिखित विशेष लिक्विड (तरल) खाद क्यारियों और गमलों में देने का कष्ट उठा सकें तो सोने में सुहागा हो जाए :

दो बड़ी-बड़ी मुट्ठी : गाय-भैंस का गोबर

एक बड़ी मुट्ठी : नीम, सरसों या मूंगफली की खली

एक छोटी मुट्ठी : यूरिया

अगर आप मछली खाते हों तो उसको साफ करके जो भाग बच जाता है, उसे फेंकने के बजाय इस घोल में ही डालकर सड़ा लीजिए, और भी फायदेमंद रहेगा।

इन सबको एक कनस्तर पानी में घोल दीजिए, हफ्ते भर में सड़-गल जाएगा। बीच-बीच में डंडे से चलाते रहिए।

इस घोल को एक किलो वनस्पति के डिब्बे के बराबर लेकर आठ किलो पानी में मिला लीजिए। इस प्रकार कुल नौ डिब्बे घोल तैयार हो जाएगा। एक-एक डिब्बा हर पौधे के चारों तरफ हर हफ्ते डालिए—टानिक का काम देगा। गमलों में लगे गुलाबों के लिए तो यह घोल बहुत ही जरूरी है।

फरवरी में, या उससे पहले, या बाद में (यह मौसम पर और स्थान पर निर्भर करता है) निम्नलिखित कीटाणु पौधों को नुकसान पहुंचा सकते हैं। उनका इलाज भी साथ ही बताया गया है :

शेफर बीटिल : बी. एच. सी. पाउडर और डी. डी. टी. पाउडर को ५० : ५० के अनुपात में मिलाकर भुरकाव कर दीजिए, या फौलीडोल, मैलाथियन, पैराथियन या डाइमेक्रोन में से किसी एक का स्प्रे कर दीजिए।

एफिड्स : कलियों पर भूरे धब्बे पड़ जाते हैं। बासूडिन, फौलीडोल, मैलाथियन, पैराथियन या डाइमेक्रोन में से किसी एक
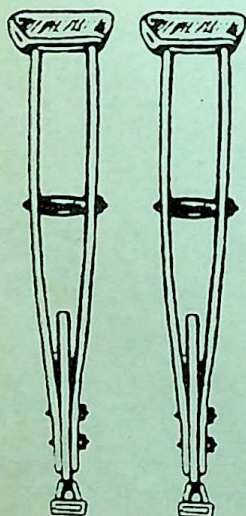
का स्प्रे कर दीजिए।

थ्रिप्स : पंखुड़ियों के किनारे काले पड़ जाते हैं। फूल और पत्तियां मुड़-तुड़कर बदशक्ल हो जाती हैं। ऊपरवाली कोई भी कीटाणुनाशक दवा का स्प्रे कीजिए।

कई कीटाणुओं के लिए लगभग एक ही प्रकार की कीटाणुनाशक दवाएं हैं। ये अलग - अलग कंपनियों की बनी होती हैं। एक साल जिस कंपनी की दवा का प्रयोग करें, दूसरे साल उसे बदल दें।

मार्च : फूलों का आखिरी दौर आएगा। इस बार एच. टी. (बड़े-बड़े आकार-प्रकारवाले फूल) के बजाय फ्लोरिबंडा और मिनिएचर (छोटे आकार-प्रकार के गुच्छों में आनेवाले फूल) की बहार ज्यादा रहेगी। थोड़ी गरमी पड़ने लगती है, इसलिए एच. टी. का आकार थोड़ा छोटा हो जाता है, और रंग भी थोड़ा हलका पड़ जाता है।

इस महीने रासायनिक खाद देते रहिए, पर फोलियर फीडिंग बंद कर दीजिए।

अप्रैल-मई : गरमी पड़ने लगी। फूलों का मौसम गया। छोटे-छोटे बदरंग फूल निकलते रहेंगे, जिन्हें काट देना ही बेहतर होगा। रासायनिक खाद देना बंद कर दीजिए। क्यारियों में हर तीसरे दिन और गमलों में हर रोज पानी दीजिए। गरमी ज्यादा हो तो और भी जल्दी-जल्दी पानी दीजिए। जमीन एक दिन को भी सूखी न रहे। गमलों में तो सुबह-शाम पानी देना पड़ सकता है। हर शाम पौधे पर पानी का छिड़काव कीजिए—चाहे फुहारे से या नलीसे। पौधोंको दिन भर की गरमी-लू के बाद शाम को नहाने से बड़ा सकून मिलता है। गमलों को लू से बचाने के लिए आड़ में रखिए, या घने पेड़ के साये या बरामदे में।

पंद्रह - बीस दिन बाद क्यारियों की केवल आध-पौन इंच गहरी हलकी-हलकी निलाई कीजिए।

जून-जुलाई-अगस्त : इन महीनों में अगर अच्छी बरसात हो जाए, तो पानी की तभी जरूरत पड़ेगी जब हफ्ते भर को बारिश रुक जाए। यदि इससे पहले भारी वर्षा हुई है एवं क्यारियों में पानी की जरूरत ही नहीं है, तीन-चार इंच नीचे अगर जमीन गीली है तो फिर पानी नहीं, एक इंच गहरी निलाई कर दीजिए।

अगर लगातार कई दिन तेज वर्षा के कारण क्यारियों में पानी खड़ा हो जाए, तो डौल काटकर पानी बाहर निकाल दें, नहीं तो जड़ें गल सकती हैं।

इन दिनों जंगली घास-फूस बराबर निकालते रहिए। पौधे की बड-यूनियन के नीचे और जड़ से जो फुटाव निकले, उसे काट दीजिए, क्योंकि वह देसी गुलाब होता है। देसी गुलाब के पौधे पर ही विलायती गुलाब की आंख या चश्मा बांधा जाता है।

अधिक और लगातार वर्षा के कारण रेड-स्केल (लाल-भूरे रंग के खसरा की तरह के दाने) बीमारी गुलाब की

टहनियों पर लग जाती है। यह खतरनाक होती है और जल्दी इलाज न किया जाए तो पौधे को सुखा देती है। फौलीडोल कास्प्रे हर हफ्ते कीजिए। चार बार में कीटाणु मर जाने चाहिए। पुराने टूथब्रश को फॉलीडोल में भिगोकर टहनियों पर रगड़ने से इन्हें दूर किया जा सकता है। फौलीडोल की जगह मेथिलेटेड स्प्रिट से भी काम चलाया जा सकता है। इनके मरने की पहचान—ब्रश रगड़ने से दाने भूसी बनकर उड़ जाएंगे। इन दिनों दीमक का भी खतरा रहता है।

इन महीनों में कभी - कभी पत्ते पहले पीले, फिर भूरे पड़कर गिरने लगते हैं। वैसे तो कोई बात नहीं, यह गरमी-बरसात का असर है, लेकिन इसके बाद अगर पौधे भी काले पड़कर सूखने लगें, तो उसके निम्नलिखित कारण और निदान हो सकते हैं :

बहुत अधिक वर्षा : फालतू पानी एक दिन भी क्यारियों में मत रहने दीजिए।

ब्लैक स्पाट्स (पत्तों पर काले धब्बे): यह एक प्रकार की बीमारी है। कैप्टन दवा का स्प्रे कीजिए।

पिछले महीनों में खाद आदि की कमी : अक्तूबर से मार्च तक खाद देने की जो मात्रा बतायी गयी है, उसका पालन करें। रासायनिक खाद अधिक मात्रा में देने का कुप्रभाव अगर हाथ के हाथ नहीं दिखायी दिया है तो वह इन दिनों दिखायी दे जाएगा, यानी पौधा मर जाएगा। वैसे अब कुछ विशेषज्ञों की राय है कि रासायनिक खाद का प्रयोग कम-से-कम हो, क्योंकि इससे पौधे की आयु घटती है। चार-पांच साल तक तो खूब बहार देगा, फिर इक्का-दुक्का फूल ही निकलेगा।

शेफर ग्रब : यह बड़ा मूजी कीड़ा होता है—मोटा, गिलगिला, सफेद, मुड़ा हुआ। एक इंच लंबा यह कीड़ा पौधे की जड़ों के नीचे या आसपास पैदा हो जाता है। जड़ों को खोलकर, इसे बाहर निकालकर मार दीजिए। एक बड़ा चम्मच गैमेक्सीन जड़ों में डालकर मिट्टी वापस भर दीजिए।

सितंबर : जब वर्षा रुक जाए और क्यारियां सूख जाएं, तो एक बार निलाई करके महीने में दो-तीन बार पानी दे दें।

इसके बाद फिर अक्तूबर : नयी बहार की फिर से तैयारियां शुरू।

साल भर बाद गमलोंवाले गुलाबों की खाद - मिट्टी भी बदलनी चाहिए। गमले में से पूरा पौधा निकाल लीजिए। नीचे बारीक जड़ों का गोल गुच्छा बन जाएगा। उसे प्रूनर से काट दीजिए। पौधे को प्रून करके पूरा-का-पूरा पानी में तीन-चार घंटे डुबा दीजिए। गमले में नयी खाद-मिट्टी आधी-आधी, एक छोटी मुट्ठी बोन-मील, दो बड़े चम्मच सुपर-फास्फेट के साथ मिलाकर पौधे को शाम के वक्त गमले में लगा दीजिए। भरकर पानी दीजिए। आठ दिन छाया में रखिए, फिर धूप में।

—आर १९, हौजखास एन्क्लेव
नयी दिल्ली-११००१६
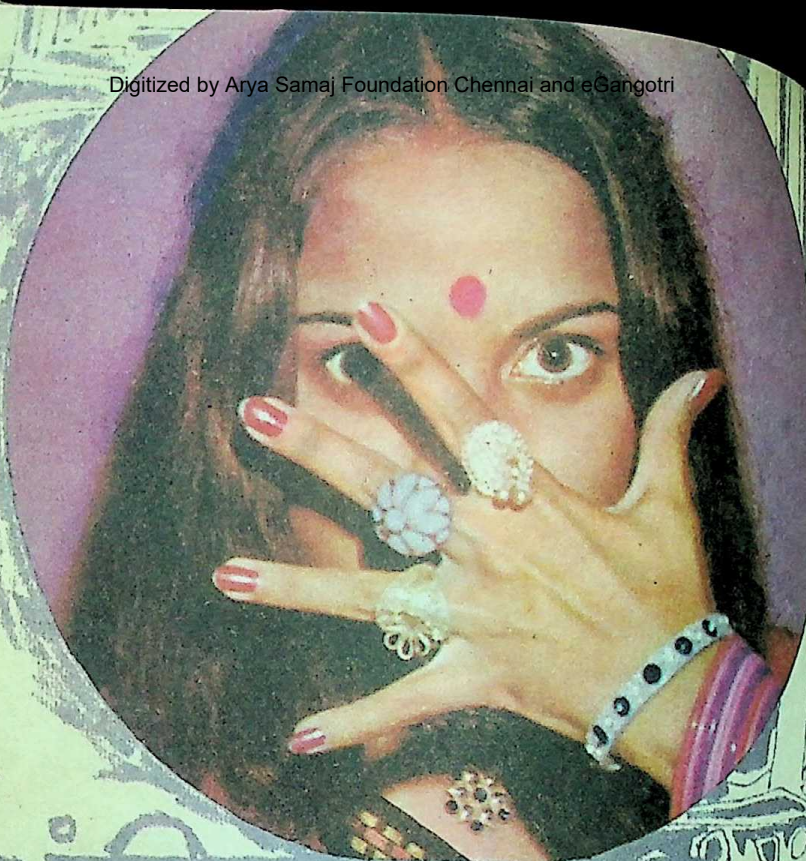
अंतिम पड़ाव

हिंदुस्तान में रहते हुए भी समय की यह पाबंदी !

अचानक नियम टूट जाए तो पड़ोसी भी प्रश्न करने लगते हैं। आधी रात के बाद एकाएक सरला की चीख ने सारे घर में तबाही मचा दी। उसकी प्यारी बिल्ली लूसी, जो सोफे में अचेत सो रही थी, आसपास चक्कर लगाने लगी। डॉ. जगन दांत पीस रहा था। उसकी पत्नी सरला बिल्ली के पंजों की तरह अपनी पांचों अंगुलियां फैलाये अपना खूबसूरत चेहरा ढकने का प्रयत्न कर रही थी। रात की तनहाई में काले अंधेरे की तरह एक नाटक उस फ्लैट में खेला जा रहा था। केवल हलका-सा प्रकाश था जो शायद ही खिड़कियों, दरवाजों या प्रकाश-स्तंभों से बाहर जा सकता हो। नाटक के किसी एक दृश्य की तरह दस-पंद्रह मिनट ही यह सब चला होगा कि एक विराट शांति वहां छा गयी। इसके बाद कब सुबह हुई किसी को पता नहीं ...!

● हरपाल कौर

जगन ने २३ बोर का छोटा-सा पिस्तौल अपनी जेब में रखा और ड्रेसिंग-टेबल पर रखी हुई टाइमपीस पर नजर डाली। ७ बजकर, १७ मिनट हुए थे। नित्य के प्रतिकूल आज वह तेरह मिनट पूर्व ही उठ गया था और इन तेरह मिनटों में वह बहुत कुछ कर सकता था। सब काम बिलकुल ठीक हो रहा था। सामने बिस्तर पर खून से लथपथ उसकी सुंदर पत्नी की लाश पड़ी थी। उसे कुछ अधिक कष्ट का सामना भी नहीं करना पड़ा था। बस एक हलकी-सी आवाज उसके गले से निकली और फिर मौन छा गया था।

सरला की बड़ी-बड़ी काली आंखें दहशत के मारे फटी हुई थीं। उसके सीने पर हृदय के स्थान पर एक छोटा-सा सूराख साफ नजर आ रहा था, जिससे कुछ देर पहले ही खून बहना बंद हुआ था। मूल्यवान कालीन पर खून के बड़े-बड़े धब्बे साफ दिखायी दे रहे थे, पर डॉ. जगन को इसकी कोई परवाह न थी।

जगन एक बलिष्ठ एवं चतुर व्यक्ति था फिर भी उसे सरला की फटी-फटी आंखों से भय अनुभव हो रहा था, अतः उसने उसकी आंखें बंद कर दीं और फिर उसकी लाश को उठाकर कालीन पर रख दिया। ऐसा करते समय उसने सरला के खून से अपने कपड़ों को बचाये रखा था। कुछ देर तक जगन सोच में खोया रहा और फिर उसने रबर के गुदगुदे गद्दे पर से चादर हटायी। गद्दे पर चेनवाला खूबसूरत कवर चढ़ा हुआ था। उसने एक झटके से चेन खोल दी। सामने सौ-सौ के नोटों की खूबसूरत गड्डियां रखी हुई थीं। नोटों को देखकर जगन के होठों पर एक कुटिल मुसकराहट तैर गयी। उसे लगा, अब सारी समस्याओं का अंत हो जाएगा। उसने जल्दी से सब नोट ब्रीफकेस में भरे और कुछ आवश्यक वस्तुएं भी ले लीं। सूटकेस उसने जानबूझ कर नहीं लिया।

फिर उसने जल्दी से कपड़े बदले और ब्रीफकेस उठाकर कमरे से बाहर जाने लगा। जाते-जाते उसने सरला पर नजर डाली और मुसकराकर व्यंग्यात्मक स्वर में कहा, "अब तुम बड़े आराम

से सोती रहो। मुझे विश्वास है कि दो घंटे तक कोई तुम्हारे आराम में हस्तक्षेप नहीं करेगा।"

हॉल में आकर उसने दीवारघड़ी की ओर देखा। सात बजकर, चालीस मिनट हुए थे। जगन और सरला दोनों ही समय की पाबंदी के कारण खासे प्रसिद्ध थे। उन्होंने हर बात का टाइम-टेबल बना रखा था। मजाल है कि कुछ मिनट भी इधर-से-उधर हो जाएं। आज तो जगन के लिए समय की पाबंदी बेहद जरूरी थी ताकि किसी को संदेह न होने पाये: एक-एक मिनट और एक-एक सेकंड देख-भाल कर व्यय करना था। जगन ने रसोईघर में प्रवेश किया तो रसोईघर की घड़ी सात बजकर, बयालीस मिनट की घोषणा कर रही थी। उसने पांच टोस्ट लिये और मुसकराकर तीन टोस्ट नित्य के अनुसार सरला के लिए रख दिये। तीन अंडों में से एक अंडा फ्राई किया। जब वह नाश्ता कर उठा तो फिर उसने घड़ी की ओर देखा। सात बजकर, अड़तालीस मिनट हुए थे। बाहर से अखबार उठाने और 'लूसी' को अंदर बुलाने का समय हो चुका था। लूसी उसकी प्यारी बिल्ली थी, पर सरला को उससे जैसे जन्मजात बैर था। केवल उससे नहीं, वह जगन की हर चीज को घृणा से देखती थी, इसलिए वह लूसी को रात भर घर में प्रवेश न करने देती थी। जगन ने घर का मुख्यद्वार खोल-कर पुकारा, "लूसी! लूसी!!" और फिर अखबार उठाकर बगल में दबा लिया। सहसा बराबर के मकान का दर-वाजा खुला और जगन की पड़ोसन श्रीमती लूथरा बाहर आयीं। वे मुसकराती हुई बोलीं, "नमस्कार डॉक्टर साहब, आज आपने दो मिनट पहले ही लूसी को पुकारा! क्या बात है?"

जगन का चेहरा एक क्षण के लिए फीका पड़ गया, पर तुरंत ही उसने संभा-लते हुए मुसकराकर कहा, "नहीं तो, मैंने ठीक समय पर ही लूसी को पुकारा था। मेरा विचार है कि आपकी घड़ी गलत समय बता रही होगी।"

श्रीमती लूथरा ने जगन की इस बात पर नाक-भौं चढ़ायी और कहा, "ऐसा होना असंभव है। मेरी आटोमेटिक घड़ी बिलकुल नयी है। रात ही मैंने उसे रेडियो से मिलाया है।"

जगन ने मुसकराकर कहा, "अच्छा तो फिर संभव है कि मेरी ही घड़ी गलत चल रही हो।"

इतने में एक छोटी-सी सफेद बिल्ली धीरे-से दुम हिलाती हुई जगन की ओर आयी और उसके कदमों में लोटती हुई 'म्याऊं-म्याऊं' करने लगी।

जगन ने उसे गोद में बैठाकर प्यार किया।

श्रीमती लूथरा चहककर बोलीं, "आपकी बिल्ली आपसे बहुत प्यार करती है।"

जगन ने रिस्टवाच की ओर देखा। सात बजकर, इक्यावन मिनट हुए थे।

उसने क्षमा मांगते हुए कहा, "क्षमा कीजिएगा मिसेज लूथरा! लूसी को दूध पिलाने का समय हो गया है।"

श्रीमती लूथरा ने स्वीकृति में सिर हिलाकर कहा, "कोई बात नहीं, समय की पाबंदी आपके लिए आवश्यक है।"

जगन पुनः रसोईघर में गया। उसने एक प्याली में दूध निकालकर लूसी को दिया। फिर जब वह ड्राइंग-रूम में आया तो टाइम पीस में सात बजकर, पचपन मिनट हुए थे।

सहसा फोन की घंटी बजी। जगन ने रिसीवर उठाकर कहा, "हैलो, मैं जगन बोल रहा हूं!"

दूसरी ओर से शहर के बदनाम जुआ-घर के मालिक यूनुस ने 'ही ही' करते हुए कहा, "नमस्कार, मैंने आपको जगा तो नहीं दिया?"

"तुम्हें मालूम नहीं कि इस समय मैं अखबार पढ़ा करता हूं," जगन ने क्रोध से कहा।

दूसरी ओर से कहकहे की आवाज आयी और फिर यूनुस ने कहा, "मैं अभी यही कह रहा था कि डॉ. जगन नींद लेने की बजाय नाश्ते के बाद अखबार पढ़ रहे होंगे, और सचमुच मेरी बात सच निकली।"

जगन ने कहकहा लगाकर कहा, "हां, तुम्हारा अनुमान ठीक निकला! तुम्हें तो पता है कि मैं समय का कितना पाबंद हूं। क्या तुम्हें रुपये मिल गये?"

दूसरी ओर से हंसी की आवाज आयी और फिर कहा गया, "बहुत-बहुत धन्यवाद। आशा है, काठमांडू में आपकी दो सप्ताहों की छुट्टियां मजे में बीतेंगी।"

जगन ने रिसीवर क्रेडल पर रख दिया और पास ही एक आरामदेह कुरसी

पर बैठकर सोचने लगा, 'अब थोड़ी देर ही की बात है। मैं आठ बजकर, दस मिनट पर घर से निकल जाऊंगा। साढ़े आठ बजे एयरपोर्ट पर पहुंचूंगा। आठ बजकर, पैंतालीस मिनट की उड़ान से काठमांडू चल दूंगा और जब पुलिस को सरला की लाश मिलेगी, उस समय तक मैं एक नया नाम अपनाकर यूरोप के किसी अन्य देश में पहुंच जाऊंगा।"

सहसा वह चौंक पड़ा। काल-बेल बज रही थी। जगन ने उठकर दरवाजा खोला। एक हंसमुख व्यक्ति हाथ में बहुत-से पैकेट उठाये खड़ा था। जगन को देखते ही वह बोला, "क्षमा कीजिएगा, क्या श्रीमती सरला जगन का मकान यही है?"

एक क्षण के लिए जगन घबरा गया, पर फिर हिम्मत कर बोला, "जी हां, फरमाइए! क्या बात है?"

"कृपया उन्हें बुला दीजिए!"

जगन का चेहरा भय से पीला पड़ गया, पर उसने अपने होश-हवास ठीक करते हुए कहा, "बात वास्तव में यह है कि . . कि . . भई बात यह है कि . . वे अभी सो रही हैं और मैं उनको जगाकर नाराजगी मोल नहीं लेना चाहता। मुझसे कहो, क्या बात है?"

उस व्यक्ति ने जगन की ओर पैकेट बढ़ाते हुए कहा, "उन्होंने हमारी कंपनी को कुछ कास्मेटिक्स के आर्डर दिये थे। कृपया पचास रुपये दे दीजिए।"

जगन ने पैकेट ले लिये और दरवाजा बंदकर अंदर आ गया। ब्रीफकेस से सौ रुपये का नोट लेकर उसने फिर दरवाजा खोला। नोट उस व्यक्ति को देकर दरवाजा पुनः बंद कर मेज की ओर बढ़ा, जिस पर अखबार रखा हुआ था। अभी वह मेज के पास ही पहुंचा था कि काल-बेल फिर बजी। जगन ने वापस मुड़कर दरवाजा खोला। वही व्यक्ति खड़ा हुआ था। कुछ नोट उसने जगन की ओर बढ़ाते हुए कहा "आप सौ का नोट देकर भूल गये थे। लीजिए शेष रुपये।"

जगन फिर घबरा गया। उसने कहा, "अरे, मेरी स्मरणशक्ति भी कितनी कम-जोर हो गयी है।"

और फिर उसने दरवाजा बंद कर दिया। संतोष की लंबी सांस लेकर उसने घड़ी देखी। आठ बजकर, दो मिनट हुए थे। हर काम समय के अनुसार हो रहा था। कुछ देर तक वह अखबार का अध्ययन करता रहा और जब वह घर से बाहर निकला तब आठ बजकर, दस मिनट हुए थे। बराबर में श्रीमती लूथरा अपने छोटे-से बगीचे में क्यारियां ठीक कर रही थीं। जगन को देखकर उसने रिस्टवाच पर नजर डाली और फिर खुरपे से जमीन को खोदते हुए कहा, "डॉ. जगन आप ठीक समय पर निकले हैं। लगता है कि आपकी घड़ी ठीक हो गयी है।"

जगन ने मुसकराकर कहा, "आप ठीक कह रही हैं श्रीमती लूथरा। क्षमा कीजिएगा, मुझे देर हो रही है। इसलिए मैं आपसे अधिक देर तक बातचीत नहीं कर सकता।"

और, कुछ देर बाद वह सांताक्रुज एयरपोर्ट पर यात्रियों के प्रतीक्षालय में बैठा हुआ एक पत्रिका पढ़ रहा था। पंद्रह मिनट बाद अनाउंसर ने यात्रियों को विमान में पहुंचने की सूचना की। जगन ब्रीफ-केस उठाकर बड़े हॉल से होता हुआ रन-वे की ओर चल दिया। इस समय उसका
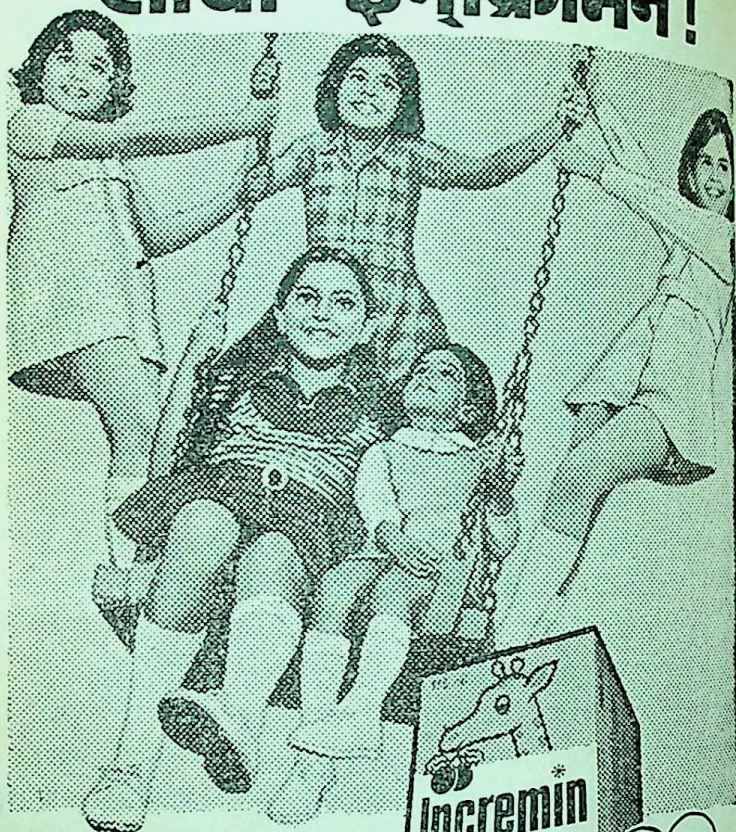
दिल बुरी तरह धड़क रहा था। अभी उसने आधा रास्ता ही तय किया था कि पीछे से आवाज आयी — "डॉक्टर जगन, ठहरिए !"

जगन को लगा, जैसे उसका दिल उछलकर गले में आ गया हो। उसने पीछे मुड़कर देखा। एक पुलिस इंस्पेक्टर कुछ सिपाहियों के साथ खड़ा था। उसने कहा, "डाक्टर जगन, खेद है कि आप काठमांडू की सैर का आनंद नहीं ले सकेंगे। मैं आपको श्रीमती जगन की हत्या के अभियोग में गिरफ्तार करता हूं।"

जगन का चेहरा सफेद हो गया। उसके हाथ से ब्रीफकेस छूट गया। उसे पुलिस इंस्पेक्टर ने उठा लिया और जगन के हाथों में हथकड़ी पहना दी। जगन ने विस्मय से पूछा, "किंतु आप कैसे कह रहे हैं कि मैं ही हत्यारा हूं !"

इंस्पेक्टर के होंठों पर व्यंग्यात्मक मुसकराहट उभरी और उसने कहा— "डॉ. जगन, इसमें कोई संदेह नहीं कि आपने बड़ी बुद्धिमत्ता का प्रमाण दिया है, किंतु अपराधी कितना ही चालाक क्यों न हो, एक-न-एक गलती कर ही जाता है। जिससे उसके अपराध से परदा उठ जाता है। सो, आपने भी यही किया। आपको शायद पता हो कि आपकी तरह आपकी पत्नी भी समय की बहुत पाबंद थीं और आपकी पड़ोसन श्रीमती लूथरा दूसरों के मामलों में हस्तक्षेप करने का शौक रखती हैं। यह हैं वे बातें जो आपकी गिरफ्तारी का कारण बनीं। अब गौर से सुनिए। जब आप आठ बजकर, दस मिनट पर दफ्तर चले जाते तब आपकी पत्नी आठ बजकर, बीस मिनट पर लूसी को उठाकर बिना नागा, ठीक समय पर बाहर फेंक देती थीं। आज जब नियम के प्रतिकूल आपकी प्रिय बिल्ली बाहर नहीं फेंकी गयी तब आपकी पड़ोसन को चिंता हुई और जब वे इसका कारण जानने आपके शयन-कक्ष में पहुंचीं तो वहां . . . " ●

पूर्णता के लिए

पानी से भरे घड़े के ऊपर रखी छोटी-सी कटोरी ने घड़े से शिकायत की, "तुम प्रत्येक बरतन को, जो तुम्हारे पास आता है, अपने शीतल जल से भर देते हो। किसी को भी खाली नहीं लौटाते, परंतु मुझे कभी नहीं भरते, जबकि मैं सदा तुम्हारे साथ रहती हूं। इतना पक्षपात तो तुम्हें शोभा नहीं देता !"

घड़े ने शांत स्वर में उत्तर दिया, "इसमें पक्षपात की कोई बात नहीं। अन्य सब बरतन मेरे पास आकर विनीत भाव से झुकते हैं, जिससे मैं उन्हें अपने शीतल जल से भर देता हूं; परंतु तुम तो गर्व में चूर, हमेशा मेरे सिर पर सवार रहती हो, इसीलिए मैं तुम्हें भर नहीं पाता। यदि तुम भी नम्रता से जरा झुकना सीखो तो तुम भी खाली नहीं रहोगी।"

एशिया के ही एक सुदूर देश में जिस समय धन के लालच में लोगों ने अनेक देवी-देवता बना लिये थे, सैकड़ों मूर्तियां स्थापित कर उन पर भेंट चढ़ाने की प्रथा पनप रही थी, उसी समय हजरत मोहम्मद साहब ने इन बंधनों से मुक्ति का मार्ग दिखाया और एकेश्वरवाद का पाठ पढ़ाया।

चिंतन-मनन के लिए वे एक खजूर के पेड़ के नीचे बैठते थे। कुछ समय बाद जब उन्होंने दूसरे स्थान के लिए प्रस्थान किया, तब उस पेड़ को कटवा दिया। लोगों ने असमंजस के साथ उनसे इसका कारण पूछा। उत्तर में उनके शब्द थे, "इसलिए कि मेरे उपदेशों की अपेक्षा लोग कहीं इस पेड़ को ही ईश्वर मानकर न पूजने लग जाएं।"

—वलीमुहम्मद कुरैशी

बंबई में आर्यसमाज-मंदिर के निर्माण के लिए एक निधि शुरू की गयी। लोग उसमें यथाशक्ति दान दे रहे थे। एक मारवाड़ी सज्जन महर्षि दयानंद के निकट आये और नम्रता से बोले, "स्वामीजी, मेरे पास दस हजार रुपये हैं। ये सारा रुपया मैं आर्य-समाज-मंदिर के कोश में समर्पित करता हूं। कृपया यह तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिए।"

स्वामीजी ने उनकी भावना की प्रशंसा करते हुए कहा, "मैं अतीव प्रसन्न हूं कि आपके हृदय में इतना धर्म-प्रेम है, परंतु मैं आपकी संपूर्ण पूंजी लेकर आपके परिवार को परमुखापेक्षी नहीं बनाना चाहता। उस मंदिर की क्या शोभा होगी जिसके बनने में आपका व्यापार बंद हो जाए? हां, अधिक से अधिक आपसे एक हजार रुपया लिया जा सकता है।"

फर्रुखाबाद में कुछ लोग ऐसे हैं जिन्हें वहां के निवासी 'साधु' कहते हैं। वे सभी काम-धंधा करके निर्वाह करते हैं और घरद्वारवाले होते हैं। उनके हाथ का भोजन ब्राह्मण, वैश्य नहीं खाते। एक दिन इन्हीं में से एक साधु थाली में कढ़ी-भात परोसकर बड़ी श्रद्धा से स्वामी दयानंदजी के लिए लाया।

स्वामीजी ने उस अन्न को प्रसन्नता से ग्रहण किया। इस पर ब्राह्मण लोग असंतोष प्रकट करते हुए कहने लगे, "स्वामीजी! आप तो भ्रष्ट हो गये।"

स्वामीजी ने हंसते हुए उत्तर दिया, "अन्न दो प्रकार से दूषित होता है—दूसरे को दुःख देकर प्राप्त किया जाए अथवा कोई मलिन वस्तु उसमें पड़ जाए। इन साधुओं का अन्न तो परिश्रम के पैसे का है, इसलिए पवित्र है।"—**कांतिलाल मोदी**

सिकंदर और उसके गुरु अरस्तू एक बार घने जंगलों में से होते हुए कहीं जा रहे थे। मार्ग में एक उफनता हुआ बरसाती नाला पड़ा। गुरु-शिष्य में इस बात को लेकर बहस होने लगी कि इस नाले को पहले कौन पार करे। सिकंदर इस बात पर अड़ा था कि नाला पहले वही पार करेगा। थोड़े विवाद के बाद अरस्तू ने सिकंदर की बात मान ली। पहले सिकंदर ने ही नाला पार किया, फिर अरस्तू ने।

पार पहुंचकर अरस्तू ने पूछा, "तुमने मेरी बेइज्जती नहीं की?"

सिकंदर ने घुटने टेक दिये और विनम्रता से बोला, "ऐसा करना मेरा कर्तव्य था, क्योंकि अरस्तू रहेगा तो हजारों सिकंदर तैयार हो सकते हैं, किंतु सिकंदर एक भी अरस्तू नहीं बना सकता!"

स्पेन में उन दिनों गृहयुद्ध छिड़ा हुआ था। फासिस्ट सेना ने मैड्रिड शहर पर घेरा डाल रखा था जिसके कारण नागरिकों का जीवन अस्त-व्यस्त हो गया था। सेना ने खेत भी जला दिये थे, इसलिए घोर अन्न-संकट पैदा हो गया था।

सेनापति ने लोगों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए हवाईजहाज से डबलरोटियां गिराने का आदेश दिया। रोटियों के लिए कुत्तों और आदमियों में

छीना-झपटी होने लगी, किंतु बच्चों पर इसकी प्रतिक्रिया उलटी ही हुई। उन्होंने रोटियां जमाकर पुलिस-थाने पहुंचा दीं। भूख से तड़पते बच्चों के स्वाभिमान और उनकी त्याग-भावना से बड़े लोग गर्व से झूम उठे। दूसरे दिन सभी रोटियां कागजों में लपेटकर फासिस्टों की खंदकों में फेंक दी गयीं। जिन कागजों में उन्हें लपेटा गया था, उन पर लिखा था—"**मैड्रिड को फासिस्टी रोटियों से नहीं जीता जा सकता। हमारी भूख हमारे देश-प्रेम और सम्मान से बड़ी नहीं है।**"

—कमला

● प्रकाश बाथम

अदालत वह जगह है जहां मुकदमों की वीरानियां होती हैं। दो फलते-फूलते घर आपस की मुकदमेबाजी से धीरे-धीरे उजड़ते रहते हैं। वहां हत्या होने पर एक घर उजड़ा हुआ आता है, और दूसरा उजड़ने के लिए प्रतीक्षारत होता है! अदालत के कमरे के अंदर गर्द होती है, संजीदगी होती है; कसा हुआ वातावरण होता है। वहां लोगों के अंदर तनाव, जद्दोजहद और मुकदमे के फैसले की चिंता में दिन-दिन मरता-बुझता मन-मस्तिष्क होता है। लेकिन जिजीविषा से भरा इनसान जहां भी रहेगा, हंसेगा-हंसाएगा। अदालतों में भी ऐसा होता है। वकील या जजों के मुंह से कुछ बातें ऐसी निकल जाती हैं कि हंसी छूट ही जाती है।

एक बार इलाहाबाद हाईकोर्ट में दो वकीलों के बीच जोरों की बहस चल रही थी। एक वकील साधारण शरीर के थे, दूसरे बहुत मोटे—इतने मोटे कि कुरसी में फंस जाते थे। बहस के बाद न्यायाधीश ने पूछा, "क्यों मिस्टर बनर्जी, इस बारे में आपको कोई एतराज है?" बनर्जी कुछ नहीं बोले। जज ने एक बार और पूछा। फिर भी उनकी ओर से कोई आवाज नहीं आयी। जज ने स्टेनो को डिक्टेशन देना शुरू कर दिया। जब वे दस-बारह लाइनें बोल चुके तब बनर्जी महोदय की आवाज सुनायी पड़ी, "माई लार्ड, मुझे इनकी बात पर एतराज है।" जज ने पूछा, "जब मैंने आपसे एतराज जाहिर करने की बात पूछी थी तब आप कहां थे?"

साधारण शरीरवाले वकील ने तपाक से जड़ दिया, "माई लार्ड, ये अपनी कुरसी से छुटकारा पाने में लगे हुए थे।"

फैसले तक . . .

जुडीशियल कमिश्नर एम. एफ. इवांस मुकदमों को बहुत धीरे-धीरे निबटाते थे और उनकी अदालत से मुकदमों के फैसले होने में वर्षों लग जाते थे। एक बार उन्हीं की अदालत में नबीउल्लाह साहब एक हिंदू विधवा की तरफ से बहस करते

खड़े हुए । उसका बयान पढ़ते हुए उन्होंने कहा, "हुजूरेवाला, मैं एक बूढ़ी हिंदू बेवा हूं . . ." इवांस साहब ने ताज्जुब से पूछा, "मिस्टर नवीउल्लाह, क्या आपको यकीन है कि इस केस के लिए आपकी उम्र, आपका धर्म, और सेक्स नहीं बदल गया ?" नवीउल्लाह साहब कब चूकने वाले थे ! उन्होंने जड़ दिया, "हुजूरेवाला, मैं दूसरे परिवर्तनों के बारे में तो नहीं जानता, हां इतना यकीन जरूर है कि जब तक इस मुकदमे का फैसला होगा, मैं उम्र में बूढ़ा जरूर हो जाऊंगा !"

काबलियत का मेहनताना

सर वजीर हसन साहब एक ताल्लुकेदार के मुकदमे की सुनवाई के लिए जज की कुरसी पर बैठे थे। सर तेजबहादुर सप्रू बहस कर रहे थे। बहस के बीच सर वजीर ने उनसे कहा, "सर तेज, इस मुकदमे में आपको तीन हजार रुपया प्रत्येक दिन के लिए मिलता है, जब कि मुझे केवल सौ रुपये मिलते हैं !"

"माई लार्ड, इसका कारण हमारे बीच केवल तीन फुट की दूरी है। आप बीच के जंगले को पार कर इधर चले आइए और तीन हजार रुपया रोज कमाने लगिए।"

उसी अदालत में एक बार एम. ए. जिन्ना बहस करने के लिए खड़े हुए । वे अपनी बहस शुरू ही करनेवाले थे कि सर वजीर ने वही सवाल उनसे भी कर दिया। जिन्ना ने उत्तर दिया, "हुजूर, मेहनताना काबलियत के मुताबिक ही मिलता है !"

झूठ की उम्र क्या ?

अदालत में बहस करते हुए वकील साहब कई बार यह कह चुके थे कि गवाह के बुढ़ापे को देखते हुए यह कतई नहीं समझा जा सकता कि वह झूठ भी बोल सकता है, क्योंकि बुढ़ापे में जब आदमी अपने को मौत के निकट महसूस करता है तब सारे छल-कपट छोड़कर सचाई को अपनाता है। यह तर्क सुनकर न्यायमूर्ति वॉल्श पूछ बैठे, "किस उम्र में पहुंचकर आदमी झूठ बोलना छोड़ देता है ?" वकील ने जवाब दिया, "सर ! मैं समझता हूं लगभग साठ साल का होने पर।" यह जवाब सुनकर न्यायमूर्ति वॉल्श तो चुप हो गये, लेकिन उन्हीं के साथ बैठे न्यायमूर्ति पीव्स ने पूछ ही लिया, "क्या
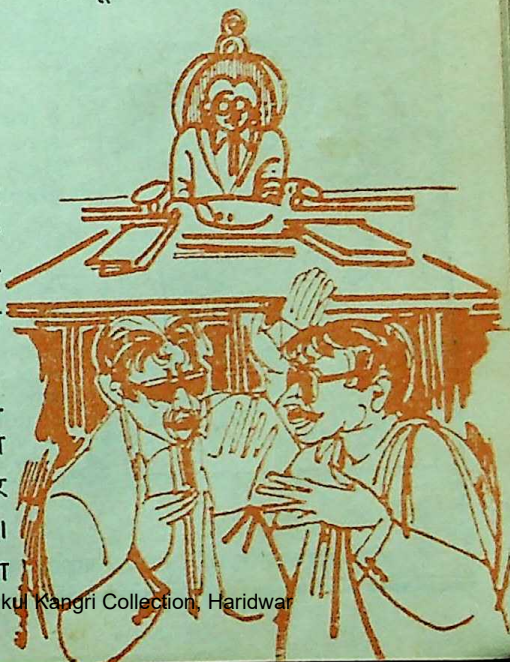
श्रीमती सीता रामचन्द्रन

"मैं अपनी मनपसन्द पुडिंग के लिए ब्राउन एन्ड पोल्सन वैराइटी कस्टर्ड पाउडर इस्तेमाल करती हूँ,"

बम्बई ५५, की श्रीमती सीता रामचन्द्रन का कहना है।

कॉर्न प्रॉडक्ट्स द्वारा चुनी गई पुरस्कृत व्यंजन-विधि

ब्राउन एन्ड पोल्सन वैराइटी कस्टर्ड पाउडर से बनी गाजर पुडिंग
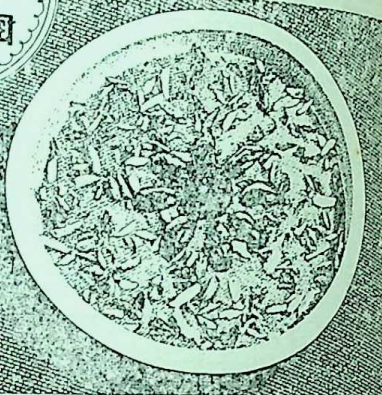
ब्राउन एन्ड पोल्सन वैराइटी कस्टर्ड अधिक नर्म, स्वादिष्ट और क्रीम वाला होता है। इसे हमेशा घर में रखिए। इससे कई प्रकार की स्वादिष्ट पुडिंग और दूसरी मीठी चीज़ें आसानी से बनाई जा सकती हैं। बेहतरीन उपकरणों से बना और अत्यंत सावधानी से तैयार किया गया ब्राउन एन्ड पोल्सन बाज़ार में मिलनेवाला सर्वोत्तम वैराइटी कस्टर्ड पाउडर है। ब्राउन एन्ड पोल्सन वैराइटी कस्टर्ड पाउडर, शाकाहारियों के लिए पूर्णतः उपयुक्त है। इस में अंडा नहीं है।

हर पैक में ६ मनमोहक सुगन्ध

बनाने की विधि:

¼ किलो गाजर के कसे हुए टुकड़े। ½ लीटर दूध। १ चाय-कपभर शक्कर। १ पैकेट ब्राउन एन्ड पोल्सन वैराइटी कस्टर्ड पाउडर (किसी भी सुगन्ध में)। १ छोटा चम्मचभर पिसी इलायची

गाजर के कसे हुए टुकड़ों को ½ लीटर दूध में नर्म होने तक पकाइए। लकड़ी के चम्मच से अथवा इलेक्ट्रिक मिक्सर में दलिए। शक्कर मिलाइए और १०-१५ मिनट तक हल्की आँच पर पकाइए। चलाइए। कस्टर्ड पाउडर को थोड़े से ठंडे दूध में मिलाकर पतला घोल बना लीजिए। बचा हुआ दूध मिला दीजिए। पके हुए गाजर इसमें मिला कर हल्की आँच पर खौलने दीजिए (चलाते रहना आवश्यक है)। आँच से उतारिए और इलायची-चूर्ण छींट दीजिए। (अगर आप चाहें, अखरोट और चेरी के टुकड़ों से सजाइए) ठंडा कीजिए और परोसिए।

आप के परिवार के आनन्द के लिए और भी बहुत-सी व्यंजन-विधियाँ प्रस्तुत की जाएँगी। आगामी अंकों में इन पृष्ठों को देखते रहिए।

कॉर्न प्रॉडक्ट्स कंपनी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड श्री निवास हाउस, वॉड्बी रोड, बम्बई १ बी आर

SHB-8471-Hin

आप यह कहना चाहते हैं कि जब हाई-कोर्ट के जज रिटायर होने लगते हैं ?" वकील ने विनम्र होकर सिर झुकाया और कहा, "सर, सचाई कुछ इसी तरह है।"

एक-एक करके

गरमियों के दिनों में भी अदालत में बड़ी ठंडक थी। चारों तरफ खस की टट्टियां लगी थीं। दस बजते ही दोनों जज आकर बैठ गये। बहस शुरू हुई। पियारेलाल बनर्जी बहस कर रहे थे। उन्होंने देखा एक जज झपकी ले रहा है।

थोड़ी देर बाद उन्होंने देखा, दूसरे जज ने भी सोना शुरू कर दिया। बनर्जी महोदय बहुत ऊंची आवाज में बोले, "माई लार्ड्स, माई लार्ड्स !" दोनों जज जाग गये और पूछा, "क्या बात है?" बनर्जी ने निवेदन किया, "एक-एक करके, माई लार्ड, एक-एक करके !"

गलत भी हो सकता हूं

एक बार अपनी बहस के दौरान पंडित मोतीलाल नेहरू एक बात को समझाने के लिए उसे दोहरा-तेहरा रहे थे। जज ने बीच में कई बार उनसे कहा, "आगे बढ़िए।" लेकिन शायद मोतीलालजी उसके कहने के बावजूद यह समझ रहे थे कि बात अभी साफ नहीं हो पायी है। उन्होंने उसी बात को फिर दोहराया। जज ने खीझकर कहा, "मिस्टर नेहरू, क्या आप समझते हैं मैं बेवकूफ हूं?" पंडितजी ने उत्तर दिया, "कतई नहीं, माई लार्ड; लेकिन मैं गलत भी हो सकता हूं।"

बांदी या स्टेपनी !

एक बार सर तेज बहादुर सप्रू एक रजवाड़े के मुकदमे में बहस कर रहे थे। बहस के दौरान 'बांदी' शब्द कई बार आया। सुनवाई अंगरेज जज कर रहे थे।

उन्होंने पूछा, " 'बांदी' शब्द के क्या माने होते हैं?" सर तेज ने समझाया, "माई लार्ड, राजाओं के वैवाहिक जीवन की जो मोटर गाड़ी होती है, यह बांदी उसी की स्टेपनी होती है।"

तेज औरतें, धीमे घोड़े

एक रजवाड़े के मुकदमे में सर रासबिहारी घोष बहस कर रहे थे। वे उस राजा की ओर से बहस कर रहे थे जिसने सारी दौलत उड़ा डाली थी। जज ने पूछा, "इतनी बड़ी रियासत चली कहां गयी?"

घोष बाबू ने समझाया, "तेज औरतों और धीमे घोड़ों के पास !"

बुरा मान गये ?

सर वजीर हसन की जरा-सी गणित की भूल पर जस्टिस बेनेट ने कटाक्ष किया, "जब मैं हिंदुस्तान आया तब मुझे यह नहीं मालूम था कि यहां के वकीलों को मुझे प्रारंभिक गणित भी पढ़ाना पड़ेगा !"

सर वजीर ने तुरंत जवाब दिया, "हम वकील तो आपको कानून की जरा-जरा-सी बातें समझाते हैं और हुजूर जरा-सा गणित ठीक करने में बुरा मान गये !"

—३५६, डॉ. बाथम रोड, रेल बाजार, कानपुर-४

कैरेबियन द्वीपसमूह के युवा मेहमान

● श्रीशचन्द्र मिश्र

वेस्ट इंडीज की क्रिकेट-टीम अपनी पिछली पराजय का बदला लेने आ चुकी है। केवल प्रथम मैच का परिणाम देखकर श्रृंखला के अन्य चार मैचों के बारे में निश्चित मत नहीं बनाया जा सकता। वेस्ट इंडीज की इस टीम में अधिकांश खिलाड़ी यद्यपि युवा हैं, पर अनुमान लगा लेना कि टीम कमजोर है, भ्रामक होगा।

भारत के धीमे पिचों पर वेस्ट इंडीज के तेज गेंदबाज सफल नहीं हो पाएंगे, ऐसा कुछ समीक्षकों का मत है। १९७४ के आरंभिक महीनों में इंगलैंड के विरुद्ध वेस्ट इंडीज के बल्लेबाजों की सफलता देखते हुए भारत के मुकाबले वेस्ट इंडीज के बल्लेबाजों का स्तर अधिक ऊंचा लगता है। इंगलैंड के विरुद्ध वेस्ट इंडीज ने दो बार पांच-पांच सौ से अधिक रन संख्या बनायी और इन बड़े-बड़े स्कोरों तक पहुंचाने का श्रेय मुख्य रूप से फ्रेडरिक्स, लारेंस रो एवं कालीचरण—जैसे युवा खिलाड़ियों को है। कालीचरण और रो ने दो वर्ष की अल्पावधि में ही न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया एवं इंगलैंड के कुशलतम गेंदबाजों की बखिया उधेड़ दी है। इसके विपरीत इंगलैंड में तेज गेंदबाजों के आगे भारतीय बल्लेबाजों की न खेल पाने की मूलभूत कमजोरी पूरी तरह उभरकर सामने आ गयी है। अब यदि भारत को वेस्ट इंडीज पर विजय प्राप्त करनी है तो उसके बल्लेबाजों को जमकर खेलना होगा।

भारत के विरुद्ध पांच टेस्ट मैच खेलने वाली वेस्ट इंडीज की टीम की घोषणा कर दी गयी है। श्रृंखला शुरू होने से पांच महीने पूर्व ही वेस्ट इंडीज की टीम की घोषणा से भारत को निश्चित रूप से आश्चर्य हुआ है, क्योंकि हमारे यहां तो ओलंपिक के लिए भी दल का चयन एक मास पूर्व किया जाता है। वेस्ट इंडीज की टीम का यह चौथा भारतीय भ्रमण है। इससे पूर्व १९४८-४९ में, १९५८-५९ में एवं १९६६-६७ में वेस्ट इंडीज की टीम भारत आयी थी। १९६६-६७ में वेस्ट इंडीज की टीम के

कप्तान गैरी सोबर्स थे। वेस्ट इंडीज की टीम उस समय विश्वविजेता का अनौपचारिक खिताब पा चुकी थी, अतः उसने बिना कड़े प्रतिरोध के भारत को तीन टेस्ट-मैचों की श्रृंखला में २-० से हरा दिया।

इस बार टीम की बागडोर तीस वर्षीय क्लाइव लॉयड को सौंपी गयी है। लॉयड इससे पूर्व सफल उप-कप्तान रह चुके हैं। वेस्ट इंडीज की टीम के घोषित खिलाड़ियों के नाम इस प्रकार हैं—क्लाइव लॉयड (कप्तान), लियोनार्ड बेचन, लांस गिब्स, रॉय फ्रेडरिक्स एवं एलविन कालीचरण (गुआना), गोर्डन ग्रीनिज, कीथ बायस, एलबर्ट पैडमोर, वैनबर्न होल्डर (बारबडोस डेरिक मुरे (उप-कप्तान एवं विकेटकीपर); बर्नार्ड जूलियन (त्रिनिदाद), आर्थर बैरेट, लारेंस रो (जमैका), विवियन रिचर्ड्स एवं एडी राबर्ट्स (एंटिगुआ) और इलेक्यूमेडो विलेट (नेविस)।

टीम के सबसे अनुभवी खिलाड़ी कप्तान लॉयड के चचेरे भाई लांस गिब्स हैं। बारबडोस के प्रारंभिक बल्लेबाज गोर्डन ग्रीनिज, ऑफ़ स्पिनर एलबर्ट पैडमोर, गुआना के प्रारंभिक खिलाड़ी लियोनार्ड बेचन और एंटिगुआ के मध्य-क्रम के बल्लेबाज विवियन रिचर्ड्स को पहली बार वेस्ट इंडीज की टीम में शामिल किया गया है। घोषित टीम में पिछले कप्तानों—गैरी सोबर्स तथा रोहन कन्हाई और मॉरिस फॉस्टर एवं चार्ली डेविस के नाम न देखकर खेलप्रेमियों को आश्चर्य हुआ। कन्हाई को नेतृत्व तथा बल्लेबाजी में असफल होने के कारण टीम में स्थान नहीं दिया गया। चचा गैरी सोबर्स एवं भतीजे फॉस्टर ने व्यापारिक कारणों से भारत आने में असमर्थता व्यक्त की, अतः उन्हें टीम में नहीं लिया गया।

गैरी सोबर्स, जिन्होंने वेस्ट इंडीज टीम को विश्वविजेता के अनौपचारिक स्तर तक पहुंचाया, इस बार टीम में शामिल नहीं हैं।

वेस्ट इंडीज के भारत-भ्रमण का एक मनोरंजक पहलू यह है कि घोषित खिलाड़ियों में से दो लॉयड एवं गिब्स ही १९६६-६७ में भारत आये थे। यही नहीं,

घोषित खिलाड़ियों में से केवल लॉयड, बॉयस, गिब्स, फ्रेडरिक्स, होल्डर एवं बैरेट १९७१ में भारत के विरुद्ध खेले थे।

रोहन कन्हाई के स्थान पर कप्तान नियुक्त किये गये क्लाइव लॉयड का जन्म ३१ अगस्त, १९४४ को जार्जटाउन गुआना में हुआ था। अपने टेस्ट-जीवन की शुरूआत लॉयड ने १३ दिसंबर, १९६६ को बंबई में खेले गये प्रथम टेस्ट में की थी। उस टेस्ट मैच की दोनों पारियों में लॉयड ने क्रमशः ८२ एवं ७८ (आउट नहीं) रन बनाकर वेस्ट इंडीज को शानदार विजय दिलाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। लॉयड ने पिछले आठ वर्षों में ३६ टेस्ट मैचों में अपने देश का प्रतिनिधित्व किया है। उन्होंने कुल २,२८२ रन बनाये हैं जिसमें पांच शानदार शतक हैं।

लांस गिब्स आज वेस्ट इंडीज के सर्वश्रेष्ठ स्पिनर माने जाते हैं। वे टीम के सबसे वरिष्ठ एवं अनुभवी खिलाड़ी हैं। खेलते हुए उन्हें डेढ़ दशक से ज्यादा हो चुका है लेकिन उनकी गेंद में अब भी वही घुमाव और पैनापन है। १९६२ में वेस्ट इंडीज में भारतीय खिलाड़ियों को पहली बार गिब्स की खतरनाक गेंदों का सामना करना पड़ा। तीसरे टेस्ट मैच में ब्रिजटाउन में गिब्स ने ३८ रन पर ८ विकेट लेकर विजय का मार्ग प्रशस्त किया था। गिब्स ने ६६१ टेस्ट मैचों में २९.०९ के औसत से २६४ विकेट ले लिये हैं। वेस्ट इंडीज में अब तक कोई गेंदबाज इतने विकेट नहीं ले पाया है।

१९७१ में भारत के विरुद्ध खेलनेवाले अन्य खिलाड़ी हैं कीथ बॉयस, राय फ्रेडरिक्स, वैनवर्न होल्डर एवं आर्थर बैरेट। कीथ बॉयस एक कुशल मीडियम पेसर हैं। वे अब तक केवल १२ टेस्ट खेल पाये हैं, जिनमें उन्होंने ४१ विकेट लिये हैं। वे बल्लेबाजी का दायित्व भली-भांति निभा सकते हैं। ३२ टेस्ट मैचों में फ्रेडरिक्स २,२८३ रन बना चुके हैं। एक पारी में उनकी सर्वाधिक रन संख्या १६३ है। वैनवर्न होल्डर

कालीचरण जिन्होंने इंगलैंड की टीम के छक्के छुड़ाये थे, पहली बार भारत के विरुद्ध खेलेंगे

एक कुशल राउंडर हैं, १६ टेस्ट मैचों में २९० रन बनाने के साथ-साथ उन्होंने ४० विकेट भी उखाड़े हैं। आर्थर बैरेट ने १९७१ में भारत के विरुद्ध दो टेस्ट मैच खेले थे। फिर लगभग तीन वर्ष के अंतराल के बाद उन्होंने वेस्ट इंडीज की टीम में प्रवेश पाया।

विभिन्न प्रकार
के
वाहनों
के लिये
जलवा
के
हार्नों
की श्रृंखला
Jalwa
KING
Jalwa
PRINCE
mini
Jalwa
Jalwa
JUNIOR

बैरेट ने ४ टेस्ट मैचों में अब तक ११ विकेट लिये हैं।

मुरे, कालीचरण, जूलियन, रो, राबर्ट्स, विलेट, पैडमोर, रिचर्ड्स, बेचन एवं ग्रीनिज पहली बार भारत के विरुद्ध टेस्ट मैच खेलेंगे। इनमें पैडमोर, रिचर्ड्स, बेचन एवं ग्रीनिज को टेस्ट मैच खेलने का कतई अनुभव नहीं है। ग्रीनिज और बेचन प्रारंभिक खिलाड़ी हैं जबकि रिचर्ड्स मध्यक्रम के बल्लेबाज हैं। पैडमोर आॅफ स्पिनर हैं। अन्य खिलाड़ियों को टेस्ट-मैच खेलने का थोड़ा बहुत अनुभव है। टीम के उप-कप्तान विकेट कीपर डेरिक-मुरे पहली बार भारत के विरुद्ध खेलेंगे। त्रिनिदाद के निवासी मुरे जितने अच्छे विकेटकीपर हैं, उतने अच्छे बल्लेबाज भी हैं। २२ टेस्ट मैचों में उन्होंने ५६७ रन बनाये हैं।

एलविन कालीचरण, बर्नार्ड जूलियन और लारेंस रो १९७२-१९७३ की एक वर्ष की अवधि में ही वेस्ट इंडीज के क्रिकेट जगत में तेजी से उभरे हैं। कालीचरण ने पहला टेस्ट न्यूजीलैंड के विरुद्ध १९७२ में जार्जटाउन में खेला था और उसी में उन्होंने शतक भी बनाया था। अगले टेस्ट में भी कालीचरण ने शतक लगाया। इसी वर्ष इंगलैंड के विरुद्ध कालीचरण ने दो शतक बनाये। १५ टेस्ट मैचों में कालीचरण १,१२२ रन बना चुके हैं। जूलियन का टेस्ट-कैरियर १९७३ में इंगलैंड के विरुद्ध शुरू हुआ था। केवल आठ टेस्ट मैचों में जूलियन ने तेईस विकेट लिये हैं और ३९२ रन बनायें हैं। कालीचरण की भांति रो ने भी टेस्ट-जीवन न्यूजीलैंड के विरुद्ध १९७२ में प्रारम्भ किया था। अंतर इतना है कि कालीचरण चौथे टेस्ट में पहली बार खेले थे जबकि रो ने पहले ही टेस्ट में अपना टेस्ट जीवन शुरू किया था। किंग्सटन में खेले गये पहले ही टेस्ट में रो ने पहली और दूसरी पारी में क्रमशः २१४ एवं १०० (आउट नहीं) रन बना डाले, लेकिन इसके बाद मानो रो रूपी ग्रह को ग्रहण लग गया। लेकिन रो ने अगले ही टेस्ट ब्रिजटाउन में सौ या दो सौ रन नहीं, बल्कि पूरे ३०२ रन बनाकर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध की। इसके बाद तो रो को बांध सकना इंगलैंड के लिए मुश्किल हो गया। अंतिम टेस्ट में उन्होंने एक शतक जड़ दिया। रो ने बारह टेस्टों में १,२०० से अधिक रन बनाये हैं।

एडी राबर्ट्स को विश्व के प्रख्यात क्रिकेट-समीक्षकों ने विश्व का सबसे तेज गेंदबाज माना है। पहले यह सम्मान आस्ट्रेलिया के डेनिस लिली को प्राप्त था। एडी अब तक केवल एक टेस्ट मैच ही खेल पाये हैं, लेकिन इंगलैंड के काउंटी मैचों में इस वर्ष उन्होंने जो दहशत फैलायी है, उससे उन्हें काफी प्रसिद्धि मिली है। विलेट ने १९७३ में आस्ट्रेलिया के विरुद्ध पहला टेस्ट मैच खेला था। वे तीन टेस्ट मैचों में सात विकेट ले चुके हैं।

—५९१२, गली जट्ट मिस्सर, फाटक रशीदखां बल्लीमारान, दिल्ली-११०००७.

एक दिन मुझे अपने न्यायालय में राजस्थान-सरकार के नियुक्ति-विभाग से एक विस्तृत आरोप-पत्र मिला। उसमें लिखा था कि कुछ वर्ष पूर्व जब मैं चित्तौड़गढ़ में डिप्टी कलक्टर था तब मैंने एक जागीरदार को जान-बूझकर मुआवजे की अधिक रकम दिला दी और आडिट द्वारा इस त्रुटि की ओर ध्यान आकर्षित कराने पर भी अधिक रकम की वसूली की कोई कार्यवाही नहीं की। इसका एकमात्र कारण मेरी बदनीयती बतलायी गयी।

मैंने अविलंब विस्तृत स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया कि 'मेरे द्वारा दी गयी आज्ञा न्यायिक थी और सरकारी वकील की उपस्थिति में पूरी बहस सुनकर दी गयी थी, और नियमानुसार संबंधित आज्ञा से मैंने सरकार को भी यथासमय अवगत करा दिया था। सरकार मेरी आज्ञा के विरुद्ध अपील कर सकती थी। दूसरे यह कि मैंने आडिट रिपोर्ट आने पर यथोचित कार्यवाही की थी। अपनी निष्पक्षता एवं ईमानदारी के संदर्भ में मैंने लगभग पंद्रह कलक्टरों की सूची भेज कर लिखा कि उनसे मेरे संबंध में पूछा जा सकता है इत्यादि।'

बार-बार स्मरणपत्र देने पर भी मुझे उपर्युक्त स्पष्टीकरण का कोई उत्तर नहीं मिला। इसी अवधि में अधिकारियों की पदोन्नति पर विचार हुआ और शायद उपर्युक्त आरोप-पत्र के कारण मेरी उपेक्षा कर दी गयी। एक दिन मैं अनायास सचिवालय पहुंचा और मैंने वहां संबंधित पत्रावली देखी तो ज्ञात हुआ कि क्षति-पूर्ति की दी गयी विवादग्रस्त आज्ञा मैंने नहीं, मेरे पूर्ववर्ती अधिकारी ने दी थी, अपितु आडिट द्वारा आपत्ति किये जाने पर अधिक दी गयी रकम की वसूली के लिए मैंने नोटिस भी दिया था।

मैंने नये मुख्य सचिव को अर्द्धशासकीय पत्र लिखा तब कहीं वह आरोप-पत्र वापस लिया गया।

—सुरेन्द्रप्रसाद गर्ग, जयपुर

एक दिन हमारे विभाग में किसी महोत्सव का आयोजन था, जिसमें राजनीतिज्ञ, पत्रकार आदि को एक विषय पर विचार प्रकट करने के लिए आमंत्रित किया गया था। विभाग की तरफ से उस विषय पर बोलने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। पुरस्कार के कारण यह आयोजन प्रतियोगिता का रूप ले चुका था। उन्हीं

दिनों हमारे विभाग में आडिट चल रहा था। आडिटर से मेरी दोस्ती हो गयी थी, मैंने उनसे कहा कि वे मुझे दस रुपये पुरस्कार दे दें और वह राशि मैं उन्हें बाद में लौटा दूंगा। एक माला भी मैंने उन्हें दे दी। सौभाग्य से मेरी कविता जंच गयी। किंतु जब पुरस्कार-वितरण हुआ, तो मेरा नाम न सुनकर भी आडिटर महोदय ने दस रुपये का पुरस्कार दे दिया। बधाइयां मिलने लगीं। लोगों ने मुझे कंधों पर उठा लिया, मगर मुझे लगा कि मैं अपनी शवयात्रा देख रहा हूं। जब मुझे मालूम पड़ा कि पुरस्कार मुझे इसलिए नहीं दिया गया कि मैं सरकारी कर्मचारी था (उसी विभाग का) तब सचमुच मुझे अपना जीवन मृत्यु से बदतर लगने लगा।

--अशोक तिवारी, गड़ियाबंद (बिहार)

सचाई एवं परिश्रम से किये कार्य की शीघ्र फल-प्राप्ति के लिए सरकारी नौकरी को ठुकराकर किसी गैरसरकारी प्रतिष्ठान में काम करना उचित समझता था। मैं एक छोटे व्यापारिक प्रतिष्ठान में प्रविष्ट हुआ। ईमानदारी एवं कठोर परिश्रम का फल यह हुआ कि वेतन-वृद्धि की रफ्तार पद-वृद्धि की रफ्तार से पीछे हो गयी और मैं शीघ्र ही व्यवस्थापक बन गया। अपने सम्मान एवं प्रतिष्ठानाधिकारी की सुविधा का खयाल करते हुए अपनी पिछड़ी 'रफ्तार' को बढ़ाने की मैंने कभी कोशिश नहीं की। कमरतोड़ महंगाई में भी अपने को मौन रखा, लेकिन अधीनस्थ एक कर्मचारी ने वेतन-वृद्धि के लिए त्यागपत्र की धमकी दी और अधिकारी ने गुप्त रूप से उसकी वेतन-वृद्धि भी कर दी, पर अपने स्वभावानुसार मैं अब भी मौन हूं।

--महेन्द्रनाथ पाण्डेय, रोहतास

कलक्ट्रेट में ड्राफ्ट्समैन की सर्विस मिली। आत्मनिर्भरता के ऊंचे आदर्श तथा समाज में बराबरी पाने की उच्चाभिलाषा को लेकर सेवा करने का महत्त्वपूर्ण कदम इस छोटे और पिछड़े हुए क्षेत्र में उठाया था। पहले ही दिन घूरती नजरों से घबराकर चाहने लगी कि धरती फट जाए और मैं उसमें समा जाऊं।

जब आठ घंटे काम करके तथा सौ-डेढ़ सौ फुट ऊंचे स्थित दफ्तर से उतरते हुए बहुत थक जाती हूं तब लगता है कि नौकरी छोड़ दूं और अपनी पढ़ाई पूरी कर लूं, पर स्वाभिमान आगे आ जाता है और थोड़ा पैसों का लालच भी।

--सरोज, दतिया (म. प्र.)

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत हों और वे १५० शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिए।

--संपादक

आज के जनतंत्रीय युग में हड़ताल का अधिकार महत्त्वपूर्ण अधिकार माना जाता है और इसलिए लगभग सभी जनतंत्रीय देशों में यह अधिकार जनता को प्राप्त है। वास्तव में हड़ताल करना असंतोष का प्रदर्शन मात्र है। मगर आजकल हड़तालें प्रायः राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए आयोजित की जाती हैं।

विश्व की सर्वप्रथम हड़ताल, आज से पांच हजार वर्ष पूर्व मिस्र में हुई थी। यह हड़ताल उन मजदूरों ने की थी, जो पिरामिड बनाने में लगे हुए थे। उन्होंने प्रबंधकों से मांग की थी कि उन्हें गेहूं के दलिये में डालने के लिए कुछ लहसुन दिया जाए। प्रबंधकों ने इस मांग की उपेक्षा की। इसलिए मजदूरों ने अपना कार्य बंद कर दिया। प्रबंधकों को झुकना पड़ा और विवश होकर मजदूरों की मांग माननी पड़ी।

इसी प्रकार भारत में पहली हड़ताल, लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व मई, १८२७ में कलकत्ता में हुई थी। यह हड़ताल कहारों ने अंगरेजों के विरुद्ध की थी। उन दिनों अंगरेज अकसर पालकी ही में बैठकर आया-जाया करते थे। पालकी ढोनेवाले होते थे उड़िया कहार। यात्रा पूरी हो जाने पर प्रायः अंगरेज पूरा किराया नहीं चुकाते थे। कहार जब पूरे किराये की मांग करते तब वे उन्हें डांट-डपटकर भगा देते। इससे कहार बड़े परेशान रहा करते थे। उन्होंने एक संगठन बनाया और यह निर्णय किया कि वे रवाना होने से पहले ही सवारियों से अपना किराया ले लिया करेंगे। अंगरेजों ने यह सुना तो बहुत बिगड़े। कलकत्ता पुलिस कमिश्नर ने कहारों के इस निश्चय के विरुद्ध कार्रवाई के रूप में उनके लिए लाइसेंस लेना और बिल्ला लगाना आवश्यक घोषित कर दिया। कहारों ने इस व्यवस्था को समाप्त करने की मांग की, मगर अधिकारी अपनी जिद पर अड़े रहे। इस पर, कहारों ने २२ मई, १८२७ को

काम करना बंद कर दिया। इस हड़ताल की सारे देश में बड़ी चर्चा हुई। उन दिनों सवारी के अधिक साधन भी उपलब्ध नहीं थे। इससे जनता को बहुत परेशानी हुई। अंगरेज भी इस हड़ताल पर बहुत क्रुद्ध थे। अधिकारियों ने कहारों पर काफी अत्याचार किये और उन्हें हड़ताल तोड़ने के लिए बाध्य किया। परिणाम हुआ कि अत्याचारों के आगे कहारों को झुकना पड़ा और चार दिन बाद ही यह हड़ताल टूट गयी। भले ही यह हड़ताल ऊपरी तौर से असफल रही, किंतु इससे मजदूरों को अपने संगठन का महत्त्व समझ में आ गया और अंगरेज भी उन्हें पूरा किराया चुकाने के मामले में सावधान रहने लगे।

विश्व में कई विचित्र हड़तालें भी हो चुकी हैं। १८३७ में, इंगलैंड के दो पुलिस अधिकारियों ने इस बात पर हड़ताल कर दी कि वे आपस में इस बात का फैसला न कर सके कि एक विशेष अपराधी को मृत्युदंड देने का उत्तरदायित्व किस पर है? इस हड़ताल के कारण अपराधी का मृत्युदंड स्थगित होता रहा। मामला विभाग के उच्च अधिकारियों के पास पहुंचा। उन्होंने अधिकारियों के अलग-अलग कार्यक्षेत्र की व्याख्या कर दी। साथ ही उस अपराधी के अतिरिक्त, उनमें से एक पुलिस अधिकारी को भी मृत्युदंड दिया गया क्योंकि उच्च अधिकारियों के अनुसार उस अधिकारी ने हड़ताल करके अनुशासन भंग किया था।

इसी प्रकार एक अत्यंत मनोरंजक हड़ताल सन १९५२ में इटली में हुई थी। वहां पर त्रिवागिया नाम के एक गांव के नागरिकों ने महंगाई के विरुद्ध अपनी भावनाएं व्यक्त करने के लिए यह निश्चय
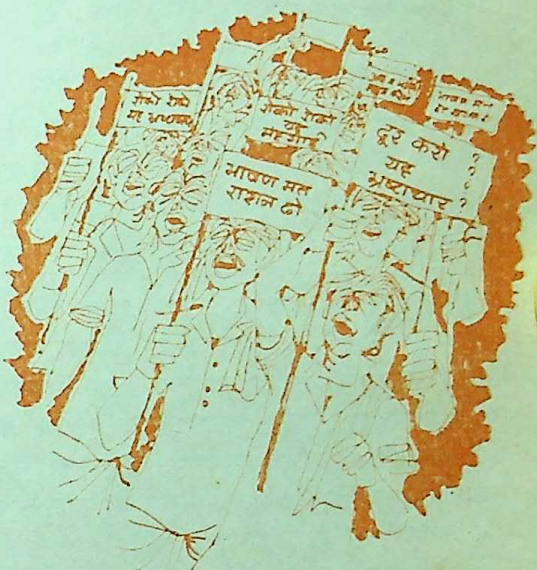
किया कि अब उस गांव में कोई बच्चा नहीं पैदा किया जाएगा। यह हड़ताल लगातार तेरह माह तक चलती रही। इसके बाद अचानक एक परिवार में बच्चा पैदा हो गया। इस समय तक गांव के निवासी भी अपनी इस हड़ताल से काफी तंग आ चुके थे। पादरी और प्रशासन के अधिकारी भी हड़ताल तोड़ने के लिए गांववालों पर

काफी दबाव डाल रहे थे। परिणाम यह हुआ कि जब उस परिवार में बच्चा उत्पन्न हुआ तब उसका विरोध करने के स्थान पर उन्होंने उसे शुभ माना, और इस तरह हड़ताल अपने-आप समाप्त हो गयी।

अमरीका की एक हड़ताल काफी प्रसिद्ध है। वहां एक फैक्टरी का मालिक किसी पर-स्त्री के प्रेम-पाश में बंध गया और उस पर वह काफी धन खर्च करने लगा। मामले की जानकारी जब उसकी पत्नी के पास पहुंची तब उसने इस बात के लिए पति का सख्त विरोध किया। पति ने इस विरोध की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। तब पत्नी फैक्टरी के मजदूरों के पास पहुंची और उन्हें हड़ताल के लिए उकसाया। उसका तर्क था कि जब फैक्टरी-मालिक अपनी अय्याशी के लिए इतना धन नष्ट कर सकता है तब वह मजदूरों का वेतन भी बढ़ा सकता है। मजदूरों ने हड़ताल कर दी। फैक्टरी-मालिक की पत्नी ने उनका नेतृत्व किया। परिणाम यह हुआ कि कुछ दिनों की हड़ताल के बाद, फैक्टरी-मालिक को मजदूरों का वेतन बढ़ाना पड़ा, लेकिन साथ ही उसने पत्नी को तलाक दे दिया।

पुराने समय में होनेवाली हड़तालों और आजकल की हड़तालों में कोई विशेष अंतर नहीं आया है। तब भी छोटी-छोटी बातों को लेकर हड़ताल हो जाया करती थी और आजकल भी प्रायः बिना किसी महत्त्वपूर्ण कारण के हड़ताल कर दी जाती है जिससे उत्पादन और वितरण-व्यवस्था

...ग। मुझे भी हंसी आ गयी। अब वे छात्रा ...ा पीछा छोड़ मेरे पास आकर कहने लगे, क्यों साहब, आप क्यों मुसकराये?"

मैंने जवाब दिया, "मौसम ही ऐसा है!"

...न्होंने शायद मुझे नया विद्यार्थी समझ-...र रोब से पूछा, "क्या आप ऐडमीशन ...ने आये हैं?" मेरे 'हां' कहने पर एक ...ात्र ने अन्य दोनों की तरफ देखकर चुटकी ...ते कहा, "देखिए, ये साहब बुढ़ापे में यहां ...ी-यूनीवर्सिटी में ऐडमीशन लेने आये हैं।" ...फिर उन सज्जन ने अकड़ते हुए मेरा परिचय ...ानना चाहा। मैंने जब बताया कि इसी

मुकुल रानी त्रिपाठी, रजनीकांत मुद्गल

पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इस हानि की आशंका को टालने के लिए ही, जापान में अधिकतर हड़तालें कार्यालयों का समय समाप्त हो जाने के बाद आयोजित की जाती हैं। जनतंत्र में अपना उत्तरदायित्व समझते हुए कर्मचारी हड़ताल के मामले में जापान का अनुकरण करें तो समस्याएं सहज ही सुलझ सकती हैं।

—राजकीय कालेज, दौसा (राजस्थान)

उन्हें वास्तविकता ज्ञात हो गयी, क्योंकि चौथे दिन ही आगे की सीट से फिर आवाज आयी—"अरे साहब, कभी-कभी समझने में भूल हो ही जाती है!"

मैंने भी तुरंत अपनी सहपाठिनी को कुहनी मारकर कह दिया—"अरे साहब, देर आयद, दुरुस्त आयद !

—पुष्पवल्लरी पाण्डेय, एम. एल. बी. कालेज, लश्कर (ग्वालियर)

सितंबर '७३ में विद्यालय छात्र-संघ के चुनाव हो रहे थे। अपना ग्रुप-इंचार्ज होने के कारण मुझे अत्यंत परिश्रम करना पड़ रहा था। परिणामस्वरूप कमजोरी के कारण चुनाववाले दिन अचानक विद्यालय में साथियों से बातचीत के दौरान बेहोश हो गिर पड़ा और संध्या तक ही होश में आ पाया। होश में आने पर जब ज्ञात हुआ कि हमारे सभी साथी विजयी हुए हैं, बधाइयों का तांता लग गया। तभी कुछ साथी कहने लगे, "आज तुम्हारे इस बेहोशी के नाटक ने लाज रख ली।" मैंने उन्हें समझाया कि यह नाटक नहीं था, परंतु कोई भी मानने को तैयार नहीं था। पर जब मेरा अभिन्न मित्र 'रवि' एवं छात्रसंघ का नव-निर्वाचित अध्यक्ष भी मुझे इस नाटक के लिए बधाई देने आ पहुंचा तब मैंने सिर धुन लिया।

—रजनीकान्त मुद्गल, लाजपतराय महाविद्यालय, साहिबाबाद (गाजियाबाद)

बी. ए. (द्वितीय वर्ष) की कक्षाएं ऊपर लगती थीं। प्रायः हीरो-स्टाइल छात्र छात्राओं को तंग करते थे। एक दिन मनोविज्ञान के प्रोफेसर रंजीतसिंहजी ने बी. ए. प्रथम वर्ष और द्वितीय वर्ष की संयुक्त कक्षाएं लीं। छात्रों की संख्या बड़ी थी, अतः हम छात्राओं की शामत थी। घंटा बजने में दस मिनट की देर थी, पर 'सर' हम लोगों की ओर मुखातिब हुए और बोले, "आप लोगों की पढ़ाई समाप्त! आप लोग

नीचे चली जाइए।" छात्र वर्ग कुछ बेचैन हुआ तो 'सर' ने बड़ी गंभीरता से कहा, "आप लोगों को एक बात बतानी है। छात्राएं चली जाएं तो बताऊंगा।" सभी छात्रों के चेहरों पर उपहासास्पद मुसकानें तैरने लगीं। हम चुपचाप नीचे चली गयीं।

बाद में पता लगा, सीढ़ियों पर टकराहट से बचाव के लिए 'सर' ने बहाना बनाकर छात्रों को रोका था।

--मुकुलरानी त्रिपाठी, एम. ए. (पूर्वार्द्ध)
साकेत महाविद्यालय, फैजाबाद

लगे। मुझे भी हंसी आ गयी। अब वे छात्रा का पीछा छोड़ मेरे पास आकर कहने लगे, "क्यों साहब, आप क्यों मुसकराये?"

मैंने जवाब दिया, "मौसम ही ऐसा है!" उन्होंने शायद मुझे नया विद्यार्थी समझकर रोब से पूछा, "क्या आप ऐडमीशन लेने आये हैं?" मेरे 'हां' कहने पर एक छात्र ने अन्य दोनों की तरफ देखकर चुटकी लेते कहा, "देखिए, ये साहब बुढ़ापे में यहां प्री-यूनीवर्सिटी में ऐडमीशन लेने आये हैं।" फिर उन सज्जन ने अकड़ते हुए मेरा परिचय जानना चाहा। मैंने जब बताया कि इसी

बायें से: पुष्पवल्लरी पाण्डेय, आर. डी. शर्मा, मुकुल रानी त्रिपाठी, रजनीकांत मुद्गल

विश्वविद्यालय में प्रवेश लेनेवालों की काफी भीड़ थी। मैं लेखा-विभाग में प्रवेश-शुल्क जमा करने के लिए पर्ची देकर बैठा था। इसी बीच तीन पुराने छात्र बरामदे में एक छात्रा के पीछे-पीछे उसका ध्यान आकर्षित करने के लिए जोर से आवाजें लगाते गुजरे। छात्रा ने घबराकर पीछे देखा तो वे लोग हंसने

विश्वविद्यालय से मैंने आनर्स सहित इंजीनियरिंग की डिग्री ली है, और यहां एम. एस-सी. इंजीनियरिंग में ऐडमीशन के लिए आया हूं। फिर तो उनके चेहरे देखने लायक थे।

—आर. डी. शर्मा, जाकिर हुसेन इंजीनियरिंग कालेज, मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

क्षणिकाएं

केशराशि

बिखेर दी तुमने
केशराशि अपनी पीठ पर
जैसे—
आमंत्रण हो यह
चंदा के आने का
सूरज के जाने का

स्मृति

मन के कमरे में भटकते-भटकते
तुम्हारी स्मृति आयी
जैसे कोई किरायेदार
खाली मकान पा जाए
मिन्नतें कर
सहमा-सहमा
बस जाए

पुराने दोहे : नया संदर्भ

जहां झूठ तहं लूट है
जहां सत्य तहं कष्ट
जहां लोभ तहं लाभ है
लोकतंत्र यह भ्रष्ट
कार नयी बंगला नया
मनुआं बेपरवाह
नये-नये परमिट मिलें
सोई शाहंशाह
काम उसी का कीजिए
जिससे मतलब होय
काला धन भी अति बढ़े
बंगला मोटर दोय

—श्याममोहन दुबे

जीवन

तीन पायदानों की एक सीढ़ी
जिन्हें चढ़ते-चढ़ते
समाप्त हो जाती है
मनुष्यों की पीढ़ी-दर-पीढ़ी

—शशि तिवारी

चंद प्रतिक्रियाएं

सात रंगों का बना करके धनुष
ढक लिया आकाश ने सारा कलुष
सोचता हूं देखकर इतना वसंत
कब बहारों का भला आएगा अंत
धूप में अटके हुए दो-चार कण
भोग पाएंगे नहीं अभिसार-क्षण
दो-एक पत्ते सड़क के किनारे
चुपचाप लगते हैं कितने बेचारे
झांकना खिड़की से दोपहर में
और उबा देता है इस शहर में

—विकास राय

महंगाई

पच्चीस वर्ष पहले मरा हुआ आदमी
अगर आज जीवित हो जाए
तो महंगाई देखकर कहेगा—
मैं पुनः मर जाऊं लेकिन इतना महंगा
गेहूं कभी न खाऊं

—दशरथपाल 'सागर'

अशोक-वन की सीता

ओ अयाची मन की सीता
कामनाओं की पंचवटी में
फिर कोई तृष्णा, कनक-मृग बन
न जाए छल तुझे
तेरी आस्था को

बात मेरी सुन
अब न कोई राम साधेगा लक्ष्य उस मृग पर
अब नहीं कोई गीध जटायु-सा
जो कनक काया पर तुम्हारी
पाप की छाया न पड़ पाये

इसी कारण
स्वयं को विसर्जित कर दे
तू रहेगी निर्वसित ही, सिंधु-पार
अशोक-वन में
बाट तकते युग मिटेंगे
किंतु
नहीं आएगा कोई हनुमान-सा संबल
तुझे धीरज बंधाने
इसलिए ओ मन, बात मेरी सुन ! न बुन सपने
कनक-मृग यह, मृग नहीं, छल है

—नमिता तिवारी

जन्म : १ जुलाई १९५३,
शिक्षा : एम. ए. (हिंदी)
(संप्रति राजनीतिशास्त्र में अध्ययनरत)

"आसपास फैली सामाजिक विसंगतियों के प्रति विद्रोह-भावना की अभिव्यक्ति कविताओं तथा कहानियों के माध्यम से होती रही है। कभी किसी के आगे किसी भी रूप में हाथ फैलाकर अपमानित नहीं हुई हूं, किंतु किसी-न-किसी माध्यम से समाज की सड़ांध को थोड़ा-सा कम करके ताजी हवा का एक झोंका ही महसूस करने को बेकल हूं।"

बीमादारों के लाभ के लिए

पत्ते के हेरफेर की सूचना निगम को दीजिए।
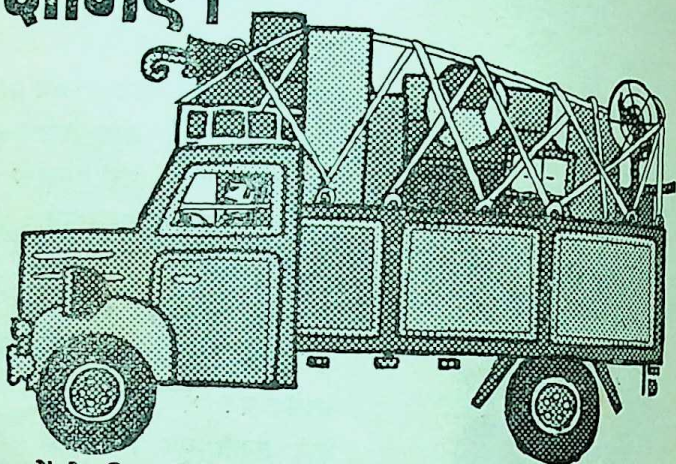
इससे दावों के निपटारे में मदद मिलती है

जीवन बीमे के कई दावों का निपटारा इसलिए नहीं होता या उसमें देरी इसलिए लगती है कि बीमेदार अपने दिये हुए पते पर नहीं पाये जाते। अतः यह आपके हित में है कि आप अपने परिवर्तित पते की सूचना तत्काल निगम के कार्यालय को दे दें।

दावे के शीघ्र निपटारे के लिए कृपया इन कदमों को उठाइए • अपने वारिसों का नाम तुरन्त दर्ज करा लीजिए • अपनी आयु का प्रमाण-पत्र भेजकर पालिसी पर आयु प्रमाणित करा लीजिए • प्रीमियमों का भुगतान समय पर और सही कार्यालय में कीजिए।

जिससे आप ने बीमा पालिसी ली थी उसी जीवन बीमा एजेंट से सहायता लीजिए या निगम के निकटतम कार्यालय से सम्पर्क प्रस्थापित करके यकीन कर लीजिए कि आपकी पालिसी पूर्ण रूप से चालू है या नहीं।

लाइफ इन्श्योरेन्स कारपोरेशन आफ इण्डिया

पिछले अंक में प्रख्यात हस्तरेखाविद प्रो. पी. टी. सुन्दरम् ने धन रेखा के बारे में बताया था—यहां प्रस्तुत है विवाह रेखा के बारे में कुछ महत्त्वपूर्ण जानकारी
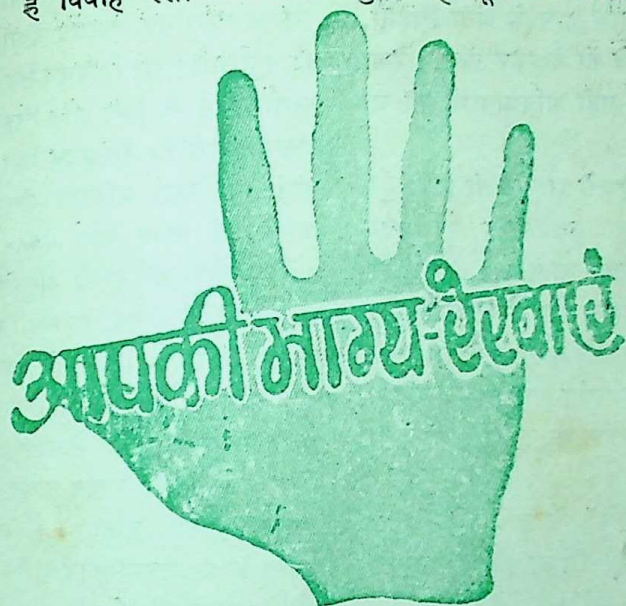
● पी. टी. सुन्दरम्

गौण रेखाओं में प्रमुख विवाह रेखा

विवाह रेखा महत्त्वपूर्ण रेखा नहीं है, फिर भी गौण रेखाओं में उसका प्रमुख स्थान है। उसे किसी पुरुष और स्त्री के मध्य होनेवाले प्रेम को द्योतक करनेवाली रेखा भी माना गया है। प्रेम भी विवाह का एक स्वरूप ही है। विवाह रेखा के वास्तविक महत्त्व को स्पष्ट करना बहुत कठिन है। जब हम किसी व्यक्ति के हाथ में विवाह रेखा देखते हैं तब हमारे लिए यह कह पाना मुश्किल होता है कि उस व्यक्ति का विवाह हो गया है या होने-वाला है। दूसरे शब्दों में, विवाह रेखा देख-कर यह कह पाना कठिन है कि व्यक्ति विवाहित है या अविवाहित। फिर भी हस्तरेखाविद विवाह की रेखा देखते हैं और भविष्यवाणियां करते हैं, और वह भी सही-सही। यूरोपीय हस्तरेखाविदों का विश्वास है कि इस रेखा के आधार पर

विवाह का समय बताना मुश्किल है।

भारतीय हस्तरेखाविदों का मत इससे अलग है। उनका कहना है कि विवाह रेखा के साथ-साथ हाथ के अन्य चिह्नों, जैसे पर्वतों आदि को देखकर विवाह रेखा के बारे में सही-सही भविष्यवाणी की जा सकती है।

विवाह रेखा कहां से शुरू होती है?

१. विवाह रेखा बुध पर्वत पर हृदय रेखा के समानांतर होती है। २. जीवन रेखा से निकलकर शुक्र पर्वत की ओर जानेवाली रेखा भी विवाह रेखा मानी गयी है। ३. गुरु पर्वत पर क्रास। ४. चंद्र पर्वत से निकलकर भाग्य रेखा की ओर जानेवाली रेखा।

कुछ व्यक्तियों के हाथों में विवाह रेखा या संबंधित चिह्न होते ही नहीं, पर इससे यह अर्थ लगा लेना कि उस व्यक्ति का विवाह होगा ही नहीं, गलत है। हां, यह अवश्य कहा जा सकता है कि उस समय उस व्यक्ति के विवाह के कोई आसार नहीं हैं।

भारतीय हस्तरेखाविदों के अनुसार बुध पर्वत पर सीधी रेखा सफल, सुखी वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन की प्रतीक होती है। पुरुष के हाथ में विवाह रेखा का हृदय रेखा की ओर मुड़ना अशुभ है। ऐसी रेखावाले व्यक्ति की पत्नी की मृत्यु किसी रोग के कारण होती है (चित्र १, २–१)। यह बात निश्चयात्मक रूप से कही जा सकती है। यदि विवाह रेखा के अंत में दो शाखाएं हों तो पति-पत्नी में अलगाव की स्थिति पैदा होती है। स्त्रियों के हाथ में ऐसी दो शाखाओंवाली विवाह रेखा असफल एवं कष्टप्रद वैवाहिक जीवन का पता देती है पर निश्चित रूप से भविष्यवाणी करने के लिए और चिह्नों का भी देखना जरूरी है। जैसे हृदय रेखा से निकली कोई एक रेखा मस्तिष्क रेखा को पार करती हुई भाग्य रेखा को काटे। ऐसी स्त्री के पैर की दूसरी अंगुली, अंगूठे से बड़ी होती है। सूर्य रेखा को स्पर्श करने या उसमें मिल जानेवाली विवाह रेखा, चाहे पुरुष के हाथ में हो अथवा स्त्री के, अतिशय सौभाग्य और संपन्नता की निशानी होती है। उनका जीवन-साथी अवश्य ही अत्यंत प्रसिद्ध होता है। स्वतंत्रतापूर्व भारत के वायसराय लार्ड कर्जन की पत्नी, जो कि अमरीकी थीं, के हाथ में ऐसी ही रेखा थी। (चित्र १, १)

विवाह रेखा के अंत में दो शाखाएं हों तथा उनमें से एक शाखा हृदय की ओर झुकती हो तो निर्दयी एवं हृदयहीन पति के कारण स्त्री का घरेलू जीवन झगड़ालू हो जाता है। यदि ऐसी रेखावाली स्त्री के पति के हाथ में भी ऐसी ही रेखा हो तो पारिवारिक जीवन समाप्त हो जाता है।

यदि विवाह रेखा के अंत में दो शाखाएं हों और उनसे आगे एक द्वीप बनता हो (चित्र १, ३–३) तो प्रतिष्ठा की हानि होती है। ऐसे चिह्नों वाले व्यक्ति को अपमानित होना पड़ता है। किसी द्वीप से निकलने

वाली विवाह रेखा विवाह के पूर्व चरित्र-दोष की सूचक होती है। यदि विवाह रेखा ऊपर की ओर मुड़े तो व्यक्ति आजन्म कुंआरा रहता है। (चित्र १–४) यदि विवाह रेखा शुक्र पर्वत की ओर मुड़कर दो भागों में विभाजित हो तो वैवाहिक जीवन का अंत तलाक में होता है। कुछ अनुभव शून्य हस्तरेखा विद मानते हैं कि यदि बुध पर्वत पर विवाह रेखा एक से अधिक विवाह रेखाएं होने के बावजूद व्यक्ति एक ही विवाह करता है, जबकि उसे विवाह रेखा जितने विवाह करने चाहिए। ऐसा क्यों?

असल में विवाह रेखा देखते समय तथा शुक्र चंद्र पर्वत पर स्थित अन्य रेखाओं का भी अध्ययन करना चाहिए।

विवाह कब?

यदि विवाह रेखा, हृदय रेखा के

चित्र-१ चित्र-२ चित्र-३
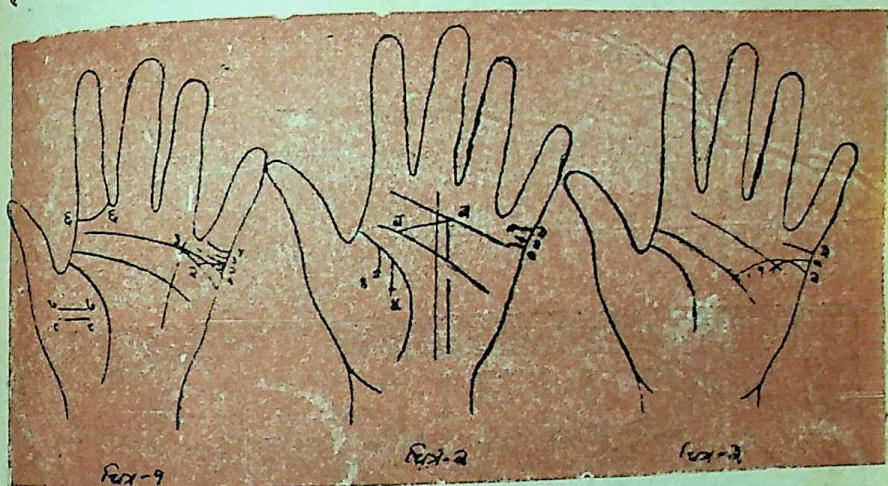
किसी प्रभावक रेखा से न मिले, पर उन्हें जोड़नेवाली रेखा पर द्वीप हो तो विवाह के पूर्व कोई अनुचित संबंध होता है। वैवाहिक जीवन संबंधी किसी भी भविष्य-कथन के पूर्व बुध पर्वत पर स्थित प्रणय रेखाओं का तथा शुक्र एवं चंद्र पर्वतों पर स्थित अन्य चिह्नों व रेखाओं का भी अध्ययन करना चाहिए। इनके जरिए विवाह का समय भी जाना जा सकता है।

निकट हो तो विवाह शीघ्र होता है। यदि हृदय रेखा तथा कनिष्ठा की अंतिम पोर की रेखा के मध्य में हो तो सामान्यतः विवाह ३० तथा ३२ वर्ष की अवस्था में होता है। यदि विवाह रेखा इससे भी अधिक ऊपर की ओर हो तो विवाह काफी विलंब से होता है।

बुध पर्वत पर रेखाएं लंबी हों। छोटी रेखाएं विवाह की बनिस्बत विपरीत

सेक्सवाले [illegible] के प्रभाव को बतलाती है। बुध पर्वत पर स्थित लंबी विवाह रेखा शुभ मानी गयी है। शुक्र पर्वत पर स्थित प्रभावक रेखाओं को विवाह रेखाएं मानना ठीक न होगा। इसी तरह चंद्र पर्वत से आती रेखाओं को भी विवाह रेखा मानना गलत होगा। चंद्र पर्वत पर स्थित प्रभावक रेखाएं विपरीत सेक्स अथवा पत्नी से सहायता मिलने की द्योतक होती है।

चंद्र पर्वत से ऊपर की ओर निकल कर भाग्य रेखा में मिल जानेवाली रेखा सुखी वैवाहिक जीवन की परिचायक होती है। यदि विवाह रेखा अंत में दो शाखाओं में विभाजित हो जाए तथा एक शाखा हाथ के मध्य भाग की ओर जाए तो [illegible] अथवा कानूनी अलगाव होता है। [illegible] एक बारीक-सी रेखा मंगल क्षेत्र की [illegible] जाए तो इस बात की पुष्टि हो सकती है (चित्र २, १–१)

सही जीवन साथी के चुनाव में [illegible] हस्तरेखाविद् काफी सहायता कर सकता है। कारण स्पष्ट है। वह हाथ की रेखाओं को देखकर हमारे भावी जीवन-साथी के नैतिक-सामाजिक आकांक्षाओं तथा [illegible]रिक लालसाओं के बारे में बतला सकता है। वह मानवीय प्रवृत्तियों का विश्लेषण कर कह सकता है कि दोनों पक्ष एक दूसरे के उपर्युक्त होंगे या नहीं!

तर्जनी के मूल में क्रॉस अथवा खड़ी रेखाओं की उपस्थिति व्यक्ति के संसार त्यागकर संन्यासी हो जाने की सूचना देती है। हालांकि ऐसे व्यक्ति के हाथ में अच्छी विवाह रेखाएं होती हैं फिर भी उसका विवाह नहीं होता। (चित्र १, ६–६)

शुक्र पर्वत पर खड़ी रेखाएं व्यक्ति की उप-पत्नियों की सूचक होती है। रेखाओं की संख्या उपपत्नियों की संख्या दर्शाती है। स्त्री के हाथ में ऐसी रेखाओं की उपस्थिति भी उसके उतने ही 'संबंधों' की सूचक होती है। (चित्र १, ७–७)

यदि किसी पुरुष के हाथ में हृदय रेखा की एक शाखा तर्जनी तथा मध्यमा के बीच जाती हो तथा दूसरी तर्जनी की ओर जाती हो तो वह अच्छा, समझदार पति होता है। यदि तर्जनी सीधी और लंबी हो, उसकी तीनों पोरें समान एवं विकसित हों तो भी व्यक्ति अच्छा पति सिद्ध होता है। आम तौर पर विकसित शुक्र एवं चंद्र पर्वत औरों का हृदय जीतनेवाले गुणों—यथा सहानुभूति-प्रेम आदि को सूचित करते हैं। सीधी कनिष्ठा मानसिक शक्ति की परिचायक होती है। ऐसी अंगुलीवाला व्यक्ति जीवन को आसानी से गुजारता है। अच्छी भाग्य रेखा तथा सूर्य रेखा के साथ यदि जीवन रेखा से गुरु, शनि तथा सूर्य पर्वत की ओर रेखाएं जाती हों तो व्यक्ति अच्छा पति सिद्ध होता है।

चौड़ी हथेली के साथ कनिष्ठा नुकीली हो तथा मस्तिष्क रेखा जरा-सा नीचे की ओर झुकी हुई हो एवं गुरु पर्वत पर अच्छी रेखाएं हों तो ऐसी स्त्री अच्छी पत्नी सिद्ध होती है। वह परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढाल सकती है। उसका व्यवहार भी अच्छा होता है। ऐसी स्त्री के हृदय में प्रेम भी होता है। मणिबंध पर मछली का चिह्न मान-सम्मान एवं यथेष्ट सम्पत्ति मिलने का द्योतक है। वह संतानवती भी होती है।

यदि शुक्र पर्वत पर, अंगूठे के नीचे खड़ी रेखाएं हों तो उनसे उस स्त्री के अवैध संबंधों का पता चलता है।

वैधव्यसूचक चिह्न

स्त्रियों के हाथों में वैधव्यसूचक चिह्न भी देखे जा सकते हैं। ये इस प्रकार हैं: (चित्र २–१, २, ३, ४, ५, ब-ब) १. बुध पर्वत पर, हृदय रेखा की ओर झुकती हुई विवाह रेखा, २. विवाह रेखा पर काला बिंदु, ३. नीचे की ओर झुकती विवाह रेखा तथा जिस स्थान पर वह झुकी हो वहां काले बिंदु की उपस्थिति, ४. शुक्र पर्वत पर स्थित प्रभावक रेखा पर तारा, ५. प्रभावक रेखा को काटती आड़ी रेखा (ब-ब) हृदय रेखा से निकलकर भाग्य रेखा को काटते हुए मस्तिष्क रेखा में मिलने वाली रेखा, टूटी हुई भाग्य रेखा। इसके साथ अन्य चिह्नों का भी अध्ययन करना चाहिए। पुरुष के हाथ में ऐसे चिह्नों की उपस्थिति उसके जीवन-साथी की मृत्यु की सूचक होती है। ●
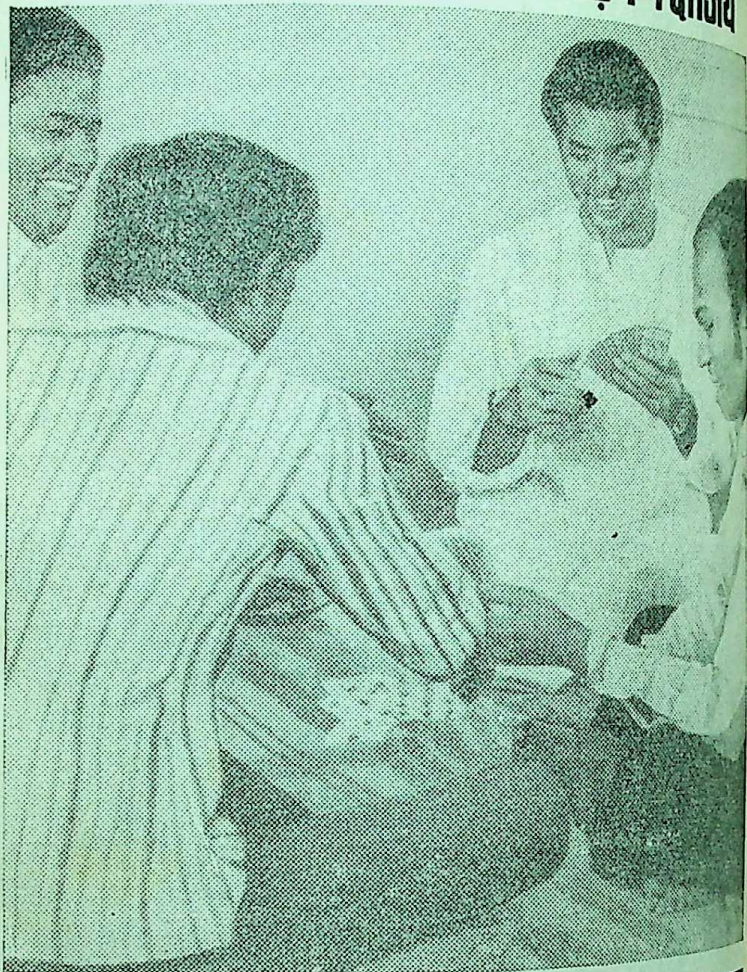
एस्प्रो लीजिये
ASPRO
माइक्रोफ़ाइन्ड एस्प्रो दर्द को जल्दी खींच निकालता है

अभिलाषा जायसवाल, कानपुर : ठंड के दिनों में शरीर में सिहरन और कंप-कंपी क्यों होती है?

सिहरन या कंपकंपी शरीर की मांसपेशियों में स्वतः ही होनेवाले कंपन के कारण होती है। यह कंपन शरीर में ताप का उत्पादन बढ़ाता है। हमारा शरीर जब गतिमान होता है तो रासायनिक ऊर्जा यांत्रिक ऊर्जा में परिणत हो जाती है, जिससे ताप उत्पन्न होता है। अतः मांसपेशियों के कंपन से शरीर में गरमी आती है। ठंड लगने पर शरीर की मांसपेशियां स्वचालित नाड़ी-तंत्र के नियंत्रण में सिकुड़ने लगती हैं। जब उनका तनाव काफी बढ़ जाता है तो मांसपेशियों का यह संकुचन तरंगायित भी हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप सारे शरीर में सिहरन फैल जाती है। लेकिन यह सिहरन या कंपकंपी शरीर में ताप उत्पन्न करके ठंड से हमारी रक्षा करती है। इस प्रकार इसे शरीर के ताप-नियंत्रण की जटिल प्रक्रिया का ही एक अंग कहा जा सकता है।

शैलबाला सिंह, रांची : जुकाम का इलाज करने के लिए आजकल विटामिन 'सी' का प्रयोग खूब होने लगा है। कई पत्रिकाओं में भी इसे जुकाम की रामबाण औषध बताया गया है। लेकिन क्या यह सचमुच हानिरहित है? क्या इसका सेवन गोली के रूप में ही किया जा सकता है या खाद्य-पदार्थों से भी इसे प्राप्त किया जा सकता है? यदि हां, तो कौन-कौन से खाद्य-पदार्थों से?

विटामिन 'सी' वास्तव में एक अम्ल है, जिसे एस्कार्बिक अम्ल कहते हैं। मानव-शरीर न तो इसे स्वयं बना सकता है, न अपने भीतर जमा करके रख सकता है, इसलिए आहार के द्वारा इसे प्रतिदिन प्राप्त करना आवश्यक है। जुकाम दूर करने के लिए एक दिन में २५० मि. ग्रा. विटामिन 'सी' लेने की राय दी जाती है। इससे अधिक मात्रा में और नियमित रूप

से यह विटामिन यदि गोली के रूप में सेवन किया जाए तो उससे स्वास्थ्य को हानि हो सकती है। एस्कार्बिक अम्ल की अधिकता से पेट खराब हो सकता है और दस्त लग सकते हैं। यदि इस अम्ल की मात्रा बहुत अधिक बढ़ जाए तो रक्त के जम जाने का भी खतरा पैदा हो जाता है। गर्भवती स्त्रियों को तो इसका सेवन विशेष सावधानी के साथ करना चाहिए, क्योंकि प्रतिदिन बड़ी मात्रा में इसके सेवन से

गर्भस्थ भ्रूण पर दुष्प्रभाव पड़ सकता है। सामान्यतः यदि आहार के द्वारा ३० से ९० मि. ग्रा. तक विटामिन 'सी' प्राप्त होता रहे तो शरीर को जरूरत भर का एस्कार्बिक अम्ल मिलता रहता है। नीबू तथा नीबू-वर्ग के फलों (जैसे संतरा, मौसमी, खट्टा आदि) में और टमाटर, आलू, शकरकंद, मटर, फूलगोभी, आंवला तथा पालक आदि सब्जियों में विटामिन 'सी' खूब रहता है। दैनिक आहार में यदि ये चीजें रहें तब शायद विटामिन 'सी' की गोलियां अलग से खाने की जरूरत न पड़े।

संतोषकुमार जैन, खंडवा : ईश्वर-प्रणिधान क्या है ?

पतंजलि ने मन की हलचल को रोकने के कई उपाय बताये हैं, उनमें से ही एक उपाय है ईश्वर-प्रणिधान। इसका अर्थ है ईश्वर का नाम अर्थ-भावना के साथ जपना और उसके स्वरूप का विचार करना।

पतंजलि ने ईश्वर का जप करने के लिए प्रणव अर्थात ओंकार का सुझाव दिया है।

पवन चंदेल, मुजफ्फरपुर : 'ट्राइकोग्रामा' और 'कीसोपा' नामक कीड़ों से फसलों की रक्षा हो सकती है, ऐसा सुनने में आया है। ये क्या हैं और फसलों की रक्षा के लिए इनका प्रयोग कैसे किया जाता है ?

ट्राइकोग्रामा ततैया से मिलता-जुलता एक छोटा-सा कीड़ा होता है। इस कीड़े की खूबी यह है कि यह फसल को नुक- पहुंचानेवाले अन्य कीड़ों को नष्ट कर है। यह बड़ी चतुराई से अन्य कीड़ों अंडों पर अपने अंडे देता है और अंडों से निकलनेवाली सुंडियां अन्य के अंडों को खाकर नष्ट कर देती ट्राइकोग्रामा (डिंब-भक्षी) इस शलजम, सेब, मटर, मक्का तथा पौधों पर लगनेवाले कीड़ों को नष्ट देता है।

कीसोपा भी इसी प्रकार फसल नुकसान पहुंचानेवाले कीड़ों को नष्ट देता है। इसलिए इन कीटनाशी के कृत्रिम प्रजनन के द्वारा इनकी संख्या बढ़ाकर आवश्यकतानुसार इनका प्रयोग करने के उपाय खोजे जा रहे हैं। रूस लेनिनग्राद स्थित अखिल संघीय पौधरक्षा संस्थान के वैज्ञानिकों ने प्रयोगशालाओं में ट्राइकोग्रामा का ठीक उसी प्रकार कृत्रिम प्रजनन शुरू कर दिया है, जिस प्रकार इन्क्यूबेटरों में मुर्गी के अंडों से चूजों का किया जाता है। प्रयोगशाला में तैयार करने के बाद इन कीड़ों को हानिकारक कीट-पतंगों से ग्रस्त खेतों में छोड़ दिया जाता है।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

आनन्दप्रकाश भारद्वाज, पूरनपुर : दिल कैसे टूटता है ?

इस पर निर्भर करता है कि तोड़ने-वाला कौन है!

—बिंदु भास्कर

पंजाबी की श्रेष्ठ कहानियां : पंजाबी कहानी-साहित्य के विभिन्न सोपानों का प्रतिनिधित्व करती हुई ये कहानियां पाठकों के समक्ष अपना संक्षिप्त विकास प्रस्तुत करती हैं। प्रायः कहा जाता रहा है कि पंजाबी कहानी प्रेम की भूमि पर पलती है, किंतु प्रस्तुत संग्रह इस धारणा को निर्मूल सिद्ध करता है। जीवन के संघर्ष, टकराव, टूटन, घुटन, संत्रास, एकाकीपन को भोगती ये कहानियां किसी कोने में कोमल भावों को भी पालती हैं। 'मैना

दो सशक्त कहानी-संग्रह

भाभी' भावों के द्वंद्व की ऐसी ही कहानी है। जीवन की गंदगी से अछूते आकर्षण कभी-कभी मन को इतना बांध लेते हैं कि उसकी हलकी-सी चटकन पूरे आधार को मिटा देती है। उनकी परिणति घुटन की खोह में सिसकती है। इसी प्रकार 'कहवाघर की सुंदरी' प्रेम, सौंदर्य की उपासना और उसके व्यवसाय की टकराहट है। अंगों की सुडौलता जब मन के स्तरों को छू लेती है तब उसमें अनायास ही एक पवित्रता झलकने लगती है, जो सभी व्यापारों को लांघती नितांत अपनी हो जाती है।

कुछ कहानियां अंतर्मन की गुत्थियां खोलती हैं। 'हाइड्रोफोबिया' तथा 'लोरी' ऐसी ही कहानियां है। पहली कहानी मानव के अर्धविक्षिप्त मन की यात्रा है जो औरों के लिए पागलपन के अतिरिक्त कुछ नहीं। दूसरी कहानी कुंवारी मां के 'मैटर्नल इंसटिंक्ट' की कथा है। 'तू तो हार गया' व्यावहारिक धरातल पर भावों की हार-जीत है जबकि 'नारियल की कुंजी', 'हीरामंडी के चौबारे' तथा 'अफसर' में

नैतिकता की सीमाएं तोड़ती नारी के तन-मन का उन्मुक्त खिलवाड़ है। 'गौना' इसके विपरीत नारी की दृष्टि में पुरुष के पुरुषत्व की घटती-बढ़ती रेखा का अंकन है। इन सबसे अलग 'मुर्गीखाना' सेक्स की सूक्ष्म समस्या 'होमोसेक्सुएलिटी' पर लिखी एक प्रौढ़ कहानी है।

'एरियल' जीवन में बजती सम-विषम तालों का संचार करनेवाली कहानी है। जीवन एक सागर है, जिसके किनारे की सबको तलाश रहती है, किंतु जब यह किनारा मिल जाता है तब मन में छिपा

कोई 'ऐडवेंचर' फिर लहरों की ओर आमंत्रित करता है। व्यक्ति बढ़ता है, पर किनारे को पकड़े हुए। यहीं जीवन की विडंबना शुरू होती है। पत्नी, जो जीवन की सुरक्षित सीमा है, उसका खंडन या विस्तार उस निःस्सीम रेगिस्तान की तरह है जिसकी मरीचिका जीवन को अंतिम सांस तक लील जाती है। कहानी में एनी अपने पति अनवर और उसकी सेक्रेटरी लिज के संबंधों से समझौता नहीं कर पाती, वरन किनारे की सुरक्षा के मूल्य पर उन्हें मुक्त कर देती है।

संग्रह की प्रायः सभी कहानियां कथ्य और शिल्प, दोनों दृष्टियों से प्रयोगात्मक धरातल पर आधुनिक परिवेश को जीती हैं। इस प्रकार के संकलन अंतर्देशीय पाठक बनाने में सहयोग देते हैं, इसमें संदेह नहीं।

पंजाबी की श्रेष्ठ कहानियां

संपादिका—अमृता प्रीतम, प्रकाशक—पराग प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ—१९२, मूल्य—२०.०० रुपये

'जहर' में मानव-नियति और उससे खिलवाड़ करती सामाजिक व्यवस्था के संघर्ष के साथ समाज के कर्णधार कहलानेवाले तथाकथित अभिजात वर्ग के प्रति तीव्र आक्रोश है। मशीनों की बढ़ती हुई संख्या मानव-पशु का निर्माण कर रही है, जिसे 'जंगल' की तलाश है। इस कहानी में समाज में निर्द्वंद्व घूम रहे भेड़िये भय के कारण अनिवार्य अंग मान लिये गये हैं जिनके समक्ष समाज द्वारा हथियार डा[illegible] संवेदना जाग्रत करता है। अपने अ[illegible] के खतरे से भयभीत व्यक्ति की क[illegible] है 'बौना'। अस्तित्व को बनाये र[illegible] की कोशिश ही आज अस्तित्व को [illegible] जा रही है। यही नियति उसे ए[illegible] जीवन से मौत की घुटन में झोंक देती [illegible] जीवन की रिक्तता, शून्यता पर आ[illegible] ऐसी ही एक अन्य सशक्त कहानी [illegible] 'जुर्म'। बिखरे हुए जीवन के प्रत्येक [illegible] को सहेजती संग्रह की प्रायः सभी क[illegible]नियां विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रका[illegible] हो चुकी हैं। कथ्य की आधुनिकता [illegible] कथन की सघनता पाठकों को बांधे र[illegible] में सक्षम है।

जहर

लेखक—श्रवणकुमार, प्रकाशक—भार[illegible] ज्ञानपीठ प्रकाशन; कनाटप्लेस, न[illegible] दिल्ली, पृष्ठ—१४८; मूल्य—[illegible] रुपये।

एक करारा व्यंग्य

'राजा राज करें' गणतंत्रात्म[illegible] शासन-पद्धति पर एक करारा व्यं[illegible] है, जो राजतंत्र के पश्चात समाज [illegible] उभरी लोक-चेतना के परिणामस्वरू[illegible] बीसवीं शताब्दी की विशेष उपल[illegible] 'डेमोक्रेसी' को दर्पण दिखाती है। [illegible] कहलानेवाली जनता जिस भ्रम को पा[illegible] रही है, जनता के शुभचिंतक कहला[illegible] वाले नेता चेहरे पर जिस नकाब को [illegible]

हुए हैं, यह रचना उन सब पर निर्मम प्रहार करती है। यहां चौपट राजा एक 'ऑटोक्रेट' है, जो कभी जनतंत्र का और कभी राजतंत्र का मुखौटा लगाये जनता का शोषण करता रहता है। प्रजा की नियति केवल इतनी है कि वह हर ठोकर पर निकले आंसुओं को नारों की मुसकान पहनाती जाए। कथ्य की रोचकता बनाये हुए लेखक ने गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया है, जिसे पचाना देश के लिए आवश्यक होते हुए भी सरल नहीं है।

राजा राज करे

लेखक—फिक्र तौंसवीं, प्रकाशक—भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, कनाटप्लेस, नयी दिल्ली, पृष्ठ—११४, मूल्य—८.०० रुपये

संस्मरण

'याद रही बातें' लेखक के जीवन में घटी कुछ घटनाओं का संस्मरणात्मक संग्रह है। छोटी-छोटी घटनाओं का सजीव चित्रण लेखक की विचारधारा, दृष्टिकोण और जीवन-दर्शन का हलका-सा आभास देता है। देश, संस्कृति और इतिहास में रुचि रखनेवाले पाठकों के लिए यह पुस्तक मनोरंजक और उपादेय है।

याद रही बातें

लेखक—अक्षयकुमार जैन, प्रकाशक—पंजाबी पुस्तक भंडार, दरीबा कलां, दिल्ली, पृष्ठ—१२६, मूल्य—८.०० रुपये

दुख-दर्द

उन दिनों विक्टर ह्यूगो को देश-निकाला मिला था। वे जरसी द्वीप में थे। वहां एक पथरीले टीले से सारा बंदरगाह दिखायी पड़ता था। ह्यूगो रोज सांझ को टीले पर बैठते थे और सूर्यास्त देखते हुए सोच-विचार में खो जाते थे। बड़ी देर बाद जब उठते, तब कुछ कंकड़ चुनकर बड़े संतोष से सागर में फेंक देते थे। एक बच्ची ने पूछा, "आप यहां रोज कंकड़ फेंकने क्यों आते हैं?"

ह्यूगो बोले, "बेटी, कंकड़ नहीं अपना दुख-दर्द फेंकता हूं।"

गीत-संग्रह

'ऋतुगंधा' में जहां परंपरागत प्रेम-गीत संकलित हैं वहां आधुनिक बोध से संयुक्त कविताएं भी हैं। ऐसी कविताओं में कवि के शिल्पगत प्रयोग सुंदर हैं। यहां एक उदाहरण पर्याप्त है—

एक रुपया है
जिससे हम तसल्ली के बिस्कुट
और हमदर्दी की चाय
खरीदना चाहें तो खरीद सकते हैं

ऋतुगंधा

लेखक—रमेश गुप्ता 'चातक', प्रकाशक—विशाला प्रकाशन, मालीपुर, उज्जैन, पृष्ठ—६८, मूल्य—६.०० रुपये

—डॉ. शशि शर्मा

र-संक्षेप

एक अंतहीन

फ्रेडरिख ड्यूरन

यह पिछले मार्च की बात है। मैं चुर साहित्य परिषद के समक्ष 'जासूसी-कथा लेखनकला' पर भाषण देने गया था पर भाषण कुछ जमा नहीं। कई श्रोता तो बीच में ही उठकर चले गये। मैंने अपनी फीस तथा यात्रा-व्यय लिया और स्टेशन के पास होटल स्टीनकॉख में शीघ्रातिशीघ्र चला आया।

होटल में भी वही आलम था। होटल बार में मेरा परिचय हर एक से हुआ। वह ज्यूरिख कैंटन पुलिस का भूतपूर्व चीफ था। बातों-बातों में उसने प्रस्ताव किया कि वह मुझे अपनी 'ओपल' में ज्यूरिख छोड़ देगा। स्विट्जरलैंड के उस भाग से मैं परिचित नहीं था, मैंने तुरंत स्वीकार लिया।

हम सुबह जल्दी ही चल दिये थे। सूरज निकल आया था, पर बादल हर कहीं उसके आड़े आ रहे थे। चुर शहर पर्वतों से घिरा था, पर मुझे उनमें कोई विशेषता नजर नहीं आयी।

थोड़ी देर बाद कार खुले में आ गयी। पहाड़ दूर चले गये। यहां आकर मौसम भी एकाएक ठीक हो गया था। हमारी कार एक पेट्रोल-स्टेशन पर रुकी। उसकी इमारत एकदम जर्जर थी। आधी लकड़ी और आधी पत्थर की। आसपास की खुश-नुमा एवं साफ-सुथरी इमारतों के बीच अजूबा। उस पर ढेर सारे फिल्मी पोस्टर चिपके हुए थे। वहीं पत्थर की बेंच पर एक

बूढ़ा बैठा हुआ था। दाढ़ी बेतरतीबी से बढ़ी हुई। चेहरे से लगता था, कई दिनों से नहाया नहीं है। हम उतरकर उसकी ओर बढ़े तो शराब की तेज गंध आयी।

उसे कार में पेट्रोल भरने को कहकर एक मकान में घुस गया। अब मैंने देखा, बाहर जुर रोज टेवर्न का छोटा-सा लाल बोर्ड लगा था। अंदर अंधेरे गलियारे की भारी हवा में बीयर की गंध तैर रही थी। बार रूम में भी अंधेरा था। काउंटर के पीछे एक छरहरी महिला सिगरेट पीती

रहस्य, रोमांच से भरपूर साहित्य रचने में सिद्धहस्त फ्रेडरिख ड्यूरनमट एक विश्वविख्यात उपन्यासकार हैं। 'कादम्बिनी' में प्रकाशित उनके एक प्रसिद्ध उपन्यास 'द डेंजरस गेम' के सार-संक्षेप को पाठकों ने काफी पसंद किया था। यहां प्रस्तुत है उनकी कृति 'द प्लेज' का सार। प्रस्तोता हैं—संगीत कुमार।

हुई गिलास धो रही थी। तभी अंदर के कमरे में एक लड़की आयी। मुझे वह तीस के आसपास लगी. . . "वह सोलह की है। सोलह . . " एम धीरे से गुर्राया।

कॉफी पीकर हम बाहर आये। कार में पेट्रोल भरा जा चुका था। 'फिर मिलेंगे', एम ने धीमी, उदास आवाज में कहा। लेकिन बूढ़े ने उसकी बात का कोई जवाब नहीं दिया। वह बेंच पर बैठा रीती आंखों से आकाश में न जाने क्या देख रहा था। हम कार में बैठ रहे थे तो वह एकाएक उठा। मुट्ठियां बांधकर चिल्लाया, "मैं प्रतीक्षा करता रहूंगा। वह आएगा . . . जरूर आएगा. . . ."

कार करेंज दर्रे की ओर चढ़ रही थी। सड़क दोबारा बर्फ से ढंक गयी थी। हमारे बहुत नीचे वालेन झील सामने बर्फ से जमी चमक रही थी। एम मुझसे कल के भाषण पर चर्चा कर रहा था—रहस्य-रोमांच की कहानियों को कभी बहुत महत्त्व नहीं दिया। मैं उन्हें वक्त की बरबादी समझता हूं। 'अपराधी को अपने किये का दंड मिल गया', 'बुरे का अंत बुरा होता है'-जैसे वाक्य शायद समाज का मनोबल ऊंचा रखने के लिए गढ़े गये हैं। सबसे ज्यादा चिढ़ मुझे तुम लोगों के कथा-सूत्र के ढांचे से होती है। आप लेखक लोग प्लाट को शतरंज की बाजी की तरह सजाते हैं। यहां शिकार, वहां अपराधी; इधर पुलिस और उधर जासूस। दो-चार दांवपेच होते हैं और अपराधी पकड़ा जाता है। नाटकीयता का समावेश करने के लिए तुम लोग सत्य की बलि चढ़ा देते हो, सत्य जो कि कटु होता है; पर तुम लोगों को यथार्थ से क्या? तुम्हारा जासूस अमानवीय, चमत्कारिक होता है। कभी असफल नहीं होता।

तुम्हें शायद ताज्जुब हो कि मैं उस पेट्रोल स्टेशन पर क्यों रुका! वह बूढ़ा व्यक्ति जिसने हमारी कार में पेट्रोल डाला

था, कभी पुलिस का सबसे योग्य आदमी था। सच! मथाई एक जीनियस था। तुम्हारे किसी भी नकली जासूस से अधिक चतुर एवं कुशल। यह कहानी नौ साल पहले की है। मथाई मेरे पास इंस्पेक्टर था। बहुत ही लगनशील एवं कुशल। अकेला रहता था। न शराब छूता था, न सिगरेट।

मेग्नदोर्फ से उसके किसी पुराने 'आसामी' गुंटेन फेरीवाले ने फोन किया था। एक छोटी-सी लड़की की हत्या हो गयी थी। मेग्नदोर्फ ज्यूरिख के पास एक छोटा-सा गांव है। अप्रेल के आखिरी दिन थे। बाहर पानी बेतरह बरस रहा था। फोहेन के पीछे-पीछे आनेवाला तूफान शहर में
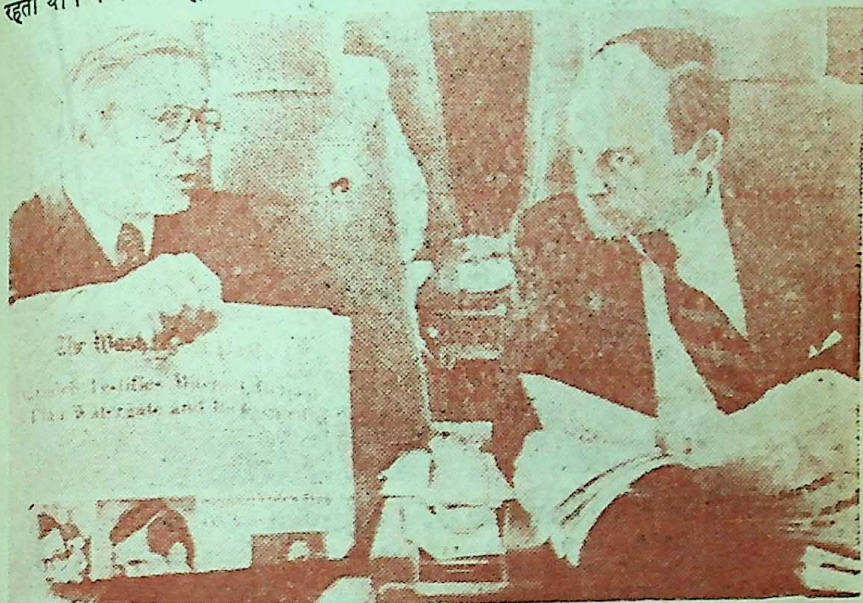
अपने तौर-तरीकों में अत्यंत यथार्थवादी और एक हद तक क्रूर। लोग उसे 'मैट द् आटोमैट' कहते थे। वह जितना सफल था, उतना ही अलोकप्रिय।

उन्हीं दिनों जोडर्न सरकार को एक कुशल पुलिस अधिकारी की आवश्यकता पड़ी। स्विस फेडरल सरकार ने उसके लिए मथाई का नाम दिया। उसके जोडर्न जाने में दो-तीन दिन थे, तभी यह घटना घटी।

पहुंच चुका था। उमस इतनी कि सांस लेना दूभर था। मथाई की इच्छा नहीं थी। पर हेडक्वार्टर में किसी जिम्मेदार व्यक्ति के न होने से उसे जाना पड़ा। उसने मेग्न-दोर्फ के पुलिसमैन से गुंटेन पर नजर रखने को कहा और एमरजेंसी स्क्वेड के साथ चल दिया। साथ में निरीक्षण मजिस्ट्रेट एवं लैफ्टिनेंट हैंजी भी थे।

गुंटेन पर नजर रखने का आदेश भयंकर

भूल सिद्ध हुआ। मेग्नदोर्फ में अधिकांशतः किसान रहते थे। कुछ नीचे घाटी के कारखाने में या ईंटों के भट्टों में काम करते थे। स्टैग टेवर्न में गुंटेन को पुलिस की निगरानी में बैठा देख पूरी बस्ती में यह खबर आग की तरह फैल गयी कि पुलिस गुंटेन को अपराधी समझती है। मथाई वहां पहुंचा। उसने गुंटेन को साथ लिया और घटनास्थल की ओर चल दिया। गीली घास को रौंदते हुए वे झाड़ियों के बीच, मरे हुए पत्तों के गीले बिछौने पर पड़ी लड़की के गिर्द जा खड़े हुए। आसपास के घने पेड़ों में अटकी बारिश की बूंदें गिरकर हीरों-सी दमक रही थी। लड़की की हत्या तेज धारवाले ब्लेड से की गयी थी। उसकी लाल, फटी हुई स्कर्ट पानी और खून में डूबी झाड़ियों में पड़ी थी। यह एक सेक्स-हत्या थी।

गांववालों ने बताया वह मोसर परिवार की लड़की ग्रिटली थी। वे लोग थोड़ी दूर पर मूजबाख में रहते थे। मथाई ने खुद ही उनके पास जाने का निश्चय किया। उसने लाश के पास पड़ी छोटी-सी टोकरी उठा ली। उसमें चाकलेट, कुछ मनके और कुछ खिलौने थे।

मोसर अपने घर के बाहर खड़ा लकड़ियां चीर रहा था। मथाई ने अपना परिचय दिया, फिर ग्रिटली की लाश के पास मिली टोकरी नीचे रख दी। वह समझ नहीं पा रहा था कि ग्रिटली के बारे में दुखद समाचार किस तरह दे, तभी मोसर की नजर उस टोकरी पर पड़ी। उसने एकाएक पूछ लिया, "क्या हुआ ग्रिटली को ?"

"उसकी लाश मेग्नदोर्फ के निकट जंगल में मिली है।"

मोसर जैसे अपनी जगह जम-सा गया। एकाएक ग्रिटली की मां की आवाज गूंजी...

"मेरी बेटी का हत्यारा कौन है ?"

"मैं उसे ही ढूंढ़ने निकला हूं, श्रीमती मोसर।"

"तो तुम वादा करते हो, उसे ढूंढ़कर पकड़ लोगे ?"—श्रीमती मोसर ने आतंकित कर देनेवाले स्वर में पूछा।

"हां, मैं वादा करता हूं," मथाई ने जल्दी से कह दिया। वह किसी भी तरह वहां से भाग निकलना चाहता था।

"याद रखना तुमने प्रण किया है।" श्रीमती मोसर ने कहा।

मथाई ने धीरे से सिर हिलाया और मुड़कर तेज-तेज कदमों से लौट पड़ा। एकाएक पीछे से किसी पशु-जैसी अमानवीय चीख उभरी, पर उसने मुड़कर देखा नहीं। देखने का साहस भी नहीं था।

मेग्नदोर्फ में अप्रत्याशित हो रहा था। पूरा गांव सिमटकर पुलिस की गाड़ियों के इर्द-गिर्द इकट्ठा हो गया था। वे चाहते थे कि पुलिस गुंटेन को उनके हवाले कर दे। वह हत्यारा जो था। भीड़ से आतंकित होकर पुलिस अधिकारी अंदर टेवर्न में चले गये थे। मजिस्ट्रेट कह रहा था, "और कोई उपाय नहीं, कुमुक मंगवाओ—जल्दी।"

मथाई चुपचाप बाहर चला आया। कुछ पल उत्तेजित भीड़ का चेहरा देखता

रहा, फिर कहा, "मैं इंसपेक्टर मथाई हूं। हम फेरीवाले को आपलोगों के हवाले करने को तैयार हैं।"

यह प्रस्ताव इतना अप्रत्याशित था कि भीड़ में ख़ामोशी छा गयी।

"तुम पागल तो नहीं हो गये हो?" मजिस्ट्रेट मथाई के कान में फुसफुसाया।

मथाई भीड़ से बात कर रहा था, "लेकिन उसे आपके हवाले करने से पहले मैं इस बात के प्रति आश्वस्त होना चाहता हूं कि आप लोग न्याय ही करेंगे।"

फिर अपनी तर्क-शक्ति से मथाई ने लोगों को समझा दिया कि पुलिस ही असली अपराधी को पकड़ सकती है।

भीड़ उसके तर्क से सहमत लग रही थी। मथाई कहे जा रहा था—"पुलिस के पास अपार साधन हैं, अपराधी को ढूंढ़ने के। मैं आपसे इतना ही कह सकता हूं कि हम निरपराध को दंड नहीं देंगे। अब..."

"अब...तुम गुंटेन को अपने साथ ले जाओ। हमें कोई एतराज नहीं है।" भीड़ पुलिस की गाड़ियों के पास से दूर हट गयी। एक रास्ता बन गया।

पुलिस की गाड़ियां ज्यूरिख की ओर चल दीं। गुंटेन दबा-दबा-सा मथाई के पास बैठा कह रहा था, "मैं निर्दोष हूं।"

"बेशक ।"

"लेकिन कोई मेरी बात पर विश्वास नहीं करता ।"

"यह तुम्हारा वहम है । मैं तुम्हें सिर्फ इसलिए ले जा रहा हूं कि तुम हमारे सबसे महत्त्वपूर्ण गवाह हो ।" मथाई बोला ।

हर एम ने बताया, "जब मैं बर्न से आया, तब मुझे इस बारे में पूरी बात पता चली । यह इस प्रकार की तीसरी हत्या थी । इससे पहले भी दो छोटी लड़कियों को इसी तरह तेज ब्लेड से गला काटकर मार दिया गया था । गुंटेन ने बताया था—मैं मेग्नदोर्फ की ओर जा रहा था । जंगल में लेटकर मैंने थोड़ी देर आराम किया । दोपहर को मैंने भारी खाना खाया था, खूब सारी बीयर पी थी, इसलिए आलस आ रहा था । पास में ही किसान खेतों में काम कर रहे थे । एकाएक मैंने किसी लड़की की चीख सुनी । आसपास कार्यरत किसान भी उत्सुक हो उठे, लेकिन कुछ देर इंतजार करने के बाद वे फिर अपने-अपने काम में लग गये । आकाश में बादल घिर आये थे । मौसम खराब हो चला था, इसलिए मैंने नये सिपाही की नजरों में पड़ना ठीक नहीं समझा । मैं मेग्नदोर्फ जाने के बजाय जंगल से होकर शहर की ओर चल दिया । बस, तभी उस लड़की पर मेरी निगाह पड़ी । अब मुझे मेग्नदोर्फ जाना पड़ा । वहीं से मैंने इंसक्पेटर मथाई को फोन पर सूचना दे दी ।"

मैंने मथाई से उस केस के बारे में बात की तो उसने केस हैंजी को देने का प्रस्ताव रखा क्योंकि उस समय वह सिर्फ जोर्डन-यात्रा के बारे में सोच रहा था । पुलिस पूरे जोर-शोर से अपराधी की खोज में जुट गयी । जंगल का चप्पा-चप्पा छान मारा गया । सैकड़ों व्यक्तियों से पूछताछ भी की गयी, पर कुछ पता न चला । मैं और मथाई उस स्कूल में गये जहां ग्रिटली पढ़ती थी । सब बच्चे उत्सुक आंखों से हमें ताक रहे थे । मैंने बच्चों से ग्रिटली के बारे में पूछताछ की, पर वे कुछ बता न सके । क्लास में उर्सुला फैहमान उसकी सबसे घनिष्ठ सहेली थी । मैंने उससे पूछा, "क्या ग्रिटली किसी से मिलती थी?"

"हां, एक देव से ।" उर्सुला ने जवाब दिया ।

"तुम्हारा मतलब एक लंबे आदमी से है न ?"

"नहीं, लंबे तो मेरे पिताजी भी हैं । ग्रिटली एक दैत्य से मिलती थी ।" उर्सुला अपनी बात पर अड़ी रही । हम लोग चुपचाप शहर लौट आये ।

रास्ते में मथाई ने कहा, "हत्यारा कोई लंबा-तगड़ा आदमी है । मुझे लगता है, वह ज्युरिख में रहता है । कार में सफर करता है । किसान गर्बर का कहना है कि उसने जंगल में एक कार खड़ी देखी थी ।"

मैं खामोश रहा ।

हेडक्वार्टर के एक बंद कमरे में गुंटेन से पूछताछ चल रही थी ।

"तो तुमने उस लड़की को देखा,

उसकी लाश को छुआ नहीं ।" सार्जेंट ने पूछा ।

"मैं निर्दोष हूं इंसपेक्टर । इंसपेक्टर मथाई जानते हैं, मैं अपराधी नहीं हूं ।" गुंटेन ने कहा ।

"वे कल जोर्डन जा रहे हैं। अब उन्हें इस केस से कुछ लेना-देना नहीं है ।"

यह सुनते ही गुंटेन की अंतिम आशा भी जैसे टूट गयी ।

अगली सुबह हैंजी ने बताया, "गुंटेन ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया है । उससे २४ घंटे से अधिक समय तक पूछताछ की गयी थी। यह कानूनी नहीं था, लेकिन..."

मैंने गुंटेन को देखा, उसे दो पुलिस-मैन सहारा देकर पकड़े हुए थे । शायद वह खड़ा होने की स्थिति में भी नहीं था।

"मैंने ग्रिटली मोसर की हत्या की है । अब मुझे अकेला छोड़ दो ।" उसने धीरे से कहा और लड़खड़ाता हुआ बढ़ गया।

कुछ देर बाद हैंजी धड़धड़ाता हुआ आया, "गुंटेन ने आत्महत्या कर ली है ।"

मैं और मथाई दौड़ पड़े । गुंटेन का निष्प्राण शरीर फर्श पर पड़ा था ।

"गुंटेन !" मथाई चीख पड़ा ।

मैंने मुसकराकर मथाई की ओर देखा, "ग्रिटली मोसर हत्याकांड का अध्याय समाप्त हुआ । अब तुम आराम से जोर्डन जाओ ।"

"शायद !" मथाई कुछ सोच रहा था।

●

मथाई का सामान कार में लाद दिया गया, तो उसने कहा, "हम लोग [illegible] से होकर हवाईअड्डे जाएंगे । आज ग्रिटली को दफनाया जाएगा।" कार गांव के चौक में पहुंची तो शव-यात्रा वहां तक आ गयी थी । मथाई की नजरें ग्रिटली की मां से मिलीं । उसका चेहरा और आंखें एकदम भावहीन थीं । मोसर झुका-झुका चल रहा था ।

कार एयरपोर्ट जा पहुंची । जोर्डन जानेवाला विमान रनवे पर खड़ा था। तभी मथाई ने देखा, हवाईअड्डे की इमारत पर बच्चों की बेशुमार भीड़ । वे शायद हवाईअड्डा देखने आये थे। वे हाथों में पकड़ी नन्ही-नन्ही झडियां हिला रहे थे, उत्सुक आनंद से चीख-चिल्ला रहे थे। मथाई कुछ सोचता-सा, अपने में डूबा-सा हवाईजहाज की ओर बढ़ चला। उसने एक बार फिर बच्चों की ओर देखा, फिर टिकट लेने के लिए हाथ बढ़ा रही परिचारिका की ओर देखकर बोला, "सॉरी, मैं इस फ्लाइट से नहीं जा रहा हूं।"

●

मथाई मेरे पास अगले रविवार तक नहीं आया । जोर्डन सरकार ने स्विस फेडरल सरकार से मथाई के न पहुंचने पर विरोध प्रकट किया था । मेरी समझ में भी मथाई का व्यवहार नहीं आ रहा था। मथाई आया तो मैंने कहा, "दोनों देशों के संबंध न बिगड़ें इसलिए तुम जल्दी से जल्दी जोर्डन चले जाओ ।"

"मैं जोर्डन नहीं जा रहा हूं, क्योंकि
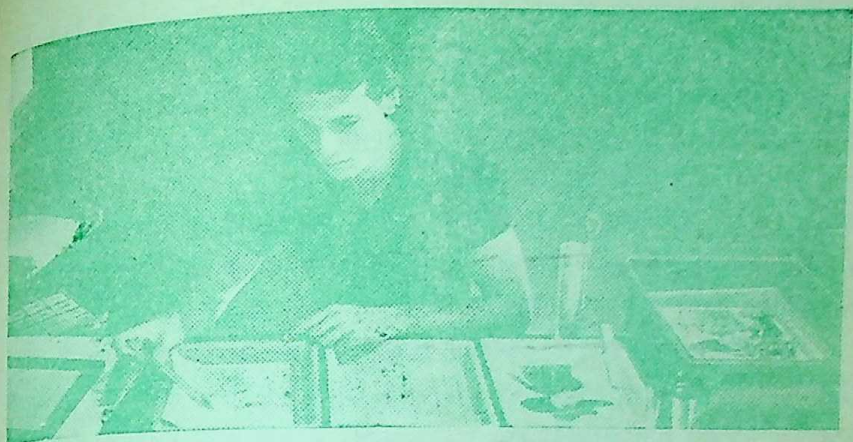
ग्रिटली मोसर का हत्यारा अभी पकड़ा नहीं गया है । मैं गुंटेन को हत्यारा नहीं मानता । वह आदमी मुझ पर निर्भर कर रहा था, पर मैंने उसकी मदद नहीं की। मैं केवल जोर्डन के बारे में सोच रहा था । मैं चाहता हूं, वह केस आप फिर से मुझे सौंप दें ।" मथाई बोला ।

मैंने अपनी असमर्थता व्यक्त की तो वह क्षुब्ध हो उठा और हम पहली बार हाथ मिलाये बिना बिदा हो गये ।

मथाई मेग्नदोर्फ जा पहुंचा । लोग गांव के अहाते में जमा थे । कुछ बच्चे लुका-छिपी खेल रहे थे । मथाई उन बच्चों को देखता रहा । वहीं उसे उर्सुला दिखायी दी। वह उससे ग्रिटली के बारे में बातें करने लगा। वह बता रही थी, "ग्रिटली उस दैत्य से हर हफ्ते मिलती थी । जंगल में । वह उसे चाकलेट देता था । ग्रिटली ने उस दैत्य की तसवीर भी बनायी थी । वह कक्षा में टंगी है ।"

मथाई विस्फारित आंखों से उर्सुला की ओर देखता रहा । उसकी आंखों में एक दानव की तसवीर तैर रही थी ।

मुझे सोमवार को जो समाचार मिले वे और भी परेशान कर देने वाले थे । मेग्नदोर्फ के कौंसलर ने फोन किया था, 'मथाई जबरदस्ती स्कूल में घुस गया था और मृत लड़की द्वारा बनायी गयी एक तसवीर चुराकर ले गया था ।' फिर हेंजी ने खबर दी कि मथाई शराब के नशे में उससे लड़ पड़ा था। उसे 'न्याय का हत्यारा' कहा था, वही मथाई जो शराब को छूता तक नहीं था । कुछ और भी खबरें मिलीं । मथाई ने अपना रहने का ठिकाना बदल दिया था । बाजार में मिलनेवाली सबसे सस्ती सिगरेटें पीता था । मुझे वह नर्वस-ब्रेकडाउन के कगार पर खड़ा लगा । मैंने उस मनश्चिकित्सक को फोन किया जिससे हम अकसर सलाह लेते थे । लेकिन मथाई पहले ही उससे मिलने का समय ले चुका

था। मैंने फोन पर डाक्टर को सारी घटना बता दी।

मनश्चिकित्सक का क्लीनिक शहर से बाहर था, रोथेन गांव के पास। डाक्टर ने एक बार अपने चश्मे को ऊपर-नीचे कर मथाई की ओर देखा, फिर वैसे ही प्रश्न पूछने लगा जैसे अपने अस्पताल में आने वाले रोगियों से पूछा करता था।

"तुम्हें मेरी जांच करने का काम सौंपा गया है क्योंकि कैंटोनल पुलिस मुझे पूरी तरह नार्मल नहीं समझती।"

"आखिर बात क्या है, मथाई ?"

"डाक्टर, ग्रिटली मोसर की हत्या का मामला मुझे चैन से नहीं बैठने देता। मैंने ग्रिटली की मां से वादा किया था, उस नन्ही मुन्नी के हत्यारे को ढूंढ़ निकालने का। मैं अपने उसी वादे को पूरा करना चाहता हूं। इसे देखो।" उसने डाक्टर के सामने ग्रिटली मोसर का बनाया हुआ चित्र फैला दिया। उसे वह स्कूल से चुरा लाया था। बिंदियों से एक चेहरा बना हुआ। ग्रिटली का दानव इतना लंबा था कि आसपास के पेड़ बहुत छोटे दिखायी दे रहे थे। उन्हीं पेड़ों के नीचे एक नन्ही-मुन्नी लड़की खड़ी थी। उसमें ग्रिटली ने स्वयं को व्यक्त किया था। पेड़ों के पीछे एक कार बनी हुई थी। उसी के पास अजीब से सींगों-वाला एक जानवर खड़ा था।

डाक्टर ध्यान से चित्र की ओर देखता रहा, फिर बोला, "मुझे हत्यारा एक ऐसा आदमी लगता है, जो स्त्रियों से घृणा करता है। उनसे बदला लेना चाहता है।"

"लेकिन ग्रिटली या उससे पहले जिन लड़कियों की हत्या हुई वे तो बहुत ही कमउम्र थीं," मथाई ने कहा।

"मानसिक रूप से बीमार आदमी के लिए लड़की ही स्त्री का प्रतीक है। हत्यारा बड़ी उम्र की महिलाओं पर हमला करने का साहस नहीं जुटा पाता, इसीलिए वह कमउम्र लड़कियों का चुनाव करता था। उसके दिमाग में जिस स्त्री की तसवीर है, वह उन लड़कियों के रूप में उसी स्त्री की हत्या करता है। इसीलिए वह बार-बार एक-जैसी लड़कियों की ही हत्या करेगा। मैं शर्त बद सकता हूं, वे तीनों लड़कियां एक-दूसरे से मिलती-जुलती होंगी।"

"लेकिन इस प्रतिशोध का कारण ?"

डाक्टर ने कंधे झटकारे, "संभवत: सेक्स-संघर्ष। शायद हत्यारा महिलाओं से शोषित है। शायद उसकी पत्नी अधिक पैसेवाली है और वह गरीब है। यह भी हो सकता है कि पत्नी की सामाजिक प्रतिष्ठा उससे कहीं अधिक ऊंची हो।"

मथाई, गुंटेन के बारे में सोच रहा था। शायद उस पर डाक्टर की एक भी बात लागू नहीं होती थी।

डाक्टर कहता जा रहा था, "ऐसी हर हत्या के बाद हत्यारे को आराम महसूस होता है, लेकिन जल्दी ही फिर बेचैन हो उठेगा। शुरू-शुरू में वह बच्चों के आसपास घूमेगा, स्कूलों के आसपास। उसके बाद कार में अपने शिकार की खोज में घूमना शुरू कर देगा। जब कोई मिलती-जुलती लड़की नजर आएगी तब उससे मैत्री कर लेगा और कुछ दिन बाद तुम एक नयी हत्या का समाचार सुनोगे।"

मथाई ग्रिटली के बनाये चित्र को लेकर उठ खड़ा हुआ, "धन्यवाद डाक्टर, तुमने मेरे सामने एक रास्ता खोल दिया।"

ये बातें स्वयं डाक्टर ने मुझे लिख भेजी थीं। और, फिर मुझे खबर मिली कि मथाई अकसर एक चिड़ियाघर के चक्कर काटा करता है। फिर खबर मिली कि मथाई ने नया धंधा शुरू किया है। वह चुर के निकट ग्रिसोन में पेट्रोल पंप चला रहा है।

और एक दिन मैं मीटिंग में था तो एक अनाथालय की संरक्षिका का फोन आया। उसने बताया, "मथाई मेरे पास आया था। वह एक विशेष लड़की को गोद लेना चाहता था, पर मैंने मना कर दिया। उसका व्यवहार मुझे कुछ विचित्र लगा, इसीलिए आपको फोन कर रही हूं।"

बात यहीं तक नहीं रुकी। उसके बाद जो समाचार मिला, उसने मुझे पागल बना दिया। मथाई ने पेट्रोल स्टेशन पर लिसल हेलर नामक एक वेश्या को रख लिया था।

मैं मथाई से मिलने चल दिया। तब उस पेट्रोल स्टेशन की आज-जैसी हालत नहीं थी। सड़क से दूर से ही देखने पर

वहां एक बच्चे की उपस्थिति के स्पष्ट आभास मिलते थे। एक रंगीन झूला था। एक बेंच पर गुड़ियाघर बना हुआ था। एक गुड़िया गाड़ी और एक हिलनेवाला घोड़ा। जब मैं पहुंचा तो मथाई एक कार में पेट्रोल भर रहा था। उसके पास ही सात-आठ साल की एक लड़की खड़ी थी। उसके हाथों में एक गुड़िया थी। उसने लाल स्कर्ट पहन रखी थी। उसे देखते ही मुझे ग्रिटली याद आ गयी।

"मथाई, यह क्या बचपना है ?"

"चीफ मैंने वादा किया था कि मैं तुम्हें ग्रिटली मोसर के बारे में परेशान नहीं करूंगा।" कहता हुआ वह मुझे घर में ले गया। अंदर लिसल हैलर ने मुझे देखा तो वह भी मुझे पहचान गयी थी।

"यह बच्ची हैलर की है ?" मैंने पूछा।

मथाई ने सिर हिलाकर हामी भर दी।

मैं लिसल के बारे में पूछ रहा था।

"मैंने उसे और लड़की को एक विशेष कारण से यहां रखा है। या समझो लिसल इसलिए है कि वह अन्ना मेरी की मां है। ग्रिटली मोसरने हत्यारे का ठीक चित्र बनाया था। चित्र में सींगोंवाला जानवर आइबेक्स है। मैंने चिड़ियाघर में उसे देखा था। वह ग्रिसोन का प्रतीक है। ग्रिसोन के रहने-वाले अकसर अपनी कार की नंबर-प्लेटों

पर उसका चिह्न बनाते हैं। ग्रिटली ने भी हत्यारे की कार पर यही चिह्न देखा था। हत्यारा ग्रिसोन में कहीं रहता है। मैंने तीनों हत्या-स्थलों का पता लगा लिया है, वे सभी ग्रिसोन-ज्यूरिख मार्ग पर पड़ते हैं।"

मुझे मथाई की पागल–जैसी बातों में कुछ सार नजर आ रहा था।

"और फिर मैं कुछ मछेरों से मिला।"

मैं आश्चर्य से उसे घूरता रह गया।

"इसके बाद मैं सीधा ग्रिसोन पहुंचा। लेकिन जल्दी ही मैं अपनी वेवकूफी समझ गया। ग्रिसोन केंटन २,७०० वर्गमील में फैला है। यहां १ लाख ३० हजार लोग बसते हैं। सैकड़ों छोटी-छोटी घाटियों में। मैं इस तरह हत्यारे को कभी नहीं पकड़ सकता था। एक दिन मैं परेशान-सा इंगेडाइन में सराय के बाहर बैठा था। सामने कुछ लड़के नदी पर मछलियां पकड़ रहे थे। मैं ध्यान से उन्हें देखता रहा। एक लड़का मेरे पास आकर बात करने लगा। उसने मुझे बताया, 'मछली पकड़ने के लिए दो बातें होनी बहुत जरूरी हैं— एक तो सही जगह का चुनाव, दूसरा चारे का प्रयोग। मछली वहीं मिलेगी जहां वह चारे से सुरक्षित भी हो और आसपास तेज धारा भी हो, ताकि शिकार बहकर उसके सामने चले आये। ऐसी जगह नदी के बहाव पर, किसी चट्टान के पीछे होगी या किसी पुल के खंभे के पास।"

मुझे लड़कों की बातों में मजा आ रहा था। "और चारे के बारे में?" मैंने पूछा।

"यह इस पर निर्भर है कि आप कैसी मछली पकड़ना चाहते हैं। आप एक बरबोट को तो कांटे में बेरी लगाकर भी फंसा सकते हैं, पर अगर ट्राउट पकड़नी है तो कांटे में जिंदा चीज का चारा फंसाना होगा—कोई कीड़ा या छोटी मछली का चारा।" उस लड़के की बातों से मेरी आंखें खुल गयीं, "ट्राउट पकड़नी है तो जीवित चारा लगाना होगा।"

मैं अब मथाई का मतलब समझ गया। "मथाई, यह पेट्रोल-स्टेशन उचित स्थान है और यह मुख्य सड़क नदी है। और यह लड़की ... जिंदा चारा ... क्योंकि तुम्हें साधारण नहीं ट्राउट मछली पकड़नी है।" कहते-कहते मैं किसी अनजानी आशंका से कांप उठा।

"हां चीफ, जो भी ग्रिसोंन से ज्यूरिख जाना चाहता है, उसे इसी सड़क से होकर जाना होगा, बशर्ते कि वह ओवर आल्प दर्रे से लंबा चक्कर लगाने को तैयार न हो," मथाई ने कहा।

"तो तुम्हारी योजना है कि हत्यारा इस सड़क से गुजरते हुए अन्नामेरी को देखे और फिर तुम्हारे बिछाये हुए जाल में फंस जाए।"

"हत्यारा इधर से अवश्य गुजरेगा।" मथाई ने गंभीर स्वर में कहा।

"हो सकता है, तुम्हारी बात सच हो, पर इसमें बहुत खतरा है," मैंने कहा,

और फिर तुम बच्ची को हर समय पेट्रोल पंप के पास नहीं रख सकते। वह स्कूल जाएगी। सोएगी... इधर-उधर खेलेगी।"

"मछली पकड़नी है तो निरंतर प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।"

●

और वह इंतजार करता रहा। लड़की स्कूल से लौटकर पेट्रोल पंप के पास बैठ जाती। कभी गुड़ियों से खेलती, कभी झूले पर झूलती। उसकी लाल स्कर्ट दूर से ही दिखायी देती थी। वैसी ही लाल स्कर्ट ग्रिटली पहनती थी। नयी, पुरानी हर तरह की कारें वहां आतीं, मथाई के हाथ काम करते, आंखें कारवालों के चेहरे पढ़तीं।

लिसल हैलर पहाड़ की छाया में बसे गांव की छोटी-सी फैक्टरी में काम करती थी। शाम को लौटती तो उसके बैग में घरेलू चीजें भरी होतीं।

गरमियां आ गयीं। उमस भरे दिन। स्कूलों की छुट्टियां थी। अन्ना मेरी अब सारा दिन पेट्रोल पंप पर रहती। मथाई उसे वहां बैठाये रखने के लिए तरह-तरह की कहानियां सुनाता, आनेवाले लोग दोनों को अजीब नजरों से देखते, और मथाई की आंखें सपना देखने लगतीं—लंबा-तगड़ा हत्यारा पेट्रोल स्टेशन पर आएगा, अन्ना मेरी को देखेगा, फिर बार-बार आएगा। ऊपर से सहज स्वाभाविक, पर अंदर से बीमार, प्रतिशोध से प्रताड़ित। अन्ना मेरी

को फुसलाकर जंगल में ले जाएगा। चाक-लेट देगा और तब मथाई खामोश कदमों पीछा करेगा। एक पेड़ के पीछे छिपकर देखता रहेगा और अंतिम क्षण फिर कूदकर हत्यारे को पकड़ लेगा।

कभी-कभी वह लड़की को खुला घूमने देता और फिर चुपचाप पीछा करता।

गरमियों की छुट्टियां बीत गयीं। वनश्री का रंग लाल और पीला हो गया। लड़की स्कूल जाने लगी। वह उसे हर रोज लेने जाता। सड़क पर एक जगह प्रतीक्षा करता। इसी तरह दिन बीत रहे थे। उसे अब अपनी योजना बेवकूफी-भरी लगने लगी थी। तभी एक दिन उसने पाया कि अन्ना मेरी स्कूल से नहीं लौटी है। वह तुरंत शिकारी कुत्ते-सा सतर्क हो गया। उसे ढूंढ़ने चल दिया। उसकी शिरा-शिरा में विचित्र स्पंदन था। वह दिन आ गया। सड़क पर वह दूर-दूर तक नहीं थी। वह जंगल में घुस गया। झाड़ियों से लड़ता, रुकता-बढ़ता गया—जल्दी-जल्दी। और फिर उसने अन्ना मेरी को जंगल में बैठे देखा। वह छोटे-से नाले के किनारे बैठी थी। वह उसके पास जा पहुंचा। धीरे से आवाज दी। अन्ना मेरी ने उसकी ओर देखा, "मैं इंतजार कर रही हूं।"

"किसका ?"

"जादूगर का।" कुछ पल वह इधर-उधर देखता रहा, फिर उसे ले आया।

अगले दिन वह स्कूल से कुछ जल्दी लौट आयी। वह उसे लेने जाने की सोच ही रहा था, तभी वह आती दिखायी दी। लिसल अंदर से निकली, "अन्ना कहां गयी थी ?"

"स्कूल," मथाई ने कहा।

"स्कूल आज बंद था।"

ये शब्द हथौड़े की चोट की तरह पड़े। वह सोते से जाग उठा—"तो अन्ना घर से झूठ बोलकर गयी थी।" अगले दिन वह चुपचाप स्कूल गया। अध्यापिका ने बताया, "वह तो कई दिन से नहीं आ रही।"

मथाई ने बहाना बना दिया कि वह बीमार है और फिर पागलों की तरह जंगल की ओर कार में चल दिया। अन्ना जंगल में नहीं, सड़क पर मिली। उसने उसे कार में बैठाया तो हाथ चिपचिपे लगे। अन्ना के हाथों में चाकलेट की गंध थी।

"चाकलेट किसने दिये ?"

"स्कूल में एक लड़की ने।"

अन्ना झूठ बोल रही थी। शायद किसी ने उसे ऐसा सिखाया था। शायद हत्यारा उसे जंगल में मिला था।

अगली सुबह मथाई मेरे पास आया। वह बहुत उत्तेजित था। उसने कुछ चाकलेट निकालकर मेरे सामने रख दिये। न उसने दाढ़ी बनायी थी, न टाई लगाकर आया था। उसने मुझे पूरी कहानी सुना दी।

अब अविश्वास का कोई कारण नहीं था। मैंने तुरंत पुलिस को आदेश दिये।

उस दिन गुरुवार था। ग्रिटली मोसर की हत्या भी गुरुवार को हुई थी। हम जंगल में जाकर छिप गये। कोई दो बजे अन्ना
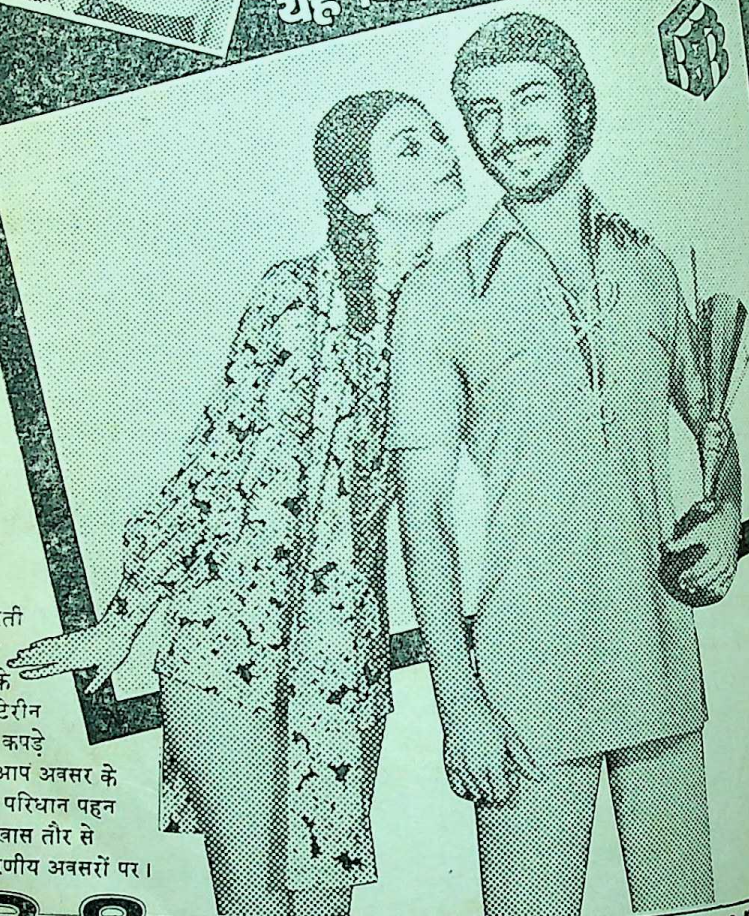
आयी और नाले के किनारे बैठ गयी। उसे हमलोगों के वहां होने का जरा भी आभास नहीं था। निश्चित रूप से वह किसी की प्रतीक्षा कर रही थी। धीरे-धीरे शाम हो गयी। कोई नहीं आया। अन्ना उठकर पेट्रोल स्टेशन की ओर चल दी। हम भी कल लौटने का निश्चय लेकर चल दिये। शुक्र उसी तरह गुजर गया, फिर शनिवार भी। रविवार भी बीता जा रहा था। अब मुझे खीझ होने लगी। साथ में आये मजिस्ट्रेट और हैंजी भी कुढ़ रहे थे। लेकिन मथाई अपनी बात पर दृढ़ था, 'हत्यारे ने ही अन्ना को वहां बुलाया था, वह जरूर आएगा। हमें प्रतीक्षा करनी चाहिए।'

"लेकिन कब तक? ..."

हम अन्ना को दूरबीन से देखते। कभी-कभी वह जंगल में घूमती लेकिन नाले के किनारे अवश्य जाकर बैठती थी। लेकिन क्यों? हम सब का धैर्य सीमाएं तोड़ गया था। मन होता था, मैं ही उस लड़की का गला दबा दूं, जो हमें खामख्वाह परेशान कर रही थी। अब यह सब बर्दाश्त से बाहर था। तभी पेड़ के पीछे छिपा मजिस्ट्रेट निकलकर अन्ना की तरफ आया, "ऐ लड़की तू, किसका इंतजार कर रही है?" वह दहाड़ा।

हम सब भी छिपने के स्थानों से निकले और अन्ना को घेरकर खड़े हो गये। वह डरी-डरी आंखों से बारी-बारी से हम सब को देख रही थी।

"अन्ना, एक हफ्ता पहले तुम्हें किसने चाकलेट दिये थे?" मैंने क्रोध से कांपती आवाज से पूछा।

वह बोली नहीं, आंसूभरी आंखों से मुझे देखती रही।

मथाई भी उससे यह पूछ रहा था, "बताओ अन्ना प्लीज।"

मजिस्ट्रेट ने अन्ना का कंधा पकड़कर झकझोर दिया। उसे मारने लगा। हम सब भी चीखकर उस पर टूट पड़े। वह जमीन पर पड़ी तड़पती रही, चीखती रही। फिर एकाएक चिल्लायी और भाग खड़ी हुई। मुझे लगा, वह पागल हो गयी है। जाकर सीधी लिसल की गोदी में गिर गयी। लिसल न जाने कब वहां आ गयी थी। बच्ची सुबक रही थी। लिसल विचित्र नजरों से हमें देख रही थी।

मथाई धीरे-धीरे लिसल के पास पहुंचा, "लिसल..." वह उसे सब कुछ सच-सच बता गया।

"तो तुमने हम दोनों को सिर्फ इसीलिए अपने पास रखा था।" लिसल ने ठंडी आवाज में कहा और बच्ची का हाथ पकड़कर चली गयी।

लेकिन मथाई पर जैसे अब भी कुछ असर नहीं हुआ था। वह कह रहा था, "हमें प्रतीक्षा करनी चाहिए। तुम मुझे छह आदमी दे दो। और..."

मैं समझ नहीं पा रहा था कि उसे क्या कहूं।

"मैं उसकी प्रतीक्षा करूंगा। वह अवश्य आएगा," मथाई ने धीरे से कहा।

मैंने सोच लिया था, अब मथाई से कभी नहीं मिलूंगा। वह पागल जो हो गया था।

●

हम लोग एक रेस्तरां में बैठे थे—मैं और हर एम। वह मुझे मथाई के बारे में बता रहा था—"जहां तक मथाई का संबंध है, यह कहानी उसके लिए समाप्त हो चुकी है क्योंकि वह हत्यारा कभी नहीं आया। उसकी आशा के विपरीत उस तरह के सेक्स हत्याकांड भी नहीं हुए, पर मथाई और कुछ भी मानने को तैयार नहीं था। वह प्रतीक्षा किये जा रहा था। उससे न मिलने के अपने निर्णय के बावजूद मैं उससे मिलने जाता रहा था। मैं देख रहा था कि वह टुकड़े-टुकड़े करके टूट रहा है। वह बच्ची धीरे-धीरे बड़ी हो रही थी, बिगड़ रही थी, क्योंकि बहुत सारे कल्याण-संगठन उसे सुधारने में जुट गये थे। लेकिन वह कहीं नहीं टिकती थी। भागकर सीधे पट्रोल-स्टेशन पर जाती। उसकी मां लिसेल ने वहीं जुर रोज टेवर्न खोल दिया। उसे मथाई से कुछ लेना-देना नहीं था, फिर भी वह वहां रह रही है।

"जानते हो, तुम होते तो अंत में अपनी कहानी में मथाई से चमत्कार करा देते। अपराधी को पकड़वा देते। उसे हीरो बना देते। इसलिए मैं तुम्हारी आलोचना कर रहा था, सत्य कहानी से बहुत दूर की चीज है। ऐसा नहीं, मथाई हत्यारे का इंतजार करता रहा और आज भी कर रहा है।"

मेरी समझ में ही न आया कि क्या कहूं। एम ने फिर कहना शुरू किया, यह पिछले वर्ष की बात है। रविवार का दिन था। एक कैथोलिक पादरी ने मुझे केंटन अस्पताल में बुलवाया। एक मरणासन्न वृद्धा मुझसे अपने अंतिम समय में कुछ महत्त्वपूर्ण बात कहना चाहती थी। यह मेरे सेवा-निवृत्त होने से कुछ दिन पहले की बात है। दिसंबर का महीना। हर चीज पर ठंडी उदासी की परत जमी थी।

वह बहुत अधिक उम्र की थी। कमरे में एक पादरी भी मौजूद था। शायद उन्हीं ने मुझे फोन किया था। वह शायद बुढ़िया के अंतिम समय की प्रतीक्षा कर रहा था।

मेरे बैठने पर उसने बुढ़िया से कहा, "कमिश्नर साहब आ गये हैं। बता दो, क्या कहना चाहती हो उनसे।"

बुढ़िया मुसकरायी। उसने मेरी ओर देखा। वह कुछ कह रही थी, पर उसकी आवाज बहुत धीमी थी, "यह कोई विशेष बात नहीं थी। ऐसा तो हर परिवार में कभी न कभी हो जाता है। मैंने पादरी महोदय को बताया क्योंकि मेरी पोती मुझसे मिलने आयी थी, वह बाल-स्कर्ट पहने हुए थी। इसी से मझे कुछ पुरानी बातें याद आ गयी थीं। मैंने 'होली फादर' को बताया था, उन्होंने मुझे वह सब आपको बताने को कहा था।"

उसकी बातें मेरी समझ में नहीं आ रही थीं, फिर भी मैं शिष्टतावश सुनता रहा था।

"आप कमिश्नर साहब को अपनी कहानी सुनाइए," पादरी ने फिर श्रीमती श्रोट से कहा।

'हां, तो अपने पति के मरने के बाद मैंने अपने प्यारे अलबर्ट श्रोट से विवाह कर लिया। मैं पचपन की थी, वह तेईस का। वह हमारे घर में ड्राइवर था। घर के दूसरे छोटे-मोटे काम, बागवानी, मरम्मत आदि भी करता था। हालांकि मेरी बहन ने इस विवाह को पसंद नहीं किया था, लेकिन फिर भी . . . श्रोट अनाथ था। उसकी मां . . . कोई श्रोट के पिता के बारे में नहीं जानता था। मेरे पति ने उसे तब घर में रखा था, जब वह सोलह साल का था। वह दिमाग से कुछ कमजोर था, इसलिए पढ़ नहीं पाया। देखने - भालने में खूब ऊंचा तगड़ा। हम लोग आपस में कम बातें करते थे। वह सिर्फ इतना कहता था, 'यस ममी। हलो ममी।' और हरदम अपने काम में जुटा रहता था। हमेशा मेरा कहना मानता था। कम से कम उस शोफर से तो अच्छा ही था, जिससे मेरी बहन ने शादी की थी।"

"श्रीमती श्रोट, अपनी कहानी सुनाइए", पादरी ने फिर कहा।

धीरे-धीरे अलबर्ट का दिमाग और भी सुस्त होता गया। वह बैठा-बैठा आसमान में घूरता रहता था। यह द्वितीय विश्व-युद्ध के दिन थे। लेकिन उसे सेना में भरती नहीं किया गया। वे लोग उसका दिमाग ठीक नहीं समझते थे। वह अकसर काले कपड़े पहनता था। हर हफ्ते ज्यूरिख में मेरी बहन के पास अंडे ले जाता था। एक रात वह लौटा तो काफी देर तक बाथरूम में हाथ-पैर धोता रहा। मैं गयी तो देखा, खून ही खून फैला था। हालांकि उसके बदन

पर कहीं चोट के निशान नहीं थे। सुबह मैंने अखबार में गाल कैंटन में एक लड़की की हत्या का समाचार पढ़ा। हत्या रेजर से की गयी थी। बस, मैं सब समझ गयी।

मैंने अलबर्ट से पूछा तो बोला, "ऊपर से आदेश मिला था।" उसने आकाश की ओर इशारा करके कहा, "मैं उस लाल स्कर्टवाली लड़की से जंगल में मिलता था। तभी एक दिन ऊपर से आवाज आयी और मैंने उसे मार दिया।" मैंने बहुत कहा-सुना तो उसने कहा, "अब कभी ऐसा नहीं होगा।"

कई साल गुजर गये। एक रात फिर अलबर्ट घर आया और बाथरूम में . . . हां ढेर सारा खून ! कार भी खून से भरी थी। मेरे पूछने पर उसने बताया, "हां ममी, इस बार भी वह हो गया है। पर गाल केंटन में नहीं श्वाईज केंटन में हुआ है। वही ऊपर की आवाज . . ." मैं उस बार सब कह देना चाहती थी, पर मेरी उत्सुकता बढ़ती जा रही थी।

और कुछ दिन बाद अलबर्ट ने फिर वैसा ही किया। इस बार हत्या ज्यूरिख केंटन में हुई थी।

"क्या उसका नाम ग्रिटली था ?" मैंने पूछा।

"हां,तीसरी लड़की का नाम ग्रिटली था। उसके बाद कुछ दिन तक अलबर्ट ठीक रहा, पर जल्दी ही उसकी तबीयत खराब होने लगी। घर का कोई भी काम ठीक से नहीं होता था। एक दिन फिर मैंने उसे जाते देखा, वह जेब में ब्लेड रख रहा था। मैंने पूछा तो बोला, "हां, ममी, इस बार सर्विस-स्टेशन पर फिर वैसी ही लड़की है—अन्ना। ऊपर की आवाज मुझे फिर आदेश दे रही है, मैं जा रहा हूं।" मैं रोती रह गयी, पर वह कार में बैठकर चला गया। पंद्रह मिनट बाद पुलिस का फोन आया —— एक एक्सीडेंट में अलबर्ट की मृत्यु हो गयी।

अब ग्रिटली मोसर की पूरी कहानी मेरे सामने उभर रही थी। मथाई का चेहरा बार-बार सामने तैर रहा था। मैं तुरंत वहां से उठ गया। मैं जैसे पंख लगाकर सर्विस-स्टेशन पर मथाई के पास पहुंच जाना चाहता था। वह ग्रिटली मोसर के हत्यारे का इंतजार कर रहा था, लेकिन जो अब कभी आनेवाला नहीं था।

टेवर्न में लोगों की भीड़ ठहाके लगा रही थी। उस ठंड में भी मथाई बाहर बैठा था। उसके आसपास शराब की गंध मंडरा रही थी। मैं उसके पास जाकर बैठ गया। उसने मेरी ओर देखा, पर वह मुझे नहीं, मेरे पार देख रहा था। मैंने धीरे-धीरे श्रीमती श्रोट से सुनी सारी कहानी उसे बता दी। पर शायद उसने एक भी शब्द नहीं सुना। वह सुन नहीं रहा था, कुछ देख भी नहीं पा रहा था। वह सिर्फ प्रतीक्षा कर रहा था। "तुम सही थे मथाई!" मैंने कहा, पर मथाई ने कुछ नहीं सुना। वह मुट्ठियां भींचकर चिल्लाया, "मैं प्रतीक्षा करता रहूंगा। प्रतीक्षा करता रहूंगा। वह आएगा, जरूर आएगा।" •

दी हिन्दुस्तान टाइम्स की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान [illegible] प्रेस, नई दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

सुशील कालरा

आप तो जनता के आदमी हैं। आप ब्लैक मार्केट और जमाखोरी करने वालों को पकड़ने में हमारी मदद करें

१

Khatau THROUGH
100 YEARS

कादम्बिनी
भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका
बीत रहा अकेला साल

Ah! here's at last...
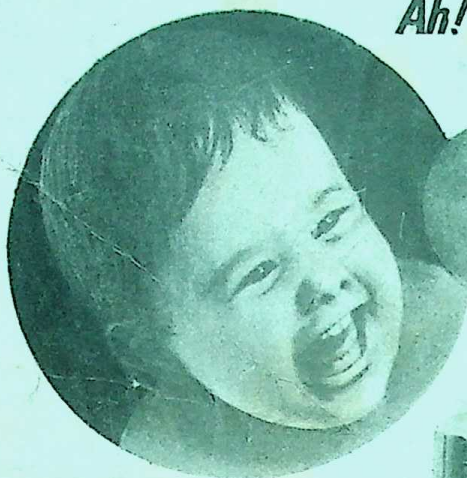
NEW

and beautiful

BONNE®

SUPER TOP

THE LAST WORD
IN BABY FEEDER

Sales Office :

BONNY PRODUCTS

H.O. 5602, GANDHI MARKET
SADAR BAZAR, DELHI-110006. PH : 515757

Factory :

12 E, INDUSTRIAL AREA, BAHADURGARH
PHONE : 378.

BONNE® SUPER-TOP

A SUPER QUALITY PRODUCT FROM BONNY

आप हमेशा ख़ूबसूरत दीखते हैं
Shellka®
WOOLLENS
TERENE / वूल सूटिंग , ख़ालिस ऊनी
सूटिंग, वर्स्टेड्स, फ्लैनल्स और ट्वीड्स
क्लिक !
INTERADS
पंजाब वूलन्स । प्रो० शेलका वूलन्स प्रा० लि०,
छेहारटा।
मिल रिटेल शो रूम: बी-४५/४७, कनाट प्लेस
नई दिल्ली

नये अंदाज़, भाग्य-नक्षत्र

आपका अपना भाग्य-नक्षत्र है और निराला ढंग भी। लालभाई के वस्त्र उन्हीं के अनुरूप बनाये गये हैं — और वह भी अनोखे प्रिण्ट में, निराले रंगों में, विभिन्न बुनावटों में। मनपसन्द के लिए ? नहीं, ७ गुने अवसर आपको और कहाँ मिलेंगे?
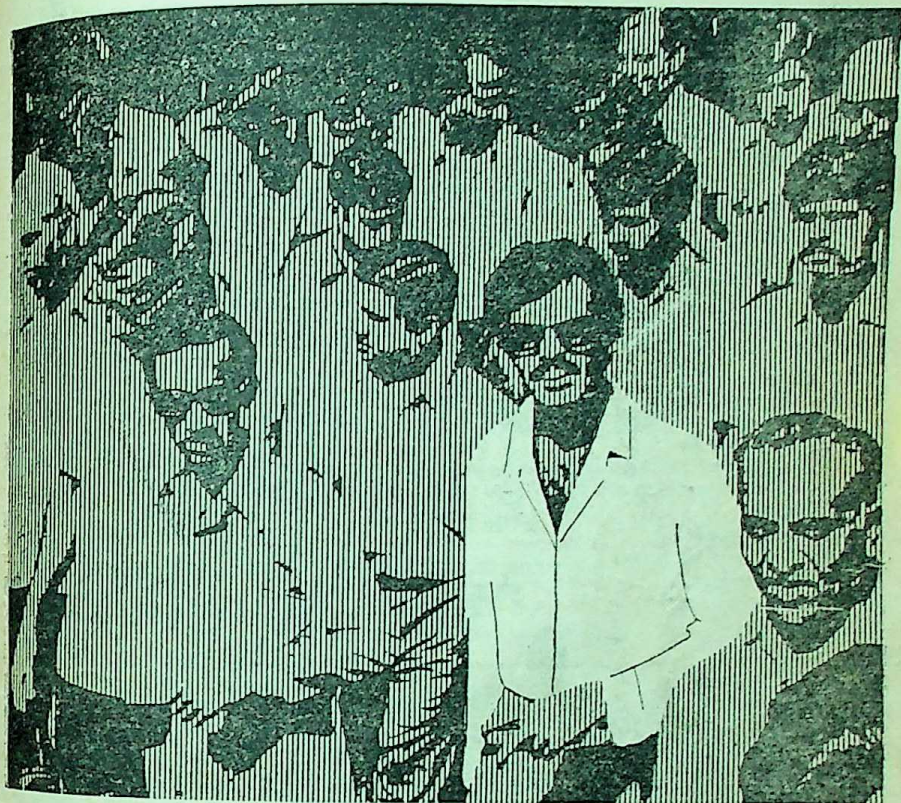
वृश्चिक
आपमें साहस है,
आत्म-विश्वास है,
आत्म-संयम भी है और
ध्येयपूर्ति के लिए तो आप जी-जान से
जुट जाते हैं और उसमें हमेशा सबसे
आगे रहते हैं।
आपके भाग्यानुकूल रंग हैं —
रक्तापीत (मेरून) और क्रिमज़न।
जैसे प्यारे आपके रंग,
वैसा ही निराला
आपका ढंग!

धनु
आपका स्वभाव
हँसमुख है और व्यक्तित्व तेजस्वी।
सफलता के लिए आप हमेशा
एक समय में एक ही काम में
जुटे रहते हैं। आपके भाग्यानुकूल
रंग हैं —
गहरा हरा, नीलारुण (परपिल)
और भूरा (ब्राउन)। पहनने का
आपका अंदाज़ निराला,
लेकिन फ़ैशन से
लगाव कम!

तुला
आपमें सूझबूझ है
और सहृदयता भी।
सद्भावना और मैत्री बढ़ाना
आपका गुण है।
आपके भाग्यानुकूल
रंग हैं —
हरा, नीला, गुलाबी
और भूरा (ब्राउन)।
जैसा मौक़ा, वैसा ही
आपका अंदाज़!

लालभाई — 'मांगलिक-मिलन' द्वारा

शानदार ७ मिलों की देन

CMLB.37-172 HIN

रिटेल शॉप्स :
मेसर्स मोहन ब्रदर्स : क्लॉक टॉवर, ७५२, चाँदनी चौक, दिल्ली-६
मोहन ब्रदर्स एसोसिएट्स, १०२११, अजमल खाँ रोड, लालभाई चौक, करोल बाग, नयी दिल्ली-५

सही अर्थों पर चिह्न लगाइए और पृष्ठ १० पर दिये उत्तरों से मिलाइए

१. **कुमुक**—क. फौज, ख. जोर, ग. मदद, घ. सहारा।

२. **उपभोग**—क. भोजन, ख. जलपान, ग. आनंद, घ. इस्तेमाल।

३. **चेतना**—क. सज्ञान अवस्था, ख. जीवन, ग. सतर्कता, घ. जागरण।

४. **केंद्र**—क. राजधानी, ख. मध्य स्थान, ग. मुख्य स्थान, घ. लक्ष्यबिंदु।

५. **छैलछबीला**—क. शौकिया, ख. गुंडा, ग. रंगीला-सजीला, घ. रसमय।

६. **अखरना**—क. लिखना, ख. बेचैनी होना, ग. खलना, घ. सुख मिलना।

७. **गमकना**—क. धमकना, ख. भरना, ग. ठुमकना, घ. महकना।

८. **झल्लाना**—क. झुंझलाना, ख. गाली देना, ग. क्रोध करना, घ. मचलना।

९. **घूरना**—क. ताक-झांक करना, ख. आंखें गड़ाकर देखना, ग. स्तब्ध होकर देखना, घ. निहारना।

१०. **फूहड़**—क. मूर्ख, ख. पागल, ग. बेशऊर, घ. जल्दबाज।

११. **सुरंग**—क. सेंध, ख. दराज, ग. छिपा मार्ग, घ. भूगर्भ में बनाया गया मार्ग।

१२. **तरसना**—क. कोई वस्तु न पाने से व्याकुल, पाने के लिए आतुर रहना, ख. ललकना, ग. तड़पना, घ. प्यासा होना।

१३. **कुरेदना**—क. खोदना, ख. खुरचना, ग. काटना, ग. नक्काशी करना।

१४. **क्षत-विक्षत**—क. जिसे चोटों से बहुत घाव हुए हों, ख. शोकाकुल, ग. अंगभंग, घ. धराशायी।

१५. **अपेक्षाकृत**—क. तुलना में, ख. प्रतीक्षित, ग. अपेक्षित, घ. इच्छित।

१६. **दाक्षिण्य**—क. अनुकूलता, ख. सरलता, ग. कपट, घ. कृपा।

१७. **प्रहसन**—क. नाटक, ख. विनोद, ग. हंसी-दिल्लगी, घ. हास्यप्रधान नाटक।

१८. **बद्धपरिकर**—क. कमर पकड़े ख. कमरबंद कसकर तैयार, ग. उद्धत, घ. तुला हुआ।

• **विशालाक्ष**

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. ग. मदद। घिरी फौज के लिए कुमुक आ गयी। तुर्की, सं., स्त्री.। **सहायक बल।**

२. घ. इस्तेमाल। दैनिक, सामान्य **उपभोग** की वस्तुएं। तत्., सं., पुं.। **व्यवहार।**

३. क. सज्ञान अवस्था। **चेतना** आयी, हुई, खो गयी। तत्., सं., स्त्री.। **होश, चेत, बोध**।

४. ख. मध्य स्थान। **केंद्रीय** सभा, शासन, **केंद्र** के आसपास घूमना। सं., पुं.। **मरकज, मध्य**।

५. ग. रंगीला-सजीला। **छैलछबीला** व्यक्ति चाहिए या सादे जीवन और उच्च विचारोंवाला? लो. भा., वि., पुं.। **छैल-चिकनिया**।

६. ग. खलना। आपकी अनुपस्थिति **अखर** गयी। तद्., क्रि. अ.। **सालना, कष्टप्रद होना**।

७. घ. महकना। कमरा **गमक** रहा है; फूलों का **गमकना**। तद्., क्रि. अ.। **सुगंध फैलना**।

८. क. झुंझलाना। उत्तर सुनते ही **झल्ला** उठा। लो. भा., क्रि. अ.। **खीजना, भड़कना**।

९. ख. आंखें गड़ाकर देखना। स्त्री, विरोधी की ओर **घूरना** (क्रोध या बुरी नीयत का द्योतक)। तद्., क्रि. अ.। **ताकना**।

१०. ग. बेशऊर। **फूहड़** की झाड़ू और सुघड़ का लीपा छिपता नहीं। लो. भा., वि., उ. लि.। **बेसलीका, अनगढ़, बेढंगा**।

११. घ. भूगर्भ में बनाया गया मार्ग। महल से नदी तक **सुरंग** थी। तत्., सं., स्त्री.।

१२. क. कोई वस्तु न पाने से व्याकुल, पाने के लिए आतुर रहना। दर्शनों, दूध, पुस्तकों के लिए **तरसना**। तद्., क्रि. अ.।

१३. ख. खुरचना। शरमाकर ... **कुरेदने** लगा; दीवार पर नाम ... दिया। लो. भा., क्रि. स.।

१४. क. जिसे चोटों से बहुत ... लगे हों। **क्षत-विक्षत** हो गया, फिर ... रणभूमि में डटा रहा। तत्., वि., उ. लि.। **लहू-लुहान**।

१५. क. तुलना में। यह ... **अपेक्षाकृत** अच्छा है। तत्., क्रि. वि.। **सापेक्षतः**।

१६. क. अनकूलता। हरिजनों ... प्रति **दाक्षिण्य** का केवल प्रदर्शन ... सचाई से पालन करो। तत्., सं., पुं.। **उदारता, सौजन्य**।

१७. घ. हास्यप्रधान नाटक। हंसी रुकती ही नहीं, ऐसा गजब का **प्रहसन** है। तत्., सं., पुं.। **हंसी-दिल्लगी, परिहास, बहुत हंसानेवाली बात**।

१८. ख. कमरबंद कसकर तैयार। पर्वतारोहण के लिए **बद्धपरिकर**। तत्., वि., उ. लि.। **कटिबद्ध, उद्यत, तत्पर**।

संकेत

तत्—तत्सम। तद्—तद्भव। लो. भा.—लोकभाषा। सं.—संज्ञा। वि.—विशेषण। क्रि.—क्रिया। क्रि. वि.—क्रिया-विशेषण। पुं.—पुंलिग। स्त्री.—स्त्रीलिंग। उ. लि.—उभयलिंग। क्रि. अ.—क्रिया अकर्मक। क्रि. स.—क्रिया सकर्मक।

नवंबर अंक में 'जयप्रकाश बाबू अब कहां ?' शीर्षक से बिहार-आंदोलन का रिपोर्ताज संतुलित दृष्टि लिये था। उससे समूचे आंदोलन की पृष्ठभूमि समझ में आ जाती है, किंतु लेखिका का अंत में इस आंदोलन को गुरिल्ला-युद्ध की संज्ञा देना गलत है। बिहार का आंदोलन अभी तो सन' ४२ की हिंसा को भी नहीं छू पाया है।

--विजयसिंह राठौर, जयपुर

नवंबर का 'काल-चिंतन' आप ही लिख सकते थे—क्योंकि परंपराएं तोड़ने में आपने इधर काफी महारत हासिल कर ली है। अंधकार न अच्छा है, न बुरा। एक बहुत प्रचलित कहावत 'कोट' करूं तो—न राजा बुरा है, न रैयत बुरी है! बुरा है वही जिसकी नीयत बुरी है!

—सत्यनारायण शर्मा, बैतूल

नवंबर अंक में वाटरगेट कांड का पर्दाफाश करनेवाले निर्भीक पत्र 'वाशिंगटन पोस्ट' की संचालिका कैथरीन ग्राहम का परिचय पढ़कर बड़ी प्रेरणा मिली। श्रीमती कैथरीन का प्रश्न कि 'अगर प्रेस का भी मुंह बंद हो जाए तो फिर राष्ट्रपति (हमारे यहां सरकार) के गलत कारनामों को कौन टोक सकेगा ?' भारतवासियों के लिए भी विचारणीय है। क्या प्रतिबद्धता के नाम पर हमारे देश में प्रेस आम तौर पर सरकार का अंध-समर्थन नहीं कर रहा है?

—अचित शर्मा, आगरा

नवंबर अंक का सार-संक्षेप 'एक अंतहीन प्रतीक्षा' बहुत बढ़िया था।

--सकीना इकबाल, बरेली

अक्तूबर अंक में सर्वाधिक पठनीय लेख है राजेन्द्र यादव का 'इतिहास-लेखन एक कला (बाजी) है'। इसके बाद डॉ. शिवप्रसाद सिंह के उत्तरों का स्थान है। इनका यह कथन सही है कि 'लेखक है ही कहां ? सभी अपनी मजबूरियों के कारण व्यवस्था से समझौता कर बिक गये हैं।'

'हिंदी कहानी के संदर्भ में 'समय के हस्ताक्षर' में यह कथन भी विचारणीय है कि 'साहित्य उद्घोषणाओं से नहीं, रचनात्मकता से जाना जाता है। जब उद्घोषणाएं बढ़ने लगती हैं तो उनका असर रचनात्मकता पर पड़ता है और धीरे-धीरे रचना इतिहास के पृष्ठों की ओर बढ़ती चली जाती है। यहीं से गलत इतिहास-लेखन को प्रश्रय मिलता है।' आज हिंदी कहानी ही क्यों, सभी विधाएं आंदोलनों के बीच फंसी हुई हैं।

--मीना भारती, मुजफ्फरपुर

प्रिय अवस्थीजी,

'कादम्बिनी' के सितंबर अंक में मेरे नाम से एक निबंध 'आर्य-द्रविड़ भाषाओं की मूलभूत एकता' (पृष्ठ १४१-१४७) प्रकाशित हुआ है। मुझे यह स्मरण नहीं है कि मैंने कभी आपको इस विषय पर कोई निबंध भेजा था। इस निबंध में कुछ तथ्यात्मक असावधानियां दिखाई देती हैं, जिनसे मेरी असहमति है और इस रूप में इसकी स्थापनाएं मेरी पुस्तक 'आर्य-द्रविड़ भाषाओं की मूलभूत एकता' की स्थापनाओं से भिन्न जाती हैं। इससे पाठकों के मन में भ्रम हो सकता है कि या तो मेरे मन में कुछ विषयों में भ्रम बना हुआ है अथवा मैंने अपनी पुस्तक में दी हुई स्थापना में कुछ संशोधन किया है, कारण यह निबंध मेरी पुस्तक के प्रकाशन के बाद प्रकाश में आ रहा है और इसलिए पूर्वत्रासिद्धम का कुछ प्रभाव इस पर पड़ सकता है। अतः कृपया अपने पत्र के माध्यम से ही स्थिति स्पष्ट करने का कष्ट करें ताकि आपके लोकप्रिय पत्र के पाठकों के मन में किसी प्रकार की गलतफहमी न उत्पन्न हो।

सादर आपका,
भगवान सिंह

उक्त लेख प्रकाशक के अनुरोध पर हमने प्रकाशित किया था। पुस्तक के कुछ अंशों को जोड़ते समय संभव है कुछ तथ्यात्मक असावधानियां रह गयी हों। हमारी सलाह है कि इस विषय के जिज्ञासु पाठक मूल-पुस्तक पढ़ें। —संपादक

अक्तूबर अंक उत्तम एवं संग्रहणीय विशेषांक रहा। बधाई। हर कहानी जहां विशिष्ट थी; वहीं दूसरी से हटकर भी— कथ्य में भी और शिल्प के स्तर पर भी। मार्कण्डेय बहुत लंबे अंतराल के बाद आये किंतु अपने चिरपरिचित रूप में ही— उनकी कहानी ग्रामीण विसंगतियों-विद्रूपों को काफी तिक्तता व गहनता से रेखांकित करती है। डॉ. लाल ने बिहार आंदोलन के पक्ष में स्वर उठानेवाली एक सामयिक कहानी दी है। अंक की शायद सर्वोत्तम कहानी—व्यंग्यप्रधान रचना 'दो मित्र

एक और नया स्तंभ

'क्यों और क्यों नहीं?' के बाद एक और साहित्यिक स्तंभ

आत्म-साक्षात्कार

किसी विशिष्ट व्यक्ति से बातचीत करना और उससे साक्ष्य लेना पत्रकारिता की दुनिया का महत्त्वपूर्ण अंग है। यह काम उतना कठिन भी नहीं है। लेकिन अपने आपको दो टुकड़ों में बांटकर अपने ही भीतर के दूसरे आदमी से बातचीत करना और प्याज की तरह अपने ही छिलके उघाड़ना कठिन ही नहीं, दुष्कर काम है।

यह विशिष्ट स्तंभ लेखक के एक पूरे पृष्ठ के रंगीन चित्र सहित जनवरी के अंक से प्रारंभ।

का मौन' है। 'पीढ़ियों का भुगतान' उषा प्रियंवदा की 'वापसी' की याद दिलाती है। इसमें पुरानी पीढ़ी द्वारा आधुनिक जीवन की औपचारिकताओं से ही सही—एक सामंजस्य तो स्थापित करने का विचार सुंदर है। परन्तु नयी पीढ़ी क्या करे ?—यह दूसरा प्रश्न है, जो उभरता है।

कहानियों के बीच कहानियों से इतर राजेन्द्र यादवजी का लेख 'शब्द-मेघ' के अंतर्गत जितना पैना है, उतना ही रोचक, तथ्यपरक व सामयिक भी। शब्दों के दुरुपयोग का दुष्प्रभाव कितना घातक हो सकता है—वह भी साहित्य के संदर्भ में—यह इस लेख से सरलता से जाना जा सकता है। व्यवस्था के अनगढ़पन और कूपमंडूकता की प्रवृत्ति को तो यह झकझोरता ही है।

—कृष्णगोपाल श्रीवास्तव, गोरखपुर

अक्तूबर अंक में 'रावण की सेना युद्धक विमानों से लैस थी' लेख बेहद प्रिय लगा। इसी लेख में अनार्य, व्रात्य की संज्ञा से संबोधित किया गया है। अनार्य को व्रात्य की वरीयता से समलंकृत नहीं किया जा सकता। व्रात्य शब्द ही 'व्रत' तप से संवलित है, जो भारतीय अतीत को गौरवान्वित करता है। वेदों में भी 'व्रात्य' की वरीयता को बखाना गया है। व्रात्यों का जीवन अत्यधिक त्यागपूर्ण था। राक्षस, यक्ष, अनार्य आदि वंशों से भिन्न आर्यों में ही व्रात्य भी थे।

—शोभानाथ पाठक, मेघनगर (झाबुआ)

श्रद्धांजलि

श्रीमती रजनी पनिकर का अचानक ८ नवंबर को निधन हो गया। उनका जन्म ११ सितंबर, १९२४ को गुजरांवाला में हुआ था। वे आकाशवाणी में कार्यक्रम-निर्देशिका के पद पर कार्य कर रही थीं और लेखिका-संघ की संस्थापिका और अध्यक्षा थीं।

श्रीमती पनिकर के अब तक पंद्रह उपन्यास और दो कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

रजनीजी का समस्त लेखन ही नारी-जाति को भावनात्मक शोषण से मुक्त कराने की दिशा में समर्पित था। स्वावलंबन और स्वाभिमान को वे नारी-जाति की अजेय शक्ति मानती थीं। उन्होंने स्त्रियों को प्रेरणा दी कि पारिवारिक दुखड़ों पर रोने का स्वभाव छोड़कर कर्मठ और साहसी बनें। **—डॉ. नीलिमा**

वर्ष १५: अंक २
दिसम्बर, १९७

आकल्पं कविनूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

सार-संक्षेप

कविताएं

मुखपृष्ठ : छाया—प्रेम कपूर

स्थायी स्तंभ

सह-संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक। चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

कवि नहीं विदूषक !

काव्य मानव की सहज संवेदना का प्रतिबिंब है और उसके माध्यम से वह कहीं अपने आपको खोजने का प्रयत्न करता है। स्वभाव से मनुष्य रस-प्रिय है और काव्य (यानी कविता) रस-स्रोत है, इसीलिए अपने थके-हारे अथवा एकांत क्षणों में वह सहज ही गुनगुनाने लगता है।

काव्य-संध्याओं अथवा कवि-सम्मेलनों के प्रति जनता का आकर्षण सदैव रहा है, लेकिन कुछ वर्षों पूर्व कवि बच्चन की कही गयी पंक्तियां मुझे अब भी याद हैं। उन्होंने एक मंच पर से ही श्रोताओं को संबोधित करते हुए कहा था, 'एक दिन आएगा, कवियों को श्रोता नहीं मिलेंगे और इसके लिए स्वयं कवि उत्तरदायी होंगे।'

अमरीका में ऐसी स्थिति आ गयी है। वहां के कवि किसी संध्या को महासागर के किनारे एकत्रित होकर संपेरों की तरह पहले डफली बजाते हैं और जब भीड़ एकत्रित हो जाती है तो वे काव्य-पाठ करते हैं। भीड़ खिसकती रहती है और कवियों की सहज भाव-विह्वलता स्वयं उन्हीं के आसपास एक घेरा बनाये हवा की तरह चक्कर काटती रहती है।

हमारे यहां अभी यह स्थिति नहीं आयी, लेकिन हमारा दृढ़ विश्वास है कि कवि बच्चन की भविष्यवाणी सत्य होगी, मंचीय कवि और प्रकाशित होनेवाले वास्तविक कवियों में एक स्पष्ट अंतर अपने आप आ गया है। जो सही अर्थों में कवि हैं वे मंच पर नहीं जाते और जो मंच पर जाते हैं, वे छपते नहीं। कवियों के इन दो वर्गों को किस संज्ञा से विभक्त किया जाए, यह विचारणीय प्रश्न है।

मेरे मन में यह प्रश्न हाल ही भोपाल में हुए कवि-सम्मेलन से अधिक तीव्र होकर उभरा है। मैं उस सम्मेलन का अध्यक्ष था और भोपाल चौक का समूचा हिस्सा बीस-पच्चीस हजार श्रोताओं से भरा था। मंच पर जो कवि आसीन थे, उनमें से कुछ के नाम लिखना यहां आवश्यक है। ये हैं— शैल चतुर्वेदी, सोम ठाकुर, माणिक वर्मा, सुरेश उपाध्याय आदि। कवि-सम्मेलनों में ये सभी कवि अकसर देखे जाते हैं। उस दिन कवियों ने जिस छिछले और ओछे हास्य का परिचय दिया, काव्य-जगत के लिए चिंतनीय है। मैंने एक कवि से निवेदन किया कि वे पहले एक गीत सुनाएं। उन्होंने कहा, "मैं गीत सुनाऊंगा तो 'हूट' हो जाऊंगा।"

कवि-सम्मेलन का दौर हलके और कई प्रसंगों में अभद्र ढंग से चल रहा था। उनकी कविताओं के विषय या तो श्रीमती

गांधी थीं अथवा महिलाएं। श्रीमती गांधी के संबंध में कुछ पंक्तियां सुनिए —

'तुम लगाती हो
इंपोर्टेड वस्तुओं पर बैन
फिर क्यों पाल रखी है
घर में इंपोर्टेड बहू?'

प्रधान-मंत्री के लिए ऐसा प्रयोग किसी भी स्वतंत्र-लेखन की सीमा में नहीं आता। इसी तरह महिलाओं पर भद्दे और गंदे व्यंग्य काव्य नहीं, किसी गाली का अंश हो सकते हैं। इसका स्पष्ट परिणाम यह हुआ कि थोड़े समय में ही आवाजें आने लगीं और जनता जाने लगी। मैं स्वयं बीच में ही कवि-सम्मेलन छोड़कर चला गया।

आज जिस दौर से हम गुजर रहे हैं, वह हास्यास्पद स्थिति नहीं है। महंगाई, भ्रष्टाचार, तस्करी, राशन कितना-कुछ आज के आदमी को देखना और भोगना पड़ रहा है—इन पर करारे व्यंग्य की आवश्यकता है न कि छिछले स्तर की। यह मानना कि श्रोताओं की रुचियां ही ऐसी हैं, अपने आसपास एक 'मिथ' का घेरा बना लेना है। मैं जानता हूं, शाम से लेकर सुबह तक जनता बच्चन, नीरज, वीरेन्द्र मिश्र, रामावतार त्यागी, रमानाथ अवस्थी, दिनेश इत्यादि कवियों की कविताएं सुनती रही है। अचानक उसकी रुचि कैसे बदल गयी?

वास्तव में जो कुछ फिल्मों में हो रहा है, वही कुछ कवि-सम्मेलनों में आ गया है। अच्छे कवियों के मंच पर न जाने से 'विदूषक' कवि जनता के पास पहुंच गये हैं और हमारा देश अतिथि-परंपरा में अग्रणी है—यानी जब बाहर से अतिथि आये हैं और उन्हें 'दक्षिणा' भी दी गयी है, तो उन्हें न सुनना उनका अपमान है। इस सहज जन-भावना का गलत लाभ कवि उठाते हैं और मंच को दूषित करते हैं। अकसर कवि-सम्मेलनों के मंच आपसी प्रतिद्वंद्विता, निजी-सहयोग, अपने पिछलग्गुओं को प्रोत्साहित करने और खिलवाड़ के माध्यम रह गये हैं। कुछ कवि मंच पर बाकायदा अभिनय भी करते हैं, एक पंक्ति पढ़कर अपने आसपास बैठे साथियों की ओर वाहवाही के लिए देखते हैं, फिर उसे दोहराते हैं और जब इसके बावजूद प्रभाव नहीं पड़ता तो अभिनय करने लगते हैं और कहते हैं, 'जरा इसे बारीकी से सुनिए।' जनता ताली पीट देती है और कवि महोदय अपनी सफलता पर 'दारा पहलवान' की तरह बाहें उछालते आ बैठते हैं।

मैं ऐसे कवि-सम्मेलनों के लिए मात्र इन निम्न श्रेणी के हुल्लड़बाज, उछालू कवियों को उत्तरदायी मानता हूं। यदि आज की यांत्रिक और वैज्ञानिक दुनिया में कविता-मात्र निष्प्रयोजन हो गयी है तो मंचों पर इस स्तर से अपनी तुकबाजियां प्रस्तुत करनेवाले 'कवि' नाम को ही धब्बा लगा रहे हैं। वे वास्तव में मात्र विदूषक हैं और यह आयोजकों के लिए सोचने का विषय है कि वे कवि-सम्मेलन कर रहे हैं अथवा 'विदूषक-सम्मेलन' और 'विदूषकों' की दक्षिणा यानी फीस कितनी होती है!

मरण-चिंतन

— अपने एक आत्मीय मित्र को श्मशान में निश्चेष्ट पड़ा देखकर अचानक मन कांप उठा। लगा समूची मानव-शक्ति के लिए वह एक चुनौती है। एक आवाज जैसे उठी, 'सब-कुछ कर जाने और पा लेने का दंभ भरने वाले मेरे मित्र, विवश क्यों खड़े हो? मुझे अपने साथ खड़ा नहीं कर सकते?'

— आवाजों का दायरा घेर लेता है : सत्यवान ने भी यही प्रश्न सावित्री से किया था!

— नचिकेता के मन में अमरत्व की प्राप्ति का वरदान मांगने का दृढ़ संकल्प उठा था। उसने यम-सदन में पहुंचकर अनुभव किया था कि मनुष्य अन्न के समान पकता है और अन्न की तरह ही जन्म ग्रहण करता है।

— दोनों क्षणिक विजयी होकर भी अंततः पराजित हुए।

— अश्वत्थामा की शाश्वतता का आडंबर ओढ़कर मात्र एक 'मिथ' ही पैदा किया जा सकता है!

— निश्चेष्ट पड़े अपने आत्मीय मित्र को एक कंपन देना भी हमारे वश में नहीं है!

— 'श्मशान वैराग्य' उस क्षण सब कुछ ले सकता है—उदारता, वैयक्तिकता, आत्मीयता और संपत्ति भी!

— उसके बाहर?

— जीवन और मृत्यु का अंतर यहीं से शुरू होता है। पृथ्वी का आरंभ मिट्टी है, किंतु उसका अंत आकाश है!

— अंकुर फूटते ही इतिहास शुरू हो जाता है और आकाश में पहुंचते ही इतिहास-चक्र समाप्त हो जाता है!

— शेष स्मृतियां इतिहास नहीं, अवशेषों के लिए शेष इतिहास का माध्यम हैं।

— मृत्यु समूची मानवता की हत्या है!

— वह शाश्वत रात्रि है और इच्छाशून्य एक खोखला जल-चक्र है।

— काल का वह दुःखजनक क्रम है!
— वह मात्र एक 'क्रास' है, जिसका अर्थ आगे के लिए गतिहीनता है!
— उसी क्रास को गले में धारण करना मृत्यु के साथ खेलना है!
— आत्मा और शरीर-जैसा भेद-भ्रम बुद्धि-संपन्न व्यक्ति स्वीकार नहीं कर सकता!
— गीता में कृष्ण ने अमर आत्मा को मात्र अपनी लक्ष्य-पूर्ति का एक माध्यम बनाया था। उसके बिना न महाभारत होता और न कृष्ण के महाबलशाली व्यापक व्यक्तित्व का उद्घाटन होता!
— विज्ञान की अनगिनत उपलब्धियां आत्मा को नहीं पकड़ सकीं! सभ्यता के विकास का कोई अंतिम स्वर जीवित मस्तिष्क को कैद नहीं कर सका?
— हम वास्तव में विचारों की उधार ली हुई शक्ति के सहारे अपनी महानता के गीत गाते हैं।
— अपना लक्ष्य आज तक हम निर्धारित नहीं कर पाये।
— क्रास को देखकर भय खाते रहना और बांसुरी के स्वरों में आनंद की खोज के लिए भटकते रहना हमारी अनिवार्य नियति है!
— इसी के सहारे हमने सिद्धांत बनाया : आनंद हमारा लक्ष्य है!
— आंसुओं के खारे स्वाद में, मदिरा की कड़वाहट में, साधना के लिए कृश करते शरीर में आनंद की खोज हमारा प्रयास है!
— आनंद क्षण में होता है, वह मात्र वर्तमान है। अतीत से न उसका कुछ लेना-देना है और न भविष्य के साथ कोई तारतम्य है!
— आनंद के एक क्षण में अभिभूत होकर सोचा जाए तो आत्मा एक सांप के समान लगेगी।
— उसके दांत तोड़ दीजिए, आपके साथ रहेगी; दांत फिर निकलते ही, वह आपको ही डसेगी!

••

— बुद्ध ने आनंद की खोज करनी चाही थी, वह राजसी वैभव और तपस्या के अंत तक पराजित ही रहे!
— अपने मित्र की चुनौती मैं मात्र इस रूप में ग्रहण कर सकता हूं कि 'श्मशान वैराग्य' से उबरते ही उसके नाम का भी एक जाम पी लूं!

समृद्ध देशों द्वारा विकासशील देशों का शोषण

● डॉ. सुरेशचन्द्र गंगल

अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में 'सहायता' शब्द का प्रयोग भ्रांतिजनक तथा पेचीदा है। उदाहरणतः १९६२ में चीनी आक्रमण के समय अंगरेजों ने बड़ी तत्परता से भारत को सैन्य एवं आर्थिक सहायता पहुंचायी थी। परंतु वास्तव में इस सहायता के पीछे अंगरेजों का अपना स्वार्थ था। नेफा तथा असम क्षेत्र में चीनी काफी आगे बढ़ आये थे। यदि चीनी सेनाओं को तुरंत रोका न जाता तो शीघ्र ही उनके उस स्थल तक बढ़ आने का भय था जहां अंगरेजों के अनेक बड़े एवं बहुमूल्य चाय-बगीचे थे तथा जो आक्रमण के फलस्वरूप नष्ट हो जाते। अतः अंगरेजों का उद्देश्य वस्तुतः अपनी मूल्यवान संपत्ति की रक्षा करना ही था।

पिछले २५ वर्षों के सहायता-कार्यक्रमों पर दृष्टिपात करने से ऐसे अनेक उदाहरण मिलेंगे। कुछ वर्ष पहले अलजियर्स में एक अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्मेलन में अलजीरिया के राष्ट्रपति ने कहा था, "यूरोप और अमरीका सदैव विकासशील देशों की प्राकृतिक संपदा को लूटते-खसोटते रहे हैं। अतः आज ये देश विकासशील राष्ट्रों की जो थोड़ी-बहुत सहायता कर रहे हैं वह उस भारी ऋण का अत्यल्प प्रतिदान मात्र है जो कि उपनिवेशवादी शोषण के फलस्वरूप इन समृद्ध देशों पर चढ़ा है।" अफ्रीकी-एशियाई देशों के कई अन्य प्रवक्ताओं ने भी इस विचार का समर्थन किया था और कहा था कि वास्तव में बड़े देशों की वर्तमान सहायता एवं व्यापार संबंधी नीतियां 'प्राथमिक वस्तुओं के उत्पादक (विकासशील) देशों को लूटने के सहज साधन हैं।' इसके विपरीत अमरीका तथा दूसरे समृद्ध देश प्रायः यह दावा करते रहे हैं कि उनके सहायता-कार्यक्रम मूलतः 'नैतिकता, समानता, न्याय एवं करुणा' के आदर्शों से प्रेरित हैं। विदेशी सहायता का सही विश्लेषण करने पर ही हम किसी निष्कर्ष पर पहुंच सकेंगे। संयुक्त राष्ट्रसंघ ने १९६०-७० को प्रथम विकास-दशक तथा १९७०-८० को द्वितीय विकास-दशक घोषित किया। इन घोषणाओं का उद्देश्य विकसित अथवा संपन्न देशों द्वारा एशिया, अफ्रीका तथा

लातीनी अमरीका के अपेक्षाकृत गरीब तथा विकासशील देशों को अधिकाधिक आर्थिक सहायता देकर उनके विकास-कार्यक्रमों में विशेष योगदान करना था। विकास-दशकों की इस विशिष्ट योजना को लागू हुए आज चौदह वर्ष गुजर चुके, लेकिन कहीं भी इसका कोई ठोस प्रभाव नजर नहीं आता। बल्कि पिछले ६–७ वर्षों में कई समृद्ध देशों, विशेषतः अमरीका ने उलटे अपने सहायता-कार्यक्रमों में काफी कटौती की है। इसके अतिरिक्त विगत पांच वर्षों में राष्ट्रसंघ की व्यापार एवं विकास संस्था (अंकटाड) ने कई बार यह सिफारिश की है कि विकसित देश अपने कुल राष्ट्रीय उत्पादन का १ प्रतिशत विकासशील देशों के सहायतार्थ दें। विकसित देशों की संपदा एवं साधनों को देखते हुए यह बड़ी साधारण-सी मांग है, फिर भी निकट भविष्य में इसके पूर्णरूपेण क्रियान्वित होने के कोई लक्षण नजर नहीं आते।

विकासशील देशों की यह शिकायत उचित है कि विकसित या मालदार देशों से जो आर्थिक सहायता उन्हें मिली है वह बहुत नाकाफी है। उनकी एक बड़ी शिकायत यह भी है कि सहायक देश अपनी आर्थिक सहायता का इस्तेमाल प्रायः अपने विदेश-नीति संबंधी उद्देश्यों की पूर्ति हेतु या अपनी अंतर्राष्ट्रीय स्थिति को मजबूत बनाने के लिए करते रहे हैं। अर्थात, संपन्न देश अपने सहायता-कार्यक्रमों के द्वारा विकासशील देशों का परोक्ष रूप से शोषण करते रहे हैं और उनके पिछड़ेपन का फायदा उठाते रहे हैं। स्वयं भारत को विगत २५ वर्षों में सहायक देशों—विशेषतः अमरीका व ब्रिटेन—के ऐसे हथकंडों और दबावों का कई बार सामना करना पड़ा है। १९५० के बाद से भारत को अमरीका से भारी आर्थिक सहायता मिली है, यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में सहायता में कुछ कटौती हुई है। यह कटौती प्रत्यक्षतः भारत-पाकिस्तान संबंधों तथा भारत की आर्थिक
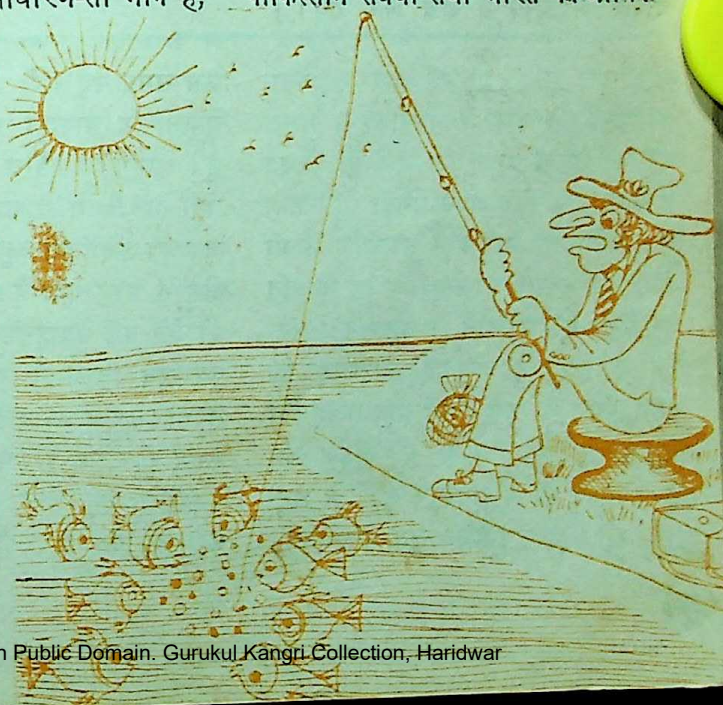
नीति को लेकर भारत-अमरीकी मतभेदों के कारण हुई है। अमरीका का निरंतर यह आग्रह रहा है कि भारत अपने औद्योगिक विकास-कार्यक्रमों में कटौती करे तथा अपनी कृषि-व्यवस्था के विकास को प्राथमिकता दे। अमरीकी कांग्रेस (संसद) भारत की समाजवादी अर्थ-व्यवस्था की विरोधी रही है। अमरीका में भारत के प्रथम परमाणु-परीक्षण की भी बड़ी कड़ी

लगभग ५-६ साल पहले एक अन्य राष्ट्रमंडलीय देश-तंजानिया में भी अंग्रेजों ने ऐसी ही हरकतें की थीं। ब्रिटिश सरकार ने वहां आपसी मतभेदों के कारण न केवल अपनी ओर से सहायता बंद कर दी बल्कि कुछ समय के लिए विश्व बैंक द्वारा तंजानिया को दी जाने वाली सहायता भी रुकवा दी। इसके फलस्वरूप ब्रिटेन-तंजानिया संबंधों में जो दरार

विदेशी आर्थिक सहायता
(१९५१—७३)

कुल	अधिकृत	सहायता	(१९५१--७०)—	१,३७,१३ करोड़ रु.
,,	प्रयुक्त	,,	(,,)	–१,१९,९५ ,, ,,
,,	,,	,,	(१९७१--७२)	--७,४२.२ ,, ,,
,,	,,	,,	(१९७२--७३)	--७,४२.० ,, ,,

(१९७१--७२ तथा १९७२--७३ में प्रतिवर्ष ४,४६ करोड़ रु. अर्थात ५५ प्रतिशत वापसी अदायगी में खर्च किये गये।)

आलोचना हुई है। कई बार सहायता-कार्यक्रमों की आड़ में अमरीका ने भारत पर यह दबाव डाला कि जैसे भी हो वह पाकिस्तान के साथ अपने झगड़ों को निबटा ले। ब्रिटेन इस मामले में अमरीका से भी आगे बढ़ गया। दरअसल भारत के प्रति अमरीका को भड़काने में बहुत कुछ अंगरेजों का ही हाथ था। यही कारण था कि चीनी हमले के कुछ दिनों बाद तत्कालीन ब्रिटिश राष्ट्रमंडल मंत्री श्री सैंड्ज जब भारत आये तो (जानकार सूत्रों के अनुसार) श्री नेहरू उन पर वस्तुतः बरस पड़े।

उस समय पड़ गयी उसे आज तक अनेक प्रयत्नों के बावजूद भरा नहीं जा सका है। राष्ट्रमंडल सदस्य होते हुए तथा अनेक वर्षों तक ब्रिटेन से सहायता पाने के बावजूद अब तंजानिया बहुत कुछ चीनी प्रभाव-क्षेत्र में चला गया है। अन्य देशों के बीच भी ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं। दो वर्ष पूर्व जब चिली में राष्ट्रपति आयंदे की सरकार ने समाजवाद तथा व्यापक राष्ट्रीयकरण की नीति पर चलना शुरू किया तो अमरीका ने चिली को दी जानेवाली सहायता बंद कर दी। इसके अतिरिक्त

विश्वस्त सूत्रों के अनुसार अमरीकी विदेश विभाग ने लगभग १ करोड़ डॉलर की बड़ी रकम आयंदे सरकार का तख्ता उलटने के षड्यंत्रों पर खर्च की। इसी प्रकार १९६१ में जब पश्चिम अफ्रीकी राष्ट्र गिनी ने अपने आंतरिक मामलों में रूसी हस्तक्षेप का विरोध किया तो सोवियत सरकार ने उसे अपनी आर्थिक सहायता बंद कर दी। लगभग २५ साल पहले रूस ने पड़ोसी देश युगोस्लाविया के साथ भी इसी प्रकार का व्यवहार किया था।

सहायता के पीछे दबाव

विकासशील देशों को सहायता देनेवालों में बड़े एवं समृद्ध राष्ट्रों के अतिरिक्त विश्व बैंक का भी जो राष्ट्रसंघ की एक विशिष्ट संस्था है, प्रमुख स्थान है। परंतु कई पाश्चात्य पर्यवेक्षकों के अनुसार विश्व बैंक के सहायता-कार्यक्रमों के पीछे भी प्रायः दबाव होता है। प्रसिद्ध अंगरेज पत्रकार एवं लेखिका टेरेसा हेयटर ने अपनी पुस्तक 'आर्थिक सहायता या साम्राज्यवाद' में कहा है कि प्रायः तानाशाह अथवा फौजी शासक विश्व बैंक की सहायता के चहेते पात्र रहे हैं, जबकि ऐसे शासक सहायता-राशि को विकास-कार्यों के बजाय अपनी निजी स्थिति को मजबूत बनाने में खर्च कर देते हैं। दरअसल विश्व बैंक की पूंजी का अधिकांश भाग अमरीका से प्राप्त होता है तथा आज तक इसका अध्यक्ष कोई अमरीकी ही रहा है। ऐसी स्थिति में विश्व बैंक का झुकाव अमरीकी अर्थ-व्यवस्था एवं हितों की ओर होना आश्चर्य की बात नहीं है।

इसी संदर्भ में स्वयं भारत का एक अनुभव उल्लेखनीय है। १९६४-६५ में अमरीकी सरकार चाहती थी कि भारत रुपये का अवमूल्यन कर दे। दिसंबर, १९६५ में तत्कालीन विश्व बैंक अध्यक्ष जार्ज वुड्स ने भी भारत पर दबाव डालना चाहा, जिसके फलस्वरूप तत्कालीन वित्त-मंत्री कृष्णमाचारी से उनके संबंध बिगड़ गये।

विकासशील देशों की सहायता से संबद्ध एक और समस्या भी है—पुराने कर्जों की अदायगी। लगभग २५ वर्ष पहले जब विकासशील देशों को सहायता दिये जाने का सिलसिला शुरू हुआ तो प्रायः इन देशों ने सोचा था कि १०-१५ साल में इनकी आर्थिक स्थिति इतनी सुदृढ़ हो जाएगी कि ये अपने कर्जों को ब्याज-सहित सुविधा-पूर्वक उतार देंगे, परंतु यह सपना आज तक पूरा नहीं हो सका। अतः आज जो नयी सहायता इन देशों को मिलती है उसका ५० से ८० प्रतिशत तक पुराना उधार चुकाने में निकल जाता है। उदाहरणतः राष्ट्रसंघ की एक रिपोर्ट के अनुसार गत सात वर्षों में अनेक विकासशील देश (विशेषतः अर्जेंटीना, ब्राजील, जांबिया तथा मलयेशिया) उलटे समृद्ध देशों की 'सहायता' कर रहे हैं, क्योंकि १९६७ से

देश जिनसे सहायता मिली

(१९५१–७०) (करोड़ रु. में)

देश	अधिकृत सहायता	प्रयुक्त सहायता
अमरीका	७१,८४	६७,८५
विश्व बैंक तथा अंतर्राष्ट्रीय विकास प्राधिकरण	१७,६४	१४,७८
पश्चिमी जरमनी	१०,०४	१०,०७
ब्रिटेन	८,४९	१,१५
सोवियत संघ	१०,३१	६,७०
कनाडा	६,४८	५,३२
जापान	३,७२	३,२८

ये देश सहायताकारी देशों से मिलनेवाली मौजूदा सहायता-राशि से कहीं अधिक धन पुराने कर्जों की अदायगी पर व्यय करते रहे हैं। भारत पर भी यह बात लागू होती है। १९७१ में भारत को सोवियत रूस से ४२ करोड़ डालर की सहायता मिली, परंतु इसी वर्ष पुराने कर्जों की अदायगी में भारत ने रूस को ५२ करोड़ डालर की रकम लौटायी। जहां कहीं सहायता - राशि का कुछ अंश विकासशील देशों के लाभार्थ बच जाता है वहां भी मुद्रा-स्फीति तथा बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण आर्थिक सहायता का लाभ वस्तुतः नगण्य हो गया है। यही कारण है कि लगातार सहायता पाते रहने के बावजूद अधिकतर विकासशील देश आर्थिक दृष्टि से और पिछड़ते जा रहे हैं।

इन परिस्थितियों में यह जरूरी हो गया है कि समृद्ध देश तथा विश्व बैंक-जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं अपनी सहायता-नीतियों पर पुनर्विचार करें तथा उनमें आवश्यक फेरबदल करें। विकासशील देशों को बड़े पैमाने पर ब्याज-रहित दीर्घकालिक ऋण पुराने कर्जों की अदायगी हेतु दिये जाएं। पिछले कुछ वर्षों से विश्व-बैंक से संबद्ध संस्था—अंतर्राष्ट्रीय विकास-संघ—इस काम को कुछ हद तक अंजाम दे रही है। लेकिन इस संस्था को अपने

सहायता-कोष की पूर्ति-हेतु हर तीसरे साल समृद्ध देशों का मुंह देखना पड़ता है। इस सिलसिले में काफी दिक्कतें सामने आ रही हैं, क्योंकि इस संस्था के प्रति अमरीका का रवैया दिनोंदिन कठोर होता जा रहा है। रूस इस संस्था का सदस्य ही नहीं है। पिछले २–३ वर्षों में इस संस्था को अपने कोष की पूर्ति के लिए पुर्तगाल, दक्षिण अफ्रीका-जैसे उप-निवेशवादी, रंग-भेद समर्थक देशों से मदद लेनी पड़ी है। विकासशील देश प्रायः इन तीन देशों की नीतियों के कटु आलोचक और विरोधी रहे हैं।

नीति-परिवर्तन जरूरी

इस सारी स्थिति का व्यावहारिक हल यह है कि सभी विकसित देश उचित दामों और शर्तों पर विकासशील देशों से अधिका-धिक वस्तुओं का आयात करें और इस प्रकार विकासशील देशों को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर एवं सक्षम बनाने में सहायक हों। 'अंकटाड' का भी यही आग्रह रहा है, परंतु बड़े राष्ट्रों ने इसकी अवहेलना की है। पश्चिमी यूरोप के ९ विकसित देश, जिनमें ब्रिटेन, फ्रांस, पश्चिम जरमनी, इटली आदि शामिल हैं, यूरो-पीय साझा मंडी के सदस्य हैं। ये देश दूसरे देशों के, जिनमें विकासशील देश शामिल हैं, माल पर भारी तटकर लगाते हैं, जिससे दूसरे देश यूरोपीय देशों को बहुत कम माल निर्यात कर पाते हैं। हाल में विकसित देशों ने सिंथेटिक वस्तुओं के (जैसे नायलॉन, प्लास्टिक, ग्लास फाइबर इत्यादि) अधिकाधिक उत्पादन द्वारा विकासशील देशों के कच्चे माल के व्यापार को काफी क्षति पहुंचायी है।

विकासशील देश समृद्ध राष्ट्रों की मनमानी के आगे बहुत कुछ लाचार हैं। उनके सामने आज दो ही विकल्प हैं। एक तो यह कि वे चुपचाप जितनी भी सहायता मिले उसे कबूल करते रहें। परंतु यह बात विकासशील देशों के आर्थिक हित तथा स्वाभिमान के प्रतिकूल है। दूसरा तथा अपेक्षाकृत अधिक व्यावहारिक और सम्मानजनक मार्ग यह है कि सभी विकासशील देश व्यक्तिगत तथा सामू-हिक दोनों तरीकों से अपने आंतरिक साधनों को पूरी तरह जुटाकर अधि-काधिक आत्मनिर्भर बनने का प्रयत्न करें तथा विकसित देशों द्वारा मांगे जाने-वाले कच्चे माल के निर्यात पर कड़ी शर्तें और प्रतिबंध लगा दें। धीरज से काम लेने पर इस प्रकार की नीति की सफलता अवश्यंभावी है। पिछले एक-डेढ़ वर्ष में तेल-उत्पादक अफ्रीकी-एशियाई देशों की नीतियां इस बात की पुष्टि करती हैं।

विगत २५ वर्षों में दुनिया के गरीब और विकासशील देश सदियों पुराने उपनिवेशवाद और शोषण के विरुद्ध राजनीतिक संघर्ष में विजयी हुए हैं। अतः यदि वे मैदान में डटे रहे तो आर्थिक संघर्ष में भी जीत उन्हीं की होगी।

—ई २/१ माडल टाउन, दिल्ली

साहब नवाब का एक दिन

● डॉ. कैलाश नारद

सुबह होती, कलकत्ता की कुहरीली, ओसभीगी, धुंधली सुबह और फिर आहिस्ता से सीमेंट-कोठी का बड़ा-सा फाटक खुलता। कोठी के बरामदे में निस्तब्ध चुप-चुप चलते हुए चोबदार, कहार, चपरासी, हुक्काबरदार, खानसामा, जमादार, अर्दली, हज्जाम वगैरा आकर, सिर झुकाये, हाथ बांधकर खड़े हो जाते।

आठ बजते न बजते साहब का हेड-बेयरा बड़े हाल के रास्ते खास कमरे में घुसता, जहां महोगनी के प्रशस्त पलंग पर साहब अधनंगे, अर्धनिमीलित नेत्रों से चारों तरफ देखते हुए पड़े रहते। बगल में तेजी से कपड़े पहनती खड़ी होती वह खूबसूरत कमउम्र औरत जो साहब की अंकशायिनी बनने के लिए रात को चोर-दरवाजे के रास्ते लायी गयी होती।

फिर साहब पशमीने के गद्दे से नीचे उतरते। नौकरों की टोली बारी-बारी से आकर उनके सामने कोर्निश बजाती और तब शुरू होती साहब की सुबह।

ईस्ट इंडिया कंपनी के वे अदने-से ब्रितानी क्लर्क, जो बाद में भारतीय भाषाओं में बाबू के नाम अभिहित हुए, देशी प्रजा के लिए नवाब से कम नहीं थे।

ये वे दिन थे जब भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन की शुरुआत हो रही थी। कंपनी ने वरिष्ठता-क्रम से अपने दफ्तरों में चार पद कायम किये थे, सीनियर मर्चेंट, जूनियर मर्चेंट, फैक्टर और राइटर। राइटर यानी किरानी या बाबू के लिए किसी विशेष योग्यता की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। अच्छी हस्तलिपि, गणित का मामूली ज्ञान और रजिस्टर भरने की लियाकत, यही बाबू की भरती के लिए पर्याप्त थे। ये बाबू कंपनी के माल का स्टाक रखते, हिसाब लिखते, विलायत से आने-जानेवाले जहाज पर अपनी देख-रेख में माल उतरवाते-चढ़वाते और दूर-दराज बिखरी कंपनी की कोठियों से खतो-किताबत करते। उसके एवज में उन्हें मिलते हर महीने तैंतीस रुपये जो आज के हजार रुपये प्रतिमास से किसी भी तरह कम नहीं थे।

और उस जमाने में चीजें ही कहां ज्यादा महंगी थीं! जेम्स आगस्टस हिकी के 'हिकी गजट' ने २८ फरवरी, १८७४ के अपने अंक में कलकत्ता का जो बाजार-

भाव प्रकाशित किया था, वह अब भले ही स्वप्न-जैसा प्रतीत हो, किंतु उस युग के व्यापार-वाणिज्य की स्थिति का वह एक निर्बाध दर्पण है।

रुपये में एक मन चावल

'हिकी गजट' के अनुसार एक रुपये में मिलता था एक मन चावल या तीस सेर आटा, दो सेर मक्खन, सवा दो सेर घी, छह सेर शक्कर, चौदह सेर दूध, एक तंदुरुस्त बकरा और दस मुर्गियां। एक दर्जन अंडों के लिए पांच आने देने पड़ते थे और एक मन जलाऊ लकड़ी तीन आने में मिल जाती थी।

कंपनी के ये अदने-से अहलकार, ऊपरी आमदनी को अपनी बपौती समझते थे। वे देशी व्यापारियों से खुलेआम घूस लेते, रिश्वत देने से उन्हें जो इनकार करता, उसके साथ वे मार-पीट करते और फिर जबरन उसका सामान छीन लेते। उनके खर्चे भी तो काफी बढ़े-चढ़े थे। नौकरों के खाने पीने और रख-रखाव का खर्च, गाड़ी-घोड़े का खर्च, साजपोशाक का खर्च, मेमों से इश्कबाजी और शराब का खर्च और मकान का किराया—आखिर वे तनख्वाह में से कहां तक निकालते! फिर जिन, ब्रांडी, पोर्ट, बियर और स्कॉच का खर्च अलग था।

'कलकत्ता गजट' ने अपने ३१ मार्च १८७५ के अंक में इन साहबों के टहलकारों की एक फेहरिश्त प्रकाशित की थी। उससे पता लगता है कि हिंदुस्तान की धरती पर पैर रखते ही ब्रिटेन की महत्त्वाकांक्षी युवा पीढ़ी किस तरह नवाब हो जाती थी। आम तौर पर कंपनी के एक क्लर्क के यहां खिदमत करने के लिए खानसामा, चोबदार, हेड-कुक, कुक, कोचवान, बेयरा, चपरासी, जमादार, खिदमतगार, धोबी,

कलकत्ता का एक साहब परिवार

साईस, घसियारा, मशालची, हज्जाम, मेमसाहब के लिए हेयर-ड्रेसर, हुक्का-बरदार, मेहतरानी, बच्चे को दूध पिलाने के लिए नर्स और आया की नियुक्तियां की जाती थीं। साथ में इन बाबुओं के और भी खर्चे थे, जैसे पार्टी, बालडांस, क्लब, घुड़दौड़ और अय्याशी।

क्लाइव ने ब्रिटिश संसद में इन किरानियों की तनख्वाह बढ़ाने की जो सिफारिशें की थीं, उससे बाध्य होकर कंपनी को उनका वेतन चार सौ पौंड सालाना तक कर देना पड़ा। लेकिन तब तक शराब की कीमतें भी बढ़ गयी थीं और चार सौ पौंड प्रतिवर्ष में भी उन बेचारों के खर्च पूरे नहीं हो पाते थे।

अपनी नौकरी की शुरूआत में इन किरानियों को कलकत्ता के फोर्ट विलियम कॉलेज में आकर ट्रेनिंग लेनी पड़ती थी। यह कॉलेज जिस भवन में था उसका नाम किरानियों की वजह से 'राइटर्स बिल्डिग' पड़ गया था। आज भी वह भवन स्वतंत्र भारत के 'राइटर्स' यानी किरानियों का मुख्यालय है। पश्चिम बंगाल का सचिवालय आज इसी इमारत में है।

लेकिन १८८६ में, प्रशिक्षण के लिए कलकत्ता आये किरानियों की उच्छृंखलता के कारण 'राइटर्स बिल्डिग' में उनका रहना प्रतिबंधित कर दिया गया। उन्मुक्त आचरण के ये अहंकारी गोरे दिनदहाड़े कॉलेज में औरतें लाते और शराब पीकर बेकाबू हो जाते। लिहाजा उन्हें वहां से हटाना पड़ा। फिर पूरा कलकत्ता ही उनके दुराचरण की रंगस्थली बन गया।

साहबनबाब की दिनचर्या

ये साहब नवाब सोकर उठने के बाद, आठ बजे अपने बिछौने से नीचे उतर, रात की पोशाक उतार डालते। बदन पर तब उनके सिर्फ एक जांघियानुमा अधोवस्त्र रह जाता। फिर बेयरा आता जो उन्हें कमीज पहनाता, घुटनों में बिरजिस चढ़ाता, मोजा पहनाता और फिर चप्पलों में साहब के पैर डालता। बेयरे के बाद हज्जाम की बारी आती जो साहब की दाढ़ी बनाता, नाखून काटता और कान का मैल निकालता। फिर एक नौकर पानी का जग और तसला ले आता और साहब हाथ-मुंह धोते। हेड बेयरा फिर उनके सामने तौलिया पेश करता।

तब आते साहब डाइनिंग-रूम में। डाइनिंग-टेबल पर प्रचुर तादाद में नाश्ता सजा रहता। वहां पहले से मौजूद रहते हेयर-ड्रेसर, जो साहब के कुरसी पर बैठते ही पीछे से अपना काम शुरू कर देते। बेयरा तब तक प्याले में चाय उड़ेलता रहता। फिर नाश्ता खत्म होता और हुक्काबरदार हुक्के की निगाली साहब-बहादुर के हाथ में थमा देता।

सालिसिटर और नकलनवीस इस बीच कमरे में आ जाते। चूंकि साहब अपने अनाप-शनाप खर्चों की पूर्ति के लिए निजी व्यापार भी करते थे, लिहाजा कानूनी दांव-पेच जानने और पेचीदगियों से बचने के

कलकत्ता वंदरगाह—सन १८८६ (दीप्ति नारद के सौजन्य से)

लिए सालिसिटर की जरूरत पड़ती थी। नकलनवीस साहब के दफ्तरी काम की मूल प्रतिलिपियां तैयार करता।

फिर शुरू होता साहब का दिन। नोट लिखाये जाने के बाद साहब का वड़ा बेयरा आता जो उन्हें कपड़े पहनाता। फिर पालकी आती, जिस पर साहब बैठते। साथ में बारह कहारों के अलावा चलते लठैत प्यादे, चोबदार, हरकारा, चपरासी और हुक्काबरदार। अगर दोपहर के खाने का निमंत्रण कहीं होता तो भोजन शुरू होते ही हुक्के की निगाली हुक्काबरदार के द्वारा साहब के हाथ में पकड़ा दी जाती। जब खाना खत्म होता तो उसी ताम-झाम के साथ साहब लौट आते। फिर वे 'दोपहर' की नींद लेते।

नींद टूटने पर हुक्कावरदार फिर हाजिर होता। उसके बाद साहव चाय पीते। रात गहरी होती तो साहब क्लब जाते या बार या सोसाइटी या पार्टी। वे वहां अभिजात महिलाओं के साथ नाचते, रंगरेलिया मनाते और नशे में चूर ग्यारह बजते न बजते घर लौटते। रात का इंतजाम पहले से ही तय होता था। घर की मेम-साहब अगर हुई तो ठीक, अन्यथा चोर-दरवाजे से किसी नाजनीन को शयन-कक्ष में पहुंचाया जाता।

रक्त, आंसू और कसैली यादों के चंद बदनुमा धब्बे—शेष कुछ भी नहीं है। धुएं की लकीर की मानिंद मिटती ईस्ट इंडिया कंपनी के इन बाबुओं की स्मृतियां भर बाकी बची हैं, जिन्हें समय अब तक बुहार नहीं पाया।

—हुकुमचंद नारद मार्ग, जबलपुर (म. प्र.)

कवि का जीवन एक पिपासा

मेरे सौ-सौ गान बहुत कम कर तुमको साकार सकें जो
सांसों के गहरे बंधन को ढोने का जीवन अभ्यासी
अपने ही तन में हो जाता जाने कैसे मन वनवासी
एक घड़ी का प्यार मिले तो व्यर्थ कई जन्मों के फेरे
मेरे सौ-सौ गान बहुत कम, पा कुछ भी मनुहार सकें जो
कवि का जीवन एक पिपासा गीत अधूरे अधर पराये
दुख में छोड़ चले जाने को आंखों के मोती उकताये
मरु के राही को रेती की एक बूंद गंगा-सागर है
मेरे सौ अरमान बहुत कम, पा फल का अधिकार सकें जो
आओ हम समझौता कर लें, तुम जीतो मैं हार न पाऊं
तुम अपना पथ ज्योतित कर लो लेकिन मैं अंगार न पाऊं
मधुऋतु में जाने-अनजाने अपने हो जाते बेगाने
मेरे सौ बलिदान बहुत कम पा पतझर में प्यार सकें जो
जिसके भय से डरकर भागे बड़े-बड़े साधक-संन्यासी
उस दुविधा के ही त्रिशूल पर मेरे मन की नगरी काशी
वह तो पौरुष का अभिमानी, दोनों तट से छूट गया जो
मेरे सौ जलयान बहुत कम, पा ऐसी मंझधार सकें जो
जो अपने से आप डरेगा उसका कौन सहारा होगा
जो अपने को भूल गया हो उसका क्या ध्रुवतारा होगा
जो रंगों से धुल जाता हो एसी छवि का कौन चितेरा
मेरे जप-तप-ध्यान बहुत कम कर इनका उद्धार सकें जो
वह दिन भी आएगा संगिनि मैं न रहूंगा तुम न रहोगी
मेरे अनगिन अपराधों को, मैं न सुनूंगा, तुम न कहोगी
चुप सहने की आदत मेरी कहीं तुम्हें गुमराह न कर दे
प्रभु का यह एहसान नहीं कम, मेरे मौन पुकार सकें जो

—डॉ० श्यामनन्दन किशोर
विश्वविद्यालय-आचार्य, मुजफ्फरपुर-२

अकाट्य सबूत : अंगुल मुद्रा

● ब्रजभूषण दुबे

विज्ञान के इस युग में अपराधस्थल पर प्राप्त एक दांत, केश अथवा अन्य किसी चीज से भी अपराधी या अपराध के शिकार व्यक्ति की पहचान कर ली जाती है। कब्रिस्तान से प्राप्त खोपड़ी के आधार पर मृतक की शिनाख्त हो जाती है। शरीर की एक हड्डी से मृतक की आयु, स्वास्थ्य आदि के संबंध में उपयोगी जानकारी मिल जाती है। यहां तक की सिगरेट के ऊपर लगे थूक से भी अपराधी को पहचाना जाने लगा है। हस्त-लिपि, चाल तथा फोटो के आधार पर तो पहचान की ही जाती है, अंगुल-मुद्रा (फिंगर-प्रिंट्स) प्रणाली भी अकाट्य प्रमाण के रूप में सफलता के ७५ वर्ष पूरे कर चुकी है। इससे अंगुल-मुद्रा-कार्यालयों की उपयोगिता सिद्ध होने के साथ ही अंगुल-मुद्रा विशेषज्ञों का भी महत्त्व प्रकट होता है।

वैज्ञानिक विधि से अपराध-अनुसंधान की समस्त विधाओं में अंगुल-मुद्रा की श्रेष्ठता असंदिग्ध है। इस विषय पर सर्व-प्रथम हुगली के कलेक्टर सर विलियम हर्शेल ने १८५८ से ८० के बीच ध्यान दिया। चर्च ऑव स्काटलैंड के डॉ. हेनरी फाल्डस ने १८८० में प्रकाशित एक रिपोर्ट में मुद्रण-स्याही (प्रिंट्स-इंक) से अंगुल-मुद्रा को अंकित करने का सुझाव दिया तथा अपराधी द्वारा अनजाने में अपराध-स्थल पर छोड़ी गयी अंगुल-मुद्रा के आधार पर उसे खोज निकालने का सुझाव रखा।

अंगुल-मुद्रा कार्यालयों में संग्रहीत अंगुल-मुद्राएं

१८९० में सर फ्रांसिस-गाल्टन ने प्रयोग करके सर्वप्रथम सिद्ध किया कि 'रेखाएं (रिजेज) जीवन भर अपरिवर्तित रहती हैं तथा अलग-अलग अंगुलियों की भिन्न-भिन्न होती हैं।' अंगुल-मुद्रा के आधार पर अपराधियों की पहचान भारत में सर्वप्रथम १८९३ में कलकत्ता में प्रारंभ हुई। बंगाल के आई. जी. पी. सर एडवर्ड रिचर्ड हेनरी ने दोनों हाथों की दस अंगुल-मुद्राओं के वर्गीकरण का सूत्र १८९६ में अजीजुल हक की सहायता से निकाला। भारत सरकार द्वारा नियुक्त समिति की रिपोर्ट के अनुसार शारीरिक अंगों के माप की विधि के स्थान पर अंगुल-मुद्रा को अपराधियों की पहचान के रूप में १८५७ में मान्यता मिली। सर हेनरी के विशेष प्रयासों से विश्व का प्रथम अंगुल-मुद्रा कार्यालय १८९७ में कलकत्ता में स्थापित हुआ। १८९९ में अंगुल-मुद्रा विशेषज्ञ की साक्षी को न्यायालय से मान्यता मिली। इंगलैंड की विश्व-विख्यात स्काटलैंड यार्ड पुलिस ने १९०१ में पहचान के इस नवीन तरीके को अपनाया और १९०५ में वहां अंगुल-मुद्रा कार्यालय खुला। उसके पश्चात अन्य देशों में भी अंगुल-मुद्रा कार्यालय स्थापित हुए।

सर हेनरी ने लंदन पहुंचकर भारत में विकसित अंगुल-मुद्रा ज्ञान को मेट्रोपोलिटन पुलिस कमिश्नर के रूप में पाश्चात्य देशों में प्रचारित किया और स्काटलैंड यार्ड फिंगर-प्रिंट्स ब्यूरो में अपना वर्गीकरण-सूत्र प्रचलित भी कर लिया। वही फिंगर-प्रिंट्स ब्यूरो के प्रथम सुपरिंटेंडेंट भी थे। उन्होंने आगे चलकर अपने अनुभव तथा अध्ययन के आधार पर 'क्लासिफिकेशन एंड यूजेज ऑव फिंगर-प्रिंट्स' नामक पुस्तक भी लिखी, किंतु उसमें अजीजुल हक के महत्वपूर्ण सहयोग के संबंध में दो शब्द भी नहीं लिखे।

सर हेनरी जब १९१२ में जार्ज पंचम के साथ कलकत्ता आये तो उन्होंने 'बंगाल यूनाइटेड सर्विस क्लब' में आयोजित भोज के अवसर पर उप-निरीक्षक अजीजुल हक को अपने अंगुल-मुद्रा वर्गीकरण-सूत्र का सूत्रधार घोषित किया और ५००० रुपये मानधन के रूप में भारत सरकार से उन्हें दिलवाये। पता नहीं अपने देश इंगलैंड में अपनी ख्याति के लिए हेनरी ने अपने भारतीय सहयोगी को भुला दिया अथवा गुलाम भारत के लोगों को महत्त्व न देने के तत्कालीन रवैये के कारण उन्हें अपनी लेखनी से महत्त्व प्रदान नहीं किया। आज दुनिया के अधिकांश अंगुल-मुद्रा कार्यालयों में अपराधियों की १० अंगुल-मुद्राओं के स्थायी संग्रह के लिए हेनरी का वर्गीकरण-सूत्र अपनाया जाता है।

अंगुलियों द्वारा स्पर्श की गयी वस्तुओं पर बननेवाली मुद्राएं स्वेद-रंध्रों से निकलने-वाले स्वेद तथा चिकनाई पर निर्भर होती हैं। अदृश्य-अंगुल-मुद्रा (लेटेंट फिंगर-प्रिंट) इसी का परिणाम है। हाथों तथा पैरों की प्राकृतिक रचना ही ऐसी है कि जिनसे हर समय स्वेद निकलता

अदृश्य नदी

तुम्हारी आंखों में उमड़ आयी इन दो नदियों ने
मुझे ऐसे डुबो लिया है जैसे गरमियों की तपती दोपहरी में
मेरे नगर की नदियां अपने संगम में मुझे डुबो लेती हैं

गंगा-जमुना ही नहीं, मेरे नगर में
लोग कहते हैं—एक तीसरी नदी भी है—सरस्वती
जो कभी दिखायी नहीं देती

जो कभी दिखायी नहीं देती वह व्यथा है
जो दिल-ब-दिल बहती है
और चेहरों पर जिसका कोई आभास नहीं मिलता

तुम्हारी इन डबडबायी आंखों की इसी तीसरी नदी ने मुझे डुबो लिया है
क्या तुम्हारी वह अदृश्य नदी मैं हूं ?
तो फिर इन आंखों को चुपचाप पोंछ डालो और मुझे पूर्ववत अदृश्य बहने दो !

—उपेन्द्रनाथ अश्क

रहता है और इस पर गरमी या सर्दी का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। व्यायाम, चिंता, भय तथा किसी भी प्रकार के मानसिक तनाव की स्थिति में स्वेद के परिणाम में वृद्धि सीधे स्नायविक नियंत्रण में होती है। यही कारण है कि कठोर से कठोर अपराधियों में भी अपराध करते समय अधिक मात्रा में स्वेद निकलता है।

अपराधी स्पर्श की गयी वस्तुओं पर स्वेद तथा चिकनाई के मिश्रण से बननेवाली अदृश्य-अंगुल-मुद्राएं अंकित कर जाता है और इस प्रकार अपराधी को पकड़ने के लिए उपयोगी सूत्र प्राप्त होते हैं।

१८९८ में जलपाईगुड़ी में एक चाय-बागान के मालिक की हत्या के सिलसिले में अपराधी को कैलेंडर पर प्राप्त दायें अंगूठे की रक्त-रंजित मुद्रा के आधार पर दुनिया में सर्वप्रथम किसी साक्षी या सबूत के अभाव में सजा दी गयी। १९०५ में इंगलैंड में फेरो दंपति की हत्या के अपराध में अंगूठे की मुद्रा के मूक साक्षी के आधार पर अल्फ्रेड तथा अलबर्ट नामक दो भाइयों को मृत्यु-दंड दिया गया। १९४८ में बर्कशायर की ९४ वर्षीया फ्रीमेन ली के हत्यारे के दायीं मध्यमा की आंशिक मुद्रा कार्ड-बोर्ड के चिकने टुकड़े

पर प्राप्त हो जाने से जार्ज रसेल को एक व्यक्ति की साक्षी के आधार पर फांसी की सजा हुई। भारत में अब तक हजारों अपराधों को अंगुल-मुद्रा की सहायता से निबटाया जा चुका है। २५ अगस्त, १९६८ को दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय से ऐतिहासिक महत्व के लगभग १ लाख ७५ हजार मूल्य के गुप्त एवं मुगलकाल के आभूषणों तथा सोने के सिक्कों की सनसनीखेज चोरी हुई थी, जिसके चोर यादगिरी को दायें हाथ की अनामिका, मध्यमा एवं तर्जनी की कांच के टुकड़ों पर प्राप्त सामान्य मुद्राओं के आधार पर चोरी के ७० दिन बाद सिकंदराबाद के पिकेट ग्राम से पकड़ा जा सका। ३ फरवरी १९७१ को बंबई के धोबी तालाब अंचल के मशहूर 'जहांगीर-मैंशन' के एक फ्लैट में चार व्यक्तियों की हत्या कर दी गयी थी। अन्य किसी सूत्र के प्राप्त न होने से अपराध-स्थल पर छोड़ी गयी अंगुल-मुद्राओं के आधार पर हत्यारे फिरोज आर. दारूवाला को गिरफ्तार कर पुलिस ने वैज्ञानिक-विधि से अपराध अनुसंधान का नया कीर्तिमान स्थापित किया।

अंगुल-मुद्रा सुनिश्चित तथा अपरिवर्तनशील साक्षी के रूप में विगत ७५ वर्षों से भारत तथा विश्व के न्यायालयों में अपना स्थान बना चुकी है। इसके द्वारा धोखाधड़ी की घटनाओं को भी नियंत्रित किया जा सकता है। व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात छल करके चतुर लोग दूसरे की जीवन भर की संचित निधि अथवा जीवन-बीमा की राशि को हथियाने की चेष्टा करते हैं। ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए यदि मनोनीत व्यक्ति के बायें अंगूठे की मुद्रा पहले ही ले ली जाए तो भविष्य में गलत भुगतान होने की मूल से बचा जा सकता है।

भविष्य में रेलगाड़ियों की दुर्घटनाओं में मरनेवाले यात्रियों को ५० हजार रुपये प्रति यात्री देने का निश्चय हुआ है, जहां की पक्की पहचान के लिए अंगुल-मुद्रा विशेषज्ञ पर्याप्त सहायक सिद्ध होंगे।

आजकल देश में प्रसूतिका-गृहों से जन्म-तिथि प्रमाण पत्र देने की प्रथा चल रही है। यदि इन प्रमाण-पत्रों पर जन्मे बालक, बालिका के बायें अंगूठे की मुद्रा अंकित करने का सुझाव मान लिया जाए तो उसकी सहायता से बच्चों के खो जाने और वर्षों बाद पुनः मिलने पर पक्की पहचान संभव हो सकेगी।

अंगुल-मुद्रा का अंकन उच्चतर माध्यमिक स्नातक एवं स्नातकोत्तर प्रमाण-पत्रों पर भी किया जा सकता है। सरकारी तथा गैर सरकारी कार्यालयों एवं कारखानों में कार्यरत लोगों को जो पहचान पत्रक दिये जाते हैं, उन पर संबंधित व्यक्ति के बायें अंगूठे की मुद्रा अंकित होने लगे तो वह किसी भी अवस्था में उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

—सेंट्रल फिंगर प्रिंट ब्यूरो,
३०, गोराचंद रोड, कलकत्ता-१४

पुरस्कार और भ्रष्टाचार

लीजिए, पुरस्कार जीतने का सही रास्ता आखिर मिल ही गया; वह भी सर्वोच्च पुरस्कार यानी 'नोबल पुरस्कार' से शुरू हुआ। पुरस्कारों का संबंध वैयक्तिक प्रतिष्ठा से अधिक है।

शांति के लिए इस वर्ष का नोबल पुरस्कार जिन दो व्यक्तियों को मिला है, वे हैं—आयरलैंड के सत्तर वर्षीय भूतपूर्व विदेश मंत्री सीन मेकब्रिज और जापान के ७३ वर्षीय भूतपूर्व प्रधान मंत्री इसाकू सातो। दोनों को शांति का पुरस्कार देकर अल्फ्रेड नोबल की आत्मा को जो आघात पहुंचा होगा, उसका सही अंदाजा आसानी से लगाया जा सकता है। दोनों ने न शांति के लिए कभी कोई काम किया और न कोई महत्त्वपूर्ण रचना की। सातो के संबंध में तो अत्यंत दिलचस्प बातें सामने आयी हैं। उन्हें पुरस्कार दिलाने के लिए जापान के व्यापारियों ने लगातार चौदह महीने स्वीडन में रहकर अंधाधुंध रुपये खर्च

किये और प्रचार किया। अंत में जब नार्वे की पुरस्कार समिति के सदस्यों ने पूछा, 'आखिर सातो को पुरस्कार किस बिना पर दिया जाए ?' तो उनके प्रधान मंत्रित्व-काल में अधिकारियों द्वारा उनके लिखे गये भाषणों को संकलित कर प्रकाशित करा दिया गया। समिति के सदस्यों को आधार मिल गया और सातो को शांति

सीन मेकब्रिज (आयरलैंड) इसाकू सातो (जापान)

का पुरस्कार दे दिया गया । इसी तरह आयरलैंड के भूतपूर्व विदेश मंत्री मेकब्रिज का हाल है, वह हमेशा अशांति के पथ-प्रदर्शक रहे हैं । सातो का निजी जीवन भी 'उत्साहवर्द्धक' रहा है– एक बार उनकी पत्नी ने खुले रूप से उन पर लांछन लगाया था कि वे अपनी पत्नी को पीटते हैं और गेशिया लड़कियों के साथ शामें बिताते हैं।

दोनों महापुरुषों ने नोबल पुरस्कार प्राप्त कर सारी दुनिया के सामने नये आयाम खोल दिये हैं और उच्चतम पुरस्कार समिति के सदस्यों में व्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश किया है । स्मरणीय है कि महात्मा गांधी को इस पुरस्कार के योग्य नहीं समझा गया था।

इस समाचार को हम विशेष रूप से यहां प्रकाशित कर रहे हैं, क्योंकि इसके बाद साहित्य अकादमी और अन्य राज्य-सरकारों तथा संस्थाओं के लिए एक नया राजमार्ग प्रशस्त हो गया है । साहित्य अकादमी की भ्रष्ट नीतियों का परिचय अनेक बार दिया जा चुका है । पता चला है कि इस वर्ष भी पुरस्कारों को लेकर दो अधिकारियों और तीन वयोवृद्ध निर्णायक प्रतिष्ठित साहित्यकारों के बीच समझौते हो रहे हैं। वैसे कहा जा रहा है कि तीनों निर्णायक साहित्यकार (इनमें एक स्थायी सदस्य डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी हैं) निष्पक्ष हैं और किसी तरह के प्रभाव क्षेत्र से बाहर हैं । हम उनकी निष्पक्षता की प्रतीक्षा में हैं ।

अहिंदी भाषी साहित्यकारों को पुरस्कार

पुरस्कारों का दूसरा खिलवाड़ केंद्रीय हिंदी निदेशालय (शिक्षा मंत्रालय) अहिंदी भाषी साहित्यकारों के नाम पर करता है । इस तरह के पुरस्कारों का प्रयोजन वास्तविक अहिंदी भाषी लेखकों को हिंदी-लेखन के प्रति प्रोत्साहित करना है । अहिंदी भाषी लेखक होने का अर्थ अहिंदी भाषी क्षेत्र में पैदा होना अथवा वैसा उपनाम होना नहीं है ।

यह पुरस्कार हिंदी के विख्यात लेखक मोहन राकेश को मिला था । जब उनके नाम की घोषणा इस पुरस्कार के लिए की गयी तो उन्होंने ठहाके के साथ मजाक किया था, "यार, अफसरों की बेवकूफी कुछ शामों तक तो हमें याद रहेगी ।" वे स्वयं पुरस्कार लेने नहीं गये थे । रजनी पनिकर (दिल्ली निवासी) और डॉ. महीप सिह (कानपुर निवासी) को भी यह पुरस्कार मिला है। दोनों हिंदी के जाने-माने लेखक हैं और हिंदी उनकी मातृभाषा है । निश्चय ही इन दोनों को भी पुरस्कार लेते समय असुविधा हुई होगी।

पुरस्कारदाताओं को, लेकिन, अब इस पर विचार नहीं करना चाहिए, क्योंकि भ्रष्टाचार एक अंतर्राष्ट्रीय विचार पर प्रतिष्ठा पा गया है।

—अश्वमेध

जीवन उत्पत्ति एवं विकास

● डा० राजेन्द्र कुमार गोयल
● इन्दुप्रकाश वाजपेयी

आज के प्राय: सभी भू-वैज्ञानिक एकमत हैं कि पृथ्वी का प्रादुर्भाव लगभग ३ या ४ अरब वर्ष पूर्व हुआ होगा, परंतु निश्चित रूप से अभी यह नहीं कहा जा सकता कि पृथ्वी की उत्पत्ति किस प्रकार हुई। इस संबंध में अनेक सिद्धांत प्रस्तुत किये गये हैं, परंतु उनमें से कोई भी पूर्णतः निर्दोष नहीं है। हां, इस बात में सभी एकमत हैं कि लगभग ४ अरब वर्ष पूर्व अस्तित्व में आनेवाली पृथ्वी का रूप उसके वर्तमान रूप से बहुत भिन्न था। तब यह भी संभवतः शनि के समान ब्रह्मांडीय गैसों के विस्तृत वायुमंडल से आवेष्टित एक ग्रह रही होगी। यह आदिकालीन उष्ण वायुमंडल क्रमशः छीजता गया और हमारे वर्तमान वायु एवं जलमंडल पूर्णरूपेण पृथ्वी से ही उपजे। इस प्रकार शीतल होती हुई पृथ्वी पर करोड़ों वर्षों के बाद वास्तविक महाद्वीप और महासागर अस्तित्व में आये।

अस्तित्व का वह विशिष्ट रूप जिसे 'जीवन' कहते हैं, समुद्र से ही प्रकट हुआ। निश्चय ही समुद्र ही धरती की एक ऐसी भौतिक विशिष्टता है जो पृथ्वी को अद्वितीय बनाती है। जल की एक विस्तृत झिलमिलाती हुई पर्त पृथ्वी के लगभग तीन-चौथाई भाग पर लहरा रही है।

सभी जीवधारी न केवल जल का उपयोग करते हैं वरन अधिकांशतः जल से ही बने हैं। मानव शरीर लगभग ७० प्र. श. जल ही है, जिसका एक-तिहाई रक्त एवं अन्य शारीरिक द्रवों में तथा दो-तिहाई कोशिकाओं की भित्तियों में है। यह तथ्य गहन विकासवादी महत्त्व का है कि मनुष्य के रक्त की रासायनिक संरचना समुद्री जल के समान ही है। इसमें समुद्र के सभी तत्त्व संतरण करते हैं, यद्यपि वे भिन्न अनुपातों में हैं।

पृथ्वी के इतिहास को दीर्घ कालावधियों में, जिन्हें महाकाल कहते हैं, बांटा गया है। इस इतिहास के प्रमुख अध्यायों अथवा घटनाओं का प्रारंभ और अंत पृथ्वी की बाहरी लगभग तीस मील मोटी पपड़ी पर होनेवाली महान उथलपुथल के साथ माना गया है। ऐसी उथलपुथल को पर्वतोत्पत्ति (ओरोजेनिसिस) कहा जाता है। जीवन के विकास की विविध अवस्थाओं को क्रमशः दर्शानेवाली ये दीर्घ कालावधियां, जिनके अभिलेख जीवाश्मों के रूप में उपलब्ध हैं, आगे की तालिका में दर्शायी गयी हैं :—

आयु (करोड़ वर्षों में)	महाकल्प	जीवन की प्रवृत्ति
७	नवजीव	अभिनव जीवन
१९	मध्यजीव	मध्ययुगीन जीवन
५५	पुराजीव	पुरातन जीवन
१,००	अतिपुराजीव	अति पुरातन जीवन
३,०० और अधिक	आद्य महाकल्प	आद्य जीवन

भू-इतिहास की लंबी अवधि के संभवत: आधे या उससे अधिक भाग में पृथ्वी अपने वायुमंडलीय अवेष्ठन में नितांत बंजर और जीवनविहीन रही। उसके महासागरों का जल सूर्य और चंद्र के स्पंदनों के साथ उठता-गिरता तथा प्रबल झंझाओं से आंदोलित होता रहा, परंतु उनमें से किसी में भी जीवन का कोई चिह्न न था। तब किसी अकल्पनीय क्षण में (लगभग डेढ़ या २ अरब वर्ष पूर्व) 'जीवन' किसी प्रकार जल में प्रकट हुआ। भौतिक परिस्थितियों के किस क्रम से वह अस्तित्व में आया—विज्ञान इस बारे में स्पष्ट रूप में कुछ नहीं कह पाता। इतना ही कह सकते हैं कि किन्हीं माध्यमों से महाकाय अणुओं ने अपनी प्रतिलिपियां उत्पन्न करने की क्षमता प्राप्त कर ली। आदिम उष्ण महासागरों में इस धुंधले श्रीगणेश से विकास की अद्भुत क्रियाओं द्वारा सभी जीवों का प्रादुर्भाव हुआ। तभी से रेंगते, तैरते, तिरते और उड़ते प्राणियों के असंख्य जमघट ने, जो हमारे ग्रहतल पर कोटि-कोटि वर्षों से विचरणशील रहे एवं झाड़ियों, वृक्षों, तृणों, शैवालों तथा पुष्पों की अगणित पीढ़ियों ने पृथ्वी की कठोर प्रस्तरीय पपड़ी को कोमल और सुखद तथा हरे-भरे आवरण में परिणत करना आरंभ कर दिया। भौमिकी इतिहास की दीर्घ अवधि में जीवन का तंतु एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में उतरता गया—निरंतर परिवर्तनशील किंतु अटूट। वह प्रक्रिया जिसके द्वारा जीवन अपना नवीनीकरण करता है, प्रकृति की सर्वाधिक जटिल प्रक्रियाओं में से एक है।

जीवंत पदार्थ की मूल इकाई कोशिका (सेल) है। रूप और क्रिया में अत्यधिक परिवर्तनशील अधिकांश कोशिकाएं आकार में अणुवीक्षणीय हैं, जिनका औसतन माप एक सेंटीमीटर के हजारवें भाग के बराबर है। कुछ जीवधारी जैसे 'अमीबा' और 'जीवाणु' एककोशी होते हैं। एक प्रौढ़ मनुष्य के शरीर में खरबों कोशिकाएं होती हैं। प्रत्येक कोशिका-केंद्रक (न्यूक्लियस) में सूत-जैसी संरचनाओं का गुंफित पुंज रहता है, जिसे पितृसूत्र (क्रोमोसोम) कहते हैं। इनकी संख्या प्रत्येक जाति में भिन्न होती है, किंतु सजाति

में समान होती है। उदाहरणार्थ, मनुष्य की प्रत्येक कोशिका में ४८ पित्रयसूत्र होते हैं और कुछ मछलियों में २०० तक। प्रत्येक व्यक्ति की पैत्रिकता इन्हीं पित्रयसूत्रों द्वारा निर्धारित होती है, क्योंकि प्रत्येक पित्रयसूत्र में उससे भी सूक्ष्म इकाइयां विद्यमान हैं जिन्हें पित्रैक (जीन) कहते हैं। ये पित्रैक ही उन वास्तविक पैत्रिक विशिष्टताओं के संवाहक हैं जो

कोशिक केंद्रक में पित्रयसूत्र के गुम्फित पुंज

सम्यक व्यक्तित्व की संरचना का आधार होते हैं।

पिछले दो दशकों की गवेषणाओं ने प्रमाणित कर दिया है कि रसायन डी. एन. ए. (डि आक्सीरिबोस न्यूक्लिक एसिड) सभी जीवों की पैत्रिकता का रासायनिक तत्व निर्माण करता है, केवल कुछ द्रुम विषाणुओं को छोड़कर जिनमें सन्निहित रसायन आर. एन. ए. (रिबोस न्यूक्लिक एसिड) होता है। डी. एन. ए. और आर. एन. ए. ही ऐसे दो रसायन हैं जो जीवन की अनिवार्य आवश्यकता—स्वप्रतिलिपीकरण—से युक्त हैं। जीवन के उद्भव को समझने के लिए हमें उन रचना-प्रक्रियाओं के रहस्य को खोलना पड़ेगा जो हमें डी. एन. ए. के उद्भव एवं उसके परवर्ती विकास आनुवंशिकता के निर्णायक तत्वों—पित्रैक तथा पित्रयसूत्रों—तक ले जाती हैं।

अमीबा - जैसे सर्वाधिक सरल जीव एकल - कोशिकी ही हैं, जो शरीर-विज्ञान की दृष्टि से अपने - आप में पूर्ण हैं। उनके पुनरुत्पादन की सामान्य शैली विखंडन अथवा विघटन प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत एकल - कोशिकी जीव दो या दो से अधिक भागों में विभाजित हो जाता है। यह जनक ही इस प्रकार सीधे अपने शिशुओं में परिणत हो जाता है। इस प्रकार 'प्रोटोजोवा'-जैसे एकल - कोशिकी जीव एक प्रकार से अमर होते हैं। एकल - कोशिकी जीवों की मृत्यु उस अर्थ में नहीं होती जिसमें उच्चतर

प्राणियों की होती है। हां, कभी-कभी उनका वध तो किया जा सकता है, किंतु प्रायः वे मरणशील नहीं होते। इसके विपरीत अधिक बड़े, अधिक विकसित बहुकोशी जीवों में शरीर की शक्ति संगठन से उदित हुई। अर्थात, छोटे-छोटे अंशों में विभक्त होने के स्थान पर वे संगठित होकर वृहत परिमाण में संभूत हुए, परंतु एक ओर जहां शारीरिक संरचना जीवन के उच्चतर विकास एवं संगठन की ओर अग्रसर हुई वहां दूसरी ओर इस उपलब्धि के लिए उन जीवों को एक बहुत बड़ा मूल्य चुकाना पड़ा। शारीरिक संरचना का यह मूल्य था पार्थिव मृत्यु।

इस प्रकार आज से लगभग २ अरब वर्ष पूर्व आदिम उष्ण एवं छिछले महासागरों में जीवन का प्रारंभ हुआ। जल, कार्बनडाइक्साइड तथा नाइट्रोजन पर पराकासनी (अल्ट्रावायोलट) विकिरणों, ब्रह्मांडीय किरणों (कासमिक रेज), विद्युत्तीय आवेशों एवं ज्वालामुखीय उष्मा की प्रक्रियाओं द्वारा कार्बोहाइड्रेट्स तथा अमीनो-एसिड्स की उत्पत्ति हुई। कार्बोहाइड्रेट्स तथा अमीनो एसिड्स से डी. एन. ए. अणु प्रकट हुए, जिन्होंने आर. एन. ए. अणुओं को जन्म दिया। इस प्रकार जीवन और एककोशी जीवों की विविधता—जीवाणु प्रोटोजोवा अलगी आदि का उदय हुआ और पृथ्वी पर क्रमशः जीवन का विकास सरल से जटिल की ओर होता रहा।

सब मिलाकर वृक्षों एवं अकशेरुकी पशुओं की विकास-गति कशेरुकी पशुओं की अपेक्षा अधिक मंद रही। अधिकांश स्तनपायी नवजीव-महाकाल (६ से ७ करोड़ वर्ष पूर्व) में अधिक तीव्र गति से विभिन्न रूपों में विकसित हुए। मानव का विकास तो पिछले छह लाख वर्षों में अत्यधिक द्रुतगति से हुआ, विशेषकर उसके मस्तिष्क का विकास। वस्तुतः आज का सभ्य और बुद्धिमान मानव (होमो-सेपियंस) पशु-जगत का दानव है।

समस्त जैविक जगत को, दो वर्गों—जंतु जगत एवं वनस्पति जगत—में विभाजित किया जा सकता है। जीवों का यह वर्गीकरण स्वीडन के प्रकृतिवादी लिने (१७५८) की कृति से आरंभ होता है। इन दोनों वर्गों का संबंध अंगरेजी के Y अक्षर द्वारा चित्रात्मक रूप से दर्शाया जा सकता है—चित्र–पृष्ठ ४२। Y के ऊपरी अंगों पर एक ओर सर्प, मत्स्य; मनुष्य, हाथी-जैसे जटिल संरचनावाले प्राणी तथा दूसरे पर फल-फूल देने वाले आम एवं गुलाब जैसे पेड़-पौधे हैं। मध्य के स्थानों पर सीप और घोंघे-जैसे सरल संरचना वाले जंतु एवं फर्न-जैसी वनस्पतियां हैं। आधार स्थान पर, जहां दोनों शाखाएं एक होती हैं, स्पंज, अमीबा और अलगी-जैसे अति संरचना वाले आदिम जंतु एवं वनस्पतियां आती हैं। जीवन के ये आदिम रूप और भी नीचे उतरकर किसी ऐसे उभयनिष्ठ पूर्वज जीव में समा जाते हैं जहां से दोनों रूपों का प्रस्फुटित होना माना

जंतु एवं वनस्पति का पारस्परिक संबंध

हो गये। दूसरों ने भोजन के लिए खोज करने की प्रवृत्ति विकसित की, गति-शीलता प्राप्त की और जंगम बन गये।

जंतुओं और वनस्पतियों के बीच की स्पष्ट विभाजन-रेखा अधिक आदिम रूपों (विशेषकर एककोशियों) में इतनी सुगमता से नहीं दिखायी देती। वस्तुतः सूक्ष्म जीवों के बारह ऐसे वर्ग हैं जिन्हें प्राचीन जंतु-विज्ञान के ग्रंथों में जंतु वर्ग में एवं वनस्पति-विज्ञान के ग्रंथों में वनस्पति वर्ग में सम्मिलित किया गया है।

जीवन के संबंध में हमारा ज्ञान अधिकांशतः स्तरित शिलाओं में जीवित प्राणियों द्वारा छोड़े गये
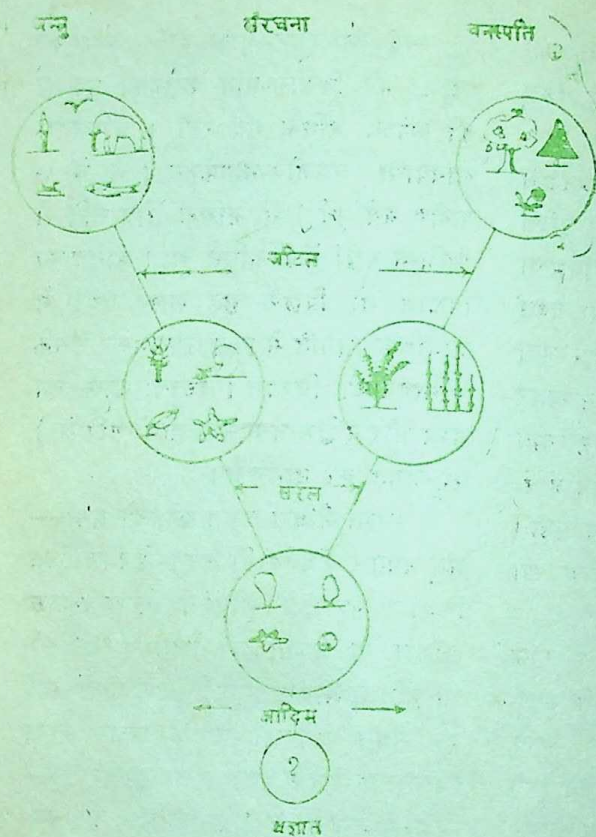
जा सकता है। अनेक अनुसंधानकर्ताओं का मत है कि यह पूर्वज रूप एक नितांत सरल वनस्पति था। कुछ अन्य वैज्ञानिकों का विश्वास है कि इस प्रथम रूप में जंतु एवं वनस्पति दोनों ही की विशिष्टताएं विद्यमान थीं।

इन प्रारंभिक एवं कोशिकी जीवों में कुछ ने स्थावरी स्वभाव ग्रहण कर लिया और अपने निकटतम पर्यावरण से भोजन लेने लगे तथा अंततोगत्वा स्थावर

चिन्हों एवं जीवाश्मों से प्राप्त होता है। जिन्हें अंश-अंश करके संयुक्त किया गया है।

आद्य महाकल्प

पृथ्वी का सर्वाधिक पुरातन ज्ञात इतिहास आज महाकल्प-युगीन शिलाओं में अभिलिखित है। ये शिलाएं लगभग दो अरब वर्ष पुरानी हैं। पृथ्वी की सबसे प्राचीन पपड़ी से बनने के कारण इन चट्टानों में जीवन के आद्य रूप दीखने चाहिए। परंतु आदिम जीवन के सुकुमार होने तथा इन

चट्टानोंकी अत्यंत परिवर्तित प्रकृति के कारण इनमें जीवन के किसी रूप का कोई स्पष्ट चिह्न नहीं मिलता, यद्यपि इसी युग में पुरा-जीवन का प्रादुर्भाव हो गया था।

अति पुराजीव महाकल्प

यह युग अलगी और प्रोटोजोवा-जैसे सरल संरचनावाले जीवों का युग था। अतिपुरातन जीवन के जीवाश्मों के अभाव में जीवन के विकास की इन प्रारंभिक अवस्थाओं की सम्यक व्याख्या अभी तक संभव नहीं हो पायी है।

पुराजीव महाकल्प

प्रारंभिक पुराजीव महाकल्प में सबसे प्राचीन स्तरित शिलाएं आती हैं, जिनमें अकशेरुकी जीवाश्मों की राशियां हैं। इस दीर्घ अवधि में प्रथम अकशेरुकी जंतु प्रकट हुए, फिर क्रमशः वर्तमान मछलियों तथा मेढकों-जैसे जलथलचारी जीवों के रूप विकसित हुए। इस युग के अंत में जलथलचारियों के विकास की परिणति संसृपों में हुई। इसी युग में थल पर उगने-वाली प्रथम वनस्पतियां भी प्रकट हुईं।

मध्यजीव महाकल्प

एक अतिदीर्घकाल तक पृथ्वी पर संसृपों का प्रभुत्व रहा और इसीलिए मध्यजीव महाकल्प को संसृपों का युग कहना समीचीन ही है। इन संसृपों में कुछ ने जिन्हें 'डाइनोसार' कहते हैं, महाकाय रूप प्राप्त किये, जिनकी लंबाई १०० फुट से ऊपर और भार २० टन से भी अधिक था। भारत में जबलपुर के समीप बहुत से 'डाइनोसार' के अवशेष प्राप्त हुए हैं। इन्हीं संसृपों से पक्षियों और स्तनपायियों-जैसे जीवन के उच्चतर रूपों का विकास हुआ।

लगभग इसी समय स्तनपायी प्रकट हुआ, जिसके सबसे निकट के जीवित प्रति-निधि आस्ट्रेलिया में आज भी पाये जाते हैं। आज ये ही अंडे देनेवाले एकमात्र स्तनपायी हैं। आगे चलकर इन्हीं स्तन-पायियों से 'मार्सुपियल्स' का विकास हुआ।

इस युग की समाप्ति के लगभग ही प्रथम पुष्प देनेवाले पौधों एवं सहस्रों आधु-निक कीट-पतंगों का भी उद्भव हुआ। इस घटना ने निरसंशय सिद्ध कर दिया कि फूलों और कीट-पतंगों की अनेक जातियां एक - दूसरे पर आश्रित हैं।

नवजीव महाकल्प

इस अवधि में स्तनपायियों का विकास अति द्रुतगति से हुआ और इसीलिए इस युग को स्तनपायियों का युग कहा जाना उपयुक्त ही है। इस युग की समाप्ति पर लग-भग छह या सात लाख वर्ष पूर्व हमें मनुष्य के वानर-जैसे पूर्वजों के अवशेष चट्टानों में प्राप्त होते हैं। अंत में, आज से लगभग पांच लाख वर्ष पूर्व आधुनिक मानव का प्रादुर्भाव हुआ और तबसे पृथ्वी पर उसी का प्रभुत्व है। कहा जाता है कि यह पहला पूर्ण विकसित मानव भारत में ही चंडीगढ़ के आसपास कहीं प्रकट हुआ।

—भू विज्ञान एवं भू भौतिकी विभाग,
रुड़की विश्वविद्यालय, रुड़की

• विवेकी राय

आज उसे देखकर ऐसा लगा कि कहीं कुछ हो न जाए, परंतु यह बात कल्पना में नहीं आयी थी कि ऐसा हो जाएगा!

वह बहुत बड़ी घटना हो सकती है। अखबार में छप भी सकती है। परंतु फायदा

क्या? यह दुनिया बदलनेवाली नहीं है। विकासी महायान-चक्र के नीचे बूधन-जैसे निरीह लोग पिसते ही रहेंगे। इजलास वही रहेंगे, कचहरियां वैसी ही रहेंगी, पुकार-पेशी सब दुरुस्त, ज्यों-का-त्यों, कोई फर्क पड़नेवाला नहीं।

उसने लगभग तीन साल पहले अपील की। उसे पूरी उम्मीद थी कि उसका हक मिल जाएगा और उसकी जमीन जालिम दुश्मनों के पंजे से निकल सकेगी।

नीचे की अदालतों ने उसे हरा दिया, तब गहरा धक्का लगा था। लोगों ने समझाया, गांव में चकबंदी की अदालतें आ गयीं सत्यानाशी नरक का द्वार खुल गया! बूधन भाई, हर जगह ऐसे ही अंधा-मुद्दा आर्डर नहीं होगा। ऊपर चलने पर कानून की रूह देखी जाएगी।

बूधन भाई ने कलेजा पुख्ता करके बहुत हौसले के साथ जिले पर डी. डी. सी. के यहां अपील की। इस अपील के साथ उसने एक और अपील की, अपने साहू-महाजन लोगों से, कुछ दिन और उसे संभालने की। पहले खेत, फिर बाग-बगीचा रेहन पर चढ़ा। गहने-गुरिये

की बात आयी और अंत में बरतन-भांडे का नंबर। कचहरी की मार से बूधन भाई की आंखें धंस गयीं। हाड़-हाड़ उघार हो गये। जूता एकदम जाता रहा। धोती-कुरते पर पैबंद बैठने लगे। हुलिया बदल गयी, चाल-ढाल और भाषा बदल गयी। पूरे व्यक्तित्व में यदि कुछ अपरिवर्तनीय रह गया तो वह था हाथ का सोंटा। पहले कुत्तों से, बाद में दुश्मनों से और अंत में स्वयं से रक्षार्थ! बूधन खीझता है, चकबंदी साली ने पंगुल कर दिया!

उसे मैंने पिछली होली के दिन देखा था। समवेत गायन की धूम-धड़ाक से जहां सारा गांव गूंज रहा था, गलियों में जहां अबीर-गुलाल उड़ रहा था और फागुन-मस्त महीना ढोल-झाल पर झनक रहा था, वहां वह इन सबसे निरपेक्ष गाने-

बजाने वालों की आलोचना कर रहा था। कहता, देखो तो, किसी में दम है? चिल्लाने से मस्ती आएगी? पस्त हौसले देह धुनने से लौटेंगे? गाने-बजाने से लड़ाई करके यह बोझ चलेगा?

उसकी ये बातें मुझे अच्छी लगीं। सच-मुच लोग परंपराओं का बोझ ढोते, गाने से अधिक लड़ने आये थे, लाठी लेकर आये थे। सांय-फुस चल रही थी, आज जो न हो जाए! भीतर बारूद भरा है, बस पलीता लगने की देर है। सभी पैंतरे पर हैं। अपना-अपना बैरी चीन्ह-चीन्ह कर हाथ चलाना है। वे सब लोग पर-स्पर साथ रहकर भी साथ नहीं हैं। बाहर से हंस-बोलकर भी भीतर जहरीली जगह पर नजर है। बाहर मेला है, भीतर सभी उदास। सभी किसी एक धुन में नहीं, सबकी अपनी-अपनी धुन है। तो भी लोग चारों ओर से गोल में भिड़े हैं।

वह गोल से बाहर है। नीम की जड़ पर बैठकर चकबंदी की अदालतों में चलनेवाले भ्रष्टाचार की कहानियां सुनाता सुरती मल रहा है। सुननेवालों
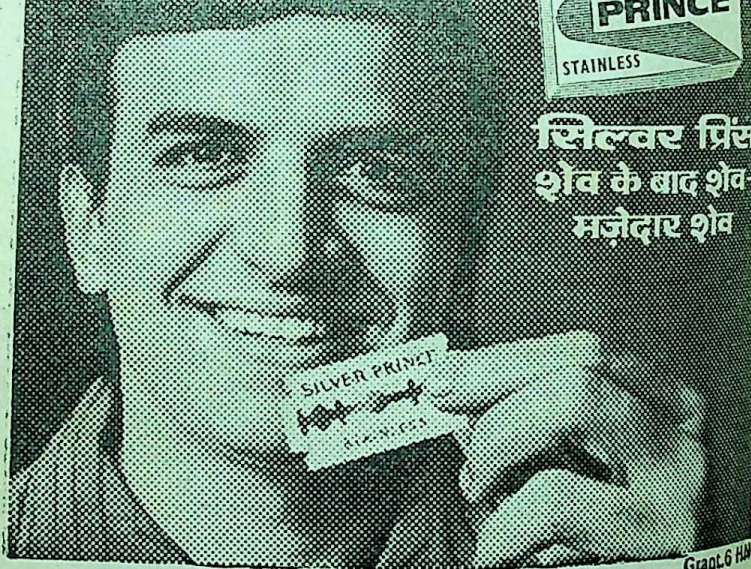
को शायद होली-गान से अधिक मजा आ रहा है। गाने-बजाने से लेकर खेती-बारी के काम या घर-गृहस्थी के मसले, सबके साथ, सब समय, ग्रामीण चकबंदी के चलते जैसे कचहरी में खड़ा है। चकबंदी आयी तो उसके विषय में सबसे बड़ा तर्क दिया गया कि कचहरियां जो गांवों से दूर नगरों में हैं, वे गांवों में आ जाएंगी तो सच्चे न्याय का आंखों-देखा मार्ग प्रशस्त होगा। यही हुआ भी और न्याय का पथ इस सीमा तक प्रशस्त हुआ कि न्याय-अन्याय के बीच का अंतराल समाप्त हो गया!

क्या अंतर है होली और चकबंदी की उलझन-जूझन में? युग-युग के सोये पारस्परिक 'राग' जाग पड़े कि उछल-कूद पागलपन की सीमा तक पहुंच गयी! ऊपर से चकबंदी का आदर्श फागुनी दूधिया चांदनी की भांति झड़ रहा है। आर्थिक विकास के वासंती उद्दीपक में बौराये लोक-मन छन रहे हैं। आपसी संबंधों में जो नया उभार आया, वह बारहमासी 'होली' से कम नहीं। परची-पड़ताल और अदालती हुक्मों की उत्ताल तरंगों पर लोग कम नाचते हैं?

"आप गा नहीं रहे हैं?" मैंने पूछा।

"कल तारीख है," उसने उत्तर दिया और गुमसुम हो गया। मुझे लगा, कुछ और कहेगा। बहुधा ऐसा होता है कि बातें आते-आते लौट जाती हैं, तब चुप आदमी का चेहरा कैसा लगता है? मैं उसके चुप चेहरे को देखता हूं और लगता है बात आगे सरक रही . . . रुपयों का जुगाड़ कर रहा हूं। गाड़ी-भाड़ा, वकील की फीस, पेशकार की पेशी चाहिए। जी टंगा है। क्या होगा? कुछ काम-धाम नहीं होता। हर बार केवल तारीख पड़ती है। पहले तो वकील साहब से कुछ कहता-सुनता था, अब वह भी छूट गया है। क्या कहूं? तारीख, तारीख और तारीख! बस, यही लड़ाई है। हम मुकदमा नहीं तारीख लड़ते हैं। मेहनताना और पेशी लड़ते हैं, दिन-दिन भर बैठकर केवल सायंकाल चलते समय 'डेट' लेते हैं। कोई भी डेट, चाहे एक महीने की या आठ दिन की, कोई फर्क नहीं! विश्वास हो गया है, ऐसे ही अनंतकाल तक हम 'तारीख' लड़ते चले जाएंगे। हड्डियां गल जाएंगी, पसलियां घिस जाएंगी, तारीखें पड़ती जाएंगी। बहस नहीं होगी, फैसला नहीं होगा, तारीखें पड़ती जाएंगी। वही हाकिम, वही इजलास, वही वकील-पेशकार, वही रुपयों की नोच-चोंथ; वही सायंकालीन तारीख! भगवान भला करें सरकार का, उसने जगह-जगह पानी का इंतजाम कर दिया है। सड़क के किनारे पेड़ लगा दिये हैं और कचहरी के बरामदे में बैठने की छूट्टी दे दी है! एक साल, दो साल और तीन साल तक। अब जिंदगी लग जाएगी। अब अच्छा लगने लगा है। घर के काम-धाम में मन नहीं लगता। तारीख के दिन गिना करता हूं। भूख

लगने पर जब चाय पीने बैठता हूं उस कचहरी की मशहूर दूकान पर, तो कितना अच्छा लगता है! मजा आ जाता है! कितनी रंग-बिरंगी बातें होती हैं! इतना मनसायन इस मनहूस गांव में कहां? ...लेकिन पता नहीं क्यों देर तक बैठकर उठता हूं तो आंखों के आगे अंधेरा छा जाता है। पता नहीं, हमें क्या हो गया है?

"एक किस्सा सुने हैं?" उसने सिर ऊपर उठाया।

फिर जोर से हंसकर कहने लगा। एक आदमी बहुत दिन बाद वतन पर लौटा तो देखता क्या है कि गांव उजड़ गया है। लोग उदास हैं, उखड़े-उखड़े बोल रहे हैं। किसी अकाल या महामारी की चपेट है या क्या बात है? लोगों से पूछा तो मालूम हुआ कि चकबंदी आयी है और तारीखें पड़ रही हैं!

वह फिर जोर से हंस पड़ा।

इस बार उसकी हंसी सुनकर मुझे भारी दहशत हुई। खांसी में जैसे उसके भीतर का तार-तार हड़हड़ा रहा था। थूक-खखार के साथ ढेर-सा बलगम उसने उठकर एक तरफ गिराया।

उस होली के दिन के बाद उससे आज मुलाकात हुई, तारीख पर। मैं भी कचहरी गया था। साधारण काम था। उसने दांत चिआरकर कहा, "आज बहस हो जाती तो टंटा खतम होता! . . . मगर नहीं होगी। मैं जानता हूं, तारीख ही पड़ेगी।"

देश में कोयले का भंडार

क्षेत्र	कुल भंडार (करोड़ टनों में)	प्रतिशत
पश्चिम बंगाल	१९३१.१०	२१.०
बिहार	३४५५.९२	३७.५
उड़ीसा	८५४.७३	९.३
मध्यप्रदेश	१७४४.१७	१८.९
महाराष्ट्र	५८९.९०	६.४
आंध्रप्रदेश	५५१.४६	६.०
असम	२४.३६	०.३
मेघालय	३४.५८	०.४
नेफा	४.६०	०.१
नागालैंड	५.५०	०.१
कुल	९१९६.३२	१००.

देश में कोयले का उत्पादन

(करोड़ टनों में)

वह इजलास के बरामदे की ओर बढ़ गया।

शाम को ट्रेन के समय स्टेशन पर नहीं लौटा। मैंने सोचा, शायद बहस हो रही होगी। चकबंदी की अदालतें गयी रात तक चलती हैं।

तभी उसका एक साथी मिला और उसने बताया कि इस बार ऐसी लंबी तारीख पड़ी है कि मुअक्किल लौट नहीं सकेगा। वह अदालत से बाहर निकल रहा था कि सीढ़ियों पर लड़खड़ाकर गिर पड़ा और फिर उठ न सका।

—प्रोफेसर्स कालोनी, सकलेनाबाद, गाजीपुर

उपभोक्ता है, आज देश की अनेक गाड़ियों को बंद करने को मजबूर हो गयी है। कोयले के अभाव में लोहा और इस्पात, उर्वरक, विद्युत-उत्पादन, सीमेंट, कांच तथा वस्त्र-उद्योग अपनी क्षमताओं का पूर्ण उपयोग कर पाने में असमर्थ हैं।

पेट्रोल के साथ-साथ कोयला संकट से आज देश में ईंधन का विस्फोटक संकट पैदा हो गया है, क्योंकि हमारे औद्योगिक उत्पादन के लिए कोयला ६७ प्रतिशत शक्ति का साधन है। उत्पादन अवरुद्ध का अभाव नहीं है तो क्यों पर्याप्त मात्रा में कोयला खानों से नहीं निकाला जा रहा है? यदि निकाला जाता है तो उसे उपभोक्ताओं तक समयानुसार क्यों नहीं पहुंचाया जाता? क्या रेलवे के पास पर्याप्त वैगन नहीं हैं? यदि हैं तो वैगनों की व्यवस्था में अब तक सुधार क्यों नहीं हो पाया है? ये सभी प्रश्न हैं जो भारतीय जन-मानस को उद्वेलित कर रहे हैं।

देश में कोयले की उपलब्धि

कोयले के उत्खनन की दृष्टि से भारत

का स्थान दुनिया में आठवां है। हमारी खानों में करीब ९१९६ करोड़ टन कोयला है। हमारा ६७ प्रतिशत कोयला-क्षेत्र बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा में केंद्रित है, जो देश के पूर्वी कोने में पड़ता है। अतः परिवहन की समस्या इस संकट को सदा बढ़ाती रही है।

यहां पर दी हुई तालिका से स्पष्ट है कि फिलहाल कुछ वर्षों तक हमारे यहां कोयले की कमी नहीं है। तब फिर कोयले का यह संकट क्या हमारी अकर्मण्यता की कहानी है?

उत्पादन में शिथिलता

आज देश में कोयला-उद्योग पूर्णरूपेण सार्वजनिक क्षेत्र में है। निजी क्षेत्र की विनियोजन-क्षमताओं की तुलना में कई गुने पूंजी-विनियोजन एवं सामर्थ्य की चुनौती पर ही इस उद्योग का अधिग्रहण किया गया था; किंतु क्या हम अधिक पूंजी विनियोजित कर पाये? क्या हम कोयले के भाव स्थिर रखने में सफल हुए? क्या कोयले का उत्पादन बढ़ा?

यदि निर्धारित लक्ष्यों की तुलना में उत्पादन की सही स्थिति का जायजा लिया जाए तो चौंकानेवाले तथ्य हैं कि जहां दूसरी पंचवर्षीय योजना में उत्पादन का लक्ष्य ६ करोड़ टन निर्धारित था वहां योजनांत वर्ष १९६०-६१ में उत्पादन ५.५० करोड़ टन ही था। तीसरी पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य ९.७३ करोड़ टन था, किंतु योजनांत वर्ष १९६५-६६ में ७.०३ करोड़ टन का

देश में कोयले का भंडार

क्षेत्र	कुल भंडार (करोड़ टनों में)	प्रतिशत
पश्चिम बंगाल	१९३१.१०	२१.०
बिहार	३४५५.९२	३७.५
उड़ीसा	८५४.७३	९.३
मध्यप्रदेश	१७४४.१७	१८.९
महाराष्ट्र	५८९.९०	६.४
आंध्रप्रदेश	५५१.४६	६.०
असम	२४.३६	०.३
मेघालय	३४.५८	०.४
नेफा	४.६०	०.१
नागालैंड	५.५०	०.१
कुल	९१९६.३२	१००

देश में कोयले का उत्पादन

(करोड़ टनों में)

वर्ष	कोकिंग	नान-कोकिंग	समग्र उत्पादन
१९५०-५१	—	—	३.४०
१९५५-५६	—	—	३.८२
१९६०-६१	—	—	५.५०
१९६५-६६	१.७०	५.३३	७.०३
१९६९-७०	१.८१	५.७६	७.५७
१९७०-७१	१.७८	५.५२	७.३०
१९७१-७२	१.६७	५.५४	७.२१
१९७२-७३	२.००	५.६०	७.६०
१९७३-७४	२.५४	६.८१	९.३५
१९७८-७९	३.२३	११.०८	१४.३१
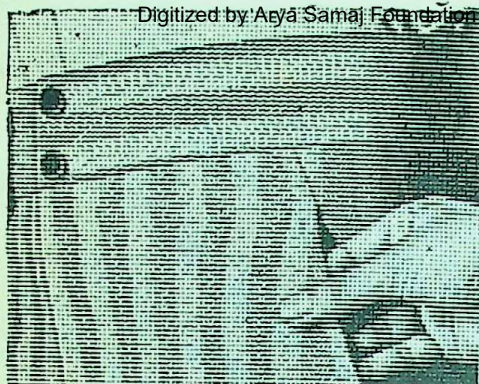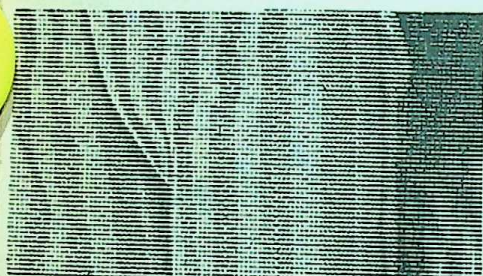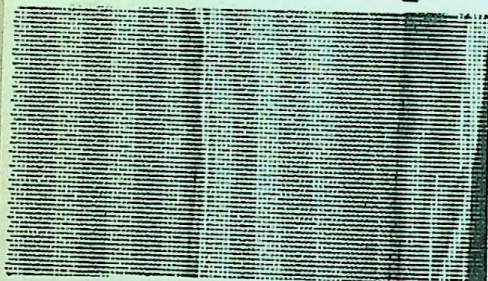
उत्पादन [illegible] हो पाया। १९६९-७० में लक्ष्य ९.५३ करोड़ टन था, जबकि उत्पादन ७.५७ करोड़ हुआ। सर्वाधिक आश्चर्य तो यह है कि कोयला-खानों के सार्वजनिक क्षेत्र में जाने के साथ ही उत्पादन में गिरावट आयी है। १९७०-७१ में उत्पादन घटकर ७.३० करोड़ टन हो गया। १९७१-७२ में मात्र ७.२१ करोड़ टन ही रह गया। १९७२-७३ में उत्पादन में किंचित वृद्धि हुई तथा वह ७.६ करोड़ टन की पूर्वसीमा पर पुनः पहुंचा, किंतु तब से अब तक मांग ८.० करोड़ टन तक पहुंच चुकी है। १९७३-७४ के लक्ष्यों के अनुपात में इस वर्ष भी कोकिंग कोयले का उत्पादन २.५४ करोड़ टन के स्थान पर २.२ करोड़ टन से अधिक होने की आशा नहीं है। इसी तरह नान-कोकिंग कोयला भी ६.८१ करोड़ टन के लक्ष्यों की तुलना में ५.८ करोड़ टन से अधिक होने की आशा नहीं है। इस प्रकार इस वर्ष का कुल उत्पादन भी ८.० करोड़ टन से अधिक नहीं हो पाएगा। ऐसी स्थिति में १९७८-७९ तक उत्पादन १४.३ करोड़ टन तक बढ़ाना संभव नहीं।

उत्पादन बनाम लदान

कोयले का उत्पादन तथा मांग की पूर्ति का सवाल रेलवे-वैगन की उपलब्धि से जुड़ा हुआ है। मांग की तुलना में मात्र ४१ प्रतिशत वैगन-उपलब्धि कोयला-संकट के रहस्य को खोलता है। १९७२ के कुछ महीनों की वैगन-मांग व वैगन-उपलब्धि के तथ्य प्रस्तुत हैं—

समयावधि (१९७२)	उद्योग की मांग	वैगन उपलब्ध हुए	कुल कमी (वैगन)	प्रतिशत उपलब्धि
जनवरी	९९९७	५८३३	४१६४	४२ प्रतिशत
फरवरी	९५४०	५९०३	३६३७	३८ प्रतिशत
मार्च	९३१६	६२४४	३०७२	३३ प्रतिशत
अप्रैल	९६६०	५६७९	३९८१	४१ प्रतिशत
मई	९९४३	५४७६	४४६७	४५ प्रतिशत
जून	१०१२५	५५७१	४५५४	४५ प्रतिशत

यदि इस संदर्भ में वर्ष १९६९-७० से १९७१-७२ तक की अवधि का विशद अध्ययन किया जाए तो स्थिति इस प्रकार है—

वर्ष	दैनिक मांग (वैगन)	वैगनों की उपलब्धि	वैगनों का लदान
१९६९–७०	११,७३१	८,४०१	८,१७६
१९७०–७१	१३,३७१	७,८१३	७,५५७
१९७१–७२	१३,५४३	८,०३७	७,८३०

आज भी कोयला-उद्योग की मांग १०,००० वैगन प्रतिदिन से कम नहीं है, किंतु रेलवे बोर्ड औसतन ५,५०० वैगन प्रतिदिन से अधिक उपलब्ध करवाने में सक्षम नहीं है। ऐसी स्थिति में कोयला-संकट बना रहना स्वाभाविक है। वस्तुतः यह संकट रेलवे तथा कोयला के हमारे दो सार्वजनिक उद्यमों के बीच सामंजस्य के अभाव की कहानी मान ली जाए तो अत्युक्ति नहीं है।

हमारा देश वैगनों का निर्यातक है। हमारे वैगनों की मांग संसार में बढ़ती ही जा रही है। तीसरी पंचवर्षीय योजना के बाद भारतीय रेलों के पास १,४४,-७८९ वैगन थे। चौथी योजना के मध्य में ७१,७७६ वैगनों की आवश्यकता रेलों को होती थी। १५,००० वैगन और तैयार करने के आदेश दिये जा चुके थे। ऐसी हालत में रेलवे के पास वैगनों की कमी का कोई प्रश्न नहीं है। फिर क्या कारण है कि कोयला खानों से उठाया नहीं जाता? यदि प्रतिवर्ष खानों के पास लदान के इंतजार में पड़े कोयले के ढेर का अध्ययन किया जाए तो वैगनों की कमी और लदान की अव्यवस्था की कहानी ही सामने आती है—

घर-गृहस्थी सुव्यवस्थित रखने के लिये टॉर्च ख़राब होने से काम नहीं चलेगा

इसीलिये लीजिये- ड्युरोलाइट सबसे मज़बूत टॉर्च

हर समय टॉर्च पास रखना बुद्धिमानी का काम है। और वह भी अपने मनपसन्द टॉर्च—ड्युरोलाइट। हल्की, फिर भी बेहद टिकाऊ। जैसे-तैसे इस्तेमाल करने पर भी इसमें खरोंच नहीं लगती और न ही यह चोट खाकर पिचकती है। झलझलाते सुन्दर रंगों की मज़बूत बॉडी जो गरारीदार और खुरदरा है जिससे पकड़ने में आसानी होती है।

हमेशा ही सबसे आगे और लाजवाब

वर्ष	खानों पर कोयले के ढर (लाख टनों में)
	३७.७
१९६१–६२	४०.९
१९६२–६३	५२.०
१९६३–६४	५२.६
१९६४–६५	४८.७
१९६५–६६	६०.१
१९६६–६७	५८.१
१९६७–६८	५९.५
१९६८–६९	८०.८
१९६९–७०	९५.८
१९७०–७१	

१९७१ के गंभीर कोयला-संकट निवारण के युद्ध-स्तरीय अभियान के बाद ३० नवंबर, १९७२ तक कोयला-खानों के पास लगे ढेर उठाने के बावजूद ६९.६ लाख टन कोयला खानों के पास जमा रह गया था। पहली मार्च १९७३ तक ये ढेर फिर ७२.३ लाख टन तक बढ़ गये। स्पष्ट है कि रेलवे ने जहां १९६८-६९ और १९६९-७० में क्रमशः ६,०६७ वैगन तथा ६,२४३ वैगन प्रतिदिन लगाये थे, वहां १९७०–७१ में मात्र ५,५३५ तथा १९७२–७३ में ५,५१८ वैगन ही प्रतिदिन खानों से कोयला उठाने के लिए उपलब्ध हो सके, जबकि मांग १०,००० वैगन प्रतिदिन से अधिक की थी। यही कारण है कि बाजार में उपभोक्ताओं तक कोयला समय पर नहीं पहुंचाया जा सका और कोयला-संकट निरंतर बढ़ता ही रहा। लदान की सीमित क्षमताएं इस संकट का एक महत्वपूर्ण कारण रही हैं।

उद्योगों की विवशता

देश में कोयले की कुल खपत का ३० प्रतिशत कोयला रेलों में काम आता है। १७ प्रतिशत लोहा-इस्पात उद्योगों में, २० प्रतिशत विद्युत-उत्पादन में, ३ प्रतिशत सीमेंट-उद्योग में काम में लिया जाता है। शेष ३० प्रतिशत कांच-उद्योग, उर्वरक-उद्योग, सूती वस्त्र-उद्योग तथा अन्य उत्पादक उद्योगों में और सामान्य उपभोक्ताओं के लिए उपलब्ध होता है। देश में उत्खनन किया जानेवाला संपूर्ण कोकिंग कोयला लोहा व इस्पात-उद्योगों के काम आता है। १९७३–७४ में १.३८ करोड़ टन इस्पात तैयार करने के लिए लोहा-इस्पात कारखानों के लिए २.९५ करोड़ टन कोयले की आवश्यकता होगी जबकि लोहा-इस्पात उद्योग की शिकायत यह है कि उत्तम किस्म का कोकिंग कोयला उन्हें उपलब्ध नहीं होता तथा कोयला समय पर कभी नहीं पहुंचता। पांचवीं योजना के अंत तक कोयले की मांग में और वृद्धि होगी तथा हमें १६.५ करोड़ टन कोयले की आवश्यकता पड़ेगी।

पूंजी-विनियोजन का सवाल

कोयला-उत्पादन के वृहत उद्योग पर बड़ी मात्रा में पूंजी-विनियोजन का सवाल हमारे सामने है। इसी बुनियादी मुद्दे पर इस उद्योग का अधिग्रहण किया गया है। राष्ट्रीय कोयला-विकास निगम ने कोकिंग कोयले के उत्पादन की वृद्धि के
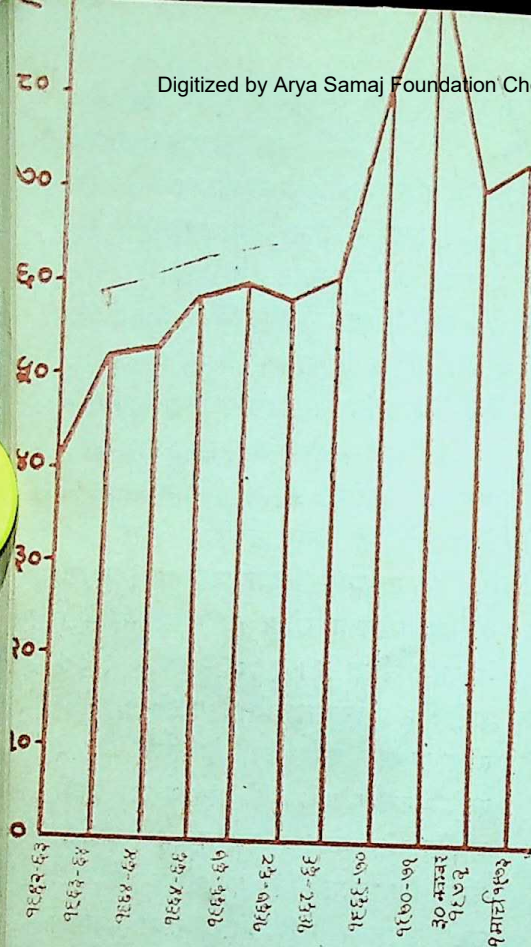
वैगनों के अभाव में कोयले के ढेर

लिए १९७२-७३ में १.८ करोड़ टन से १९७८–७९ तक ४.५ करोड़ टन तक की सिफारिश की है और इस हेतु २९७ करोड़ रुपयों की पूंजी विनियोजित करने के सुझाव रखे हैं। कोयला-उत्पादन में वृद्धि के परिणामस्वरूप कोयले के भाव १०० रुपया प्रतिटन अतिरिक्त उत्पादन के लिए संभावित होंगे, जबकि आवश्यकताओं के अनुरूप मांग के अनुसार १४.३ करोड़ टन के स्थान पर १६.५ करोड़ टन कोयले का उत्पादन बढ़ाने के लिए ७०० करोड़ रुपयों की पूंजी जरूरी है। इस प्रकार पांचवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कोयला-विकास के कार्यक्रमों पर १,००० करोड़ रुपयों की पूंजी लगाना जरूरी है। तभी हम इस व्यापक संकट से छुटकारा पाने में सफल हो सकेंगे।

आर्थिक नुकसान

कोयला-खानों पर पड़े कोयले का लदान समय पर न होने से भी इस उद्योग को भारी हानि उठानी पड़ती है। खानों के पास पड़े ९० लाख टन कोयले का मूल्य ३० करोड़ रुपया होता है। इससे कोयले का संकट ही नहीं उत्पन्न होता अपितु २५ लाख रुपया इस रकम के ब्याज के रूप में भी उद्योग को चुकाना पड़ता है। पूंजी-निवेश के अभाव में खानों पर से कोयला उठाने का प्रबंध नहीं हो पाया है। इसकी शीघ्र व्यवस्था होनी चाहिए।

उद्योग का विस्तार : पांचवीं योजना

पांचवीं पंचवर्षीय योजना के अनुसार कोयला-उत्पादन १४.३ करोड़ टन तक बढ़ा पाने की दृष्टि से योजनाकाल में ३०० करोड़ रुपये आधुनिक उपकरणों के लिए अपेक्षित हैं तथा अन्य आवश्यक कार्यों के लिए पूंजी-विनियोजन सहित कोयला-उद्योग के विकास हेतु ८४३.५ करोड़ रुपये की राशि अपेक्षित है।

बढ़ते भाव : संकट का विस्तार

कोयला-पूर्ति की कमी से आज देश में

कोयले की तंगी सर्वत्र है। कोयले पर आधारित ६७ प्रतिशत औद्योगिक इकाइयां निरंतर संकट-ग्रस्त हैं। खानों पर ६५ रुपया प्रतिटन की दर से मिलनेवाला कोयला कलकत्ता में १७५ रुपया प्रति-टन तक बिक रहा है। हार्डकोक की कीमतें पंजाब में ६०० रुपये प्रतिटन तक पहुंच रही हैं जबकि इसका सामान्य भाव २२० रुपया प्रतिटन के आसपास रहा है। कोयले के बाजार में भी कालाबाजारी सरगर्मी पर है। वैगनों का अभाव, उपलब्धि की समस्याएं इस संकट को निरंतर बढ़ा रही हैं। यदि हमने कोयले के इस बढ़ते हुए संकट से छुटकारा पाने के लिए युद्ध-स्तरीय प्रयत्न नहीं किये तो निश्चय ही हमारा आर्थिक उत्पादन निर्धारित लक्ष्यों से पिछड़ता जाएगा, महंगाई में वृद्धि पर रोक संभव नहीं होगी तथा जनजीवन की विषमताएं निरंतर बढ़ती जाएंगी। कोयला-संकट अनेकानेक समस्याओं को जन्म देगा।

—उच्चतर माध्यमिक विद्यालय,
बल्लभनगर (राजस्थान)

फिल्म्स डिवीजन नहीं फाइल्स डिवीजन

एक उपलब्धि

उक्त लेख में श्री चन्द्रशेखर नायर की चर्चा की गयी है। फिल्म्स डिवीजन के युवा निदेशक श्री नायर ने अपनी फिल्म 'गोल्डन वाइन' पर बर्लिन फिल्म समारोह में प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया है। भारत को यह पुरस्कार पहली बार मिला है। सन १९६० से निरंतर भारत सरकार इस पुरस्कार के लिए प्रयत्न करती रही है। पुरस्कारस्वरूप ७० तोले सोने की एक ट्राफी भारत को प्राप्त हुई है। इसी फिल्म पर बेलग्रेड फिल्म महोत्सव में 'डिप्लोमा ऑव आनर' और ब्राजील फिल्म महोत्सव में श्रेष्ठ फिल्म का 'पदक' भारत को मिला है।
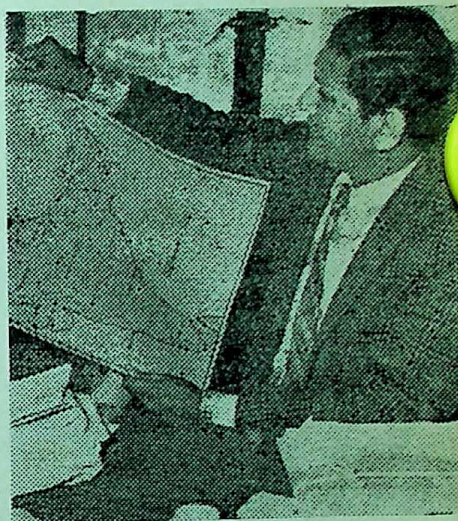
'गोल्डन वाइन' या स्वर्ण लता काली मिर्च की पैदावार पर बड़ी सूझबूझ के साथ बनायी गयी फिल्म है। लघु फिल्म होते हुए भी ३२ वर्ष के युवा प्रतिभासंपन्न निदेशक श्री नायर ने इसमें अपनी मौलिकता का परिचय दिया है।

ब्रह्मचर्य है चेतना का विस्फोट

● भानीराम 'अग्निमुख'

हम सापेक्ष स्तर पर जीते हैं। सापेक्ष स्तर पर हर सत्ता प्रतिपक्ष के संदर्भ पर टिकी है। उससे कटकर उसका अपने-आपमें कोई अर्थ नहीं होता। जब हम सत्य कहते हैं, उस क्षण हम असत्य के प्रतिपक्ष को देख रहे होते हैं। जब हम अहिंसा कहते हैं, उस क्षण हिंसा के प्रतिपक्ष को देख रहे होते हैं। असत्य के नकारात्मक संदर्भ में ही सत्य की व्याख्या होती है। हिंसा के नकारात्मक संदर्भ में ही अहिंसा की व्याख्या होती है। हर पक्ष अपने प्रतिपक्ष का एक विपरीत संदर्भ-मात्र होता है, अपनी वस्तुगत निरपेक्ष (एबसोल्यूट) सत्ता से शून्य होता है। वह अपने-आपमें सत्य नहीं होता। इसलिए हमारा सत्य भी असत्य है, हमारी अहिंसा भी हिंसा है। वह हिंसा की हिंसा है। उसका मात्र नकार है, जैसे अंधकार नकारमात्र है प्रकाश का। अंधकार की वस्तुगत सत्ता नहीं है। हम जिन्हें व्रत कहते हैं, वे विपरीत संदर्भ हैं उनके जिन्हें अव्रत कहते हैं और अव्रत विपरीत संदर्भ हैं उनके जिन्हें व्रत कहते हैं। कुल मिलाकर ये सब वस्तुगत सत्ता—आब्जेक्टिव रियलिटी—से शून्य हैं। अगर महावीर का ब्रह्मचर्य नकारमात्र है सेक्स का तो वह एक प्रतिक्रियामात्र है और, हर प्रतिक्रिया के पीछे विद्यमान रहती है उसके प्रेरक की मूलसत्ता। अतः ब्रह्मचर्य अगर सेक्स का नकार है तो पृष्ठभूमि में वह उसका निषेधमूलक स्वीकार है।

प्रचलित मान्यता में ब्रह्मचर्य का जो अर्थ लिया जाता है वह एक दमनमूलक प्रक्रिया है जिससे मनोस्नायविक विकृतियों के अलावा कुछ निष्पन्न नहीं हो सकता। सेक्स का दमन कुंठाओं को जन्म देगा और कुंठाएं नये-नये रूप धारण कर फूटेंगी। मार्क्विस द् सादे को जेल में रखा गया। वह विकृत कामी था। दमित कामुकता ने एक नया आयाम खोजा। सादे की भूख सहसा बढ़ गयी। वह भेड़िये की तरह खाने लगा। काम-पिपासा क्षुधा बन गयी

और खाना सेक्स का विषय बनकर उसे भीतर से तृप्ति देने लगा। काम-शक्ति अपने-आपमें जीवन-शक्ति से भिन्न नहीं है। काम उसकी अभिव्यक्ति का एक द्वार है। वह जीवन-शक्ति है। फ्रायड जिसे काम-शक्ति या 'लिबिडो' कहता है, कार्ल गुस्तेव जुंग उसे जीवन-शक्ति या 'साइकी' कहता है। बर्ग सां उसे प्राणसत्ता (इलेन वाइतल) कहता है। उसका प्रवाह काम की दिशा में हो रहा था। काम एक प्रकार का नाला था--आउट-लेट। वह बंद हो गया तो प्रवाह दिशा बदलकर होने लगा। मध्यकालीन यूरोप में ईसाई धर्म में काम-दमन आत्म-पीड़न की पिपासा बन गया--'मासोकिज्म'। एक पागलपन से ग्रस्त होकर लोग अपने को कोड़ों से पिटवाने लगे, लोहे की कीलों पर सोने लगे, अपने शरीर को काट-काटकर खून बहाने लगे। ग्रिफिथ टेलर ने 'सेक्स इन हिस्ट्री' में इसे 'फ्लेगेलेशन मेनिया' अथवा कोड़ों से पिटने का उन्माद कहा है। आत्मपीड़न दिशा बदलकर परपीड़न (सादिज्म) बन जाता है। जरा-सा दिशा-परिवर्तनमात्र है यह! मार्क्विस द् सादे परपीड़क था। उसके नाम पर ही 'सादिज्म' संज्ञा बनी। उसे काम-तृप्ति मिलने लगी कोड़े मारने, दांतों से काटने, चाकू से खाल उतारने, घावों से बहता खून चूसने, हत्या करने में। जेल में बंद करने पर काम-तुष्टि अधिक भोजन करने में संतोष पाने लगी।

काम का अतिक्रमण कठिन है। महावीर ने कहा--'कामा दुरतिक्कमा'। हत्यारों का मनोविश्लेषण करने पर अधिकांश दमितकाम के रोगी मिलते हैं। आत्महत्या और परहत्या में मात्र सांयोगिक अंतर है। आत्म-हत्यारा कभी

महावीरजी की एक दुर्लभ प्रतिमा

किसी अन्य की भी हत्या कर सकता है और दूसरों का हत्यारा कभी भी आत्म-हत्या कर सकता है। दोनों के पीछे दमित काम है। वह अपनी तृप्ति जीवन में न पाकर उसके विनाश में पाता है। काम के साथ क्रूरता जुड़ी है। काम दमित होकर

क्रूरता बन जाता हैं। क्रूरता दमित होकर काम बन जाती है।

दमन का एक विकल्प फ्रायड ने दिया है—उदात्तीकरण (सब्लिमेशन)। पाशविक कामवासना का प्रवाह काव्य या कला की दिशा में कोमल रचनात्मक प्रकार से बहने लगता है। दांते का बिए-ट्रिस के प्रति सेक्स उदात्तीकृत होकर 'डिवाइना कामेदिया' में उसे परमसत्ता के रूप में प्रतिष्ठापित कर देता है। माइ-केल एंजिलो की दमित काम-प्रेरणा सीस्टाइन चेपल की दीवारों पर देवदूतों और स्वर्ग-सुंदरियों के चित्रण में अपने को साकार करने लगती है। चेतन-मन के स्तर पर उदात्तीकरण दमित सेक्स को एक नयी अभिव्यक्ति देता है, जिससे अचेतन को तुष्टि मिलती है लेकिन अचे-तन मन के अंधकाराच्छन्न प्रकोष्ठ में सेक्स की सत्ता पाशविक ही रहती है। रक्त-मांस की आदिम-प्यास ही बनी रहती है, जिसकी तृप्ति नहीं हो पाती। 'बियांड प्लेजर प्रिंसिपल' में फ्रायड हताशा के स्वरों में स्वीकार करता है कि काम का दमन हो या उदात्तीकरण, उससे काम की सत्ता नहीं मिटती, उसकी प्यास बनी रहती है, तनाव और खिचाव बना रहता है। अगर मुक्त अभिव्यक्ति मिलती है तो समाज की सत्ता ही समाप्त हो जाती है। इस भयंकर द्वैध से निकलने का कोई मार्ग फ्रायड के पास नहीं था।

अगर ब्रह्मचर्य का अर्थ संकल्प-बल द्वारा सेक्स का निरोध ही हो तो मानव-मन उससे शांति या सुरक्षा कभी नहीं पा सकता, अपितु विकार-ग्रस्त होकर अपने और समाज के लिए वह अभिशाप ही बनेगा। दमन और उदात्तीकरण की प्रक्रियाएं शताब्दियों तक आजमायी जाकर बेकार प्रमाणित हो चुकी हैं। दमन कामी अकाम या निष्काम नहीं हो सकता। अगर हो सकता है तो वही जो पूर्ण-काम है, जिसके मन का गह्वर भर चुका है, परिप्लावित हो चुका है।

फ्रायड जिसे 'लिबिडो' कहता है, एडलर जिसे अहं (ईगो) कहता है, जुंग जिसे जीवन-शक्ति (साइकी) कहता है, बर्गसां जिसे प्राणसत्ता (इलेन वाइतल) कहता है, वह पूर्णता की प्यास है, अबाध स्वा-तंत्र्य की प्यास है, मुक्ति की प्यास है, अपनी मूलसत्ता की प्यास है। शरीर के स्तर पर वह वासना बन जाती है, मन के स्तर पर अहंता, संवेदना के स्तर पर प्रेम। अपनी निर्मल निष्कलुष सत्ता में वही ईश्वर बन जाती है जो कि मूलतः वह है। अतः उसका दमन न उपादेय है, न संभव; क्योंकि उसका विनाश नहीं हो सकता, उसको दमित नहीं रखा जा सकता। महावीर ने फ्रायड द्वारा निरूपित लिबिडो को ओघ संज्ञा कहा है, वह अचेतन प्रेरणा जिससे उत्प्राणित होकर एक बेल बिना किसी बाह्य संज्ञा (अवेयरनेस) के किसी पेड़ के तने से लिपटकर ऊपर उठती जाती है, उसकी शाखाओं की दिशा में,

फैलती जाती है ऊपर—और ऊपर। चेतन-मन की सत्ता बाद की है, वह पूर्व-वर्ती है। चेतन-मन उसे नहीं जानता, वह जानती है उसे, अपनी अचेतन मूल प्रेरणा (इंस्टिक्ट) के माध्यम से ही। चेतना के विकास का एक बिंदु है वह, उससे आगे है चेतना और चेतना से भी आगे है अंततः परम-चैतन्य की निर्मल सत्ता। ओघ संज्ञा उसी आत्मसत्ता के प्रकाशन की एक स्थिति है, चेतना दूसरी और परमचेतना उससे आगे की। काम कोई शक्ति नहीं है जैसा कि फ्रायड समझता है, वह एक द्वार है उस शक्ति के प्रकाशन का जो अपनी शुद्ध-बुद्ध सत्ता में परमात्मा है। उसका दमन कैसे हो सकता है? उसका विकास हो सकता है, परिष्कार हो सकता है। उसे पीछे नहीं धकेला जा सकता, सहयोग और समझ द्वारा ही आगे बढ़ाया जा सकता है। आत्म-चैतन्य के अबाध प्रकाशन, उसके अभिव्यक्ति-द्वारों का व्यापक विस्तार एवं परिष्कार ही काम की निर्जरा में फलीभूत हो सकते हैं, उसकी सत्ता समाप्त कर सकते हैं।

महावीर इसके लिए प्रतिक्रमण व सामायिक की प्रक्रिया सामने रखते हैं। प्रतिक्रमण है—अचेतन के अतल गह्वरों में उतरकर संस्कारों एवं स्मृतियों की सारी परतों को छेदकर उस आत्मसत्ता को पकड़ना, उसे वहीं से ग्रहण करना; और सामायिक है—उसे लेकर तीव्रता से एक-एक समय-बिंदु (क्षण) पर जागरूकतापूर्वक कदम रखते हुए ऊर्ध्वगमन करना। सामायिक एक अंतहीन प्रक्रिया है जो आत्मा की सहज स्वयंप्रज्ञा में विलीन हो जाती है, उसका स्वभाव बन जाती है, प्रतिपल जागरूक चैतन्य के अबाध लोकव्यापी प्रवाह के रूप में। सामायिक जहां क्रिया से स्वभाव बन जाती है, चेतना जहां प्रवाह से सत्ता बन जाती है, वहीं ब्रह्मचर्य का स्फोट होता है—आत्मा का अपनी प्रभुसत्ता में प्रवाह, जो सारे लोक को आवृत्त कर देता है। वह आत्म-चेतना या प्रभु-चेतना ही ब्रह्मचर्य है।

ईसा मसीह कहते हैं—'दोबारा जन्म लिये बिना प्रभु के राज्य में कोई प्रवेश नहीं कर सकता।'

'यह दोबारा जन्म क्या है?'

ईसा मसीह उत्तर देते हैं— 'मैं रक्त और मांस के धरातल की बात नहीं आत्मा के धरातल की बात कहता हूं। जो आत्मा से दोबारा पैदा हो गया, एकदम नया हो गया भीतर से, निष्कलुष और पवित्र हो गया मन से, वही प्रभु के राज्य में प्रवेश करेगा। वे अपने-आप से खाली हो गये हैं और उनमें प्रभु ही भर गया है।' यही ब्रह्मचर्य की स्थिति है—चेतना का क्रांत रूपांतरण, चेतना का अंतः स्फोट, प्रभु में चलना। यह चेतना की निर्ग्रंथ, पावन, अखंड एवं पारदर्शी सत्ता है। ब्रह्मचर्य मनस् क्रांति है—साइकिक रिवोल्यूशन।

—श्वेताम्बर जैन कोठी, नालंदा (बिहार)

आयकर अधिकारी का नोटिस महारानी एलिजाबेथ के नाम

• माइल्स किंगटन

महामहिम महारानीजी,

आपका दिनांक २० जून का 'कर' (इनकम-टैक्स) संबंधी कृपामय फार्म प्राप्त हुआ। उससे ज्ञात हुआ कि आप इस आधार पर कर-मुक्त होना चाहती हैं कि सभी करों की धनराशि अंततोगत्वा आपके या आपकी सरकार के पास ही तो आ जाती है, फिर इस औपचारिक लेन-देन का क्या औचित्य है। लेकिन मेरा आपसे निवेदन है कि नियमानुसार तो आपको पहले कर की धनराशि देनी चाहिए, फिर उसे वापस लेने की मांग करनी चाहिए।

इसलिए मैं आपका कर संबंधी फार्म लौटा रहा हूं। कृपया इसे पुनः भर दें।

आपका आज्ञाकारी सेवक

जे. पी. गारस्टैंग (टैक्स-इंस्पेक्टर)

पुनश्च : मैं विनम्रतापूर्वक आपको सूचित कर रहा हूं कि अब स्वीडन के सम्राट ने भी आयकर देना शुरू कर दिया है।

•

महामहिम महारानीजी,

आपका कर-संबंधी फार्म कृपापूर्वक प्राप्त हुआ। उससे ज्ञात हुआ कि आप एक धर्मार्थ ट्रस्ट की अध्यक्षा भी हैं और उसमें आपको अपनी ओर से काफी धनराशि खर्च करनी पड़ती है।

लेकिन मैं निवेदन करूंगा कि ब्रिटिश रायल्टी नामक जिस संस्था की आप अध्यक्षा हैं वह एक धर्मार्थ संस्था नहीं है, क्योंकि धर्मार्थ संस्था वह होती है जो अपनी पूंजी को दूसरों के लाभ के लिए प्रयोग में लाती है। मेरी राय में तो ब्रिटिश रायल्टी का नये सिरे से नामकरण किया जाना चाहिए और उसे एक व्यापारिक संस्थान माना जाना चाहिए।

फिर आपने पृष्ठ ३ पर जिस 'एम. एम. एस. ओ.' शब्द का 'संक्षेप' में प्रयोग किया है, उसे मैं ठीक तरह से समझ नहीं पाया हूं। कृपया स्पष्ट व्याख्या करें।

आपका आज्ञाकारी सेवक

जे. पी. गारस्टैंग (टैक्स-इंस्पेक्टर)

•

महामहिम महारानीजी,

आपने मुझे बताया है कि 'एम. एम. एस. ओ.' का अर्थ माई मैजेस्टीज स्टेशनरी आफिस' है। सूचना के लिए धन्यवाद।

आपके अनुसार इस संस्थान के निदेशक या ऐसी छोटी अवस्था के लोग जो निदेशक बनने के फिलहाल अधिकारी नहीं हैं, अकसर आम सभाओं में, या किसी छोटे-मोटे उद्घाटन-समारोह में या बड़े दिन पर टेलीविजन पर भाषण करते हैं।

फिर आपने यह भी बताया है चूंकि इस तरह के कामों के लिए किसी प्रकार की धनराशि नहीं दी जाती इसलिए आयकर का प्रश्न ही नहीं उठता। लेकिन मुझे यह स्पष्टीकरण कुछ भ्रमपूर्ण लगता है। चूंकि 'इनकम और कारपोरेशन टैक्स ऐक्ट १९७०' में इसका स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि किसी संस्था के निदेशक को मिलनेवाले लाभ और पानी की तरह पैसा बहानेवाले खर्चों पर आयकर लगना चाहिए, जब तक कि यह प्रमाणित न किया जाए कि उनके सारे खर्चे उनके दफ्तरी काम-काज के लिए जरूरी हैं।

अब हम कुछ ऐसे व्यक्तिगत खर्चों की चर्चा करते हैं जिनका कि आपने भी उल्लेख किया है। इसमें कुछ खर्चे तो आवश्यक हैं ही, लेकिन कुछ की गिनती फिजूलखर्ची में की जा सकती है। उदाहरण के रूप में २० मई को आपने बकिंघम पैलेस के मुख्यालय में ४,००० व्यक्तियों को दोपहर के भोजन पर आमंत्रित किया और उस दावत पर ८,०४० पौंड का खर्चा हुआ। क्या एक ही समय पर इतने अधिक बड़े-बड़े व्यापारियों को बुलाना जरूरी था?

आपका आज्ञाकारी सेवक,

जे. पी. गारस्टैंग (टैक्स-इंस्पेक्टर)

●

महामहिम महारानीजी,

आपने इस बात की ओर संकेत किया है कि उस दिन भोजन के आयोजन का

महारानी को भेजे गये नोटिस के लिफाफे का चित्र

On Her Majesty's Service

INLAND REVENUE
PRIVATE

Queen Elizabeth II,
Managing Director,
British Royalty Ltd.,
BUCKINGHAM PALACE,
London, S.W.1.
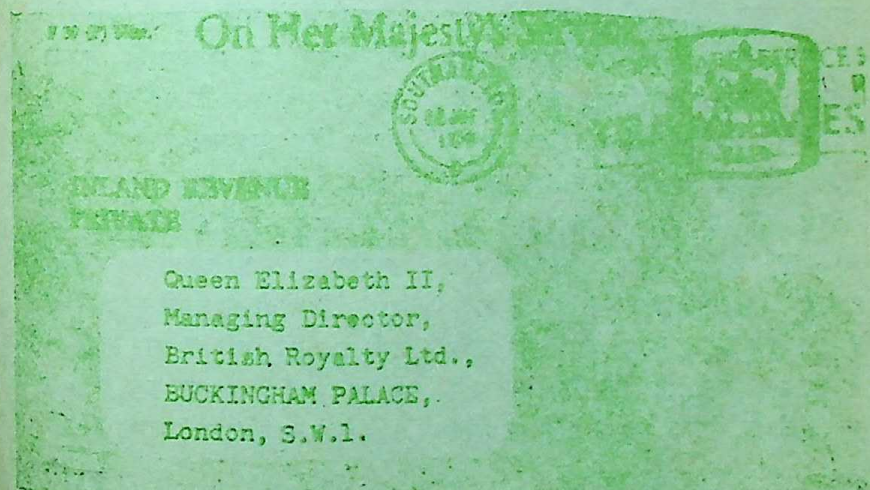
उद्देश्य केवल व्यापारिक नहीं था बल्कि आपकी किसी संस्था द्वारा अद्भुत कार्य करने के उपलक्ष्य में 'गार्डन पार्टी' की गयी थी। मैं यह भी मानता हूं कि आपने उस दिन दो सैंडविच से ज्यादा कुछ नहीं खाया। इसलिए वहां जो खर्चा हुआ उसे आवश्यक खर्चा माना जा सकता है।

लेकिन यहीं पर मैं आपके व्यापार-संबंधी क्षेत्राधिकार की चर्चा करना चाहूंगा। आपने कर-मुक्त होने के लिए एक तर्क यह भी दिया है कि आपकी कंपनी (बकिंघम पैलेस, विंडसर कैसल, सैंडरिंघम और दूसरी कंपनियां) के सभी मालिक और प्रबंधकों के व्यवसाय और रिहायश के सभी खर्चे उनकी ड्यूटी के अंतर्गत गिने जाने चाहिए। यह बात मेरी समझ में नहीं आ रही है और इस संबंध में आपके विचार जानना चाहूंगा।

आपका कहना है कि सार्वजनिक सभाओं में भाषण करने के लिए या टेलीविजन पर बोलने के दौरान भाषणकर्ता जो कपड़े पहनता है उसके खर्च को भी "करमुक्त खर्चे' में शामिल किया जाना चाहिए। फिर आपने पिछले वर्ष भर में जितने भी कपड़े खरीदे उस सबका खर्चा आपने करमुक्त मद के खर्चे में डाल दिया। लेकिन यहीं पर मैं आपका ध्यान इस ओर जरूर केंद्रित करूंगा कि उसमें से कुछ खरीद तो असंतुलित ढंग से केवल व्यावसायिक दृष्टिकोण से ही की गयी थी।

आपने कहा है कि वेस्टमिंस्टर में एक छोटे से व्यापार संबंधी दौरे पर आने और जाने के लिए आपने २६७ पौंड की एक राजपोशाक और कुछ आभूषण खरीदे थे, क्या सचमुच इसकी बहुत आवश्यकता थी?

आपका आज्ञाकारी सेवक,
जे. पी. गारस्टैंग (टैक्स-इंस्पेक्टर)

●

महामहिम महारानीजी,

आपने अपने स्पष्टीकरण में कहा है कि ब्रिटिश रायल्टी की निर्देशिका के रूप में आपको २४ घंटे ही अपने दायित्व का पालन करना पड़ता है। इसलिए आप जहां कहीं भी जाती हैं या रहती हैं वहां आपको कंपनी के भी कुछ कामकाज करने पड़ते हैं। आपके इस तर्क पर मैं पुनः विचार करूंगा।

अब मैं कंपनी के परिवहन-खर्चों की ओर आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं। कभी तो आप बड़ी कार में जाती हैं, कभी समुद्री जहाज में, तो कभी रेलगाड़ी या किश्ती में। कभी आप हेलीकॉप्टर से जाती हैं तो कभी शौक के लिए ढेरों घोड़ों की कतार में घुड़सवारी करती हैं। क्या ये सब तरह के परिवहन के साधन आपके लिए आवश्यक हैं? क्या यह संभव नहीं है कि आप अपने विभिन्न कार्यों के लिए एक ही तरह के परिवहन-साधन का उपयोग करें? जिस प्रकार आप 'हाउस ऑव कामंस' में घोड़ों की बग्घी पर आती हैं, ठीक उसी तरह की बग्घी पर आप घोड़ों की परेड में भी जाती हैं। क्या इन दोनों स्थानों पर छोटी कार में नहीं जाया जा सकता?

फिर मैं आप द्वारा दो सप्ताह में एक बार हाथ या नख-चिकित्सा पर किये जानेवाले खर्चे के बारे में भी कुछ जानना चाहूंगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
जे पी. गारस्टैंग (टैक्स-इंस्पेक्टर)

●

महामहिम महारानीजी,

आपने अपने स्पष्टीकरण में कहा है कि घोड़ों की कतार और छोटी कार के अंतर और उसके औचित्य को समझने के लिए यह जरूरी है कि हम किसी ऊंचे भवन पर से इन दोनों चीजों को देखें। परिवहन के हर साधन की अपनी गरिमा और उसका औचित्य है?

यह ठीक है कि पूरे लश्कर के साथ बकिंघम पैलेस में जाने और उत्साही दर्शकों की भीड़ का हाथ हिलाकर अभिवादन स्वीकार करने का अपना एक अलग ही महत्त्व है।

मैं आपके इस तर्क से पूरी तरह सहमत हूं, क्योंकि दर्शकों का अभिवादन स्वीकार करना भी आपकी एक नैतिक जिम्मेदारी है। फिर आप द्वारा दो सप्ताह में एक बार हाथ या नख-चिकित्सा का खर्च और औचित्य भी मेरी समझ में आ गया है।

यहीं पर मैं आपसे एक नया प्रश्न पूछना चाहूंगा। आपके अनेक ऐसे समारोह होते हैं जहां बहुत बड़ी तादाद में संगीतज्ञों को बुला लिया जाता है। क्या आपके हर स्वागत-समारोह में संगीतज्ञों का बुलाया जाना जरूरी होता है?

आपका आज्ञाकारी सेवक,
जे. पी. गारस्टैंग (टैक्स-इंस्पेक्टर)

●

महामहिम महारानीजी,

आपका वह स्पष्टीकरण भी बिलकुल सही है जिसमें आपने विभिन्न स्वागत-समारोहों में विभिन्न संगीतज्ञों की टोली को आमंत्रित करने का तर्क प्रस्तुत किया है। यह ठीक है कि सैनिक बैंड का उपयोग 'बीटिंग ऑव द रिट्रीट' के अवसर पर तो किया जा सकता है, लेकिन किसी बिजली की फैक्टरी के उद्घाटन के समय नहीं।

यहीं पर मैं आपसे कुछ फिल्म या रंगमंच की बात भी पूछना चाहूंगा। क्या यह जरूरी है कि जब आप सिनेमा देखने या कोई नाटक देखने जाएं तो पूरा-का-पूरा सिनेमा हाल या रंगमंच की पूरी रंगशाला को ही किराये पर ले लिया जाए?

फिर आपका डाकखर्च भी कुछ जरूरत से ज्यादा ही दिखायी पड़ता है। आप अपने जन्मदिन के अवसर पर देश-विदेश में सैकड़ों बधाईतार भेजती हैं। क्या यह सब भी आपकी व्यावसायिक गतिविधियों का एक अंग है?

इसके अतिरिक्त मेरे पास कम-से-कम ९८ और प्रश्न हैं, लेकिन उनको पूछने से पहले मैं उक्त प्रश्नों का स्पष्टीकरण चाहूंगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
जे. पी. गारस्टैंग (टैक्स-इंस्पेक्टर)
('पंच' से साभार)

अकेला साल

बीत रहा अकेला साल
कंधे पर डाले हुए
धूप का गरम शाल

चमक रहा आसमान पहले से ज्यादा
ठंडी हैं हवाएं, पर गर्म है इरादा
तरुणाई ग्रंथ छोड़, सड़कों पर
भूख-प्यास से घायल, सबका स्वर है

भीड़ों के बीच खड़े हम
हिला रहे बेमन रूमाल
बीत रहा अकेला साल

नदियों का प्यासा जल फसलों को पी गया
कई बार मर-मरकर आदम फिर जी गया
सारा का सारा जीवन शंकाग्रस्त है
जो भी मिलता है दिखता बेहद त्रस्त है

मुसकानें डूबी महंगाई में
यह भी इस वर्ष का कमाल
बीत रहा अकेला साल

फिर भी जानेवाले साल को प्रणाम
हम मुसाफिरों का तो है केवल राम
आनेवाले नूतन वर्ष के लिए
अनगिन इच्छाएं हैं, हम अगर जिए

आगत के स्वागत में खड़े हैं
सांसों से भी अधिक सवाल
बीत रहा अकेला साल

—रमानाथ अवस्थी
द्वारा आकाशवाणी, नयी दिल्ली-११०००१

शोर से दूर होकर
आदमी का मन
कितना बढ़ जाता है.

राजेन्द्र अवस्थी

क्यों और क्यों नहीं?

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, 'रेणु', महादेवी वर्मा, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ अश्क, इलाचंद्र जोशी, राजेन्द्र यादव, लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी, कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा, भवानीप्रसाद मिश्र, शिवप्रसाद सिंह एवं मन्नू भंडारी पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। अब प्रस्तुत है इस लेखमाला के अंतिम लेखक राजेन्द्र अवस्थी

हवाओं के पीछे भागना मेरा स्वीकार नहीं

राजेन्द्र अवस्थी
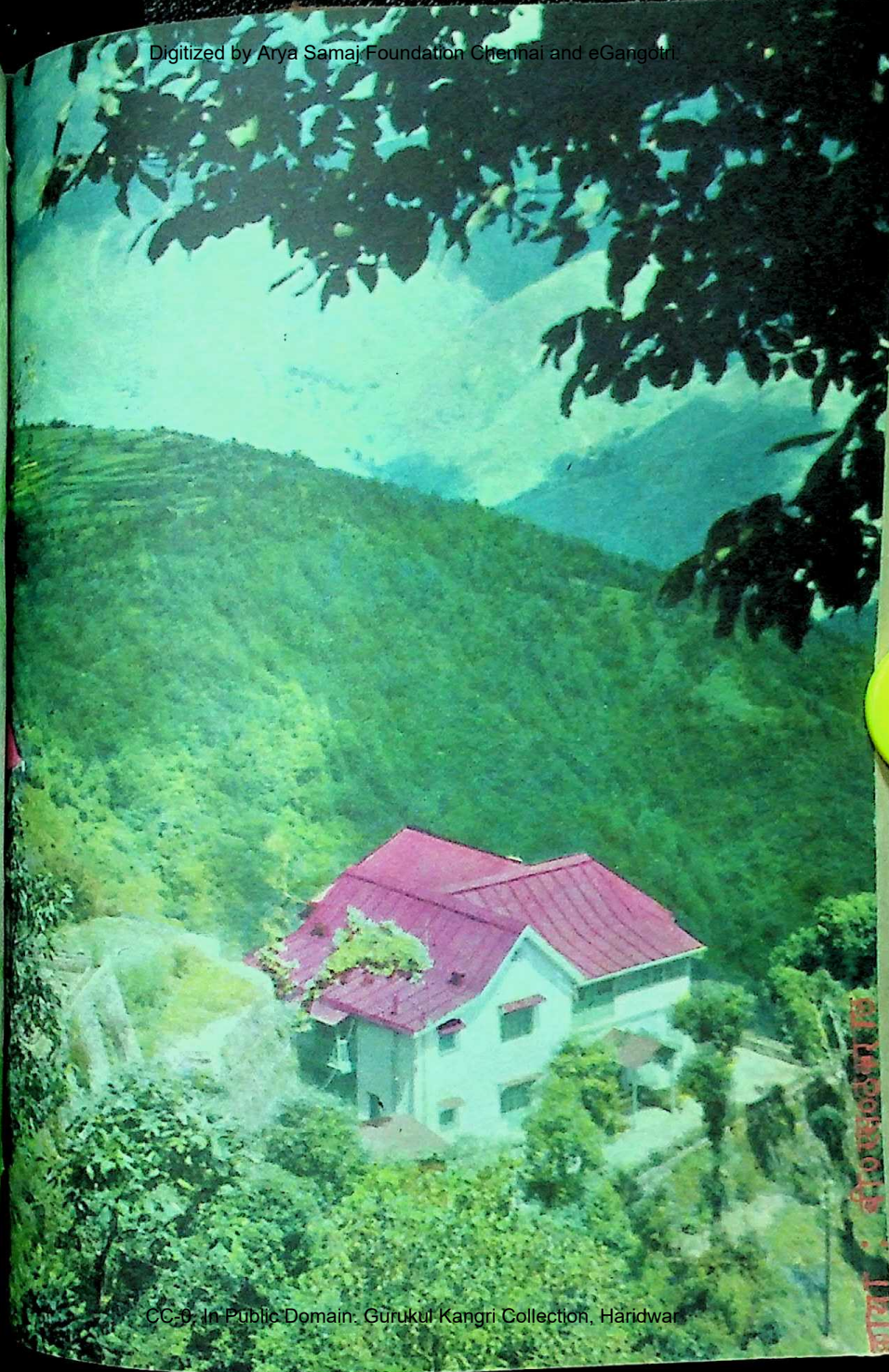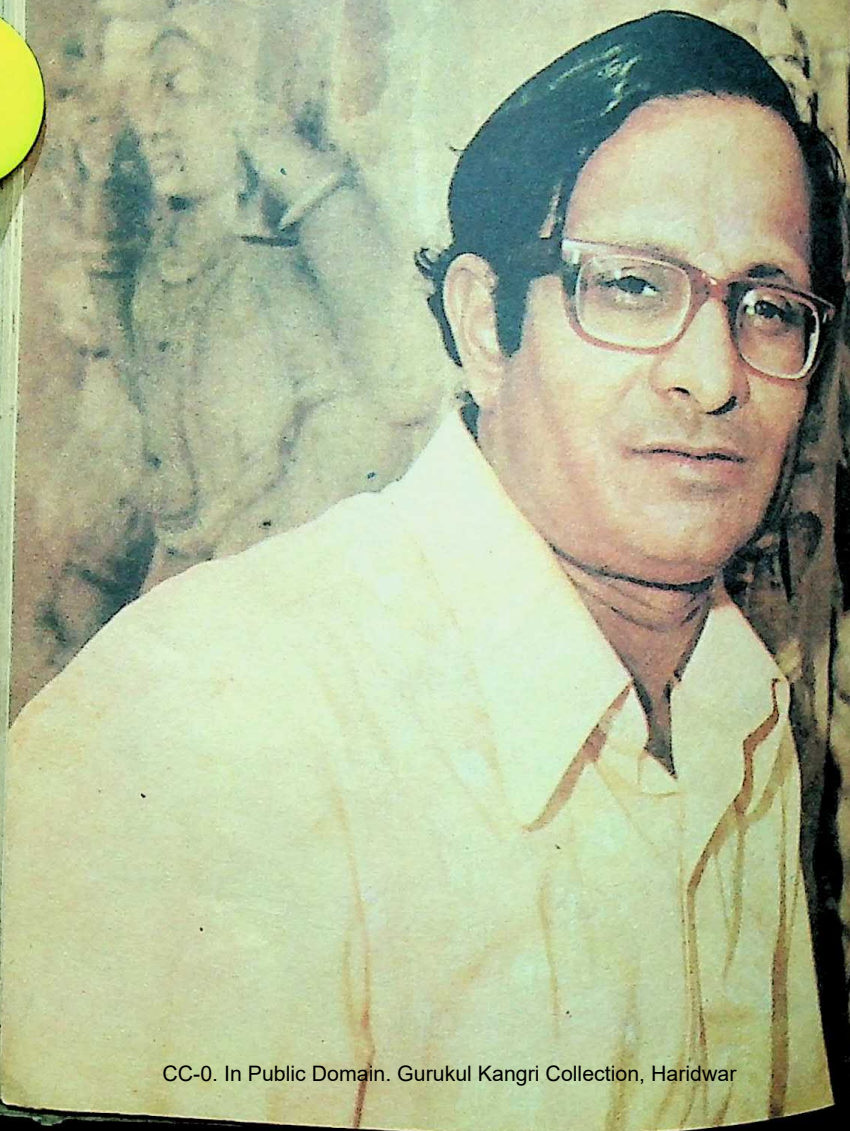
डॉ. शशि शर्मा, नयी दिल्ली : (१) अपने लेखन में परंपरामुक्ति की बात करते हुए क्या कभी व्यावहारिक जीवन में आपने अपने को परंपराबद्ध पाया है ? यदि हां, तो वे कौन-से क्षण हैं ?

(२) 'बीमार शहर' उपन्यास में शेखर के जीवन को जीते हुए क्या व्यक्ति पूर्णता का आभास पा सकता है ?

(१) कई बार ऐसे क्षण आये हैं। अपने पिता की मृत्यु के बाद काम करते समय ऐसे प्रसंग आये कि मेरा मन विद्रोह कर उठा, लेकिन जो चेहरे मुझे घेरे हुए थे, उन्हें बार-बार देखते हुए मैं सांस टूटते रोगी की तरह क्षीण होता गया और अंत में मुझे उनके हाथों समर्पित होना पड़ा। पिता की आत्मा की शांति का प्रश्न था!

(२) मेरा खयाल है शेखर एक पूर्ण जीवन का प्रतीक है। यदि वह पूर्णता मैं न देखता तो शायद न लिखता।

रीटा मल्होत्रा, दिल्ली : प्रेम किससे करना चाहिए, यामिनी या कामिनी से ?

अपने आपसे और अपने मित्रों से।

रेणु गुप्ता, दिल्ली : आपने जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' अवश्य पढ़ी होगी, एक जगह लिखा है—'नारी तुम केवल श्रद्धा हो'। ये शब्द कहां तक सार्थक हैं ?

आप स्वयं इन पंक्तियों को ध्यान से पढ़िए—'केवल श्रद्धा हो।' अर्थ यह हुआ, और कुछ नहीं हो। श्रद्धा पूजा की वस्तु होती है, मैं नारी को इतने सीमित दायरे

में नहीं देखता।

सरोज गुप्ता, दिल्ली : (१) आप किसी वाद के चक्कर में आते दिखायी नहीं देते---क्यों?

(२) अच्छा संपादक बनने के लिए व्यक्ति में किन गुणों की आवश्यकता है?

(१) किसी वाद ने मुझे कभी प्रभावित नहीं किया। सारे वादों के ऊपर मैं व्यक्ति की निजी सत्ता को सर्वोपरि मानता हूं। जब व्यक्ति की निजता का समाजीकरण हो जाता है तो शेष जो कुछ बचता है उसे मैं 'भेड़ों का झुंड' मानता हूं। इतिहास ने कभी इस झुंड को जगह नहीं दी।

(२) अच्छा संपादक बनने के लिए किन गुणों की आवश्यकता है, यह तो मैं नहीं जानता; हां, अवगुण जरूर बता सकता हूं---वे हैं उसका सनकी, मनमौजी और घुमक्कड़ होना।

जाहिदा, दिल्ली : आपको फूल से प्रेम है या कांटों से?

दोनों दीजिए, प्रेम तो दोनों से किया जा सकता है। प्रेम का रास्ता 'एक' नहीं है।

इन्द्रजीत कौर, दिल्ली : अगर आप संपादक न होते तो क्या होते?

सब्जी बेचनेवाले से प्रधानमंत्री तक कुछ भी। आखिर प्रजातंत्र में होने का 'सोचने' का अधिकार तो कोई नहीं छीन सकता।

सन्तोषकुमारी शिवहरे, सोहागपुर : आप अपने आपको 'मूडी' कहते हैं, ऐसा क्यों? दिल्ली का वातावरण आपको कैसा लगा? आपका पारिवारिक जीवन आपकी इच्छानुरूप है?

एक प्रश्न में तीन प्रश्न—तीनों का उत्तर एक नहीं हो सकता। 'मूड', 'दिल्ली का वातावरण' और 'पारिवारिक जीवन'—तीनों को यदि जोड़कर देखा जाए तो हाथ लगी मात्र एक चिंता। इसी से मैं हमेशा दूर भागता रहा हूं।

मदन मिलन, पटना : (१) बतौर हैसियत कथाकार आपकी नजरों में

लेखन में व्यस्त

मनमौजी घुमक्कड़

सामान्य-जन की सही परिभाषा क्या है?

(२) क्या आप आज की कहानियों से पूर्णतया संतुष्ट हैं?

(१) सामान्य-जन' यानी साधारण लोग, आम लोग; यानी हम, आप, मज-दूर, व्यापारी, शासक, नेता, अभिनेता—इनमें कौन सामान्य नहीं है?

(२) आज की हिंदी कहानी का विकास बहुत निराशाजनक नहीं है।

विमल दीक्षित, जौनपुर : हिंदी में घिसी-पिटी रचनाओं की लोकप्रियता क्या उच्च स्तर के साहित्य के लिए चुनौती नहीं है? आप इस संदर्भ में कितने जाग-रूक हैं और क्या कर रहे हैं?

कदापि नहीं! घिसी-पिटी रचनाएं हिंदी में ही नहीं, विदेशी भाषाओं में भी ढेर लिखी जाती हैं। समय के प्रवाह में वे ठहर नहीं पातीं, बल्कि उनका अस्तित्व ही एक क्षण का होता है। क्षणिक साहित्य कभी चुनौती नहीं बन सकता, इसलिए चिंता की बात नहीं है।

शशि पराड़कर, बड़नगर (म. प्र.) : 'जंगल के फूल' के बाद आपकी ऐसी कृति फिर देखने में नहीं आयी। कारण?

मैं आपसे सहमत नहीं हूं। 'जंगल के फूल' का जन्म एक विभिन्न कथा-क्षेत्र और भाव-भूमि में हुआ था। 'बीमार शहर' का दायरा दूसरा है और वह कई अर्थों में 'जंगल के फूल' से अधिक सशक्त है। यदि पहली कृति में मैंने फूलों से भरे एकांत जंगलों की दुनिया को उठाया है तो 'बीमार शहर' में आदमियों के जंगलों का हुजूम है। दोनों दुनिया अलग हैं और अपने आपमें समर्थ भी हैं।

घर में बचे हुए क्षण
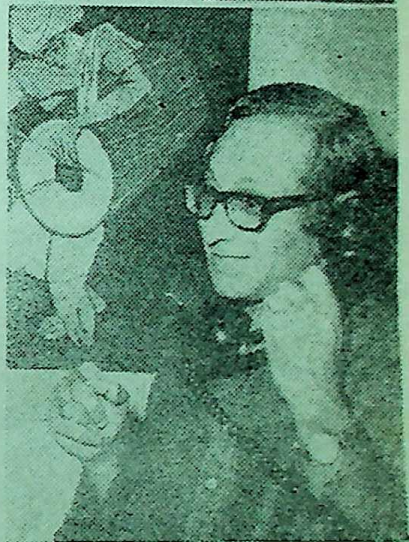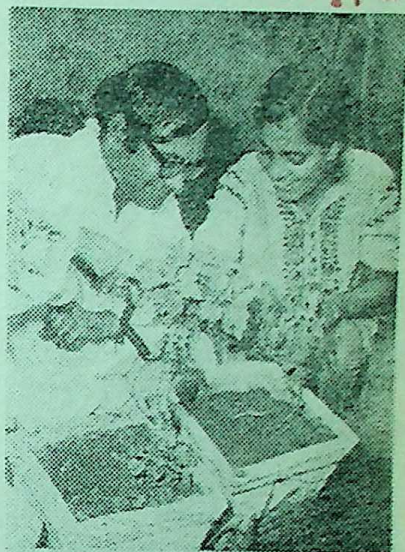
हरचरण सिंह, सागर : आपकी रचनाओं में सत्य कहां तक सार्थक हुआ है?

मैं असत्य का घोर विरोधी हूं। मैंने जो कुछ लिखा है सत्य से दूर नहीं है। इसलिए मेरे लेखन के माध्यम से मेरे जीवन को ढूंढ़ा और परखा जा सकता है।

सलिलकुमार दीक्षित, शिवपुरी : लेखक से संपादक बनने पर क्या कोई दृष्टि-परिवर्तन आते हैं?

अवश्य। लेखक एक व्यक्ति होता है, संपादक एक संस्था—दोनों में थोड़ा नहीं, जमीन-आसमान का अंतर है।

आदर्श प्रहरी, झांसी : (१) आज की परिस्थितियों में साहित्यकार का दायित्व क्या होना चाहिए?

(२) बाल पत्रिका 'नंदन' और 'कादम्बिनी' के संपादन तक कोई स्मरणीय बात?

(१) इसका उत्तर पाठशाला के शिक्षक अथवा विश्वविद्यालय के विभागाध्यक्ष अधिक चतुराई से दे सकेंगे।

(२) 'सारिका' और 'नंदन' के पहले अंक निकालकर यदि मैंने 'आदिपुरुष' का काम किया है तो 'कादम्बिनी' को 'परित्यक्ता' और फिर "विधवा' के रूप में पाया है।

वली मोहम्मद कुरैशी, बाड़मेर : आपकी लेखकीय कला के विकास में आपके परिवार ने सहयोग किया अथवा नहीं?

कई बार इस बारे में मैं लिख चुका हूं। 'परिवार' से अर्थ यदि मात्र पत्नी है तो मेरा उत्तर नकारात्मक है और यदि उसमें मित्र भी शामिल हैं तो वह स्वीकारात्मक होगा।

नारायण दत्त, पटियाला : (१) क्या आप उपन्यासों में आंचलिकता की व्याख्या आप केवल भाषा संबंधी कर सके हैं या विषयगत?

(२) क्या हिंदी का अति आधुनिक उपन्यास विषयगत आंचलिकता को लेकर नहीं चल रहा?

(१) आंचलिकता को लेकर मैंने एक विस्तृत भूमिका 'श्रेष्ठ आंचलिक कहानियां' (प्रकाशक: पराग प्रकाशन, विश्वास-नगर, शाहदरा, दिल्ली–३२) में लिखी है। आपकी रुचि हो तो पढ़ लें।

(२) मेरा तो यही विचार है।

सुषमा, इलाहाबाद : (१) आपकी कृतियों का प्रेरणा-स्रोत क्या है?

(२) साहित्यकार, पत्रकार में क्या अंतर है? क्या अपने जीवन में आप दोनों को परस्पर-विरोधी अनुभव करते हैं?

(१) एक पुरुष और अनेक नारियां।

(२) दोनों के बीच कहीं संधि-रेखा है भी और नहीं भी। एक बात निश्चित है कि पत्रकार ने साहित्यकार को बचा लिया है, अन्यथा वह भी रिपोर्टिंग का काम करने लगता। पत्रकार का अस्तित्व क्षणिक है, साहित्यकार एक शाश्वत दुनिया का आदमी है।

वीणापाणि, इलाहाबाद : वर्तमान प्रतिबद्धतापूर्ण व्यवस्था में साहित्यकार का क्या भविष्य है?

प्रतिबद्ध होने का संबंध मात्र वर्तमान से नहीं है। साहित्यकार चाहे जिस काल में जिये, विना प्रतिबद्ध हुए वह अपना अस्तित्व रख ही नहीं सकता। मैं स्पष्ट रूप से कह सकता हूं कि प्रतिबद्धता साहित्य-सृजन की पहली शर्त है, इसलिए उसका भूत और भविष्य नहीं ढूंढ़ा जा सकता।

चन्द्रप्रभा कौशल, पटियाला : (१) क्या 'बीमार शहर' नये संबंध मुक्त-जीवन की कल्पना तथा 'फ्री सेक्स' का दावेदार मात्र नहीं?

(२) 'जाने कितनी आंखें' आंचलिक उपन्यास में विषयगत आंचलिकता ही दृष्टिगोचर होती है, जबकि आंचलिक उपन्यास में स्थानीय भाषा का भी कम महत्त्व नहीं होता, इसलिए इस उपन्यास को विषय के आधार पर आंचलिक कहना उचित नहीं लगता, आपकी प्रतिक्रिया?

(१) नहीं। 'बीमार शहर' एक जड़ता के प्रति विद्रोह है और जो रूढ़-परंपराओं और जर्जर दृष्टि के सहधर्मी बनकर एक गतिशील जीवन के विरोधी हैं, उनके लिए एक चुनौती है।

(२) लगता है, आपने बिना उपन्यास पढ़े यह प्रतिक्रिया व्यक्त कर दी है। 'जाने कितनी आंखें' बुंदेलखंड के जन-जीवन का एक अंग है और उसमें वहां की भाषा का प्रयोग कम नहीं हुआ। विषयगत और
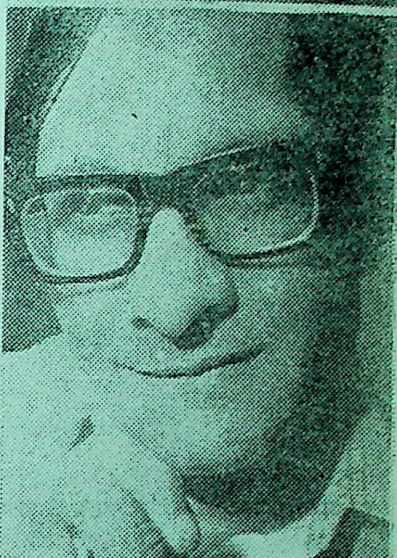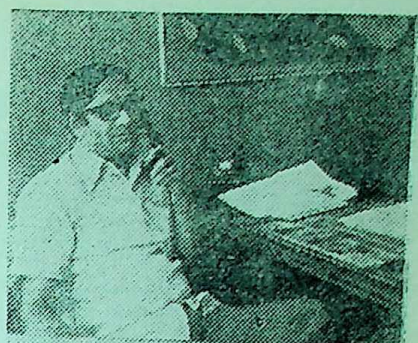
ऊपर : व्यस्तताओं के बीच जीते हुए क्षण
नीचे : क्या रखा है इन बातों में !

भाषागत जैसे भेद रस-शास्त्रियों से पूछे जाने चाहिए।

देवीलाल पंवार, जोधपुर : साहित्य की अनेक प्रवृत्तियों में से 'समाजवादी यथार्थवाद' भी एक प्रवृत्ति है। 'समाजवादी यथार्थवाद' को परिभाषित करते हुए यह बताएं कि आपके उपन्यासों में इस प्रवृत्ति का कहां तक निर्वाह हुआ है?

एक आदमी का यथार्थ जब इतना व्यापक हो जाए कि वह समूची वर्ग-चेतना का प्रतिनिधित्व करने लगे, तब वह 'समाजवादी यथार्थ' बन जाता है। इस दृष्टि से मेरे सभी उपन्यासों और कहानियों में वह मिलेगा।

जोधालाल शाह, दिल्ली : आपने परतंत्र भारत देखा और स्वतंत्र भारत को देख रहे हैं, दोनों अवस्थाओं में आप सर्वसाधारण की दैनंदिन स्थिति से कुंठित हैं। आप समाज-व्यवस्था को क्या रूप देना चाहते हैं?

परतंत्र भारत के अंतिम चरण में मेरी आयु सोलह वर्ष की थी। अब 'किशोर' और 'युवा-भारत' दोनों को देखता हूं तो मन भटक जाता है—बहुत कुछ समझ के परे है। राजनीति किसी भी देश के जीवन को इतना आक्रांत कर सकती है कि वह भयावह हो उठे, कम समझ में आता है।

समाज-व्यवस्था को एक रूप देना भारत-जैसे निरक्षर देश के किसी भी लेखक के वश के बाहर है।

अतुलकुमार, चंदौसी : लेखक के व्यक्तित्व और वातावरण का प्रभाव उसके साहित्य में कहां तक होता है?

लेखक का व्यक्तित्व उसके परिवेश, चिंतन और अध्ययन से बनता है। किसी भी साहित्य को लेखक से अलग नहीं किया जा सकता है। जहां लेखक मात्र तटस्थ द्रष्टा बनकर रह जाएगा, वहां वह जैनेन्द्रकुमार की भाषा में बात करने लगेगा।

देवेन्द्रकुमार श्रीवास्तव, बैतूल (१) महाशय, 'कादम्बिनी' मासिक पत्रिका में आपके द्वारा संपादकीय के रूप में 'काल-चिंतन' में जो विचार व्यक्त किये जाते हैं उनके चिंतन-मनन से ऐसा अनुभव होता है कि आपके विचार कवींद्र रवींद्र से प्रभावित हैं और भाषा तथा शैली माखनलालजी से। मेरा यह अनुमान कितना सत्य है?

(२) 'काल-चिंतन' में व्यक्त किये गये अब तक समस्त विचार क्या पुस्तकाकार प्रकाशित करने की कोई योजना है?

(१) आपको स्पष्ट बता दूं—मुझे रवींद्रनाथ का छायावादी सैलाब कभी पसंद नहीं आया और माखनलाल चतुर्वेदी-जैसी ओजस्विता का अवसर ही नहीं मिला। 'काल-चिंतन' विशुद्ध रूप से मेरा आत्म-चिंतन है। उसमें छायाओं का स्पर्श शायद समय की व्यापकता ही हो सकता है।

(२) फिलहाल नहीं।

सदानन्द सुमन, मेरीगंज (पूर्णियां) : अपने लेखकीय जीवन की सबसे उल्लेखनीय घटना किसे मानते हैं? आप पर इसका क्या प्रभाव पड़ा?

अपनी एक पुरानी कविता की कुछ पंक्तियां उद्धृत करना चाहूंगा :

दफ्तर में बंद फाइलें
और जीवन-घटनाओं के क्रम
मौके - बे - मौके

ठाकरसी के
टेरीन ब्लेंडेड फैब्रिक्स
सूटिंग्स
शर्टिंग्स
प्रिंट्स
ठाकरसी
ग्रुप ऑफ मिल्स

पढ़ने के लिए--
पिन लगी लाल चिन्धियां
कितना खोजिएगा
समय है आपके पास ?

पुनीत अग्रवाल, कासगंज : आप अपनी किस रचना को सर्वश्रेष्ठ कह सकते हैं ?

जो लिखी जानी है।

विश्वम्भरप्रसाद शर्मा, सुजानगढ़ : आपके लेखन का मूल उद्देश्य क्या है ? क्या अपने उद्देश्य में आप सफल रहे हैं ? कहां तक ?

जन्म आपकी विवशता है, मृत्यु आपके अवश क्षण, इनके बीच उद्देश्य ? —अपना उपहास स्वयं करना उचित नहीं।

कर्नल अजय सिन्हा, मुंगेर : क्या आप कभी आर्थिक विवशता के चंगुल में फंसे हैं ? ऐसी स्थिति में आपने क्या किया ?

आज तक कर्ज नहीं लिया और भिक्षा-पात्र स्वीकार नहीं किया, बाकी सब करना पड़ा है।

योगेन्द्र दिवाकर, सतना : अंतरानुभूति के अवलोकन में आपको ब्रह्मरस मिलता है या नहीं ?

आज तक ढूंढ़ने की कोशिश नहीं की। जब आत्मरति और आत्मरस से संतोष मिल जाए, तभी ब्रह्मरस ढूंढ़ा जाता है। वह आयु न अभी आयी है और न शायद कभी आएगी।

त्यस्तनउने, पूरनपुर : आपकी दृष्टि में मानव के अमूल्य क्षण कौन-से हैं ?

प्रत्येक क्षण अनमोल है, मूल्यों की पहचान है—परख।

आनन्दप्रकाश भारद्वाज, पूरनपुर : आपके जीवन में यदि कोई मनोरंजक घटना घटी हो तो कृपया उसे बताइए ?

नाटक या सिनेमा का विदूषक बनने का सौभाग्य आज तक नहीं मिला।

श्याम वशिष्ठ, सुजानगढ़ : (१) क्या आप पत्रकारिता को एक मिशन मानकर चलते हैं ?

(२) क्या 'बीमार शहर' एक नया प्रयोग, एक नयी शैली और एक नया अंदाज माना जा सकता है ?

(१) लेखन को, पत्रकारिता को नहीं, वह मात्र जीविका का एक साधन है।

(२) मैं तो कहूंगा—अवश्य !

डॉ. सुशीलकुमार फुल्ल, पालमपुर : विख्यात कथाकार राजेन्द्र अवस्थी एवं 'कादम्बिनी' के संपादक राजेन्द्र अवस्थी में कोई विरोधाभास ?

बहुत अधिक — राजेन्द्र अवस्थी एक व्यक्ति की सभी कमजोरियों और अच्छाइयों से ग्रसित है। संपादक राजेन्द्र अवस्थी की तलाश केवल अच्छाइयों के लिए है।

आनन्द कृष्ण, फर्रुखाबाद : आपकी पत्नी आपके लेखन में दखल देती हैं या नहीं ?

भाई, ऐसी बात खुले आम पूछकर विसंगतियों से भरे महाभारत को जन्म क्यों देना चाहते हैं !

—एफ-१२, जंगपुरा एक्स. नयी दिल्ली-१४

कवि दिनकर के साथ मेरी मनोयात्रा

● डॉ. नगेन्द्र

दिनकर से मेरा परिचय सन १९३५ में हुआ। यह परिचय परोक्ष ही था और एक विचित्र परिस्थिति में हुआ था। उस वर्ष का 'देव पुरस्कार' खड़ीबोली काव्य पर दिया जाना था। आगरा के स्वर्गीय पं. हरिशंकर शर्मा उसके एक निर्णायक थे। यद्यपि निर्णय का अधिकार एकमात्र पंडित जी को ही था, फिर भी सौजन्यवश उन्होंने विचार-विनिमय के लिए तीन और स्थानीय मित्र आमंत्रित कर लिये थे: स्वर्गीय बाबू गुलाबराय, श्री रामचंद्र श्रीवास्तव 'चंद्र' और मैं। मैं उन दिनों एम. ए. में पढ़ता था, और वास्तव में उनका स्नेहभाजन ही था, मित्र नहीं—उधर मेरा दृष्टिकोण भी उनके दृष्टिकोण से अत्यंत भिन्न था, फिर भी वे मेरे विचारों का आदर करते थे। पुरस्कार के लिए ८—१० काव्य-ग्रंथ आये थे, जिनमें दिनकर की प्रथम रचना 'रेणुका' और गुरुभक्तसिंह की 'नूरजहां' भी थीं।

'रेणुका' में संकलित दिनकर की कई कविताएं प्रसिद्ध पत्रों में छप चुकी थीं और 'विशाल भारत' के संपादकीय आह्वान—'कस्मै देवाय ?' के उत्तर में दिनकर ने इसी शीर्षक से एक कविता भी लिखी थी। इसका मेरे किशोर मन पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा। मैंने सोचा कि यह कैसा कवि है जो संपादक के निर्देश पर कविता लिखता है? यों भी 'रेणुका' की कविताएं मुझे विशेष रुचिकर नहीं लगीं। उनमें प्रबल आवेग का उच्छ्वास था और भाषा में भी एक ताजा रंगीनी थी, पर इन दोनों में कलात्मक तादात्म्य नहीं था। आवेग के दबाव से शब्द-विधान को तरंगित करने की शक्ति तो कवि में थी, पर शब्दों में आवेग को आत्मसात कर लेने की क्षमता नहीं थी। इतिहास और युगजीवन से अर्थ-ग्रहण का प्रयास वह अत्यंत सचेष्ट भाव से कर रहा था, पर अभी ये अर्थ-संदर्भ अनुभूति में डूबकर रसमस नहीं हुए थे—अतः एक प्रकार की इतिवृत्तात्मकता उनके साथ लगी हुई थी। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक था कि मैंने 'रेणुका' को अधिक महत्त्व नहीं दिया। अंततः पुरस्कार न 'नूरजहां' को मिला, न 'रेणुका' को। दिनकर के साथ यह मेरा बौद्धिक साक्षात्कार था।

पहली मुलाकात

दिनकर से मेरी पहली मुलाकात—सही अर्थ में साक्षात्कार—सन १९४० में स्टीमर पर हुई। वे शायद मुजफ्फरपुर से और मैं सीवान से पटना आ रहा था।

सवेरा होते-होते एक सज्जन ने मुझे बताया कि दिनकरजी स्टीमर पर हैं । पटना पहुंचने में कुछ देर थी, कवि के साथ यात्रा कविता-पाठ के बिना कैसे सार्थक हो सकती थी? उन्होंने अपनी दो-तीन कविताएं सुनायीं और एकाध मैंने भी, क्योंकि मैं भी उन दिनों कविता में कुछ दखल रखता था ।

शाम को एक मित्र के यहां गोष्ठी जमी। दिनकर ने ऊर्जस्वत स्वर में अपनी लोकप्रिय रचनाओं का पाठ किया—पहले 'हिमालय' और फिर 'हाहाकार'। तब तक 'हुंकार' प्रकाशित हो गयी थी और मैं उसे पढ़ चुका था। मैंने 'विपथगा' की फरमाइश की। दिनकर कुछ चकित होकर बोले, अरे ! यह कविता आपको कैसे पसंद आ गयी? मैंने उत्तर दिया कि इसमें बिंब-विधान अधिक सशक्त है। 'हाहाकार' में हाहाकार इतना मुखर है कि काव्य-गुण क्षीण पड़ गया है ।

बिहार के अल्पकालिक प्रवास के बाद मैं फिर दिल्ली लौट आया, पर दिनकर से साहित्यिक संपर्क बराबर बना रहा। वे अपनी कृतियां मुझे निरंतर भेजते रहे—पहले 'रसवंती', फिर 'कुरुक्षेत्र' और 'सामधेनी' की प्रतियां प्राप्त हुईं। 'रसवंती' के प्रकाशन के बाद कवि के साथ मेरा मानसिक तादात्म्य बढ़ने लगा। 'गीत अगीत कौन सुंदर है'—मुझे छायावादोत्तर काल का सबसे सुंदर गीत लगा। 'पुरुषप्रिया' आदि अन्य कविताएं भी मुझे अत्यंत प्रिय लगीं। अब दिनकर के काव्य

बायें से : डॉ. नगेन्द्र, दिनकर, गिरजा कुमार माथुर,
दायीं ओर हैं-रामनिवास जाजू अपने परिवार के साथ (चित्र सौजन्य : रामनिवास जाजू)
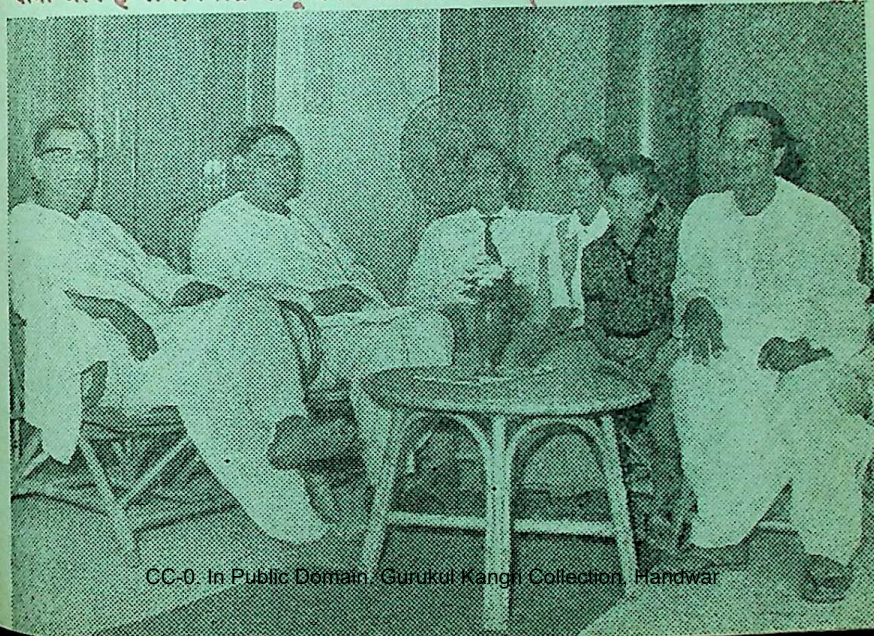
में कल्पना-तत्त्व क्रमशः समृद्ध होता जा रहा था—उनकी बिंब-योजना अधिक रंगीन और भास्वर होने लगी थी। उधर चिंतन के योग से भाव और कल्पना में गरिमा का समावेश हो रहा था : 'कला-तीर्थ' आदि रचनाएं इसका प्रमाण थीं। मैंने 'रसवंती' की कविताओं की प्रशंसा करते हुए दिनकर को पत्र लिखा और उत्तर में उन्होंने मेरी प्रसन्नता पर संतोष व्यक्त किया। परवर्ती रचनाएं, जो ४७ में 'सामधेनी' में प्रकाशित हुईं, अपेक्षाकृत अधिक पुष्ट थीं : उनमें अर्थगौरव अधिक था। मुझे यह देखकर बड़ा संतोष मिला कि उनका काव्य निरंतर प्रौढ़ि की ओर अग्र-सर हो रहा है। और, फिर 'कुरुक्षेत्र' के प्रकाशन से यह आशा पूर्ण हो गयी। 'कुरु-क्षेत्र' छायावादोत्तर काल की अत्यंत प्रौढ़ रचना थी।

'रश्मिरथी' पढ़कर निराशा

१९५२ में दिनकर दिल्ली में राज्यसभा के सदस्य होकर आ गये और हमारे संपर्क-संबंध घनिष्ठ होते गये। 'रश्मिरथी' का प्रकाशन हो चुका था। 'कुरुक्षेत्र' के बाद 'रश्मिरथी' पढ़कर निराशा हुई, उनका कहना था कि यह मेरा 'कमर्शियल' काव्य है—अर्थात बिक्री की दृष्टि से पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर लिखा है। फिर भी 'रश्मिरथी' के प्रति कवि की ममता कम नहीं थी : पारिवारिक गोष्ठियों में वे बड़े चाव से उसका वाचन किया करते थे।

'रश्मिरथी' के बाद दिनकर मुक्तक कविताएं लिखते रहे, जिनका संकलन 'नीलकुसुम' नाम से प्रकाशित हुआ। इस अवधि में उनकी दो रचनाएं अत्यंत प्रसिद्ध हुईं : पहली 'तान तान फन व्याल कि तुझ पर मैं बांसुरी बजाऊं'। मुझे लगता है कि इस कविता में उन्होंने अपने आलोचकों के प्रति आक्रोश व्यक्त किया है, क्योंकि उस समय तक हिंदी में ऐसी दो काव्य-प्रवृत्तियां उभर आयी थीं जो अपने को स्थापित करने के लिए मूर्ति-भंजन का संगठित प्रयास कर रही थीं। एक का आरोप था कि दिनकर जन-चेतना के कवि न होकर फासिस्ट भावना के कवि हैं। दूसरे वर्ग के प्रचारकों को शिकायत थी कि दिनकर में कवित्व की अपेक्षा 'रहेट-रिक' ही ज्यादा है—यानी कलात्मक अभिव्यंजना की अपेक्षा वाग्विस्तार अधिक है। दूसरी रचना थी 'किसको नमन करूं मैं ?', जिसमें भारत का सजीव रूप प्रस्तुत किया गया है।

गद्य-क्षेत्र में कार्य

इस दशक में दिनकर ने गद्य के क्षेत्र में काफी काम किया। 'काव्य की भूमिका' में काव्य का तत्त्व-चिंतन प्रस्तुत किया। यह मूलतः उनके अपने काव्य-संकलन 'चक्रवाल' की भूमिका थी। इससे पहले 'मिट्टी की ओर' में उनके सैद्धांतिक-समीक्षा-त्मक लेख प्रकाशित हो चुके थे, जिनमें जीवन और काव्य के शाश्वत तथा सामयिक मूल्यों—गांधी और मार्क्स के बीच—

कवि की निष्ठाओं की द्विविधा अनेक प्रकार से व्यक्त हुई थी। 'काव्य की भूमिका' में यह द्विविधा काफी हद तक मिट चुकी थी और कवि आत्म-लाभ के निकट पहुंच गया था: वह उस रस-बिंदु का साक्षात्कार करने में सफल हो गया था जहां द्वंद्व समाहित हो जाता है— सामयिक मूल्य देशकाल की सीमा को पारकर सार्वभौम और सार्वकालिक मूल्यों में अंतर्लीन हो जाते हैं।

'पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण' में दिनकर ने अपने पूर्ववर्ती तीन कवियों की समीक्षा की है। इसमें आश्चर्यजनक बात यह है कि इन तीनों में उन्होंने पंतजी के प्रति अधिक आस्था व्यक्त की है— हालांकि पंतजी और दिनकर के काव्य की प्रकृति और प्रविधि अत्यंत भिन्न हैं: दिनकर के अपने शब्दों में कहें तो उनमें हथौड़े और छेनी का फर्क है। शायद यह वैषम्य ही आकर्षण का कारण हो। आश्चर्य का एक कारण यह भी है कि दिनकर ने निराला को क्यों छोड़ दिया!

इन्हीं दिनों 'संस्कृति के चार अध्याय' का प्रकाशन हुआ। यह ग्रंथ दिनकर ने बड़ी तैयारी के बाद लिखा था। एक बार इसकी पूरी पांडुलिपि खो चुकी थी और दिनकर फूटफूटकर इस तरह रोये थे मानो घर का कोई बच्चा खो गया हो। बाद में मूल टिप्पणियों के आधार पर यह ग्रंथ फिर लिखा गया था। इस ग्रंथ के विषय में मतभेद था। इतिहास के विशेषज्ञों ने

बासी मौसम

बासी मौसम को चिढ़ाना
मुझे
बहुत आता है
मैं अपनी गंध उसे देती हूं
खुली बरौनियों से
पी जाती हूं वह छुअन
और खुद बासी हो जाती हूं

मुझे पता है
कि तुम्हें
मेरे बासीपन से प्यार है
आओ
हम बांट लें—अपना-अपना प्यार
और
मौसम को ताजा कर दें
दोहरी खुशबुओंवाली हवा को
हम चूमते रहें
और मौसम
फिर से बासी हो जाए

—सुनीता बुद्धिराजा
(ए. १४, डी. टी. सी. कालोनी
शादीपुर, दिल्ली-११०००८)
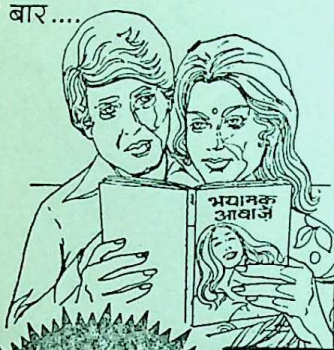
इसकी प्रामाणिकता पर संदेह किया और कहा कि यह इतिहास के क्षेत्र में लेखक का अनधिकार - प्रवेश है। परंतु जो विशेषज्ञ नहीं थे, उन्हें लेखक का सर्जनात्मक चिंतन और सामयिक दृष्टिकोण पसंद आया। ग्रंथ पर साहित्य-अकादमी पुरस्कार मिला। ग्रंथ की भूमिका पंडित नेहरू ने लिखी थी जो अकादमी के अध्यक्ष भी थे। पुरस्कार की घोषणा के समय उन्होंने हंसकर कहा था कि इसमें मेरा भी हिस्सा हैं। दिनकर ने उत्तर दिया—पंडितजी, यह तो आपका ही प्रसाद है। इसमें संदेह नहीं कि ग्रंथ की रचना काफी हद तक उनके प्रीत्यर्थ ही की गयी थी और इसके वाद वे उनके निकट आ गये थे।

'उर्वशी' में ऐश्वर्य और माधुर्य

सन १९६१ में उनका शिखर-काव्य 'उर्वशी' प्रकाशित हुआ। प्रकाशन से पहले मैं उसका अधिकांश कवि-मुख से सुन चुका था। 'आजकल' में उसकी समीक्षा करते हुए मैंने लिखा, "भाव, कल्पना और विचार से परिपुष्ट 'उर्वशी' की कविता में भावों को आंदोलित करने, प्रबुद्ध कल्पना के सामने मूर्त-अमूर्त के रमणीय चित्र अंकित करने और विचार को उद्‌बुद्ध करने की अपूर्व क्षमता है। नर-नारी का प्रेम—दर्शन की शब्दावली में काम तथा काव्यशास्त्र की शब्दावली में रति—मानव-जीवन की सबसे प्रबल वृत्ति है और 'उर्वशी' के काव्य का वही आधार-विषय है। काम की अनुभूति के सूक्ष्म-प्रवल, कोमल-कठोर, तरल-प्रगाढ़, मोदक-पीड़क, उद्वेगकर और सुखकर, दाहक और शीतल, मृण्मय और चिन्मय अनेक रूपों का 'उर्वशी' में अत्यंत मनोरम चित्रण है और सबसे अधिक आकर्षक है प्रेम की उस चिर-अतृप्ति का चित्रण जो भोग से त्याग और त्याग से भोग अथवा रूप से अरूप और अरूप से रूप की ओर भटकती हुई, मिलन तथा विरह में समान रूप से व्याप्त रहती है। भावसंवेदन की यह अनेकरूपता अपने-आपमें भी कम काम्य नहीं है, किंतु इससे भी अधिक महत्त्व है उस अंतर्दर्शन का जो अवचेतन या अर्धचेतन में घुमड़नेवाले इन अंधे संवेदनों को चेतन मन के आलोक में प्रस्तुत करता है और कदाचित इससे भी अधिक महत्त्व है कवि की उस प्रख्या का जो इन अरूप झंकृतियों को कल्पना-रमणीय रूप प्रदान करती है।" 'उर्वशी' की बिंब-योजना अत्यंत समृद्ध है—विराट और कोमल, उदात्त और मधुर बिंबों का ऐसा अपूर्व संकलन आधुनिक युग के बहुत कम काव्यों में मिलता है। संपूर्ण काव्य ही एक रंगीन चित्रशाला है, जिसमें शब्द और अर्थ की व्यंजनाओं से अंकित नख-चित्र, रेखाचित्र, रंगचित्र, तैलचित्र और विराट भित्तिचित्र जगमग कर रहे हैं। 'उर्वशी' की विषयवस्तु ऐहिक और मूर्त न होकर सूक्ष्म तथा मनोमय है, इसलिए 'उर्वशी' के कवि को उसे बिंबित करने में सामान्य से अधिक आयास करना पड़ा है और उसका कौशल एवं सिद्धि उसी अनु-

उमंगभरे
सपने साकार....
सुन्दरता की बहार
और भी हैं कई रंगीले रंग; फूलों,
डिज़ाइनों व मोटिफ़ का निखार
और नये, निराले विचार—
अशोक का चमत्कार!
अशोक मिल्स के प्रिण्ट्स,
पॉप्लिन, कैम्ब्रिक, टेरीन
व कॉटन में आपके
विचारों का संसार!
अशोक मिल्स
लालभाई ग्रुप के
वस्त्र

पात से अधिक स्तुत्य है।"

लेकिन मुझे ऐसा लगा कि यह काव्य अंशों में जितना प्रबल और रसमय है, समग्र रूप में उतना प्रीतिकर नहीं है। इसका संकलित प्रभाव प्रमाता के चित्त का पूर्ण परितोष नहीं करता—कम-से-कम मेरे चित्त का समाधान नहीं हुआ और अंत में एक विचित्र अभाव-सा मन में रह गया। कारण-कार्य का विश्लेषण करते हुए मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उसके मूल विचार में अन्विति नहीं है। कवि ने द्वंद्व का चित्रण तो अत्यंत प्रबल रूप में किया है, किंतु उसकी समाहिति में वह प्रयत्न करने पर भी सफल नहीं हुआ। इसलिए समस्त काव्य के वस्तुविधान की अन्विति भंग हो गयी है। मैंने जितने आवेश के साथ 'उर्वशी' के रसमय प्रसंगों का स्तवन किया, उतने ही विश्वास के साथ अंत में यह मंतव्य भी स्पष्ट कर दिया और समग्रतः मूल्यांकन करते हुए लिखा: "इसीलिए सामयिक हिंदी-काव्य की यह श्रेष्ठ उपलब्धि अंशरूप में अपेक्षाकृत अधिक समृद्ध एवं प्रबल होने पर भी अपने समग्र रूप में न 'कामायनी' की श्रेणी में आती है, और न 'प्रियप्रवास' तथा 'साकेत' की श्रेणी में।"—दिनकर को मेरा यह अंतिम वाक्य बहुत बुरा लगा: यहां तक कि वे मेरी समस्त प्रशंसात्मक उक्तियों को भूलकर उसी पर अटक गये। सामने उन्होंने कुछ भी नहीं कहा—और मैंने भी इतनी ईमानदारी के साथ, मुक्त भाव से, ग्रंथ के प्रति आदर व्यक्त किया था कि मैं अपने और उनके सद्भाव के प्रति सर्वथा आश्वस्त था। किंतु 'आजकल' के अगले अंक में प्रकाशित एक उत्साही महिला के पत्र के माध्यम से उनका आक्रोश व्यक्त हुआ। पहले तो मुझे बुरा लगा, पर शीघ्र ही मैंने स्थिति को समझते हुए उस पत्र की उपेक्षा कर दी। कुछ दिन बाद मिलने पर दिनकर ने जैसे मेरी प्रतिक्रिया जानने के भाव से जिज्ञासु दृष्टि से देखा, लेकिन मैंने उनका हाथ दबाते हुए कहा: "एक वाक्य को भी नहीं पचा सके—महाभारत के युद्ध की शायद एक ही टेकनीक तुम्हें याद रही और उसका प्रयोग हम पर कर डाला।" हंसी-खीझ में बात वहीं समाप्त हो गयी।

सही बात यह है कि 'उर्वशी' मुझे बहुत पसंद थी और है, इस विषय में मैं दिनकर के बड़े-से-बड़े प्रशंसक के साथ एकमत हूं कि वह छायावादोत्तर युग की शिखर उपलब्धि है। मैं अत्यंत निभ्रांत शब्दों में लिख चुका था: "उद्वेलक प्रभाव की दृष्टि से 'उर्वशी' निश्चय ही प्रबल काव्य है—छायावादोत्तर युग में ऐसा प्रबल काव्य हिंदी में दूसरा नहीं लिखा गया और जहां तक मेरा ज्ञान है (यद्यपि यह ज्ञान अनुवाद पर आश्रित और अत्यंत सीमित है) अन्य भारतीय भाषाओं में भी इतनी प्रबल समसामयिक रचना कदाचित नहीं है।" अधिकांश क्षेत्रों में उसके प्रकाशन का स्वागत-सम्मान हुआ,

A Prayer for Our Times!

God !
Merciful God ! !
Because a dark deepening crisis
is engulfing this beloved land
of ours
Give us men a time like this
demands
Honest men
Men of strong minds
of big hearts
and true faith
Men whom lust of power
will not corrupt
Men whom spoils of office
will not buy
Men, for whom
Service to the Nation
will come
before their selfs
Men who will not lie
Men who will not indulge
in gimmickery
Men who will not feed us
on slogans or
on stunts
Give us, O God !
Men of Honour
of integrity
Men who can
and will
Stand up to demons
of demagogy
Men who will not
yield to trecherous
flatterers
Men who will live
above the fog
and fluff of mock
adulation
God ! Give us such men
a trying and testing time
like this demands.

Issued by

ORISSA CEMENT LIMITED

Manufacturers of all types of high class refractories, cement and cement products
RAJGANGPUR, ORISSA.

as a part of its Service to the Nation

किंतु एक वृत्त से फिर यह आवाज उठी कि इसमें कवित्व की अपेक्षा 'र्‌हैटरिक' (वाग्मिता) ज्यादा है। कहा गया कि वे शब्दार्थगत रचना-नैपुण्य के द्वारा नहीं, वरन वाणी के उच्छ्‌वास से प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

'उर्वशी' के बाद कवि के साथ मेरी मनोयात्रा समाप्त हो गयी। उन्होंने नयी कविता की शैली में कुछ व्यंग्य-रचनाए कीं, फिर जीवन भर के संघर्ष से थककर 'हारे को हरिनाम' में संकलित भक्ति-वैराग्य की कविताएं लिखीं। परंतु मेरे मन ने फिर उनका साथ नहीं दिया। वे इस बात को जानते थे। 'हारे को हरिनाम' के प्रकाशन के बाद एक दिन मैं किसी अन्य व्यक्ति के साथ उनसे मिला, तो उन्होंने उसकी एक प्रति मेरे साथी को देते हुए कहा: "यह आपके लिए है। नगेन्द्र को नहीं दूंगा—यह 'लिटरेरी स्नॉब' है।"

कवि दिनकर के साथ सहयात्रा समाप्त हो जाने पर भी, मित्र दिनकर के साथ स्नेह-सौहार्द बराबर बना रहा। दिल्ली से चले जाने के बाद वे उखड़-से गये थे और धीरे-धीरे दिल्ली में फिर पुनर्वास का उपक्रम कर रहे थे। बड़े बेटे की मृत्यु के बाद जिम्मेदारियों का पहाड़ उन पर टूट पड़ा था। दैहिक और दैविक विपत्तियों के कारण उनका आवेगमय स्वभाव अधीरता की सीमा तक पहुंच गया था। मैंने दिनकर से कई बार इस विषय में असहमति व्यक्त की, परंतु अपने कवि की ही तरह दिनकर का व्यक्ति-मानव भी 'संवृत्ति-वक्रता' अथवा गोपन की कला का कायल नहीं था। १९ मई, '७४ को एक समारोह में काफी देर तक मैं उनके साथ था। वे उसी मुक्त भाव से रोग-शोक की बात कर रहे थे, "मेरे सीने में कुछ दर्द-सा रहने लगा है: यह हार्ट-अटैक की भूमिका है।" मैंने बातचीत का रुख मोड़ते हुए प्रश्न किया: "अब तुम्हारी क्या उम्र हुई, दिनकर?" "चार कम सत्तर।" मैंने उत्तर दिया: "ठीक है: मन के चिकित्सकों का कहना है कि ६५ के बाद बकवास की बीमारी शुरू हो जाती है।"

कुछ देर बाद संयोजकों ने आह्वान किया कि काव्य-गोष्ठी के अध्यक्ष दिनकरजी मंच पर आयें। मैंने चलते-चलते पूछा—"दक्षिण से कब लौटोगे? मेरी नयी पुस्तक 'भारतीय सौन्दर्यशास्त्र की भूमिका' दो-चार दिन में छपकर आ जाएगी। प्रकाशक का विचार उसके विषय में एक छोटी-सी मित्र-गोष्ठी करने का है।"

"२५–२६ को आ जाऊंगा: २७ को रख लेना।" दिनकर बड़े अच्छे मित्र थे। मित्रों के प्रति अपने वचन का निष्ठा से पालन करते थे। २५ मई को सवेरे ही लौट आये—ताबूत में बंद होकर।

दिनकर महायात्रा पर चले गये और उनके साथ, मेरी तरह न जाने कितने मित्रों और सहृदय प्रशंसकों की मनोयात्रा सदा के लिए समाप्त हो गयी।

—१६ केवलरी लाइंस, दिल्ली-११०००७

चल खुसरो घर आपने...

• अर्श मलसियानी

फारसी के किसी भारतीय कवि को अमीर खुसरो के अतिरिक्त ईरानियों ने नहीं माना। नाजिम हिरवी ने अपनी एक कविता में प्रत्येक काल के मुख्य फारसी कवि का परिचय इन शब्दों में कराया है :

"मैंने सुना कि पुराने जमाने में उनसरी कवियों का सम्राट था। जब उनसरी ने सिंहासन छोड़ा तो बड़ाई की टोपी फिरदौसी के सिर पर रखी गयी। जब फिरदौसी ने कफन में मुंह ढांपा तो खाकानी कविता के मैदान में आया। जब खाकानी इस संसार से चल बसा तो निजामी काव्य-जगत का बादशाह बन गया। जब निजामी ने मौत का प्याला पी लिया तो बुद्धिमत्ता का मुकुट सादी के सिर पर रखा गया। जब सादी का तख्त उलटा तो कविता खुसरो पर निछावर हो गयी।"

यह एक ईरानी के विचार हैं, जिसने खुसरो को ईरान के महान कवियों में स्थान दिया। ज्याउद्दीन बरनी ने 'तारीखे फीरोजशाही' में खुसरो की मृत्यु के तीस वर्ष बाद यह लिखा था कि अलाउद्दीन खिलजी के दरबार में बड़े-बड़े महाकवि उपस्थित थे, जिनमें अमीर खुसरो का दर्जा सबसे ऊंचा था, क्योंकि वे कविता की सारी विधाओं में प्रवीण थे। मौलाना शिबली ने अपनी विख्यात पुस्तक 'शेर-उल-अजम' में लिखा है कि ऐसा अद्भुत साहित्यिक भारत में सैकड़ों साल से पैदा नहीं हुआ था और न यह आशा ही कर सकते हैं कि भविष्य में कोई और आएगा।

फिरदौसी मसनवी अर्थात काव्य-कथा से आगे न बढ़ा। सादी कसीदा नहीं

लिख सकता था। अनवरी में गजल या मसनवी की क्षमता नहीं थी। हाफिज, उर्फी और नजीरी केवल गजल के शायर थे, परंतु खुसरो इन सबमें प्रवीण थे। इस प्रकार वे सबसे बाजी ले गये। फिरदौसी ने ७०,००० शेर कहे, साइब ने एक लाख। निजामी के इन दोनों से कम हैं, परंतु खुसरो के शेरों की संख्या २-३ लाख अवश्य होगी। इसके अतिरिक्त गद्य में उनकी तीन बड़ी-बड़ी पुस्तकें हैं। फारसी और तुर्की के साथ-साथ हिंदी भी उनकी मातृभाषा थी। अरबी में वे बहुत निपुण थे और दूसरी भारतीय भाषाएं भी जानते थे। वे संस्कृत से भी अनभिज्ञ नहीं थे। गद्य में उनकी पुस्तक 'ऐजाजे खुसनवी' कई सौ पन्नों की है। पद्य में उनके पांच दीवान हैं और ९ मसनवियां।

गुलाम वंश के बलबन और कैकबाद, खिलजियों के जलालुद्दीन खिलजी, अलाउद्दीन खिलजी और कुतुबद्दीन खिलजी मुबारकशाह और तुगलक वंश के गयासुद्दीन तुगलक तथा मुहम्मद तुगलक से उनका संबंध रहा। इनके अतिरिक्त बीच में दो-तीन छोटे-छोटे बादशाह भी थे। जलालुद्दीन खिलजी ने उनको बादशाही कुरान रखने का पद देकर अमीर की उपाधि दी और यहीं से वे खुसरो से अमीर खुसरो बन गये। दरबारदारी का काम करते-करते इतना कुछ लिखना और इतने ढंग का गद्य-पद्य पीछे छोड़ जाना बड़े अचंभे की बात है।

खुसरो के पिता मलिक सैफुद्दीन तुर्की के लाचीन कबीले के सरदार थे और इल्तमश के शासनकाल में भारत आये थे। उनकी शादी बलबन के एक बड़े दरबारी इमादुल्मुल्क की बेटी से हुई। वे बलबन के युद्ध-मंत्री थे। उत्तरप्रदेश में एटा जिले में गंगा के किनारे पटियाली नाम के एक नगर में खुसरो सन १२५४ में पैदा हुए। उनके पिता उन्हें एक कपड़े में लपेटकर एक मस्त फकीर के पास ले गये, जिसने कहा कि 'जाओ यह बच्चा खाकानी से भी दो कदम आगे बढ़ जाएगा।' खुसरो अभी ६-७ साल के थे कि पिता का देहांत हो गया। उनकी माता उन्हें साथ लेकर दिल्ली अपने पिता के घर आ गयीं। परंतु इमादुल्मुल्क भी बहुत वृद्ध थे, शीघ्र ही चल बसे। इसके बाद खुसरो दिल्ली के ही हो रहे। वे लिखते हैं कि 'मेरी आवाज बड़ी सुरीली थी और मैं शेर पढ़ता था तो लोग झूम-झूम जाते थे। मेरे दूध के दांत अभी नहीं झड़े थे कि शेर मेरे मुंह से फूलों की तरह झड़ने लगे।'

बलबन के भतीजे मलिक छज्जू ने पहले-पहल खुसरो के सिर पर हाथ रखा। वह इनकी कविता पर मोहित था। फिर बलबन का बेटा तुगराखां उन्हें अपने साथ ले गया, परंतु बलबन के बेटे सुलतान मुहम्मद के पास वे पांच वर्ष रहे। वह मुलतान का सूबेदार था। मंगोलों ने मुलतान पर आक्रमण करके जब उसे मार डाला तो खुसरो ने बड़ा ही करुण मरसिया लिखा और

दिल्ली में आकर जब दरबार में पढ़ा तो सब दरबारी आंसू बहाने लगे। बलबन का दिल भी टूट गया। वह यह चोट सह न सका और अस्वस्थ हो गया। अंत में उसकी मृत्यु हो गयी। सुलतान मुहम्मद को 'खानें शहीद' भी कहते हैं।

बलबन के बाद कैकबाद ने खुसरो को मान-मर्यादा से रखा और जलालुद्दीन खिलजी ने उन्हें अमीर की उपाधि दी। अलाउद्दीन खिलजी ने २१ वर्ष बड़े जोरशोर से बादशाही की। यह जमाना खुसरो की हर प्रकार की उन्नति का है। दरबार में भी प्रतिष्ठा बढ़ी और उन्होंने अनेक काव्य-ग्रंथ रचे। निजामी के जवाब में उन्होंने पांच मसनवियां केवल सवा दो साल में खत्म कर डालीं। जामी—जैसे महाकवि का यह कहना है कि निजामी के पंज गंज का जवाब खुसरो से अच्छा किसी ने नहीं दिया।

कुतुबुद्दीन मुबारकशाह का शासन-काल केवल चार साल का है, परंतु उसने खुसरो की इतनी प्रतिष्ठा की कि सबको पीछे छोड़ दिया। खुसरो ने उसके जमाने में नोहस्पेहर अर्थात नौआकाश नाम की एक मसनवी लिखी, जिसके लिखने पर बादशाह ने खुसरो को हाथी के वजन के बराबर सोना-चांदी दिया। मुबारकशाह के पश्चात गयासुद्दीन तुगलक आया। उसके जमाने में खुसरो ने 'तुगलकनामा' लिखा, जो एक मसनवी है और जिसमें तुगलक की लड़ाइयों में विजय-प्राप्ति का वर्णन है।

खुसरो का जीवन-वृत्तांत अपूर्ण रह जाता है जब तक उसके अध्यात्म-गुरु ख्वाजा निजामुद्दीन औलिया का जिक्र न किया जाए। दोनों को एक-दूसरे से अगाध प्रेम था। जब ख्वाजा निजामुद्दीन का देहांत हुआ तो खुसरो दिल्ली से बाहर थे। यह अशुभ सूचना सुनते ही उन्होंने जो कुछ उनके पास था, सब लुटा दिया और अपने पीर अर्थात गुरु की कब्र के पास आकर बैठ गये। कहते हैं कि वे हर समय वहां झाड़ू देते रहते थे और गुरु की मृत्यु के पूरे छह महीने बाद उनकी भी मृत्यु हो गयी। निजामुद्दीन औलिया ने यह वसीयत की थी कि मेरे मरने के बाद खुसरो को मेरे निकट ही दफन करना। खुसरो की कब्र इसलिए उनकी कब्र के पायंती बनायी गयी ताकि कोई धोखा न हो सके और एक की कब्र को दूसरे की कब्र न समझा जाए।

फारसी कविता में खुसरो का मरतबा बहुत ऊंचा है। वे ऐसी-ऐसी अद्भुत उपमाएं देते हैं कि चित्त प्रसन्न हो जाता है। उदाहरण के तौर पर देखिए—

- पानी के नीचे मछली की आंख इस प्रकार थी जैसे पारे के नीचे सोने का सिक्का।
- किले की दीवार पर लाल रंग का पलस्तर इस तरह चढ़ा हुआ था जिस तरह किसी मतिमंद पुरुष ने किसी बुद्धिमान का कोट पहन रखा हो।
- उसकी अदाएं शिकार करनेवाले बाघ की तरह शिकार कर रही थीं और उसकी जुल्फें आज्ञापालन न करनेवाले चोर की तरह थीं।
- बादल के अंदर सूर्य इस तरह हवा के कारण आंखमिचौनी कर रहा था जैसे किसी नयी दुलहन ने अपनी एक आंख पर चादर रख ली हो।
- काला बादल अचानक इस तरह निकला कि उसने तारों के तमाम फूल अपनी जेब में धर लिये।
- इतना अंधकार था मानो प्रलय आ गयी थी और सूरज और चांद का मिलन समीप था।

खुसरो की गजलें कव्वाल बहुत गाते हैं। पढ़े-लिखे मजे ले-लेकर पढ़ते हैं और मर्मज्ञ उसके मर्म से आनंदित होते हैं। एक शेर का अनुवाद यह है—"तूने दोनों लोक अपनी कीमत बतायी है। जरा इस कीमत को और बढ़ा, क्योंकि तू अभी सस्ता है।" यदि इस शेर के आध्यात्मिक अर्थ लिये जाएं तो न जाने आदमी कहां से कहां पहुंच जाए!

खुसरो को भारत से बड़ा प्रेम था। वे मध्य एशिया और भारतीय संस्कृति के संगम थे। उन्होंने भारत की विद्या, धर्म आदि की बहुत प्रशंसा की है। उन्होंने लिखा है कि दूसरे देशों के विद्वान बनारस पहुंचकर विद्या ग्रहण करते थे, खास तौर पर ज्योतिष की विद्या। गणित को उन्होंने यहीं का आविष्कार बताया। 'पंचतंत्र' की बड़ी प्रशंसा की है। शतरंज

पर बहुत मोहित हुए हैं। संगीत में तो रत्न गये हैं। यहां के रहनेवालों, नर-नारी, पशु-पक्षी और फल-फूल आदि सबको सराहा है। जहां सीधी-साधी बातें की हैं वहां भी अपनी कविता से पढ़नेवालों का मन मोह लिया है और जहां आध्यात्मिक रंग में रंग गये हैं वहां दूसरों को भी डुबकी लगाने पर मजबूर कर दिया है। पान की तारीफ बहुत की है। आम को अंजीर से हजार गुना अच्छा बताया है। यहां के फूलों को खुरासान के फूलों से बेहतर माना है। बेल और जूही, केवड़ा, रायचंपा, मौलसिरी, दोना और सेवती इन सबके वे प्रशंसक हैं। भारतीयों की सुंदरता को भी मिस्र, रूम, समरकंद आदि के वासियों की सुंदरता से अच्छा कहा है।

उन्होंने इस बात को स्वीकार किया है कि हिंदी भाषा फारसी से अच्छी है। 'नोहसेहर' और 'खिजरखानी' दोनों मसनवियों में यह वृत्तांत मिलता है। गद्य में उनके दीवान 'गुर्रातुलकमाल' की भूमिका में उन्होंने साफ-साफ लिखा है कि मैंने हिंदी में भी कविता की है। स्पष्ट तौर पर यह भी कहा है कि संस्कृत में भी मेरी रुचि है। अब जो लोग यह कहते हैं कि उनकी हिंदी कविता उनकी नहीं है उनको क्या कहा जाए! उनसे एक सौ वर्ष पहले चंदरबरदाई पृथ्वीराज के शासनकाल में हिंदी में अपनी पुस्तक 'पृथ्वीराजरासो' में ऐसी अच्छी कविता कर गया है और उसमें कहीं-कहीं भाषा सरल भी है तो हम किस प्रकार यह कह सकते हैं कि खुसरो की हिंदी कविता खुसरो की नहीं है? खुसरो इतनी तीव्र बुद्धिवाले कवि थे कि ये पहेलियां, कहमुकरनियां, दोसुखने अनमिल आदि उनसे कोई दूर की बात नहीं। हो सकता है कि बीरबल के लतीफों की तरह इनमें भी लोगों ने बहुत कुछ अपनी तरफ से भर दिया हो, परंतु खुसरो का हिंदी भाषा का कवि होना मानना ही पड़ेगा। निजामुद्दीन औलिया के देहांत के पश्चात उन्होंने एक दोहा कहा था और आज तक हजरत औलिया का उर्स प्रत्येक वर्ष इसी दोहे से शुरू होता है।

गोरी सोवे सेज पर मुख पर डारे केश।
चल खुसरो घर आपने रैन भई चहुं देश॥

—एफ-४/११ माडल टाउन,
दिल्ली-११०००९

पकड़कर सुबकने लगा।

डॉक्टर से जब पूछा गया कि तुमने जान का खतरा उठाकर भी शत्रु की रक्षा क्यों की, तब वे बोले, "दुश्मन है तो क्या, इनसान भी तो है! कष्ट और पीड़ा में किसी की सेवा करना डॉक्टर का पहला कर्तव्य है।" **—लक्ष्मी थदानी**

हेमंतकुमार, शिशिरकुमार एवं मोतीलाल घोष इन तीनों भाइयों ने 'अमृत बाजार पत्रिका' का प्रथम अंक २० फरवरी,

चुआंग त्सु की पत्नी चल बसी तो हुई त्सु शोक में भाग लेने वहां पहुंचा। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि चुआंग

मैंने अपने आपसे कहा—मृत्यु में मनुष्य के साथ कोई अनहोनी बात नहीं घटती। शुरू में हम प्राणों से ही नहीं शक्ल-सूरत से भी वंचित थे। शक्ल-सूरत से ही नहीं आत्मा से भी। हम एक आकृतिहीन अस्पष्ट से पिंड थे। फिर उसमें आत्मा विकसित हुई, आत्मा ने सूरत-शक्ल विकसित की, सूरत-शक्ल ने जीवन विकसित किया। और अब जीवन ने ही मृत्यु को विकसित किया है क्योंकि प्रकृति में ही नहीं मनुष्य के जीवन में भी ऋतुएं होती हैं। वसंत, हेमंत और शिशिर का चक्र होता है। यदि कोई थक गया है और अंदर जाकर लेटा हुआ है तो हम चीखते-चिल्लाते पीछे-पीछे वहां नहीं पहुंचते। जिसका साथ छूट गया, वह भी जाकर उस विशाल भीतरी कक्ष में आराम करने लेटी है। मैं रोता-कलपता हुआ, वहां जा घुसूं तो उसका अर्थ यह होगा कि मैं प्रकृति के सर्वोच्च नियम को नहीं समझता हूं। इसीलिए मैंने शोक करना छोड़ दिया।"

मोक्षगुंडम् विश्वेश्वरय्या तब मैसूर के दीवान बने थे। उन्होंने अपनी कोठी के विजिटर्स-रूम में पच्चीस जिल्दोंवाला एंसाइक्लोपीडिया रखवा दिया था। एक दिन डॉक्टर डी. वी. गुंडप्पा ने उनसे पूछा, "ऐसी प्रामाणिक और महत्त्वपूर्ण पुस्तक यहां आपने रखवायी है, इसका मतलब क्या है?" वे मुसकराते हुए बोले, "बताइए क्या करूं? मुलाकाती आते हैं। उनमें से

किसी-किसी को पंद्रह मिनट, आधा घंटा या इससे अधिक इंतजार करना पड़ जाता है। आखिर ८ से १० के बीच कितनों से मुलाकात करूं ? कुछ को इंतजार करना पड़ ही जाता है। ये लोग अगर बुद्धू की तरह वक्त गंवाने के बजाय इस बीच कोई महत्त्वपूर्ण चीज पढ़ना चाहें तो इसमें से पढ़ सकते हैं।''

—इसाक अश्क

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय की घटना है। घमासान युद्ध छिड़ा हुआ था। अमरीका ने अत्तू द्वीप पर हमला किया। बहुत से अमरीकी और जापानी घायल हुए। अमरीकी डॉक्टर अपनी टुकड़ी के साथ घायलों की सेवा में लगे थे। उनमें एक डॉक्टर कास स्टिमसन भी थे जो अत्यंत कर्तव्यनिष्ठ थे। तभी वहां एक घायल लाया गया जो जापानी था, नाम था उसका इटो। वह खून और मल-मूत्र की गंदगी में लिपटा पड़ा था। उसकी टांग खून, कीचड़ और सड़न से हरी हो गयी थी। इटो का विचार था कि अमरीकी उसे घोर यातनाएं देंगे। डॉक्टर भी सोच रहे थे कि बदला लेने का अच्छा मौका है। अभी दो ही दिन पहले तो जापानी हमारे क्षेत्र में घुसकर डॉक्टरी टुकड़ी के कई आदमियों का बर्बरता से खून कर गये थे।

डॉक्टर स्टिमसन के सामने जब मृत्यु से जूझता वह घायल जापानी सैनिक लाया गया तब उन्होंने उसके गंदे कपड़े हटाकर उसके घाव धोये। उसके शरीर में रक्त पहुंचाया गया। इटो का ऑपरेशन करके उसकी सड़ी टांग काट दी गयी। बची टांग ऐसी बना दी गयी कि उसमें नकली टांग ठीक ढंग से फिट हो जाए। ये सब इटो की कल्पना से परे की बात थी। स्वस्थ होने पर जब इटो को बंदी-शिविर में ले जाने लगे तब उसने डॉक्टर स्टिमसन से मिलने की इच्छा व्यक्त की। डॉक्टर जब उसके
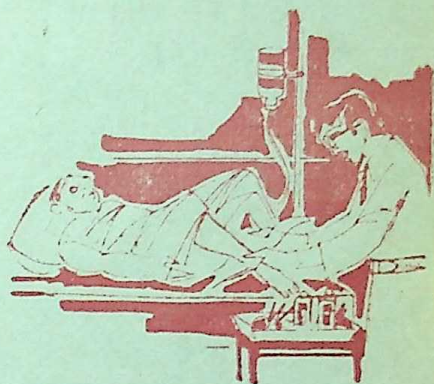
स्ट्रेचर के पास पहुंचा तो इटो उसके पैर पकड़कर सुबकने लगा।

डॉक्टर से जब पूछा गया कि तुमने जान का खतरा उठाकर भी शत्रु की रक्षा क्यों की, तब वे बोले, ''दुश्मन है तो क्या, इनसान भी तो है! कष्ट और पीड़ा में किसी की सेवा करना डॉक्टर का पहला कर्तव्य है।''

—लक्ष्मी थदानी

हेमंतकुमार, शिशिरकुमार एवं मोतीलाल घोष इन तीनों भाइयों ने 'अमृत बाजार पत्रिका' का प्रथम अंक २० फरवरी,

१८६८ को निकाला। जसोर जिले के 'अमृत बाजार' ग्राम से साप्ताहिक पत्र निकालना कोई हंसीखेल नहीं था। भाइयों की आर्थिक स्थिति भी खास नहीं थी और फिर इसके लिए एक वृहत संगठन की आवश्यकता थी, जो हर किसी के बस की बात नहीं थी।

उन्होंने कलकत्ता के एक बंद प्रेस को खरीदा और ग्राम में ले आये। छपाई का काम उन्होंने स्वयं सीखा। वे अपने हाथों में 'स्टिक' लेकर अपने लिखे लेखों के टाइप उसमें बिठाते थे और स्वयं ही उन्हें छापते थे। इस तरह वे खुद ही कंपोजीटर, मशीनमैन, लेखक एवं संपादक थे।

भगीरथ प्रयासों और राष्ट्रीय भावना के प्रसार एवं प्रशासन के भंडाफोड़ के कारण पत्र शीघ्र ही लोकप्रिय हो गया। उन दिनों इस संबंध में एक मजाक बहुत ही प्रसिद्ध हो गया था।

एक दिन सुबह कलकत्ता की एक नाली में एक शराबी लोटपोट हो रहा था। गश्त लगाता हुआ पुलिस का एक सिपाही जब उधर से निकला तब उसने पूछा, "तू यहां क्या कर रहा है ?"

"अमृतबाजार पत्रिका पढ़ रहा हूं," पियक्कड़ ने जवाब दिया। यह सुनते ही सिपाही वहां से नौ दो-ग्यारह हो गया।

——नारायणप्रसाद शर्मा

सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक जगदीशचंद्र बसु इंगलैंड से विज्ञान की उच्च शिक्षा पाकर लौटे थे। कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कॉलेज में भौतिक विज्ञान के प्राध्यापक के रूप में उनकी नियुक्ति हुई। प्रेसीडेंसी कॉलेज में उस समय अधिकांश अंगरेज प्राध्यापक थे। बंगाल का शिक्षा-संचालक भी अंगरेज ही था। अंगरेज प्राध्यापकों की तुलना में भारतीयों को कम वेतन दिया जाता था।

आचार्य बसु ने इस अन्याय का डटकर विरोध किया। उन्होंने अधिकारियों से कहा, "वेतन मैं लूंगा तो पूरा लूंगा, नहीं तो बिलकुल न लूंगा।"

पूरे तीन साल तक उन्होंने वेतन नहीं लिया। उन्होंने आर्थिक कठिनाइयों का मुकाबला करने के लिए अपने खर्चों को घटा दिया। कलकत्ता में मकान महंगा पड़ता था, अतः उन्होंने वहां से दूर चंद्रनगर में एक सस्ता मकान किराये पर ले लिया। वहां से रोज कलकत्ता आने-जाने के लिए हुगली नदी पार करनी पड़ती थी। इसके लिए उन्होंने एक नाव रखी, जिसे वे स्वयं खेकर उस पार ले जाते थे और उनकी पत्नी उसे वापस ले आती थीं।

आखिर उनका विरोध सफल हुआ। उनकी दृढ़ता के सम्मुख कॉलेज-अधिकारियों को झुकना पड़ा। उन्होंने बसु को भी अंगरेज प्राध्यापकों के बराबर वेतन देना स्वीकार कर लिया। पिछले तीन वर्षों का वेतन भी नये वेतन के हिसाब से उन्हें इकट्ठा दे दिया गया। यह राष्ट्रीय गौरव की भी विजय थी। —कमला

मौत का मंत्री

• मिरजा दबंग

नये मंत्रिमंडल के गठन के समय एक उलझन पैदा हो गयी थी । चौधरी स्वरूपनारायण वक्त के माने हुए राष्ट्रीय नेता थे, जिन्होंने देश और जाति के लिए असीम कुरबानियां की थीं। उनके सुपुत्र चौधरी रमेशकुमार को मंत्रिमंडल में लेना अत्यंत आवश्यक था। मुसीबत यह थी कि उनके लिए कोई भी विभाग खाली न था। सभी विभाग दूसरे मंत्रियों के हवाले कर दिये गये थे। फिर भी दल के नेता की बुद्धि की प्रशंसा करनी ही पड़ेगी कि उन्होंने अपने साथियों को इन उलझनों से मुक्ति दिला दी और एक विभाग निकाल ही लिया। चौधरी रमेशकुमार को मृत्यु-मंत्री, यानी मौत का मंत्री बना दिया गया।

चौधरी रमेशकुमार मृत्यु-मंत्री बन गये, फिर भी उनके घर में खुशियां मनायी गयीं, दिये जलाये गये, मिठाइयां बांटी गयीं और कई दिन तक नाच-रंग की महफिल गरम रही।

इन उत्सवों और समारोहों से अवकाश मिला तो चौधरी रमेशकुमार अपने
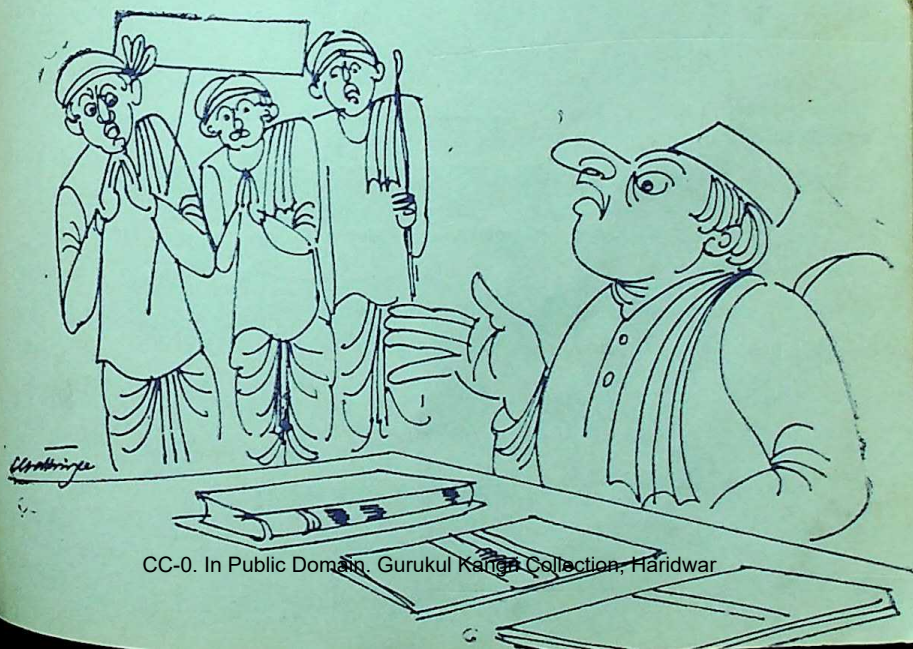
काम-काज से निबटने के लिए अपने आफिस पहुंचे। उनके आफिस के बाहर एक बोर्ड लटक रहा था और उस बोर्ड पर अत्यंत सुंदर शब्दों में लिखा था—

चौधरी रमेशकुमार,
मंत्री मृत्यु-विभाग
मिलने का समय : १२ बजे से १ बजे तक

आफिस के चपरासी ने कमरे के दरवाजे की चिक उठायी और चौधरी रमेशकुमार माथे से पसीना साफ करते हुए कमरे के अंदर प्रविष्ट हो गये। कमरे में एक सुंदर और आधुनिक ढंग की मेज तथा घूमनेवाली गद्देदार कुरसी पड़ी थी। एक दूसरी छोटी मेज पर दो टेलीफोन रखे थे। आने-जानेवालों के लिए कुरसियां और एक ओर पर्दा पड़ा था। साथ का कमरा मंत्रीजी के आराम करने के कमरे में खुलता था। एक दूसरा दरवाजा और भी था जिससे मंत्रीजी के निजी सहायक (पी. ए.) अंदर आ-जा सकते थे।

मंत्रीजी घूमनेवाली कुरसी पर बैठ गये और कमरे की प्रत्येक चीज का निरीक्षण करने लगे। एकाएक उनका पी. ए. अंदर आया। कई बार नमस्कार करते तथा सिर झुकाते हुए वह बोला, "हूजूर . . . "

"यस।"

पी. ए. अत्यंत सम्मानित ढंग से बोला, "दास को महेश शर्मा कहकर पुकारा जाता है।"

"खूब !" मंत्रीजी मुसकराये। फिर बोले, "रमेश और महेश— क्या खूब काफिया मिलाया है आपने ! अच्छा, आज से हम आपको मिस्टर शर्मा कहकर पुकारेंगे।"

"बेहतर है जनाब !"

"हां, तो मिस्टर शर्मा," मंत्रीजी बोले, "आज के कार्यक्रम क्या हैं ?"

"सर," पी. ए. ने बड़ी विनम्रता से कहा, "मुलाकात का वक्त हो गया है और बाहर एक डेपूटेशन मुलाकात के लिए काफी देर से इंतजार कर रहा है।"

"ये लोग कौन हैं मिस्टर शर्मा ?"

"जनाब ! ये शहर के कफनफरोश हैं और अपनी समस्या पेश करने के लिए उपस्थित हुए हैं," पी. ए. ने बताया।

मंत्रीजी ने कुछ सोचा, फिर बोले, "ठीक है, उन्हें आने दीजिए।" फिर मंत्रीजी पास पड़ी एक फाइल को सामने रखते हुए इस ढंग से बैठ गये जिससे आनेवाले पर यह प्रभाव पड़े कि मंत्रीजी अत्यंत व्यस्त हैं और अपने मंत्रालय के काम में बुरी तरह उलझे हुए हैं !

कफनफरोशों का प्रतिनिधिमंडल कमरे में प्रविष्ट हुआ। प्रत्येक सदस्य ने हाथ जोड़कर मंत्रीजी को नमस्कार किया और फिर उनके संकेत पर मेज के सामने पड़ी कुरसियों पर बैठ गये।

"फरमाइए !" मंत्रीजी ने फाइल पर नजर जमाते हुए मंडल से कहा, "आप लोगों की मैं क्या सेवा कर सकता हूं ?"

कफनफरोशों का प्रधान, जो सारी

उमर कफन बेच-बेचकर स्वयं भी एक मुरदा नजर आता था, कुरसी छोड़कर वहीं अपनी जगह पर खड़ा हो गया और हाथ जोड़कर कहने लगा, "श्रीमान ! सबसे पहले तो हम अपनी संस्था कफन-फरोश की ओर से आपको बधाई देते हैं। भगवान ने आपको इस महान पद पर पहुंचाया। यह हम लोगों के लिए बड़ी

नहीं मरते जैसे कि पहले मरते थे। इससे हमारे रोजगार को बड़ा धक्का लगा है। मौत का अनुपात प्रतिवर्ष कम होता जा रहा है। अब मौत का एक अलग मंत्रालय खोल दिया गया है, इसलिए अब हमें पूरी आशा है कि आप हमारे रोजगार का खयाल रखेंगे और ऐसे साधन जुटाएंगे जिससे मृत्यु की दर में वृद्धि हो।"
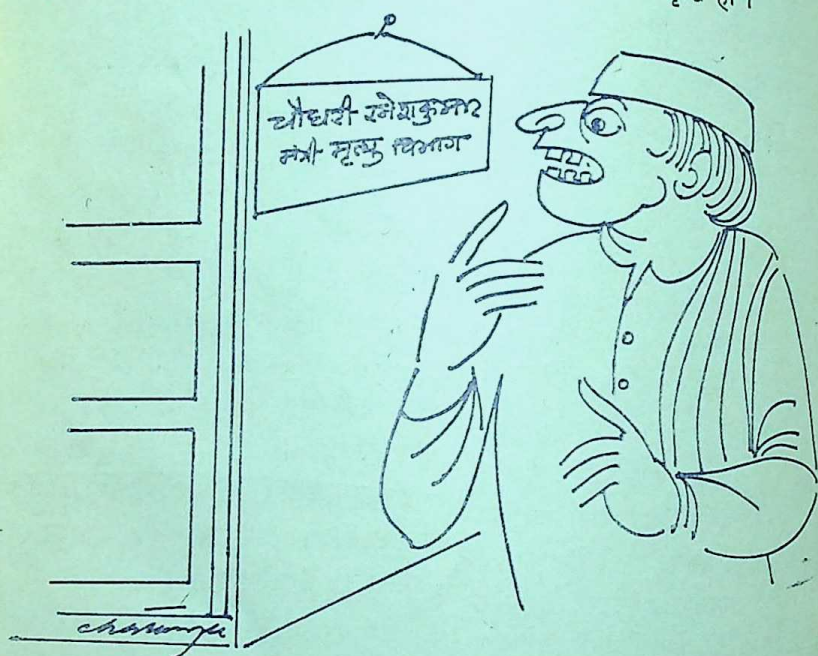
खुशी की बात है। इसके बाद हमारी प्रार्थना यह है कि एक ओर कफन का कपड़ा बहुत महंगा हो गया है, दूसरी ओर मरनेवालों की संख्या दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है। अब सरकार ने हमारी हालत पर कृपा की है और मौत का विभाग खोल दिया है। हां, तो अब लोग इस कदर

इतना कहकर कफनफरोशों का लीडर सांस लेने के लिए रुका और फिर कहने लगा, "कफन के कपड़े की महंगाई हमारे लिए इतनी दुखदायक नहीं, क्योंकि महंगाई का बोझा पड़ेगा मरनेवालों के सिर पर, मगर मुसीबत यह है कि जब से आजादी आयी है, लोगों के मरने की दर

कम हो गयी है। इसलिए कफनफरोशों के कारोबार को भारी घाटा हो रहा है। अब चूंकि मौत का एक अलग विभाग खोल दिया गया है, हमें विश्वास है कि श्रीमान अब ऐसे साधन ढूंढेंगे जिनसे हमारे रोजगार को होनेवाले घाटे की क्षति-पूर्ति हो सके।"

कफनफरोशों की कठिनाइयों का मंत्रीजी पर भारी प्रभाव पड़ा और एकाएक वे बोले, "मिस्टर शर्मा !"

"यस सर !" पी. ए. ने, जो चमचागीरी में बड़ा निपुण था, कहा, "कहिए, क्या आज्ञा है ?"

"मेरा विचार है कि स्वास्थ्य-विभाग से यह पूछा जाए कि किन कारणों से मौत की दर में कमी हुई है," मंत्रीजी बोले।

"बेहतर है जनाब !" पी. ए. बोला।

"आखिर इन बेचारे कफनफरोशों के भी कुछ अधिकार हैं," मंत्रीजी पुनः बोले, "यह युग लोकतंत्र का है। फिर हमारा विधान तो हर किसी को आजीविका कमाने का पूरा अधिकार देता है ?"

"जी हां, आपने बिलकुल ठीक फरमाया," कफनफरोशों के लीडर ने कहा, "सरकार कोई ऐसे साधन अपनाये जिससे लोग अधिक से अधिक संख्या में मरें।"

मंत्रीजी बोले, "मुझे आप लोगों की परेशानी का अंदाजा हो गया है। मैं आप लोगों को संतुष्ट करने की पूरी-पूरी कोशिश करूंगा।"

"शुक्रिया . . . शुक्रिया !" कफनफरोशों के लीडर ने अपनी दलीलों को आगे बढ़ाते हुए कहा, "मिसाल के तौर पर मिलावट को लीजिए। मिलावट होती अवश्य है, लेकिन चोरी-छिपे। सरकार को मिलावट करने की इजाजत खुले तौर पर दे देनी चाहिए—खाने की प्रत्येक चीज में मिलावट, दवाओं में मिलावट आदि हमारे व्यवसाय की उन्नति के लिए बहुत जरूरी है।"

"हजूर . . . . !" पी. ए. बोला।

"कहिए. . . मिस्टर शर्मा, आप क्या कहना चाहते हैं ?" मंत्रीजी ने कहा।

पी० ए० बोला, "मेरा विचार है कि खाद्य-मंत्रालय को भी लिखा जाए कि इस सिलसिले में उचित कार्रवाई करे।"

इन प्रस्तावों को सुनकर कफनफरोशों के प्रतिनिधियों को कुछ संतोष हुआ। वे मंत्रीजी का शुक्रिया अदा करके चले गये।

उनके जाने के बाद पी. ए. ने मंत्रीजी को याद दिलाया, "हुजूर ! शाम के पांच बजे श्रीमान को एक नये श्मशान का उद्घाटन करना है, जिसमें बिजली द्वारा मुरदों को जलाया जा सकेगा।"

"खूब, खूब !" मंत्रीजी को जैसे यह खबर बहुत अच्छी लगी। वे बोले, "मिस्टर शर्मा ! इस नये श्मशान की खूब पब्लिसिटी होनी चाहिए।"

"बिलकुल होनी चाहिए, जनाब !"

"और देखो मिस्टर शर्मा !" मंत्रीजी ने कहा, "अखबारों के नाम हमारा एक बयान जारी करा दो कि माननीय

मृत्यु-मंत्री ने फैसला किया है कि प्रत्येक श्मशानघाट और कब्रिस्तान को रमणीक वाटिका बना दिया जाएगा। फूलों के अतिरिक्त स्वादिष्ट मेवों के वृक्ष लगवा-कर उन्हें स्वर्ग या जन्नत का नमूना बना दिया जाएगा ताकि मरनेवालों को यह अहसास हो जाए कि वे वाकई स्वर्ग या जन्नत में प्रविष्ट हो गये हैं।"

"मगर जनाब, जन्नत में तो हूरों का भी जिक्र है। उनका क्या प्रबंध किया जाए?"

'ओह मिस्टर शर्मा ! यह आपने अच्छा प्वाइंट उठाया है," मंत्रीजी बोले, "बयान में यह भी जोड़ देना कि मुरदों का दिल बहलाने के लिए हर शाम को नृत्य और संगीत का भी प्रबंध किया जाए।"

"बहुत बेहतर जनाब !"

"और हां, देखो, बिजली के श्मशान के बारे में अखबारों में विज्ञापन भी प्रकाशित करवा दो, जो इस तरह का हो—

'मरनेवालों को शुभ समाचार।'

पी. ए. बोल पड़ा, "मेरा खयाल है कि विज्ञापन का शीर्षक हो—'मरनेवालों को भारी रियायत।' और मजमून यह हो—इस महंगाई में जब लकड़ी के भाव आकाश को छू रहे हैं, हमारे विभाग ने मरनेवालों के कष्ट का अहसास करते हुए उन्हें अधिक खर्च से बचाने के लिए विद्युत का भव्य श्मशान बनाया है, जिसमें कुछ ही सेकंड में मरनेवालों को जलाकर राख कर दिया जाता है। आप एक बार आकर आज़माइश तो कीजिए !"

मंत्रीजी बोल पड़े, "मिस्टर शर्मा, उसमें यह भी जोड़ दिया जाए—दो मास के लिए बिजली का श्मशान फ्री ! मरनेवाले तुरंत लाभ उठाएं।"

"जनाब के दिमाग की प्रशंसा करनी पड़ती है," मिस्टर शर्मा ने आदाब बजाते हुए कहा, "आज्ञा हो तो मैं यह सब कुछ तैयार करके आज ही प्रेस को दूं?"

"जरूर, जरूर !" मंत्री जी ने कहा, "और हां शाम को बिजली के श्मशान के उद्घाटन के समय एक-दो मुरदे अवश्य होने चाहिए।"

"मगर हुजूर," मिस्टर शर्मा ने कुछ परेशान होकर कहा, "मैं मुरदे कहां से प्राप्त करूंगा?"

"तुम तमाम अस्पतालों को फोन कर दो कि आज बिजली के नये श्मशान का उद्घाटन हो रहा है और जैसे भी हो दो मुरदे श्मशान में पहुंचा दिये जाएं।"

फिर अपने एक हाथ से माथे को दबाते हुए मंत्री जी बोले, "मंत्रियों का काम किस कदर जोखिम का है, इसका अहसास लोग क्या कर सकते हैं ! दिन भर का काम करने से मेरे तो सिर में दर्द होने लगा है।"

"तो जनाब साथवाले कमरे में आप आराम फरमाएं। मैं बाकी मुलाकातियों से कह दूंगा कि जनाब मंत्रीजी राज्य के श्मशानों के निरीक्षण को गये हैं।"

—अनु. एच. आर. गांधी

बुद्धि-विलास

१. **ओलंपिक** खेलों का ध्वज सफेद कपड़े का बना होता है तथा उस पर नीले, पीले, काले, हरे और लाल रंग के पांच वृत्त एक-दूसरे में फंसे बने होते हैं। इनके नीचे लैटिन में ये शब्द अंकित होते है—'सिटिअस, सेल्टिअस, फोर्टिअस'। बताइए, ये वृत्त किस बात के प्रतीक हैं? लैटिन में अंकित शब्दों का क्या अर्थ है?

२. **वह** कौन-सा खेल है जिसे लाखों दर्शक देखने जाते हैं, रेडियो पर उसका आंखोंदेखा हाल सुनते हैं, पर ओलंपिक खेलों में उसे नहीं खेला जाता?

३. **गोविंद** बंबई से पूना समान गति से पैदल गया। ६० किलोमीटर चल चुकने के बाद वह पैदल ही बंबई के लिए लौट पड़ा। लौटते समय उसने अपने चलने की गति में प्रति-घंटा एक किलोमीटर की वृद्धि कर दी। इस प्रकार लौटने की गति में पांच घंटे कम लगे। बताइए, बंबई से चलते समय उसकी क्या गति थी?

४. **रमन** ने एक दुर्लभ पुस्तक ९६ रुपये में बेची, जिससे उसे उतने ही प्रतिशत की प्राप्ति हुई जितनी पुस्तक खरीदते समय। बताइए, रमन ने वह पुस्तक कितने में खरीदी थी?

५. १९७४ वर्ष के लिए नोबल पुरस्कार (साहित्य) किस साहित्यकार को दिया गया है?

६. **ईरान** के वर्तमान शाह को 'आर्य-मेहर' कब से कहा जाता है?

७. **'इंडियन** ऐंड ईस्टर्न न्यूजपेपर्स सोसाइटी' (आई. ए. एन. एस.) के लिए इस बार (१९७४-७५) कौन अध्यक्ष चुना गया है?

८. **'बोनस** रिव्यू कमेटी', जिसने इस वर्ष ३ अक्तूबर को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है, उसके अध्यक्ष तथा सदस्यों के नाम बताइए।

९. **मानव** शरीर में ग्लाइकोजेन सबसे अधिक कहां मिलता है?

१०. **पौधों** के कोषों के बारे में निम्न-लिखित में से कौन-सा सही है—

क. सारे पौधों के कोषों में कोष-दीवार होती है

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

ख. सारे पौधों के कोषों में क्लोरोफिल होता है

ग. सारे पौधों के कोषों में कोष-झिल्ली होती है

घ. सारे पौधों के कोषों का विभाजन होता है

११. परमाणु निम्नलिखित में किन से बना होता है—

क. प्रोटोन, आइसोटोप, इलेक्ट्रॉन

ख. प्रोटोन, न्यूट्रॉन, पाजिट्रॉन

ग. प्रोटोन, न्यूट्रॉन, इलेक्ट्रॉन

घ. न्यूट्रॉन, ड्यूट्रॉन, अल्फॉ-कण

ङ. केवल न्यूट्रॉन तथा प्रोटान

१२. शरीर ताप का विकिरण तब करता है, जब—

क. इसका तापक्रम कमरे के तापक्रम से अधिक होता है

ख. इसका तापक्रम ० डिग्री सेंटीग्रेड से अधिक होता है

ग. इसका तापक्रम बहुत ज्यादा होता है

घ. किसी भी तापक्रम पर हो

१३. भारत में सर्वाधिक दैनिक पत्र किस राज्य से प्रकाशित होते हैं ?

१४. इस समय संयुक्त राष्ट्रसंघ के कितने सदस्य हैं ?

१५. 'अपोलो-१०' व 'अपोलो-१२' के अंतरिक्ष-यात्रियों के नाम तथा उनकी अंतरिक्ष-यात्रा की तिथियां भी बताइए !

१६. सितंबर की २२ तारीख को कलकत्ता में किस सुप्रसिद्ध भारतीय का स्वर्गवास हुआ ?

१७. प्रकाश की गति क्या है ?

१८. भारतीय जहाजरानी के बेड़े की वर्तमान क्षमता कितनी है ?

१९. दो पिता और दो पुत्र एक होटल में भोजन करने गये। उनको प्रति-व्यक्ति ४ रुपये की दर से बिल चुकाना पड़ा। अतः उन्होंने १२ रुपये चुकाये। बताइए, निम्नलिखित में से कौन-सा उत्तर सही है—

क. गलती से यह राशि चुका दी

ख. यह भी संभव है

ग. असंभव है

साथ दिये हुए चित्र को ध्यान से देखिए। बताइए यह क्या है ?

कटा हुआ कच्छ : जुड़ा हुआ कच्छ

• डॉ. हरिकृष्ण देवसरे

"सदियों पुरानी झलक देनेवाला यदि कोई स्थान है तो वह कच्छ है, जिसे आधुनिक दुनिया की कोई हवा नहीं लगी है। वह जैसा था वैसा ही है," सरदार वल्लभभाई पटेल ने ये विचार तब व्यक्त किये थे जब कच्छ भारतीय गणराज्य का एक अंग बन चुका था। कच्छ का यह भू-भाग शेष दुनिया से न केवल प्राकृतिक रूप में, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक रूप में भी कटा हुआ था। आवागमन के साधनों का अभाव, सीमित अर्थव्यवस्था, परंपराओं तथा रूढ़ियों से जुड़ा सामाजिक जीवन लोगों को कटी हुई जिंदगी व्यतीत करने के लिए बाध्य करता रहा। इसीलिए यहां अपराधों की संख्या बहुत कम है। छात्र - आंदोलन के दिनों में सारा गुजरात राजनीतिक आंदोलन और हिंसात्मक कार्य-वाहियों से धधकता रहा, कच्छ बिलकुल शांत रहा।

आज कच्छ न केवल सामरिक महत्त्व की दृष्टि से बल्कि आर्थिक और भू-तात्त्विक दृष्टि से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना गया है। इसके विकास के लिए निरंतर प्रयास भी हो रहे हैं, फिर भी यह क्षेत्र अपने प्राचीन जीवन-मूल्यों को पूरी तरह नहीं त्याग पाया है। यहां का जीवन, अर्थव्यवस्था और सामाजिक मूल्य वर्षा से अधिक प्रभावित रहे हैं।

कच्छ के बंदरगाहों से जंजीबार, पूर्वी अफ्रीका, अरब आदि देशों से व्यापार होता था। कहते हैं वास्को डि गामा को भारत

खारी जाति की कन्या : कपड़ों पर 'भरत' काम दृष्टव्य है

कोटेश्वर का शिव मंदिर

पहुंचाने का काम एक कच्छी नाविक ने ही किया था। बंदरगाहों की संपन्नता अंगरेजों के जमाने तक बनी रही। मांडवी में ही ८०० व्यापारी जहाजों का आवागमन होता था।

'मनीआर्डरी' अर्थ-व्यवस्था

कच्छ क्षेत्र के मूल निवासी—आभीर, संधार, चारण, रबारी, मेघवाल, कणबी, सम्मा, भंसाली और वागड़िया राजपूत—मुख्यतः खेती और पशु-पालन पर ही निर्भर हैं। विदेशों में रहनेवालों के परिवार अधिकांशतः कच्छ में ही रहते हैं। प्रवासी कच्छी वहां से धन भेजते हैं। भारत के विभिन्न नगरों में रहनेवाले कच्छी भी अपने परिवारों को धन भेजते हैं। यह सारा 'धन' मनीआर्डर द्वारा विपुल मात्रा में आता है। यही कारण है कि इस प्रकार प्राप्त होनेवाले धन को 'मनीआर्डरी' अर्थ-व्यवस्था कहा गया है। इसके बावजूद लोग आत्मनिर्भर होने के कारण अथक परिश्रम करते हैं। कणबी और पटेल जाति की महिलाएं तो जिस लगन और शक्ति से काम करती हैं, उसे देखकर आश्चर्य ही होता है। वे गेंती—फावड़ा चलाने तथा लोहे के घनों से पत्थर तोड़ने तक का काम करती हैं और शाम को उनके चेहरे पर थकान की एक रेखा तक नजर नहीं आती। कच्छ के श्रमिक पूरी ईमानदारी से काम करते हैं। जहां देश के अन्य भागों में कोई इमारत छह महीने में बनती है तो कच्छ में वैसी ही इमारत तीन महीनों में तैयार हो जाती है। कच्छ क्षेत्र में श्रमिकों पर यूनियनों का प्रभाव अभी नहीं पड़ पाया है।

कच्छ में शैव मत का काफी प्रभाव

है। कोटेश्वर का शिवमंदिर अत्यंत प्राचीन है। यह कोरी की खाड़ी के मुहाने पर कराची के ठीक सामने है। कहते हैं, भगवान शिव ने प्रसन्न होकर रावण को दिव्य लिंग दिया था, लेकिन वह इसे लंकापुरी नहीं ले जा सका और देवताओं के प्रयत्न से इसे यहां स्थापित करा दिया गया। यहां से कुछ ही दूर पर नारायण सरोवर है जो 'श्रीमद्‌भागवत' में वर्णित पांच पवित्र सरोवरों में से एक है। भुज से सत्रह मील दूर लाखो फूलानी के महल के अवशेष और एक शिवालय प्राचीन कच्छी वास्तुकला के अनुपम नमूने हैं। मान्यता है कि कच्छ का सबसे प्राचीन मंदिर 'चौखंडा महादेव' है। यहां स्थित शिवलिंग को स्वयंभू माना गया है।

कच्छ में स्वामी नारायण संप्रदाय का भी प्रभाव उल्लेखनीय है। स्वामी-नारायण संप्रदाय के प्रवर्तक कृष्णभक्त थे और अपने को उद्धव संप्रदाय का कहते थे। कच्छ में इस संप्रदाय के उपासक कुल आबादी के पचास प्रतिशत लोग होंगे।

लोकसाहित्य और लोकगाथाएं

कच्छ पर हुए विदेशी आक्रमणों तथा स्थानीय राजनीतिक उथल-पुथल ने कच्छ के सामाजिक एवं लोकजीवन को बहुत प्रभावित किया है। सिंध, गुजरात और राजस्थान की ओर से अनेक लोग यहां आये और बस गये, फिर भी कच्छ की मूल संस्कृति अपने मूल रूप में बनी रही और आज भी उसकी अपनी विशेषताएं उल्लेखनीय हैं। कच्छी बोली सिंधी से मिलती-जुलती है। बहुत से शब्द भी दोनों में समान हैं। कच्छी बोली की कोई लिपि नहीं है, किंतु इसकी एक विशेषता यह है कि यह 'एकाक्षरी' बोली है। इसमें बहुत-सी बातों के लिए एक ही अक्षर का प्रयोग होता है, जैसे– मां के लिए 'मां', पिता के लिए 'पे' पत्नी के लिए 'नो', कान के लिए 'बो', दस के लिए 'डो', आदि। कच्छी का लोक-साहित्य अपने मूल रूप में अलिखित है। इसे चारण, भाट और लोकगायकों ने

'भरत' कला के दो सुंदर नमूने
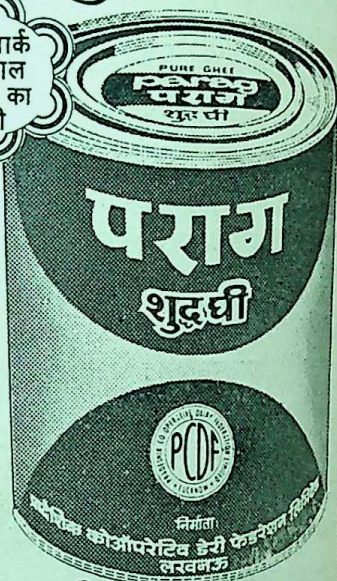
अपने कंठ में सुरक्षित रखा है। कच्छी लोक-साहित्य के महत्त्वपूर्ण अंग हैं—भजन, काफी, दूहे और गीत। कच्छ में लोक-गाथाएं भी प्रचुर हैं। ये लोकगाथाएं यहां के ऐतिहासिक, सामाजिक और राज-नीतिक जीवन का इतिहास हैं। इन गाथाओं के मूल भाव मैत्री, उदारता, भलाई, सहनशीलता, न्याय और नीति, सत्य और सतीत्व, क्षमा और धर्म, भक्ति और प्रीति रहे हैं। प्राचीन लोकगाथाओं में से कुछ के पात्र हैं—'कारायल-कपूरी', 'कारु और पिंगल', 'फूल और सोनल', 'उढो और होथल', जेसल तोरल' आदि। कारायल-कपूरी की कथा एक रूपवती वीरांगना के सत्संग और प्रभाव से एक डाकू के जीवन-परिवर्तन की कथा है। कारायल बचपन से ही साहसी और निडर था, किंतु उसके स्वभाव में उद्दंडता थी। युवावस्था के आरंभ से ही वह डाके डालने तथा लूटपाट करने लगा था। कपूरी संधार अपने पिता की एकमात्र पुत्री थी। वह अत्यंत सुंदर और वीर नारी थी। एक दिन कारायल कपूरी के गांव में आया। कारायल की वीरता और सुंदरता ने कपूरी को आकर्षित किया और कपूरी उसी क्षण से कारायल की हो गयी।

हाथेल पद्मिनी की कथा कच्छ में बहुत प्रसिद्ध है। उढो एक सुंदर और बलवान युवक था। वह जितना वीर और सुंदर था उतना ही चरित्रवान भी। उसकी सुंदरता पर उसकी भाभी मोहित हो गयी। एक बार वह पति की अनुपस्थिति में देवर उढो के आगे अपना प्रेम प्रकट करने लगी, परंतु उढो अपनी भाभी के प्रति सम्मान प्रकट करते हुए बोला, "आप मेरी आदर-णीय हैं, आपको यह शोभा नहीं देता।" अंत में आहत नारी ने देवर से बदला लेना चाहा। उसने अपने पति के सामने उढो पर झूठा दोषारोपण किया। उढो के भाई ने उसे घर से निकाल दिया। हाथेल एक धनी चरवाहे की कन्या थी। उढो अपने भाई के गांव से चलकर हाथेल के गांव में आया। वहां हाथेल ने उसे अपना बना लिया और दोनों सुख से रहने लगे।

भरत काम: आनंद भी, धनार्जन भी

कच्छ की लोककला की अपनी विशिष्ट-ताएं हैं। उनका विस्तृत एवं सर्वप्रथम अध्य-यन करनेवाले श्री रामसिंह राठौर का घर कच्छ की लोककला के एक सुंदर संग्रहालय के रूप में है। उन्होंने बताया, "कच्छ में चितेरों की कामांगर नाम की एक जाति थी। वह अब समाप्त होती जा रही है। वे लोग दीवारों पर लोककला के सुंदर नमूने बनाते थे। आज तो केवल उनके कुछ नमूने शेष हैं। उनकी कला में तत्कालीन सामाजिक जीवन तथा लोकरुचि दृष्टव्य है। जो कृतियां वे मुख्य रूप से बनाते हैं उनमें फूल-पान, पशु-पक्षी आदि को प्रतीक मानकर उनके जीवन के सिद्धांतों, सत्यों और आदर्शों को प्रतिपादित करते हैं।" कच्छ के भरत काम के बारे में उन्होंने बताया, "कच्छ का भरत काम लोककला का एक अनोखा अंग

है। आभीर, रबारी, कणबी, भंसाली, ओसवाल जत आदि सभी जाति के लोग, और विशेषकर बन्नी क्षेत्र के निवासी, भरत काम के कपड़े पहनने तथा भरत काम करने में विशेष रुचि लेते हैं। हर जाति के भरत काम की पद्धति अलग-अलग है। इसे वे परंपरागत रूप में ग्रहण करते आये हैं और आज न वह केवल उनके जीवन के कलात्मक पहलू को उजागर करती है, बल्कि उनके लिए जीवनयापन का एक साधन भी बन गयी है। अब तो साधनसंपन्न लोग बढ़िया ढंग के डोरे इस्तेमाल करने लगे हैं, अन्यथा पुरानी साड़ी की किनारी से रंगीन डोरे निकालकर उनसे ही यह काम करते थे; किंतु इन अभावों के बावजूद जो कलाकृति वे तैयार करते हैं, वह अनूठी होती है। कलात्मक दृष्टि से उनमें कोई दोष नहीं होता। कच्छ के भरत काम में आबलों—कांच के छोटे-छोटे टुकड़ों—का प्रयोग प्रचुर मात्रा में और अत्यंत कलात्मक रीति से होता है। जिन चित्रों को कपड़े पर साकार करते हैं, वे हैं सूडो, मोर, पंखुड़ियां, कमल आदि।

प्रगतिशील कच्छ : जुड़ा कच्छ

इस प्रकार अपनी परंपराओं और कृति को लेकर जो कच्छ सदियों तक कटा हुआ था, वह स्वतंत्र भारत का एक अंग बनने के बाद धीरे-धीरे विकास के पथ पर अग्रसर हुआ और देश का यह भू-भाग शेष भाग से जुड़ गया। आवागमन की बढ़ती सुविधाओं ने परिवर्तन का बीज बो दिया है। आज यह भू-भाग न केवल सड़क मार्ग से, बल्कि रेल और हवाई मार्ग से भी जुड़ा हुआ है। कच्छ के अंदर भी सड़कों का जाल-सा बिछ गया है। विकास-कार्यों ने यहां की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्थिति में भी परिवर्तन कर दिया है। अब देश के सभी कोनों से व्यापार होने लगा है। परंपराएं धीरे-धीरे टूटने लगी हैं। यहां के भुज, अंजार और गांधीधाम नगर सभी आधुनिक सुविधाओं से युक्त हैं और इनका विस्तार भी बड़ी तेजी से हो रहा है। गांधीधाम-आदीपुर नगर कांडला बंदरगाह के तट पर बसे हुए हैं। भारत-पाकिस्तान विभाजन के बाद सिंध से आये लोगों को बसाने तथा नये नगर बसाने का काम भाई प्रताप ने किया था। वे दूरदर्शी और प्रतिभावान थे। उन्होंने सिंध से आये शरणार्थियों को गांधीधाम-आदीपुर में बड़े ही नियोजित ढंग से बसाया और उनकी सुख-सुविधा के लिए सभी साधन उपलब्ध कराये। आज ये नगर औद्योगिक विकास के पथ पर हैं। यहां नमक बनाने का व्यवसाय प्रचुर मात्रा में होता है। देश का चालीस प्रतिशत नमक गुजरात में बनता है, और उसका भी चालीस प्रतिशत केवल कच्छ में बनता है। आज कच्छ जिस गति से प्रगति कर रहा है उससे इसके सुंदर भावी विकास की आशा बनती है।

—एफ बी/३० टैगोर गार्डन,
नयी दिल्ली-११०००२

• राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह

कोटारानी की दुःखांत-कथा

अपने अनुपम सौंदर्य तथा भौगोलिक स्थिति के कारण कश्मीर को हमेशा से बाहरी हमलों का सामना करना पड़ता रहा है। ऐसा ही एक हमला उस पर सन १३१९ ई. में मंगोल सरदार दुलचा द्वारा हुआ। राजा सहदेव ने आतंकित होकर उसे मूल्यवान उपहार भेजे ताकि वह सरहद से ही वापस हो जाए, पर वह राजी न हुआ। अंत में सहदेव गद्दी छोड़कर भाग गया और किस्तहर में जाकर शरण ली। लूटपाट की अपनी पिपासा पूरी करके जब दुलचा और उसकी सेना लौट रही थी तो उन्हें दैवी दुर्विपाक का सामना करना पड़ा। सब-के-सब बर्फ में धंसकर मर गये।

तभी राजा सहदेव के प्रधानमंत्री रामचंद्र ने उजड़े हुए कश्मीर को फिर से संजोने का प्रयत्न किया। इस कार्य में उसे सर्वाधिक सहायता मिली अपनी पुत्री कोटा से, जो बाद में कोटारानी के नाम से विख्यात हुई। कोटा की उम्र तब सोलह साल थी, पर गजब की मेधा-शक्ति पायी थी उसने। सौंदर्य, साहस, विलक्षण बुद्धि, अद्भुत कार्यपटुता, उच्च राजनीतिज्ञता, वीरता में रानी लक्ष्मीबाई से वह किसी तरह कम नहीं थी। पिता-पुत्री ने मिलकर कश्मीर की सुंदर घाटी को फिर से आबाद किया। इस कार्य में उन्होंने श्रीनगर में निवास करनेवाले दो योग्य व्यक्तियों की मदद ली——लद्दाख से भागे हुए बौद्ध धर्मावलंबी रंचन तथा स्वात के शाह मीर की। रंचन को मंगोलों द्वारा विध्वंस किये गये लार के इलाके को पुनर्जीवित करने का काम सौंपा गया; पर वह परले दर्जे का महत्त्वाकांक्षी था और जब उसने सुना कि दुलचा और उसके सैनिक बर्फ में दबकर मर गये, उसने तुरंत लद्दाखी समर्थकों की सहायता से अपने मालिक रामचंद्र की हत्या कर डाली तथा कोटा से बलपूर्वक विवाह करके राजगद्दी पर जा बैठा। कोटा किंकर्त्तव्यविमूढ़ थी। मजबूरन

उसे कश्मीर की रानी बनना पड़ा।

रंचन ने इस्लाम धर्म अंगीकार कर लिया, पर कोटा हिंदू ही बनी रही। कोटा की शिवाराधना में उसका पति रंचन उसे पूर्ण सहायता प्रदान करता रहा। कोटा भी यथासाध्य उसे अध्यात्म-अन्वेषण में योगदान देती रही। तभी उसे एक दिन स्वप्न हुआ कि अगले दिन सुबह-सुबह जिस व्यक्ति को वह देखेगा वही उसकी आध्यात्मिक जिज्ञासा को पूरी करेगा। उसने नींद टूटते ही इसकी चर्चा कोटा से की। कोटा ने कहा—'मैंने भी ऐसा ही स्वप्न देखा है।'

रंचन ने राजप्रासाद की छत पर जाकर गहन ध्यानावस्था में बैठे हुए एक फकीर को देखा। वह दौड़ा हुआ उसके पास गया। फकीर ने कहा—'मेरा नाम अब्दुल रहमान और मजहब इस्लाम है। मैं एक ही खुदा का, उस खुदा का जिसका कोई दूसरा संगी-साथी नहीं है, सिजदा करता हूं। हजरत मुहम्मद का मैं अनुगामी हूं।' फिर उसने अपने कश्मीर आने का कारण बतलाया।

रंचन उसके पांवों पर गिर पड़ा और उससे बैत (दीक्षित) हुआ। वह फकीर बुलबुलशाह के नाम से कश्मीर में प्रसिद्ध हुआ। उसकी समाधि भी वहीं है। तीन बरस भी नहीं बीते कि रंचन का देहावसान हो गया और कोटा कश्मीर की एक मात्र शासिका बनी। सन १३२३ से १३२८ तक वह शासन करती रही। नाम के लिए उसने अपने छोटे से पुत्र को राजा घोषित किया, किंतु स्वयं वहैसियत राजमाता के राज्य-संचालन करती रही। यह सिलसिला अधिक दिनों तक न चला। कोटा अकेली राज्य-संचालन में अपने को असमर्थ और असुरक्षित अनुभव करने लगी। अतः उसने राजा सहदेव के अनुज उदयनदेव को—जो दुलचा के आक्रमणकाल से ही स्वात में शरण लिये हुए था—आमंत्रण भेजकर कश्मीर बुलाया और उससे शादी कर ली। कश्मीरी पंडितों, दरबार के विशिष्ट जनों तथा शाह मीर तक ने कोटारानी के इस कार्य का समर्थन किया। शाह मीर स्वयं शासक बनने का स्वप्न देख रहा था, फिर भी उसने इस वक्त कोटा की राह में रोड़ा अटकाना उचित नहीं समझा। कश्मीर के इतिहासकार जोनराज ने लिखा है—शाह मीर ने उदयन को कश्मीर और कोटा दोनों को मानो भेंट-रूप में प्रदान कर दिया।

कोटा अधिक दिनों तक फूलों की सेज पर न सो सकी। ताज कांटों का ताज साबित हुआ। शीघ्र ही उरवान और अचला के नेतृत्व में दल-के-दल तुर्कों ने कश्मीर पर हमले किये। उदयन में हिम्मत कहां कि वह इन हमलों का सामना करे! खजाने का सारा सोना-चांदी लेकर वह भाग खड़ा हुआ और लद्दाख जाकर ही उसने दम लिया। कोटा अकेली रह गयी, वह भी खाली हाथ, पर उसने हिम्मत न हारी। उसकी पुकार पर कश्मीर की जनता देश
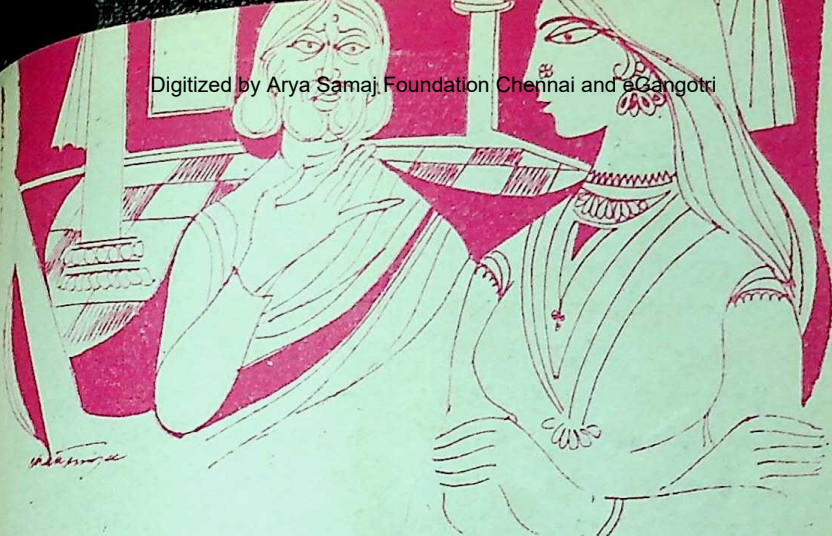
की सुरक्षा के लिए तैयार हो गयी। उसने झांसी की रानी की भांति उनका नेतृत्व करते हुए अचला के छक्के छुड़ा डाले। कोटा यथार्थ रूप में अब राष्ट्र की अधिनायिका मानी जाने लगी।

कोटा का दाहिना हाथ था शाह मीर, पर शाह मीर मन-ही-मन कश्मीर में मुस्लिम शासन स्थापित करने का स्वप्न देखता और उचित अवसर की प्रतीक्षा करता रहा।

और यह अवसर सन १३३८ में आ उपस्थित हुआ। उदयनदेव की मृत्यु हो गयी। कोटा ने चार दिनों तक इस समाचार को छिपाये रखा। फिर सहसा अपनी राजधानी अंदरकोट ले गयी। यहां आकर कोटा ने अपने को कश्मीर की एकमात्र शासिका घोषित किया और भिक्षण को प्रधानमंत्री। शाह मीर के लिए यह एक कड़वा घूंट साबित हुआ, जिसे वह गले के नीचे न उतार सका और चुपके से एक दिन उसने भिक्षण की हत्या करा डाली। फिर कोटा से विवाह का उसने प्रस्ताव किया, जिसे कोटा ने अस्वीकार कर दिया। शाह मीर ने इस प्रस्ताव को बार-बार दोहराया, पर कोटा किसी भांति भी राजी न हुई, और तब शाह मीर मुसलमानों की एक बड़ी फौज लेकर श्रीनगर से चला और अंदरकोट पर धावा बोल दिया। कोटा की सेना सुगठित नहीं थी, अतएव वह शीघ्र ही तितर-बितर हो गयी। कोटा ने तब विवश होकर उसके विवाह-प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। शाह मीर गद्दी पर बैठा, वह उसकी रानी बनी, पर एक दिन के लिए ही। विवाहोत्तर नव-वधू की पोशाक पहने हुए वह कोहवर में गयी और वहीं कलेजे में खंजर मारकर उसने आत्महत्या कर ली।

—२ बी. महारानीबाग,
नयी दिल्ली-११००१४

फिल्म्स डिवीजन नहीं, फाइल्स डिवीजन

● तक्षक

सूचना और प्रसारण मंत्रालय के फिल्म डिवीजन ने, जिसके वृत्त-चित्रों और समाचार-चित्रों के दर्शकों की दैनिक संख्या लगभग पचास लाख है, इस साल अपनी स्थापना के २६ वर्ष पूरे कर लिये हैं। इस साल के शुरू में ही बर्लिन की अंतर्राष्ट्रीय कृषि-फिल्म प्रतियोगिता में फिल्म्स डिवीजन की पांच फिल्मों को पांच प्रमुख पुरस्कार मिल गये। इन पुरस्कारों से फिल्म्स डिवीजन को अंतर्राष्ट्रीय मान्यता मिली है।

ऐतिहासिक घटना

फिल्म्स डिवीजन को पांच पुरस्कार मिलना कई दृष्टियों से ऐतिहासिक घटना है। एक तो यह कि ऐसा पहली बार हुआ है कि किसी एक संगठन की पांच फिल्मों को एकसाथ पांच पुरस्कार मिले। दूसरे, ये सभी फिल्में फिल्म्स डिवीजन की एक ही यूनिट—दिल्ली यूनिट—द्वारा बनायी गयी हैं। तीसरे, इन पांचों फिल्मों के निर्माता एक ही व्यक्ति हैं—के. के. कपिल, जो १९५८ से कृषि-फिल्में बना रहे हैं। जिन पांच फिल्मों को पुरस्कार मिला है, वे हैं—श्री ओमप्रकाश शर्मा द्वारा निर्देशित 'मार्कफेड मार्चेज अहेड', जिसे संयुक्त राष्ट्र खाद्य और कृषि संगठन का 'ओसि-

रिस' पुरस्कार प्रदान किया गया है। मिस्र की पौराणिक कथाओं के अनुसार 'ओसिरिस' का अर्थ है—कृषि का देवता। दूसरी पुरस्कृत फिल्म 'द गोल्डन वाइन' को बर्लिन प्रतियोगिता का सर्वोत्तम पुरस्कार 'गोल्डन इयर' प्रदान किया गया है। इस रंगीन फिल्म के निदेशक हैं श्री चंद्रशेखर नायर। तीसरी फिल्म है श्री ए. ए. थिरुमलाई द्वारा निदेशित 'द फार्मर्स वाइफ' जिसे 'सिल्वर इयर' दिया गया है। चौथी पुरस्कृत फिल्म का नाम, जिसे 'ब्रोंज इयर' प्राप्त हुआ है, 'इनक्यूबेशन ऐंड हैचिंग' है और इसके निदेशक हैं निशीथ बनर्जी, जिन्हें बर्लिन की १९७२ की प्रतियोगिता में 'वाटर ऐंड लैंड' के लिए भी पुरस्कार मिल चुका है। पांचवीं पुरस्कृत फिल्म का नाम है 'सेफ्टी इन द यूज आॅव ट्रैक्टर्स'। इसे भी 'ब्रोंज इयर' से सम्मानित किया गया है और इसके निदेशक हैं श्री यश चौधरी।

जहां तक बर्लिन प्रतियोगिता का प्रश्न है, वह दुनिया में अपने प्रकार की अकेली अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता है। कृषि-फिल्मों की अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता और कहीं नहीं होती। इस बार की प्रतियोगिता में ३७ देशों की २३८ फिल्मों ने भाग लिया। इनमें अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस, जरमनी-जैसे अत्यंत विकसित देश भी शामिल हैं। फिर भी पांच प्रमुख पुरस्कार भारत को मिले। भारत की ओर से १३ फिल्में इस में भेजी गयी थीं।

श्री के. के. कपिल का कहना है कि रूखे विषयों पर भी हम ऐसी फिल्में बना सके हैं जिन्हें अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुए, क्या यह कम महत्त्व की बात है? लेखक ने जब उनसे पूछा कि क्या प्रति-

खजुराहो जैसी कलापूर्ण फिल्म के निदेशक: जे. एस. भावनगरी

महज शोर से भरी फिल्म एक्सप्लोरर (खोजी) के निदेशक प्रमोद पति

अर्चाचित फिल्म 'आई एस. २०' के निदेशक एस. एन. एस. शास्त्री

बद्ध होकर फिल्म बनाने में आपको असुविधा या उलझन नहीं महसूस होती, तो श्री कपिल ने कहा, "अच्छी और खास तौर पर सूचनात्मक और शिक्षाप्रद फिल्में बनाने के लिए प्रतिबद्धता जरूरी है।"

"लेकिन क्या आपने कोई ऐसी फिल्म भी बनायी है जो लोगों की दयनीय स्थिति को चित्रित करती हो या जिसमें लोगों की नाराजी दिखायी गयी हो ?"

श्री कपिल: "बिहार के सूखे पर 'रिपोर्ट आन ड्राउट' फिल्म में लोगों से जो इंटरव्यू लिये गये थे, उन्हें साहस के साथ वैसे-का-वैसा ही प्रस्तुत कर दिया गया। इसी भांति 'मेरी उम्र २० वर्ष' फिल्म में आजादी के बाद की पीढ़ी के बारे में साहसपूर्वक वास्तविकता दिखायी गयी है। छोटे किसानों को कर्ज देने के सवाल पर हम लोग एक फिल्म बना रहे हैं, जिसमें लोगों ने सरकारी योजना की खामियों के खिलाफ नाराजी जाहिर की है और हम उसे वैसे-का-वैसा ही दिखाएंगे। सबसे बड़ा 'आर्ट' सादी और वास्तविकतापूर्ण फिल्में बनाने में है और हमने यह 'आर्ट' सुरक्षित रखा है।"

फिल्म्स डिवीजन ने अपनी पहली न्यूजरील मई, १९४८ में प्रदर्शित की थी। तब से लेकर आज तक वह देश की प्रगति, सांस्कृतिक व ऐतिहासिक विरासत, महान व्यक्तियों, कला, संगीत, साहित्य, विज्ञान आदि पर करीब ३,००० वृत्तचित्र और १,५०० न्यूजरील बना चुका है। उसे
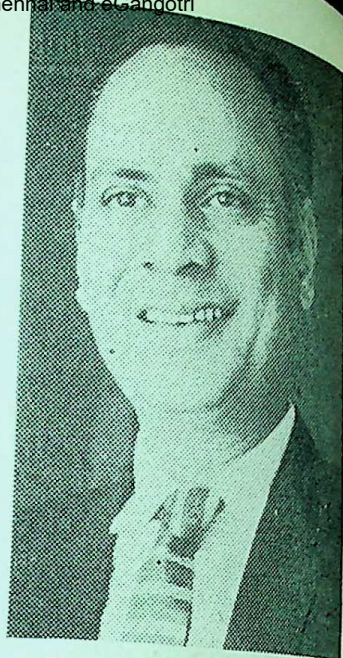
बर्लिन की अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म प्रतियोगिता में पुरस्कृत पांच कृषि फिल्मों के निर्माता: के. के. कपिल

न केवल बर्लिन में पुरस्कार मिला है बल्कि विश्व स्वास्थ्य संगठन, संयुक्त राष्ट्र आपात बाल सहायता कोष (यूनिसेफ) ने भी कभी उसे पुरस्कृत कर और कभी उससे फिल्में बनवाकर उसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्रदान की है। कुछ उल्लेखनीय फिल्में हैं—सुप्रसिद्ध चित्रकार मकबूल फिदा हुसैन की 'थ्रू द आइज आफ ए पेंटर' (जिसे केंस के विश्वविख्यात फिल्मोत्सव में पुरस्कार मिला), के. एस. चारी की 'फेस टु फेस', सुखदेव की 'इंडिया ६७', 'शास्त्री जी को श्रद्धांजलि' और 'अपराध की चेतना'। उसने कुछ अच्छी सूचनात्मक

फिल्में भी बनायी हैं, जैसे [illegible] शन टु इंचैंटमेंट' जो कश्मीर के सौंदर्य पर बनी है और डा. गोपाल दत्त की 'आवर फेदर्ड फ्रेंड्स', जो पक्षियों के बारे में है। इसी भांति श्री भावनगरी ने, जो फिल्म्स डिवीजन के मुख्य नियंत्रक थे, 'राधाकृष्ण', 'अकबर' और 'खजुराहो'—जैसी कलात्मक फिल्में बनायीं।

सरकारी प्रचार मात्र

ऐसी फिल्मों की सूची काफी लंबी खिंच सकती है, लेकिन तसवीर का एक पहलू यह भी है कि अनेक राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त करने, पत्र-पत्रिकाओं में प्रशंसा-भरे अनेक लेख छप जाने, देशी-विदेशी संगठनों के लिए फिल्में बनाने आदि के बावजूद फिल्म्स डिवीजन अपनी स्थापना के बाद से २६ वर्षों के लंबे अरसे में आज तक दर्शक वर्ग के मन में अपना कोई खास स्थान नहीं बना सकी है। उसे मात्र सरकारी प्रचार-तंत्र का एक भाग होने की ही 'प्रतिष्ठा' प्राप्त है। ऐसा क्यों है?

सबसे बड़ा कारण है लालफीताशाही, जो डिवीजन को अपनी प्रतिभा के संचित भंडार का सदुपयोग नहीं करने देती और जिसके रहते फिल्म्स डिवीजन अपने निदेशकों, फोटोग्राफरों, संपादकों, लेखकों आदि के बीच 'फाइल्स डिवीजन' के नाम से जानी जाती है। यदि फिल्म्स डिवीजन को लालफीताशाही यानी अफसरशाही और नौकरशाही से मुक्ति दिला दी [illegible] कर सकती है। यह लालफीताशाही ही थी जिसके कारण कुछ साल पहले श्री भावनगरी-जैसे कुशल निदेशक त्यागपत्र देकर चले गये थे। जब श्रीमती इंदिरा गांधी पहले-पहल सूचना और प्रसारण मंत्री बनी थीं तब उन्होंने फिर श्री भावनगरी को फिल्म्स डिवीजन का कार्यभार संभालने के लिए बुलाया। लेकिन इसके बाद भी भावनगरी वहां अधिक समय तक नहीं टिक पाये। पुरानी कला, स्थापत्य, ऐतिहासिक स्थानों, विभिन्न क्षेत्रों के महान व्यक्तियों आदि पर साफ-सुथरी तथा कलात्मक फिल्में बनाने के कार्यक्रम उन्होंने ही शुरू करवाये। फिल्म्स डिवीजन पर

डॉ. गोपाल दत्त जिन्होंने पक्षियों के बारे में फिल्म बनायी

लालफीताशाही हावी रहने की अनेक घटनाएं मिल सकती हैं। उदाहरण के लिए, यह लालफीताशाही ही थी जिसके कारण 'एशिया ७२' फिल्म मेला खत्म होने के एक माह बाद ही दिखायी जा सकी थी।

मंत्रालयों के आर्डर पर निर्माण

फिल्म्स डिवीजन की फिल्मों का स्तर ज्यादा अच्छा न होने का दूसरा कारण यह है कि उसकी अधिकांश फिल्में दूसरे मंत्रालयों के 'आर्डर' पर बनती हैं। दूसरे मंत्रालय अपने कार्यक्रमों के प्रचार-प्रसार के लिए फिल्म्स डिवीजन को फिल्में बनाने के 'आर्डर' देते हैं। यह काम यदि शुद्ध व्यावसायिक ढंग पर किया गया होता तो भी गनीमत थी, लेकिन यहां तो हालत

"मछली बाजार जा रहा हूं, कुछ फिल्मी गीत लिखने हैं।"

बिलकुल भिन्न है। एक तो सरकारी कार्यक्रम वैसे ही लचर होते हैं, क्योंकि वे सुनियोजित नहीं होते। दूसरे, उन कार्यक्रमों पर बननेवाली फिल्मों के निर्माण के काम में कदम-कदम पर मंत्रालयों के सचिव, संयुक्त सचिव, उप-सचिव आदि बड़े अफसर अड़ंगे लगाते हैं और इस प्रकार फिल्म्स डिवीजन के निर्देशक, लेखक, संपादक, कैमरामैन पूरी आजादी से काम नहीं कर पाते।

फिल्म्स डिवीजन की अधिकांश फिल्मों की कथा अंगरेजी में लिखी जाती है, चाहे फिल्म किसी क्षेत्रीय भाषा की ही क्यों न हो। यही कारण है कि उनमें विषय का मूलभाव नहीं उभर पाता। इस प्रकार फिल्म्स डिवीजन की फिल्में भी अनुवाद की सभ्यता में जी रही हैं। यही नहीं अंगरेजी में फिल्म की कहानी भी संबद्ध विभाग की प्रचार-पुस्तिकाओं के आधार पर लिखी जाती है और यह तो आसानी से ही समझा जा सकता है कि प्रचार-पुस्तिकाएं लिखनेवालों का आम जनता, किसानों, मजदूरों, खेत-खलिहानों, कल-कारखानों से कितना वास्ता है। हां, कला, ऐतिहासिक स्थलों, खेलकूद आदि पर बननेवाली फिल्में इसका अपवाद हो सकती हैं।

विभाग की भारी अवहेलना

सच तो यह है कि फिल्म्स डिवीजन की अत्यंत अवहेलना की गयी है। उसके पास उपकरणों की कमी है, अच्छे स्टूडियो

नहीं हैं, यहां तक कि गांवों में फिल्में दिखाने के लिए उसके पास अपनी गाड़ियां भी नहीं हैं। यही वजह है कि उसकी फिल्में कुछ चुने हुए लोगों को दिखाये जाने के बाद अकसर डब्बों में ही बंद रह जाती हैं। साथ ही फिल्म्स डिवीजन के निदेशक जब कभी अच्छी फिल्में बना लेते हैं तो उन्हें कोई प्रोत्साहन नहीं मिलता। अच्छे और बुरे निदेशकों को एक ही लाठी से हांका जाता है। दूसरी ओर यदि फिल्म्स डिवीजन हुसैन या सुखदेव-जैसे बाहर के व्यक्तियों को कोई फिल्म बनाने का काम सौंपता है तो उसका खूब प्रचार होता है। हुसैन की फिल्म 'थ्रू द आइज आफ ए पेंटर' को अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिला तो उसका खूब प्रचार हुआ, किंतु फिल्म्स डिवीजन में ही निदेशक के पद पर काम करनेवाले श्री निशीथ बनर्जी की फिल्म 'वाटर ऐंड लैंड' को अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिला तो फिल्म्स डिवीजन के ही 'इंडियन न्यूज रिव्यू' तक में उसकी कोई चर्चा नहीं हुई।

इसके अलावा हमारे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों की भांति फिल्म्स डिवीजन में भी खासी गुटबाजी फैली हुई है। कुछ फिल्मों में कोई प्रयोग हो या न हो, उन्हें साहसी प्रयोग कहकर प्रचारित किया जाता है। जैसे, प्रमोद पति की फिल्म 'एक्सप्लोरर' (खोजी), जिसमें महज शोर व व्यर्थ की अमूर्तता है और संप्रेषणीयता (कम्यूनिकेबिलिटी) तो कतई है ही नहीं, दूसरी ओर एस. एन. एस. शास्त्री द्वारा निदेशित 'आई एम २०' या के. एस. चारी द्वारा निदेशित 'फेस टु फेस' की चर्चा नहीं के बराबर हुई।

शिक्षाप्रद फिल्में बनें

दरअसल अब समय आ गया है जब कि फिल्म्स डिवीजन की फिल्मों में सरकारी प्रचार पर उतना जोर न दिया जाए, बल्कि वे सामाजिक रोगों पर प्रहार करनेवाली होनी चाहिए। साथ ही नये आविष्कारों, कृषि की नयी तकनीकों आदि पर सूचनात्मक तथा शिक्षाप्रद फिल्में बनायी जानी चाहिए। ऐसी फिल्में स्कूलों में दिखायी जाएं। चूंकि 'बाल फिल्म सोसाइटी' विफल रही है, इसलिए उसकी जिम्मेदारियों और कार्यकलापों को फिल्म्स डिवीजन द्वारा पूरा किया जाए। टेलीविजन तथा फिल्म्स डिवीजन एक ही मंत्रालय में हैं, इसलिए इनमें समन्वय होना चाहिए, और चूंकि जल्दी ही देश भर में टेलीविजन का जाल फैल जाएगा इसलिए फिल्म्स डिवीजन को उसके उपयोग लायक अच्छी फिल्में बनानी चाहिए ताकि घटिया बंबइया फिल्मों पर टेलीविजन की निर्भरता समाप्त हो।

लेकिन यह सब तभी संभव है जब कि फिल्म्स डिवीजन को अधिक आजादी मिले और उसे लालफीताशाही से मुक्त किया जाए, यानी वह 'फाइल्स डिवीजन' के बजाय सच्चे अर्थों में 'फिल्म्स डिवीजन' के रूप में ही काम कर सके। ●

शब्दवेध मेघ

राजेन्द्र यादव

एक पराजित वक्तव्य : २

ऐसी स्वीकृति और सचाई के साक्षात्कार की यातना और तकलीफ कितनी तोड़ने और कुचल देनेवाली होती है जब आप पायें कि जिस चीज की तलाश में आपने अपने जीवन और व्यक्तित्व का सर्वश्रेष्ठ दांव पर लगा दिया था, वह चीज इस दौरान अपनी सार्थकता खो बैठी है!

संसार की प्राचीनतम सभ्यता और संस्कृतिवाले देश और व्यक्ति ने अपने से बाहर जो प्रतिबद्धताएं घोषित की थीं, उनकी ओर ध्यान देने की उसे फुरसत ही नहीं मिली—क्योंकि अपनी हर 'सरहद' पर हमला था—भीतर का हर प्रांत और हर रेशा बिखर रहा था और एक खंड दूसरे के विरोध में उठ खड़ा हुआ था। जोड़ने और साधे रखनेवाले सारे संबंध समाप्त हो गये थे। सांस्कृतिक-बौद्धिक हो या सामाजिक-आर्थिक—हर स्तर और धरातल पर 'डेफिसिट-फाइनेंसिंग' में एक दिन को दूसरे दिन तक धकेल ले जानेवाला राष्ट्र या व्यक्ति कब तक अपने आपको या दूसरों को झूठे आश्वासनों और घोषणाओं में जीवित रख सकता था? चूंकि देने को किसी के पास कुछ भी नहीं था (योग, शांति, मार्गदर्शन, पुरानी संस्कृति-जैसी वे खोखली चीजें, जिनमें खुद हमें आस्था नहीं है, भिड़ाकर हम आधुनिक होने के ठोस उपकरण चाहते थे) इसलिए हर कोई सिर्फ लेनेवाला था! हममें से हर व्यक्ति महसूस करता था कि भभूत देकर जेट खरीदने का सौदा वस्तुतः किस आधार पर टिका है। इसलिए भीषण अविश्वास और असुरक्षा में सांसें लेने के माहौल में कौन, क्यों कुछ मूल्यों, आदर्शों, सिद्धांतों, दर्शनों और लक्ष्यों से चिपका रहता? इन सबको फालतू होना ही था!

'भीतरी आवाज' कहां है?

इस सबमें 'भीतरी आवाज' को दबाने और स्थगित करने का शायद प्रश्न ही नहीं था—यह तय करना भी तो सचमुच असंभव था कि आस-पास और अंदर गूंजती सैकड़ों आवाजों में भीतरी आवाज कौन-सी है और क्या ऐसी कोई आवाज है भी? शंका, अनिश्चय और

आज से छह मास पूर्व बीकानेर की इस हवेली के पिछवाड़े गाडोलिया लुहारों की चार गोरु गाड़ियां आयी थीं। कालांतर में सब गाड़ियां चली गयीं, पर जबरी की गाड़ी ने यहीं पर ठहराव कर लिया। धंधा जो चल गया था!

जबरी का अपना बहुत छोटा परिवार था। मां, बाप और वह। वही अपने मां-बाप की सहारा थी। विशेषतः उसे अपनी दुखभरी मां से अत्यंत ही लगाव था। उसके सुख-संतोष के लिए वह जान की बाजी तक लगा देती थी।

उसे बड़ी देर विमूढ़-सी खड़ी देखकर उसकी मां ने पूछा, "यूं अबोली क्यूं खड़ी है?"

"नहीं तो मां!" वह चौंक-सी पड़ी।

मां ने गाड़ी के चक्के के सहारे रखी कांसे की थाली को ओढ़नी के पल्लू से पोंछते हुए कहा, "अरे याद आया, हवेली से बुलावा आया था। छोटे कुंवर ने कहलवाया है कि उन्हें अपनी दूकान के लिए सौ चींपिए (चिमटे) चाहिए। जाकर बात पक्की कर आ।"

उसने लंबी सांस ली। घाघरे को झड़काकर उसने खेजड़े पर बैठे घुग्घू को देखा। फिर गाड़ी पर चढ़कर बोली, "मेरे माथे में पीड़ है मां, मैं थोड़ी देर तक सोऊंगी।"
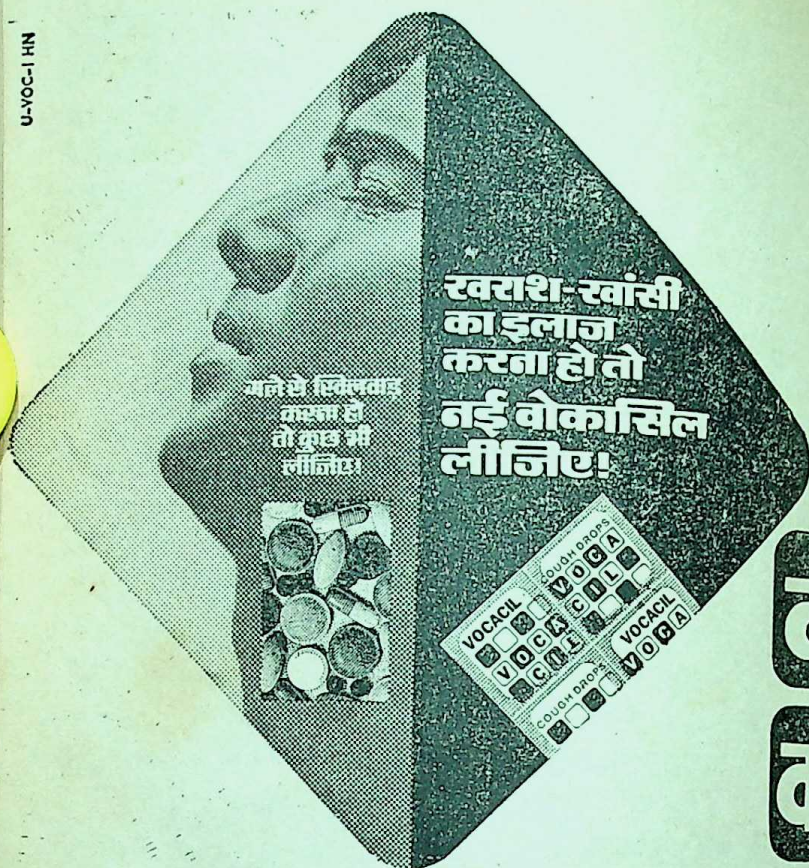
वह लेट गयी। सांझ के ढलते सूर्य के कारण धूप के टुकड़े मक्खियों की भांति उड़ने लगे। घुग्घू भी जोर से पंख फड़फड़ाकर उड़ गया। उसे वह नीले आकाश में लुप्त होती देखती रही। पीपल पर कौओं की जोड़ी ने अपने घोंसले में आसरा ले लिया।

जबरी कहीं भीतर से टूट गयी थी। उसे लग रहा था कि उसके अंग-अंग निर्जीव हो रहे हैं। वह अपने आप से ऊब-सी गयी थी।
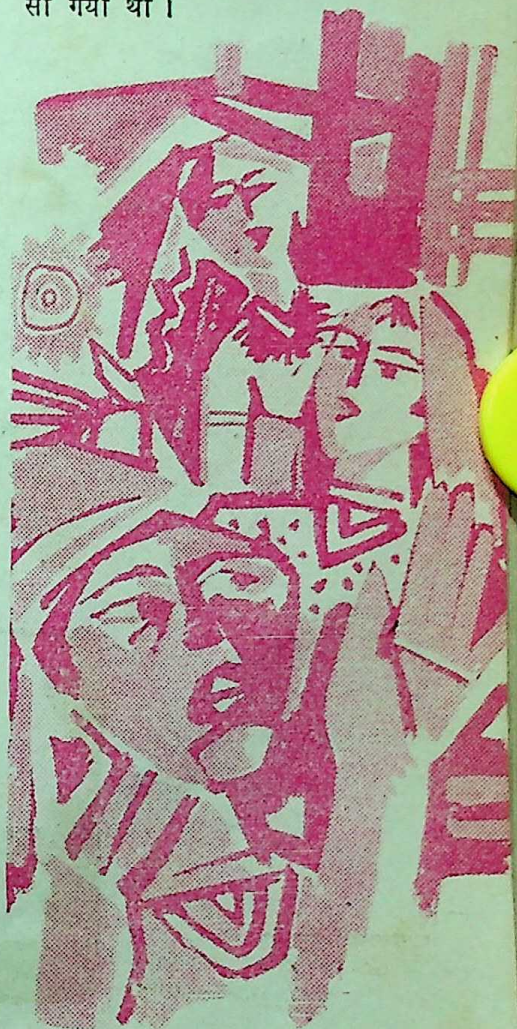
खराश-खांसी
का इलाज
करना हो तो
नई वोकासिल
लीजिए!

VOCACIL COUGH DROPS

रात भैंस के चमड़े-जैसी लगने लगी थी। खेजड़ा और पीपल अंधेरे में प्रेतात्माओं-से प्रतीत हो रहे थे। सामने शिवमंदिर में आरती के बाद का गहरा सन्नाटा पसर गया था।

एक ऊंटसवार अपने ऊंट को 'जैका' रहा था। जब ऊंट बैठ गया तब वह उसके 'पलाण' को कसने लगा। फिर वह उस पर सवार हो गया। उसका साफा जीर्ण-शीर्ण था। बगलबंदी पर पसीने के चगदे उभरे हुए थे। ऊंटसवार उसकी गाड़ी के पास आकर रुक गया। बोला, "ऍं लुहारिन, चीपियो है के?"

घर आये गाहक ने जबरी की मां में उत्साह भर दिया। तवे पर से रोटी उतारकर उसने उस ऊंटसवार को देखा। उसे यह समझते देर नहीं लगी कि वह कौन है। पूछ बैठी, "चौधरी है के?"

"हां . . . चीपिये के कित्ते पैसे?"

"एक रुपयो।"

"घणा पैसा क्यूं बोलती है डोकरी!"

"भाइड़ा, हर चीज कित्ती महंगी हो गयी है! ला दू बारह आना ही दे दे।

ऊंटवाले ने उसे बारह आने दे दिये। चीपिया लेकर वह कोई गीत गुनगुनाने लगा। उसका स्वर और वह धीरे-धीरे घुमावदार रास्तों में खो गये।

●●●

अंधेरा जमीन पर उतर आया था। जबरी का बाप दारू पीकर वहां आ गया था। वह आते ही हकलाता हुआ बोला, "उस ऊंट पर कुण आयो हो?"

"कोई गाहक।"

"कुछ ले गयो?" वह डोकरी के निकट आ गया। दुर्गंध भभककर चारों ओर फैल गयी। सदा की अभ्यस्त डोकरी की आकृति पर उस बदबू की कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। वह विश्वासपूर्वक बोली, "उसे माल पसंद नहीं आया।"

बस वह खूसट बिगड़ गया। बोला, "तेरी जीभ बहुत ही लप्पर-लप्पर करती है। कभी छुरी से काट डालूंगा।"

"अरे जा रे, जा! आया है काटनेवाला! मरद होकर घरवाली को दो टुकड़े तो डाल नहीं सकता और बातें करता है जीभ काटने की!"

"हरामजादी मानती नहीं!" वह नशे में धुत्त था। आपे से बाहर होकर उसने सचमुच समीप रखे, तपे लोहे को पीटनेवाले भारी हथौड़े को उठा लिया।

इस बीच जबरी जाग गयी। उसने जो दृश्य देखा, उससे वह कांप उठी। उछलकर वह बापू के पास आयी। एक झटके में हथौड़ा छीन लिया। फटकारा, "क्या पागलपन मचा रखा है!"

"यह चुड़ैल मुझसे जबान लड़ाती है। मैं आज इसका खात्मा कर दूंगा।"

जबरी ने मां को शांत किया, "तू चुप रह मां, बापू तो नशे में चूर है। इसे तो अच्छी-बुरी की सुध ही नहीं, पर तू..."

मां ने जबरी पर आरोप लगाया, "तूने ही तो इसे तीन कौड़ी का किया

छींट का था। उसमें उसका यौवन ज्वार आये सागर की भांति उमड़ा हुआ था। उसके पति के आने की आहट हुई। उसके बदन में एक ठंडी-ठंडी-सी झुरझुरी छूट गयी—"मेरा धणी आ रहा है।" उसने घूंघट खींच लिया। झट से फूंक मारकर दिया बुझा दिया। उसके धणी ने खंखार कर झोपड़े में प्रवेश किया। वह जान गयी थी कि उसका मौट्यार (पति) अब क्या करेगा। उसकी भायली (सखि) ने यह सब उसे कितने उत्तेजक ढंग से एक बार बताया था, पर उसकी प्रतीक्षा निष्फल गयी। उसका पति आकर उसके पास चुपचाप सो गया। वह तुरंत खर्राटे भरने लगा, पर जबरी की आंखों में नींद कहां! ठंड की रात वैसे ही लंबी होती है, अब उसे वह रात अंगारों-सी सुलगती और लंबी लगने लगी—जिसका कभी प्रभात नहीं आएगा, ऐसी रात। आखिर उसने अपने पति को झिंझोड़ा, "तुम सो गये, मुझे अकेली को डर लगता है।"

वह दूसरी ओर करवट बदलकर बोला, "डर किस बात का? अठे (यहां) मानखो रवे हैं, कोई भूत-पलीत नहीं।

"तेरो डील (शरीर) तो चोखो है।"

"बिलकुल, आज मैं ज्यादा थक गयो हूं, इसलिए तू सो जा..."

पर हजारों सपनों को मन में संवारे जबरी को नींद नहीं आयी। उसके तन-मन में समस्त रात्रि कुछ लावा-सा पिघलता रहा, कुछ उबाल-सा आता रहा।

लेकिन तीसरी रात उसका धैर्य जाता रहा। उसे पूरी तरह अहसास हो गया कि उसका पति उसके लिए केवल एक '**नाम**' ही बनकर रह सकता है। उसका पति आदमी नहीं है और ऐसे के

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. **ये** वृत्त पांच महाद्वीपों की एकता के प्रतीक हैं। शब्दों के अर्थ हैं—अधिक वेग से, अधिक ऊंचाई पर, अधिक शक्ति के साथ। २. **क्रिकेट**। ३. **तीन** कि. मी. प्रति-घंटा। ४. **साठ** रुपये में। ५. **स्वीडन** के हैरी मार्टिसन एवं यिविंद जानसन को। ६. १५ सितंबर, १९६५ को ईरानी संसद के दोनों सदनों ने यह उपाधि दी थी। ७. **पी.** के. राय। ८. **डॉ.** बी. के. मदान (अध्यक्ष), आर. पी. बिलिमोरिया, जी. रामानुजम, डॉ. एस. डी. पुणेकर। ९. **यकृत** में। १०. **ख**। ११. **ग**। १२. **क**। १३. **उत्तरप्रदेश**। १४. १३८. १५. **मई** १८, १९६९: स्टैफर्ड, यंग, करनैन; नवंबर १४, १९६९: कोनराड, रिचर्ड, गार्डन जूनियर, बीन। १६. **रवीन्द्रनाथ** ठाकुर के बड़े भाई द्विजेंद्रनाथ ठाकुर के पौत्र सौम्येंद्रनाथ ठाकुर का। १७. २९,९७,९२,४५९ मीटर प्रति-सेकंड। १८. ३.४५ लाख टन। १९. **ख**।

साथ वह अपना जीवन खराब नहीं कर सकती।

आखिर वह अपने पीहर आयी। मां को सारी बातें बतायीं। मां ने बाप को लताड़ा। उसे एक हजार ओलमें देकर कहा, "तूने मेरी टींगरी की जिनगानी खराब कर दी।"

तब बाप ने तुरंत संबंध-विच्छेद की घोषणा कर दी। पंचायत से फैसला करा लिया। उसका आरोप था कि उसके साथ छल हुआ है। उसके जंवाई ने यह नहीं बताया कि वह जनखा है। पंचायत ने उसकी बेटी को स्वतंत्र कर दिया।

इसके बाद उसके बापू का पीना बढ़ता गया। जब-जब पैसों का अभाव होता था तब-तब वह फिर जबरी का विवाह करने की सोचता था। और जबरी में विवाह के नाम पर एक ठंडापन आ गया था।

इसी बीच उसके समाज की कई गाड़ियां रोजी की खोज में चल पड़ीं। घर कूंचा, घर मंझला ... एक गांव से दूसरे गांव ... एक नगर से दूसरे नगर।

फिर जयपुर। गुलाबीनगर में उनका पड़ाव चांदपोल के पास ही हुआ। पर जबरी का मन पहाड़ी घाटी-सा सूना-सूना था। एकांत की दुर्वह पीड़ा ने उसके मन में एक अरुचि को जन्म दे दिया था और वह यांत्रिक गति से काम करती थी। भट्टी के सामने बैठकर वह धौंकनी चलाती थी। फिर तपे लोहे पर हथौड़ा मार-मारकर उसे आकार देती थी। तब उसका कांचली में से झांकता हुआ शरीर स्वेद-कणों की गरिमा से और निखर जाता था। वह सोचने लगती थी कि वह भट्टी का तपा हुआ लोहा है, उसे कौन आकार देगा?

उसका बापू शराब में डूबा रहता था। एक दिन वह एक ट्रक की झपेट में आ गया। कई चोटें आयीं, पर वह बच गया। तब 'कानू' ने उसकी बड़ी मदद की थी—तन, मन और धन से। आहिस्ता-आहिस्ता वह कानू के अहसानों से दब गयी। कितना बांका और गठीला था कानू! उसके स्पर्श में कितना माधुर्य था। उसकी बांहों में कितनी उत्तेजना थी! आज भी उसकी अनुभूति कर वह एक आनंद से भर-भर आती है!

जब उसके बापू को छुट्टी मिल गयी तब वे दोनों आमेर की पहाड़ियों में मिले थे, जहां एकांत था।

उसने ही कहा था, "कानू । तू मेरी मदद नहीं करता तो मेरा बापू मर जाता।"

फिर वह उसके निकट आकर बोली, "कानू ! तूने मेरे बापू को अपना खून भी दिया है।"

वह न जाने क्या-क्या बोलती जा रही थी और कानू तो कुछ और ही सोच रहा था—जैसे जबरी, उसका यौवन, उसकी आंखें, उसके होंठ, सीना और ... वह थूक को निगलकर बोला, "जबरी! तू कित्ती फूटरी (सुंदरी) है!" वह उसकी ओर बढ़ा।

फिर जबरी के मन-प्राण में फूल उग

आये। दोनों का प्रेम गहरा होता गया। कानू ने कहा, "भाग चलो जबरी! अब हम यहां सुख से नहीं रह सकते।"

जबरी को मनपसंद मर्द मिल गया था। उसने भी उसकी बात का समर्थन किया, हालांकि कानू विवाहित था, चार बच्चों का बाप था।

भागने की बात जितनी सहजता से कही गयी थी, उसको क्रियान्वित करना उतना ही दूभर हो रहा था। मां का खयाल कर वह कमजोर पड़ गयी।

कानू ने उस पर दबाव डाला।

उसने जबरी को आश्वस्त कर दिया कि दोनों का भागने में ही कल्याण है।

निर्णय हो गया कि वे दोनों भागेंगे पर भागनेवाले झांझरके (तड़के) के पहले कानू की वहू अपने चार बच्चों को लेकर आ गयी। जबरी को अकेले में ले जाकर अपनी झोली फैला दी, "तू भी लुगाई है, तुझसे मेरी पीड़ छिपी नहीं, मेरे टाबर (बच्चे) गली-गली में रुल (भटक) जाएंगे . . . मेरा बसा-बसाया घर उजड़ जाएगा . . ."

जबरी को लगा कि वह ठीक नहीं कर रही है। उसने कानू की वहू को विश्वास दिया, "तेरा घर नहीं उजड़ेगा।"

"यदि तू यहां रहेगी तो मेरा घर जरूर उजड़ जाएगा। जबरी; तू मेरी छोटी बैन है, मेरी बिनती सुन। तू ठहरी जात की लुहारिन। कहीं भी कमाकर खा लेगी, पण मैं गरीब उस (कानू) के बिना दर-दर की भिखारिन हो जाऊंगी। तू चली जा . . . अभी ही चली जा . . . तेरा घर तो यह गोरु गाड़ी है। इसको उठाने-वसाने में कितनी देर लगेगी। वह झांझ-रके को आये, इसके पहले ही . . ." उसने जबरी के फिर पांव पकड़ लिये।

जबरी ने उसे सीने से लगाकर कहा, "मैं जन्मजात निरभागी हूं। अभी ही चली जाऊंगी।"

और उसने अपने सामान को गाड़ी पर रखा और चल पड़ी।

कोचरी फिर बोलने लगी थी। जबरी उठ गयी। उसे सेठ के छोटे कुंवर की याद हो आयी। कितने भले और फूटरे हैं कुंवर! वह एक दिन नहीं जाती है तो उनका मन नहीं मानता। किसी-न-किसी बहाने बुला लेते हैं। उसके रूप-रंग की प्रशंसा करते हैं। कहते हैं, 'गाड़ी में कोई घर होता है, अरे तेरे लिए एक छोटा-सा घर बनवा दूंगा।' कभी-कभी अकेले में उसके अंगों को छू भी लेते हैं। प्यार से कहते हैं, 'तू तो जबरी हवेलियों में रहने लायक है। तू हां भर ले तो मैं तुझे अपनी पर्दायतण बना लूं। सब कुछ छोड़ दूं।'

और जबरी का मन इन बातों को याद कर अथाह पीड़ा से भर आया। सोचने लगी, एक दिन छोटे कुंवर की बहू, उसका बूढ़ा बाप, उसके बच्चे; सबके सब उसके आगे पल्लू बिछाकर भीख मांगेंगे। कहेंगे, 'क्यों किसी का बसा-बसाया घर उजाड़ रही हो जबरी ?'

सच ही तो है कि सब के घर बसे हुए हैं। एक उसी का ही तो घर नहीं बसता... उसका घर कहां ?...घर, एक गाड़ी...

उसकी आंखों से टपक-टपक आंसू ढुलक पड़े। उसने अपने आपसे कहा. "चल जबरी लुहारिन, अपनी गोरुगाड़ी में बालद जोत और चल पड़—किसी नये नगर में...तेरा कुंवर तेरे लिए कोई तूफान मचाये, इसके पहले चल पड़...तेरे भाग में मरद का सुख नहीं..."

और जबरी ने कहा, "मां...ओ मां, हम कल यहां से चल पड़ेंगे...यहां बापू की संगत बहुत खराब हो गयी है...खूब दारू पीने लगा है...झांझरके ही चल देंगे।"

झांझरके के धुंधले उजास में जबरी की गोरु गाड़ी चल पड़ी। मां विस्मित थी और बापू बड़बड़ा रहा था। गाड़ी रिंगचू-रिंगचू चल रही थी। पीछे कालू चल रहा था। ...घर कूंचा : घर मंझला...

जबरी छोटे कुंवर की दी हुई नयी चूड़ियां उतार-उतारकर रास्ते में फेंक रही थी।

और, दूर एक पेड़ के पास आकाश की ओर अपना बंधा मुंह उठाये एक ऊंट जैसे किसी से कुछ याचना कर रहा था।

—साले की होली, बीकानेर
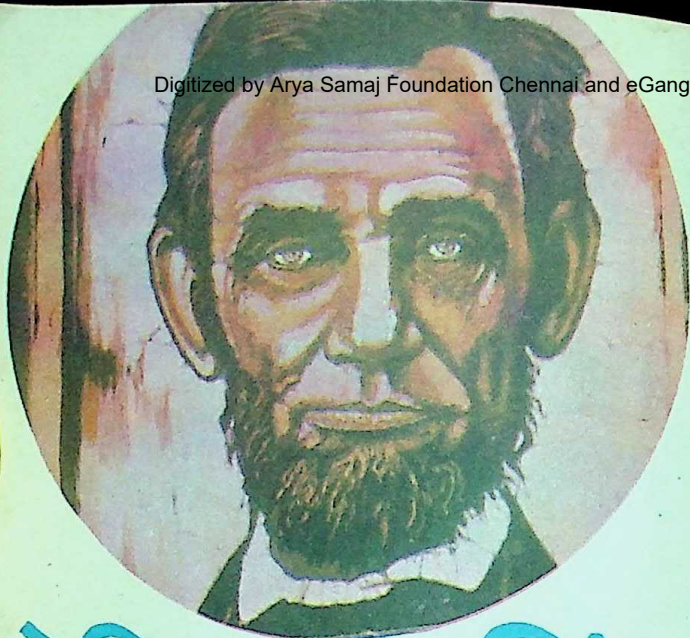
लेनिन और लिंकन

बातिक चित्र : जे०

छाया : एम० एस०

● डी. दत्त

अब्राहम लिंकन तथा व्लादीमीर इलिच लेनिन उन्नीसवीं शताब्दी में जन्मी दो महान विभूतियां हैं। इन दोनों महान प्रतिभाओं ने दो बड़े राष्ट्रों के जनमत को पर्याप्त प्रभावित तथा प्रेरित किया है। राष्ट्रीय क्रांतिकारी शक्तियों को सफलता दिलाने में लेनिन की विचारधारा ने चमत्कार दिखाया है, तो अब्राहम लिंकन के विचारों ने भी अमरीकी जनमानस को स्वाधीनता और जातीय एकता के मानवीय गुणों से परिचित कराया है। लिंकन को सफलता उन्नीसवीं शताब्दी में ही मिल गयी थी और लेनिन को बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में मिली। लेकिन इन दोनों महान जन-नेताओं के कार्य और विचार आज भी क्रांति और मनुष्यता के लिए आदर्श हैं।

अब्राहम लिंकन अमरीकी समाज के निचले तबके से आये थे, इसलिए वे जीवन-पर्यंत अपने समाज के उद्धार के लिए कार्यरत रहे। इस दृष्टि से लेनिन और लिंकन में पर्याप्त समानता है। लेनिन सताये हुए, शोषित जनों के उद्धारक के रूप में न केवल रूस में ही प्रख्यात हैं अपितु रूस से बाहर भी किसानों और मजदूरों के लिए एक ऐसी विचारधारा के 'प्रतीक' हैं जो 'लेनिनवादी' विचारधारा के रूप में स्थापित है। अब्राहम लिंकन और लेनिन की ख्याति और महानता के मूल में सर्वग्रासी जड़ व्यवस्था के स्थान पर एक नये विकल्प की स्थापना तथा अपने-अपने समाजों में एक नयी सामाजिक चेतना देना है। अब्राहम लिंकन ने अमरीकी जन-चेतना में समानता के लिए जो दृष्टि जाग्रत की थी, वह दास-प्रथा की समाप्ति के रूप में सामने आयी और लेनिन ने राजशाही द्वारा बनाये गये आर्थिक दासों अर्थात रूस की प्रजा की मुक्ति के लिए महान संघर्ष छेड़ा। अतः इसमें संदेह नहीं है कि लेनिन और लिंकन वस्तुतः संत्रस्त मनुष्यता के मुक्तिदाता थे।

सामने के पृष्ठ पर बातिक चित्र के कलाकार : जे. साहा

लिंकन--दासों के मुक्तिदाता

अब्राहम लिंकन का जन्म १२ फरवरी, १८०९ को एक गरीब परिवार में हुआ था। यह घोर अशिक्षा में पड़ा हुआ परिवार था। जे. डब्लू. फेल को लिखे एक पत्र में लिंकन ने स्वयं स्वीकार किया है कि वे बिना विधिवत शिक्षा पाये बड़े हुए। २२ वर्ष की उम्र तक खेतों में काम करते रहे। लिंकन जब सिर्फ छह वर्ष के थे तभी उनके पिता की मृत्यु हो गयी थी। बहुत बाद में जाकर लिंकन ने कानून की पढ़ाई की। आश्चर्य का विषय यह है कि आरंभ में लिंकन को राजनीति में कोई दिलचस्पी नहीं थी। १८३२ में चुनाव जीतने के बाद लिंकन यद्यपि तीन सत्रों तक विधानमंडलों के लिए चुने जाते रहे,
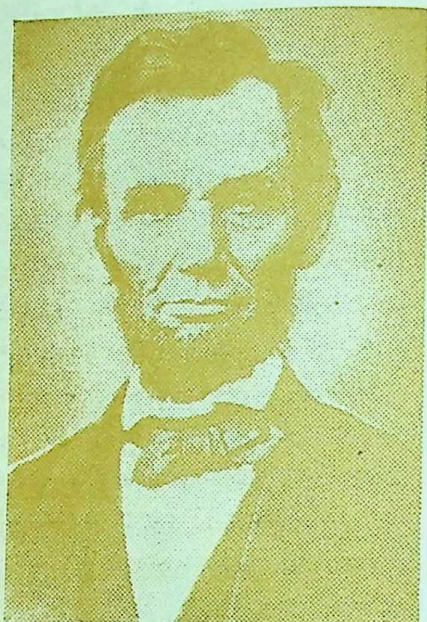
संत्रस्त मानवता के मुक्तिदाता : लिंकन

पर दोबारा चुने जाने के लिए वे उतने उत्सुक नहीं थे। जैसे-जैसे लिंकन की आर्थिक स्थिति में सुधार होता गया, वे अपने लोगों की सहायता के लिए सदैव आगे आते रहे। ऐसे अनेक उदाहरण हैं। परंतु १८५१ में जांस्टन को एक पत्र में लिंकन ने यह प्रेरणा दी थी कि आदमी को अपना रास्ता खुद बनाना होता है। असल में लिंकन आरंभ से ही मनुष्यता और सदाशयता के द्वंद्व को भी मानवीय तर्क के आधार पर ही स्वीकार करते हैं। १८५७ में स्वाधीनता के घोषणा-पत्र पर अपनी टिप्पणी प्रस्तुत करते हुए लिंकन ने घोषणा-पत्र की नयी व्याख्याएं सामने रखीं। स्वाधीनता के घोषणा-पत्र की यह आलोचना लिंकन के विचारों की पहली कड़ी है, क्योंकि लिंकन ने पहली बार कानून-निर्माताओं की कड़ी आलोचना की थी।

लेकिन लिंकन को राष्ट्रव्यापी ख्याति दिलानेवाला उनका वह भाषण है जो उन्होंने रिपब्लिकन पार्टी के सिनेटर की हैसियत से १८५८ में तैयार किया था। पार्टी के चुने हुए पदाधिकारियों की सभा में एक को छोड़कर सभी साथियों ने उस लिखित भाषण को पढ़ने के कार्यक्रम का विरोध किया था। उनका विचार था कि इससे पार्टी को कई खतरे और नुकसान होंगे। वह भाषण लिंकन ने पढ़ा और वे चुनाव में बुरी तरह पराजित हुए, रिपब्लिकन पार्टी को भी काफी नुकसान हुआ लेकिन उसके तुरंत बाद लिंकन अमरीका के बहुचर्चित व्यक्तित्व के रूप में प्रख्यात हो चुके थे। लिंकन एक अच्छे विचारक और एक बहुत अच्छे वक्ता थे। १८५८ का भाषण स्पष्ट करता है कि लिंकन अमरीकी भूमि से 'दासता' का दाग सदैव के लिए मिटा देना चाहते थे।

अमरीका के दक्षिणी प्रदेशों में दास-प्रथा अत्यंत घृणित तथा पाशविक रूप में वर्तमान थी, जिसकी ओर लिंकन ने राष्ट्रपति बनने से पहले कई बार प्रबुद्ध-जनों का ध्यान खींचा था। लिंकन ने घोषणा की थी कि मेरा पहला कार्य सभी दासों को मुक्त करने का होगा तथा उन्हें अपनी मूल भूमि की ओर लौटने की सुविधा

देना होगा। १८६१ से १८६४ तक गृहयुद्ध की भीषणता में भी लिंकन ने अपनी दृढ़ता और संतुलन बनाये रखा और वे निरंतर उत्तर और दक्षिण के लोगों के हित में निर्णय लेते रहे। युद्ध की भयानकता और सैनिक अफसरों की मनमानी सहते हुए लिंकन ने दासप्रथा की समाप्ति का जो संकल्प लिया था, उसे पूरा किया और अमरीकी क्षितिज में मनुष्यता का एक नया द्वार खोला।

क्रांतिदूत लेनिन

तमाम मनुष्यों को समानता दिलाने का जो अभूतपूर्व काम अमरीकी महाद्वीप में लिंकन ने कर दिखाया था, यूरोप में और विशेषकर रूस में मजदूरों के अमानवीय शोषण के इतिहास को बदलने का वही काम लेनिन ने किया। मार्क्सवादी विचारधारा के मुताबिक सर्वहारा के अधिनायकवाद की स्थापना के लिए लेनिन अनेक वर्षों तक संघर्ष करते रहे। लेनिन १८७० में एक सामान्य परिवार में जन्मे थे। वोलगा नदी के तट पर पानी की गति देखकर अमरीकी पत्रकार जान रीड ने ठीक ही कहा था कि लेनिन को यहीं, इसी भूमि में पैदा होना था। लेनिन को पढ़ने का बहुत शौक था। उन्होंने वेलिन्स्की, हरजेन तथा चेर्नी-शेवस्की–जैसे समाजवादी विद्वानों की रचनाएं पढ़ी थीं और अपने क्रांतिकारी स्वभाव का परिचय स्कूली शिक्षा के दिनों में ही दे दिया था। जार की हत्या के षड्यंत्र में लेनिन के भाई अलेक्जेंडर को सजा हुई थी। उसके कुछ अरसे बाद विद्यार्थियों के एक क्रांतिकारी जलूस में भाग लेने के कारण लेनिन को भी सजा हुई। पढ़ाई बीच में ही छूट गयी। जब लेनिन से कहा गया कि देखो, तुम्हारे सामने दीवार है (व्यवस्था की दीवार) तो लेनिन ने कहा, "हां, लेकिन सड़ी हुई दीवार। एक जोरदार धक्का दो तो वह गिर पड़ेगी।" जेल में लेनिन के साथी आपसी बातचीतों में एक-दूसरे से पूछते थे कि 'अब भविष्य में क्या करोगे?' जब यह सवाल लेनिन के सामने आया तो उन्होंने सोच-विचार कर जवाब दिया, "मेरे पास अब कोई विकल्प नहीं है, मेरे बड़े भाई ने मुझे रास्ता दिखा दिया है।"

किसान और मजदूरों के रहनुमा : लेनिन

वस्तुत: लेनिन एक जन्मजात क्रांतिकारी थे। उन्होंने सोवियत जनता की पीड़ा को बहुत करीब से देखा था। १८९३ में लेनिन पीटर्सबर्ग में आये थे और वहीं उनका संपर्क अनेक लोगों से हुआ। १९वीं शताब्दी से २०वीं शताब्दी की ओर मुड़नेवाला यह समय सोवियत जनता के लिए बहुत उतार-चढ़ाव भरा था। इन दिनों लेनिन सोवियत कामगारों के बीच काम करते थे। यहीं रहकर उन्होंने कार्ल मार्क्स के वैचारिक रूप को क्रियात्मक स्वरूप प्रदान करने का काम किया। लेनिन की इन्हीं गतिविधियों के कारण १८९७ में उन्हें तीन वर्ष की सजा हुई। साइबेरिया में रहकर इन तीन वर्षों में लेनिन ने ३० कृतियों की रचना की।

अपने समय में, क्रांति से पूर्व लेनिन को अनेक विरोधों का सामना करना पड़ा। जारशाही की ताकत के अतिरिक्त प्रति-क्रांतिकारियों, उदारपंथियों और कुछ साधारण समाजवादी जत्थों का विरोध भी लेनिन को सहना पड़ा, लेकिन वे इतने दृढ़ और नीति-निपुण थे कि वे निरंतर वर्ग-संघर्ष के परिपुष्ट आधार को लेकर सोवियत जनता को क्रांति के लिए तैयार करते रहे।

९ जनवरी, १९०५ को रूसी क्षितिज में क्रांति की पहली शुरूआत हुई थी। लेनिन यद्यपि उस समय राजनीतिक प्रवासी की हैसियत से जेनेवा में थे तथापि उन्होंने गहराई से क्रांति के इस पहले कदम का अध्ययन किया और रूसी क्रांति पर एक सशक्त लेखमाला लिखी। ९ जनवरी को पीटर्सबर्ग में फैक्ट्री-मजदूरों के शांतिपूर्ण जुलूस पर चलायी गयी खूनी गोलियों ने पूरे सोवियत राष्ट्र को स्तब्ध कर दिया था। इस घटना ने जो नयी चेतना दी उसे लेनिन ने हथियारबंद लड़ाई की जरूरत से जोड़ा और कहा कि जार को पदच्युत करने के लिए अब यही रास्ता है।

क्रांतिकारी लेनिन बहुत शानदार आदमी थे। उन्हें कविता, थियेटर, संगीत का शौक था। अपने विरोधियों के प्रति उनका रवैया काफी सख्त था, लेकिन वे अनेक प्रतिपक्षी समाजवादियों को सही सलाह देने से नहीं चूकते थे। लेनिन सही माने में एक मजदूर नेता थे, लेकिन इससे भी ऊपर वे एक क्रांतिदृष्टा थे जिन्होंने दलित मानव-जाति के लिए क्रांति का मार्ग प्रशस्त किया है। बीसवीं शताब्दी की प्रत्येक क्रांति के पीछे लेनिन की प्रेरणा आज भी स्वीकार्य है। हालांकि १९०५ की क्रांति की असफलता ने बहुत से सोवियत बुद्धिजीवियों और सक्रिय कार्यकर्ताओं में निराशा भर दी थी, किंतु लेनिन कृतसंकल्प थे। जारशाही द्वारा घोर दमन क्रांति के लिए रास्ता तैयार कर रहा था। लेनिन की क्रांति में आस्था कभी कम नहीं हुई थी। १९१० में क्रांति के एक और उफान ने लेनिन की आशावादिता को ज्यादा मजबूत किया था। लेनिन वे पूंजीवादी-साम्राज्यवादी सत्ता से मुक्ति के

लिए शोषित जनता का आह्वान किया था और इसमें संदेह नहीं है कि लेनिन को इसमें सफलता मिली थी।

समाजवादी व्यवस्था की स्थापना के लिए लेनिन ने जो भूमिका निर्मित की थी उसकी सफलता अक्तूबर-क्रांति में फलित हुई थी। परंतु अक्तूबर-क्रांति के लिए लेनिन और सोवियत जनता ने जो कुछ किया था वह कम अद्भुत नहीं है। लेनिन ने सर्वहारा को सत्ता दिलाने की जो रण-नीति तैयार की थी, वह पूर्णतया सफल हुई तथा अनेक सोवियत प्रांतों का मिला-जुला संघ बनाकर राष्ट्रीय एकता का नया प्रतिमान कायम किया गया।

शोषण, हिंसा, नफरत और अलगाव को दूर करने के लिए सोवियत देश में लेनिन के प्रयत्नों से जो सफलता मिली, वह संसार के सभी समाजवादी देशों के लिए आदर्श का काम करती है।

लिंकन और लेनिन दो भिन्न व्य-वस्थाओं के संस्थापक हैं, लेकिन उनके जीवन में सक्रिय कार्यकर्ताओं के बीच रहनेवाली समानताएं हैं। दो भिन्न दिशाओं में मानवता की रक्षा और शोषण का विरोध इन दोनों महान विभूतियों के संकल्प का एक अंग था। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, लिंकन और लेनिन मान-वता के लिए ज्यादा सार्थक और जीवंत होते जाते हैं।

—द्वारा डॉ. राजेश अरोड़ा, आर—८२९,
न्यू राजेंद्रनगर, नयी दिल्ली-६०

गोर्की की दृष्टि में लेनिन

लेनिन ने लोगों को परंपरागत जीवन जीने से रोकने का प्रयत्न किया, मैं नहीं जानता कि इससे लोगों के मन में उसके प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ या घृणा। घृणा तो नग्न और निराशा-जनक रूप में स्पष्ट दिखायी देती थी, किंतु अनेक लोगों के हृदय में उसके प्रति जो प्रेम था वह उस अंध-विश्वास की भांति था जो हारे-थके और निराश लोगों में किसी चम-त्कारी व्यक्ति के प्रति होता हैं। ऐसा प्रेम जो चमत्कार की प्रतीक्षा तो करता है, किंतु जीवन में शक्ति उत्पन्न नहीं करता।

लेनिन और संगीत

मैं प्रायः संगीत में डूबा नहीं रह सकता। उससे मुझे मानसिक तनाव होने लगता है। जो लोग गंदे स्थानों में रहते हुए भी ऐसी सुंदर रचना कर सकते हैं उनका सिर सहलाने को जी चाहता है, किंतु वर्तमान समय में सिर सह-लाने से लोग तुम्हारा हाथ काट लेंगे। उनके मस्तिष्क पर निर्मम प्रहार करना चाहिए। यद्यपि हमारा आदर्श है कि लोगों के प्रति हिंसा न की जाए तथापि हमारा कर्त्तव्य बहुत कठोर है।

—संकलन : सरोज वशिष्ठ

तब मैं कोटा से १३ मील दूर ओ. पी. सी. लि. में ट्रेनी इंजीनियर था। हेड आफिस (बंबई) से पत्र आया कि एक्सपोर्ट प्रमोशन के लिए अपने प्रोडक्ट्स (केबल्स) के विषय में डाक्यूमेंट्री फिल्म बनाकर एक डेलीगेट के साथ भेजिए। अतः नमूनों के फोटो कोटा में ही खिचवाकर जल्दी भेजने थे। विभिन्न नमूने लेकर मैं कोटा शहर गया तो उस दिन कोई भी फोटोग्राफर

तैयार नहीं हुआ। अगले दिन सीधे फैक्ट्री न जाकर पहले फोटोग्राफर के पास गया। काम समाप्त करके फैक्ट्री पहुंचा और बॉस को देर से आने का कारण बताया तो वे एकदम बरस पड़े, "तुम क्या अपने को जनरल मैनेजर समझते हो जो अपने आप निर्णय ले लिया? फिर इस बात का क्या प्रमाण है कि तुमने फोटो कल नहीं, आज खिचवाये हैं?" मुझे लगा कि अपना उत्तर-दायित्व निभाकर वास्तव में मैंने बहुत बड़ी भूल की थी। **—ओमप्रकाश गुप्ता, कोटा**

तीन वर्ष से परिवार-नियोजन ब्यूरो विदिशा के प्रचार विभाग में चित्रकार-छायाकार के पद पर हूं। साढ़े दस से पांच बजे तक लगता है कि मेरे अंदर का कलाकार मर गया है। कोई अधिकारी मेरी उपयोगिता नहीं समझता। सब मुझे 'पेंटर' कहते हैं। जब अधिकारीगण ही कलाकार और पेंटर में फर्क नहीं समझते तब मेरी उपयोगिता कौन समझेगा?

जब परिवार- नियोजन प्रचार-संबंधी पोस्टर बनाकर अधिकारियों को दिखाता हूं तब वे कहते हैं, "अरे! आपने यहां काला रंग क्यों लगा दिया? बदलकर लाल कर दो।" (गनीमत है कि यह नहीं कहते कि 'लाल तिकोन' जमता नहीं, अतः 'हरा तिकोन' बना दो!)

तंग आ गया हूं। लगता है, चित्रकार नहीं, गिरगिट हूं, जो रोज रंग बदलता है। अधिकारी-वर्ग को कैसे समझाऊं कि कला में 'रंग-विधान' और 'रंग-संगति' क्या होती है?

विभाग में ईश्वर की दया से मोटर-गाड़ियों की भरमार है। कभी अधिकारी कहेंगे कि फलां गाड़ी की प्लेट नंबर नयी बना दो (पेंटर जो समझते हैं)!

मेरे सामने कुछ पारिवारिक बोझ है, इसीलिए पिछले तीन वर्षों से इस कलाकार की आत्मा को सरकारी कार्यालय में कुछ रुपयों के लिए रख दिया है।

—शरद श्रीवास्तव, विदिशा

छोटे समाचार-पत्रों का संपादक किन-किन यंत्रणाओं में जीता है इस अनुभूति को सिर्फ भुक्तभोगी ही जान सकता है ! उसकी व्यथा-कथा किसी भी करुण कथा का संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण ही होती है।

एक छोटे दैनिक का संपादक हूं। क्षेत्रीय समाचारों के लिए जब बेताबी से डाक का इंतजार होता है और जब डाक में सिर्फ जन-संपर्क विभाग, विभिन्न दूतावासों के समाचार-बुलेटिन, चंद शिकायती पत्र या एक्सचेंज में आनेवाले अखबार पाता हूं तब एक अजीब-सी कोफ्त होती है ! तब ध्यान जाता है नगर की समस्याओं पर, जिन पर जब-तब काफी लिखा जा चुका होता है ! वे भी हाथ नहीं आतीं तो फिर कैंची थामकर खबरों का ढेर लगाना शुरू कर देता हूं! सबसे मुश्किल स्थिति तब आती है जब पेज फाइनल करते-करते दो-चार सनसनीखेज खबरें लिये नगर-संवाददाता आ जाता है और थकान में डूबी कंपोजीटरों की आंखें धधकने लगती हैं !

कभी छपते-छपते कोई महत्त्वपूर्ण खबर संपादित करके कर्मचारियों को 'छपते-छपते' का ब्लाक लगाकर पेज रुकवाकर खबर कंपोज करवाने लगता हूं तो बरबस ही दफ्तरी जिंदगी के इस पक्ष को कोसने का मन हो आता है।

—दुर्गाशंकर त्रिवेदी, कोटा

दफ्तरों में व्याप्त 'लालफीताशाही' का शिकार हर अफसर को होना पड़ता है। इसका एक अच्छा उदाहरण यहां प्रस्तुत है।

हमारे विभाग में एक पद पर कोई खास काम नहीं था। दिन में केवल दो घंटे का काम होगा। समय बिताना कठिन हो जाता था। एक दिन एकाएक विभाग-अध्यक्ष ने बुलाकर कहा कि इस पद पर तो कोई वरिष्ठ अधिकारी नियुक्त होना चाहिए और इस हेतु उस पद की उन्नति के लिए जल्दी ही एक केस बनाया जाए।

बहुत सोचने पर भी केस नहीं बन पा रहा था, क्योंकि काम ही नहीं था। और फिर पदोन्नति न्यायसंगत भी नहीं जान पड़ती थी। केवल एक ही कारण बन पड़ता था, वह लिख भेजा—'इस पद पर बहुत आराम है। किसी - किसी दिन केवल दो घंटे का काम होता है। सब अखबार पढ़ने पर भी दिन नहीं बीतता। इस आराम का हकदार तो कोई वरिष्ठ अधिकारी ही हो सकता है, इसलिए पदोन्नति कर दी जाए।'

—एस. आर. सिंह, डाइरेक्टर मिनिस्टरी आव स्टील्स एंड साइंस

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत हों, पर वे १५० शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिए। —संपादक

मैं शहर से परे नहीं

फिर सुबह हुई, और सारा शहर
कठघरे में खड़ा हो गया
—कठघरा गलत है
मैं शहर से परे नहीं
नियमितता एक सड़क है
जिस पर कटे पांव घिसटते हैं
मेरा कटा हाथ हैंगर में फंसे कोट उतार लेता है
और शरीर अपने को छिपा लेता है उसमें
यह पूरा शहर सर्दी का शिकार है
और मैं शहर से परे नहीं
मैं चाहूं न चाहूं, कोई फर्क नहीं
पांव फटे मोजे में घुसेंगे
और जूते का फीता कस जाएगा
मुन्नी के दोनों गालों को चूम
उसकी टाफी के लिए एप्लीकेशन
अपने कोट के पाकेट में रखूंगा
मेरे कोट के पाकेट फाइल भी हैं
इसमें कोई आश्चर्य नहीं
और मेरी पत्नी एक शाल ओढ़ लेगी
दरवाजे पर खड़ी-खड़ी
मेरे उसकी आंखों से चलकर
थोड़ी दूरी तय करने तक को देखने के लिए
यह समय है
जब सारा शहर एक कतार में बहता रहेगा
और मैं शहर से परे नहीं

——सुरेश अन्तर
सी. एन. ९, ६२४।१।२३७ पत्रालय-अंडाल
वर्द्धमान (प. ब.)

"कोई मानवीय बिंदु बहुत दूर तक मुझे घेर लेता है और मैं उसकी सतह से उसकी गहराई तक अपना हाथ बढ़ाता चला जाता हूं।

"मैं नहीं समझता अपने लेखन के प्रति ईमानदार न होकर कोई रचनाकार जिंदा भी रह सकता है।"

सर्प : शत्रु नहीं मित्र भी

● शिवजी पासवान

सर्प को मनुष्य अपना शत्रु समझता है—क्योंकि सर्प के काटने से प्रायः मनुष्य की मृत्यु हो जाती है। इसीलिए सर्प को देखते ही लोग उसे मार देते हैं। सर्प का विष बहुत ही प्रभावकारी होता है। रक्त में उसका प्रवेश होते ही धीरे-धीरे शरीर शिथिल होने लगता है और अंत में हृदय की गति बंद हो जाती है। सर्प का विष मृत्युकारक है, यह तो सर्वविदित है, लेकिन वह प्राणदायक भी है, यह अनेक लोगों को मालूम नहीं है। जी हां, आधुनिक विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि सर्प मनुष्य का शत्रु नहीं, मित्र भी है; क्योंकि उसका उपयोग अनेक रोगों के इलाज में किया जाता है।

सर्प का विष प्रायः रंगहीन होता है, लेकिन कुछ सर्पों का विष हलके पीले रंग का भी पाया गया है। सर्प का विष पानी की अपेक्षा कुछ गाढ़ा और चिपचिपा होता है। यदि उसे कुछ दिनों तक तरल रूप में ही रखा जाए तो वह प्रभावहीन हो जाएगा, परंतु चूर्ण रूप में उसे बहुत

दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। विष-चूर्ण को पानी में घोलने पर वह पहले के समान ही प्रभावकारी हो जाता है।

सर्प-विष में कार्बन, आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, फॉसफोरस, गंधक, जस्ता आदि तत्व होते हैं। सर्प-विष से मृत्यु क्यों होती है, वैज्ञानिकों ने इसके भिन्न-भिन्न कारण बतलाये हैं, पर इस बारे में ल्यूसियन बोनापार्ट की खोज को विशेष प्रमाणिक समझा जाता है। उसके अनुसार सर्प-विष में प्रोटीन एंजाइम्स की मात्रा अधिक रहती है। साथ ही उसमें बेसिक पाली पेप्टाइड्स अकार्बनिक लवण तथा धातुओं के कण होते हैं, जो शरीर के प्रोटीन तथा रक्त पर आक्रमण कर उसे निष्क्रिय बना देते हैं, जिसके कारण मृत्यु हो जाती है।

पुरानी कलाकृतियों में सांप

सर्प-विष से मनुष्य तथा अन्य प्राणियों की मृत्यु तो हो जाती है, लेकिन सर्प स्वयं नहीं मरता, जबकि विष उसके मुंह में ही रहता है। वास्तव में सर्प-विष एक ऐसा पदार्थ है जो रक्त में प्रवेश करने पर ही प्रभावकारी होता है; और चूंकि सर्प का विष उसके मुंह के अंदर एक थैली में रहता है इसलिए रक्त में प्रवेश करने की कोई गुंजाइश नहीं रहती। इसके विपरीत, सर्प अपने विष का उपयोग कभी-कभी अपना भोजन पचाने में भी करता है। जब सर्प किसी बड़ी एवं कठोर चीज को निगलता है तब वह अपने विष-दंत से उसमें छेद कर देता है, जिससे विष उसमें प्रवेश कर उसे मुलायम बनाकर निगलने तथा पचाने में मदद देता है।

सर्प का विष, जो मुंह के अंदर एक थैली में रहता है, दांत के द्वारा बाहर निकलता है। सर्प के मुंह में भी कई दांत होते हैं, पर विषदंत एक ही होता है, जो खोखला होता है। वह अन्य दांतों से बड़ा और नुकीला होता है। अगर सर्प के विष-दंत को तोड़ दिया जाए, तो उसके काटने पर मृत्यु नहीं होगी, क्योंकि विषदंत के बिना विष शरीर में प्रवेश नहीं कर पाएगा।

यों तो दुनिया में हजारों जातियों के सर्प पाये जाते हैं, लेकिन लगभग तीन सौ जातियां विषैली होती हैं। हमारे

देश में करैत, नाग, घोणस, अफई आदि विषैले सर्प अधिक पाये जाते हैं। प्रौढ़ सर्प की अपेक्षा शिशु सर्प का विष अधिक प्रभावकारी होता है। नर सर्प में मादा से अधिक विष होता है। एक वार में नाग १७५–२५०, करैत १०–२०, घोणस १५०–२५०, और अफई ४–५ मिली-ग्राम विष देता है। पुनः उसे उतना ही विष प्राप्त करने में लगभग दो मास लग जाते हैं।

सर्प का विष मृत्युकारक तो है ही, जीवनदायक भी है। इसीलिए आज के वैज्ञानिक सर्प को मानव का शत्रु नहीं, वरन मित्र मानते हैं। सर्प बिना छेड़े किसी को काटता नहीं, बल्कि वह स्वयं ही मनुष्य से दूर रहना चाहता है। सर्प-विष कई रोगों के इलाज में बहुत उपयोगी है। नाग का विष क्षय तथा घोणस का दंत-चिकित्सा में बहुत लाभदायक है। मिरगी, हिस्टीरिया आदि रोगों के इलाज में भी सर्प-विष का उपयोग किया जाता है। सर्प-विष का प्रतिविष बनाने में भी इसका इस्तेमाल किया जाता है। इसके लिए सर्प-विष किसी प्राणी के शरीर में थोड़ी-थोड़ी मात्रा में पहुंचाया जाता है। धीरे-धीरे उसकी मात्रा बढ़ायी जाती है। इस क्रिया में जहां विष उस प्राणी के लिए घातक नहीं होता, वहीं उसके शरीर में विष को नष्ट करनेवाला प्रोटीन उत्पन्न होता रहता है। तब उस प्राणी के शरीर के रक्त से प्रतिविष तैयार किया जाता है। सर्प-दंश पर इस प्रतिविष का इंजेक्शन देने पर सर्प-विष का घातक प्रभाव नहीं होता।

सर्प-विष के उपयोग पर वैज्ञानिक प्रयोग हो रहे हैं। अब अनेक घातक रोगों में इसका प्रयोग होने लगा है। वह दिन दूर नहीं जब अनेक भयानक रोगों में सर्प-विष रामबाण सिद्ध होगा और हजारों मानव असमय ही मृत्यु की गोद में जाने से बचाये जा सकेंगे। तब लोग सर्प को अपना शत्रु नहीं, मित्र समझने लगेंगे।

—सिउरी, पो. मंझौल, जि.–बेगुसराय, (बिहार)

फिल्मों से चिढ़

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ को अपनी किसी पुस्तक पर फिल्म बनवाने से चिढ़ थी। इस संबंध में एक फिल्म-निर्माता को लिख भेजा—"आप मेरी किसी भी पुस्तक पर फिल्म बना सकते हैं बशर्ते मेरी प्रत्येक पुस्तक के लिए एक-एक लाख पौंड दें।"

एक दूसरे निर्माता को उन्होंने लिखा, "प्रत्येक फिल्म का ऐसा संस्करण आपको तैयार करना पड़ेगा जिससे अंधे-बहरों का भी मनोरंजन हो सके।" एक और फिल्म-निर्माता को उन्होंने लिखा—"मैं आपको अपनी किसी एक रचना पर फिल्म बनाने की अनुमति देता हूं, लेकिन शर्त यही है कि नायक की भूमिका लॉयड जॉर्ज करें।"

—रेणुबाला

घर लौटना
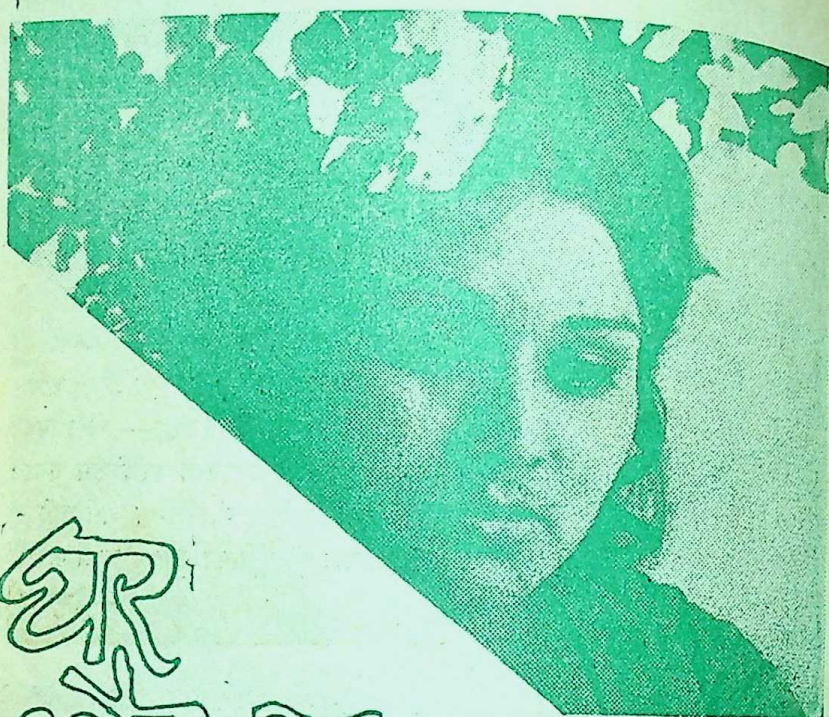
• देवकी अग्रवाल

गाड़ी प्लेटफार्म पर धीरे-धीरे सरकती हुई रुकती है तो उठकर डिब्बे के द्वार पर आ खड़ी होती हूं। मंझले भाई विपिन और छोटे भाई स्वरूप दोनों को सामने खड़े मुसकराते देखती हूं तो मन खिल उठता है। इतने साल बाद घर आयी हूं। भाइयों से सुलह हुई है और दोनों भाई मुझे देखकर खुश हैं। इससे पहले कि वे दोनों मेरे डिब्बे के पास पहुंचें, मैं सामान कुली के सिर पर रखवाकर गाड़ी से उतर आती हूं।

मुझे रिसीव करने के साथ ही विपिन भाई कुली की तरफ इशारा करके पूछते हैं, "कुली कर भी लिया ?"

उनके इस तरह पूछने से लगता है जैसे कह रहे हों—'कुली की क्या जरूरत थी ! एक सूटकेस और एक टोकरी, कुल इतना सामान ! यह तो हम दोनों

उठा लेते ।' सामान [illegible] ले तो भई कुली के झंझट में नहीं पड़ते और जब से वे अमरीका घूमकर लौटे हैं, अपना सब काम अपने हाथों से ही करके प्रसन्न रहते हैं।

स्टेशन से बाहर आकर कुली ने सामान रिक्शे पर रखा तो छोटे भाई स्वरूप ने झट से अठन्नी निकालकर कुली की हथेली पर रख दी और हम तीनों रिक्शे के साथ-साथ चलने लगे। विपिन भाई के यहां मैं गरमी की छुट्टियां बिताने जा रही हूं और विपिन भाई की आदतों का मुझे पूरा खयाल है। वे प्रायः कहा करते हैं—आदमी को आदमी की सवारी नहीं करना चाहिए। रिक्शा खींचनेवाले भी आखिर हम-जैसे आदमी ही तो हैं !

स्टेशन की सड़क पार करके माल रोड और माल रोड के शुरू में ही तीनों भाइयों की कोठियां हैं। जब हवेली में थे तो तीनों भाइयों का आपस में मनमुटाव था और जब हवेली बेचकर तीनों ने कोठियों की जमीन खरीदी तो तीनों ने सोचा—सुख-दुख के साझीदार अपने भाई-बंधु ही तो होते हैं, दूसरा कोई भी काम नहीं आता।

विपिन भाई का लड़का विनोद कोठी का द्वार खोलता है तो देखकर खुशी होती है—कितना बड़ा हो गया विनोद ! एम. ए. पास करके एक साल के लिए विदेश हो आया। लौटकर शादी की। इस बीच मैं घर आयी ही नहीं। बंटवारे पर भाइयों ने कुछ नहीं दिया तो मन में क्षोभ था, और जब अपने आप मोह खींचने लगा तो विपिन भाई को चिट्ठी लिख दी—"छुट्टियों में आ रही हूं।"
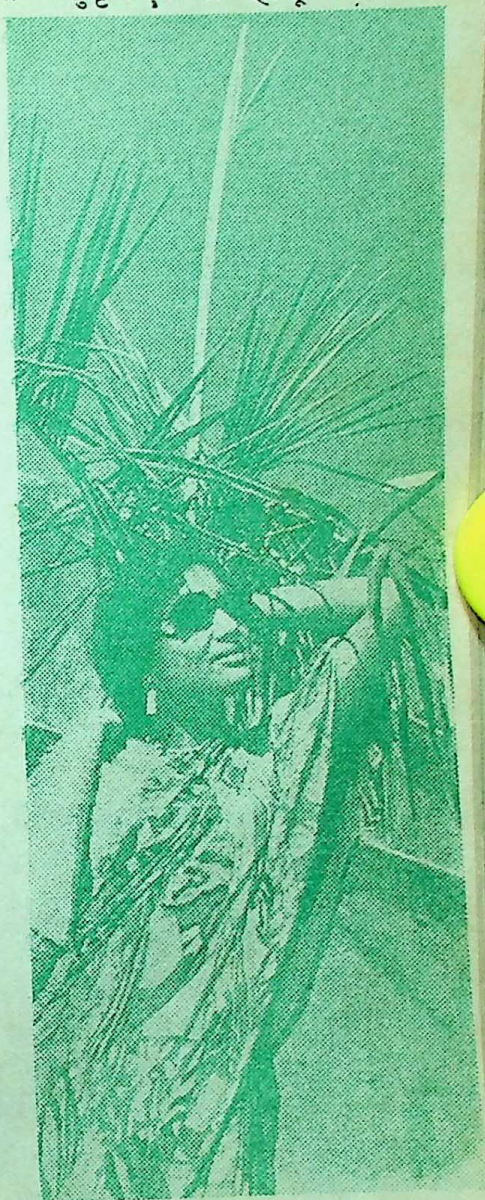
एक अलग कमरे में विनोद ने मेरा सामान टिका दिया। भतीजी उमा जब ससुराल से लौटती है तो वह भी इसी कमरे में ठहरती है। एक तरह से यह कमरा घर का गेस्ट-रूम है। एक बड़ा पलंग, मेज-कुरसी, मेज पर रखा हुआ चितकबरा-सा एक शीशा।

बाहर मुंह-हाथ धोकर जब मैं कमरे में आयी तो भाभी चाय तैयार करके ले आयी थीं। विपिन भाई मीठे बिस्कुटों का डिब्बा हाथ में लिये हंसते हुए कह रहे थे, "मुझे डाक्टर ने नमक कम करने के लिए कहा है, तुम कहो तो नमकीन बिस्कुट मंगवा दूं।"

"नहीं, नहीं, बिलकुल जरूरत नहीं," मैंने सहज होकर कहा, लेकिन मन ही मन अपने आप में सोचे जा रही थी—मुझे डाक्टर ने मीठा कम करने के लिए कहा है, फिर भी यहां आकर मुझे दूसरों के अनुसार चलना है, ताकि आना-जाना बना रहे।

छोटे भाई स्वरूप अपने बेटे की अंगुली थामे प्रवेश करते हैं। दुबला-पतला और होशियार-सा पप्पू लजाता हुआ हाथ जोड़कर नमस्कार करता है। मैं झट से अपने कमरे में जाकर सूटकेस में से हिंदी, अंगरेजी की कहानियों की किताबें निकाल लाती हूं। खत में ही पप्पू ने लिखवाया था—बुआ हमारे लिए कहानियों की किताबें लेकर आयें। मन में एक क्षोभ-सा उठा कि मैं विपिन भाई के घर के लिए कुछ नहीं लेकर आयी। बार-बार पूछने पर भी भाई ने उत्तर में लिखा था—'कोई चीज खरीदने की जरूरत नहीं। घर में सब कुछ है, पैसों को यूं ही अंटसंट चीजों पर नहीं फेंकना चाहिए।'

मेज पर रखे चाय के प्याले भाभी ने सबकी तरफ सरका दिये। स्वरूप भाई किताबों को उलट-पलट कर देखते हैं और चीय पीकर उठ खड़े होते हैं। कहते हैं, "अच्छा, कल इतवार है। दोपहर का खाना हमारी तरफ खाना।"

विपिन हंसकर कहते हैं, "क्या कुछ खिला रहे हो भई? हम भी आ जाएं क्या?"

सब हंसते हुए उठ खड़े होते हैं। भाभी दोनों हाथों में ट्रे थामे प्याले उठाने लगती हैं। विनोद परदों से घिरे अपने अंधेरे-से कमरे में जाकर रिकार्ड बजाने लगता है। मैं भाभी के साथ रसोई में आ जाती हूं। बहुत सालों तक घर न आने के कारण घर के पूरे वातावरण में एक अजीब तरह का सम्मोहन-सा लग रहा है। आंखों में खुशी के आंसू उमड़कर मेरी पुरानी यादों का एक धुंधला-सा चित्र मेरे सामने खींच देते हैं।

शाम का वक्त है। बहुत साल पहले आंगन में खटोले पर मां बैठी रहा करती थीं। अब भाभी की मां बैठी सब्जी काट रही हैं। "नमस्ते मौसी", मैं भाभी की मां से कहती हूं और उनके पास बैठ जाती हूं। पिछली बार जब मैं आयी तो वे बीमार
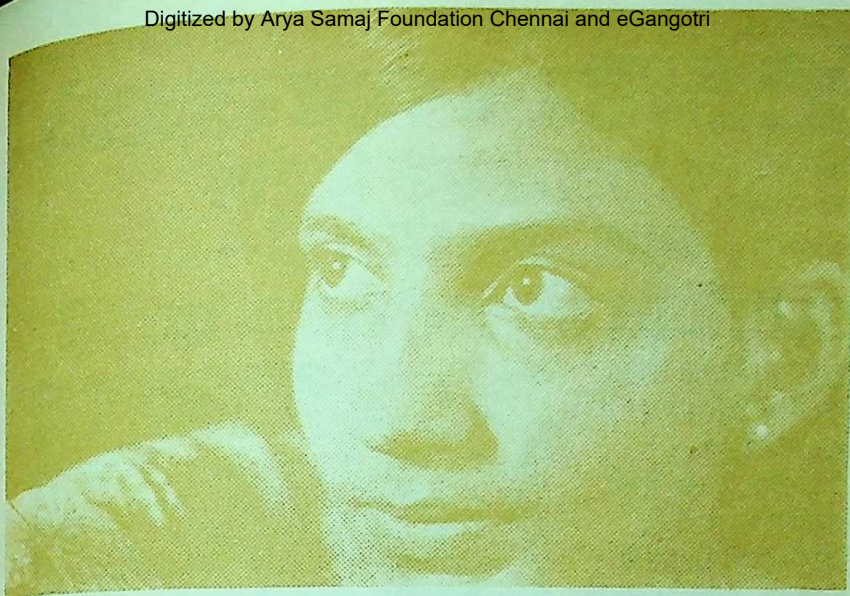
थीं —मानसिक दुर्बलताओं से पीड़ित। हर वक्त कुछ न कुछ बोलती रहती थीं। मैंने देखा वे अब भी धीरे-धीरे कुछ बड़-बड़ा रही थीं। पूछा, "क्या बात है मौसी?"

उन्होंने उसी तरह सिर झुकाये रखा और कहा, "बीच का दरवाजा बंद कर दो।"

मैंने उठकर स्वरूप भाई के घर की तरफ जानेवाला आंगन के बीच का दरवाजा बंद कर दिया। स्वरूप भाई की पत्नी भाभी की चचेरी बहन है। उससे मौसी को चिढ़ है। इस द्वार के सामने उसे आते-जाते देखती हैं तो मौसी को अपने घर के पुराने दिन याद आ जाते हैं जब छुटपन में स्वरूप की पत्नी भाभी की मां को आंगन में अकेले बैठे देखकर चिढ़ाया करती थी।

रसोई के द्वार पर खड़े होकर मैं भाभी से पूछती हूं, "कहो तो एक ट्रैंक्वीलाइजर की गोली दे दूं। इनका मन स्वस्थ हो जाएगा।"

भाभी के 'हां' कहने पर मैं एक इक्वी-ब्रम की गोली और पानी की कटोरी लेकर मौसी के पास खड़ी हो जाती हूं।

मां चुपचाप हथेली फैलाकर गोली लेती हैं और पानी की घूंट से उसे निगल लेती हैं। भाभी खुश होकर धीरे से बोलीं, "शुकर है तुम्हारे हाथ से दवा ले ली! हम दवा दें तो गुस्से में फेंक देती हैं। अब रात का खाना भी तुम्हीं खिला देना।"

मुझे खुशी होती है कि मैं किसी की सेवा कर पा रही हूं। परिवार में रहकर किसी के लिए कुछ कर गुजरने में अच्छा
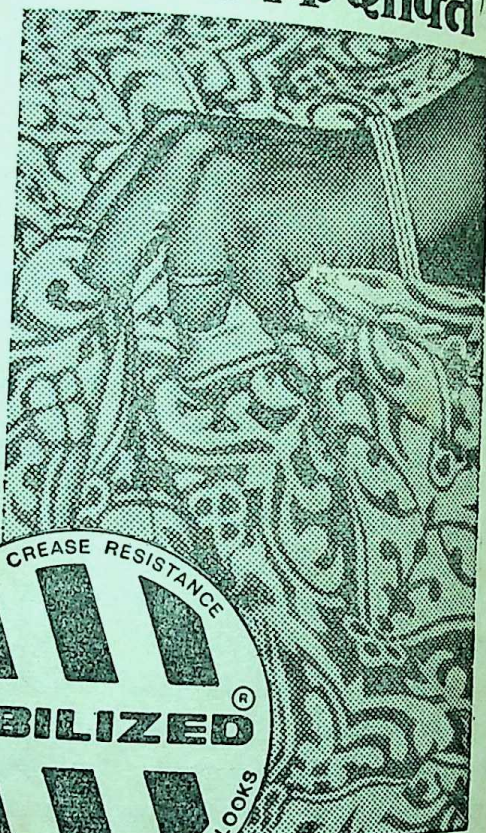
लग रहा है । वहां शहर में, हॉस्टल में, किसको फुरसत है किसी के लिए कुछ करने की ।

भाभी खाना तैयार करती हैं और मैं मौसी के पास बैठी देख रही हूं—बिना दांत का पिचका-सा मुंह, आंखों में स्नेह और नफरत का मिलाजुला भाव । 'बेचारी'—मैं सोच रही हूं—इनका भी कौन है दुनिया में ! भाभी ने अच्छा किया जो इन्हें अपने पास ले आयीं, नहीं तो अकेली औरत को कौन पूछता है ! एक भाभी ही तो हैं इनकी इकलौती संतान, जिसके सहारे अब ये जिंदगी के दिन काट रही हैं ।

रात को आंगन में भाभी के पास खाट डालकर सोयी । ट्रैंक्वीलाइजर की जरूरत महसूस नहीं हुई । मन ही मन तय किया कि सब गोलियां मौसी के लिए ही छोड़ जाऊंगी । भाभी ने बताया था कभी-कभी वे बेहद परेशान हो जाया करती हैं ।

सुबह नींद खुली तो देखा कि विपिन भाई के कमरे में चाय चल रही थी । विनोद और भाभी दोनों चाय सिप कर रहे थे । भाई अपनी खाट पर पालथी मारे बैठे थे । एक कुरसी खींचकर मैं पास बैठ गयी । भाभी ने मुसकराकर मेरे लिए चाय उंडेल दी तो लगा जैसे सारे घर का स्नेह उंडेल दिया हो । मुझे उन दिनों का खयाल आया जब विनोद छोटा था । रात को भाभी उसे मेरी निगरानी में सुलाकर सिनेमा देखने जाया करती थीं ।

किसी बात के सिलसिले में विनोद भाई कह रहे थे, "जिंदगी को हंसी-खुशी में गुजार देना चाहिए । जो मिल गया उस पर भी खुशी और जो नहीं मिला उस से भी संतुष्ट ।"

विनोद ने दृढ़ता से कहा, "मैं उसके साथ नहीं रह सकता । वह मेरे साथ नाटक करती है । झूठ बोलती है और मुझमें तनाव पैदा कर देती है ।"

भाभी आंखों में आंसू भरकर बोलीं, "तो उसका गला घोंट दें ?"

विनोद तैश में आकर कह रहा था, "उसका नहीं, मेरा । तुम मेरा गला घोंट देना चाहती हो ।"

भाभी उसे समझाती रहीं, "देखो बेटा, तलाक के बाद तो उस बेचारी को कोई पूछेगा भी नहीं । लोग समझेंगे न जाने उसमें क्या खोट है जो तलाक दे दिया गया ।"

विनोद ने चाय का प्याला रख दिया । गुस्से में अपनी कुरसी को पीछे धकेल कर उसने कहा, "तुम लोगों की बात कर रही हो, मैं अपनी जिंदगी में फंस गया हूं । मुझे अपनी जिंदगी पर सोचने दो, मुझे खुद फैसला करने दो ।"

मां-बेटे की बात को सुलझाने की कोशिश में विपिन ने कहा, "दरअसल हमारे देश की लड़कियां शादी तो करना चाहती हैं अमरीकी लड़कियों की तरह, आजादी से, और उसके बाद धर्मपत्नी बनकर बैठ जाती हैं, तलाक नहीं लेना

चाहतीं—चाहे आपस में बने, चाहे अन-बन रहे।"

मुझे लगा मेरे भाई-भतीजों ने कस्बे में बैठे ही कितना ज्यादा आधुनिक जिंदगी को अपना लिया है। और मैं शहर में बैठे हुए भी पुरातनता के मोह को छोड़ नहीं पाती। बार-बार शहर की आधुनिकता से घबराकर अपने भाई-भतीजों के आश्रय में आना चाहती हूं।

चाय का नया पॉट भरने के लिए मैं उठ खड़ी होती हूं और सोच रही हूं—हो सकता है कि ये तीनों अपनी-अपनी जगह पर ठीक हों और निशा भी जो सोचती है अपनी जगह पर ठीक हो। विनोद से तलाक लेने में उसे कोई कम असुविधा तो नहीं होगी।

भाभी आंसू पोंछती हुई मेरे पीछे ही पीछे रसोई में आकर खड़ी हो गयीं और बोलीं, "अब मैं उसकी कहां तक मदद करूं! लोग तो यही समझेंगे, सास बुरी है। आपस में बनने नहीं देती, और मैं उसकी तरफदारी करती हूं तो घर में क्लेश पैदा हो जाता है।"

मुझे आश्चर्य होता है। यह सारी स्थिति निशा के कारण उत्पन्न हो गयी है—वह निशा जिसने स्वयं विनोद को पसंद करके शादी का प्रस्ताव रखा था और विनोद ने 'हां' कह दी थी। तब सभी ने सोचा था कि विनोद के बराबर ही पढ़ी-लिखी एम.ए. पास लड़की है। बराबर का घराना है। इससे ज्यादा और क्या चाहिए?

दोपहर को स्वरूप भाई के यहां खाना खाने जाती हूं तो विनोद और निशा की बात चलती है। स्वरूप भाई ने एकाएक कहा, "बात तो दरअसल शुरू में ही बिगड़ गयी, जब निशा के पिता चुपचाप एक दिन शगुन करने चले आये और बाद में पूछने लगे बड़ी मिलनी दें? तब विपिन भाई ने कहा था, 'कोई जरूरत नहीं। दरअसल सबका खयाल था कैश देंगे। मित्रों-संबंधियों पर खर्च करने की क्या जरूरत है!"

शादी तय हो गयी तो निशा के पिता पूछने आये, "शादी में क्या-क्या दें?"

विपिन भाई ने उत्तर दिया, "कुछ भी खर्च करने की जरूरत नहीं।"

उन्होंने फिर पूछा, "स्कूटर?"

विपिन भाई ने खीझकर कहा, "मुझे कुछ नहीं चाहिए—आप जो देना चाहें अपनी लड़की को दें।"

तभी से निशा के पिता को गलतफहमी हो गयी—लड़की पर सब लट्टू हैं। शादी में कुछ भी देने की जरूरत नहीं। इधर लड़के ने शादी के एकदम पहले दिन से ही निशा को नापसंद कर दिया।

छोटी भाभी धीरे से मुसकराकर बोलीं, "आजकल के लड़के किसी के बस में नहीं। मां-बाप के भी बस में नहीं—वह तो बेचारी बेगानी बेटी है।"

स्वरूप भाई हंस पड़े। उनकी तरफ देखते हुए उन्होंने कहा, "तुम भी तो बेगानी बेटी हो। तुमने मुझे बस में कर

रखा है।

लजाती हुई भाभी आंख नीची किये खाना खाने लगीं।

मैंने खाने की तारीफ की—"अरवी बहुत अच्छी बनी है। और काबुली चने तो उससे भी ज्यादा अच्छे।"

खाने के बाद भाई ने फल सामने रखा तो आश्चर्य हुआ—इतना महंगा फल! चेरीज और आड़ू। सोचा था भाई कमेटी में सिर्फ पांच सौ रुपये की नौकरी पर हैं, मुश्किल से घर का खर्च चलाते होंगे। पिछली बार मैं आयी तो इनके तीनों बच्चे बहुत छोटे थे। तब मैं इन तीनों के लिए कपड़े सिलवा कर दे गयी थी। लेकिन इस बार एक आश्चर्य हो रहा था! भाई ने इतनी बड़ी कोठी खड़ी करने के लिए पैसा कहां से पा लिया? अढ़ाई सौ गज के घेरे की तीन कमरों की कोठी।

आड़ू की फांक मुंह में रखते ही स्वरूप ने कहा, "अब उधर जाकर मत बतलाना कि इधर क्या खाया और क्या बातें हुईं।"

मुझे कुढ़न हुई—तीनों भाई एक-दूसरे का मजाक उड़ाते हैं, फिर भी तीनों में ऊपर से बनी हुई है। ऐसी स्थिति से मन ऊब गया। सोचा, बड़े भाई की कोठी पर जाऊंगी तो वे भी इन दोनों की हंसी उड़ा रहे होंगे, जैसे पहले उड़ाया करते थे। स्वरूप भाई का पैर खराब होने के कारण बचपन से ही बड़े भाई ने उनका नाम 'डुड्डा' डाल रखा था।

शाम को पानी की बाल्टियां उंड़ेल कर मझली भाभी के साथ आंगन धुलवा रही हूं। देखती हूं बाहर गेट की तरफ से निशा चली आ रही है, ऊंची एड़ी की टिकटिकाती चाल पर—मुसकराती हुई।

उसकी भी छुट्टियां हो गयी हैं। वह अपने मायके से शादी के पहले भी इसी तरह चली आया करती थी। वहां स्कूल में पढ़ाती है। भाभी ने बताया था कि नौकरी उसने नहीं छोड़ी—विनोद ने अभी तक उससे कहा भी नहीं।

हाथ की पत्रिकाएं और कंधे पर झूलता हुई फ्लास्क और बैग खाट के सिरहाने की तरफ रखकर निशा सामान के टोकरे उठाने लगी। रिक्शेवाला सामान को दरवाजे के पास ही रखकर लौट गया था—विपिन भाई ने बरामदे तक सामान लाने में निशा की मदद की। आमों की पेटी उठाने में सहारा दिया और हंसते रहे खूब खिल-खिल कर।

भाभी ने हाथ का काम छोड़कर निशा के लिए चाय बनायी।

सबको 'नमस्ते' कहती हुई वह खाट पर बैठ गयी। भाभी की मां निशा के लाये हुए टोकरे को देखने लगीं। सामान को घसीटकर अपने कमरे में किया और आम निकाल-निकाल कर देखने लगीं।

"पहले नहा लो, गरमी में आयी हो," भाभी ने निशा से कहा।

निशा सूटकेस में से कपड़े लेकर बाथरूम की तरफ चली गयी। विनोद कहीं बाहर गया हुआ था। घर के चारों तरफ

घूमकर निशा एक ही बार में घर का पूरा जायजा ले चुकी थी। नहाकर लौटी तो लंबी चोगा-सी ड्रेसिंग-गाउन और कमर पर पेटी—इस वेश में निशा एकदम किसी फिल्म-अभिनेत्री-जैसी आधुनिक लग रही थी।

साड़ी पहनकर निशा मेरे पास आ बैठी। भाभी दूर रसोई में ही बैठी उसकी साड़ी की प्रशंसा करती रहीं—"बहुत सुंदर साड़ी है, बहुत बढ़िया प्रिंट है, जापानी नायलोन की हलकी नीली साड़ी पर बिखरे से गुलाबी फूल।"

निशा मुसकराती हुई भाभी को बताती रही, "चाचाजी लाये थे विदेश से।" वे मुझे भी विदेश घूमने के लिए बुला रहे हैं—खत आया था।"

खाना तैयार हुआ। निशा ने उठकर मेरे लिए खाना लगवा दिया। "भीतर चलिए," प्लेट हाथ में थामे उसने कहा। मैं अनमनी-सी उठ खड़ी हुई।

भीतर अकेली बैठी खाना खाने लगी तो विपिन भाई उधर से निकलते हुए बोले, "क्या बात है, अकेले ही खाया जा रहा है!" मैंने सकुचाकर धीरे से उत्तर दिया, "मालूम नहीं क्यों निशा ने लगवा दिया और मैं खाने लगी!" मैं सोचती रही निशा अपने मायके में शायद अकेली ही यूं बैठकर खाती होगी। भाभी ने बताया था–"उधर निशा घर में अकेली है, माता-पिता हैं, और घर में सब बात निशा के अनुकूल ही होती है। विनोद निशा की आदतों पर खीझता है और मैं कुछ कर नहीं पाती।"

रात को निशा ने भाभी के साथ बैठकर खाना खाया। विनोद अपने किसी मित्र के यहां खाकर आया था और देर तक सहन में बैठा हुआ अपने पिता से बातें करता रहा। पिता धीरे-धीरे उसे कुछ समझाते रहे। पूरे घर में एक अजीब तरह की खामोशी थी—जैसे निशा के आने पर सब कुछ एकाएक बदल गया हो।

निशा के व्यक्तित्व से प्रभावित भाभी उसके लाये हुए शिमला मिर्च के टोकरे और आमों की पेटी को देखती हुई कह रही थीं, "ये सब सब्जी इनकी अपनी जमीनों की है। निशा के पिता के पास काफ़ी जमीन है।"

रात को खुले सहन में खाटें बिछने लगीं तो विनोद ने कहा, "मेरी खाट मत लगवाना बुआ, मैं अपने कमरे में ही सोऊंगा।"

निशा पहले से ही भीतर के कमरे में थी। **–४२-ए, वर्किंग गर्ल्स होस्टल, कर्जन रोड, नयी दिल्ली-१**

...की क्रिया बंद हो।

कुमार राजेन्द्र, खरसिया (म. प्र.): **कभी-कभी रेडियो या ग्रामोफोन पर कोई गाना बजता रहता है और उसकी तरफ ध्यान न देने के कारण हमें वह सुनायी नहीं देता। फिर भी हम कुछ गुनगुनाने लगते हैं और हमारा ध्यान गाने पर चला जाता है तो हम पाते हैं कि वही गाना बज रहा है जिसे हम गुनगुना रहे थे। ऐसा किस प्रकार होता है?**

गोष्ठी

ज्ञान बहादुर ग्याफूर, काठमांडू सांखु (नेपाल) : नेपाली भाषा और हिंदी में क्या संबंध है?

भाषाविज्ञान की दृष्टि से नेपाली तथा हिंदी दोनों आधुनिक आर्य भाषाएं हैं। ये भाषाएं अपभ्रंश के विभिन्न रूपों से निकली हैं। हिंदी (खड़ी बोली) शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित हुई है और इसकी लिपि देवनागरी है। नेपाली की लिपि भी देवनागरी है और यद्यपि यह खश अपभ्रंश से निकली मानी जाती है, किंतु नये मतों के अनुसार इसका विकास भी शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ

दूसरे का मजाक उड़ाते हैं, फिर भी तीनों में ऊपर से बनी हुई है। ऐसी स्थिति से मन ऊब गया। सोचा, बड़े भाई की कोठी पर जाऊंगी तो वे भी इन दोनों की हंसी उड़ा रहे होंगे, जैसे पहले उड़ाया करते थे। स्वरूप भाई का पैर खराब होने के कारण बचपन से ही बड़े भाई ने उनका नाम 'डुड्डा' डाल रखा था।

... को पानी की बाल्टियां उंड़ेल

विशेषज्ञ यह बता सकते हैं कि वे आवाजें एक ही व्यक्ति की हैं या नहीं? क्या सभी व्यक्तियों की आवाज की आवृत्ति (फ्रीक्वेंसी) अलग-अलग होती है? आवृत्ति (फ्रीक्वेंसी) से क्या मतलब है? क्या आवृत्ति नापने का कोई यंत्र होता है? उस यंत्र का क्या नाम होता है? समीप और दूर से या धीरे-धीरे और जल्दी-जल्दी बोली गयी ध्वनियों की आवृत्ति (एक ही व्यक्ति की) एक ही रहेगी या बदल जाएगी?

जी हां, प्रत्येक व्यक्ति की 'बोली' भी उसकी हस्तलिपि की भांति अन्य लोगों से भिन्न होती है, लेकिन आप यहां 'बोली' के स्थान पर 'आवाज' का प्रयोग करें तो ठीक रहे, क्योंकि आपका प्रश्न ध्वनि-विज्ञान से संबंधित है। ध्वनि-विज्ञान के विशेषज्ञ ध्वनि को सुनकर यह मालूम कर सकते हैं कि वह किसकी कंठध्वनि है, चाहे वह विभिन्न टेपरिकार्डरों पर अंकित हो, चाहे दूर से टेप की गयी हो या पास से। कोई धीरे-धीरे बोले या जल्दी-जल्दी, आवाज उसकी हर हालत में पहचानी जा सकती है। बात यह है कि प्रत्येक व्यक्ति का ध्वनि-यंत्र (जिसमें कंठ, स्वर-यंत्र, ध्वनि-तंत्री, नासिका-विवर, अलिजिह्व, तालु, काकल, मुख-विवर, मूर्द्धा, दांत, जीभ, होंठ आदि सब आते हैं) एक-दूसरे से भिन्न होता है। इस ध्वनि-यंत्र से उत्पन्न होनेवाली ध्वनियां बाहर आकर हवा में एक विशिष्ट प्रकार के कंपन से लहरें

पैदा कर देती हैं। ये लहरें ही सुननेवाले के कान तक पहुंचती हैं और वहां श्रवणेंद्रिय में कंपन पैदा कर देती हैं। सामान्यतः इन ध्वनि-लहरों की चाल ११००-१२०० फुट प्रति-सेकंड होती है। ज्यों-ज्यों ये लहरें आगे बढ़ती जाती हैं, इनकी तीव्रता घटती जाती है। इसीलिए दूर की आवाज धीमी सुनायी पड़ती है। ध्वनि द्वारा हवा में पैदा किये गये कंपन एक सेकंड में जितनी बार होते हैं, वही उस ध्वनि की प्रति-सेकंड 'फ्रीक्वेंसी' या आवृत्ति कहलाती है। यह आवृत्ति कम या अधिक हो सकती है। सामान्यतः आपका कान २०,००० आवृत्ति तक की ध्वनि सुन सकता है, लेकिन साफ सुनने-समझने की दृष्टि से २०० से २००० की आवृत्ति के बीच की ध्वनियां ठीक मानी जाती है। धीरे या जोर से बोलने पर ध्वनि की आवृत्तियां कम-अधिक होती रहती हैं, किंतु मनुष्य के ध्वनि-यंत्र की अन्य विशेषताएं उसकी आवाज को अन्य लोगों की आवाजों से अलग पहचानने लायक बना देती हैं। ध्वनि की आवृत्तियां तथा अन्य विशेषताएं नापने के लिए कई यंत्र काम में लाये जाते हैं, जैसे—आसिलोग्राफ, पिचमीटर, स्पेक्टोग्राफ, इंटेंसिटीमीटर आदि।

श्याम माहेश्वरी, केकड़ी (राज.) : कृपया 'सैडिज्म' के बारे में कुछ बतायें।

'सैडिज्म' को हिंदी में परपीड़न-रति या परपीड़न-कामुकता कहते हैं। जैसा कि इन शब्दों से ही प्रकट होता है, यह एक प्रकार की यौन-विकृति (sexual perversion) है। इससे ग्रस्त व्यक्ति को, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, अन्य व्यक्तियों को पीड़ित करने में सुख का अनुभव होता है। ऐसे व्यक्ति प्रायः क्रूर होते हैं और अपनी क्रूरता से प्यार करते हैं। वास्तव में यह एक मानसिक रोग है और इस रोग से ग्रस्त स्त्री-पुरुष प्रायः अपने जीवन-साथी का जीना दूभर कर देते हैं। परपीड़न-रतिवाले व्यक्तियों को अपने आस-पास के लोगों को शारीरिक या मानसिक यातना देने में काम-तृप्ति का-सा अनुभव होता है। यह विकृति प्रायः उन लोगों में पायी जाती है, जो अपने जीवन में कभी शारीरिक या मानसिक रूप से सताये हुए होते हैं और अपने आततायी से बदला लेने में असमर्थ होते हुए भी बदले की भावना से भरे रहते हैं।

भारतेन्दु, नवीन शाहदरा (दिल्ली) : 'पौधों को धूप में पानी नहीं देना चाहिए', इस कथन के पीछे क्या कारण है?

बात यह है कि जिस प्रकार अन्य जीवधारी सांस लेते हैं, उसी प्रकार पौधों में भी श्वसन-क्रिया होती है। यह श्वसन-क्रिया पौधों की वृद्धि में सहायक होती है। श्वसन-क्रिया में आक्सीजन ग्रहण की जाती है और कार्बन डाईआक्साइड बाहर छोड़ी जाती है। लेकिन पौधों पर धूप में प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया होती है, जिसके दौरान पौधे आक्सीजन छोड़ते और कार्बन डाई-आक्साइड ग्रहण करते हैं। धूप न होने पर प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया बंद हो जाती है और पौधे आक्सीजन ग्रहण करने लगते हैं तथा कार्बन डाईआक्साइड छोड़ने लगते हैं। पौधे पानी से आक्सीजन ग्रहण करते हैं (पानी में दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग आक्सीजन होता है), इसलिए पानी से उन्हें अधिकतम लाभ तभी हो सकता है जब धूप न हो, अर्थात प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया बंद हो।

कुमार राजेन्द्र, खरसिया (म. प्र.): कभी-कभी रेडियो या ग्रामोफोन पर कोई गाना बजता रहता है और उसकी तरफ ध्यान न देने के कारण हमें वह सुनायी नहीं देता। फिर भी हम कुछ गुनगुनाने लगते हैं और हमारा ध्यान गाने पर चला जाता है तो हम पाते हैं कि वही गाना बज रहा है जिसे हम गुनगुना रहे थे। ऐसा किस प्रकार होता है?

जिसे आप 'न सुनायी देने' की स्थिति मान रहे हैं, वह वास्तव में 'सुनायी देने' की स्थिति है, यानी आपके कानों तक उस गाने की आवाज लगातार पहुंच रही है, यद्यपि आपका ध्यान उधर नहीं है। कहने का मतलब यह कि आप अपनी बेध्यानी में भी उस गाने को सुन रहे हैं। और चूंकि आप उस गाने से अच्छी तरह परिचित हैं और संभवतः उस गाने को सुनकर उसे गाने या गुनगुनाने के आदी भी हो चुके हैं, इसलिए आप अनजाने ही उसे गुनगुनाने लगते हैं।

मोहिनी जशनानी, कानपुर : 'स्मृति-लोप' से ग्रस्त रोगी अपने अतीत की सारी बातें भूल जाता है। यहां तक कि उसे अपना नाम भी याद नहीं रहता। क्या यह संभव है कि वह अपनी शिक्षा या प्राप्त ज्ञान को भी याद रखने में असमर्थ हो जाए?

जी हां, संभव है। लेकिन यह भी संभव है कि वह अपना काम-काज करने लायक बना रहे। जिस ज्ञान को बार-बार व्यवहार में लाने का वह अभ्यस्त हो जाता है, उसे वह स्मृतिलोप के दौरान भी काम में ला सकता है। ऐसा अनुबंधित प्रतिवर्त (conditional reflex) के कारण होता है।

चलते-चलते एक प्रश्न और

कु. क. ख. ग. : गाना आता है, बजाना कितने समय में आ सकता है?

कोई समय नहीं लगता यदि गाल बजायें।

—बिंदु भास्कर

जिंदाबाद

नयी कहानी ने हमें निकाल फेंका
कोई बात नहीं
समांतर (कहानी) चलाएंगे
हिंदी कथा-साहित्य में
दाल नहीं गली
विश्व कथा-साहित्य में
कुरसी लगाएंगे
हमारे लग्गू-भग्गू जिंदाबाद

—कृष्ण कमलेश

शिशिर-अनुभूति

ठिठुरी-ठिठुरी सुबह खड़ी है
सहमी-सहमी शाम
सूरज, चंदा-जैसा लगता
पानी-जैसी घाम
ढके बदन सी-सी करती है
क्या है तेरा नाम

—परमानंद अश्रुज

मैं और तुम

मेरे मन का मृग
तुम्हारी याद की कस्तूरी
लिये भटक रहा है
मेरे अंदर-ही-अंदर
कुछ चटक रहा है

—श्याममनोहर सीरोठिया

लक्ष्य-विहीन

हम
अनिश्चितता की कैद में
जीवन के
किस पथ पर बढ़ें
बिना निश्चित-नंबर के
महानगर की
किस बस पर चढ़ें

—गनेश चोपड़ा 'उन'

प्रेम की परिभाषा

प्रेम महान है
प्रेम की उचित परिभाषा गढ़ने के लिए
हे विप्रवर
कहीं प्रभु को ही न उतरना पड़े भू पर

खद्दर का भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार की बात जाने दो यार
हमें तो हो गया है खद्दर से प्यार

—सुरेशचन्द्र वर्मा 'मधुप'

शिकार के आदिम तरीके

● डॉ. सुरेशव्रत राय

जमीन पर आमने-सामने खड़े होकर तलवार से शिकार करने की कहानियां अब दंतकथाएं मात्र रह गयी हैं। राइफल, जीप, फ्लैश-लाइट आदि आधुनिक उपकरणों से लैस होने पर भी अनेक शिकारी मिलकर मोर्चेबंदी करते हैं तब कहीं एक वन्य पशु का शिकार कर पाते हैं और कभी-कभी वह भी चकमा देकर निकल जाता है।

जंगली जातियां अथवा आदिवासी राइफल तथा अन्य आधुनिक उपकरणों से अपरिचित हैं, अतः वे आग जलाकर तथा शोर करके वन्य पशुओं से अपनी रक्षा करते हैं और मुठभेड़ बचाने का यथासंभव प्रयत्न करते हैं। शेर, बाघ, तेंदुए या चीते से मुठभेड़ करना मृत्यु को निमंत्रण देना है, परंतु कभी-कभी एकाएक बाघ के आक्रमण तथा आदमखोर पशु के उपद्रव के कारण इन्हें उनका सामना करना ही पड़ता है। राइफल-जैसे हथियारों के अभाव में इन्हें अपने साधारण हथियारों तथा सामान्य बुद्धि का ही भरोसा करना पड़ता है। आखेट-चातुर्य एवं मोर्चेबंदी में आदिवासी कुशल शिकारियों को भी मात कर देते हैं, और इनका शिकार करने का तरीका कहीं अधिक रोमांचक होता है।

आदमखोर बाघ धीरे-धीरे इतने ढीठ और निडर हो जाते हैं कि आस-पास की बस्तियों पर भी हमला करने लगते हैं। मार्ग में जो मिला उसे धर दबोचा। किसी घर का दरवाजा खुला मिल गया तो घर में घुसकर स्त्री-पुरुष या बच्चों को उठा ले जाते हैं। गाय, बैल, भैंस, बकरी आदि उठा ले जाना तो साधारण बात है। बूढ़ा अथवा अधिक घायल होने के कारण शिकार करने में असमर्थ बाघ को बस्तियों में घुसकर उदर-पूर्ति करने में सुविधा होती है। बाघ की धृष्टता यहां तक बढ़ जाती है कि बस्तियों में कुछ न पाने पर झोपड़ियों के ऊपर छलांग लगा देता है और फिर फूस या खपरैल की छत में कुछ जगह करके नीचे कूद पड़ता है। झोपड़ी के भीतर बाघ के डर से सहमे-दुबके व्यक्तियों को एकाएक 'यमराज' की उपस्थिति का पता लगता है। वे चीख भी नहीं पाते और देखते-देखते बाघ एक खूंख्वार डकैत की भांति अपने मनपसंद शिकार को लेकर चंपत हो जाता है।

कभी-कभी साहसी युवकों के पराक्रम से बाघ अपने ही बनाये जाल में फंस जाता है। झोपड़ी में रहनेवालों को सुरक्षित

स्थान में पहुंचाकर खाली झोपड़ी के दरवाजे का कुंडा बाहर से चढ़ा देते हैं तथा साहसी युवक आसपास वृक्षों, झाड़ियों की ओट में अस्त्र-शस्त्र लेकर चौकसी करते रहते हैं। आदत के मुताबिक बाघ छत में जगह करके झोपड़ी के अंदर कूद जाता है। उसके कूदते ही युवक तेजी से दौड़कर छत पर चढ़ जाते हैं। बाघ खाली झोपड़ी में चक्कर काटने लगता है। कुछ न पाकर उसकी झुंझलाहट बढ़ जाती है। छत में बाघ द्वारा किये गये छेद से छलांग लगाकर बाहर निकलना आसान नहीं है। इधर छत के सूराख से बाघ पर बल्लमों, भालों, पत्थरों, विष से बुझे तीरों की वर्षा होने लगती है। बाघ की दहाड़ से झोपड़ी हिलने लगती है, परंतु जान की बाजी लगानेवाले युवक साहस नहीं खोते । बाघ दरवाजे को तोड़कर बाहर नहीं भाग पाता, किंतु घायल होकर झोपड़ी में ही दम तोड़ देता है।

मवेशी उठा ले जानेवाले बाघ का शिकार मचान बनाकर किया जाता है। बाघ अपने शिकार का कुछ भाग खाने के बाद शेष भाग छोड़कर चला जाता है और दूसरे-तीसरे दिन आकर फिर खाता है। ऐसे बाघ के शिकार के लिए अधखायी लाश के पास किसी वृक्ष की डालों पर १८–२० फुट ऊंचा मजबूत मचान बनाया जाता है। उस पर साहसी, बलिष्ठ और अचूक निशानेबाज बैठता है। देशी बंदूक, (यदि पास हो), तीर-कमान, तलवार, भाला-जैसे अन्य नुकीले हथियार ही उसके उपकरण हैं।

दो-तीन दिन बाद बाघ अधखायी लाश को खाने आता है। उधर मचान पर शिकारी चौकन्ना होकर उसकी प्रत्येक गतिविधि को बड़े गौर से देखता रहता है। बाघ के खाने में तल्लीन होते ही वह बंदूक से गोली या तीर छोड़ देता है । अधिकतर निशाने इतने ठीक लगते हैं कि बाघ धराशायी हो जाता है। किंतु यदि निशाना चूक गया और बाघ थोड़ा घायल होकर रह गया तो वह बिजली की भांति उलटकर

मचान पर छलांग लगाता है। शिकारी इसके लिए तैयार रहता है और छलांग की रफ्तार का ठीक-ठीक अंदाजा लगाकर घातक वार कर देता है। कभी-कभी भयंकर दहाड़ करता हुआ बाघ मचान तक पहुंच-कर झपट्टा मारता है। यदि कहीं मचान कमजोर होने के कारण टूटकर शिकारी सहित नीचे आ गिरे अथवा भयभीत होने के कारण शिकारी मचान से नीचे लुढ़क जाए तो बाघ उसे शायद जमीन पर गिरने के पूर्व ही चबा जाए। परंतु, प्रायः ऐसा होता नहीं। मचान काफी मजबूत बनाये जाते हैं तथा शिकारी काफी अनुभवी एवं साहसी होते हैं।

शिकारी के लिए यह अत्यंत संकटपूर्ण एवं परीक्षा की घड़ी होती है। बाघ के तेज वार के कारण मचान झूले की भांति हिचकोले खाने लगता है। फिर भी यदि शिकारी धैर्य एवं साहस के साथ पैर जमाये रहे तो वह गिरेगा नहीं। कभी-कभी बाघ छलांग लगाकर मचान तक पहुंच जाता है, परंतु बांस-लट्ठे इतने कड़े और चिकने होते हैं कि बाघ के पंजे तथा नाखून की पकड़ में नहीं आते और बाघ जिस तेजी से छलांग लगाता है उसी तेजी से फिसलता हुआ नीचे आ गिरता है। अगर मचान बाघ की पकड़ में आ गया और वह अगले दो पंजों के बल लटककर चढ़ने का प्रयत्न करने लगे तो शिकारी तलवार से मचान पर टिके बाघ के पंजों पर जोरदार वार करता है और यह अचूक वार कभी खाली नहीं जाता। बाघ एक कटे वृक्ष की भांति गिर पड़ता है फिर आस-पास छिपे शिकारी तथा गांववाले हथियार लेकर दौड़ पड़ते हैं और रही-सही कमी पूरी कर देते हैं। बाघ को चुनौती देकर मौत के घाट उतारनेवाला युवक ग्राम का नायक बन जाता है और ग्रामवासी उसे कंधे पर लिये घूमते हैं।

आदिवासी कभी-कभी गुरिल्ला पद्धति से भी अर्थात बाघ के सामने आये बिना शिकार करते हैं। वनप्रदेश में एक अत्यंत विषैला लाल बेर बहुतायत से पाया जाता है। लोग इन बेरों का चूर्ण बना लेते हैं। जब बाघ किसी मवेशी या आदमी को मारकर वन में रख जाता है तो लोग खोजते-खोजते उस स्थान तक पहुंच जाते हैं। मृत शिकार के पेट, गरदन तथा अन्य कई भागों में चीरा लगाकर विषैला चूर्ण भर देते हैं तथा गाढ़ा घोल बनाकर शरीर के ऊपर लेप भी कर देते हैं। इस चूर्ण या घोल में कोई गंध नहीं होती। भूखा बाघ आकर शिकार पर टूट पड़ता है और खाता चला जाता है। थोड़ी देर बाद विष बाघ के शरीर में फैल जाता है। उसका गला सूखने लगता है और शरीर ऐंठने लगता है। भारी जलन, ऐंठन और प्यास से व्याकुल बाघ किसी समीपवर्ती तालाब या नदी में छलांग लगा लेता है और गटगट पानी पीता है। वह बाहर आता है और छटपटाता रहता है। जलन और ऐंठन बढ़ती ही जाती है और अंत में

बाघ तालाब या नदी के किनारे दम तोड़ देता है।

कभी-कभी स्वचालित धनुष द्वारा बाघ का शिकार किया जाता है। यदि बाघ के आने-जाने का मार्ग संकरा हुआ तो बहुत अच्छा, अन्यथा बकरी के बच्चे आदि को ऐसे स्थान पर बांध दिया जाता है कि बाघ को संकरे मार्ग से गुजरना पड़े। एक बड़ा धनुष तैयार किया जाता है जिसकी प्रत्यंचा मजबूत एवं बटे तांत की बनी होती है। मार्ग के दोनों ओर लट्ठे गाड़कर धनुष के दोनों सिरों को इस प्रकार बांध देते हैं कि प्रत्यंचा जमीन के समानांतर रहती है। धनुष के बीच बांस के टुकड़े पच्चड़ की भांति लगाते हैं। इन पच्चड़ों में बटी रस्सी को बांधकर इस प्रकार फैला दिया जाता है कि तने रस्सों पर पैर पड़ते ही पच्चड़ तुरंत गिर जाता है और प्रत्यंचा में फंसा तीर सनसनाता हुआ सीधे निकल जाता है। रस्से पर दबाव पड़ने से पहले तो धनुष झुककर रस्सा दबानेवाले की दिशा में घूम जाता है, फिर रस्सा टूटते ही उसी दिशा में तीर सर्राटे से वेधता हुआ निकल जाता है। धनुष की प्रत्यंचा पर गहरे विष से बुझे फलवाला तीक्ष्ण तीर लगा रहता है, जो पच्चड़ हटते ही तनाव की तेजी के कारण छूट जाता है। तने रस्सों तथा धनुष पर घास-फूस डालकर लोग हट जाते हैं।

बाघ बड़ी शान से आता है—सामने मिमयाते शिकार को उदरस्थ करने और जहां वह जाल में फंसा कि उसके वजनी शरीर के बोझ से रस्से टूट जाते हैं और पलक मारते ही बिजली की भांति सनसनाता हुआ तीर बाघ को यमलोक पहुंचा देता है।

कुछ अन्य साहसी शिकारी मजबूत बांसों का कठघरा बनवाकर बाघ की मांद के समीपवर्ती वन में ले जाकर रख देते हैं और एक बांका वीर तीखी धारवाली विष-बुझी तलवार लेकर अकेले कठघरे में अपने को भीतर से बंद कर लेता है। उसके साथी आसपास पेड़ों के झुरमुट में छिप जाते हैं। बाघ गुर्राता हुआ आता है। भूख से व्याकुल बाघ पूरी शक्ति से कठघरे पर आक्रमण कर देता है। अपने पूरे पंजे भीतर घुसाकर सीने से धक्का देने लगता है। युवक तो यही चाहता है। वह तत्काल पूरी ताकत से बाघ के सीने में विषैली तलवार आरपार कर देता है।

कभी-कभी चूहेदान की भांति बांस के बने दोहरे कठघरों में बाघ को जीवित ही फंसा लिया जाता है।

चिड़ीमारों की भांति लासा लगाकर चिड़ियों की अपेक्षा बाघ का शिकार बड़ी चतुरता से किया जाता है। संकरा मार्ग दूर तक बनाकर दूसरे छोर पर बाघ का प्रिय शिकार बांध दिया जाता है। कई जंगली गोंद एवं अन्य कई वस्तुएं मिलाकर ढेर-सारा चिपकानेवाला घोल तैयार कर लेते हैं। रास्ते में पत्तियां बिछाकर चिपचिपे घोल की तह एक ओर से दूसरी ओर तक फैला देते हैं। इस प्रकार पत्तियों तथा चिपचिपे घोल की कई परतें जमाकर मार्ग में घास-फूस, टहनी डालकर ढक देते हैं। शिकार के लालच में बाघ को तनिक भी संदेह नहीं हो पाता। वह बड़े इतमीनान से मौत के जाल में आ जाता है। पत्तियों पर पैर रखते ही अनायास कोई बड़ी पत्ती पंजे में चिपक जाती है। बिना पत्ती निकाले उसे चैन नहीं आता। वह ज्यों-ज्यों पैर से जमीन कुरेदकर या झटककर पत्ती निकालने का प्रयत्न करता है, चिपचिपे घोल में भीगी पत्तियां अधिकाधिक संख्या में पैर, पंजों तथा शरीर में चिपकती जाती हैं। बाघ पत्तियों पर उछल-कूद करने लगता है और पत्तियां सारे शरीर पर चिपकती जाती हैं। मुंह, आंख, कान—सब जगह पत्तियां ही पत्तियां चिपक जाती हैं। क्रोधोन्मत्त और बेचैन बाघ पत्तियों में लोटपोट होकर गर्जना करता जाता है और अंत में पत्तियों का एक बड़ा ढेर मात्र रह जाता है। वह देख सुन भी नहीं सकता। आसपास के शिकारी हथियारों सहित दौड़ आते हैं तथा गोलियों, भालों, तीरों की वर्षा करके बाघ का काम तमाम कर देते हैं।

इस प्रकार एक ओर बाघ की अपार शक्ति और बिजली-जैसी फुरती तथा दूसरी ओर दुर्बल परंतु बुद्धिमान मानव दोनों में रस्साकशी चलती रहती है—अपनी जीवन-रक्षा अथवा उदरपूर्ति के लिए।

—के-५४/२५ दारानगर, वाराणसी

गुप्त सम्राटों के समकालीन कालिदास

● व्योहार राजेन्द्रसिंह

कालिदास किस काल में उत्पन्न हुए, इस विषय में मतभेद है। कोई उन्हें विक्रमादित्य का समकालीन मानता है तो कोई समुद्रगुप्त का। विक्रमादित्य को शकारि कहा जाता है, क्योंकि उन्होंने शकों से युद्ध करके उन्हें देश से भगा दिया था। कालिदास ने शकों का कोई उल्लेख नहीं किया, अतः उन्हें विक्रमादित्य का समकालीन नहीं माना जा सकता। चंद्रगुप्त ने अवश्य ही विक्रमादित्य की उपाधि धारण की थी। समुद्रगुप्त ने भारत की दिग्विजय करके प्रयाग में विजय-स्तंभ की स्थापना की थी। उसके शिला-लेख में इस संबंध में विवरण दिया है। महाराज रघु की दिग्विजय के रूप में कालिदास ने समुद्रगुप्त की विजय-यात्रा का ही वर्णन किया है। दोनों में बहुत कुछ समता है।

इतना तो निश्चय है कि वे बौद्धकाल के बाद उत्पन्न हुए, जिसे वैदिक धर्म का पुनर्स्थापन-काल माना जाता है। बौद्ध-काल में भारत सोलह महान जनपदों में विभक्त हो गया था, जैसे—काशी, कोशल, कामरूप, कुरुपांचाल, कंबोज, अंग, बंग, मगध, विदर्भ, अवनी आदि। इनमें गणतंत्र राज्यों की स्थापना थी। जनपदों के नाम [illegible] उनमें रहनेवाली जातियों के नाम से ही प्रसिद्ध थे। जनपदों के प्रमुखों को राजा की उपाधि दी जाती थी। बुद्धकालीन कुछ जनपदों का उल्लेख हमें मिलता है—जैसे कोशल, मगध, अवंती आदि।

कुछ नये राज्यों का भी उल्लेख मिलता है, जैसे कलिंग, पांडेय, चोल, केरल आदि, जो कि बौद्धकालीन दक्षिण में थे।

कालिदास के समय कौशांबी राज्य का पतन हो चुका था। उसके राजा उदयन की कथा कालिदास के समय तक ग्राम-वृद्धों को स्मरण थी।

कौशांबी की राजधानी वत्स थी। इतिहास में वत्सराज उदयन का संघर्ष अवंती से होते रहने का उल्लेख मिलता है। कालिदास ने वर्णन किया है कि समुद्रगुप्त ने दिग्विजय कर सारे राजाओं से अपनी प्रभुसत्ता स्वीकार कराके उन्हें फिर से अपने राज्य में स्थापित कर दिया था।

जान पड़ता है कि बौद्धकाल का कोशल कालिदास के समय दो भागों में विभक्त हो गया था—उत्तर कोशल और दक्षिण कोशल। कालिदास ने साकेत या अयोध्या को उत्तर कोशल की राजधानी बताकर

वहां के राजाओं को 'उत्तरकोशलेश्वर' नाम से संबोधित किया है। कुछ राज्यों की राजधानियों का भी कालिदास ने वर्णन किया है, जैसे प्रतिष्ठान की राजधानी सारावती, कामरूप की राजधानी पुष्कलावती, आदि। इंदुमती के स्वयंवर में आये राजाओं के संबंध से उन्होंने उनके राज्यों तथा राजधानियों का वर्णन किया है, जैसे सुनंदा इंदुमती से कहती है, यदि तू करधनी के समान माहिष्मती को घेरे हुए बहनेवाली रेवा का दर्शन करना चाहती है तो इस राजा का वरण कर। माहिष्मती कुछ लोग महेश्वर और कुछ लोग मंडला को मानते हैं।

भारत की पड़ोसी जातियों और राज्यों का उल्लेख कालिदास ने किया है, जिन पर महाराज रघु ने दिग्विजय-यात्रा में आक्रमण किया था। इससे जान पड़ता है, उस समय भारत में पारस, कंधार आदि उत्तर पश्चिमी विदेशी राज्य सम्मलित थे जिन्हें आज भारत ने खो दिया है। कालिदास ने यह भी उल्लेख किया है कि भारत धन-धान्यसंपन्न था। कृषि तथा उद्योग की भी काफी उन्नति थी। धान और गन्ने की फसलों का पूर्ण रूप से उल्लेख है। गन्ने की छाया में बैठी स्त्रियां धान के खेतों की रक्षा करती हुई कुमारगुप्त के यश का गान करती थीं। सूती, रेशमी और ऊनी वस्त्रों का व्यवसाय उन्नति पर था।

कालिदास के समय समस्त भारत में वैदिक धर्म का एक राज्य था। कालिदास ने बौद्धों और जैनों का उल्लेख नहीं किया। वैदिक धर्म पौराणिक रूप में कालिदास के समय प्रचलित था। उस समय शैव और वैष्णव दोनों का काफी प्रचार था। राम और कृष्ण विष्णु के अवतार माने जाते थे। 'रघुवंश' में रामावतार का इसी रूप में चित्रण किया गया है और 'मेघदूत' में गोपवेशधारी श्रीकृष्ण का उल्लेख है। 'कुमारसम्भव' में विस्तृत रूप से शिव-पार्वती के चरित्र का ही वर्णन किया गया है। भारतीय दर्शनों में सांख्य, योग और वेदांत दर्शनों का उल्लेख करते हुए कालिदास एकेश्वरवाद और वेदांत के समर्थक जान पड़ते हैं।

उस समय समाज चार वर्णों में विभक्त था। मनुष्य का व्यक्तिगत जीवन चार आश्रमों में विभक्त था।

कालिदास के समय काव्य-कला और नाटक - कला का चरम विकास हो चुका था। गायन, वादन और नृत्य-कला के दृश्य हमें कालिदास के काव्यों और नाटकों में मिलते हैं। गृहस्थ में स्त्रियों का विशेष आदर था। धार्मिक और सामाजिक कार्यों में भी स्त्रियों को बराबरी का अधिकार था। ललित कलाओं का समाज में काफी प्रचार था। राजधानियों, तपोवनों, आश्रमों और संस्थाओं की चारों ओर स्थापना थी। दोनों में परस्पर आदान-प्रदान का मधुर संबंध था। समाज में वैदिक संस्कारों का विशेष महत्त्व था। विवाह-संस्कार को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था।

स्वयंवर-प्रथा के माध्यम से क्षत्रिय कन्याएं अपना जीवन-साथी चुन सकती थीं।

देश कृषि-क्षेत्रों, वनों और ग्रामों में विभक्त था। दोनों का घनिष्ठ संबंध था। नगरों के आसपास उपवन और उद्यान मनोरंजन और स्वास्थ्य के साधन थे। अरण्य में मृगया के द्वारा वन्य पशुओं से सुरक्षा होती थी। साथ ही, मनोरंजन और व्यायाम भी होता था।
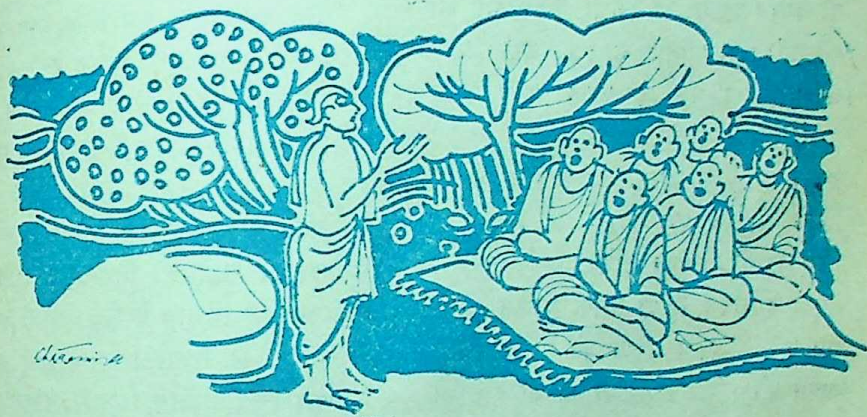
घरों में ही मनोरंजन के साधन थे। घर क्रीड़ा व मृग, हंस आदि पक्षियों के कलरव से निनादित रहते थे। इससे वनस्पति और पशु-पक्षियों से प्रेम-संबंध की वृद्धि होती थी। गौ परिवार के लिए एक आवश्यक पशु मानी जाती थी। उपयोगिता के साथ उसमें पूज्य बुद्धि भी जुड़ी हुई थी। 'रघुवंश' में नंदिनी का उपाख्यान आदर्श है। वनों में मयूर, तालाबों में हंस और घरों में कपोत शोभा बढ़ाते थे। वन्य पुष्पों से अरण्य, रंग-बिरंगे कमलों से सरोवर तथा भांति-भांति के वृक्षों और लताओं से गृह, उद्यान आदि शोभित रहते थे।

भारत के पर्वतों, नदियों, सरोवरों, ग्राम, नगरों—सभी का सुंदर चित्रण कालिदास की कृतियों में है। भारत के चरण पखारने वाले रत्नाकर और महोदधि की उत्ताल तरंगों का सजीव दृश्य हमें इन कृतियों में मिलता है। दक्षिण की गोदावरी, कावेरी, पश्चिम की शतद्रु और ताम्रपर्णी, पूर्व की ब्रह्मपुत्र तथा मध्य की गंगा और यमुना तथा उत्तर की सिंधु और वितस्ता नदियों का सजीव चित्रण कालिदास ने उपस्थित किया है। भारत के शीश का मुकुट हिमालय, मध्य की विंध्य-मेखला और दक्षिण के ऋष्यमूक आदि महान पर्वतों की विशालता कालिदास में साकार हो उठती है।

—साठिया कुआं,
जबलपुर

कालेज के कम्पाउंड से

लुधियाना के 'कालेज ऑव बेसिक साइंसेज' में बी.एस-सी. (आनर्स) सांख्यिकी-विभाग की छात्रा हूं। एक शाम बी.एस-सी. के तीन छात्रों का विश्वविद्यालय से बाहर किसी बारात से झगड़ा हो गया। फलतः दो छात्रों की पिटाई भी की गयी। तीस-पैंतीस छात्र डंडे आदि लेकर बारात-स्थल पर जा पहुंचे और उनसे लड़ने लगे। दोनों पक्ष बुरी तरह आहत हुए। छात्रों के भागने में एक छात्र विरोधियों के हाथ पड़ गया। उसे बचाने के लिए छात्रों ने कुछ वरिष्ठ अध्यापकों से संपर्क स्थापित किया ताकि पुलिस हस्तक्षेप करे, लेकिन अध्यापकों ने असमर्थता व्यक्त की। फलतः छात्रों को अपने साथी को तलाश करने तथा उसे अस्पताल में दाखिल कराने के लिए एक अन्य कालेज के अध्यापकों की सहायता लेनी पड़ी। इस झगड़े के फलस्वरूप एक छात्र को लगभग एक महीने अस्पताल में रहना पड़ा। घटना के दूसरे दिन वरिष्ठ अध्यापकों द्वारा सहायता न करने के विरुद्ध कालेज में हड़ताल कर दी गयी। इस प्रकार बाहर मोल ली गयी लड़ाई की कीमत कालेज को चुकानी पड़ी। —**कुसुम,**

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना

प्रथम वर्ष विज्ञान का छात्र था। एक बार मैं टेस्ट-ट्यूब में साल्ट टेस्ट कर रहा था। काम जल्दी समाप्त करने के लिए, खौलते मिश्रण का ट्यूब मैं ठंडे पानी की धार के नीचे ले गया।

टेस्ट ट्यूब एक धमाके के साथ फूट गया। कुछ मिश्रण उछलकर मेरी आंख में भी गिरा। गुरुजी भागे और जल्दी से मेरी आंखें धोयीं। बाद में गुरुजी ने मुझे बहुत डांटा और कहा, "तुम विज्ञान के छात्र होने के लायक नहीं हो।" उनकी भविष्यवाणी सही ही निकली। दो वर्ष तक प्रथम वर्ष विज्ञान में फेल होने के बाद मैंने आर्ट्स ले लिया।

—सुभाषचंद्र दीक्षित, (एम.ए. फाइनल) इतिहास, रा. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.)

बी. एम. एस. द्वितीय वर्ष का छात्र हूं। पहले दिन का पहला घंटा था। लेक्चरर महोदय की नयी नियुक्ति हुई थी। हमारा परिचय प्राप्त करने के बाद वे अपने बारे में बताने लगे। बोले कि वे जिस नये मकान में रहते हैं, उसके मालिक ने मुर्गियां पाल रखी हैं। अकसर रात में मुर्गियों की 'कुकड़ कूं' से नींद टूट जाती है।

इसी बीच एक शरारती लड़की बोल उठी, "मुर्गियां सोचती होंगी कि ये बेचारा नया मुर्गा हम लोगों के बीच कहां आ फंसा !" फिर तो लेक्चरर महोदय शर्म से एक शब्द भी न बोल सके ।

—अजयकुमार द्विवेदी 'प्रसून',
मोहन होम्यो मेडिकल कालेज, लखनऊ

हमारे जमशेदपुर वीमेंस कालेज में ब्लड-बैंक के लिए रक्त-संग्रह किया जा रहा था। एक दिन कालेज के द्वार पर एक खादीधारी मिले । उनकी भाव-भंगिमा देखकर कई लड़कियां हंसने लगीं । खादीधारी ने अपने एक मित्र से कहा, "कालेज जानेवाली लड़कियां संस्कारहीन हो जाती हैं। ये फैशनपरस्त और अशिष्ट हैं। इनसे समाज की क्या सेवा होगी !"

अगले सप्ताह वे सज्जन ब्लड-बैंक में अपने भाई के लिए रक्त लेने गये हुए थे । वहां कालेज की बीस छात्राएं रक्त देने के लिए बैठी थीं । मैंने कहा, "महाशय, क्या आप अनुमान कर सकते हैं कि फैशनपरस्त अशिष्ट छात्राएं रक्तदान के लिए यहां बैठी हैं ? उन सज्जन ने क्षमा मांगी और कहा, "ठीक है। कालेज कंपाउंड में समवयस्कों से हंसने-बोलने का आपको अधिकार है ।"

—प्रमिला भुनका
वीमेंस कालेज, जमशेदपुर-१

पिछले वर्ष मैं मगध यूनीवर्सिटी में एम. ए. (अंगरेजी) की परीक्षा दे रहा था । चौथे पेपर की परीक्षा के दिन उत्तर-पुस्तिका एवं प्रश्न-पत्र बांटे जा चुके थे और हम लोग बड़े बेचैन थे । इसी समय विभाग का चपरासी एक सूचनापत्र लाया जिसमें दूसरे कमरे में परीक्षार्थिनी के अनुचित साधनों का प्रयोग करने पर उसे परीक्षा से निकाल दिये जाने की खबर थी। इस सूचना को पढ़कर सुनाने के बाद निरीक्षक महोदय ने टिप्पणी की—"वन विकेट हैज फालेन नाउ ।"

इस टिप्पणी को सुनते ही गंभीर एवं बेचैन छात्रों के चेहरों पर मुसकराहट छा गयी। उस वक्त क्रिकेट-मैचों का दौर था ।

—विजयकुमार सिन्हा,
स्नातकोत्तर अंगरेजी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, गया (बिहार)

बायें से दायें : अजय, कुसुम, सुभाष, विजय, प्रमिला

• पी. टी. सुंदरम

किसी भी व्यक्ति के हाथ की रेखाएं देखकर हम बहुत-सी बातों के बारे में जान सकते हैं। इनमें संतानों से संबंधित जानकारी भी है।

संतान संबंधी रेखाएं हथेली के विभिन्न हिस्सों में पायी जाती हैं यथा—१. बुध पर स्थित विवाह रेखा के ऊपर खड़ी रेखाएं, २. अंगूठे के मूल अर्थात शुक्र पर्वत पर खड़ी रेखाएं, ३. हृदय रेखा तथा मस्तिष्क रेखा के बीच पायी जानेवाली रेखाएं ४. बुध की अंगुली के रूप में भी ख्यात

पत्नी के हाथ में उनका अभाव होता है। इसका अर्थ यही है कि उस व्यक्ति को अपनी पहली पत्नी से संतान हुई होंगी। इसी प्रकार यदि पत्नी के हाथ में संतान-सूचक रेखाएं हों और पति के हाथ में वे न हों तो इसका अर्थ यही होगा कि उस स्त्री को पूर्व पति से संतान-लाभ हुआ होगा। लंबी, मोटी तथा साफ रेखाएं पुत्र-सूचक एवं पतली रेखाएं कन्या-

कुछ महत्त्वपूर्ण रेखाएं

इस बार प्रस्तुत है—मित्र-शत्रु, भाई-बहन एवं संतति संबंधी रेखाओं का परिचय। पाठक कादम्बिनी के पते पर प्रो. पी. टी. सुंदरम से पत्र व्यवहार कर सकते हैं।
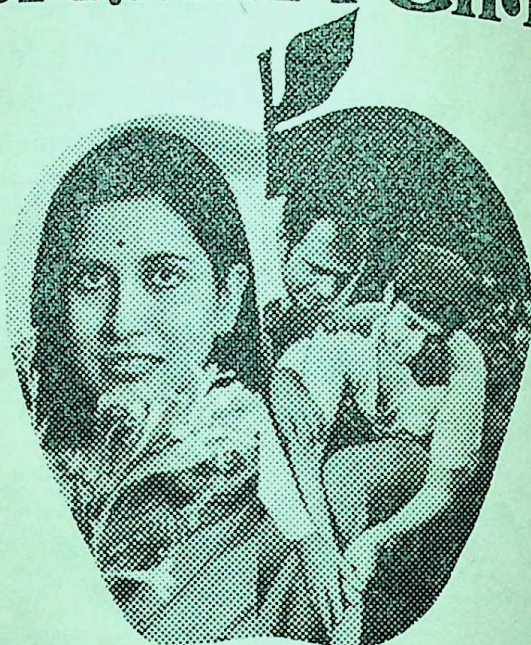
कनिष्ठा की दूसरी पोर पर पायी जाने वाली खड़ी रेखाएं ५. मध्यमा की दूसरी पोर पर पायी जानेवाली रेखाएं (चित्र १ । १, ३, ४, ५, ७, ८)

कभी-कभी किसी पुरुष के हाथ में संतान-सूचक रेखाएं होती हैं, और उसकी

सूचक होती हैं। यदि ये रेखाएं टूटी न हों, तथा उन पर क्रॉस भी न हों तो संतान दीर्घायुवाली होती हैं। बुध पर्वत पर दो या तीन शाखाओं में विभाजित हृदयरेखा तथा मछली का चिह्न भी संतान सूचक है (चित्र १ : २)। अंगूठे के जोड़ के स्थान पर छोटे-छोटे द्वीपों की जंजीर भी संतान-सूचक मानी गयी है। इनमें बड़े द्वीप पुत्रों के तथा छोटे द्वीप कन्याओं के सूचक होते हैं (चित्र १ : ४)

व्यक्ति के जीवन पर अच्छा प्रभाव डालने-वाले व्यक्तियों की सूचक होती हैं। इनमें माता-पिता का भी समावेश होता है (चित्र-२ : १–१, २)। ये रेखाएं माता-पिता की आयु की भी सूचना देती हैं। ये रेखाएं जितनी गहरी और स्पष्ट होंगी, माता-पिता की उतनी लंबी उमर होगी।

जीवन रेखा से निकलकर शनि पर्वत की ओर जानेवाली रेखा पिता की दीर्घायु की सूचक होती है। उस व्यक्ति को, भले

चित्र १ चित्र

ा-

पहली, नन्ही, ...

रता

तथा 'मनुष्यचिह्न' विशेष अवलोकनीय है।

पहली कहानी है धर्मवीर भारती की 'गुलकी बन्नो'। गुलकी एक पात्र है, जो अपनी शारीरिक विद्रूपता और सामा-जिक विवशता से पाठकों को मोहती है। पानू खोलिया की 'पेड़' कहानी को मनो-वैज्ञानिक आंचलिक कहानी की संज्ञा दी जा सकती है। जीवन में घुन की तरह लगे 'तुन महाराज' किस तरह अंत में जीवन-दायक बन जाते हैं, यह अप्रत्याशित है।
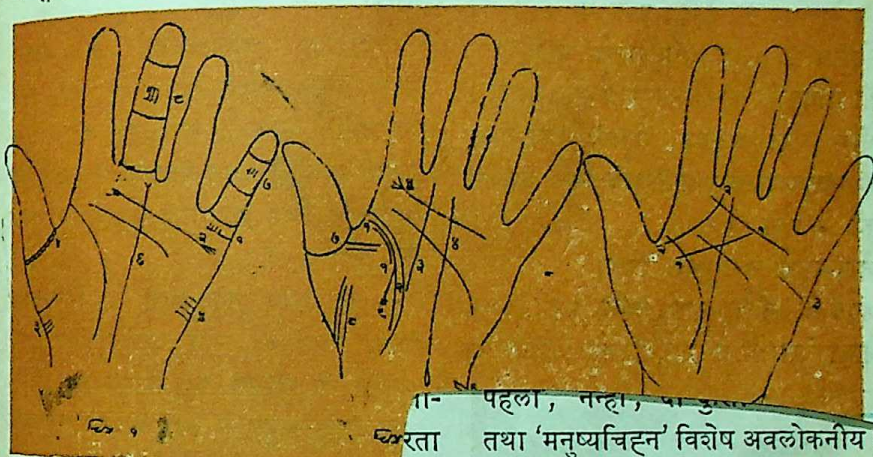
अनेक भारतीय एवं यूरोपीय हस्त्यम
रेखा विदों का मत है कि जीवन रेखा माका-
जीवन की ही सूचक नहीं होती। उसाव-
घिरनेवाला हथेली का हिस्सा यानी शुवेज
पर्वत पालकों, भाइयों, बहनों तथा ादक
व्यक्ति के जीवन पर प्रभाव डालनेवामों
निकट-संबंधियों एवं घटनाओं के बारे फल
भी कई महत्त्वपूर्ण सूचनाएं देता है।
पर्वत से शुरू होकर शुक्र पर्वत पर जीकहा-
रेखा के समानांतर चलनेवाली रेख

पिता की दीर्घायु की सूचक होती है। ऐसा पिता अपनी वृद्धावस्था पुत्रों के बीच बिताता है।

गुरु पर्वत पर त्रिशूल-जैसी आकृति के साथ समाप्त होनेवाली रेखा एवं कलाई के पास चंद्र पर्वत पर मछली का चिह्न पालकों से मिलनेवाले लाभ का सूचक होता है। (चित्र २ : ५, ६) गुरु पर्वत पर स्थित मस्तिष्क रेखा पिता की तथा जीवन रेखा माता की सूचक होती है। इन रेखाओं पर तारे, क्रॉस या बिंदु की उपस्थिति अशुभ है। उनसे माता-पिता को होनेवाले कष्टों का पता चलता है। क्षीण तथा अस्पष्ट रेखाएं माता-पिता के स्वास्थ्य पर पड़नेवाले बुरे प्रभावों को बताती हैं।

भाई-बहनों की सूचक रेखाएं

अंगूठे के नीचे शुक्र पर्वत पर स्थित, आड़ी रेखाओं से भाइयों और बहनों का पता चलता है। (चित्र २ : ८) ये रेखाएं जितनी गहरी होंगी, भाइयों-बहनों में उतना ही अधिक प्रेम होगा। ऐसी रेखाओं द्वारा जीवन रेखा को काटना अत्यंत अशुभ होता है (चित्र २ : ७)। गुरु पर्वत की ओर जानेवाली जीवन रेखा में अनेक शाखाएं एवं कलाई तथा हृदय रेखा के मध्य मोटी, आड़ी रेखाएं भी भाइयों-बहनों की सूचक होती हैं। मोटी रेखाएं भाइयों की तथा छोटी रेखाएं बहनों की सूचक होती हैं।

अंगरेज हस्तरेखाविदों ने जीवन रेखा से निकलकर शुक्र पर्वत की ओर जानेवाली रेखाओं को मित्रों की सूचक रेखाएं माना है। इन रेखाओं पर तारे की उपस्थिति मित्र की मृत्यु की सूचना देती है (चित्र २ : ९)।

चंद्र पर्वत की ओर से निकलकर भाग्य रेखा की ओर जानेवाली रेखाएं व्यक्ति के जीवन पर बाह्य-प्रभावों के साथ-साथ बाहर से मिलनेवाली सहायता के बारे में जानकारी देती हैं।

उच्च एवं निम्न मंगल पर्वतों पर स्थित रेखाएं तथा अन्य चिह्न बाधाओं और शत्रुओं के सूचक होते हैं। निम्न मंगल से बाहर की ओर आनेवाली आड़ी रेखाएं उसी सेक्स के शत्रुओं का पता देती हैं। शुक्र पर्वत से निकलकर जीवन, भाग्य एवं हृदय रेखाओं को काटनेवाली रेखाएं विपरीत सेक्स के शत्रु की सूचना देती हैं। (चित्र ३ : १-१, २-२, ३) ●

श्रेष्ठ आंचलिक कहानियां : शोध के नये आयाम

श्रेष्ठ आंचलिक कहानियां : स्वतंत्रता के पश्चात हिंदी कहानी में नवीन धारा के रूप में आंचलिक कहानी का आगमन हुआ, जिसके साथ ही कहानी के नये आयाम खुल गये। अब तक कहानी में पात्र या कथानक पर विशेष बल दिया जाता था, किंतु आंचलिक कहानी में स्थान या भू-भाग विशेष इन सब पर हावी हो गया। कहानी के सभी तत्त्व उस भू-भाग की विशेष रंगत लिये होते हैं। इसके साथ ही देश के अनजान तथा उपेक्षित भाग उसके जीवन, संस्कृति, कथा-साहित्य के आधार बन गये। मानवीय एकता की दृष्टि से यह एक लाभदायक बात हुई।

प्रस्तुत संग्रह आंचलिक कहानी-साहित्य की स्वस्थ झलक प्रदान करता है। इसमें संग्रहीत कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत कथा-लेखन की निरंतर विकासोन्मुख गति को दर्शाया गया है। शिवप्रसाद 'रुद्र' से लेकर मेहरुन्निसा परवेज तक की कहानियों के माध्यम से संपादक ने आंचलिक कहानी के विभिन्न आयामों को प्रतिनिधित्व प्रदान करने का सफल प्रयास किया है।

पुस्तक के आरंभ में आंचलिक कहानियों पर एक बहुत लंबी संपादकीय भूमिका है। यह इस संकलन की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता है और शोधार्थियों के लिए मार्गदर्शक है। कदाचित आंचलिकता को लेकर इतनी व्यापक और एक नयी दृष्टि अन्यत्र किसी ने अब तक देने की कोशिश नहीं की है।

पुस्तक में कुल चौदह कहानियां हैं। इनमें एक खास बात यह है कि अंचल विशेष पर अधिक जोर न देकर आंचलिक पात्रों को अपना लक्ष्य बनाया गया है, जिनके द्वारा उस अंचल का मनोवैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक पक्ष प्रकट होता है। इस दृष्टि से 'रसप्रिया', 'गदल', 'एक प्यास पहेली', 'नन्हो', 'दो दुःखों का एक सुख' तथा 'मनुष्यचिह्न' विशेष अवलोकनीय हैं।

पहली कहानी है धर्मवीर भारती की 'गुलकी बन्नो'। गुलकी एक पात्र है, जो अपनी शारीरिक विद्रूपता और सामाजिक विवशता से पाठकों को मोहती है। पानू खोलिया की 'पेड़' कहानी को मनोवैज्ञानिक आंचलिक कहानी की संज्ञा दी जा सकती है। जीवन में घुन की तरह लगे 'तुन महाराज' किस तरह अंत में जीवनदायक बन जाते हैं, यह अप्रत्याशित है।

वचन-वीथी

ज्ञान, स्नेह और शक्ति—इनके सामंजस्य से ही जीवन परिपूर्ण हो सकता है।

—एमिथ

महान कलाकार वह है जो दुर्गम को सुगम बनाता है और दुर्बोध को बोधगम्य।

—हेनरी फ्रेडरिक

कुछ भी अलभ्य नहीं होता, पर हम उसे खोजने पर ही प्राप्त कर सकते हैं। —हेरिक

उन सब लोगों को सच्चा कवि माना जा सकता है जो महान सत्य से प्यार करते हैं, अनुभव करते हैं और उसे व्यक्त कर देते हैं। —जी. बेली

बहुत से लोग उनसे नाराज हो जाते हैं जो उनके दोष बताते हैं, जबकि उन्हें बताये गये दोषों के विरुद्ध नाराज होना चाहिए। —वेनिंग

जब-जब सत्य को भंग किया जाता है, तब-तब मानव-समाज पर प्रहार होता है।

—इमर्सन

जिस पेड़ के लिए मां ने अपने सुहाग को वलि चढ़ा दिया उसी पेड़ को पुत्र की भलाई के लिए काटने की बात करती है। विपन्नता की स्थिति में स्थानाभाव के कारण घर की लाज का उपहासजनक अवस्था में होना एक करुण भाव जाग्रत करता है। इसी प्रकार की एक और कहानी है 'गदल'। खारी गूजर जाति में विधवा का किसी के घर बैठ जाना आम बात है, पर नारी के आहत अहं के साथ वह पूरी शक्ति से उभरती है।

राजेन्द्र अवस्थी की 'एक प्यास पहेली' मानव की आदिम वृत्ति की बात करती है। लेखक ने मां (सौतेली) के बेटे के प्रति यौनाकर्षण की सहजता को आंचलिक परिवेश में उभारा है। जब तक चंचल मन की बाग थामनेवाला पति जीवित है तब तक समवयस्क पुत्र साथी-सा लगता है, किंतु उसके छूटने पर सामाजिक बंधनों से वेखबर मन के घोड़े उन्मुक्त उड़ान भरने लगते हैं। उम्र का बहाव नियमों के सभी तटों को तोड़ देता है। अंचल का भोलापन यथार्थ को कितनी सहजता से स्वीकार लेता है इसे लेखक ने बहुत सशक्त रूप में प्रस्तुत किया है। कुछ इसी तरह की भावभूमि पर आधारित कहानी है 'नन्हों'। 'एक प्यास पहेली' में जहां यह पहेली सुलझ जाती है वहां इस कहानी में वह उलझी ही रह जाती है। अवध के एक अंचल पर लिखी लक्ष्मी-

नारायण लाल की प्रेम-कहानी है—'रामजानकी रोड' । इसमें आम प्रेम-कथा होते हुए भी आंचलिक परिवेश का विस्तृत वर्णन रोचकता बढ़ाता है। शैलेश मटियानी की 'दो दुःखों का एक सुख' कोढ़ी और भिखारियों पर आधारित है। सामाजिक नैतिक मान्यताओं से परे ये लोग जीवन के कितने समीप होते हैं, इसका दिग्दर्शन कराते हुए इन लोगों की मनःस्थितियों को प्रकाश में लाया गया है। अंतिम कहानी है हिमांशु जोशी की 'मनुष्यचिह्न', जो प्रतिपादन की दृष्टि से संभवतः संग्रह की सबसे सशक्त कहानी है। मनुष्यता और न्याय की दुहाई देनेवाले समाज के तथाकथित सिरमौर ही मनुष्यता के चिह्न तक मिटा डालते हैं। कहानी का विकास इतने नाटकीय रूप में हुआ है कि अंत में पाठक हतप्रभ रह जाता है।

प्रायः सभी कहानियां आंचलिक कहानी की कसौटी पर, विशेषकर भाषा की दृष्टि से; खरी उतरती हैं। वास्तव में ये कहानियां आंचलिक कथा के विकास में अपना निश्चित स्थान रखती हैं।

साज-सज्जा एवं कलात्मक प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से भी इस कथा-संग्रह को प्रथम श्रेणी के प्रकाशनों में रखा जा सकता है, इसके लिए प्रकाशक बधाई के पात्र हैं।

श्रेष्ठ आंचलिक कहानियां

संपादक : राजेन्द्र अवस्थी; प्रकाशक : पराग प्रकाशन, दिल्ली; पृष्ठ : १९६; मूल्य : २०.०० रु.

दौड़ : यह एक उपन्यास है, जो धारावाहिक रूप में अनेक पत्रिकाओं में छप चुका है। डाकू-समस्या से संबंधित यह उपन्यास पर्वतसिंह और गजल नामक नर्तकी की प्रेमकथा पर आधारित है। नर्तकी का अपने सम्मान को बचाते हुए मिनिस्टर का खून, पर्वतसिंह का प्रेम के लिए मौत का आलिंगन और कर्त्तव्य-निष्ठ पुलिस इंसपेक्टर के वीरतापूर्ण कारनामे पाठकों को उलझाये रखते हैं। उपन्यास पठनीय है।

दौड़

लेखक : आबिद सुरती; प्रकाशक : पराग प्रकाशन दिल्ली; पृष्ठ : ९६; मूल्य : ६.५० रु.

आदर्शवादी-उपन्यास

हंसा तो मोती चुगे : आदर्शवादी उपन्यास है। एक युवक संघर्षों को पार करता हुआ ईमानदारी का उज्ज्वल उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसके लिए उसे अच्छी-अच्छी नौकरियों से भी हाथ धोना पड़ता है। समझौते को नकारते हुए वह सत्य निष्ठा की अग्नि में जीवन को गलाकर कुंदन बना डालता है। इस मार्ग पर उसकी प्रेमिका भी पूरा साथ देती है। सामान्य उपन्यासों की रोचकता का अभाव होते हुए भी यह आज के युवकों के समक्ष एक आदर्श उपस्थित करता है। वास्तव में आदर्श के चौखटे में उपन्यास जो है उससे अधिक

ज्ञान-गंगा

तावत्परो नीतिमान्स्यात् यावत्सुबलवान्स्वयम्।
मित्रं तावच्च भवति पुष्टाग्नेः पवनो यथा।

—शुक्रनीति

—राजा जब तक बलवान है तभी तक उसकी नीति सफल होती है और तभी तक अन्य भी उसके मित्र रहते हैं। तेजी से जलती हुई आग का ही पवन मित्र होता है, अन्यथा दुर्बल दीपक को बुझा देता है।

परस्वानां च हरणं परदाराभिमर्शनम्।
सुहृदामतिशंका च त्रयो दोषाः क्षयावहाः॥

—वाल्मीकि

—दूसरे के धन का अपहरण, दूसरों की स्त्रियों के साथ अनुचित संबंध और मित्रों के प्रति अति शंका—ये तीनों दोष मनुष्य का नाश कर देते हैं।

परिमितं वै भूतम्। अपरिमितं भव्यम्।

—ऐतरेय ब्राह्मण

—भूत (जो हो चुका है) परिमित और भविष्य अपरिमित होता है।

जनस्य गोपा अजनिष्ट जागृविः।—सामवेद

—जागरूक व्यक्ति ही जनता की रक्षा कर सकता है।

तद्धि समृद्धं यत्रात्ता कनीयान्,आद्यो भूयान।

—शतपथ ब्राह्मण

—खानेवाले कम हों और खाद्य-पदार्थ अधिक हों, यही समृद्धि का स्वरूप है।

प्रस्तोता—ब्रह्मदत्त शर्मा

की आशा भी नहीं की जा सकती थी।

हंसा तो मोती चुगे

लेखक : ब्रजभूषण; प्रकाशक : पीताम्बर बुक डिपो, ८८८ ईस्ट पार्क रोड, करोलबाग, नयी दिल्ली; पृष्ठ : १८४; मूल्य : १०.०० रु.

हास्य-व्यंग्य

तलाश काले धन की : अच्छे हास्य-व्यंग्य साहित्य का प्रायः अभाव-सा ही रहा है। प्रस्तुत पुस्तक इस दिशा में एक अच्छा प्रयास कहा जा सकता है। डा. बरसानेलाल चतुर्वेदी स्वयं में हास्य-व्यंग्य का पर्याय बन चुके हैं। इसमें महंगाई से लेकर अंगरेजी तक, कवि-सप्लाई से लेकर नौकरी और इंटरव्यू-जैसे विविध विषयों पर लिखे गये निबंधों में जहां विषय की गंभीरता व्यंग्य उत्पन्न करती है वहां उसकी अभिव्यक्ति हास्य। जीवन में चलते-फिरते चरित्रों के चित्रण में लेखक की हास्य-व्यंग्यात्मक चुटकियां इसे रोचक और आकर्षक बनाती हैं। कुल मिलाकर उदासी दूर करने के लिए अच्छी पुस्तक है।

—डॉ. शशि शर्मा

तलाश काले धन की

लेखक : बरसानेलाल चतुर्वेदी; प्रकाशक : पीताम्बर बुक डिपो, ८८८, ईस्ट पार्क रोड, करोलबाग, नयी दिल्ली; पृष्ठ : १२८; मूल्य : ८.०० रु.

अंग्रेजी के आधुनिक कथाकारों में शीर्षस्थ मॉरिस वेस्ट शाश्वत मूल्यों को लेकर होनेवाले मानवीय द्वंद्व का चित्रण करने में सिद्ध-हस्त हैं। 'द डॉक्टर ऑव साइलेंस', 'द एम्बेसडर' एवं 'द डेविल्स ऐडवोकेट' उनके बहुचर्चित उपन्यास हैं। यहां प्रस्तुत है 'द डेविल्स ऐडवोकेट' का सार-संक्षेप! प्रस्तोता हैं—डॉक्टर राजेन्द्रपालसिंह

ब्लास मेरीडिथ के माथे पर पसीने की बूंदें चुहचुहा आयीं। पहली बार जीवन में उसे भय महसूस हुआ। अपने काम में व्यस्त होने के कारण वह यह अनुभव भी न कर पाया था कि जीवन इतना सुंदर तथा सहज हो सकता है। सड़क के किनारे बैठकर उसने अपने चारों ओर के जीवन-प्रवाह को देखा। फिर उसे याद आया कि थोड़ी देर पहले ही डॉक्टर ने उससे कहा था कि आपरेशन के बिना वह एक वर्ष और आपरेशन के बाद कुछ समय ही जीवित रह पाएगा। उसने निर्णय किया कि दर्द को काम में डुबोकर एक वर्ष और जीवित रह लिया जाए।

मेरीडिथ चर्च का अनुसंधाता था। उसका काम धार्मिक गुत्थियां सुलझाना तथा खोजकर ऐसे तर्क पेश करना था जिससे यह निःसंदेह कहा जा सके कि अमुक व्यक्ति संत था या नहीं। उसे 'डेविल्स ऐडवोकेट' अर्थात 'शैतान का वकील' कहा जाता था।

मेरीडिथ ने अपना संपूर्ण जीवन चर्च के लिए अर्पित कर दिया था। इसीलिए जब पोप पद के उम्मीदवार कार्डिनल मरोटा ने उसे जियाकोमो नेरोने नामक एक मृत व्यक्ति के संत-पद के अधिकारी होने के प्रमाणों की खोज का काम सौंपा तब उसने उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। जियाकोमो नेरोने की हत्या के बाद स्थानीय जनता उसे संत मानने लगी थी लोगों में नेरोने के विषय में कई चमत्कारी कथाएं प्रचलित थीं। मेरीडिथ को उनकी सत्यता का पता लगाना था। कार्डिनल मरोटा इस खोज का अपने चुनाव में उपयोग करना चाहते थे। इसी तरह बिशप औरीलियो जो वेलेंता भी मेरीडिथ की इस खोज का लाभ उठाना चाहते थे। इन सब कारणों से मेरीडिथ अनायास ही चर्च की राजनीति का एक मुहरा बन गया था।

जिस गांव में नेरोने की हत्या हुई थी, वह इटली के पहाड़ी इलाके के घोर गरीबी और अज्ञान से ग्रसित गांवों में से एक था। वहां एक सुंदर, धनी काउंटेस रहती थी। यों तो वह अंगरेज थी, पर इटली के एक काउंट से विवाह कर उसी गांव में बस गयी थी। उसके पास एक अंगरेज युवा चित्रकार निकोलस ब्लेक रहता था, जो रोम में अपने चित्रों की

प्रदर्शनी की योजना बना रहा था।

उस गांव में नीना नामक एक गरीब स्त्री अपने किशोर बेटे पाउलो के साथ रहा करती थी। पाउलो, नेरोने और नीना के प्रेम का उपहार था। गांव में नीना 'संत की वेश्या' के नाम से जानी जाती थी। पाउलो भी कभी-कभी उसे इसी नाम से पुकारता। इन सब लोगों के साथ गांव में मेयर नामक एक डॉक्टर रहता था। कभी वह कम्युनिस्टों का साथी रह चुका था। मेयर नेरोने का मित्र भी था और नीना को भी कभी प्यार किया करता था। मेयर नीना और पाउलो का हितैषी था। उसे काउंटेस के घर रहने-वाले चित्रकार ब्लेक तथा पाउलो के बीच अनैतिक संबंध स्थापित हो जाने का भय था। गांव में एक पादरी फादर एनसेल्मो भी रहा करता था। वह बेहद गरीब था। वह एक अन्य गरीब स्त्री के साथ रहकर किसी तरह गुजारा कर रहा था।

इसी गांव में पूर्व-सूचना देकर एक दिन मेरीडिथ आ पहुंचा। पूर्व-व्यवस्थानुसार वह काउंटेस के घर ठहरा। गांव में सबने अपने-अपने ढंग पर मेरीडिथ का स्वागत किया। डॉक्टर ने उसे अपना रोगी तथा मित्र स्वीकार कर लिया, युवा चित्रकार ने उसे अपने प्रतिद्वंद्वी के रूप में देखा। एक बात पर सभी सहमत थे कि मेरीडिथ बहुत बीमार था। वह निष्पक्ष होने के साथ-साथ विशाल-हृदय भी था। उसकी समस्त सुविधा का प्रबंध बिशप ने किया था। बिशप सांसारिक व्यक्ति था, पर था सहृदय।

इस पृष्ठभूमि में कथा प्रारंभ होती है।

मेरीडिथ के स्वागत में आयोजित समारोह में काउंटेस ने पूरे गांव को आमंत्रित किया था। यहीं पर मेरीडिथ

ने डॉक्टर आल्डू मेयर को देखा। वहीं साठ वर्षीय फादर एनसेल्मो से उसकी भेंट हुई। वह फटे किंतु साफ कपड़ों में आया था। समारोह में चित्रकार ब्लेक उपस्थित था। भोज के बीच काउंटेस ने डॉक्टर मेयर से पूछा, "कहो डाक्टर, क्या पाउलो कल से काम पर आ रहा है ?"

"हां, उसकी मां राजी हो गयी है," डॉक्टर ने उत्तर दिया।

फादर एनसेल्मो ने कहा, "कभी नीना बड़ी सुंदर थी !" इसी बीच मेरीडिथ ने अचानक डॉक्टर से पूछा, "क्या आप नेरोने को जानते थे ?"

"अवश्य, नीना के बाद मैंने ही उसे देखा था। स्वयं नीना मुझे उसकी गोली निकालने के लिए ले गयी थी।"

निकोलस ब्लेक ने बीच में ही कहा, "नीना को तुम पर बहुत भरोसा होगा, डॉक्टर ?"

"अवश्य, उसे मालूम था कि मैं शासन-तंत्र का विरोधी था।"

इस पर ब्लेक हंसा।

मेरीडिथ ने डॉक्टर मेयर से कहा, "इस संतवाले मुकदमे में हम गैर-कैथोलिक लोगों की भी गवाही मान रहे हैं।"

मेयर ने इस निर्णय का स्वागत किया।

फादर एनसेल्मो ने कहा, "नेरोने बड़ा विचित्र था। मैंने उसे कभी कुछ महत्त्व नहीं दिया। वह अकसर मुझे किसी न किसी व्यक्ति को लेकर ऐसे परेशान करता था जैसे उसके पेट में किसी प्रकार का सख्त दर्द हो रहा हो। एक रात तो उसके कारण मुझे जरमनों की गोली लगते-लगते रह गयी।"

"ओह, मैं तो भूल ही गया था कि यहां जरमन भी आ चुके हैं," मेरीडिथ ने सहजता से कहा।

"उन्होंने तो इस घर पर भी कब्जा कर रखा था," काउंटेस ने कहा।

मेरीडिथ ने पूछा, "पहली गवाही से तो ऐसा लगता है कि नेरोने जरमन फौजों और यहां की जनता के बीच का मध्यस्थ था। क्या आपकी भी यही राय है, काउंटेस ?"

"शायद इसमें कुछ अतिशयोक्ति है," काउंटेस का उत्तर था।

फादर एनसेल्मो ने कहा, "तुम रोमवासियों की तो कुछ बात ही अलग है। सहज से सहज बात तुम्हें समझ में नहीं आती चाहे वह कितनी ही स्पष्ट क्यों न हो। हम सभी नेरोने को जानते थे।"

काउंटेस ने कहा, "फादर कुछ ज्यादा पी गये हैं।"

भोज के बाद फादर को उसके घर पहुंचाकर लौटते हुए मेरीडिथ डॉक्टर मेयर के घर रुका। वहां उसने उससे पूछा, "इस भोज का क्या अर्थ था ?"

"शायद काउंटेस चाहती है कि आप लोगों से परिचित हो जाएं। जान लें कि आपका साबका लोगों से पड़नेवाला है। अच्छा हो कि आप इन लोगों की अपेक्षा काउंटेस का ही सहारा लें।"

रोशनी की दुनिया में फ़िलिप्स बेपनाह खूबसूरती पेश करते हैं— लियोनोरा श्रृंखला में तरह-तरह के काँच शेड्स. डिज़ाइन, खूबसूरती और निर्माणकौशल में इतना आगे जो कल्पना को भी पीछे छोड़ जाए. काँच, रंग और कल्पना का अपूर्व इन्द्रधनुषी मेल. रोशनी और रंग-रूप में एक अभिनव अनुभव.

फ़िलिप्स

फ़िलिप्स इंडिया लिमिटेड

"डॉक्टर, आप साफ बात करते हैं !"

"इसलिए कि जिंदगी में मैंने अनेक अनुभव किये हैं। उनमें एक यह है कि आप सत्य को कभी नहीं दबा सकते। इसलिए सत्य बोलने में कोई नुकसान नहीं है।"

"इसका यह अर्थ है कि आप गवाही के लिए तैयार हैं।"

"जरूर," डॉक्टर ने उत्तर दिया।

मेरीडिथ को विदा करने के बाद मेयर फिर नेरोने के पुत्र पाउलो की चिंता में डूब गया।

सुबह होते ही मेयर पाउलो से मिला। मेयर को मालूम था कि पाउलो रोजेटा नामक एक लड़की से मिलता-जुलता है। उसने पाउलो से कहा, "देखो बेटे, तुम काउंटेस के यहां काम करने जा रहे हो। वहां रोजेटा भी तुम्हें मिलेगी, ध्यान से काम करना।" फिर उसने कहा, "पाउलो, मेरा अपना कोई लड़का नहीं है। काश मेरा भी एक पुत्र होता! वैसे मैं तुम्हारी मां से प्रेम भी करता रहा हूं। कभी हम मित्र थे, फिर शत्रु हो गये। तुम्हारे पिता को मरवाने में मेरा भी हाथ रहा है। इसीलिए यदि मैं तुम्हारी कुछ भी सहायता कर पाया तो समझो कि मैं कुछ कर्जा चुका पाऊंगा।"

"पर मुझे तुम्हारी सहायता नहीं चाहिए," पाउलो ने बड़ी रुखाई से कहा।

"हम सभी को किसी न किसी समय किसी न किसी की सहायता की आवश्यकता होती है। मैं चाहता हूं कि तुम जान लो पुरुष पुरुष होता है और स्त्री स्त्री। पुरुष को स्त्री होने का कोई प्रयत्न नहीं करना चाहिए। तुम्हारे और उस चित्रकार..."

"पर उससे मेरा कोई संबंध नहीं है। मुझे तो उस आदमी से भय लगता है," पाउलो ने उत्तर दिया।

"तुम किसे चाहते हो—रोजेटा को या ब्लेक को?"

"मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं तो इस गांव से भागकर रोम जाना चाहता हूं। वह अंगरेज मुझे रोम ले जाने को तैयार है। वह मुझे नयी जिंदगी दे सकता है!"

"सुनो बेटे, तुम्हारी मां एक अच्छी-भली स्त्री है। वेश्या तो पैसे के लिए तन बेचती है, पर उसने ऐसा नहीं किया। तुम्हारा पिता भी महान था। हालांकि मैंने भी तुम्हारे पिता की हत्या में हाथ बंटाया था, पर मैं उसका आदर करता था। सचमुच वह महान था।"

"फिर उसने मेरी मां से विवाह क्यों नहीं किया?"

"क्या तुमने यह प्रश्न अपनी मां से भी पूछा?"

"नहीं—मैं कैसे पूछता?"

"तो चलो, उससे अब पूछ लेते हैं।" डॉक्टर ने जोर से आवाज दी, "नीना! इधर आओ।"

नीना के आने पर डॉक्टर ने कहा, "पाउलो जानना चाहता है कि नेरोने ने तुमसे विवाह क्यों नहीं किया?" पहले तो नीना कुछ हिचकी और फिर

उसने सब कुछ बता दिया। फिर वह पाउलो को लेकर काउंटेस के पास गयी। वहां मेरीडिथ से उसकी भेंट हुई। जब मेरीडिथ ने नीना से कहा कि वह नेरोने के विषय में उससे कुछ पूछना चाहता है तो वह पहले हिचकिचायी, मगर बाद में तैयार हो गयी।

नीना से आश्वस्त होने के बाद मेरीडिथ फादर एनसेल्मो से मिलने गया। वहां उसे पता चला कि बूढ़े पादरी की बदनामी का कारण उसकी अपनी गरीबी ही थी। मेरीडिथ का हृदय द्रवित हो उठा। उसके अपने जीवन का अंत निकट था। इसलिए उसने अपनी आय का एक हिस्सा किसी जरूरतमंद व्यक्ति को देने का इरादा किया था। उसने फादर एनसेल्मो से कहा कि वह अपनी आय का एक भाग उसे दे जाएगा। मेरीडिथ की बीमारी का हाल जानकर फादर एनसेल्मो की आंखें भर आयीं। उसने मेरीडिथ को विश्वास दिलाया कि नेरोने के विषय में वह उसे सब-कुछ बता देगा।

डॉक्टर ने मेरीडिथ का स्वागत किया, फिर उसने उसे अपने, नीना और नेरोने के विषय में बताया। डॉक्टर ने कहा, "गरमी की एक रात नीना मेरे घर आयी। वह कुछ घबरायी हुई थी। उसने मुझे बताया कि उसके घर एक अपरिचित व्यक्ति आ पहुंचा है। उसकी दशा गंभीर है। मुझे चलकर उसकी चिकित्सा करनी चाहिए। मैं किसी समय नीना से प्रेम करता था। शायद शादी भी कर लेता परंतु वह कभी राजी नहीं हुई। मैं उस रात नीना के साथ उसके घर गया। वह घायल आदमी नेरोने ही था। उसके शरीर का एक हिस्सा गोली के विष के कारण सूज गया था। मैंने उसके शरीर से गोली निकाली और दवा दी। मैं रात वहीं रुकने को हुआ तो नीना ने कहा, 'अब जाओ डॉक्टर। रात में मेरे यहां कोई पुरुष नहीं रहता। और पूरे गांव में तुम्हीं तो पुरुष हो।' और मैं चला आया। नेरोने के पूर्ण स्वस्थ होने तक मैंने उसकी चिकित्सा की। पहले तो नीना ने जी-जान से सेवा की। नेरोने को मुझ पर संदेह था, फिर धीरे-धीरे उसे मुझ पर विश्वास हो गया। उस समय मित्र-राष्ट्रों की सेना की प्रतीक्षा हो रही थी। मैं भी भगोड़ा था। वास्तव में मैं कम्युनिस्ट था और इस इलाके में पार्टी के काम से रह रहा था। बात-बात में एक एक दिन मुझे पता चला कि नेरोने अंगरेज है और वह फौज से भाग आया है। इसके अतिरिक्त मुझे उसके विषय में अन्य कोई ज्ञान नहीं था। वह अच्छी इतालवी भाषा बोलता था और पढ़ा-लिखा आदमी लगता था।

"नेरोने के विषय में एक बात काफी साफ थी। वह वर्तमान में जीता था और हंसमुख तथा कर्मठ था। वह बड़ी जल्दी इस गांव के लोगों का प्रिय पात्र हो गया। उसकी तुलना में मैं विदेशी बना रहा—यहूदी, रोमवाला। यों मैं नेरोने को बिलकुल

नहीं पसंद करता था, फिर भी मेरे मन में उसके प्रति एक प्रकार का स्नेह था।

"इस प्रकार थोड़ा समय और बीता और मुझे नीना ने बताया कि वह बच्चे को जन्म देनेवाली है। जब मैंने उन दोनों से विवाह की बात छेड़ी तो उसने नीना से कहा, 'शादी के लिए अभी समय है। पहले यह तो देखें क्या होता है!' मेरा खयाल था कि नेरोने भाग जाएगा, पर वह भागा नहीं। न उसने नीना को धोखा ही दिया। वह गांववालों की सेवा में लगा रहा। वैसे गांव में उन दिनों कोई युवा पुरुष न था। वे सब फौज में चले गये थे। गांव में केवल स्त्रियां थीं या फिर कुछ बूढ़े और बच्चे। नेरोने ने घर-घर जाकर सर्दियों के लिए अनाज इकट्ठा करना शुरू कर दिया ताकि उन दिनों गांववाले अन्नाभाव के कारण भूखे न मरें। मैं समझता था कि उसका कोई साथ नहीं देगा, परंतु सबने उसका साथ दिया। मैंने जब आश्चर्य व्यक्त किया तो उसने कहा, 'सभी मिलकर काम करना चाहते हैं। यदि, डॉक्टर, तुम कुछ नहीं कर पाये तो अलग बात है। पर हर काम की कीमत है। एक दिन मुझे भी इसकी कीमत देनी होगी।'

"उसी दिन नीना ने भी मुझसे कहा था, 'डॉक्टर, मैं इस आदमी को प्यार करती हूं और यह आदमी सदैव कर्ज चुकाता है।' सर्दियां शुरू हुईं। अब ग्रामीणजनों का एकमात्र सेवक तथा मित्र नेरोने था। वे सब उसकी आवाज पर ही दरवाजा खोलते

और काम करते।

"एक रात नेरोने ने मुझे अपनी जीवन-गाथा सुनायी। हम अकसर मिलते थे और जैसा मैंने कहा कि मैं उससे घृणा नहीं करता था। उसने बताया कि वह मित्र-सेना की अगली टुकड़ी में था और पीछे की फौज के लिए हम दुश्मनों को हटाने का काम कर रहे थे। ऐसी ही एक कार्यवाही में उसने एक हथगोले से एक मछुए को पत्नी और दूध-पीते बच्चे सहित मार डाला था। इसी एक घटना के कारण उसके जीवन में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ आया। वह फौज से भाग आया—पीड़ा, पाप और आत्मग्लानि के कारण। उसने भीषण पाप किया था।

क्या रंग-रूप! खुद इनका?

साटन ग्लो इतना क़ुदरती दिखता है कि पहचानना मुश्किल। मगर इसे सही ढंग से लगाइये

पहले : लोग रीता को दुबारा बहुत कम देखते थे।

रीता का रूप था मामूली। उस पर ग़लत मेकअप! बहुत हलके शेड से चेहरे पर धब्बे-से दिखते थे। तब उसकी सहेली ने सही मेकअप का चुनाव और प्रयोग करना सिखाया। उसके लिए सही शेड मिला साटन ग्लो में।

सही ढंग से सही मेकअप

चेहरे पर थोड़ा-थोड़ा साटन ग्लो छितराइये। चेहरे और गर्दन पर एक समान मलिये। फ़ालतू मेकअप टिशू पेपर से हटाइये। मद्धम रंगत के लिए मेल खाते शेड में लॅक्मे फ़ेस पाउडर लगाइये। मगर रीता चाहती है चमकती रंगत।

बाद में : अब सबकी नज़रें रीता पर

साटन ग्लो दाग़-धब्बों को रूप के परदे में छिपा कर चेहरे को एक समान निखारता है। उसने रीता के चेहरे पर सुन्दरता की जोत जगाई, दिल की कली खिलाई।

लॅक्मे
साटन ग्लो लिक्विड मेकअप

विशेष रूप से भारतीय रंगरूप को चार चाँद लगाने वाले सात शानदार शेड्स में।

RADEUS/L-121

अबोध लोगों की जानें ली थीं। भागते से भागते हुए उसे गोली लगी और नीना के यहां आ गया।

"नीना के प्यार और उसकी तपस्या ने सब कुछ भुला दिया। नेरोने बचपन से कैथोलिक था।"

अंत में डॉक्टर ने कहा, "मेरी कहानी में कुछ बातें छूट गयी हैं। उन्हें आप नीना से पूछ लें।"

नेरोने के विषय में मेरीडिथ को काफी कुछ ज्ञात हो गया था। अब उसने नीना से मिलने का निश्चय किया और उसी शाम मेरीडिथ को नीना की कहानी भी सुनने को मिली।

मेरीडिथ ने उससे कहा, "नीना, तुम और नेरोने दोनों कैथोलिक थे। क्या तुम्हें अविवाहित प्रेम में कुछ भी अनैतिक नहीं लगा ?"

"नहीं। जब कोई अकेला हो और भय उसके दरवाजे पर खड़ा हो, जब यह भी मालूम न हो कि कल क्या होगा— तब नहीं।"

"क्या नेरोने ने तुमसे विवाह करने से इनकार किया ?"

"मैंने उससे इस विषय में कभी बात ही नहीं की।"

"तुम्हें विवाह की इच्छा भी नहीं थी?"

मेरीडिथ का प्रश्न सुनकर नीना कुछ उदास-सी हो गयी। उसने कहा, "सुनिए। मैं भी विवाहिता थी। मेरा भी पति था। वह फौज में मारा गया। नेरोने के रूप में मैंने एक पुरुष को पा लिया था। शादी तो बाद की बात थी। यों नेरोने को विश्वास था कि वह एक दिन अवश्य पकड़ा जाएगा। वह चाहता था कि उसके बाद मैं विवाह के लिए स्वतंत्र रहूं।"

मेरीडिथ ने पूछा, "क्या यह बात इतनी महत्त्वपूर्ण थी ?"

"जरूर। मेरे लिए नहीं, उसके लिए। मेरे लिए उसका सामीप्य ही काफी था।" फिर उसने मेरीडिथ से पूछा, "महाशय, क्या आपने कभी प्रेम किया है ?"

"नहीं," उसने मुसकराते हुए कहा, "आप बतायें कि नेरोने कैसा आदमी था ?"

"कैसा था ? आप मुझसे किस प्रकार के उत्तर की अपेक्षा रखते हैं ? हम प्रेमी थे और प्रेमपगा जीवन जी रहे थे . . ."

बाद में नीना ने मेरीडिथ को जो बताया, उसका सार कुछ इस तरह था : नीना के बच्चा होने को था। एक दिन नेरोने ने उससे कहा कि वह जाना चाहता है। दूर—एकांत में। परंतु वह नीना से मिलने सदैव आता रहेगा। नीना ने उससे अपने तथा बच्चे के विषय में पूछा तो उसने उत्तर दिया, 'मैं सदैव यहीं रहूंगा। ईश्वर को भी मैं तुम्हारे बारे में बताऊंगा। एक दिन जरमन आएंगे और शायद मुझे मार भी देंगे।' नेरोने इस खतरे को जानता था, इसलिए वह नीना से अलग रहना चाहता था।

इस तरह नीना से विदा लेकर नेरोने चला गया, परंतु उससे मिलने वह सदैव
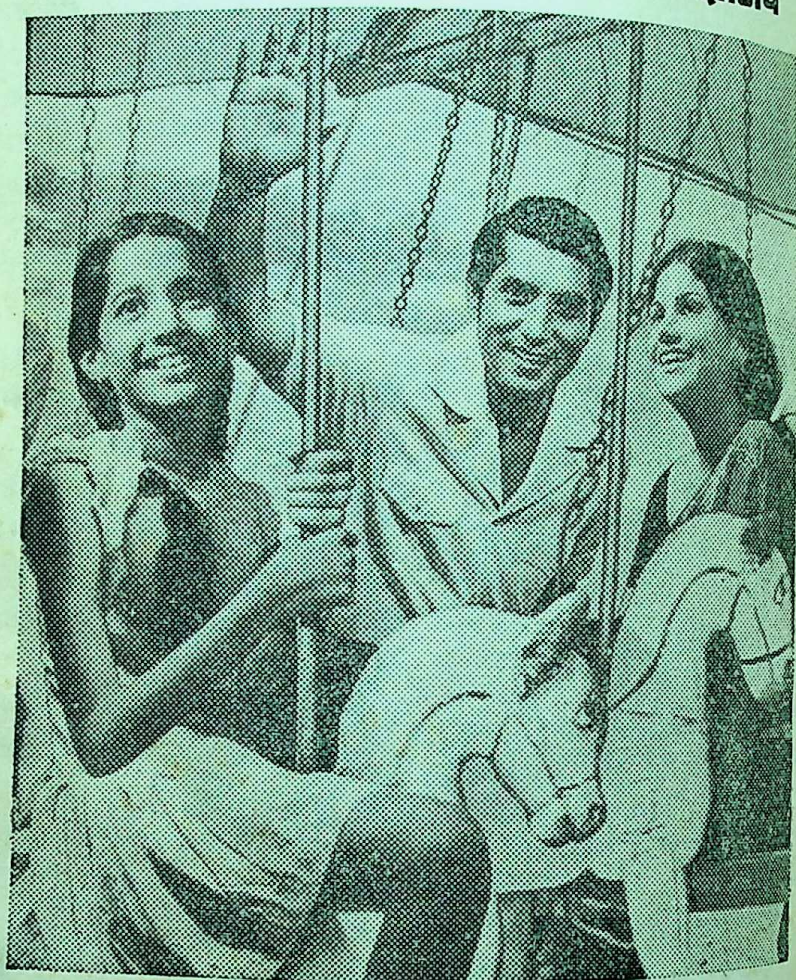
आता रहा। एक दिन जरमन सचमुच आ गये। उन्होंने काउंटेस के घर को अपना अड्डा बना लिया। इन दिनों एक दिन डाक्टर मेयर ने नीना से नेरोने की सारी गतिविधियों के बारे में जानकारी भी लेनी चाही। उसने अपनी जानकारी के अनुसार उसे सब बता दिया। एक दिन नीना ने नेरोने से पूछा भी कि क्या उसे कुछ खतरा है तो उसने उत्तर दिया, "यह तो जरमनों की केवल टुकड़ी भर है। वे किसी को परेशान नहीं करेंगे।"

उसी ने नीना को यह भी बताया कि मेयर रूस में प्रशिक्षित कम्युनिस्ट है और उसका काम उस इलाके में साम्यवाद फैलाने में सहायता करना है।

नीना ने मेरीडिथ को बताया कि नेरोने धार्मिक था। वह रविवार के साथ-साथ अन्य दिनों प्रार्थना करता था तथा आत्मशुद्धि के लिए फादर मारियो के पास भी जाया करता था। वह फादर एनसिल्मो के पास नहीं जाता था, क्योंकि वे उसे पसंद नहीं करते थे। किंतु नेरोने को उनसे हमदर्दी थी। वह कहता था कि लोगों को फादर के बारे में प्रार्थना करनी चाहिए। उसका कथन था—ईसा मसीह ने चर्च को अपने घर की तरह बनाया था किंतु कुछ लोग, यहां तक कि कुछ पादरी भी, उसे बाजार या शराब की दूकान की तरह इस्तेमाल करते हैं। वे लोग चर्च से अपना व्यापार करते हैं।

मेरीडिथ ने नीना से पूछा, "जरमनों के विषय में उसकी क्या राय थी?"

"वह आदमियों को राष्ट्रों के एकरूप मानता था। राष्ट्र साधारण स्त्री-पुरुषों की भांति होते हैं। जैसे—एक द्वीप में रहने के कारण अंगरेज स्वार्थी, संवेदनशील तथा मजबूत होते हैं। अमरीकी लोग धनी होने के कारण, मजबूत तथा सरल होते हैं। जरमन शराब पीने के कारण कुछ भद्दे व्यवहारवाले होते हैं। वैसे वे मेहनती, सुशासक और व्यवस्था-पसंद होते हैं। उन्हें घमंड भी कुछ अधिक है।"

"बस इतना ही?"

"नहीं। वह कहता था कि हमें प्रायः उन लोगों से, जिन पर हम थूकना चाहते हैं, व्यवहार-कुशल होना पड़ता है। नेरोने के इसी सिद्धांत पर अमल कर हम उस समय सुरक्षित और शांतिपूर्ण वातावरण में रहे। थोड़े ही दिन में मित्र-राष्ट्रों ने रोम पर कब्जा कर लिया। उसी समय पाउलो का भी जन्म हुआ।"

नीना ने आगे कहा, "पाउलो के जन्म के समय नेरोने परेशान था। वह तीन-तीन दाइयों को बुला लाया और डॉक्टर मेयर को भी बुलाने गया। डॉक्टर के आने तक दाइयों ने बच्चे को नहला-धुला दिया था। परंतु शीघ्र ही हमें पता चल गया कि बच्चा अंधा है। यह जानकारी डॉक्टर ने दी थी। उस समय नेरोने एकदम खामोश रहा। डाक्टर के जाते समय उसने कहा, डॉक्टर, कम्युनिस्टों को गांव से दूर रखो।"

परंतु यह तो इतिहास है। वह तो आएंगे ही—डाक्टर ने उत्तर दिया था।

फिर वह लौट आया। मुझसे कहने लगा, 'तुम आज अकेली नहीं रह सकतीं। आज मैं तुम्हारे साथ रहूंगा।'

उस रात की समाप्ति पर नेरोने ने नीना से कहा, 'नीना, मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूं।'

'क्या'

'बच्चे का नाम पाउलो होगा।'

'तुम्हारा अपना लड़का है, जो चाहो नाम रखो।'

'नहीं, पाउलो संत था। वह ईश्वर से विमुख रहा, फिर उसने ईश्वर को पहचान लिया। पाउलो अंधा है, वह ईश्वर की कृपा से पुनः देखेगा।'

'मुझे तसल्ली देने के लिए मत कहो, नेरोने।'

'नहीं, नीना। जब पाउलो आज से पंद्रह दिन के बाद देखने लगे तो वह एक समाचार होगा। तब तुम किसी से आज के विषय में मत कहना। यह तुम्हें आज प्रतिज्ञा करनी होगी।'

और हुआ भी यही। निश्चित तिथि को पाउलो की आंख ठीक हो गयी। वह देखने लगा, किंतु तब तक नेरोने मारा जा चुका था।

मेरीडिथ को नीना से नेरोने के विषय में काफी जानकारी मिल गयी थी। नेरोने के प्रति उसके मन में [illegible] थी।

उस दिन वह काउंटेस के घर लौटा तो काफी संतुष्ट था।

●●●

दूसरे दिन नीना पाउलो को लेकर काउंटेस के पास पहुंची। उसने उससे कहा, "काउंटेस हम निर्धन हैं। किंतु अपने मित्रों या शुभचिंतकों के यहां हम खाली हाथ नहीं जाते। मैं आज अपनी सबसे प्रिय वस्तु आपको भेंट करती हूं।" और उसने एक रक्त-रंजित कमीज थैले से निकालकर काउंटेस को दे दी। यह वही कमीज थी जिसे पहने नेरोने ने गोली की बौछारों का सामना किया था। यह वही कमीज थी, जिसे नीना सोने से पहले आंखों व माथे से लगाकर प्रार्थना करती थी।

उस रक्त-रंजित कमीज को देखते ही काउंटेस को नेरोने की याद आ गयी, जिसने एक दिन उसी के घर पर उसकी प्रणय-याचना को ठुकरा दिया था। तो यही वह निर्धन रूपसी थी, जिसके लिए नेरोने ने उसके साथ इतना निष्ठुर व्यवहार किया था! काउंटेस ने सोचा।

इस समय पाउलो सभी के ध्यान का केंद्र था। अपने-अपने कारणों से डॉक्टर मेयर, नीना, मेरीडिथ, ब्लेक आदि उसका जीवन सुधारना चाहते थे। मेयर पाउलो को पिता की मृत्यु का प्रायश्चित कर दिखाना चाहता था। नीना मां थी। मेरीडिथ मृत्यु के कगार पर बैठा सभी का हित चाहता था। ब्लेक को उस लड़के [illegible] था। काउंटेस ही बदले की

भावना से उसका उपकार करना चाहती थी और इन सारी भावनाओं में शायद ही किसी को पाउलो स्वयं पहचानता था। उसे तो काउंटेस के घर काम करनेवाली रोजेटा पसंद थी।

पाउलो को इतने निकट पाकर ब्लेक खुश था। यों तो वह काउंटेस की 'हां' में 'हां' मिलाता था, परंतु उसकी योजनाएं भिन्न थीं।

एक दिन अचानक काउंटेस ने पाउलो से रोम चलने का प्रस्ताव रखा। वह दौड़ता हुआ अपनी मां से आज्ञा लेने चल पड़ा। जिस समय यह बात हो रही थी तो मेरीडिथ ने सब सुन लिया था। उसने काउंटेस की योजना का पर्दाफाश करके काउंटेस को चौंका दिया। उसने कहा, "तो आप नेरोने का बदला उसके पुत्र से लेना चाहती हैं?"

"कैसे?"

"फिलहाल आप अकेली रोम जाएंगी और बाद में ब्लेक आपके पास पहुंच जाएगा।"

"जी, यह सच है।" काउंटेस मेरीडिथ के सामने झूठ न बोल सकी।

लगभग इसी समय पाउलो और उसकी मां नीना में झड़प हुई। नीना ने भी काउंटेस की सारी योजना समझ ली थी, पर पाउलो अपनी मां की बात मानने के लिए तैयार नहीं था। उसने क्रोध में अपनी मां को 'संत की वेश्या' की गाली दी और पैर पटकता हुआ काउंटेस के घर की ओर चल पड़ा। पुत्र के मुंह से अपने लिए 'संत की वेश्या' संबोधन सुनकर नीना के आंसू ढुलक गये।

किंतु अनायास ही पाउलो को ब्लेक के चंगुल से मुक्ति मिल गयी। मेरीडिथ की व्यंग्यात्मक बातों से ब्लेक उद्विग्न हो उठा था और उसने एक पेड़ से लटककर आत्महत्या कर ली। उसके कमरे में एक चिट्ठी मिली, जिसमें लिखा था, 'मुझे सदैव गलत समझा गया है, परंतु आज की बात काफी वजनी रही इसलिए...

—ब्लेक'

ब्लेक की आत्महत्या से मेरीडिथ को बहुत अफसोस हुआ। उसकी मृत्यु थोड़ी और नजदीक खिसक आयी। वह और ज्यादा बीमार हो गया।

मेरीडिथ चिंतित हो उठा। उसकी खोज अभी पूरी नहीं हुई थी। नेरोने के विषय में अब भी कुछ बातें अज्ञात थीं, फिर भी मेरीडिथ को नेरोने के चमत्कारिक व्यक्तित्व पर विश्वास हो चला था। नेरोने की भविष्यवाणी के अनुसार जन्म से अंधा पाउलो पुनः देखने लगा था। नेरोने की विनम्रता, उसके सेवाभावी स्वभाव के कारण गांववाले उसे आत्मीय मानने लगे थे। वह उनके दुःख-दर्दों का साथी था। नेरोने के संबंध में और जानकारी प्राप्त करने के लिए मेरीडिथ डॉक्टर मेयर से मिला।

डॉक्टर मेयर ने मेरीडिथ को बताया कि मित्र-राष्ट्रों की सेनाओं के जाने के

बाद जब स्थानीय कम्युनिस्टों ने इस क्षेत्र पर अधिकार कर लिया तो उन्हें नेरोने ही अपना सबसे बड़ा दुश्मन प्रतीत हुआ। पर कम्युनिस्टों का नेता लूपो नेरोने से, उसकी निस्वार्थ सार्वजनिक सेवा से बेहद प्रभावित था। उसने नेरोने से गांव छोड़कर चले जाने का बार-बार अनुरोध किया।

लूपो ने नेरोने से कहा, "मैं तुम्हें बहुत चाहता हूं। तुम्हारा आदर भी करता हूं। या तो तुम हमारे साथ आ जाओ या गांव छोड़ दो। अन्यथा विवश होकर मुझे तुम्हारा कत्ल करना पड़ेगा।"

पर नेरोने ने शहीद होना मंजूर किया। वह गांव छोड़कर जाने के लिए तैयार न हुआ। जब उसे गोली मारी जा रही थी, तब भी वह शांत और प्रसन्न-चित्त था। उसके चेहरे पर अपूर्व आभा थी। मृत्यु के पूर्व उसने डॉक्टर मेयर को एक पत्र लिखा था। डॉक्टर ने मेरी-डिथ को वह पत्र दिया। पत्र इस प्रकार था:

मेरे प्रिय आल्डू,

नीना और नवजात शिशु दोनों सो रहे हैं। मुझे मालूम है कि कल क्या होगा इसलिए अपने सारे कागजात तथा नीना और बच्चे को आपके हवाले कर रहा हूं।

कल तुम न्यायाधीशों के साथ बैठे

होगे और मेरे जल्लादों के साथ चलोगे। परंतु इस सबके लिए मुझे तुम्हारे प्रति कोई रोष नहीं है। मैं चाहता हूं कि तुम फादर एनसेल्मो तथा काउंटेस दोनों से ही मेरी ओर से कह दो कि मेरे मन में उनके प्रति कोई रोष नहीं है। कल का भय है... परंतु मैं सदैव सम्मान से मरने का इच्छुक रहा हूं। फिर भी आज से पहले मैंने इस मुश्किल की कल्पना नहीं की थी।

इस अंधकार में ईश्वर हमारे तुम्हारे दोनों के साथ रहे। अलविदा —नेरोने

डॉक्टर ने मेरीडिथ को कुछ और कागजात दिये। उन पर लिखा था: "यदि कोई मेरी मृत्यु के बाद इन कागजों को पढ़े तो उसे पता होना चाहिए—

मेरा जन्म आस्थामय प्राणी की तरह हुआ था और थोड़े दिन भटके रहने के बाद मैं पुनः ईश्वरीय अंचल में लौट आया।

जो कुछ मैंने किया वह ईश्वर की आज्ञा पर किया। मैंने एक स्त्री से प्रेम किया और एक बच्चे का पिता बना। मैं उन्हें सदैव-सदैव प्रेम करता रहूंगा।

जो मुझे मारेंगे मैं उनकी ईश्वर से भाई की तरह सिफारिश करूंगा।

जो मुझे भूल जाएंगे वे अच्छा ही करेंगे, परंतु जो मुझे याद करें, वह मेरे लिए ईश्वर से प्रार्थना करें. . .

—गियाकोमो नेरोने

(जो आस्थामय प्राणी की तरह मरा)

एकांत में इन सब कागज-पत्रों को पढ़ने तथा मेयर से पाउलो की आंख
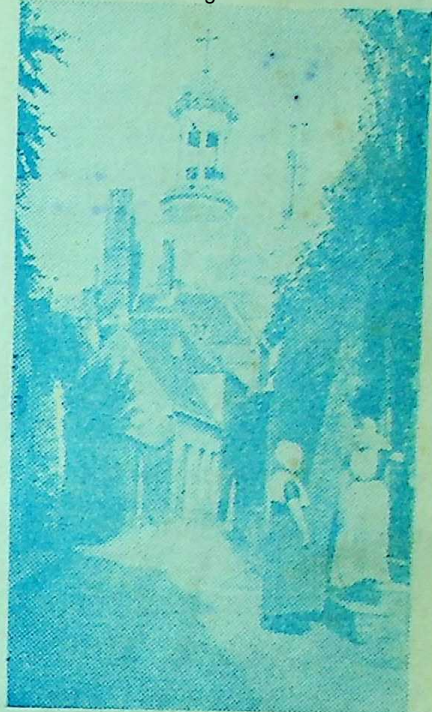
ठीक होने का चमत्कार पुष्ट होने पर मेरीडिथ की आंखों के सामने एक चित्र उभरा। वह चित्र नेरोने का था—शांत, दयावान, निष्ठावान, ईश्वरभक्त, तपस्वी का। मेरीडिथ को लगा कि वह अब जाने-वाला है, क्योंकि उसका काम पूरा हो गया था। इसलिए उसने बिशप को चिट्ठी लिखी:

प्रिय लार्ड बिशप,

मैं बहुत बीमार हूं और मृत्यु के बहुत पास खड़ा हूं। डॉक्टरों की सारी राय के बावजूद मैं जल्दी ही जानेवाला हूं, परंतु मैंने सारे निर्णय ईश्वर पर छोड़ दिये हैं और यदि साहस नहीं तो विश्वास

के साथ अवश्य तैयार बैठा हूं। इसके बाद कहने को शेष कुछ नहीं रह जाता, क्योंकि मेरीडिथ शीघ्र ही इस संसार से चला गया।

धार्मिक अदालत चाहे जो निर्णय करे, मैं यह जरूर कहना चाहूंगा और मेरी समस्त सूचनाएं केवल उसी एक संकेत की पुष्टि करती हैं कि गियाकोमो नेरोने अत्यंत धार्मिक व्यक्ति था और वह ईश्वर में आस्था के साथ ही शहीद हुआ। वह धर्म के कार्य में शहीद हुआ इसलिए वह उन सारे अधिकारों के काबिल था जिन्हें चर्च ऐसे प्राणी को देता है। हमारे मुख्य गवाहों में डॉक्टर आल्डू मेयर और नीना संडूजी थे। नीना ने तो नेरोने के चमत्कारों की भी पुष्टि की। मैं सारे कागजात भेज रहा हूं। वे प्रामाणिक हैं और बताते हैं कि मैं सच लिख रहा हूं।

मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप फादर एनसेल्मो को क्षमा कर दें और उसे मेरी संपत्ति में से इतना धन दे दें ताकि वह गरीबी और गंदगी से ऊपर उठ जाए। मैं चाहता हूं कि आप अन्य सभी ग्रामवासियों पर ईश्वरीय कृपा की प्रार्थना करें।

मेरी अंतिम इच्छाएं केवल दो हैं। पहली कि आप कार्डीनल मरोटा से मेरी ओर से क्षमा मांग लें। मैं उनका दिया काम पूरा नहीं कर सका। और दूसरा, मुझे इसी गांव में दफना दिया जाए,

ईसा मसीह की सेवा में,

—ब्लास मेरीडिथ

और इस मृत्यु की सूचना लार्ड बिशप ने पोप के पद के उम्मीदवार कार्डीनल मरोटा को दी। उन्होंने लिखा,

'बड़े दुःख के साथ आपको सूचना दे रहा हूं कि मेरीडिथ कल सुबह उसी गांव में परलोक सिधार गया जहां आपने उसे भेजा था। मरते दम तक उसकी सभी इंद्रियां काम कर रही थीं।

मुझे उसके लिए बेहद दुःख है। इतना दुःख किसी अन्य व्यक्ति के लिए कभी नहीं हुआ। वह धैर्यवान, ईमानदार और मनुष्यत्व के गुणों से भरपूर था। मुझे विश्वास है कि चर्च ने मेरीडिथ की मृत्यु में अपने एक बहुत बड़े सेवक को खो दिया है।

मेरीडिथ की अंतिम इच्छानुसार उसका पार्थिव शरीर गांव के गिर्जाघर में रखा गया है।

—बिशप ऑव वेलेन्टो

कार्डीनल ने देखा कि जिस मनुष्य ने पत्र लिखा था, वह पुराना बिशप नहीं था। यह तो मानवता से ओतप्रोत कोई अन्य व्यक्ति था। उन्हें ध्यान आया कि उन्हें प्रार्थना पर जाना है और मेरीडिथ को ईश्वर के सामने स्मरण करना भी है।

वह उठे और चल दिये।

दी हिन्दुस्तान टाइम्स की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

चलते चलते
सुशील कालरा
इतनी दौड़-धूप करने के बाद एक नौकरी का सुराग तो मिल ही गया। अगर किसी नेता की सिफरिश हो जाए तो समझो नौकरी मेरी...
मैं आप के क्षेत्र का बेकारी से पीड़ित एक निवासी हूँ। आप तो अपने प्रगतिवादी तथा जन सेवी व्यक्तित्व के लिए जनप्रिय हैं। अगर आप की थोड़ी-सी कृपा हो जाए तो यह गरीब, बेरोज़गारी की घिनौनी जिंदगी जीने से बच जाए
तुम्हें तो मालूम ही होगा कि बेकारी के विरुद्ध हम युद्ध-स्तर पर लड़ रहे हैं। किसी बेरोज़गार का दुख देख कर मेरी आंखों से आंसू नहीं थमते। मैं आज ही डायरेक्टर साहब से तुम्हारी सिफारिश कर दूंगा।
यह तो गरीब जनता के प्रति मेरा कर्तव्य है। तुम चिंता न करो, मैं आज ही बोर्ड के मेम्बर्स पर ऊपर से दबाव डलवा रहा हूं।
काम बनना, न बनना तो भाग्य की बात है, लेकिन दौड़-धूप में सेवकराम जी ने तो कोई कसर नहीं छोड़ी। शिष्टाचार के नाते मुझे जाकर उनका धन्यवाद करना चाहिए
नोटिस बोर्ड
अजी, धन्यवाद तो हमें आपका करना चाहिए, क्योंकि आपकी बतायी हुई वेकेंसी के लिए इन के साले साहब चुन लिये गए हैं

Khatau's
TERKOSA SAREES
TERENE